पुद्गल कोश

(प्रथम खण्ड)

CYCLOPAEDIA OF PUDGALA

जैन दशमलव वर्गीकरण संख्या ०११८-०६०१-०७०१

सम्पादक :

स्व० मोहनलाल बाँठिया, बी० कॉम

श्रीचन्द चोरड़िया, न्यायतीर्थ (द्वय)

अणुव्रत-साहित्य सेवी पुरस्कार

(प० बं० प्रा० अणुव्रत समिति)

प्रकाशक :

जैन दर्शन समिति

१६सी, डोवर लेन, कलकत्ता-७०० ०२९

सन् – १९९९, सम्वत् – २०५६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल-कोश (प्रथम खण्ड)

CYCLOPAEDIA OF PUDGALA

जैनदशमलव वर्गीकरण संख्या-०११८-०६०१-०७०१

आ. श्रीकैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर
श्रीमहावीर जैन आराधना केन्द्र
कोबा (गांधीनगर) पि. ३८२००९

सम्पादक :

स्व० मोहनलाल बांठिया, बी० कॉम

श्रीचन्द चोरड़िया, न्यायतीर्थ (द्वय)

अणुव्रत-साहित्य सेवी (प० बं० प्रा० अणुव्रत समिति)

प्रकाशक :

जैन दर्शन समिति

१६-सी, डोवर लेन कलकत्ता-७०० ०२९

सन्—१९९९ (सम्वत् २०५६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन आगम विषय-कोश ग्रन्थमाला, अष्टम पुष्प
पुद्गल-कोश (प्रथम खण्ड)
जैनदशमलव वर्गीकरण संख्या-०११८-०६०१-०७०१

अर्थ सहायक :
श्री भगवतीलाल सिसोदिया ट्रष्ट, जोधपुर
मारफत—श्री गुलाबमल भण्डारी तथा अन्यगण

Serving JinShasan
091625
gyanmandir@kobatirth.org

प्रथम आवृत्ति ५००

मूल्य :
भारत में रु० १५०/-
विदेश में Sh १००/-

मुद्रक :
राज प्रोसेस प्रिन्टर्स
८, ब्रजदुलाल स्ट्रीट,
कलकत्ता-७०० ००६
दूरभाष : २३३-१५२२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समर्पण

महामहिम अणुव्रत अनुशास्ता युग प्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञ हमारे निर्णायक रहे हैं। जीवन की नाव आवर्तों से बचकर, ज्वारों को लांघकर जो मंजिले पार कर रही है, उसमें निर्यायक का कौशल एक अप्रतिम हेतु भी है। युगप्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने तेरापंथ धर्म संघ में साहित्य की अनेक धाराओं का सूत्रपात किया है।

जिन्होंने मेरे मन में श्रुत की धार प्रवाहित की, उन प्रेक्षा प्रणेता तथा जीवन विज्ञान के प्रस्तोता आचार्य महाप्रज्ञ को पुद्गल कोश को सादर सभक्ति, सविनय समर्पित करता हुआ अपूर्व आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ।

—श्रीचंद चोरड़िया, कलकत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संकलन-सम्पादन में प्रयुक्त ग्रन्थों की संकेत सूची

अणुत्त०—अणुत्तरोववाइयदसाओ
अणुओ० —अणुओगद्दाराइं
अंत०—अंतगडदसाओ
अभिधा०—अभिधान चिन्तामणिकोश
अणुओ० हारि०—अणुओगद्दाराइं हारिभद्रीय टीका
आप्ते०—आप्ते संस्कृत छात्र कोष
अभिधान०—अभिधान राजेन्द्र कोश
आया०—आयारो
आर्हतद०—आर्हत दर्शन दीपिका
आव०—आवस्सयं सुत्तं
उत्त०—उत्तज्झयणाइं
उत्त० टीका—उत्तज्झयणाइं टीका
उवा०—उवासगदसाओ
उवा० टीका—उवासगदसाओ टीका
ओव०—ओववाइयं सुत्तं
कप्पव०—कप्पवडंसियाओ
कप्पसु०—कप्पसुत्तं
कप्पि०—कप्पिया
कर्मप्र०—कर्म प्रकृति
कर्म०—कर्म ग्रन्थ
कसायपा०—कसायपाहुडं
क्रियाको०—क्रिया कोश
कम्मगो०—गोम्मटसार (कर्मकाण्ड)
गोक०—गोम्मटसार (कर्मकाण्ड)
गोजी०—गोम्मटसार (जीवकाण्ड)
प्रज्ञा०—प्रज्ञापना सूत्र
जीवा० टीका—जीवाजीवाभिगमो टीका
चंद—चंदपण्णत्ति
चतु०—चतुर्विंशतिस्तवन
जंबु०—जंबुदीवपण्णत्ति
जीवा०—जीवाजीवाभिगमे
जैनसिद्धी—जैन सिद्धान्त दीपिका
ठाण०—ठाणं
ठाण० टीका—ठाणं-अभयदेवसूरि टीका
तत्त्ववृ०—तत्त्ववृत्ति
तत्त्व०—तत्त्वार्थसूत्र
तत्त्वराज०—तत्त्वार्थ राजवार्तिक
तत्त्वश्लोक०—तत्त्वार्थश्लोकवार्त्तिकालंकार
तत्त्वसर्व०—तत्त्वार्थ सर्वार्थसिद्धि
तत्त्वसिद्ध०—तत्त्वार्थ सर्वार्थसिद्धि
तत्त्वभाष्य०—सभाष्य तत्त्वार्थ सूत्र
तुल०—तुलसी प्रज्ञा
दसवे०—दसवेआलियं
दसासु०—दसासुयक्खंधो
ध्याको०—ध्यानकोश (अप्रकाशित)
नंदी०—नंदीसुत्तं
णाया०—णायाधम्मकहाओ
निरि०—निरियावलियाओ
निसी०—णिसीहं
नियम०—नियमसार
निय०—नियमसार
पण्ण०—पण्णवणासुत्तं
पण्ण० टीका—पण्णवणा टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पण्हा०—पण्हावागरणाइं
पाको०—पाली अंग्रेजी कोश
पाइओ०—पाइअसद्दमहण्णवो
पुचू०—पुप्फचूलियाओ
पिंडनि०—पिंडनिर्युक्ति
पुप्फि०—पुप्फियाओ
पुद्०—पुद्गलकोश (खण्ड २)
परिको०—परिभाषा कोश (अप्रकाशित)
पंच० श्वे०—पंचसंग्रह श्वे०
पंच०—पंचसंग्रह (दिग्) अमितगति
पंचास्तिकाय—पंचास्तिकायसार
पंचास्तिकाय०—पंचास्तिकाय
प्रवसा०—प्रवचनसारोद्धार
प्राभा०—प्राकृत भाषा
प्रशम०—प्रशमरतिप्रकरण
प्रव०—प्रवचनसार
बिहू०—बिहकप्पसुत्तं
बृहद्०—बृहद्द्रव्यसंग्रह
भग०—भगवई
भग० टीका—भगवई टीका
भिक्षुन्याय०—भिक्षुन्यायकर्णिका
मिआवि०—मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास
महा०—महाभारत
योगको०—योग कोश खण्ड १, २
योगसार०—योगसार
राय०—रायपसेणइयं
राज०—राजवार्तिक
लेको०—लेश्या कोश
लेकोस०—संयुक्त लेश्या कोश
वर०—वररुचि व्याकरण
विवा०—विवागसुत्तं
वि०—विष्णुपुराण
वव०—ववहारो
वण्हि०—वण्हिदसाओ
विशेभा०—विशेषावश्यक भाष्य
श्राव०—श्रावक संबोध
वीरजि०—वीरजिणिंद चरिउ
शसा०—शब्दसार
षट्०—षट्खंडागम
सर्व०—सर्वार्थसिद्धि
समय०—समयसार
सूय०—सूयगडो
सूयनि०—सूयगडो निर्युक्ति
समा०—समवाओ
सूर०—सूरपण्णत्ती
हरिपु०—हरिवंशपुराण
हेम०—सिद्धहेमशब्दानुशासनम्
स्या०—स्याद्वादमंजरी
सूयचू०—सूयगओ चूर्णि
पर०—परमाणुखंडषट्त्रिंशिका
पुद्ष०—पुद्गलषट्त्रिंशिका
पायो०—पातञ्जल योग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन वाङ्मय का दशमलव वर्गीकरण

मूल विभागों की रूपरेखा

जै० द० व० सं०	यू० डी० सी० संख्या
०—जैन दार्शनिक पृष्ठभूमि	+
१—लोकालोक	५२३·१
२—द्रव्य—उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य	+
३—जीव	१२८ तुलना ५७७
४—जीव परिणाम	+
५—अजीव-अरूपी	११४
६—अजीव-रूपी—पुद्गल	११७ तुलना ५३९
७—पुद्गल परिणाम	+
८—समय—व्यवहार-समय	११५ तुलना ५२९
९—विशिष्ट सिद्धान्त	+
१—जैन दर्शन	१
११—आत्मवाद	१२
१२—कर्मवाद—आस्रव-बंध-पाप-पुण्य	+
१३—क्रियावाद—संवर-निर्जरा-मोक्ष	+
१४—जैनेतरवाद	१४
१५—मनोविज्ञान	१५
१६—न्याय-प्रमाण	१६
१७—आचार संहिता	१७
१८—स्याद्वाद-नयवाद-अनेकान्तादि	+
१९—विविध दार्शनिक सिद्धान्त	+
२—धर्म	२
२१—जैन धर्म की प्रकृति	२१
२२—जैन धर्म के ग्रन्थ	२२
२३—आध्यात्मिक मतवाद	२३
२४—धार्मिक जीवन	२४
२५—साधु-साध्वी-यति-भट्टारक-क्षुल्लकादि	२५
२६—चतुर्विध संघ	२६
२७—जैन का साम्प्रदायिक इतिहास	२७
२८—सम्प्रदाय	२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जं० द० व० सं०	यू० डी० सी० संख्या
२९—जैनेतर धर्म : तुलनात्मक धर्म	२९
३—समाज विज्ञान	३
३१—समाजिक संस्थान	+
३२—राजनीति	३२
३३—अर्थ शास्त्र	३३
३४—नियम-विधि-कानून-न्याय	३४
३५—शासन	३५
३६—सामाजिक उन्नयन	३६
३७—शिक्षा	३७
३८—व्यापार-व्यवसाय-यातायात	३८
३९—रीत-रिवाज—लोक-कथा	३९
४—भाषा विज्ञान—भाषा	४
४१—साधारण तथ्य	४१
४२—प्राकृत भाषा—	४९१·३
४३—संस्कृत भाषा	४९१·२
४४—अपभ्रंश भाषा	४९१·३
४५—दक्षिणी भाषाएँ	४९४·८
४६—हिन्दी	४९१·४३
४७—गुजराती-राजस्थानी	४९१·४
४८—महाराष्ट्री	४९१·४६
४९—अन्यदेशी-विदेशी भाषाएँ	४९१
५—विज्ञान	५
५१—गणित	५१
५२—खगोल	५२
५३—भौतिकी-यांत्रिकी	५३
५४—रसायन	५४
५५—भूगर्भ विज्ञान	५५
५६—पुराजीव विज्ञान	५६
५७—जीव विज्ञान	५७
५८—वनस्पति विज्ञान	५८
५९—पशु विज्ञान	५९
६—प्रयुक्त विज्ञान	६
६१—चिकित्सा	६१
६२—यांत्रिक शिल्प	६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जै० द० व० सं०	यू० डी० सी० संख्या
६३—कृषिविज्ञान	६३
६४—गृह विज्ञान	६४
६५— +	६५
६६—रसायन शिल्प	६६
६७—हस्त शिल्प वा अन्यथा	६७
६८—विशिष्ट शिल्प	६८
६९—वास्तु शिल्प	६९
७—कला-मनोरंजन-क्रीड़ा	७
७१—नगरादि निर्माण कला	७१
७२—स्थापत्य कला	७२
७३—मूर्ति कला	७३
७४—रेखांकन	७४
७५—चित्रकारी	७५
७६—उत्कीर्णन	७६
७७—प्रतिलिपि-लेखन कला	७७
७८—संगीत	७८
७९—मनोरंजन के साधन	७९
८—साहित्य	८
८१—छंद-अलंकार-रस	८१
८२—प्राकृत साहित्य	+
८३—संस्कृत जैन साहित्य	+
८४—अपभ्रंश—जैन साहित्य	+
८५—दक्षिणी भाषा में जैन साहित्य	+
८६—हिन्दी भाषा में जैन साहित्य	+
८७—गुजराती राजस्थानी भाषा में जैन साहित्य	+
८८—महाराष्ट्री भाषा में जैन साहित्य	+
८९—अन्य भाषाओं में जैन साहित्य	+
९—भूगोल-जीवनी-इतिहास	९
९१—भूगोल	९१
९२—जीवनी	९२
९३—इतिहास	९३
९४—मध्य भारत का जैन इतिहास	+
९५—दक्षिणी भारत का जैन इतिहास	+
९६—उत्तर तथा पूर्व भारत का जैन इतिहास	+
९७—गुजरात-राजस्थान का जैन इतिहास	+
९८—महाराष्ट्र का जैन इतिहास	+
९९—अन्य क्षेत्र व वैदेशिक जैन इतिहास	+

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·01 लोकालोक (जगत) और द्रव्य का वर्गीकरण

·100 **सामान्य विवेचन**

·101 जगत
·102 लोक
·103 अलोक
·104 ऊर्ध्वलोक
·105 तिर्यग्लोक
·106 अधोलोक
·107 मोक्षलोक
·108 त्रसनाडी
·109 द्रव्य
·110 गुण
·111 पर्याय
·112 जीव
·113 अजीव
·114 आकाश
·115 धर्म
·116 अधर्म
·117 काल
·118 पुद्गल
·119 परमाणु पुद्गल
·120 स्कंध पुद्गल
·121 तत्त्व
·122 मोक्षमार्ग
·123 भेद
·124 रूपी-अरूपी
·125 एक-अनेक
·126 स्पर्शना
·127 प्रदेश
·128 चरम-अचरम
·129 दिशि
·130 लघुता-गुरुता
·131 अस्तिकाय
·132 शाश्वत-अशाश्वत
·133 वासस्थान
·134 अन्तर-दूरी
·135 अल्पबहुत्व
·136 सचित्त-अचित्त
·137 गति
·138 युग्म-राशि-विशेष
·139 अवगाहना
·140 अविभाग-प्रतिच्छेद

·०६ अजीव-रूपी पुद्गल का वर्गीकरण

·०६०० **सामान्य विवेचन**
·०६०१ पुद्गल औघिक
·०६०२ स्कंध पुद्गल
·०६०४ परमाणु पुद्गल
·०६०५ वर्गणा
·०६०६ तमस्काय
·०६०७ कृष्णराजि
·०६०८ प्रयोग परिणत पुद्गल
·०६०९ मिश्र परिणत पुद्गल
·०६१० विस्रसा परिणत पुद्गल
·०६११ सूक्ष्मपुद्गल
·०६१२ बादरपुद्गल
·०६१३ देश
·०६१४ प्रदेश
·०६१५ अस्तिकायत्व
·०६१६ आत्मा
·०६१७ सकंपन
·०६१८ निष्कंपन
·०६१९ शाश्वतत्व
·०६२० अवगाहना
·०६२१ अल्पबहुत्व
·०६२२ स्पर्शना
·०६२३ क्षेत्र
·०६२४ द्रव्य
·०६२५ गुण
·०६२६ पर्याय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०७ पुद्गल परिणाम का वर्गीकरण

०७०१ सामान्य विवेचन

०७०२ पुद्गल परिणाम औधिक

०७०३ बंधन

०७०४ गति

०७०५ संस्थान

०७०६ भेद

०७०७ वर्ण

०७०८ गंध

०७०९ रस

०७१० स्पर्श

०७११ अगुरुलघु

०७१२ शब्द

०७१३ स्थिति

०७१४ अवगाहना

०७१५ प्रकाश

०७१६ तम

०७१७ आतप

०७१८ अशब्द

०७१९ छाया

०७२० गुण

०७२१ पर्याय

०७२२ अल्पबहुत्व

७७२३ अन्तरकाल

०७२४ प्रतिघात

०७२५ गुरुलघु

०७२६ प्रभा

०७२७ भाव

०७२८ अविभाग प्रतिच्छेद

०७२९ परिस्पन्दन

०७३० चरम-अचरम

०७३१ संयोग

०७३२ सौक्ष्म्य

०७३३ स्थौल्य

०७३४ स्निधत्व

०७३५ रुक्षत्व

०७३६ संसार-संस्थानकाल

०७३७ एकत्व

०७३८ पृथक्त्व

०७३९ संख्या

०७४० अग्नि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशीर्वचन

आचार्य श्री तुलसी की सन्निधि में आगम-सम्पादन की योजना बनी। उसमें अनेक कार्यों के साथ एक कार्य था आगमों का विषयीकरण। इस कार्य का दायित्व मोहनलालजी बांठिया ने संभाला। वे पूरी निष्ठा के साथ इस कार्य में जुट गये। श्रीचंदजी चोरड़िया का सहयोग उनके लिए मणि-कांचन जैसा हो गया। अन्य अनेक कार्यकर्ता इस प्रवृत्ति के सहयोगी बन गए।

पुद्गल कोश से पूर्व वर्धमान कोश, लेश्या कोश, क्रिया कोश, योग कोश आदि अनेक कोश प्रकाश में आ चुके हैं। उनकी उपयोगिता भी सर्वत्र प्रमाणित हो चुकी है। पुद्गल जैन आगम साहित्य का बहुत बड़ा विषय है। परमाणु और स्कंध—इन दोनों पर शत-शत दृष्टियों से विचार किया गया है। उसका कोश जैन दर्शन के अध्येता के लिए बहुत उपयोगी होगा। तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करने वालों के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में उपयोगनीय होगा। इसमें श्वेताम्बर-दिगम्बर दोनों परम्पराओं के ग्रन्थों का सार संकलित है। उपयोगिता और अधिक बढ़ गई है। श्रीचन्दजी चोरड़िया की संकलनात्मक और नियोजनात्मक मेधा उत्तरोत्तर बढ़ती रहे। इससे जैन-दर्शन की बहुत प्रभावना होगी।

आध्यात्म साधना केन्द्र — **आचार्य महाप्रज्ञ**

महरोली,

नई दिल्ली-११० ०३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो शब्द

जैन दर्शन में षट् द्रव्य कहे गये हैं - धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, काल और जीवास्तिकाय। द्रव्य का अर्थ है 'सत्' वस्तु अर्थात् वह वस्तु जिसमें अवस्थान्तर भले ही हो पर जो मूलतः कभी विनाश को प्राप्त नहीं होता। द्रव्यों में प्रथम पांच अजीव है। उनमें चैतन्य नहीं होता। जीवास्तिकाय चैतन्य द्रव्य है। पांच अचेतन द्रव्यों में पुद्गलास्तिकाय रूपी है। उसके वर्ण, गध, रस और स्पर्श हाते हैं, अतः वह रूपी है इन्द्रिय ग्राह्य है।

पुद्गलास्तिकाय की रचना अन्य द्रव्यों से भिन्न है। पुद्गल का सूक्ष्म से सूक्ष्म टुकड़ा जिसका खंड नहीं हो सकता, जो अन्तिम अविभाज्य होता है परमाणु कहलाता है। परमाणुओं में परस्पर मिलने व बिछुड़ने का सामर्थ्य होता है। इस गलन-मिलन गुण या स्वभाव के कारण परमाणु मिलकर स्कंध रूप हो जाते हैं, और स्कंध से बिछुड़कर पुनः परमाणु रूप हो जाते हैं।

पदार्थ विज्ञान की दृष्टि से पुद्गल का अध्ययन करना जितना महत्वपूर्ण है उतना ही आध्यात्मिक दृष्टि से उसका ज्ञान प्राप्त करना परमावश्यक हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से पुद्गल अनन्त शक्ति सम्पन्न है। आध्यात्मिक दृष्टि से उसकी असलियत पौद्गलिक बंधन का कारण है जो परम्परा से भव-भ्रमण का कारण होता है।

अस्तु समग्रलोक अजीव, जड़, अचेतन या पुद्गल नाम का जो तत्व है उससे भरा पड़ा है। जो हम अपनी आंखों से देखते हैं वह सब पुद्गल है। जीव और पुद्गल का सम्बन्ध अनादिकाल से है। जिस दिन आत्मा का पुद्गल से सम्बन्ध छूट जाता है आत्मा-परमात्मा-सिद्ध बन जाती है।

प्रस्तुत पुद्गल कोष की पाडुलिपी आज से ३० साल पहले स्व० मोहनलालजी बांठिया व श्री श्रीचन्दजी चोरड़िया के गहन अध्ययन से तैयार की गई है। बांठियाजी के निधन के बाद इस शोध कार्य की गति मंद हो गई। विद्वान लेखक श्री श्रीचन्दजी चोरड़िया ने इसे अधूरे कार्य को अकेले ही पूरा करने का बिड़ा उठाया। उनके अथाह परिश्रम का फल है कि हम पुद्गल कोश को प्रकाशित कर सके हैं।

पुद्गल कोश में मनीषी लेखक ने पुद्गल की विभिन्न अवस्थाओं और पुद्गल और जीव के सम्बन्ध का बड़े सुन्दर ढंग से विनेचन किया है। ये पुद्गल स्वयं कर्म नहीं है किन्तु उनमें कर्म होने की योग्यता है। वे कर्मरूप पर्याय विशेष में प्रसंगानुसार परिणत हो जाते हैं। प्राणी के अन्तर में जब भी रागद्वेषात्मक भाव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं तभी तत्क्षण वे वर्गणा के पुद्गल कर्म रूप में परिणत हो जाते हैं और कार्मण नाम के सूक्ष्म शरीर के माध्यम से आत्मा के साथ बद्ध हो जाते हैं।

क्रिया कोष, लेश्या कोश, योग कोश की भांति इसका निर्माण भी दशमलब वर्गीकरण पद्धति से किया गया है। यह कोष जैन दर्शन का एक बहुमूल्य ग्रन्थ बन गया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि पाठकों को इसका अध्ययन ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा विशेषतः शोधकों के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

मैं उन सभी महानुभावों के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने हमें अधिक रूप से इस ग्रन्थ के प्रकाशन में सहयोग दिया।

समिति ने इसके पूर्व में लेश्या कोष, क्रिया कोश, वर्धमान जीवन कोश खंड १, २, ३ योग कोश खंड १, २ मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास व स्व० मोहनलालजी बांठिया स्मृति ग्रन्थ प्रकाशित कर चूकी है जिनको पाठकों ने इन ग्रन्थों की उपयोगिता को बहुत सहराया है।

इस संस्था का पावन उद्देश्य जैन दर्शन व भारतीय दर्शन को उजागर करना है। जिससे मानव-ज्ञान रश्मियों से अपने अज्ञान अंधकार को मिटा सकें।

अस्तु लेश्या कोश, क्रिया कोश और वर्धमान जीवन कोश खंड—१ स्टोक में नहीं है।

हमारे पास निम्नलिखित कोश स्टोक में है—

(१) मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास मूल्य १५/-
(२) वर्धमान जीवन कोश खंड—२ मूल्य ६५/-
(३) वर्धमान जीवन कोश खंड—३ मूल्य ७५/-
(४) योग कोश खंड—१ मूल्य १००/-
(५) योग कोश खंड—२ मूल्य १००/-
(६) पुद्गल कोश खंड—१ मूल्य १५०/-

इस संस्था द्वारा प्रकाशित साहित्य सस्ते दामों में वितरण कर अधिक से अधिक प्रचार हो यही इसका उद्देश्य है। इस पुनीत कार्य में सबका सहयोग अपेक्षित है।

गुलाबमल भण्डारी, अध्यक्ष
जैन दर्शन समिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

जैन दर्शन अत्यन्त सूक्ष्म और गहन है तथा मूल सिद्धान्त ग्रन्थों में इसका क्रमबद्ध तथा विषयानुक्रम विवेचन नहीं होने के कारण इसके अध्ययन एवं इसे समझने में कठिनाई होती है। कई विषय विवेचना की दृष्टि से अपूर्ण व अधूरे होने के कारण भलीभांति समझ में नहीं आते। अर्थ बोध की इस दुर्गमता के कारण जैन-अजैन दोनों प्रकार के विद्वान जैन दर्शन के अध्ययन में सकुचाते हैं। क्रमबद्ध तथा विषयानुक्रम विवेचन का अभाव जैन दर्शन के अध्ययन में सबसे बड़ी बाधा उपस्थित करता है, ऐसा जैन विद्वानों का मानना है।

जैन दर्शन समिति अपने स्थापना काल से ही कोश निर्माण की परिकल्पना को साकार करने में लगी है। समिति ने इससे पूर्व क्रिया कोश, मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास, वर्धमान जीवन कोश (तीन खण्डों में) एवं योग कोश (दो खण्डों में) आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं। लेश्या कोश का प्रकाशन इस कोश परिकल्पना के सूत्रधार जैन तत्ववेत्ता स्व० मोहनलालजी बांठिया ने समिति स्थापना के पूर्व श्रीचंदजी चोरड़िया के सहयोग से स्वयं के खर्चे से प्रकाशित किया था। विद्वानों ने व शोधकों ने इन प्रयासों की मुक्त कंठ से सराहना की है।

स्व० मोहनलालजी बांठिया संस्था के प्राण थे। वे स्वयं तत्ववेत्ता श्रावक थे। उनके प्रयासों से समिति इतना महत्वपूर्ण कार्य कर पायी। उन्होंने ग्रन्थों-कोशों की प्रारम्भिक तैयारी कर ली। श्री श्रीचंदजी चोरड़िया उनके अनन्य सहयोगी रहे। स्व० मोहनलालजी बांठिया के निधन के पश्चात् श्री श्रीचंदजी चोरड़िया ने अवशिष्ट कार्य को आगे बढ़ाया। जैन तत्व की गम्भीर जानकारी, प्राकृत व संस्कृत भाषा पर अधिकार रखने वाले विद्वानों को अंगुलियों पर गिना जा सकता है। इस दृष्टि से श्री श्रीचंदजी चोरड़िया का यह प्रयास स्तुत्य एवं सराहनीय है।

प्रस्तुत पुद्गल कोश में पुद्गल सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी एकत्रित करके सम्पादित की गई है। मूल-पाठ अनेक आगमों से एकत्रित किये गये हैं। टिप्पणी तथा हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया गया है।

पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी ने कोश के कार्य को आगम सम्पादन के पूरक कार्य के रूप में स्वीकार किया था। अपने जीवन काल में आचार्य श्री तुलसी का मार्गदर्शन भी समिति को सदैव प्राप्त हुआ था। समिति के उत्साही सदस्यों, शुभ-चिन्तकों के साहस और निष्ठा का उल्लेख करना मेरा कर्त्तव्य है। प्रत्यक्ष-परोक्ष सहयोगी रहे, प्रत्येक व्यक्ति के प्रति हम आभारी हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपना आशीर्वचन प्रदान कर हमारा उत्साहवर्धन किया है। पूज्यवरों के मंगल मार्गदर्शन के लिये हम उनके प्रति श्रद्धाप्रणत हैं। समिति के इस कार्य में चारित्रात्माओं से समय-समय पर प्रत्यक्ष, परोक्ष प्रेरणा मिली है हम उनके प्रति भी कृतज्ञ हैं।

स्व० मोहनलालजी बांठिया तथा श्रीचंदजी चोरड़िया ने अनेक पुस्तकों का अध्ययन कर प्रस्तुत कोश को तैयार कर हमें प्रकाशित करने का मौका दिया उनके प्रति भी हम आभारी हैं।

जैन दर्शन समिति के अध्यक्ष श्री गुलाबमलजी भण्डारी के प्रति भी मैं आभार व्यक्त करना चाहूंगा जिनके सतत मार्गदर्शन से ही प्रकाशन कार्य शीघ्र सम्पन्न हो सका। समिति के वरिष्ट सदस्य श्री नवरतनमलजी सुराना, उपाध्यक्ष श्री हीरालाल जी सुराना, श्री धर्मचंदजी राखेचा, श्री बच्छराजजी सेठिया, श्री हणूतमलजी बांठिया, श्री पद्मचंदजी नाहटा, उपाध्यक्ष श्री पद्म कुमारजी रायजादा, रणजीतमलजी बच्छावत, सुमतिचंदजी गोठी एवं युवा साथी श्री पन्नालालजी पुगलिया, रतनजी दूगड़ एवं प्रत्यक्ष परोक्ष सत्साहित्य की प्रवृत्ति को आगे बढाने के लिये समय-समय पर समिति को उदारमना व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त होता रहा है। इस कृति के लिये भगवतीलाल सिसोदिया ट्रस्ट, जोधपुर, (मार्फत श्री गुलाबमल भण्डारी) आदि का सहयोग प्राप्त हुआ है। इसके लिये समिति उनके प्रति आभारी हैं।

मुझे इस बात का सात्विक आह्लाद है कि मेरे कार्यकाल में यह प्रस्तुति एक विशाल ग्रन्थ के रूप में पाठकों के हाथों में पहुंच रही है। मेरे कार्य में मेरे अनन्य सहयोगी जैन दर्शन समिति के उपमंत्री श्री सुशीलजी बाफना के सहयोग को मैं शब्दों में अभिव्यक्त नहीं कर सकता।

राज प्रोसेस प्रिन्टर्स तथा उनके कर्मचारी का हमें पूरा सहयोग मिला। तदर्थ धन्यवाद।

सुशीलकुमार जैन, मन्त्री
जैन दर्शन समिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

FOREWORD

It gives me great pleasure in writing a Foreword to a book *Pudgala-kośa* by name written by Shri Shrichand Chorariyaji who is already an author of several *kośas* like the present one. Shri Chorariyaji is a good scholar on Jainism. He has already shown his scholarship by publishing the *Leśyā-kośa, Kriyā-kośa, Vardhamāna-Jīvana-kośa* (in three parts), *Yoga-kośa* (in two parts), and the present one—the *Pudgala-kośa*. He has also prepared *Dhyāna-kośa* and also a *Paribhāṣa-kośa* (otherwise known as *Saṃyukta-Leśyā-kośa). His Mithyātvī kā Ādhyātmika Vikāśa* is an outstanding philosophical text which describes the manifestation of soul according to the Jain tradition. This treatise shows the masterly contribution of Chorariyaji to the subject.

The plan of all his Cyclopaedias is a unique one. The method followed in preparing all the cyclopaedias is the classification of International Decimal System used in the libraries of the world. Each decimal point is arranged topic-wise. In each section and under each topic one decimal point is given; e.g.,

.00 *Śabda-vivecana*

.01 *Śabda-vyutpatti*

.01.1 *prākṛta mē poggala śabda kī vyutpatti*

[Then follows the description of the subject].

The description of each item (divided into thousand points) is followed by the original quotations collected from over 100 books. All the original quotations from the Jaina texts, both canonical and non-canonicall, are followed by Hindi translations. It goes without saying that to collect all these quotations in one place is a huge task, and for this Shri Chorariyaji is to be congratulated.

Shri Chorariyaji has been working on Jainism for a long time. He is a good scholar and is always devoted to his Jain Cyclopaedias. He spends most of his time in compiling material for his *kośas*. He gives a special care for the better production of his work. As far as I know, all his cyclopaedias are received well by the scholarly world.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Recently Shri Chorariyaji has been awarded an *Anuvrata Sāhitya Sevī Puraskāra* by the Paścima-Vaṅga-Anuvrata-Samiti at Delhi, as a recognition of his scholarship and devotedness to his studies on Jainism. All his *kośas* are valuable source books on the doctrines of Jainism. His methodology is good, systematic and useful. Through his "Dictionary Project", Shri Chorariyaji has opened up a new vista of research and has set a new model for the future generations of Jainistic studies.

Pudgala simply means matter. In terms of Jainism it is defined as *sparśa-rasa-gandha-varṇa-vantaḥ pudgalāḥ (Tattvārtha-sūtra,* V. 23) "*Pudgalas* (material things) are characterised by touch, taste, smell, and colour." The suffix *van* is here used to denote "permanent union". *Sparśa* (touch) is of eight kinds, namely, soft *(snigdha)*, hard *(ruksa)*, heavy *(guru)*, light *(laghu)*, cold *(śita)*, hot *(uṣṇa)*, smooth *(mṛdu)* and rough *(karkasa)*. *Rasa* (taste) is of five kinds, namely, bitter *(tikta)*, sour *(kaṭu)*, acidic *(amla)*, sweet *(madhura)* and astringent *(kaṣāya)*. *Gandha* (smell) is of two kinds, namely, pleasant *(sugandha)* and unpleasant *(durgandha)*. *Varṇa* (colour) is of five kinds, namely, black *(kṛṣṇa)*, blue *(nīla)*, red *(rakta)*, white *(śveta)* and yellow *(pīta)*.

All these have many other sub-divisions and varieties; they are also connected with other objects of the world.

The whole problem of *pudgala* is exhaustively treated by Shri Shrichand Chorariya in his *Pudgala-koṣa*.

The *Pudgala-kośa* is a remarkable source book so very systematically arranged with abundant extracts and references to the original Jain works. All his *kośas* will help scholars to compile an Encyclopaedia on Jainism. The book is highly commendable and will act as an indispensable and valuable handbook for the students of Jainism.

I do believe this *Pugala-kośa* will adorn the libraries of the world.

Calcutta
The 9th of
September 1999

Satya Ranjan Banerjee
Quondam Professor of Linguistics
Calcutta University

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तावना

हमने वर्गीकृत आगम ग्रन्थमाला को मूल १०० विभागों में विभाजित किया है। आगमों के वर्गीकृत सन्दर्भ संस्करण की पूरी योजना है।

यथा सम्भव वर्गीकरण की सब भूमिकाओं में एकरूपता रखी जायेगी। पुद्गल का विषयांकन हमने ०६०१ किया है। इसका आधार यह है कि सम्पूर्ण जैन वाङ्मय को १०० भागों में विभाजित किया गया है (देखें—मूलवर्गीकरण सूची पृ० ६।) इसके अनुसार पुद्गल का विषयांकन ·०६ है। पुद्गल-अजीव-रूपी-पुद्गल भी १०० भागों में विभक्त किया गया है। (देखें—पुद्गल वर्गीकरण सूची पृ० १०) इसके अनुसार पुद्गल का विषयांकन ०६ होता है। अत: पुद्गल का विषयांकन हमने ०६०१ किया है। पुद्गल का धरातल पुद्गल परिणाम (·०७) —से सम्बन्ध रखता है। इसके अनुसार पुद्गल का विषयांकन ·०७ भी होता है। अत: पुद्गल का विषयांकन हमने ०७०१ भी रखा है। (देखें पुद्गल परिणाम वर्गीकरण सूची पृ० ११) लोकालोक के विभाजन में पुद्गल का भी उल्लेख हुआ है (देखें—लोकालोक वर्गीकरण सूची पृ० ९) अत: पुदगल का विषयांकन ०११८ का भी होता है।

सामान्यत: अनुवाद हमने शाब्दिक अर्थ रूप ही किया है लेकिन जहाँ विषय की गम्भीरता या जटिलता देखी है वहाँ अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विवेचनात्मक अर्थ भी किया है। विवेचनात्मक अर्थ करने के लिए हमने सभी प्रकार की टीकाओं तथा अन्य सिद्धांत ग्रन्थों का उपयोग किया है। छद्मस्था के कारण यदि अनुवाद में या विवेचन में कहीं कोई भूल, भ्रांति या त्रुटि रह गई हो तो पाठक वर्ग सुधार लें।

वर्गीकरण के अनुसार जहाँ मूल पाठ नहीं मिला अथवा जो मूल पाठ में विषय स्पष्ट रहा वहाँ मूल पाठ के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए हमने टीकाकारों के स्पष्टीकरण को भी अपनाया है तथा स्थान-स्थान पर टीका का पाठ भी उद्धृत किया है।

हमने संकलन का काम आगम, श्वेताम्बर व दिगम्बर ग्रन्थों तक रखा है तथा अनुवाद के कार्य में निर्युक्ति, चूर्णी आदि का भी उपयोग किया है।

जो पुद्गल पिण्ड एक रूप है उसका भंग होना भेद है। इसके उत्कर, चूर्ण, खण्ड, चूर्णिका, प्रतर और अणुचटन ये छ: प्रकार है। लकड़ी या पत्थर आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का करोंत आदि से भेद करना उत्कर है। जौ और गेहूँ आदि का आटा या सत्तू आदि चूर्ण है। घट आदि के टुकड़े-टुकड़े हो जाना खण्ड है। उड़द और मूंगादि का दालादि चूर्णिका है। मेघ, भोजपत्र, अभ्रक और मिट्टी आदि की तहें निकलना प्रतर है। और गरम लोहे आदि के मारने पर फुलिंगे निकलना अणुचटन है।

कहा है—

चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे, पन्नत्ते तंजहा—धम्मत्थिकाएणं, अधम्मत्थिकाएणं, जीवत्थिकाएणं, पुग्गलत्थिकाएणं।

—ठाण० स्था ४। उ ३। सू ४९३

अर्थात् चार अस्तिकाय लोक का स्पर्श करते हैं—यथा—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय तथा पुद्गलास्तिकाय।

जीव और पुद्गल (अजीव) इस स्थूल जगत के दो मूल तत्त्व है।

पुद्गल के तीन प्रकार है—१) अष्ट स्पर्शी-स्थूल अजीव जगत्—२) चतुस्पर्शी कर्म, मन, वचन व श्वासोच्छ्वास वर्गणा। ३) द्विस्पर्शी परमाणु।

पुद्गल में संहनन (शारीरिक अस्थि संरचना) व संस्थान (आकृति) दोनों होते हैं। यद्यपि परमाणु का कोई संस्थान नहीं होता है। ये दोनों जीव गृहीत शरीर रूप में परिणत पुद्गल विशेष में माना गया है। संस्थान शरीर के अतिरिक्त पुद्गल में भी होता है। उसका स्वरूप भिन्न है। शरीरमुक्त जीव के दोनों नहीं होते हैं।

भाषा के पुद्गल पूरे लोक में फैल जाते हैं। इस सन्दर्भ में आकाशवाणी व दूरदर्शन प्रसारण महत्वपूर्ण है। सिद्धों की अफूसमाणगति—अस्पृश्यमान गति होती है। स्निग्ध व रूक्ष से विद्युत पैदा होता है।

कहा है—

अणुखंधव्येण दु, पोग्गलदव्वं हवेइ दुवियप्पं।
खंधा दु छप्पयारा, परमाणु चेव दुवियप्पो॥

—नियम० अधि २। गा १

पुद्गल द्रव्य के दो भेद है—एक अणु, दूसरा स्कंध। स्कंध के छः प्रकार हैं और परमाणु के दो प्रकार हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल द्रव्य के दो भेद हैं—एक स्वभाव पुद्गल और दूसरा विभाव पुद्गल। परमाणु स्वभाव पुद्गल है और स्कंध विभाव पुद्गल है। स्वभाव पुद्गल के दो भेद हैं—एक कार्य परमाणु, दूसरा कारण परमाणु। स्कंध के छः प्रकार है—पृथ्वी, जल, छाया, चार इन्द्रिय के विषय रूप पदार्थ, जैसे—शब्द, सुगन्धादि। कार्मण योग्य पुद्गल वर्गणा और कर्म अयोग्य पुद्गल ऐसे छः भेद है।

स्कंधों के गलने से अणु होता है और अणुओं के मिलने से स्कंध होता है।

रस, रूधिर, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा और शुक्र—इनकी विस्रसोपचय संज्ञा है—ऐसा षट्खंडागम में कहा है।[1] पांच शरीरों के परमाणु पुद्गलों के मध्य जो पुद्गल स्निग्ध आदि गुणों के कारण इन पांच शरीरों के पुद्गलों में लगे हुए हैं उनकी विस्रसोपचय संज्ञा है। उन विस्रसोपचयों के सम्बन्ध का पांच शरीरों के परमाणु पुद्गल गत स्निग्ध आदि गुण रूप जो कारण है उसकी विस्रसोपचय सज्ञा है। क्योंकि यहाँ कार्य में कारण का उपचार है।

धर्माधर्माकाशकालानाम् मुख्यवृत्यैकसमयवर्तिनोऽर्थपर्याया एव जीव-पुद्गलानाम् अर्थपर्याया व्यंजनपर्यायाश्च।

—प्रव० अ २। ग। ३७ तात्पर्यवृत्ति

जीव और पुद्गल में ही व्यंजन पर्याय (स्वभाव एवं विभावद्विविधः) होती है। व्यंजनपर्याय संसारी जीव तथा पुद्गल के विशेष पारिणामिक भाव तथा परिस्पन्दन निमित्त से होता है।

पुद्गलजीवास्तु क्रियावंतः।

—तत्त्व० अ ५। सू ६ का भाष्य

पुद्गल और जीव क्रियावान् है।

अनादिरादिमांश्च।

रूपिष्वादिमान्॥

—तत्त्व० अ ५। सू ४२, ४३

काल की अपेक्षा से परिणाम बताया गया है—अनादि-सादि। पुद्गलों का परिणाम आदिमान् है।

---

१. षट् ५, ६, सू ५५३ टीका। पु १४।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—आचार्य भिक्षु ने तेरह द्वार के आठवें भाव द्वार में पुद्गलास्तिकाय को अनादि परिणामिक भाव में भी ग्रहण किया है।

रूपिषु तु द्रव्येषु आदिमान् परिणामाऽनेकविधः।

—तत्त्व० अ ५। सू ४३ का भाष्य

पुद्गल का आदिमान् परिणाम अनेक प्रकार का है।

नोट—पुद्गल परमाणु स्वतन्त्रता में गति तथा अगुरुलघु—यह दो परिणाम नहीं करेगा।

स्वलक्षणं हि लोकस्य षड्द्रव्यसमवायात्मकत्वं, अलोकस्य केवलं आकाशात्मकत्वम्।

—प्रवचनसार अ २। गा ३६ की प्रदीपिका वृत्ति

गोयमा! अलोए भुसिर गोलसंठिए पण्णत्ते।

—भग० श ११। उ १०। सू १०

सम्पूर्ण विश्व गोलाकार है। अलोक मध्य में पोले गोले की तरह है।

पूरणगलनान्वर्थसंज्ञत्वात् पुद्गलाः।

—तत्त्वराज० पृ० १९०

पूर्ण होना अर्थात् मिलना, बद्ध होना, गलना अर्थात् पृथक् होना-विछुड़ना जो मिले तथा जुदा हो वह पुद्गल।

पूरणात् गलनात् इति पुद्गलाः परमाणवः।

—न्यायकोष पृ० ५०२

पुद्गल परमाणु मिलते हैं तथा विलय होते हैं।

शरीरवाङ्मनः प्राणपानाः पुद्गलानाम्ः सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च।

—तत्त्व० अ ५। सू १९, २०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव का उपकारी है। सुख-दुःख, जीवित-मरण, शरीर, वाक्-मन प्राणपना इन चार-चार भेद वाले द्विविध उपकारों को करता है।

प्रयोगपरिणत पुद्गल (पओगपरिणद पोग्गल)

प्रयोगपरिणताः—जीवव्यापारेण तथाविधपरिणतिमुपनीताः। यथा पटादिषु कर्म्मादिषु वा।

—स्था० स्था ३। उ ३। सू १८६ टीका

जीव की क्रियाओं द्वारा पुद्गल के अपने स्वरूप से अन्य स्वरूप में परिणत हो जाने को प्रयोगपरिणत पुद्गल कहते हैं।

प्रसिद्ध गणितज्ञ प्रो० अलबर्ट आईंसटीन लोक और अलोक की भेद रेखा बताते हुए लिखते हैं—"लोक परिमित है, अलोक अपरिमित है। लोक के परिमित होने के कारण द्रव्य और शक्ति लोक के बाहर नहीं जा सकती। लोक के बाहर उस शक्ति का (द्रव्य) अभाव है जो गति सहायक होती है। स्थूल दृष्टि से धर्म द्रव्य है वही ईथर है और ईथर है वही धर्म द्रव्य है।

पुद्गलास्त काय यद्यपि अनंत हैं, तथापि उसमें संघात (मिलने) और भेद (पृथग् होने) से उनका अनंतपन अनवस्थित है। इसलिए वह कृतयुग्मादि चारो राशि रूप होता है।

प्रदेश रूप से धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के प्रदेश असंख्यात है। वे परस्पर तुल्य है और दूसरे प्रदेशों की अपेक्षा अल्प है। उससे जीवास्तकाय, पुद्गलास्तिकाय, अद्धासमय और आकाशास्तिकाय के प्रदेश उत्तरोत्तर अनंत गुण है।

द्वयणुकों से परमाणु सूक्ष्म तथा एकत्व होने से बहुत है और द्विप्रदेशी स्कंध परमाणुओं से स्थूल होने से अल्प है।

प्रदेशार्थ से विचार करते हुए बताया गया है कि परमाणुओं से द्विप्रदेशी स्कंध बहुत है। परमाणु से अनंत प्रदेशी स्कंध के प्रदेश अनंत होते हैं।

परमाणु से अनंत प्रदेशी स्कंध तक एक प्रदेशावगाढ़ होते हैं और द्वयणुक से अनंत अणु स्कंध तक द्विप्रदेशावगाढ़ होते हैं। इसी प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध से अनंत प्रदेशी स्कंध त्रिप्रदेशावगाढ़ होते हैं। इसी प्रकार चतुष्प्रदेशावगाढ़ यावत् अनंत प्रदेशावगाढ़ स्कंध तक जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिगम्बर परम्परानुसार परनिन्दा, आत्मप्रशंसा, सद्गुणों का उच्छादन और असद्गुणों का उद्भावन—ये नीचे गोत्र के आस्रव है।

अणु (परमाणु) एक प्रदेशी होने से सबसे छोटा होता है अतः वह अणु कहलाता है। वह इतना सूक्ष्म होता है जिससे वही आदि है, वही मध्य है और वही अन्त है।

जिनमें स्थूल रूप से पकड़ना, रखना आदि व्यापरिका स्कन्धन अर्थात् संघटना होती है वे स्कंध कहे जाते हैं। रूढि में क्रिया कहीं पर होती हुई उपलक्षण रूप से वह सर्वत्र ली जाती है। इसलिए ग्रहण आदि व्यापार के अयोग्य द्वयणुक आदिक में भी स्कंध संज्ञा प्रवृत्त होती है। यद्यपि पुद्गलों के अनत भेद हैं तो भी वे सब अणुजाति और स्कंध जाति के भेद से दो प्रकार के हैं।

अणु स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण वाले हैं परन्तु स्कंध शब्द, बन्ध, सौक्ष्म, स्थौल्य, संस्थान, भेद, छाया, आतप और उद्योत वाले हैं तथा स्पर्शादि वाले भी है।

भेद से, संघात से व भेद-संघात से स्कंध उत्पन्न होते हैं ऐसा दिगम्बर आचार्य मानते हैं। यथा—१—संघात से—दो परमाणुओं के संघात से दो प्रदेश वाला स्कंध उत्पन्न होता है। दो प्रदेश वाले स्कंध और एक अणु के संघात से या तीन अणुओं के संघात से तीन प्रदेशवाला स्कंध उत्पन्न होता है। दो प्रदेशवाले दो स्कंधों के संघात से, तीन प्रदेशवाले स्कंध और अणु के संघात से या चार अणुओं के संघात से दो चार प्रदेशवाला स्कंध उत्पन्न होता है। इस प्रकार संख्यात, असंख्यात, अनंत और अनंतानंत अणुओं के संघात से उतने-उतने प्रदेशोंवाले स्कंध उत्पन्न होते हैं। २—तथा उन्हीं संख्यात आदि परमाणुवाले स्कंधों से भेद में दो प्रदेशवाले स्कंध तक स्कंध उत्पन्न होते हैं। ३—इस प्रकार एक समय में होने वाले भेद और संघात इन दोनों से दो प्रदेशवाले आदि स्कंध उत्पन्न होते हैं—ऐसी दिगम्बर परम्परा में कहा है। तात्पर्य यह है कि जब अन्य स्कंध भेद से होता है और अन्य का संघात, तब एक साथ भेद और अन्य का संघात तब एक साथ भेद और संघात इन दोनों से भी स्कंध की उत्पत्ति होती है।

भेद से अणु उत्पन्न होता है। न संघात से होता है और न भेद और संघात से—इन दोनों से नहीं होता है।

अनंतानंत परमाणुओं के समुदाय से निष्पन्न होकर भी कोई स्कंध चाक्षुष होता है और कोई अचाक्षुष। सूक्ष्म परिणामवाले स्कंध का भेद होने पर वह अपनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्मता को नहीं छोड़ता इसलिए उसमें अचाक्षुषपना ही रहता है। एक दूसरा सूक्ष्म परिणामवाला स्कंध जिसका यद्यपि भेद हुआ तथापि दूसरे संघात से संयोग हो गया अत: सूक्ष्मपना निकालकर उसमें स्थूलपने की उत्पत्ति होती है और इसलिए वह चाक्षुष हो जाता है। अत: सर्वार्थसिद्धि में कहा गया है कि भेद और संघात से चाक्षुष स्कंध बनता है।

कोयला जलकर राख हो जाता है, इसी पुद्गल का कोयला रूप पर्याय का व्यय हुआ है और क्षार रूप पर्याय का उत्पाद हुआ है। किन्तु दोनों अवस्थाओं में पुद्गल द्रव्य का अस्तित्व बना रहता है। पुद्गलपने का कभी भी नाश नहीं होता यही उसकी ध्रुवता है। पुद्गलादिक द्रव्य को अपने रूपादि गुणों के द्वारा भेद को प्राप्त होते हैं। रूपादिक पुद्गलादि के गुण हैं। तथा इनके विकार विशेष रूप से भेद को प्राप्त होते हैं अत: वे पर्याय कहलाते हैं।

पुद्गल बन्ध की अपेक्षा अनेक प्रदेश रूप शक्ति से युक्त होने के कारण इनका प्रदेश-प्रचय बन जाता है किन्तु काल द्रव्य शक्ति और व्यक्ति दोनों रूप से एक प्रदेश रूप होने के कारण उसमें प्रदेश-प्रचय नहीं बनता।

एक पुद्गल परमाणु मन्द गति से एक आकाश प्रदेश से दूसरे आकाश प्रदेश पर जाता है और उसमें कुछ समय भी लगता है। यह समय ही काल द्रव्य की पर्याय है जो कि अति सूक्ष्म होने से निरंश है।

ओज आहार सभी दंडकों के जीव करते हैं। वह आहार अनंत प्रदेशी पुद्गल स्कंध का है। नारकी के ओज आहार है पर मनोभक्षी आहार नहीं है। देवों में दोनों प्रकार के आहार है। तिर्यंच व मनुष्यों के ओज आहार है परन्तु मनोभक्षी आहार नहीं है।

लोक के मध्य से लेकर ऊपर, नीचे और तिरछे क्रम से स्थित आकाश प्रदेशों की पंक्ति को श्रेणी कहते हैं। अनु शब्द 'आनुपूर्वी' अर्थ में समसित है। इसलिए अनुश्रेणी का अर्थ श्रेणी की आनुपूर्वी से होता है। इस प्रकार की गति जीव और पुद्गलों की होती है। इस प्रकार पुद्गलों की जो लोक के अन्त को प्राप्त कराने वाली गति होती है वह अनुश्रेणी ही होती है। हां, इससे अतिरिक्त जो गति होती है वह अनुश्रेणी की गति होती है और विश्रेणी की।

वर्ण, गन्ध, रस और वर्ण का पुद्गल द्रव्य से सदा सम्बन्ध है—यह बतलाने के लिए 'मतुप्' प्रत्यय किया जाता है। जैसे—'क्षीरिणो न्यग्रोधाः'। यहाँ न्यग्रोध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृक्ष में दूध का सदा सम्बन्ध बतलाने के लिए 'णिनी' प्रत्यय किया जाता है। उसी प्रकार प्रकृत में जानना चाहिए।

संस्थान का अर्थ है—आकृति। भेद के छः भेद हैं। उत्कर, चूर्ण, खण्ड, चूर्णिका, प्रतर और अणुचटन। करौंत आदि से जो लकड़ी आदि को चीरा जाता है वह उत्कर नाम का भेद है। जौ और गेहूँ आदि का सत्तू और कनक आदि बनता है वह चूर्ण नाम का भेद है। घट आदि के जो कपाल और शर्करादि टुकड़े होते हैं वह खण्ड नाम का भेद है। उड़द और मूंग आदि का जो खण्ड किया जाता है वह चूर्णिका नाम का भेद है। मेघ के जो अलग-अलग पटल आदि होते हैं वह प्रतर नाम का भेद है। तपाये हुए लोहे के गोले आदि को घन आदि से पीटने पर जो फुलंगे निकलते हैं वह अणुचटन नाम का भेद है।

पुद्गल की परिभाषा

पूरणात् पुत् गलयतीति पुद्गलः।

—शब्द कल्पद्रुम कोष

अर्थात् पूर्ण स्वभाव से पुत् और गलन स्वभाव से गल—इन दो अवयवों के मेल से पुद्गल शब्द बना है।

पूरणगलनान्वर्थ संज्ञात्वात् पुद्गलाः।

—तत्त्व राज० अ ५। सू १-२४

गलन-मिलन स्वभाव के कारण पदार्थ को पुद्गल बताया गया है।

भेद—

अथ पुद्गलद्रव्यस्य विभावव्यञ्जनपर्यायान्प्रतिपादयति।

सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया॥

—बृहद्र० अधि १। गा १६

शब्द, बंध, सूक्ष्मता, स्थूलता, संस्थान, भेद तम, छाया, उद्योत और आतप—इन सहित पुद्गल द्रव्य के पर्याय होते हैं।

नोट—ये सब स्कंध पुद्गल के भेद हैं। परमाणु पुद्गल के ये सब भेद नहीं होते हैं। परन्तु उनमें वर्ण-गंध-रस-स्पर्श नियमतः होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल के दो प्रकार हैं —१—चतुस्पर्शी इसमें द्रव्यमान नहीं होता। अष्ट-स्पर्शी—इसमें द्रव्यमान होता है। विज्ञान कोई भी पदार्थ द्रव्यमान रहित (Innssless) नहीं मानता।

अस्तु परमाणु द्विस्पर्शी होता है। इसकी गति तो प्रकाश से बहुत तेज होती है। जैन दर्शन के अनुसार अष्टस्पर्शी-चतुस्पर्शी में व चतुस्पर्शी अष्टस्पर्शी में परिवर्तित हो सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि नया द्रव्यमान पैदा हो रहा हैं।

षट्द्रव्यात्मक समूह को लोक कहा जाता है। छः द्रव्य है। उनके नाम व परिभाषा इस प्रकार है—

१—धर्मास्तिकाय—जीव और पुद्गल के हलन-चलन में जो असाधारण रूप से सहायक हो—वह धर्मास्तिकाय है।

२—अधर्मास्तिकाय—जीव और पुद्गल के स्थिर रहने में जो असाधारण रूप से सहायक हो—वह अधर्मास्तिकाय है।

३—आकाशास्तिकाय—जो सब द्रव्य को आश्रय दे, वह आकाशास्तिकाय है।

४—काल—जो पदार्थों के परिवर्तन का हेतु है, वह काल है।

५—पुद्गलास्तिकाय—जो वर्ण, गन्ध, रस तथा स्पर्शयुक्त होता है—वह पुद्-गलास्तिकाय है।

६—जीवास्तिकाय—जो चैतन्य युक्त होता है—वह जीवास्तिकाय है।

अस्ति का अर्थ है—प्रदेश और काय का अर्थ है—समूह। प्रदेश और समूह को अस्तिकाय कहते हैं। काल अप्रदेशी है, परमाणु भी अप्रदेशी है और अवशिष्ट पांच द्रव्य सप्रदेशी है।

पुद्गलास्तिकाय—एक द्रव्य है—

धम्मत्थिकायदव्वं १ दव्वमहम्मत्थिकायनामं २ च।
आगास ३ काल ४ पोग्गल जीवदव्वस्सरूवं च॥

—प्रवसा० द्वार १५२। गा ९७३

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल, पुद्गलास्तिकाय तथा जीवास्तिकाय—ये छः द्रव्य हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—पूरण, गलन स्वभाववाला पुद्‌गल है। परमाणु से अनंताणुस्कन्ध पर्यन्त हैं। ये पुद्‌गल—मिलते हैं, अलग होते हैं। कहा है—

कालविहीणं दव्वच्छक्कं इह अत्थिकायाओ ॥९७६॥

—प्रवसा० द्वार १५२

काल रहित पांच द्रव्य ही यहाँ पंचास्तिकाय रूप है। यद्यपि दस प्राण का उल्लेख आगम साहित्य में नहीं प्राप्त होता है लेकिन प्रवचनसारोद्वार में है।

इंदिय ५ बल ३ उसासा १ उ १ पाण चउ छक्क सप्त अट्ठेव।
इगि विगल असन्नी सन्नी नव दस पाणा य बोद्धव्वा॥

—प्रवसा० द्वार १७० । गा १०६६

पांच इन्द्रिय, तीन बल, श्वासोच्छ्‌वास व आयुष्य— ये दस प्राण हैं। विकलेन्द्रिय में छः, सात, आठ प्राण। असंज्ञी में नव और संज्ञी में दस प्राण होते हैं। एकेन्द्रिय में चार प्राण होते हैं आवश्यक सूत्र में कहा है।

सम्मत्तस्सय तिसु उवरिमासु पडिवज्जमाणओ होइ।
पुव्वपडिवन्नओ पुण अन्नयरीए उ लेसाए॥

सम्यक्त्व की प्राप्ति के समय अन्तिम तीन शुभ लेश्यायें से कोई एक शुभ लेश्या होती है लेकिन बाद में कोई भी लेश्या हो सकती है। कहा है—

तथा चाह संग्रहणिमूलटीकाकारो हरिभद्रसूरिः—

सनत्कुमारादिदेवानां रताभिलाषे सति देव्यः खल्वपरिगृहीताः सहस्रारः यावद् गच्छन्तीति, तथा स एव प्रदेशान्तरे आह—"इह सोहम्मे कप्पे तासिं देवीणं × × × सोहम्मगदेवीओ ताओ सणंकुमाराणं गच्छन्ति × × × बंभलोगदेवाणं गच्छन्ति × × × महासुक्कदेवाणं गच्छन्ति। × × × ईसाणे-जासिं देवीणं × × × ताओ माहिंददेवाणं गच्छन्ति × × × ताओ लंतग-देवाणं × × × ताओ सहस्सारदेवाणं (गच्छन्ति) × × ×।

—पण्ण० प ३४। सू २०५२। टीका

अर्थात् रति-अभिलाषार्थं देवियां पहले स्वर्ग की तीसरे, पांचवें व सातवें देवलोक तक जाती है तथा ईशान-देवी माहेन्द्र, लंतक व सहस्रार देवलोक तक जाती है। आठवें देवलोक तक देवी जाती है—आगे नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—सौधर्म देवलोक की देवी व ईशान देवलोक की देवी का परिचारणा सम्बन्ध क्रमशः १, ३, ५, ७ देवलोक के देवों से, २, ४, ६, ८ देवलोक के देवों से है। ["सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः कल्पयोर्देवाः स्पर्शपरिचारकाः, स्पर्शेन—स्तनभुजोरु-जघनादिगात्रस्पर्शेन परिचार—प्रवीचारो" मलय टीका पद ३४] अर्थात् सनत्कुमार माहेन्द्रदेव देवी के साथ स्पर्श परिचारणा (स्तन, भुजा, पेट-जंघादि का स्पर्श) करते हैं।

(भवनपति यावत् ईशान देवों तक) उन देवों के शुक्र पुद्गल होते हैं। वे शुक्र पुद्गल उन अप्सराओं के लिए बार-बार श्रोत्रेन्द्रिय रूप से, चक्षुरिन्द्रिय रूप से, रसेन्द्रिय रूप से, घ्राणेन्द्रिय रूप से, स्पर्शेन्द्रिय रूप से, इष्ट रूप से, कमनीय रूप से, मनोज्ञ रूप से, अति मनोज्ञ (मनाम) रूप से, सुभग रूप से, सौभाग्य-रूप-यौवन-गुण-लावण्य रूप से परिणत होते हैं।

नोट—कायिक मैथुन सेवन से मनुष्यों की तरह शुक्रपुद्गलों का क्षरण होता है परन्तु वह वैक्रियशरीरवर्ती होने के कारण गर्भाधान का कारण नहीं होता, किन्तु देवियों के शरीर में उन शुक्रपुद्गलों के संक्रमण से सुख उत्पन्न होता है।

शुक्र के पुद्गल और देव

मणुण्णत्ताए मणामत्ताए सुभगत्ताए सोहग्ग-रूव-जोव्वण-गुणलावण्ण-त्ताए ते तासिं भुज्जो भुज्जो परिणमंति।

—पण्ण० प ३४। सू २०५२

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और सौधर्म—ईशान कल्प के देव काय-परिचारक होते हैं।

तब वे देव उन अप्सराओं के साथ कायपरिचारणा (शरीर से मैथुन-सेवन) करते हैं। जैसे शीतपुद्गल, शीतयोनिवाले प्राणी को प्राप्त होकर अत्यन्त शीत अवस्था को प्राप्त करके रहते हैं, अथवा उष्ण पुद्गल जैसे उष्ण योनि वाले प्राणी को पाकर अत्यन्त उष्ण अवस्था को प्राप्त करके रहते हैं, उसी प्रकार उन देवों द्वारा अप्सराओं के साथ काया से परिचारणा करने पर उनका इच्छा मन (इच्छा प्रधान मन) शीघ्र ही हट जाता है—तृप्त हो जाता है।

मारणान्तिक समुद्घात मरणकाल में हो सकता है, शेष समय में नहीं, वह भी सब जीव नहीं करते। अंतराल गति में नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल में उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य

पुद्गल शाश्वत भी है और अशाश्वत भी। द्रव्यार्थतया शाश्वत है और पर्याय रूप से अशाश्वत। परमाणु पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा से अचरम (अंतिम नहीं) है। यानी परमाणु संघात रूप से परिणत होकर भी पुनः परमाणु बन जाता है, अतः द्रव्यत्व की दृष्टि से चरम—अन्तिम (Ultimate) नहीं है। क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से चरम भी होता है और अचरम भी।

पुद्गल की द्विविधा परिणति

पुद्गल की परिणति दो प्रकार की होती है—

१—सूक्ष्म और २—बादर-स्थूल।

परमाणु परमाणु रूप में और स्कंध स्कंध रूप में रहे तो कम से कम एक समय और अधिक से अधिक असंख्यातकाल तक रह सकते हैं। बाद में तो उन्हे बदलना ही पड़ता है। यह इनकी कालसापेक्ष स्थिति है। क्षेत्र सापेक्ष स्थिति—परमाणु और स्कंध में एक क्षेत्र में रहने की स्थिति भी यही है।

परमाणु स्कंध रूप में परिणत होकर फिर परमाणु बनने में कम से कम एक समय और अधिक से अधिक असंख्यातकाल लग जाता है और द्व्यणुकादि स्कंधों के परमाणु रूप में और त्र्यणुकादि स्कंध रूप में परिणत होकर फिर मूल में आने में कम से कम एक समय और अधिक से अधिक अनंतकाल लगता है।

पुद्गल के प्रकार

पुद्गल द्रव्य के स्कंध आदि चार प्रकार के होते हैं—

एक परमाणु अथवा स्कंध जिस आकाशप्रदेश में थे और किसी कारणवश वहाँ से चल पड़े, फिर आकाशप्रदेश में उत्कृष्टतः अनंतकाल के बाद और जघन्यतः एक समय के बाद ही आ पाते हैं। परमाणु आकाश के एक प्रदेश में ही रहते हैं। स्कंध के लिए यह नियम नहीं है। वे एक, दो, तीन, संख्यात व असंख्यात प्रदेशों में रह सकते हैं। यावत् समूचे लोक तक भी फैल जाते हैं। समूचे लोक में फैल जाने वाला स्कंध अचित्त महास्कंध कहलाता है।

पुद्गल का अप्रदेशित्व और सप्रदेशित्व

१—द्रव्य की अपेक्षा से स्कंध सप्रदेशी होते हैं। २ क्षेत्र की अपेक्षा से स्कंध सप्रदेशी भी होते हैं और अप्रदेशी भी। जो एक आकाश प्रदेशावगाही होता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् आकाश के एक प्रदेश में ठहरने वाला होता है, वह अप्रदेशी और दो आदि आकाश-प्रदेश में ठहरनेवाला होता है वह सप्रदेशी है।

काल की अपेक्षा से—जो स्कंध एक समय की स्थिति वाला होता है वह अप्रदेशी और जो इससे अधिक स्थितिवाला होता है वह सप्रदेशी है।

भाव की अपेक्षा से—एक गुण (Unit) वाला स्कंध अप्रदेशी और अधिक गुण वाला सप्रदेशी होता है।

द्रव्य और क्षेत्र की अपेक्षा से परमाणु अप्रदेशी होते हैं। काल की अपेक्षा से एक समय की स्थिति वाला परमाणु अप्रदेशी और अधिक समय की स्थिति वाला सप्रदेशी। भाव की अपेक्षा से एक गुणवाला अप्रदेशी और अधिक गुणवाला सप्रदेशी।

परिणमन के तीन हेतु

परिणमन की अपेक्षा पुद्गल तीन प्रकार के होते हैं—

१—वैस्रसिक—(स्वाभाविक) पुद्गल

२—प्रायोगिक पुद्गल

३—मिश्र पुद्गल

स्वभावतः जिनका परिणमन होता है—वे वैस्रसिक है—जैसे—जीवच्छुशरीर। जीव के प्रयोग से शरीर आदि रूप में परिणत पुद्गल प्रायोगिक है। जीव के द्वारा मुक्त होने पर जिनका जीव के प्रयोग में हुआ परिणमन नहीं छूटता अथवा जीव के प्रयत्न और स्वभाव—दोनों के संयोग से जो बनते हैं—वे मिश्र कहलाते हैं—जैसे—मृत शरीर।

इनका रूपान्तर असंख्यातकाल के बाद अवश्य ही होता है।

"जत्थ जल तत्थ वणस्सइ" अर्थात् जहाँ जल होता है—वहाँ वनस्पति अवश्यमेव होती है। जल समुद्रों में विशेष होता है इसलिए समुद्र में जीव अधिक होते हैं परन्तु पूर्व-पश्चिम के समुद्रों में चन्द्र-सूर्य के द्वीप विशेष है अतः वहाँ जल थोड़ा होने से वनस्पति भी थोड़ी है और पश्चिम में गौतम द्वीप अधिक होने से तीनों दिशाओं की अपेक्षा पश्चिम दिशा में जीव सबसे थोड़े हैं।

अस्तु पण्णवण्णा का तीसरा पद अल्पबहुत्व का है जिसमें दिशा, गति, पुद्गल आदि २७ द्वार से अल्पबहुत्व का विवेचन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अल्पबहुत्व चार प्रकार से हैं—अल्प, बहुत्व, तुल्य और विशेषाधिक है। अनाहारक जीव अनंत हैं—अनाहारक से आहारक जीव असख्यातगुणे अधिक है।

केवल ज्ञानी मनुष्य अवगाहना से चार स्थान हीनाधिक है—क्योंकि अपर्याप्त अवस्था में केवल ज्ञान नहीं होता है परन्तु केवल समुद्घात करते हुए सम्पूर्ण लोक-व्यापी केवली के प्रदेश होने से असंख्यातगुणी हीनाधिक होती है।

अचित्त महास्कंध तीन लोकव्यापी है। यह स्कंध रचना केवलीसमुद्घात के चतुर्थ समय में होती है। जीव द्रव्य व अजीव द्रव्यों को ग्रहण कर उसको अपने शरीरादि रूप में परिणत करते हैं। यह उनका परिभोग है। जीव द्रव्य परिभोक्ता है और अजीव द्रव्य अचेतन होने से ग्रहण करने योग्य है, अतः वे भोग्य है। इस प्रकार जीव द्रव्य और अजीव द्रव्यों में भोक्तृभोग्य भाव है।

परमाणु पुद्गल में उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य और चरम-अचरमत्व

पुद्गल शाश्वत भी है और अशाश्वत भी। द्रव्यार्थतया शाश्वत है और पर्याय रूप से अशाश्वत है। परमाणु पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा अचरम (अन्तिम नहीं) है। यानी परमाणु संघात रूप में परिणत होकर भी पुनः परमाणु बन जाता है इसलिए द्रव्यत्व की दृष्टि से चरम (अन्तिम—Ultimate) नहीं है। क्षेत्र, काल, और भाव की अपेक्षा से चरम भी होता है और अचरम भी।

पुद्गल की द्विविधा परिणति

पुद्गल की परिणति दो प्रकार की होती है—

१—सूक्ष्म और २—बादर-स्थूल।

अनंतप्रदेशी स्कंध भी जब तक सूक्ष्म परिणति में रहता है तब तक इन्द्रिय-ग्राह्य नहीं बनता और सूक्ष्म परिणति वाले स्कंध चतुःस्पर्शी होते हैं। उत्तरवर्ती चार स्पर्श स्थूल परिणामवाले स्कंधों में ही होते हैं। गुरु-लघु और मृदु-कठोर ये स्पर्श पूर्ववर्ती चार स्पर्शों के सापेक्ष-संयोग से बनते हैं। रूक्ष स्पर्श की बहुलता से लघु स्पर्श होता है और स्निग्ध की बहुलता से गुरु। शीत और स्निग्ध स्पर्श की बहुलता से मृदु स्पर्श और रूक्ष तथा उष्ण स्पर्श की बहुलता से कर्कश स्पर्श बनता है। तात्पर्य यह है कि सूक्ष्म परिणति की निवृत्ति के साथ-साथ जहाँ स्थूल परिणति होती है, वहाँ चार स्पर्श और बढ़ जाते हैं।

प्रदेश और परमाणु में सिर्फ स्कंध के पृथग् भाव (अलग होने) और अपृथग् भाव (जुड़े रहने) का अन्तर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिक्रमण के पांच भेद हैं—

रात्रिक, दैवसिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक तथा सांवत्सरिक प्रतिक्रमण।

परमाणु-समुदाय और पारमाणविक जगत्

यह दृश्य जगत्—पौदगलिक जगत् परमाणु संघटित है। परमाणुओं से स्कंध बनते हैं और स्कंधों से स्थूल पदार्थ। पुद्गल में संघातक और विघातक—ये दोनों शक्तियां हैं। पुद्गल शब्द में भी 'पूरण और गलन' इन दोनों का मेल है। परमाणु के मेल से स्कंध बनता है और एक स्कंध के टूटने से अनेक स्कंध बन जाते हैं। यह गलन (Fusion) और मिलन (Fission) की प्रक्रिया स्वाभाविक भी होती है और प्राणी के प्रयत्न से भी। पुद्गल की अवस्थाएं सादि-सांत होती हैं, अनादिअनंत नहीं। इसलिए एक पौद्गलिक पदार्थ से दूसरे पौद्गलिक पदार्थ के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। पारे को सोने में बदला जा सकता है। पुद्गल में अगर वियोजक शक्ति नहीं होती तो सब अणुओं का एक पिंड बन जाता और यदि संयोजक शक्ति नहीं होती तो एक-एक अणु अलग रखकर कुछ नहीं कर पाते। प्राणी जगत् के प्रति परमाणु का जितना भी है कार्य है—वह सब परमाणु समुदयजन्य है। अनंत परमाणु स्कंध ही प्राणी जगत् के लिए उपयोगी है।

परमाणु की निष्कंप दशा औत्सर्गिक (स्वाभाविक) है। इसलिए उसका उत्कृष्ट असंख्यातकाल है। सकंप दशा आपवादिक (अस्वाभाविक—कभी-कभी होने वाली) है। इसलिए वह उत्कृष्ट से भी आवलिका के असंख्यातवें भाग मात्र काल तक रहती है।

जब परमाणु, परमाणु अवस्था में (स्कंध से पृथक्) रहता है, तब स्वस्थान कहलाता है। और जब स्कंध अवस्था में रहता है तब परस्थान कहलाता है। एक परमाणु एक समय तक चलन क्रिया को बंद रहकर फिर चलता है, तब स्वस्थान की अपेक्षा अन्तर जघन्य एक समय का होता है और उत्कृष्ट से वही परमाणु असंख्यातकाल तक किसी स्थान स्थिर रहकर फिर चलता है तब अन्तर असंख्यातकाल का होता है। जब परमाणु द्विप्रदेशादि स्कंध के अन्तर्गत होता है और जघन्य से एक समय चलन क्रिया से निवृत्त होकर फिर चलित होता है, तब परस्थान की अपेक्षा अन्तर जघन्य एक समय का होता है। परन्तु जब वह परमाणु असंख्यातकाल तक द्विप्रदेशादिक स्कंध रूप में रहकर पुनः उस स्कंध में पृथक् होकर चलित होता है, तब परस्थान की अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर असंख्यातकाल होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन परिभाषानुसार अच्छेद्य, अग्राह्य, अग्राह्य और निर्विभागी पुद्गल को परमाणु कहा जाता है। आधुनिक विज्ञान के विद्यार्थी को परमाणु के उपलक्षणों में संदेह हो सकता है, कारण कि विज्ञान के सूक्ष्म यंत्रों में परमाणु की अविभाज्यता सुरक्षित नहीं है।

परमाणु के दो भेद हैं—(१) सूक्ष्म परमाणु व (२) व्यावहारिक परमाणु।

सूक्ष्म परमाणु एक प्रदेशी है। व्यावहारिक परमाणु अनंत सूक्ष्म परमाणुओं के समुदय से बनता है।

यद्यपि संस्थान—परिमण्डल, वृत्त, त्र्यंश, चतुरस्र आदि सूक्ष्मता में भी होता है, फिर भी उसका गुण नहीं है।

सूक्ष्म परमाणु द्रव्य रूप में निरवयव और अविभाज्य होते हुए भी पर्याय दृष्टि से वैसा नहीं है। उसमें वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श—ये चार गुण और अनंत पर्याय होते हैं।

कहा है—

परमाणो हि अप्रदेशो गीयते—द्रव्यरूपतया सांशो भवतीति, न तु कालभावाभ्यामपि 'अप्परासो दव्वट्ठयाए' इति वचनात्, ततः काल-भावाभ्यां सप्रदेशत्वेऽपि न कश्चिद्दोषः।

—प्रज्ञा० पद ५। टीका

अर्थात् द्रव्य रूप से परमाणु अप्रदेशी है परन्तु काल तथा भाव की अपेक्षा सप्रदेशी भी है। पर्याय की दृष्टि से एक गुण वाला परमाणु अनंतगुणवाला हो सकता है और अनतगुणवाला परमाणु एक गुणवाला हो सकता है। एक परमाणु में वर्ण से वर्णान्तर, गन्ध से गन्धान्तर, रस से रसान्तर और स्पर्श से स्पर्शान्तर होना जैन दृष्टि से सम्मत है।

यह दृश्य जगत् पौद्गलिक जगत् परमाणुसंघटित है। परमाणुओं से स्कंध बनते हैं और स्कधों से स्थूलपदार्थ पुद्गल में सघातक और विघातक—ये दोनों शक्तियां पुद्गल शब्द में भी 'पूरण और गलन' इन दोनों शक्तियों का मेल है। परमाणु के मेल से स्कंध बनता है और एक स्कंध के टूटने से भी अनेक स्कंध बनते हैं। यह गलन और मिलन की प्रक्रिया स्वाभाविक भी होती है और प्राणी के प्रयोग से भी। क्योंकि पुद्गल की अवस्थाएं सादि-सांत होती है, अनादि-अनंत नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल में अगर वियोजक शक्ति नहीं होती तो सब अणुओं का एक पिंड बन जाता और यदि संयोजक शक्ति नहीं होती तो एक-एक अणु अलग-अलग रहकर कुछ नहीं कर पाते। प्राणी जगत् के प्रति परमाणु का जितना भी कार्य है—वह सब परमाणु समुदायजन्य है और साफ कहा जाय तो अनंत परमाणु स्कंध ही प्राणी जगत के लिए उपयोगी है।

परमाणु इन्द्रिय ग्राह्य नहीं होता। फिर भी अमूर्त नहीं है, वह रूपी है। पारमार्थिक प्रत्यक्ष से यह देखा जाता है। परमाणु मूर्त होते हुए भी दृष्टिगोचर नहीं होता, इसका कारण है—उसकी सूक्ष्मता। अकेवली यानी छद्मस्थ अथवा क्षायोपशमिक ज्ञानी—जिसका आवरण विलय अपूर्ण है, परमाणु को जान भी सकता है, नहीं भी। अवधिज्ञानी रूपी द्रव्य विषयक प्रत्यक्ष वाला योगी उसे जान सकता है, इन्द्रिय प्रत्यक्ष वाला व्यक्ति नहीं जान सकता।

यह दृश्य जगत्—पौद्गलिक जगत् परमाणु संघटित है। परमाणुओं से स्कंध बनते हैं और स्कंधों से स्थूल पदार्थ। पुद्गल में संघातक और विघातक दोनों शक्तियां है। पुद्गल शब्द में भी 'पूरण और गलन' इन दोनों का मेल है। परमाणु के मेल से स्कंध बनता है और स्कंध के टूटने से अनेक स्कंध बन जाते हैं। यह गलन और मिलन की प्रक्रिया स्वाभाविक भी होती है और प्राणी के प्रयोग से भी। कारण कि पुद्गल की अवस्थाएं सादि-सांत होती है, अनादि-अनंत नहीं।

पुद्गल शाश्वत भी है और अशाश्वत भी। द्रव्यार्थतया शाश्वत है और पर्याय रूप में अशाश्वत। परमाणु पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा अचरम है। यानी परमाणु संघात रूप में परिणत होकर भी पुनः परमाणु बन जाता है। इसलिए द्रव्यत्व की दृष्टि से चरम नहीं है। क्षेत्र, काल व भाव की अपेक्षा चरम भी होता है, अचरम भी।

प्रवाह की अपेक्षा स्कंध और परमाणु अनादि—अपर्यवसित है। कारण कि इसकी सन्तति अनादिकाल से चली आ रही है और चलती रहेगी। स्थिति की अपेक्षा यह सादि—सपर्यवसान भी है। जैसे—परमाणु से स्कंध बनता है और स्कंध भेद से परमाणु बन जाता है।

परमाणु परमाणु रूप में, स्कंध स्कंध के रूप में रहें तो कम से कम एक समय और अधिक से अधिक असंख्यातकाल तक रह सकते हैं। बाद में उन्हें बदलना ही पड़ता है। यह इनकी काल-सापेक्ष स्थिति है। क्षेत्रापेक्ष स्थिति-परमाणु व स्कंध के एक क्षेत्र में रहने की स्थिति यही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु के स्कंध रूप में परिणत होकर फिर परमाणु बनने में जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः असंख्यकाल लगता है। और द्वयणुकादि स्कंधों के परमाणु रूप में अथवा त्र्यणुकादि स्कंध रूप में परिणत होकर फिर मूल रूप में आने से जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः अनंतकाल लगता है।

एक परमाणु अथवा स्कंध जिस आकाशप्रदेश में थे और किसी कारणवश वहाँ से चल पड़े, फिर उसी आकाशप्रदेश में उत्कृष्टतः अनंतकाल के बाद और जघन्यतः एक समय के बाद ही आ जाते हैं। परमाणु आकाश के एक प्रदेश में ही रहते हैं। स्कंध के लिए यह नियम नहीं है। वे एक, दो, संख्यात, असंख्यात प्रदेशों में रह सकते हैं। यावत् समूचे लोकाकाश तक भी फैल जाते हैं। समूचे लोक में फैल जाने वाला स्कंध अचित्त महास्कंध कहलाता है। जैन शास्त्रों में अभेदोपचार से पुद्गल युक्त आत्मा को पुद्गल कहा है। किन्तु मुख्यतया पुद्गल का अर्थ है—मूर्तिक द्रव्य।

केवली समुद्घात के चतुर्थ समय में आत्मा से छुटे हुए जो पुद्गल समूचे लोक में व्याप्त होते हैं, उसको अचित्त महास्कंध कहते हैं। छोटा-बड़ा-सूक्ष्म-स्थूल, हल्का-भारी, लम्बा-चौड़ा, बन्ध, भेद, आकार, प्रकाश-अंधकार, ताप-छाया— इनको पौद्गलिक मानना जैन तत्वज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि का परिचायक है।

वर्गणा का वर्गणान्तर के रूप में परिवर्तन होना भी जैन दृष्टि सम्मत है।

श्वासोच्छ्वासवर्गणा चतुःस्पर्शी और अष्टस्पर्शी दोनों प्रकार की होती है। कार्मण, भाषा और मन—ये तीन वर्गणाएं चतुःस्पर्शी सूक्ष्म स्कंध हैं। अवशेष औदारिकादि चार वर्गणा अष्टस्पर्शी है।

संयोग में केवल अन्तररहित अवस्थान होता है किन्तु बंध में एकत्व होता है।

तएणं तीसेमेघोघरसिअंगंभीरमहुरयरसद्द जोयण परिमंडलाए सुघोसाए घंटाए तिक्खुत्तो उल्लालिआए समाणीए सोहम्मे कप्पे अण्णेहिं सगूणेहिं बत्तीसविमाणावाससयसहस्सेहिं अण्णाइं सगूणाइं बत्तीसं घंटा सयसहस्साइं जमगसयगं कणकणारावं कोउं पयत्ताइं पि हुत्था।

—जंबू॰ अ ५

अर्थात् तार का सम्बन्ध न होते हुए भी सुघोषा घंटा का शब्द असंख्य योजन की दूरी पर रही हुई घंटाओं में प्रतिध्वनित होता है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्तु हमारा शब्द क्षणमात्र में लोकव्यापी बन जाता है।

अभास्कर वस्तु में पड़ने वाली छाया दिन में श्याम और रात में काली होती है। भास्कर वस्तुओं में पड़ने वाली छाया वस्तु के वर्णानुरूप होती है। आदर्श-दृष्टा अपने शरीर को नहीं देखता है किन्तु प्रतिबिम्ब देखता है। प्रतिबिम्ब का नाम छाया है।[1] छाया पौद्गलिक परिणाम है। प्राणी का आहार, शरीर, इन्द्रियां, श्वासोच्छ्वास, भाषा व द्रव्य मन—ये सब पौद्गलिक है।

अस्तु—यह समूचा दृश्य संसार पौद्गलिक ही है। जीव की समस्त वैभाविक अवस्थाएं पुद्गल निमित्तक होती है। काल-पुद्गल और जीव—ये तीन द्रव्य अनेक है—व्यक्ति रूप में अनंत है। अचैतन्य की अपेक्षा धर्म, अधर्म आकाश व पुद्गल सदृश है।

बन्धकाल में अधिक अंशवाले परमाणुहीन अंशवाले परमाणुओं को अपने रूप में परिणत कर लेते है। पांच अंशवाले स्निग्ध परमाणु के योग से तीन अंशवाला स्निग्ध परमाणु पांच अंशवाला हो जाता है।

इसी प्रकार पांच अंशवाले स्निग्ध परमाणु के योग से तीन अंशवाला रूखा परमाणु स्निग्ध हो जाता है। जिस प्रकार स्निग्धत्व हीनांश रूक्षत्व को अपने में मिला लेता है उसी प्रकार रूक्षत्व भी हीनांश स्निग्धत्व अपने में मिला लेता है। कभी-कभी परिस्थिति वश स्निग्ध परमाणु समांश रूक्ष परमाणुओं को और रूक्ष परमाणु समांश स्निग्ध परमाणुओं को भी अपने-अपने रूप में परिणत कर लेते हैं परन्तु दिगम्बर परम्परा में यह समांश परिणति मान्य नहीं है।

छाया—पारदर्शक, अपारदर्शक दोनों प्रकार की होती है।

आतप—उष्ण प्रकाश या ताप किरण।

उद्योत—शीत प्रकाश या ताप किरण।

अग्नि—स्वयं गरम होती हैं और उसकी प्रभा भी गरम होती है।

आतप—स्वयं ठंडा और उसकी प्रभा गरम होती है।

उद्योत—स्वयं ठंडा और उसकी प्रभा भी ठंडी होती है।

मानसिक चिन्तन भी पुद्गल सहायापेक्ष है। अवयवों के परस्पर अवयव और अवयवी के रूप में परिणमन होता है—उसे बंध कहा जाता है। स्कंध केवल

१. रश्मिः छाया पुद्गलसंहति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुओं के संयोग से नहीं बनता। चिकने और रूखे परमाणुओं का परस्पर एकत्व होता है तब स्कंध बनता है अर्थात् स्कंध ही उत्पत्ति का हेतु परमाणुओं का स्निग्ध और रूक्षत्व है।

जघन्य अंशवाले चिकने व रूखे परमाणु मिलकर स्कंध नहीं बना सकते। समान अंशवाले परमाणु, यदि सदृश हो, केवल चिकने हो या रूखे हो, मिलकर स्कंध नहीं बना सकते। स्निग्धता या रूक्षता दो अंश या तीन अंश आदि अधिक हो तो सदृश परमाणु मिलकर स्कंध का निर्माण कर सकते हैं।

दिगम्बर आचार्य स्थूलता और सूक्ष्मता के आधार पर पुद्गल के छः भागों में विभक्त करते हैं—

१—बादर-बादर—पत्थर आदि जो विभक्त होकर स्वयं न जुड़े।

२—बादर—प्रवाही पदार्थ जो विभक्त होकर स्वयं मिल जायें।

३—सूक्ष्म-बादर—धूप आदि स्थूल भासित होने पर भी अविभाज्य हैं।

४—बादर-सूक्ष्म—रसादि जो सूक्ष्म होने पर इन्द्रिय गम्य हैं।

५—सूक्ष्म—कर्मवर्गणा आदि जो इन्द्रियातीत हैं।

६—सूक्ष्म-सूक्ष्म—कर्मवर्गणा से भी अत्यन्त सूक्ष्म स्कंध।

पुद्गल के प्रकार

पुद्गल द्रव्य चार प्रकार का माना गया है—

१—स्कंध—परमाणुप्रचय।

२—स्कंधदेश—स्कंध का कल्पित विभाग।

३—स्कंधप्रदेश—स्कंध से अपृथग्भूत अविभाज्य अंश।

४—परमाणु—स्कंध से पृथक् निरंश तत्व।

प्रदेश और परमाणु में सिर्फ स्कंध से अपृथग्भाव (अलग होने) और अपृथग्-भाव (जुड़े रहने) का अन्तर है।

पुद्गल कब से और कब तक

प्रवाह की अपेक्षा से स्कंध और परमाणु अनादि-अपर्यवसित है, कारण कि इनकी सतन्ति अनादिकाल से चली आ रही है और चलती रहेगी। स्थिति की अपेक्षा से यह सादि-सपर्यवसन भी है। जैसे—परमाणुओं से स्कंध बनता है और स्कंध-भेद से परमाणु बन जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल द्रव्य की चार प्रकार की स्थिति है—

१—द्रव्यस्थानायु—परमाणु परमाणु रूप में और स्कंध स्कंध रूप में अवस्थित है—वह द्रव्यस्थानायु है।

२—क्षेत्रस्थानायु जिस आकाश प्रदेश में परमाणु या स्कंध रहते हैं उसका नाम है क्षेत्रस्थानायु है।

३—अवगाहना स्थानायु—परमाणु और स्कंध का नियत परिमाण में अवगाहन होता है—वह है अवगाहन स्थानायु है।

४—भावस्थानायु—परमाणु और स्कंध के स्पर्श, रूप, गंध और वर्ण की परिणत को भाव स्थानायु कहा जाता है।

नोट—क्षेत्र का सम्बन्ध आकाशप्रदेशों से है. वह परमाणु और स्कंध द्वारा अवगाढ़ होता है तथा अवगाहन का सम्बन्ध पुद्गल द्रव्य से है। तात्पर्य यह है कि उनका अमुक परिमाण क्षेत्र में प्रसरण होता है।

पुद्गल के भी जीव की तरह दो भाव होते हैं—परिस्पन्दनात्मक तथा अपरिस्पन्दनात्मक। अपरिस्पन्दात्मक भाव में पुद्गल वर्ण, गंध, रस, स्पर्श तथा अगुरुलघु आदि गुणों में परिणमन करता है। (सर्व ५ । २२ । पृ० २९२) परिस्पन्दात्मक भाव में एजनादि क्रिया तथा देशान्तर प्राप्ति रूप क्रिया करता है। परिणाम अपरिस्पन्दात्मक है तथा क्रिया परिस्पन्दात्मक है। जब जीव कोई क्रिया करता है तब उसके आत्मप्रदेशों का परिस्पन्दन होता है।

जैन दर्शन का मंतव्य है कि समग्र लोक में कार्मण वर्गणा के पुद्गल व्याप्त है। ये पुद्गल स्वयं कर्म नहीं है, किन्तु उनमें कर्म होने की योग्यता है। ये कर्म रूप पर्याय विशेष प्रसंगानुसार परिणत हो जाते हैं। कहा है—

द्रव्यस्य पर्यायो धर्मान्तरनिवृत्ति-धर्मान्तरोपजननरूपः अपरिस्पन्दात्मकः परिणामः।

—सर्व० ५ । २२ । पृ० २९२

अर्थात् अपरिस्पन्दात्मक भाव परिणाम कहलाता है।

परिणमन की अपेक्षा पुद्गल के तीन प्रकार हैं—

१—वैस्रसिक—स्वभावतः जिनका परिणमन होता है वे वैस्रसिक पुद्गल हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२—प्रायोगिक—जीव के प्रयोग से शरीरादि रूप में परिणत पुद्गल प्रायोगिक पुद्गल है।

३—मिश्र—जीव के द्वारा मुक्त होने पर भी जिनका प्रयोग से हुआ परिणमन नहीं छूटता अथवा जीव के प्रयत्न व स्वभाव दोनों के संयोग से बनते हैं वे मिश्र पुद्गल कहलाते हैं। जैसे—

१—प्रायोगिक परिणाम—जीवच्छरीर।

२—मिश्र परिणाम—मृत शरीर।

३—वैस्रसिक परिणाम—उल्कापात।

इनका रूपान्तर असंख्यकाल के बाद अवश्य ही होता है।

क्षेत्र और अवगाहन में इतना अन्तर है कि क्षेत्र का सम्बन्ध आकाश प्रदेशों से है, वह परमाणु व स्कंध द्वारा अवगाढ़ होता है तथा अवगाहन का सम्बन्ध पुद्गल द्रव्य से है। तात्पर्य, कि उनका अमुक परिणाम क्षेत्र में प्रसरण होता है।

द्रव्य लेश्या पौद्गलिक है। यह अनंतप्रदेशी अष्टस्पर्शी पुद्गल है। पांच वर्ण, पांच रस व दो गंध होते हैं। द्रव्यलेश्या आकाश के असंख्यातप्रदेश को अवगाहकर रहती है। प्रत्येक द्रव्यलेश्या की अनंतवर्गणा होती है। गुरुलघु है। द्रव्ययोग में मनोयोग व वचनयोग के पुद्गल चतुःस्पर्शी है तथा काययोग के पुद्गल अष्टस्पर्शी है।

स्कंध-भेद की प्रक्रिया के कुछ उदाहरण

दो परमाणु-पुद्गल के मेल से द्विप्रदेशी स्कंध बनता है और द्विप्रदेशी स्कंध के भेद से दो परमाणु हो जाते हैं।

तीन परमाणु से त्रिप्रदेशी स्कंध बनता है और उनके अलगाव में दो विकल्प हो सकते हैं—तीन परमाणु अथवा एक परमाणु और एक द्विप्रदेशी स्कंध।

चार परमाणु के समुदय से चतुःप्रदेशी स्कंध बनता है और उसके भेद के चार विकल्प होते हैं।

१—एक परमाणु और एक त्रिप्रदेशी स्कंध।

२—दो द्विप्रदेशी स्कंध।

३—दो पृथक्-पृथक् परमाणु और एक दोप्रदेशी स्कंध।

४—चारों पृथक्-पृथक् परमाणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यकर्म पुद्गल रूप है और वह भावकर्म के निमित्त से कर्म का रूप ग्रहण करता है। यह भावकर्म ही है जिससे जैन दर्शन में क्रिया कहा है। विग्रहगति में भी जीव कार्मण काययोग से क्रिया करता है।

शरीर-संघातन नामकर्म के उदय से शरीर के पुद्गल सन्निहित, एकत्रित या व्यवस्थित होते हैं और शरीर-बंधन नामकर्म के उदय से वे परस्पर बंध जाते हैं। उत्त० में कहा है—

रूविणो चेवारूवी य, अजीवा दुविहा वि य।

—उत्त० अ ३६। गा २५४ उत्तरार्ध

अजीवों के रूपी और अरूपी ये दो भेद कहे गये हैं।

धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल और जीव ये पांच अस्तिकाय हैं। ये तिर्यक्-प्रचय-स्कंध रूप में है अतः इन्हे अस्तिकाय कहा जाता है। पुद्गल विभागी है। उसके स्कंध और परमाणु ये दो मुख्य विभाग हैं। परमाणु उसका अविभाज्य विभाग है। पुद्गल के स्कंध अनंत हैं—द्विप्रदेशी यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध। देश अनियत है। प्रदेश दो यावत् अनतपरमाणु।

श्यामाचार्य द्रव्यानुयोग के विशेष व्याख्याकार थे। प्रज्ञापना जैसे विशालकाय सूत्र की रचना उनके विशद वैदुष्य का परिणाम है। प्रज्ञापना के ३६ पद्य है और ३४९ सूत्र है। यह समवायांग आगम का उपांग माना गया है। श्यामाचार्य को प्रथम कालक के रूप में पहचाना गया है। आचार्य श्याम ने निगोद का सांगोपांग विवेचन कर शकेन्द्र को आश्चर्याभिभूत कर दिया। इन्द्र ने कहा—मैंने सीमन्धर स्वामी से जैसा विवेचन निगोद के विषय में सुना था—वैसा ही विवेचन आपसे सुनकर मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ हूँ। आचार्य श्याम का जन्म वी० नि० २८० (वि० पू० २९०) बताया गया है। आप दस पूर्वधर थे।[१]

आर्यरक्षित का जन्म वी० नि० ५२२ (वि० ५२, ई० पू० ५) में हुआ था। मुनि बने। सार्ध नौ पूर्वों का अध्ययन किया।

सीमंधर स्वामी द्वारा इन्द्र के सामने निगोद व्याख्याता के रूप में आर्यरक्षित की प्रशंसा हुई। निगोद की सूक्ष्म व्याख्या इन्द्र ने आर्यरक्षित से सुनी। इन्द्र ने बहुत प्रशंसा की।

१. इतिहास के पृष्ठों पर उनकी प्रसिद्धि निगोद व्याख्याता के रूप में है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव में सक्रियता होती है अत: वह पौद्‌गलिक कर्म का संग्रह या स्वीकरण करता है। पौद्‌गलिक कर्म का संग्रहण करता है अत: उससे करण वीर्य प्रभावित होता है।

दो आयुष्य के कर्मपुदगल जीव को एक साथ प्रभावित नहीं करते। वे पुद्‌गल जिस स्थान के उपयुक्त बने हुए होते हैं, उसी स्थान पर जीव को घसीट ले जाते हैं। उन पुद्‌गलों की गति उनकी रासायनिक क्रिया के अनुरूप होती है।

द्रव्येन्द्रिय अजीव है, पुदगल है। भावेन्द्रिय जीव है। एक जन्म से दूसरे जन्म में व्युत्क्रम्यमाण जीव द्रव्येन्द्रिय की अपेक्षा अन-इन्द्रिय व्युत्क्रांत होता है और लब्धीन्द्रिय की अपेक्षा सइन्द्रिय।

जैसे खाया हुआ भोजन अपने आप सात धातु के रूप में परिणत होता है, वैसे ही जीव द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म योग्य पुद्‌गल अपने आप कर्म रूप में परिणत हो जाते हैं।

अजीव के चार प्रकार—धर्म, अधर्म, आकाश और काल गतिशील नहीं है, केवल पुद्‌गल गतिशील है। उसके दोनों रूप परमाणु और स्कंध परमाणु समुदय गतिशील है। इनमें नैसर्गिक व प्रायोगिक दोनों प्रकार की गति होती है। स्थूल स्कंध-प्रयोग के बिना गति नहीं करते हैं। सूक्ष्म स्कंध-स्थूल प्रयत्न के बिना भी गति करते हैं।

न्याय और दर्शन का विशेष अध्ययन के लिए हमने निम्नलिखित थोकड़े सीखें—कंठस्थ किये।

(१) पचीसबोल, (२) पचीसबोल की चरचा, (३) तेरह द्वार, (४) लघुदंडक, (५) गतागत, (६) जाणपणाका पचीसबोल, (७) हितशिक्षा के पचीसबोल, (८) कर्मप्रकृति, (९) कायस्थिति, (१०) शील की नवबाड़, (११) आराधना, (१२) इक्कीस द्वार का बासठिया, (१३) बावनबोल, (१४) तेरापंथ प्रबोध, (१५) श्रावक संबोध, (१६) खंडाजोयण, (१७) प्रतिक्रमण, (१८) भक्तामर, (१९) गुणस्थान का बासठिया, (२०) १४ जीव भेद की अल्पबहुत्व, (२१) संजया, (२२) नियंठा, (२३) पानाकी चरचा, (२४) सेरचा, (२५) सोलहस्वप्न, (२६) तेवीसपदवी, (२७) परीक्षा मुखन्याय, (२८) पांच भाव, (२९) ९८ बोल की अल्पबहुत्व, (३०) मोक्ष-मार्ग का थोकड़ा, (३१) उपसर्ग स्तोत्र, (३२) श्वासोच्छ्वास का थोकड़ा, (३३) भ्रमविध्वंसन की हुंडी, (३४) लोकोंजी की हुंडी, (३५) छः आरा, (३६) जैन सिद्धांत दीपिका आदि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके बाद हमने परीक्षामुख, न्यायदीपिका-अष्टसहस्री, प्रमेयरत्नमाला, प्रमेय-कमलमार्त्तण्ड, स्याद्वादरत्नाकरावतारिका, तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकालकार, प्रमाण-मीमांसा, स्याद्वादमंजरीका अध्यनकर आचारांग आदि बत्तीस आगमों का अध्ययन किया। प्रत्येक विषय को क्रमवार विभाजन किया। विभाजित की पद्धति दशमलव प्रणाली से है।

प्राण और पर्याप्ति का कार्य-कारण सम्बन्ध है। जीवन शक्ति को पौद्गलिक शक्ति की अपेक्षा रहती है। जन्म के पहले क्षण में प्राणी कई पौद्गलिक शक्तियों को रचना करता है। उनके द्वारा स्वयोग्य पुद्गलों का ग्रहण, परिणमन व उत्सर्जन होता है। इनकी रचना प्राणशक्ति के अनुपात पर होती है। जिस प्राणी में जितनी प्राणशक्ति की योग्यता होती है, वह उतनी ही पर्याप्तियों का निर्माण कर सकता है। प्राण जीव है व पर्याप्ति पुद्गल है। प्राणियों की शरीर के माध्यम से होने वाली जितनी क्रियाएँ हैं वे सब आत्मशक्ति व पौद्गलिक शक्ति दोनों के पारस्परिक सहयोग से ही होती है।

अजीव, मन, भाषा आदि के पुद्गल जीव द्वारा ग्रहण किये जाते हैं।

स्थानांग सूत्र में कहा है कि सूक्ष्म वायु के द्वारा स्पृष्ट पुद्गल स्कंधों में कंपन, प्रकंपन, चलन, क्षोभ, स्पदन, घटना, उदीरणा और विचित्र आकृतियों का परिणमन देखकर विभग अज्ञानी को ये सब जोव है—ऐसा भ्रम हो जाता है।

आयुष्यकर्म के पुद्गल जिस स्थान के उपयुक्त बने हुए होते हैं, उसी स्थान पर जीव को घसीट ले जाते हैं। उन पुद्गलों की गति उनकी रासायनिक क्रिया के अनुरूप होती है।

योनिभूत वीर्य की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट बारह मुहूर्त की होती है। गर्भ में प्रवेश पाते समय जीव का पहला आहार ओज और वीर्य होता है। वे स्व-प्रायोग्य पुद्गलों का आकर्षण और संग्रह करते हैं। गर्भज प्राणी का प्रथम आहार रज-वीर्य के अणुओं का होता है। देवता अपने-अपने स्थान के पुद्गलों का संग्रह करते हैं। लेकिन गर्भज प्राणी का प्रथम आहार रज-वीर्य के पुद्गल परमाणुओं का होता है। इसके अनन्तर हो उत्पन्न प्राणी पौद्गलिक शक्तियों का क्रमिक निर्माण करते हैं। प्रत्येक प्राणी के उत्पत्ति-स्थान में वर्ण, गंध, रस व स्पर्श का कुछ न कुछ तारतम्य होता ही है।

प्रत्येक वस्तु के वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, शब्द और संस्थान (वृत्त, परिमंडल, त्र्यंस, चतुरस्र) का ज्ञान सहायक-सामग्री सापेक्ष होता है। अतीन्द्रिय ज्ञान परिस्थिति की अपेक्षा से मुक्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जितने क्षेत्र में जीव और पुद्गल गति कर सकते हैं, उतना क्षेत्रलोक है और जितना क्षेत्रलोक है उतने क्षेत्र में जीव और पुद्गल गति कर सकते हैं। लोक के सब अन्तिम भागों में आबद्ध पार्श्व-स्पृष्ट पुद्गल है। लोकांत के पुद्गल स्वभाव से ही रूखे होते हैं। वे गति में सहायता करने की स्थिति में संघटित नहीं हो सकते।

नारकी, भवनपति-वाणव्यंतर-ज्योतिषी देवों में कई आहार को जानते हैं, देखते हैं, आहार करते हैं। कई न जानते हैं, न देखते हैं व आहार करते हैं। एकेन्द्रिय-द्वीन्द्रिय व त्रीन्द्रिय जीवों में—न जानते हैं, न देखते हैं परन्तु आहार करते हैं। चतुरिन्द्रिय जीव कई जानते हैं, देखते हैं आहार करते हैं। कई जानते हैं, न देखते हैं पर आहार करते हैं। पंचेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव व मनुष्य-कई जानते हैं, देखते हैं व आहार करते हैं। कई जानते हैं, देखते नहीं व आहार करते हैं। वैमानिकदेव कई जानते हैं, देखते हैं, और आहार करते हैं, कई न जानते हैं, नहीं देखते हैं परन्तु आहार करते हैं।

जीव की "त्रिवक्रा-चतुःसामयिकी" गति होती है। एक समय अधोवर्ती विदिशा से दिशा में पहुँचने में, दूसरा समय त्रसनाड़ी में प्रवेश करने में, तीसरा समय ऊर्ध्व गमन में और चौथा समय त्रसनाड़ी से निकल कर उस पार स्थावर नाड़ीगत उत्पत्ति स्थान तक पहुँचने में लगता है।

सूक्ष्म शरीर दो प्रकार के हैं—तैजस और कार्मण। तैजस शरीर, तैजस पर-माणुओं से बना हुआ विद्युतशरीर है। इससे स्थूल शरीर में सक्रियता, पाचन, दीप्ति और तेज बना रहता है। कार्मणशरीर सुख-दुःख के निमित्त बननेवाले कर्म अणुओं के समूह से बनता है।

योनिभूत वीर्य की स्थिति जघन्य अन्तमुंहूर्त और उत्कृष्ट बारह मुहूर्त की होती है।

शरीर पौद्गलिक है, उसका कारण कर्म है। इसलिए वह भी पौद्गलिक है। पौद्गलिक कार्य का समवायी कारण पौद्गलिक होता है। मिट्टी भौतिक है तो उससे बनने वाला पदार्थ भी भौतिक होगा।

आहार आदि अनुकूल सामग्री से सुखानुभूति और शस्त्र-प्रहारादि से दुःखानु-भूति होती है। आहार और शस्त्र पौद्गलिक है। इसी प्रकार सुख-दुःख के हेतु-भूत कर्म भी पौद्गलिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बन्ध की अपेक्षा जीव और पुद्गल अभिन्न है—एकमेक है। लक्षण की अपेक्षा भिन्न है। जीव चेतन है और पुद्गल अचेतन है। जीव अमूर्त है और पुद्गल मूर्त है। कर्म शब्द आत्मा पर लगे हुए सूक्ष्म पौद्गलिक पदार्थ का वाचक है।

आहार तीन प्रकार के हैं—ओज आहार, रोम आहार व कवल आहार।

अस्तिकाय शब्द का प्रयोग जैन दर्शन में ही हुआ है जबकि द्रव्य शब्द का व्यवहार अनेक दर्शनों में होता है। त्रैकालिक सत्तावाला सावयव अर्थात् प्रदेश पदार्थ अस्तिकाय है।

जिसमें स्थूल अवयवी है—वे सब पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श वाले हैं—मूर्त या रूपी है। चक्षु रूप का ग्राहक है, और रूप उसका ग्राह्य है। चक्षु और रूप के उचित सामीप्य से चक्षु विज्ञान होता है। इस प्रकार सब इन्द्रियों के विषय में जान लेना चाहिए। चूंकि इन्द्रिय विज्ञान रूपों का ही होता है। प्रिय रूप, शब्द, गंध, रस और स्पर्श राग को उभारते हैं। अप्रिय रूप, शब्द, गंध, रस और स्पर्श द्वेष को उभारते हैं। ये सब पुद्गल हैं।

जो कलह का उपशमन करता है वह धर्म की आराधना करता है। किसी के प्रति भी तिरस्कार घृणा, और निम्नता का व्यवहार करना हिंसा है, व्यामोह है। अहिंसा धान है, सत्य आदि उसकी रक्षा करने वाली बाड़ें है। अहिंसा जल है, सत्य आदि उसकी रक्षा के लिए सेतु है। वायु जैसे अग्निकाय को पार कर जाता है, वैसा ही जागरूक ब्रह्मचारी काययोग की आसक्ति को पार कर जाता है। प्रमाद कर्म और अप्रमाद अकर्म है। पौद्गलिक सुखों की तुलना किंपाक फल से की जा सकती है। ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती व उनकी पटरानी कुरुमती मरकर क्रमशः सातवीं, छट्ठी नरक में गये।

पाषाण युग से अणुयुग तक जितने उत्पीड़क और मारक शस्त्रों का आविष्कार हुआ है, वे निष्क्रिय शस्त्र हैं—द्रव्य शस्त्र हैं। ये शस्त्र पुद्गलमय हैं। उनमें स्वतः प्रेरित घातक-शक्ति नहीं है।

भगवान् ने कहा—हे गौतम ! सक्रियशस्त्र (भावशस्त्र) असंयम है। विध्वंस का मूल वही है। निष्क्रिय शस्त्रों में प्राण फूंकने वाला भी वही है।

पौद्गलिक उपाधियों से बंधा हुआ जीव संसारी आत्मा है। आत्मा से आत्मा का सजातीय सम्बन्ध है। पुद्गल उसका विजातीय तत्त्व है। जाति और रंग-रूप-ये पौद्गलिक है। सजातीय की उपेक्षा कर विजातीय को महत्व देना प्रमाद है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल का सम्मान करने वाला उद्धत है, वह नीचे जाता है। आत्मा का सर्व-सम-सत्ता को सम्मान देने वाला ही लोक-विजेता बन सकता है।

कोई भी वस्तु और वस्तु-व्यवस्था स्याद्वाद या सापेक्षवाद की मर्यादा से बाहर नहीं है। दो विरोधी गुण एक वस्तु में एक साथ रह सकते हैं। उनमें सहानवस्थान (एक साथ टीक न सके) जैसा विरोध नहीं है।

कैवल्य लाभ के बाद भगवान् महावीर ने जो कहा— वह द्वादशांग-गणिपिटक में गुंथा हुआ है। बोधिलाभ के बाद महात्मा बुद्ध ने जो कहा—वह त्रिपिटक में गुंथा हुआ है।

सातवें समय में कपाट रूप में तथा आठवें समय में दण्ड संहार कर खण्ड २ हो जाता है। अतः चतुर्थ समय अनंतप्रदेशी स्कंध सर्वलोक में व्याप्त कर रहता है जिससे अचित्त महास्कंध भी कहा जाता है। इसका विशेष वर्णन विशेषावश्यक भाष्य में है।

बौद्ध दर्शन परमाणु को सांश मानता है, निरंश नहीं। यह सम्यग् नहीं है।

परमाणु में एक वर्ण, एक गंध, एक रस व दो स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष—इन चार स्पर्शों में दो विरोधी स्पर्श) होते हैं।

स्कंध देश के दो प्रकार हैं—यथा—१ सअंश देश व २ निरंश देश। जो सअंश हैं उसे देश कहते हैं तथा जो निरंश है उसे प्रदेश कहते हैं। क्योंकि जो प्रकष्ट देश हैं उसी का नाम प्रदेश हैं अतः जिसमें कोई दूसरा अंश न मिले उसका नाम प्रदेश है।

सप्रदेशी अवयव का संभव न होता तो, प्रदेशी अवयव को देश कहना चाहिए। द्वि प्रदेशी स्कंध का एक प्रदेशी विभाग देश व प्रदेश जानना चाहिए। ऐसा कभी न हुआ है, न कि सब पुद्गल स्कंध रूप में परिणत हो जायेंगे। प्रवाह की अपेक्षा स्कंध हो या परमाणु हो दोनों की कालस्थिति अनादि-अनंत हैं। व्यक्तिगत भाव से उत्कृष्ट असंख्यातकाल की स्थिति है। मानो कि दो परमाणु मिलकर स्कंध रूप में परिणत हुए, फिर दोनों अलग-अलग हो गये। फिर उन्हीं परमाणुओं का संयोग उत्कृष्ट अनंतकाल के बाद हो सकता है।

एक आकाशप्रदेश में अनंतप्रदेशी स्कंध रह सकता है, क्योंकि आकाश का अवगाहक गुण है अतः जहाँ एक पुद्गल द्रव्य है वहाँ अनंतपुद्गल द्रव्य रह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकते हैं। जैसे एक दीपक के प्रकाश में अनेक दीपक का प्रकाश समाविष्ट हो सकता है ; जैसे जल से भरे हुए बर्तन में बालू का समावेश हो सकता है और जल उस बर्तन से बाहर नही निकला। दूध से भरे हुए कटोर में चीनी का समावेश हो सकता है, उसी प्रकार एक आकाशप्रदेश में अनंत परमाणु तथा अनंत स्कंधों का समावेश हो सकता है क्योंकि अपने-अपने स्वभाव करके रहते हैं।

कोई भी संख्यातप्रदेशी स्कंध लोक के असंख्यातप्रदेश को अवगाहित कर नहीं रह सकता —ऐसा प्रज्ञापना सूत्र में कहा है। कोई अनंतप्रदेशी स्कंध एक समय में सर्वलोक को अवगाहित कर रहता है। यह बात केवली समुद्घात से सिद्ध हो जाती है। इस समुद्घात तक कालमान आठ समय का है। कोई एक अचित्त महास्कंध विस्रसा परिणाम से प्रथम समय असंख्यात योजन विस्तार से दण्ड करें दूसरे समय कपाट करें, तीसरे समय मंथन (थानु) करें व चतुर्थ समय में प्रतर पूर्ण करें अतः चतुर्थ समय में अचित्त महास्कंध समस्त लोक में व्याप्त कर रहता है। चूंकि उस समय में जीव के प्रदेश सम्पूर्ण लोकव्यापी बन जाते हैं। इसके बाद पांचवें समय में प्रतर का संहरण होता है अर्थात् समेटते हैं, छट्ठे समय में मंथन होता है, सातवें समय में कपाट रूप व आठवें समय में दण्ड का संहरण करके खण्ड-खण्ड हो जाता है। अतः चतुर्थ समय में अचित्त महास्कंध सर्वलोकव्यापी रहता है।[1] अस्तु निरंश में कार्य-कारण दो अंश की कल्पना करना अज्ञान सूचक है। "परमाणु अविभागी-यते।" इस अविभागी को निरंश भी कहते है। चूंकि आकाश क्षेत्र है, परमाणु क्षेत्री है। परमाणु उत्कृष्ट छः दिशाओं का स्पर्श करता है। छः दिशाओं का स्पर्श होने से भी परमाणु निरंश है।

किसी भी स्थिति में परमाणु में कर्कश स्पर्श, मृदु स्पर्श, गुरु स्पर्श व लघु स्पर्श नहीं होता है। क्योंकि शीत का विरोधी उष्ण और स्निग्ध का विरोधी रूक्ष है अतः परमाणु में दो अविरोधी स्पर्श होते हैं (शीत-उष्ण, स्निग्ध-रूक्ष में से)।

चूंकि परमाणु में पांच गुण मिलते हैं—(एक वर्ण, एक रस, एक गंध व दो स्पर्श) द्विप्रदेशी स्कंध में जघन्य पांच गुण उत्कृष्ट दस गुण मिल सकते हैं। (दो वर्ण, दो गंध, दो रस व चार स्पर्श) तीन प्रदेशी स्कंध में जघन्य पांच गुण तथा उत्कृष्ट बारह गुण मिलते हैं (तीन वर्ण, दो गंध, तीन रस व चार स्पर्श)। चार प्रदेशी स्कंध में जघन्य पांच गुण व उत्कृष्ट १४ गुण मिलते हैं (चार वर्ण, चार रस, दो गंध व चार स्पर्श)। पांच प्रदेशी स्कंध में जघन्य पांच गुण व उत्कृष्ट १६ गुण मिलते हैं (पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध, चार स्पर्श)।

---

१. विशेषावश्यक भाज्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार संख्यातप्रदेशी स्कंध अथवा असंख्यातप्रदेशी स्कंध अथवा सूक्ष्म अनंत-प्रदेशी स्कंध में जघन्य पांच गुण (१ वर्ण, १ गंध, १ रस, २ स्पर्श) और उत्कृष्ट १६ गुण मिलते हैं।

गर्भ में उत्पन्न हुए जीव के पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध व आठ स्पर्श का परिणमन होता है। चूंकि ये पुद्गल के गुण-परिणाम है।

बादर परिणाम वाले स्कंध में जघन्य सात गुण (पांच गुण पूर्ववत्, कर्कश, मृदु, गुरु, लघु—ये चार स्पर्शों में से अविरोधी दो स्पर्श होते हैं एवं सात) तक उत्कृष्ट २० गुण (५ वर्ण, २ गंध. ५ रस व ८ स्पर्श) मिलते हैं। अत: बादर परिणाम स्कंध में जघन्यत: चार स्पर्श होते हैं।

परमाणु पुद्गल पर्याय की अपेक्षा जघन्य रूप में एक गुण कृष्ण, अथवा एक गुण नील, अथवा एक गुण रक्त, अथवा एक गुण पीत, अथवा एक गुण शुक्ल होता है। इस प्रकार परमाणु दो गुण यावत् संख्यात गुण यावत् असंख्यात गुण यावत् अनंत गुण हो सकते हैं।

"सहभाविनो गुणः" "क्रमभाविनो पर्याया" अर्थात् सदैव सहभावी होता है—वह गुण है तथा पर्याय क्रमभावी होता है।

निगोद के दो भेद—१—सूक्ष्म निगोद और बादर निगोद।

बादर निगोद के जीव सूई के अग्रभाग जितनी जगह में अनंत हैं। वे सिद्ध जीव से भी अनंतगुणे हैं। सात लाख योनि सूक्ष्म निगोद व सात लाख बादर निगोद है।

सूक्ष्म निगोद -जितने लोकाकाश के प्रदेश हैं उतने ही निगोद के गोले हैं। और उस एक-एक गोले में असंख्यात निगोद हैं। जिसमें अनन्त जीवों का पिंड रूप एक शरीर होता है उसका नाम निगोद है। उस निगोद में अनंत जीव है। प्रत्येक संसारी जीव के असंख्यात प्रदेश हैं। उस एक-एक प्रदेश में अनंती कर्म-वर्गणा लग रही है और उस एक-एक वर्गणा में अनंत पुद्गल परमाणु है। और अनत पुद्गल परमाणुओं का जीव से सम्बन्ध है। अनंतगुण परमाणु जीव रहित अर्थात् अलग भी है। द्रव्यानुभव रत्नाकर में कहा है—

गोला इहसंखीभूया असंखनिगोयओ हवई गोलो।
इक्किक्कम्मि निगोए अनन्तजीवा मुणेयव्वा ॥१॥

अर्थात् इस संसार में असख्यात गोले हैं। उस एक-एक गोले में असंख्यात निगोद है और उस एक-एक निगोद में अनंत जीव हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तरसमहिया कीरइ आणुपाणंमि हुंति खुद्दभवा।
सत्तीस सय तिहुअत्तर पाणु पुण एगमुहुत्तम्मि ॥२॥

अर्थात् निगोद का जीव मनुष्य के एक श्वासोच्छ्वास में कुछ अधिक सत्तरह अर्थात् सत्तरह बार जन्म-मरण करता है। और सज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य के एक मुहूर्त में ३७७३ श्वासोच्छ्वास होते हैं।

पण्णसट्ठि सहस्स पण सए य छत्तीसा मुहुत्त खुद्दभवा।
आवलियाणं दो सय छप्पन्ना एग खुद्दभवे ॥३॥

अर्थात् निगोद के जीव एक मुहूर्त में ६५५३६ भव करते हैं और उस निगोद-वाले जीव का २५६ आवली प्रमाण आयुष्य होता है। यह क्षुल्लकभव अर्थात् छोटे से छोटा भव होता है। भव अर्थात् जन्म-मरण। इस निगोद वाले जीव से कम आयुष्य और किसी का नहीं है।

कहा जाता है कि व्यवहार राशि में से जितने जीव जिस समय में मोक्ष जाते हैं उतने ही जीव उस समय में अव्यवहार राशि से व्यवहार राशि में आते हैं।

जो निगोद वाले गोले के जीव छ: दिशाओं का पौद्गलिक आहार पानी लेते हैं वे सकल गोले कहलाते हैं। और जो लोक के अन्त प्रदेश में निगोद के गोले हैं उनके जीव तीन दिशाओं का आहार ग्रहण करते हैं वे विकल गोले कहलाते हैं। जैसे काजल की कोपली भरी हुई होती है। वैसे ही सूक्ष्म निगोद वाले जीव सर्व-लोक में भरे हुए हैं। उनको अनंत दु:ख हैं।

परमाणु पुद्गल में जघन्य गुण एक वर्णादि यावत् उत्कृष्ट अनंत गुण वर्णादि हो सकते हैं।

पुद्गल द्रव्य के चार गुण—(रूपी, अचेतन, सक्रिय व मिलन, विखरन, पूरण, गलन) होते हैं। "क्रियाकारित्व इति द्रव्यत्वं" गुण पर्याय वत्वं द्रव्यत्वं। यह लक्षण सब द्रव्य में प्राप्त होता है। इस लक्षण से अतिव्याप्ति, अव्याप्ति व असंभवादिदूषणं का अभाव है। जो क्रिया करे वह द्रव्य है। षट् गुण हानि-वृद्धि छओं द्रव्यों में होती है। अत: अगुरुलघु पर्याय सब द्रव्य में होती है। जो गुण एक द्रव्य में है परन्तु दूसरे द्रव्य में नहीं है उसे वैधर्मपना कहते हैं—जैसे चेतनता जीव द्रव्य में है परन्तु अचेतनता अजीव द्रव्य में हैं। जो दूसरे भिन्न क्रिया करे उसका नाम वैधर्म्यपना है। एक सरीखी क्रिया अर्थात् काम करे उसे साधर्मपना कहते हैं। अचेतन गुण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की अपेक्षा पांच द्रव्य समान है परन्तु जीव द्रव्य में वह गुण नहीं है। चेतन गुण जीव द्रव्य में हैं परन्तु पांच द्रव्य में नहीं है। मिलन, विखरन, पूरन, गलन एक पुद्गल द्रव्य में हैं बाकी पांच द्रव्य में नहीं है।

अर्थ-निश्चयनय अर्थात् शुद्ध व्यवहारनय से छओं द्रव्य अपने-अपने स्वभाव में अर्थात् परिणामी है परन्तु अशुद्ध व्यवहार और लौकिक व्यवहार से जीव और पुद्गल—ये दो द्रव्य परिणामी दिखाई देते हैं।

द्रव्य से पुद्गल अनंत हैं, जीव अनंत हैं, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय व आकाशास्तिकाय क्रमशः एक-एक द्रव्य है। काल के अनंत द्रव्य है। समय, प्रदेश व परमाणु अविभागी है, अच्छेद्य है। द्रव्य में एक आकाश द्रव्य क्षेत्र है बाकी पांच द्रव्य-पुद्गल आदि क्षेत्रिय अर्थात् रहने वाले हैं।

छः द्रव्यों में एक जीव द्रव्य को कारण तथा शेष पुद्गलादि पांच द्रव्य को अकारण कहा है। कहीं-कहीं पांच द्रव्य को कारण और जीव द्रव्य को अकारण कहा है। परन्तु पांच द्रव्य का कारणपना युक्ति से सिद्ध नहीं होता है क्योंकि पांच द्रव्य अजीव है अतः कारण नहीं बन सकते। सिद्धान्तानुसार जीव को कारण कहा है अतः जीव कारण है और पांच द्रव्य अकारण है।

छओं द्रव्यों में एक आकाश द्रव्य सर्वव्यापी है और पांच द्रव्य लोकव्यापी है।

निश्चयनय अर्थात् निःसन्देह शुद्ध व्यवहार से छओं द्रव्यकर्त्ता है और अशुद्ध व्यवहारनय से एक जीव द्रव्यकर्त्ता है बाकी पांच द्रव्य अकर्त्ता है। क्योंकि लौकिक में जीव द्रव्य का ही सब कर्त्तव्य दीखता है अतः जीव को कर्त्ता कहा है। परन्तु बुद्धिपूर्वक शुद्ध व्यवहार से छओं द्रव्य अपने-अपने परिणाम के कर्त्ता है और अपनी-अपनी क्रिया कर रहे हैं और अपनी क्रिया को छोड़कर दूसरी क्रिया नहीं करते।

पुद्गल द्रव्य के वर्णादि चार गुण नित्य है तथा पर्याय चारों ही अनित्य है। यद्यपि नैयायिकादि दर्शन परमाणु को अरूपी मानते हैं परन्तु परमाणु का अरूपीपन घटित नहीं होता है क्योंकि परमाणु में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श मिलते हैं अतः परमाणु-रूपी है।

अभव्य जीव के कर्म चीकने अर्थात् पलटन स्वभाव न होने के कारण मोक्ष नहीं जाते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल द्रव्य के पुद्गलपना अथवा मिलन, विखरन गुण अथवा परमाणु रूप की अपेक्षा एक है क्योंकि पुद्गल में पुद्गलपना और परमाणुपना—सब में एक समान है अतः एक है। परन्तु गुण अनेक हैं व पर्याय अनेक हैं अथवा परमाणु अनंत हैं—इस प्रकार पुद्गल अनेक है।

छओं द्रव्य की स्वयद्रव्य, स्वयक्षेत्र, स्वयकाल व स्वयभाव की अपेक्षा सत्यता है परन्तु परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल व परभाव की अपेक्षा असत्यता है। पुद्गल द्रव्य का स्वयद्रव्य गुण-पर्याय समूह, स्वयक्षेत्र परमाणु, स्वकाल, अगुरुलघु का फिरना व स्वयं स्वभाव जो मुख्य गुण मिलन व विखरन है।

वैदिक दर्शन में मोक्ष के साधन दस बतलाये गये हैं—मौन, ब्रह्मचर्य, सत्संग, तपस्या, शास्त्रश्रवण, धर्मपालन, कर्मपालन, युक्तिपूर्ण शास्त्रव्याख्या, एकांतचिंता जप व समाधि।

समयसार में कहा है—

जह णवि सक्कमणज्जो अणज्जभासंविणा उ गाहेउं।
तह ववहारेण विणा परमत्थुवएसणमसक्कं॥

अर्थात् जिस प्रकार अनार्य—म्लेच्छों को—म्लेच्छ भाषा के बिना अर्थ ग्रहण करना शक्य नहीं है, उसी प्रकार व्यवहार के बिना परमार्थ का उपदेश अशक्य है। अतः व्यवहार का उपदेश है। काल द्रव्य 'अस्ति' है किन्तु काय नहीं है। कुन्द-कुन्दाचार्य को पद्मनंदि, वक्रग्रीवाचार्य, एलाचार्य व गृध्रपिच्छाचार्य के नाम से भी अभिहित किया है।

पंचास्तिकाय संग्रह में कहा है—

खंधा य खंधदेसा खंधपदेसा य होंति परमाणू।
इदि ते चदुव्वियप्पा पुद्गलकाया मुणेयव्वा॥७४॥

अर्थात् पुद्गलास्तिकाय के चार भेद जानना—स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश और परमाणु।

आ. श्रीकैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर
श्रीमहावीर जैन आराधना केन्द्र
कोबा (गांधीनगर) पि 382007

पंचास्तिकाय संग्रह में कहा है—

णत्थि चिरं वा खिप्पं मत्तारहिदं तु सा वि खलु मत्ता।
पोग्गलदव्वेण विणा तम्हा कालो पडुच्च भवो॥२६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् समय अल्प है, निमेष अधिक है और मुहूर्त उससे भी अधिक है—ऐसा जो ज्ञान होता है - वह समय, निमेष आदि का परिमाण जानने से होता है ; और वह कालपरिमाण पुद्गलों द्वारा निश्चित होता है। इसलिये व्यवहार काल की उत्पत्ति पुद्गलों द्वारा होती (उपचार से) कही जाती है। जीव पुद्गलों के परिणाम में (समयविशिष्टवृत्ति में) व्यवहार से समय की अपेक्षा आती है। जिन प्राणों में चित्सामान्य अन्वय होता है वे भावप्राण हैं तथा जिन प्राणों में सदैव पुद्गल-सामान्य, पुद्गलसामान्य, पुद्गलसामान्य—ऐसी एकरूपता-सदृशता होती है वे द्रव्यप्राण हैं।

गुण, अंश, अविभाग प्रतिच्छेद। अविभाग परिच्छेदों को यहां अगुरूलघु गुण (अंश) कहा है। षट्स्थान पतित हानि-वृद्धि—छः स्थानों में समावेश पाने वाली वृद्धि-हानि ; षट्गुण हानि-वृद्धि। विशिष्ट आहारादि के वश शरीर में वृद्धि होने पर जीव के प्रदेश विस्तृत होते हैं और शरीर सुख जाने पर प्रदेश भी संकुचित होते हैं।

दो प्रदेशी स्कंध से लेकर अनंताणुक स्कंध तक के सर्व स्कंध बहुप्रदेशी होने से महान् है। व्यक्ति अपेक्षा से परमाणु एक प्रदेशी है और शक्ति अपेक्षा से अनेक प्रदेशी भी (उपचार से) है। प्रवाहक्रम के अंश प्रत्येक द्रव्य में होते हैं किन्तु विस्तार क्रम के अंश अस्तिकाय के ही होते हैं। परमाणु (व्यक्ति अपेक्षा से) निरवयव होने पर भी उनको सावयवपने की शक्ति सद्भाव होने से कायत्व-सिद्धि निरपवाद है। क्योंकि उपचार से परमाणु को भी शक्ति अपेक्षा से अवयव प्रदेश कहा है।

जिस प्रकार पुद्गल से पृथक् स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण नहीं होते, उसी प्रकार द्रव्य के बिना गुण नहीं होते हैं। जिस प्रकार स्पर्श, गंध-रस-वर्ण से पृथक् पुद्गल नहीं होता उसी प्रकार गुणों के बिना द्रव्य नहीं होता। भाव का नाश नहीं है तथा अभाव का उत्पाद नहीं है। भाव गुणपर्यायों में उत्पाद-व्यय करते हैं। छः द्रव्यों में जीव, पुद्गल, आकाश, धर्म व अधर्म प्रदेश प्रचयात्मक (प्रदेशों का समूहमय) होने से पांच अस्तिकाय है। काल को प्रदेश प्रचयात्मकपन का अभाव होने से वह वास्तव में अस्तिकाय नहीं है।

लोक सर्वत: विविध प्रकार के अनंतानंत सूक्ष्म और बादर पुद्गलकायों द्वारा अवगाहित होकर गाढ़ भरा हुआ है। अमृतचन्द्राचार्य ने पंचास्तिकाय संग्रह में कहा है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"कर्मयोग्यपुद्गला अंजनचूर्णपूर्णसमुद्गकन्यायेन सर्वलोकव्यापित्वाद्य-त्रात्मा तत्रानानीता एवावतिष्ठत इत्यत्रोक्तम् ।"

—पंचास्तिकाय संग्रह गा ६४। टीका

अर्थात् कर्मयोग्य पुद्गल (कार्मणवर्गणारूप पुद्गलस्कध) अंजनचूर्ण से (अंजन के बारिक चूर्ण से) भरी हुई डिब्बी के न्याय से समस्त लोक में व्याप्त है। इसलिए जहाँ आत्मा है वहाँ, बिना लाये ही (कहीं से लाये गये बिना ही) वे स्थित है।

अस्तु आत्मा मोहराग-द्वेष रूप अपने भाव को करता है। वहाँ रहने वाले पुद्गल अपने भावों से जीव में विशिष्ट प्रकार के अन्योन्य— अवगाहरूप से प्रविष्ट हुए कर्मभाव को प्राप्त होते हैं। आत्मा जिस क्षेत्र में और जिस काल में अशुद्धभाव रूप परिणमित होता है, उसी क्षेत्र में स्थित कार्मणवर्गणा रूप पुद्गल-स्कध उसी काल में स्वयं अपने भावों से ही जीव के प्रदेशों में विशेष प्रकार से परस्पर अवगाह रूप से प्रविष्ट हुए, कर्मपने को प्राप्त होते हैं।

संसारी जीव कारणभूत ऐसी भावकर्मरूप आत्मपरिणाम संतति और द्रव्यकर्म-रूप पुद्गल परिणाम संतति द्वारा देवादि रूप में कार्यभूत रूप से उत्पन्न होता है। केवलदर्शन से मूर्त (पुद्गल)-अमूर्त द्रव्य को सकल रूप से सामान्यतः अवबोधन करता है; केवलज्ञान से समस्त विषयों का विशेष धर्मों का ज्ञान होता है। ज्ञानियों ने द्रव्य को विश्वरूप कहा है।[१] विश्वरूप अर्थात् अनेक रूप है।

वर्ण, रस, गंध व स्पर्श वास्तव में परमाणु में प्ररूपित किये जाते हैं। वे परमाणु से अभिन्न प्रदेशवाले होने के कारण अनन्य होने पर भी, संज्ञादिव्यपदेश के कारण भूत विशेषों द्वारा अन्यत्व को प्रकाशित करते हैं।[२] परन्तु स्वभाव से सदैव अपृथक्पने को धारण करते हैं। जीव के पारिणामिक भाव का लक्षण अर्थात् स्वरूप सहज चैतन्य है। यह पारिणामिक भाव अनादिअनंत होने से इस भाव की अपेक्षा से जीव अनादिअनंत है। इस पारिणामिक भाव की अपेक्षा पुद्गल भी अनादिअनंत है।

नंदीसूत्र में कहा है कि महाभारत, पुराणादि अन्य सब धर्मशास्त्र जो उचित ढंग से तथा सही अपेक्षा से समझे तो वे झूठे व मिथ्या नहीं है। उसके विपरीत अगर जैनागम ग्रन्थों को उचित रूप में समझ न सके तो वे मिथ्याश्रुत बन जाते हैं। प्रदेशी राजा ने सम्यक्त्व प्राप्त करने के बाद बारह बेले किये। तेरहवें बेले में सुरीकंता पत्नी ने पारणे में विष दिया। उस आहार को प्रदेशी राजा ने ग्रहण किया— फलस्वरूप मृत्यु प्राप्त कर सुर्याभदेव रूप में उत्पन्न हुआ।

१. पंचास्तिकाय संग्रह गा ४३
२. पंचास्तिकाय संग्रह गा ५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल द्रव्य में चतुःभंगी घटित होती है—

१—अनादिअनंत—पुद्गल द्रव्य का स्वय द्रव्य अर्थात् गुण-पर्याय समूह रूप।

२—सादि-सांत—पुद्गल द्रव्य का स्वक्षेत्र परमाणु।

३—पुद्गल का स्वयकाय अगुरुलघुपर्याय अनादिअनन्त हैं परन्तु उत्पाद-व्यय की अपेक्षा सादि-सांत है।

४—पुद्गल का स्वयभाव—मुख्य गुण-मिलन-अलगाव-पूरण-गलन आदि स्वभाव तो अनादिअनत हैं परन्तु वर्णादि पर्याय सादि-सांत है।

इस प्रकार पुद्गल द्रव्य में द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा चतुर्भंगी जानना चाहिए।

पुद्गल द्रव्य का आकाश के साथ अनादि-अनंत सम्बन्ध हैं परन्तु आकाश प्रदेश और पुद्गल परमाणु का सादि-सांत सम्बन्ध है। इसी प्रकार धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय का पुद्गल के साथ सम्बन्ध जानना चाहिए।

जीव और पुद्गल का सम्बन्ध (१) अभव्य जीव में पुद्गल का अनादि-अनंत सम्बन्ध है ; क्योंकि अभव्य के पुद्गल रूप कर्म का सम्बन्ध कभी भी नहीं छूटेगा। अतः अनादि-अनंत है। (२) भव्य जीव के कर्म रूप पुद्गल से अनादि-सांत सम्बन्ध है।

पर्याय की अपेक्षा पुद्गल अनंत परिणामी है। फिर भी आगमों में पुद्गल-अजीव परिणाम के दस ही नाम का उल्लेख है। द्रव्य लेश्या, द्रव्य मन, द्रव्य वचन, द्रव्य कषायादि पुद्गल परिणाम है।

क्रुधित अणगार के द्वारा निक्षिप्ततेजोलेश्या दूर या पास जहाँ-जहाँ जाकर गिरती है वहाँ-वहाँ वे अचित् पुद्गल द्रव्य अवभास यावत् प्रभास करते हैं। उष्ण तेजोलेश्या को फेंककर वापस खींचा जा सकता है। वे अचित् पुद्गल हैं। चन्द्रादि विमान से निकले हुए प्रकाश के पुद्गलों को उपचार से कर्मलेश्या कहा है।[1] जो पुद्गल सूर्य की लेश्या (वर्ण) का स्पर्श करते हैं वे सूर्य की लेश्या (वर्ण) का घात करते हैं।[2] यद्यपि देव और नारकी की लेश्याओं का विवेचन आगमसाहित्य में द्रव्यलेश्या की अपेक्षा किया गया है।[3] द्रव्यलेश्या पुद्गल है। भावलेश्या नारकी व

१. भग० श १२। उ ९। सू २, ३। टीका

२. चन्द० प्रा ५। सूरि० प्रा ५

३. पण्ण० पद १७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवों में छओं हो सकती है। भाव लेश्या-जीव का परिणाम है। पण्णवणा में कहा है—

"तैजससमुद्घातस्तेजोलेश्याविनिर्गमकाले तैजसनामकर्मपुद्गल परिशातहेतुः।"

—पण्ण० पद ३६। गा १ टीका

अर्थात् तैजस समुद्घात करने के समय तेजोलेश्या निकलती है तथा उसके निर्गमनकाल में तैजस नामकर्म के पुद्गलों का क्षय होता है।

कहा है—

तत्र द्रव्यविषये या क्रिया एजनता। एजृ कंपने जीवास्याजीवस्य वा कंपनरूपा चलनस्वभावा सा द्रव्यक्रिया।

—अभिधा० भाग ३। पृ० ५३२

जीव और अजीव पुद्गल की स्पंदन रूप गति रूप क्रिया द्रव्य क्रिया है।

क्रियते येन तत्करणं × × × तथा परिणामवत्पुद्गलसंघात इति भावः।

—ठाण० स्था ३। उ १। सू १२४। टीका

करण —करना क्रिया है। पुद्गल का संघात होना भी करण है।

द्रव्यकृष्ण यावत् द्रव्यशुक्ल लेश्या में पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस तथा आठ स्पर्श होते हैं।[1] निश्चयनय की अपेक्षा प्रत्येक द्रव्य लेश्या में पांच वर्ण होते हैं।

द्रव्ययोगादि पौद्गलिक है अतः अजीवोदय निष्पन्न होना चाहिए—

पओगपरिणामए वण्णे, गंधे, रसे, फासे × × ×।

अयोगि केवली को छोड़कर शेष सभी संसारी जीवों में तैजस-कार्मण शरीरों का एक संघातन परिशातन कृति ही है क्योंकि सर्वत्र इनके पुद्गल स्कंधों का आगमन और निर्जरा दोनों ही पाये जाते हैं।[2]

१. भग० श १२। उ ५। सू १६
२. षट्खंडागम ४, ४। सू ३१। पु १३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयसेनाचार्य ने पंचास्तिकाय संग्रह की गा० ७५ टीका में कहा है —

एवं भेदवशात् द्व्यणुकस्कंधादनंता: स्कंधप्रदेशपर्याया: । निर्विभागैक-प्रदेश: स्कंधस्यांत्योभेद: परमाणुरेक: ।

अर्थात् द्वि अणुक स्कंध से अनंत स्कंध पर्यन्त प्रदेश रूप पर्यायें होती है। निर्विभाग—एक प्रदेशवाला, स्कंध का अन्तिम अंश वह एक परमाणु है।

१—परमाणुओं के विशेष गुण जो स्पर्श-रस-गंध-वर्ण हैं उनमें होनेवाली षट्-स्थानपतित वृद्धि वह पूरण है और षट्स्थानपतित हानि वह गलन है, इसलिये इस प्रकार परमाणु पूरण-गलन धर्मवाले हैं।

२—परमाणुओं में स्कंध रूप पर्याय का आविर्भाव होना वह पूरण है और तिरो-भाव होना वह गलन है—इस प्रकार भी परमाणुओं में पूरण-गलन घटित होता है।

अत: जिसमें (स्पर्श-रस-गंध-वर्ण की अपेक्षा से तथा स्कंधपर्याय की अपेक्षा से) पूरण-गलन हो वह पुद्गल है। पूरण—पूरना, भरना, पूर्ति पुष्टि, वृद्धि। गलन—गलना, क्षीण होना, कृशता, हानि, न्यूनता। पंचास्तिकाय में कहा है—

स्कंधास्त्वनेकपुद्गलमयैकपर्यायत्वेन पुद्गलेभ्योऽनन्यत्वात्पुद्गला इति व्यवह्रियंते।

—पंचास्तिकाय गा ७६। टीका

अर्थात् स्कंध अनेक परमाणुमय एक पर्याय है और परमाणु तो पुद्गल है, अत: स्कंध भी व्यवहार से पुद्गल है। सर्व स्कंधों का जो अन्तिम भाग उसे परमाणु जानना चाहिए। वह अविभागी, एक शाश्वत, मूर्त रूप से उत्पन्न होनेवाला और अशब्द है।

अस्तु परमाणु आदेश मात्र से मूर्त है और चार धातुओं का कारण है, परिणाम-गुणवाला है और स्वयं अशब्द है। पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु रूप चार धातुओं का, परिणाम के कारण, एक ही परमाणु कारण है। अर्थात् परमाणु एक ही जाति के होने पर भी वे परिणाम के चार कारण चार धातुओं के कारण बनते हैं। क्योंकि विचित्र ऐसा परमाणु का परिणामगुण कहीं किसी गुण की व्यक्तव्यक्तता द्वारा विचित्र परिणति को धारण करता है।[1]

१. पंचा० गा ७८। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्द स्कंध जन्य है और स्कंध परमाणुदल का संघात है और वे स्कंध स्पर्शित होने से-टकराने से शब्द उत्पन्न होता है। इस प्रकार शब्द नियत रूप से उत्पाद्य है।

शब्द पुद्गल स्कंध पर्याय है। इस लोक में, वाह्य श्रवणेन्द्रिय द्वारा अवलम्बित, भावेन्द्रिय द्वारा जानने योग्य ऐसी ध्वनि वह शब्द है। वह (शब्द) वास्तविक स्वरूप से अनन्त परमाणुओं की एक स्कंध रूप पर्याय है। अनन्त परमाणुमयी शब्द योग्य वर्गणाओं से समस्त लोक भरपूर होने पर भी जहाँ-जहाँ वहिरंग कारण सामग्री उदित होती है वहाँ-वहाँ वे वर्गणायें शब्द रूप से स्वयं परिणमित हो जाती है।

परमाणु शब्द स्कंध रूप से परिणमित होने की शक्ति स्वभाववाला होने से शब्द का कारण है ; एक प्रदेशी होने के कारण शब्दपर्याय रूप परिणति न वर्तती होने से अशब्द है।

अस्तु स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और शब्द रूप (पांच) इन्द्रिय विषय, स्पर्शन, रसन, घ्राण चक्षु और श्रोत्र रूप (पांच) द्रव्येन्द्रियं, औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मणरूप (पांच) शरीर, द्रव्यमन, द्रव्यकर्म, नोकर्म, विचित्र पर्यायों की उत्पत्ति के हेतुभूत (अर्थात् अनेक प्रकार की पर्यायें उत्पन्न होने के कारण भूत) अनंत अनंताणुक वर्गणाएँ, अनंत असंख्याताणुक वर्गणाएँ और द्वि-अणुक स्कंधतककी अनंत संख्यातणुक वर्गणाएँ तथा परमाणु, तथा अन्य जो कुछ मूर्त हो वह सब पुद्गल के भेद रूप से समेटना चाहिए।

लोक में अनंत परमाणुओं की बनी हुई वर्गणाएँ अनंत हैं, असंख्यात परमाणुओं की बनी हुई वर्गणाएँ अनंत हैं, और (द्वि-अणुक स्कंध, त्रि-अणुक स्कंध इत्यादि) संख्यात परमाणुओं की बनी हुई वर्गणाएँ भी अनंत है। अविभागी परमाणु भी अनंत हैं।

लोक में जीवों को और पुद्गलों को वैसे ही शेष सब द्रव्यों को जो सम्पूर्ण अवकाश देता है वह आकाश द्रव्य है। पंचास्तिकाय संग्रह में श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य ने कहा है—

आगासकालजीवा धम्माधम्मा य मुत्तिपरिहीणा।
मुत्तं पुग्गलदव्वं जीवो खलु चेदणो तेसु ॥९७॥

अर्थात् पुद्गल द्रव्य मूर्त है—शेष धर्मास्तिकाय आदि पांच द्रव्य अमूर्त है। उनमें जीव चेतन है बाकी पांच द्रव्य अचेतन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेशान्तर प्राप्ति का हेतु (अन्य प्रदेश की प्राप्ति का कारण) ऐसी जो परिस्पन्दनरूप पर्याय, वह क्रिया है। बहिरंग साधन के साथ रहने वाले पुद्गल भी सक्रिय है पुद्गलों को सक्रियपने का बहिरंग साधन परिणामनिष्पादक काल है अतः पुद्गलकाल करणवाले हैं। परिणामनिष्पादक—परिणाम को उत्पन्न करने वाला, परिणाम उत्पन्न होने में जो निमित्तभत (बहिरंग साधन भूत) है—ऐसा।

जो पदार्थ जीवो के इन्द्रिय ग्राह्य विषय है वे सब मूर्त-पुद्गल है। यद्यपि जीव अमूर्त द्रव्यों को भी ग्रहण करता है। अर्थात् जानता है। व्यवहारकाल का मान जीव-पुद्गलों के परिणाम द्वारा होता है। व्यवहार काल क्षणभंगी — प्रतिक्षण नष्ट होनेवाला, प्रति समय जिसका ध्वंस होता है ऐसा क्षणभंगुर क्षणिक। निश्चयकाल नित्य दे क्योंकि वह अपने गुणपर्यायों के आधारभूत द्रव्यरूप से सदैव अविनाशी है। फलितार्थ - निश्चयकाल द्रव्यरूप होने से नित्य है, व्यवहार काल पर्याय रूप होने से क्षणिक है।[१]

पंचास्तिकाय संग्रह में वृश्चिक-बिच्छु को त्रीन्द्रिय के अन्तर्गत माना है।[२]

कषाय-अनुरंजित योगप्रवृत्तिरूप लेश्या अन्य गति और अन्य आयुष्य का बीज होती है। अर्थात् लेश्या अन्य गतिनामकर्म व अन्य आयुष्यकर्म का कारण होती है।[२] चूंकि जीवों को देवत्वादि की प्राप्ति में पौद्गलिक कर्म निमित्तभूत है अतः देवत्वादि जीव का स्वभाव नहीं है। जीवों को अपनी लेश्या के योग्य गतिनामकर्म व आयुष्यकर्म का बंध होता है और इसलिये उसे योग्य अन्य गति-आयुष्य प्राप्त होती है।

मूर्त-मूर्त को स्पर्श करता है, मूर्त-मूर्त के साथ बंध को प्राप्त होता है।

जैन दर्शन में परमाणु अतीन्द्रियचेतना, अनेकांत आदि विषयों पर गहन विवेचन है। हिंसा और अशान्ति को बढ़ाने वाले प्रमुख दो तत्त्व है—भावात्मक उत्तेजना और परिस्थिति। परिस्थिति बाहरी है और भावात्मक उत्तेजना भीतरी है। परिस्थिति को बदलने की दिशा में अधिक ध्यान जाता है, जब कि वह हिंसा का सहायक कारण है। हिंसा का मूल कारण है भावात्मक उत्तेजना। उसे बदलने की ओर ध्यान कम जाता है। जैन धर्म और दर्शन का प्रमुख सिद्धांत है—अनेकांत। इसके चार महत्वपूर्ण अंग है—समानता, स्वतन्त्रता, सापेक्षता व सह-अस्तित्व।

१. पचास्तिकाय संग्रह गा० १०१। टीका
२. पंचास्तिकाय संग्रह गा० ११९। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुव्रत एक पेड़ है। प्रेक्षाध्यान, जीवन-विज्ञान, अहिंसा समवाय ये सब उस पेड़ की शाखा-प्रशाखाएँ हैं। एक ही जड़ से अलग-अलग प्रकार के रंग निकल रहे हैं। योग वर्तमान का विश्वव्यापी शब्द है। इस दृष्टि से प्रेक्षा के साथ योग शब्द का प्रयोग हो गया। जैन दर्शन में मूलतः योग और ध्यान अलग-अलग नहीं है। मूलतः सब जुड़े हुए हैं।

अस्तु जैन सिद्धांत कोश के रचयिता तथा सम्पादक श्री जिनेन्द्रवर्णी का जन्म १४ मई १९२२ को पानीपत के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्व० श्री जयभवान्‌जी जैन एडवोकेट के घर हुआ।

जीव के भावों का निमित्त पाकर 'कर्म' नामक एक सूक्ष्म जड़ द्रव्य जीव के प्रदेशों में एक क्षेत्रावगाही होकर स्थित हो जाता है, वहाँ जीव का वह भाव तो भाव कर्म कहलाता है और उसके निमित्त में जो सूक्ष्म जड़ द्रव्य उसमें प्रविष्ट होता है वह द्रव्य कर्म कहा जाता है। द्रव्य कर्म जीव के भावों को मापने का एक यन्त्र मात्र है।

मूलभूत पदार्थ परमाणु है। किसी भी दृष्ट पदार्थ को कल्पना द्वारा तोड़ते-तोड़ते जब अणु का भाग प्राप्त हो जाये जिससे आगे तोड़ा जाना संभव न हो सके उसे परमाणु कहते हैं। यह एक प्रदेशी होता है अर्थात् सबसे छोटा होता है। आज के विज्ञान द्वारा स्वीकृत अणु भी, जो वास्तव में परमाणु नहीं, स्कंध है, जब इतना सूक्ष्म होता है कि यंत्र के बिना देखा न जासके तो परमाणु की तो बात ही क्या।

अपनी सूक्ष्मता के कारण, एक आकाश प्रदेश पर अनंत परमाणु एक दूसरे में समाकर निर्बाध रूप से रह सकते हैं और लोकाकाश में एक-एक प्रदेश पर इसी प्रकार रह रहे हैं। परमाणु सूक्ष्म होता है परन्तु पुद्‌गल स्कंध सूक्ष्म और स्थूल दोनों होते हैं।

स्कंध में प्रतिक्षण कुछ नए परमाणु स्वयं मिलते रहते हैं और कुछ पुराने उससे पृथक् होते रहते हैं। इसका कारण भी उन परमाणुओं में स्वतः होने वाला स्निग्ध व रूक्ष परिणमन ही है। परमाणुओं से स्कंध का और स्कंध से परमाणुओं का मिलना तथा बिछुड़ना अथवा बनना तथा बिगड़ना रूप यह क्रम सदा से स्वतः चल रहा है और इसी प्रकार सदा चलता रहेगा। बनने-बिगड़ने का स्वभाव रखने के कारण ही इसका नाम 'पुद्+गल' पड़ गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्मता व स्थूलता की तरतमता के कारण स्कंधों को छः भागों में विभाजित किया गया है—स्थूल-स्थूल, स्थूल, स्थूलसूक्ष्म, सूक्ष्मस्थूल, सूक्ष्म व सूक्ष्मसूक्ष्म।

१—पृथ्वी धातु अदि ठोस पदार्थ स्थूल-स्थूल अर्थात् अत्यन्त स्थूल है, क्योंकि एक तो किसी भी पदार्थ में प्रवेश नहीं कर पाते, सबको बाधा पहुँचाते हैं और दूसरे जहाँ जिस रूप में रखदें वहाँ उसी रूप में टिके रहते हैं, अपने आप वहाँ से नहीं डिगते।

२—जल, वायु आदि तरल तथा बायवीय पदार्थ स्थूल है, क्योंकि एक दूसरे को बाधा पहुँचाने के कारण स्थूल होते हुए भी ठोस नहीं है और बिना किसी रूकावट के कहीं रखे नहीं जा सकते हैं। वस्त्रादि में से पार भी हो जाते हैं।

३—प्रकाश के कारणभूत स्कंध स्थूलसूक्ष्म है। पृथ्वी आदि से रूक जाने के कारण स्थूलता अधिक है और शीशे आदि में से पार हो जाने के कारण अथवा पकड़ कर किसी प्रकार रोके नहीं जा सकते इसलिए कुछ सूक्ष्मता भी है।

४—शब्दादि सूक्ष्मस्थूल है। ठोस तथा तरल सभी पदार्थों में से कुछ न कुछ पार हो जाते हैं इसलिए सूक्ष्म हैं, परन्तु प्रयत्न विशेष से रोके जा सकते हैं अतः कुछ स्थूल भी है।

५—किसी प्रकार भी रोके नहीं जा सकते हैं परन्तु यन्त्रों के द्वारा काम में लाये जा सकते हैं ऐसे ऐक्सरे तथा चुम्बक वर्गणाएँ सूक्ष्म कहे जा सकते हैं। परन्तु सिद्धांत ग्रन्थों में इन्हे भी सूक्ष्म-स्थूल की कोटि में लिया गया है।

६—मनोवर्गणा तथा तैजसवर्गणा सूक्ष्म है।

७—कार्मणवर्गणाएं जिससे द्रव्यकर्म बनते हैं, सूक्ष्म-सूक्ष्म स्कंध है।

सूक्ष्म तथा सूक्ष्म-सूक्ष्म जाति के स्कंध परमाणु की भांति एक दूसरे में अवगाह पाकर एक ही स्थान में अनन्तानन्त निर्बाध रूप से रह सकते हैं।

परमाणु मिलकर पहले स्वयं स्वाभाविक परिणमन द्वारा सूक्ष्म-सूक्ष्म अव्यवहार्य स्कंध बनते हैं। स्वतन्त्र रूप से कुछ भी काम नहीं आते अतः अव्यवहार्य है। ये ही परस्पर में मिलकर अनेक जाति की वर्गणाओं के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं—यथा—आहारकवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, तैजसवर्गणा, कार्मणवर्गणा। ये वर्गणाएं ही सूक्ष्म स्कंध (MOLECULE) का निर्माण करती है अतः व्यवहार्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। आहारक वर्गणाएं से स्थूल पदार्थ बनते हैं। सभी स्थूल-सूक्ष्म तथा सूक्ष्म-स्थूल स्कंधों से शब्द, प्रकाश आदि का निर्माण होता है, इसलिए वे उसकी अपेक्षा कम स्थूल है। मनोवर्गणा से मनुष्यादि का सूक्ष्म मांस पिंडरूप मन बनता है अतः सूक्ष्म है। तैजसवर्गणाओं के पदार्थों में तथा शरीरों में कांति तथा चमक-दमक उत्पन्न होती है अतः वे और भी अधिक सूक्ष्म है। कार्मणवर्गणा से जीवों के अष्टविधा कर्मों का निर्माण होता है। कर्म नामक पदार्थ सूक्ष्म-सूक्ष्म है। अतः उसकी कारण-भूता यह वर्गणा भी अत्यन्त सूक्ष्म है।

ये वर्गणाएं लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर अनंत-अनंत स्थित हैं। एक-एक वर्गणा से अनेक-अनेक जाति के स्कंध बनते हैं। तपस्वियों के कुछ विचित्र प्रकार के अदृष्टयोगज शरीरों का निर्माण आहारकवर्गणा का कार्य है। बिना जीव के संयोग हुए सूक्ष्म आहारकवर्गणा अकेली स्वयं इन स्थूल शरीरों या स्कधों का निर्माण नहीं कर सकती।

भाषा-वर्गणा का अर्थ 'शब्द' सर्व परिचित है। मनोवर्गणा का कार्यभूत 'मन' संज्ञी जीवों में ही पाया जाता है। शरीरों में स्फूर्ति क्रिया तथा कान्ति उत्पन्न करने का निमित्तभूत तैजसशरीर, तैजसवर्गणा का कार्य है। यह अत्यन्त सूक्ष्म होने से प्रत्यक्ष का विषय नहीं है।

इन सबके भीतर तथा सबका मूल कारण एक सूक्ष्मातिसूक्ष्म शरीर है जिसे कार्मणशरीर कहते हैं। यह अष्टकर्मों के संघात रूप होता है। यह शरीर कार्मण-वर्गणा का कार्य है।

जैन दर्शन जीव को असंख्यप्रदेशी अर्थात् असंख्यात परमाणुओं के माप जितना बड़ा मानता हुआ उसे अखड स्वीकार करता है।

संयोग व बन्ध में महान अन्तर है। रजकणों की भांति परस्पर में मिलकर भी पृथक्-पृथक् रहना संयोग कहलाता है। संयोग दो प्रकार का होता है—(१) भिन्न क्षेत्रवर्ती और एक क्षेत्रवर्ती। रजकणों का संयोग भिन्न क्षेत्रवर्ती है। अनंतानंत परमाणुओं का या सूक्ष्म स्कधों का या वर्गणाओं का संयोग एक क्षेत्रवर्ती है। आकाश के प्रत्येक प्रदेश पर जो इस प्रकार अनंतानंत पुद्गल द्रव्य रह सकते हैं वे स्वतंत्र सत्ता रखने के कारण परस्पर में बंधे हुए नहीं है। मिल-जुलकर एकाकार अखंड रूप बन जाना बंध है।

अनंतानंत परमाणु, अनंतानंत सूक्ष्म-सूक्ष्म वर्गणाएं, अनंतसूक्ष्म शरीरधारी जीव का एक देश तथा एक स्थूल शरीरधारी जीव का एक देश लोकाकाश के एक प्रदेश या क्षेत्र पर इतनी बड़ी समष्टि का अवस्थान पाया जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव की परिस्पन्दन क्रिया को योग और भावात्मक पर्याय को उपयोग कहते हैं। पुद्गल की परिस्पन्दन क्रिया, स्कंध का बनना, बिगड़ना अथवा आकृति बदलना है और भावात्मक पर्याय रस-रूप आदि हैं।

पुद्गल द्रव्यात्मक पदार्थ है और जीव भावात्मक अत: है। पुद्गल की क्रिया या पर्याय को द्रव्यकर्म और जीव की क्रिया या पर्याय को भावकर्म कहते हैं।

भाषावर्गणा के स्कंधों से चार प्रकार की भाषा होती है। मनोवर्गणा के स्कंधो से द्रव्यमन होता है और कार्मणवर्गणा के स्कंधों से आठ प्रकार के कर्म होते हैं।[1] द्रव्यलेश्या की वर्गणा का सम्बन्ध तैजस शरीर की वर्गणा से है अत: द्रव्यलेश्या और तैजस शरीर की वर्गणा का सम्बन्ध अन्वय-व्यतिरेकी माना जा सकता है।

कार्मण वर्गणा को द्रव्यकर्म भी कहते हैं। ज्ञानावरणीयादि पुद्गल का पिण्ड द्रव्यकर्म है।

औदारिक मिश्रकाययोग की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त की है। औदारिककाय योग की स्थिति जघन्य एक समय की है। वैक्रियकाय योग की स्थिति जघन्य एक समय है उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त की है।

दस कल्प है १ आचेल्य, २ औदेशिक, ३ शय्यातर पिण्ड, ४ राज पिण्ड, ५ कृतिकर्म-प्रतिक्रमण के समय किया जाने वाला वंदन, ६ व्रत-चातुर्याम या पंच महाव्रत, ७ ज्येष्ठ-दीक्षा पर्याय में, ८ प्रतिक्रमण ९ शेषकाल में मासकल्प का विहार और १० पर्यूषण कल्प-पावस आवास व्यवस्था—इनमें मध्यवर्ती-बाइस तीर्थंकरो के समय ३, ५, ६, ७ अनिवार्य शेष छह ऐच्छिक होते हैं। जबकि प्रथम व अन्तिम तीर्थंकर के समय सभी अनिवार्य हो गए।

द्रव्य का स्वतन्त्र अस्तित्व उसके विशेष गुण द्वारा सिद्ध होता है। अन्य द्रव्यों में न मिलने वाला गुण जिसमें मिले, वह स्वन्त्र द्रव्य है। सामान्य गुण द्रव्यों में मिले, उनसे पृथक् द्रव्य की स्थापना नहीं होती। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श पुद्गल का विशिष्ट गुण है। वह उसके सिवाय और कहीं नहीं मिलता। अत: पुद्गल स्वतंत्र द्रव्य है।

आयुष्य कर्म के पुदगल—परमाणु जीव में ऊँची-नीची, तिरछी-लम्बी और छोटी बड़ी गति की शक्ति उत्पन्न करते हैं। उसीके अनुसार जीव नए जन्म स्थान में उत्पन्न होते हैं।

. गोजी गा ६०८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीव, काल, क्षायिकभाव और औपशमिकभाव---ये आठ पौद्गलिक हैं। औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, ध्वनि (भाषा), मन, उच्छ्वास, नि:श्वास, कार्मणशरीर, कर्म, छाया, अंधकार, अनंतीवर्गणा, आतप, मिश्रस्कंध अचित्तमहास्कंध, वेदसमकित और क्षयोपशम समकित और उद्योत—ये अठारह पौद्गलिक हैं।[१]

उपशम श्रेणी में स्थित मुनि यदि काल कर जाय तो अहमिन्द्रदेव होता है।

कहा है—

सुअकेवली आहारग, उजुमइ उवसंतगावि उपमाया।
हिंडति भवमणंतं, तयणंतरमेव चउगइया॥

—प्रकरण रत्नावली पृ० ६९

अर्थात् श्रुतकेवली चौदह पूर्वी, आहारक शरीर की लब्धिवाले, ऋजुमति मन:पर्यवज्ञानी, तथा ग्यारहवें गुणस्थान में उपशांत मोह वाले भी प्रमाद के योग से उस भव में चार गतिवाले होकर अनतभव भ्रमण कर सकते हैं।

धर्मनाथ तीर्थंकर ने प्रवचन में गणधर के प्रश्न करने पर कहा कि यह जो मेरे पास चूहा बैठा है यह मोक्ष जायेगा। यह पूर्वभव में साधु था। चूहा-चूही के परस्पर आमोद-प्रमोद करते देखकर निदान किया—चूहे योनि में उत्पन्न हुआ। जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ। संथारा ग्रहण कर देवलोक में गया फिर मोक्षगामी होगा।

अव्यवहार राशि में अनंतपुद्गल परावर्त तक भ्रमण कर भवितव्यता के योग से व्यवहार राशि में आ सकता है। वहाँ भी चिरकाल तक परिभ्रमण किया। प्रज्ञापना पद १८ में कायस्थिति का प्रकरण सांव्यावहारिक राशि की अपेक्षा से हैं। संज्ञी मनुष्य विजय आदि चार अनुत्तरविमान में उत्कृष्ट दो बार देवरूप में उत्पन्न हो सकता है परन्तु सर्वार्थसिद्धि में एक ही बार देव बनता है।

औदारिक शरीर बादर-स्थूल पुद्गलों से बना हुआ है। औदारिक शरीर से उत्तरोत्तर सूक्ष्म-सूक्ष्म पुद्गलों से रचित दूसरे-दूसरे शरीर हैं। औदारिक शरीर-उदार प्रधान है। शरीर की उदारता के विषय में आवश्यक सूत्र में कहा है—

जिनेश्वर देव के रूप से गणधर का रूप अनंतगुणहीन होता है, गणधर के रूप से आहारक शरीर अनंतगुणहीन, उससे अनंतगुणहीन अनुत्तर विमानवासी देवों

१. प्रकरण रत्नावली, विचार पंचाशिका पृ० ९६-९७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का रूप है, उससे ग्रैवेयकवासी, अच्युत, आनत, सहस्रार, शुक्र, लांतक, ब्रह्म, माहेन्द्र, सनत्कुमार, ईशान, सौधर्म, भवनपति, ज्योतिषी और व्यन्तर देवों का अनुक्रमतः अनंतगुणहीन हैं, उससे चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, मांडलिक राजाओं का रूप अनंतगुणहीन है। उसके बाद अन्य राजाओं व सर्व मनुष्यों का रूप है। स्थानगत होता है। वे छः स्थान इस प्रकार हैं—(१) अनंतभागहीन, (२) असंख्यातभागहीन, (३) संख्यातभागहीन, (४) संख्यातगुणहीन, (५) असंख्यातगुणहीन (६) अनंतगुणहीन।

अस्तु औदारिक शरीर से वैक्रिय शरीर सूक्ष्म पुद्गलों से बना हुआ है, उससे आहारक शरीर सूक्ष्म पुद्गलों से बना हुआ है, उससे तैजस और तैजस से कार्मण सूक्ष्म शरीर पुद्गलों का बना हुआ है।

खाये हुए आहार का परिपाक तथा श्राप देना अथवा अनुग्रह करना—तैजस शरीर का प्रयोजन है तथा एक भव से दूसरे भव में गति करना—कार्मण शरीर का प्रयोजन है।[1] आहारक शरीर चौदह पूर्वधर को हो सकता है। आहारक शरीर का अन्तरकाल जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छः मास का कहा है। निगोद जीव अनत होते हुए भी औदारिक शरीर असंख्यात है परन्तु तैजस-कार्मण शरीर अनत हैं।

जिसमें सदा वर्ण, गंध, रस, स्पर्श आदि अनतगुण हो वह पुद्गल द्रव्य हैं।

छः द्रव्यों में से प्रथम पांच द्रव्य सत् होने से तथा शक्ति अथवा व्यक्ति अपेक्षा से विशाल क्षेत्रवाले होने से अस्तिकाय है। काल द्रव्य अस्ति है किन्तु काय नहीं है।

पंचास्तिकाय संग्रह पर श्री अमृतचन्द्राचार्य ने समव्याख्या नाम की तथा श्री जयसेनाचार्य ने तात्पर्य वृत्ति नाम की संस्कृत टीकाएं लिखीं हैं।

जो पुद्गल इष्ट, कांत, प्रिय और मनोज्ञ है और जो शुभ वर्ण, गंध, रस और स्पर्शवाले हैं वे देवों के शरीर में आहार रूप में परिणत होते हैं।

अव्यवहार राशि की कायस्थिति दो प्रकार की है—(१) अनादिसांत व (२) अनादिअनंत। जो अव्यवहार राशि से कदापि व्यवहार राशि प्राप्त नहीं करेंगे वे अनादिअनत हैं जो अव्यवहार राशि से व्यवहार राशि को प्राप्त होंगे वे अनादिसांत हैं।

चौदह स्थान में संमुच्छिम मनुष्य उत्पन्न होते है। ये गर्भज मनुष्य के विकार हैं—

१—उच्चार (बड़ीनीत)　　२—प्रश्रवण (लघुनीत)

१. प्रकरण रत्नावली पृ० ९१

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

३—खेल	४—नाक का मेल
५—वमन	६—पित्त
७—रुधिर	८—वीर्य
९—शुक्रपुद्गल का परिसाट	१०—मृतक
११—स्त्री-पुरुष का संयोग	१२—नगर का नाल
१३—कान का मेल	१४—सर्व अशुचिस्थान

मनःपर्यवज्ञान—अवधिज्ञान के बिना भी हो सकता है। जिस मनुष्य के मनः-पर्यवज्ञान है उसके अवधिज्ञान की भजना है। कहा है—

"छण्हं संघयणाणं, संघयणेणावि अन्नतरगेण।
रहिआ हवंति देवा, नेवट्ठिसिराइ तद्देहे॥"

—प्रकरण रत्नावलि गा १९३

देवों के छः संहनन में से कोई भी संहनन नहीं होता है क्योंकि उनके शरीर में अस्थि और शिरा (नस-रग-नाड़ी) नहीं होती है।

नारकी के जीवों के छः संहनन में से कोई संहनन नहीं है। अन्य (मजबूत) पुद्गल स्कंध की तरह उनके शरीर को बांध रखा है।[1] जो पुद्गल अनिष्ट और अमनोज्ञ होते हैं उनके वे पुद्गल आहार रूप में परिणत होते हैं। वे अनंत प्रदेशी स्कंध पुद्गल है। कृष्णवर्ण के पुद्गलों का आहार करते हैं।

तंदुलमत्स्य—जलचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय का एक भेद है। अनंत जीवों के साधारण शरीर को निगोद कहते हैं। एक आकाश प्रदेश में अनंत जीवों के असंख्यात-असंख्यात आत्मप्रदेश होते हैं।[2] परन्तु एक आकाश प्रदेश पर एक जीव के समूचे प्रदेश नहीं है। एक जीव आकाश के असंख्यात प्रदेश को अवगाहित कर रहता है। निगोद की अवगाहना एक समान होती है।

प्रज्ञापना में कायस्थिति का विवेचन साव्याहारिक राशि की अपेक्षा है।[3] असंख्यात निगोद का एक गोला होता है। सूक्ष्म निगोद के समूह से उत्पन्न गोले होते हैं तथा बादर निगोद के अवगाहित की अपेक्षा गोले होते हैं। निगोद के गोले असंख्यात है, एक एक गोले में असंख्यात निगोद है व एक निगोद में अनत जीव है।

---

१. जीवाभिगम संग्रहणी।
२. निगोद षट्त्रिंशिका गा १६।
३. प्रज्ञापना पद १८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निगोद अर्थात् शरीर (औदारिक शरीर)। एक समान अवगाहनावाली असंख्याती निगोद का एक गोला बनता है अर्थात् एक सरीखी अवगाहना वाली असंख्याती निगोद समूह को गोला कहा जाता है। प्रत्येक जीव की, निगोद की व गोले की अवगाहना एक समान कही है।[1]

शुभ योग से पुण्य तथा निर्जरा दोनों होते हैं। इन दोनों में पूर्व पुण्य का बंध होता है, फिर निर्जरा होती है। आवश्यक वृत्ति में कहा है कि अभव्य जीव अनेक बार अकामनिर्जरा करता हुआ ग्रंथी देश तक आ जाता है अर्थात् यथा-प्रवृत्ति करण को प्राप्त कर लेता है।[2]

अस्तु श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा के पुस्तकाध्यक्षों तथा जैन भवन के पुस्तकाध्यक्षों के हम बड़े आभारी हैं जिन्होंने हमारे सम्पादन के कार्य में प्रयुक्त अधिकांश पुस्तकें हमें देकर पूर्ण सहयोग दिया।

गणाधिपति गुरुदेव आचार्य श्री तुलसी तथा आचार्य महाप्रज्ञ तथा महाश्रमणी साध्वी प्रमुखा श्री कनकप्रभा जी की महान् दृष्टि हमारे पर रही है जिसे हम भूल नहीं सकते। युगप्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने प्रस्तुत कोश पर अपने व्यस्त समय में आशीर्वाद लिखा हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं।

कलकत्ता युनिवर्सिटी के भाषा विज्ञान के प्राध्यापक डा० सत्यरंजन बनर्जी को हम सदैव याद रखेगें जिन्होंने हमारे अनुरोध पर पुद्गल कोश पर भूमिका लिखी।

हम जैन दर्शन समिति के सभापति श्री गुलाबमल भंडारी, मन्त्री श्री सुशील कुमार जैन, उपमंत्री सुशीलकुमार बाफणा, श्री हीरालाल सुराणा, श्री नवरतनमल सुराना, श्री मांगीलाल लूणिया, श्री इन्द्रमल भण्डारी, श्री केवलचन्द नाहटा, श्री बच्छराज सेठिया, श्री गुलाबचन्द्र चोरड़िया आदि सभी बन्धुओं को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने हमारे विषय कोश की परिकल्पना में किसी न किसी रूप में सहयोग प्रदान किया।

कलकत्ता—पार्श्वनाथ जयन्ती
दिनांक १ जनवरी. सन् २०००

श्रीचन्द चोरड़िया, न्यायतीर्थ (द्वय)

---

१ प्रकरण रत्नावली पृ० ४३, ४४।
२. कल्पभाष्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय सूची

विषय		पृष्ठ
	समर्पण	3
	संकलन-सम्पादन में प्रयुक्त ग्रन्थों की संकेत सूची	4
	जैन वाङ्मय का दशमलव वर्गीकरण	6
·०१	लोकालोक (जगत) और द्रव्य का वर्गीकरण	9
·०६	अजीव-रूपी पुद्गल का वर्गीकरण	10
·०७	पुद्गल परिणाम का वर्गीकरण	11
	आशीर्वचन	12
	दो शब्द	13
	प्रकाशकीय	15
	भूमिका	17
	प्रस्तावना	19
·००	शब्द विवेचन	१
·१	शब्द व्युत्पत्ति	१
·०१·१	प्राकृत में 'पोग्गल' शब्द की व्युत्पत्ति	१
·०१·२	पाली में 'पुद्गल' शब्द की व्युत्पत्ति	१
·०१·३	संस्कृत में 'पुद्गल' शब्द की व्युत्पत्ति	२
·०२	पुद्गल शब्द के प्राकृत में पर्यायवाली शब्द	२
·०३	विभिन्न भाषाओं में पुद्गल शब्द के अर्थ	३
·०३·१	प्राकृत भाषा में 'पोग्गल' शब्द के अर्थ	३
·०३·२	पाली भाषा में 'पुग्गल' शब्द के अर्थ	३
·०३·३	संस्कृत भाषा में 'पुद्गल' शब्द के अर्थ	४
·०४	सविशेषण ससमास-सप्रत्यय 'पोग्गल' शब्दों की सूची	४
·०४	सविशेषण-ससमास-सप्रत्यय 'पोग्गल' शब्दों की परिभाषा	८
·०५	परिभाषा के उपयोगी पाठ	३४
·०५·१	पुद्गल की परिभाषा के उपयोगी पाठ	३४
·०५·२	परमाणु पुद्गल की परिभाषा के उपयोगी पाठ	३९
·०५·३	स्कंध पुद्गल की परिभाषा के उपयोगी पाठ	४४
·०६	प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई परिभाषा	५१
·०६·१	प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई पुद्गल की परिभाषा	५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·०६·२ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई परमाणु की परिभाषा	५३
·०६·३ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई स्कंध पुद्गल की परिभाषा	५६
·०७ पुद्गल के भेद	५७
·०७·१ एक भेद	५७
·०७·२ दो भेद	५७
·०७·२·१ सूक्ष्म परमाणु-व्यावहारिक परमाणु	५७
·०७·२·२ कारण परमाणु-कार्य परमाणु	५७
·०७·२·३ भिन्न परमाणु तथा अभिन्न पुद्गल	५८
·०७·२·४ भिदुरधर्मी पुद्गल तथा नो भिदुरधर्मी पुद्गल	५८
·०७·२·५ परमाणु पुद्गल तथा नो परमाणु पुद्गल स्कंध	५९
·०७·२·६ सूक्ष्म पुद्गल तथा बादर पुद्गल	५९
·०७·२·७ बद्धपार्श्व स्पृष्ट पुदगल तथा नोबद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल	५९
·०७·२·८ पर्यायातीत पुद्गल तथा अपर्यायातीत पुद्गल	६१
·०७·२·९ आत्त पुद्गल तथा अनात्त पुद्गल	६१
·०७·२·१० इष्ट पुद्गल तथा अनिष्ट पुद्गल	६२
·०७·२·११ कांत पुद्गल और अकांत पुद्गल	६२
·०७·२·१२ प्रिय पुद्गल और अप्रिय पुद्गल	६२
·०७·२·१३ मनोज्ञ पुद्गल तथा अमनोज्ञ पुद्गल	६३
·०७·२·१४ मनोरम (मनाम) तथा अमनोरम (अमनाम) पुद्गल	६३
·०७·३ तीन भेद	६३
·०७·४ चार भेद	६४
·०७·५ पांच भेद	६५
·०७·६ छः भेद	६५
·०७·६·१ पृथ्वी-जल आदि भेद	६५
·०७·६·२ स्थूल-स्थूल आदि भेद	६६
·०७·७ उन्नीस भेद	६६
·०७·८ तेईस भेद	६७
·०७·९ छब्बीस भेद	६८
·०७·१० पांच सौ तीस भेद	६९
·०७·११ अनेक भेद	८६
·०७·१२ अनंत भेद	८७
·०८ पुद्गल पर विवेचन गाथा	८७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
'०८'१ पुद्गल पर विवेचन गाथा	८७
'०८'२ परमाणु पर विवेचन गाथा	१०७
'०९ नय और निक्षेप की अपेक्षा विवेचन	१२०
'०९'०१ नय की अपेक्षा विवेचन	१२०
'०९'०२ निक्षेप की अपेक्षा विवेचन	१२८
'१०/२९ औविक पुद्गल का विवेचन	१२८
'११ पुद्गल के गुण	१२८
'११'०१ द्रव्यत्व	१२८
'११'०२ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य स्वभाव	१२९
'११'०३ नित्यता तथा अवस्थिति	१३३
'११'०४ अजीवत्व	१३४
'११'०५ अस्तिकायत्व	१३५
'११'०६ रूपित्व-मूर्तत्व	१३७
'११'०७ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	१३८
'११'०८ स्वभाव गुण—विभावगुण	१३९
'११'०९ द्रव्यकर्म	१४०
'११'१० द्रव्ययोग	१४०
'११'११ द्रव्यस्थान	१४१
'११'१२ पूरण-गलन स्वभाव	१४२
'११'१३ परिणमन	१४३
'११'१४ परिणाम	१४४
'११'१४'१ तीनों काल की अपेक्षा पुद्गल-परिणाम	१४४
११'१४'२ गुरुलघुत्व तथा अगुरुलघुत्व	१४७
'११'१४'३ पुद्गल परिणाम के भेद	१४७
क) तीन भेद	१४७
ख) चार भेद	१४७
ग) पांच भेद	१४८
घ) दस भेद	१४८
च) बाइस भेद	१४८
छ) अनेक भेद	१४९
'११'१५ ग्रहण गुण और परिभोग गुण	१४९
'११'१६ अवस्थान आदि गुण	१५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·१२ पुद्गल और पर्याय	१५१
·१२·०१ पर्याय का लक्षण	१५१
·१२·०२ एकत्व-पृथक्त्व	१५२
·१२·०३ संयोग-युति	१५३
·१२·०४ संबंधन-संघात	१५४
·१२·०५ भेदन	१५४
·१२·०६ परिशटन-परिपतन-विध्वंसन	१५५
१२·०७ क्रिया	१५५
·१२·०७·१ सक्रियत्व	१५५
·१२·०७·०२ एजनादि क्रिया	१५६
·१२·०७·०३ चलना क्रिया	१५८
·१२·०७·०४ सकंपता-निष्कंपता	१६०
·१२·०८ गति	१६१
·१२·०८·०१ अनुश्रेणि गति	१६१
·१२·०८·०२ नोभवोपपात गति	१६१
·१२·०८·०३ निक्षिप्त पुद्गल की गति	१६२
·१२·०८·०४ गुरुगति-प्रणोदनगति-प्राग्भारगति	१६३
·१२·०८·०५ विहायोगति	१६४
·१२·०८·०६ लोकबाह्यगति	१६५
·१२·०८·०७ गति-प्रतिघात	१६६
·१२·०८·०८ गति-स्थान-अवगाहनक्रिया	१६७
·१२·०८·०९ चय-अपचय-छेदन-उपचय	१६७
·१२·०८·१० पुद्गल और स्पर्शनिक्षेप	१६८
·१२·०८·१२ औपनिधिका द्रव्यानुपूर्वी	१७१
·१२·१३ पुदगल में भाव	१७३
·१ पुद्गल और अनादिपारिणामिक भाव	१७३
·२ पुद्गल और सादि पारिणामिक	१७४
·३ पुद्गल और उदय-पारिणामिक भाव	१७४
·१२·१४ पुद्गल और पर्याय संख्या	१७५
·१ काय स्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या	१७५
क) एक समय यावत् असंख्यात समय स्थितिवाले पुद्गल और पर्याय संख्या	१७५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
ख) जघन्य-उत्कृष्ट-अजघन्यअनुत्कृष्ट समय स्थितिवाले पुद्गल और पर्याय संख्या	१८१
·१२·१४·२ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा पुद्गल और पर्याय संख्या	१८३
क) एक गुण यावत् अनंत गुण की अपेक्षा पुद्गल और पर्याय संख्या	१८३
ख) जघन्य-उत्कृष्ट-अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण की अपेक्षा पुद्गल और पर्याय संख्या	१९०
·१२·१४·३ क्षेत्रावगाहित पुद्गल और पर्याय संख्या	१९४
क) एक प्रदेशावगाढ यावत् असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल और पर्याय संख्या	१९४
ख) जघन्य अवगाहना-उत्कृष्ट अवगाहना-अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल और पर्याय संख्या	२०१
·१३ पुद्गल की वर्गणा	२०६
·१ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा पुद्गल वर्गणा	२०६
·२ भावहानिप्ररूपणा की अपेक्षा पुद्गल की वर्गणा	२०९
·१४ पुद्गल की आत्मा	२११
·१५ पुद्गल और संख्या	२१२
·१ द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलों की संख्या	२१२
·२ क्षेत्रावगाहित पुद्गल की अपेक्षा संख्या	२१३
·३ काल-स्थिति की अपेक्षा पुद्गल और संख्या	२१४
·४ भाव की अपेक्षा पुद्गल और संख्या	२१५
·५ पुद्गल और युग्म संख्या	२१६
·६ पुद्गल अनन्त है	२१८
·७ जाति अपेक्षा से पुद्गल अनंत है	२१८
·१६ पुद्गलों की पारस्परिक तुलना	२१८
·१ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा तुलना	२१८
·१७ पुद्गल और क्षेत्र	२२१
·१ पुद्गल लोकप्रमाण है	२२१
·२ पुद्गल के लोक में सर्व दिशाओं में सर्वत्र है	२२३
·३ पुद्गल के आकाशप्रदेश का अवगाहन	२२४
·४ पुद्गल का लोक में अभाव	२२७
·१८ पुद्गल और प्रदेश	२२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·१ पुद्गल के प्रदेश की अनंतता	२२८
·२ पुद्गल के प्रदेश और द्रव्य-द्रव्यदेशत्व	२२९
१९. पुद्गल का सप्रदेशत्व-अप्रदेशत्व	२३२
·१ द्रव्य अपेक्षा	२३२
·२ क्षेत्र अपेक्षा	२३२
·३ काल अपेक्षा	२३२
·४ भाव अपेक्षा	२३२
·२० पुद्गलों की स्पर्शना	२३५
·१ परमाणु पुद्गल की स्पर्शना	२३८
·२ द्विप्रदेशादि स्कंध की स्पर्शना	२३८
·३ परमाणु पुद्गल और वायुकाय की स्पर्शना	२४२
·४ स्कंध पुद्गल और वायुकाय की स्पर्शना	२४२
·५ विशिष्ट पुद्गल स्कंध और वायुकाय की स्पर्शना	२४३
·२१ पुद्गल की विविध अपेक्षा से स्थिति	२४३
·१ संतति की अपेक्षा	२४६
·२ विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा	२४६
·३ एक रूप की अपेक्षा	२४६
·४ सकंपत्व की अपेक्षा	२४७
·५ निष्कंपत्व की अपेक्षा	२४७
·६ वर्ण अपेक्षा	२४८
·७ गंध अपेक्षा	२४८
·८ रण अपेक्षा	२४८
·९ स्पर्श अपेक्षा	२४८
·१० सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा	२४९
·११ बादर परिणमन अपेक्षा	२४९
·१२ शब्द परिणति अपेक्षा	२४९
·१३ अशब्द परिणति अपेक्षा	२४९
·२२ पुद्गल का विविध अपेक्षा से अंतरकाल	२५०
·१ परमाणुत्व की अपेक्षा	२५३
·२ स्कंधत्व की अपेक्षा	२५४
·३ क्षेत्रान्तर की अपेक्षा	२५४
·४ सकंपत्व अपेक्षा	२५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·५ निष्कंपत्व अपेक्षा	२५४
·६ वर्णत्व अपेक्षा	२५७
·७ गंधत्व अपेक्षा	२५७
·८ रसत्व अनुक्षा	२५७
·९ स्पर्शत्व अपेक्षा	२५७
·१० सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा	२५८
·११ बादर परिणमन अपेक्षा	२५८
·१२ शब्द परिणति अपेक्षा	२५८
·१३ अशब्द परिणति अपेक्षा	२५८
·२३ पुद्‌गल और आकाशास्तिकाय	२५८
·२४ पुद्‌गलों का ज्ञान	२५९
·१ विषय का ग्रहण-ज्ञान	२५९
क) रूप का ग्रहण चक्षुरिन्द्रिय द्वारा होता है	२५९
ख) शब्द का ग्रहण श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा होता है	२५९
ग) गंध का ग्रहण घ्राणेन्द्रिय द्वारा होता है	२५९
घ) रस का ग्रहण रसेन्द्रिय द्वारा होता है	२६०
ङ) स्पर्श का ग्रहण स्पर्शेन्द्रिय द्वारा होता है	२६०
·२ कर्मपुद्‌गलों को इन्द्रिय ज्ञान से नहीं जाना जाता है	२६१
·३ पुद्‌गल और अवधि ज्ञान	२६१
·४ केवली को परमाणु पुद्‌गल का ज्ञान	२६२
क) केवली में एक समय दोनों उपयोग का निषेध	२६२
·५ स्कंध पुद्‌गल का ज्ञान	२६४
·६ छद्‌मस्थ को पुद्‌गल का ज्ञान	२६५
·७ निर्जरा के पुद्‌गलों का ज्ञान	२६५
·२५ पुद्‌गल के भेद और उनके उदाहरण	२६७
·१ अणु तथा स्कंध	२६७
·२५ पुद्‌गल के भेद व उनके उदाहरण	२६८
·६ चार भेद	२६८
·७ छह भेद	२६८
·२६ पुद्‌गल स्पर्श-रस-गंध-वर्णवाला है	२७०
·२७ पुद्‌गल स्कंध कितने परमाणु के बने हुए होते हैं	२७०
·३०/४९ परमाणु पुद्‌गल	२७१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·३१ परमाणु पुद्गल के गुण	२७१
·३१·१ द्रव्यत्व	२७१
·३१·२ शाश्वत-अशाश्वत	२७२
·३१·३ नित्यता-अनित्यता	२७३
·३१·४ अजीवत्व	२७४
·३१·५ पूरण-गलन स्वभाव	२७४
·३१·६ अनर्द्ध-अमध्य-अप्रदेशत्व	२७४
·३१·७ अच्छेद्य-अभेद्यत्व	२७७
·१ सूक्ष्म परमाणु का अच्छेद्य-अभेद्यत्व	२७७
·२ व्यावहारिक परमाणु का अच्छेद्य-अभेद्यत्व	२७८
·३ द्रव्य रूप से अच्छेद्य, गुण रूप से छेद्य भी है	२८०
·३१·८ उपचारत:-अस्तिकायत्व	२८०
·३१·९ रूपित्व-मूर्तत्व	२८१
·३१·१० वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	२८१
·३१·११ अगुरुलघु	२८३
·३१·१२ परिणमन	२८४
·३१·१३ परमाणुपुद्गल जीव के परिभोग में नहीं आता	२८४
·३१·१४ अनवकाश-सावकाश नहीं है	२८५
·३१·१५ अप्रदेशान्तत्व	२८५
·३२·१६ परमाणुओं में स्पर्श गुण की सिद्धि	२८६
·३१·१७ अविभागप्रतिच्छेद	२८६
·३२ परमाणुपुद्गल और पर्याय	२८७
·३२·१ पर्याय का लक्षण	२८७
·३२·२ एकत्व-पृथग्त्व	२८८
·३२·३ बंधन के नियम	२८८
·३२·४ बंधन तथा भेदन	२९०
·१ दो परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९०
·२ तीन परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९१
·३ चार परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९१
·४ पाँच परमाणुपुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९२
·५ छह परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९३
·६ सात परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·७ आठ परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९५
·८ नव परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	२९७
·९ दस परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	३००
·१० संख्यात परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	३०४
·११ असंख्यात परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	३०८
·१२ अनंत परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन	३१०
·३२·५ क्रिया	३१२
·२ सकंपता-निष्कंपता	३१२
·३ एजनादि क्रिया	३१३
·३२·६ गति	३१३
·१ अनुश्रेणिगति	३१३
·२ नोभवोपपातगति	३१३
·३ स्पृशदगति-अस्पृशद्गति	३१३
·४ प्रतिघात (गति का प्रतिहनन)	३१४
·३२·७ काल की संख्या का प्रविभक्त है	३१४
·३२·८ स्कंध का भेदक तथा कर्त्ता	३१५
·३२·९ देशस्पर्श का अभाव	३१५
·३२·१० अशब्दत्व	३१७
·३२·११ परमाणुपुद्गल और पर्यायसंख्या	३१७
·३२·११ पर्याय संख्या	३१७
·१ औधिक अपेक्षा	३१७
·२ समयस्थितिवाले	३२०
परमाणुपुद्गल और पर्यायसंख्या	३२०
·३ वर्ण-गंध-रस-स्पर्शत्व अपेक्षा	३२३
·३२·१२ भाव	३३१
·३३ परमाणु पुद्गल की वर्गणा	३३१
·१ औधिक विवेचन	३३१
·३३ जीव और पुद्गल	३३३
·१ जीव के द्वारा अग्राह्य वर्गणा	३३३
·३४ परमाणु पुद्गल की आत्मा	३३३
·३५ परमाणु पुद्गल और संख्या	३३४
·१ द्रव्य अपेक्षा	३३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
क) द्रव्य की अपेक्षा—गणनसंख्या	३३४
ख) द्रव्य की अपेक्षा युग्म संख्या	३३४
·२ प्रदेश अपेक्षा	३३५
·३ क्षेत्रावगाहित परमाणु अपेक्षा	३३५
प्रदेशावगाहन की अपेक्षा	३३५
·४ कालस्थिति (समय) अपेक्षा	३३६
·५ भाव अपेक्षा	३३७
·३६ परमाणु पुद्गल की उत्पत्ति के नियम	३३७
·३७ परमाणु पुद्गल की स्पर्शना	३३८
·१ परमाणु पुद्गल की अन्य परमाणु पुद्गल से अथवा विविध प्रदेशी स्कंधों से स्पर्शना	३३८
·२ विविध प्रदेशी स्कंधों की परमाणु पुद्गल से स्पर्शना	३३९
·३८ परमाणु पुद्गल और वायुकाय	३४०
·३९ परमाणु पुद्गल का चरम-अचरमत्व	३४१
·४० परमाणु पुद्गल और क्षेत्र	३४६
·१ परमाणु पुद्गल का आकाश प्रदेश अवगाहन	३४६
·२ परमाणु पुद्गल और क्षेत्र	३४७
·३ परमाणु और क्षेत्र	३४७
·४१ परमाणु का एकक (मान का एकक)	३४७
·४२ परमाणु पुद्गल और चार धातु	३४९
·४३ परमाणु पुद्गल और ओघ जघन्य	३५०
·४४ परमाणु पुद्गल के अस्तित्व का निरूपण	३५१
·४५ परमाणु पुद्गल—सामग्री-जन्य (कारण समूह) नहीं है	३५१
·४६ परमाणु पुद्गल का ज्ञान	३५२
·४६ परमाणु पुद्गल और विविध अपेक्षा से स्थिति	३५५
·१ संतति की अपेक्षा	३५५
·२ विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा	३५६
·३ स्वरूप की अपेक्षा	३५६
·४ सकंपत्व की अपेक्षा	३५६
·५ निष्कंपत्व की अपेक्षा	३५६
·४७ परमाणु पुद्गल और विविध अपेक्षा से अंतरकाल	३५७
·१ परमाणु पुद्गल और विविध अपेक्षा से अंतरकाल	३५७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·२ विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा	३५७
·३ सकंपत्व की अपेक्षा	३५७
·४ निष्कंपत्व की अपेक्षा	३५८
·४८ वर्गणा	३५८
·१ परमाणुवग्गणाम्मि ण अवरुक्कम्म च सेसगे अत्थि	३५८
·२ वर्गणा	३५९
·५ वर्गणा पर दृष्टान्त	३६४
·४९ परमाणु पुद्गल और पुद्गल परिवर्त	३६४
·५०·६९ स्कंध पुद्गल	३६५
·५१ स्कंध पुद्गल और विभाव गुण	३६५
·५१ स्कंध पुद्गल के गुण	३६५
·५१·१ द्रव्यत्व	३६५
·५१·२ स्कंध पुद्गल शाश्वत भी है अशाश्वत भी है	३६५
·५१·३ नित्य तथा अवस्थित द्रव्य है	३६६
·५१·४ स्कंध पुद्गल का अजीवत्व	३६७
·५१·५ स्कंध पुद्गल का रूपित्व-मूर्तित्व	३६७
·५१·६ स्कंध पुद्गल-अनर्द्ध भी है, सार्द्ध भी है, अमध्य भी है, समध्य भी है तथा सप्रदेशी है	३६८
·५१.६·१ स्कंध सप्रदेशी है	३७०
·५१·७ स्कंध पुद्गल छिन्न-भिन्न होता भी है, नहीं भी होता है	३७०
·५१·८ स्कंध पुद्गल का अस्तिकायत्व	३७२
·५१·९ स्कंध पुद्गल के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३७२
·५१·९ स्कंध पुद्गल में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३७३
·१ द्विप्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३८०
·२ तीन प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३८१
·३ चार प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३८४
पाँच प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३८७
·५१·९ छः प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३८९
सात प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९२
·४ आठ प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९५
·५ नव प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९७
·६ दस प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·७ संख्यात प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९९
·८ असंख्यात प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९९
९ सूक्ष्म परिणत अनंत प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	३९९
·१० बादर परिणामवाले अनंत प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	४००
·५१·९ स्कंध और स्पर्श	४०८
·५१·१० तीनों काल की अपेक्षा स्कंध परिणाम	४०९
·५१·१० स्कंध पुद्गल परिणामी है	४१०
·३ द्रव्य का परिणाम	४११
·४ परिणाम का लक्षण	४११
·६ स्कंध देश	४१२
·७ प्रदेश	४१२
·८ परमाणु	४१३
·५२ स्कंध पुद्गल और पर्याय	४१३
·५२·१ स्कंध पुद्गल और पर्याय के लक्षण	४१३
.५२·२ स्कंध पुद्गल और एकत्व-पृथक्त्व	४१४
·५२·३ स्कंध पुद्गल और बंधन के नियम	४१४
बंधन के नियम	४१५
·५२·३ बंधन के नियम	४१५
·५२·४ स्कंध पुद्गल और बंधन तथा भेदन	४३४
·५२·५ स्कंध पुद्गल और पर्याय संख्या	४३५
·५२.५·१ जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट प्रदेशी स्कंधों की संख्या पर्याय	४४४
·५२·५·१ अवगाहना की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की पर्याय	४४६
·५२·५·१ अवगाहना की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की पर्याय	४४७
·५२·५·१ क्षेत्रावगाहित स्कंध पुद्गल और पर्याय संख्या	४४८
कावस्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या	४५४
·५२·५·२ जघन्य-उत्कृष्ट-अजघन्य-अनुत्कृष्ट समय स्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या	४५४
५२·५·३ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा स्कंध पुद्गल और पर्याय संख्या	४५८
·४ स्कंध पुद्गल अनंत है	४६८
·५ द्रव्य देश से पुद्गल अनंत है	४६९
·२ स्कंध पुद्गल के अनंत भेद	४६९
·३ स्कंध की संख्या	४६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·४ स्कंध के भेद—अनंत	४६९
·५ पुद्गल अनंत है	४७०
·५३ स्कंध का अवगाहन क्षेत्र	४७०
·५४ स्कंध पुद्गल और एजन-परिस्पंदन-कंपन	४७१
·१ स्कंध पुद्गल और एजनादि क्रिया	४७१
·३ स्कंध पुद्गल और सकंपता-निष्कंपता	४७२
·५५ पुद्गल की सक्रियता-अनित्यता	४७३
·२ क्रिया की परिभाषा	४७३
·३ स्कंध पुद्गल की गति	४७३
·४ पुद्गल की गति	४७४
·५ स्कन्ध पुद्गल और विहायोगति	४७४
.६ देव और निक्षिप्त पुद्गल गति	४७५
·७ स्कन्ध पुद्गल और गति	४७५
·८ पुद्गल और क्रिया	४७५
·५६ पुद्गल द्रव्य-निष्क्रिय-नित्य भी है	४७६
·२ पुद्गल उत्पाद्-व्यय-ध्रौव्य गुणवाला है	४७६
·३ जीव और पुद्गल की गति	४७६
·४ क्रिया परिस्पंदात्मक है	४७७
·५ पुद्गल और क्रिया	४७७
·६ दो भेद	४७७
·५७ स्कन्ध पुद्गल और भाव	४७७
·५८ स्कन्ध पुद्गल सामग्री जन्य (कारण-समूह) है	४७७
·२ स्कन्ध कार्य-कारण रूप है	४७८
·३ परिप्राप्तबंधपरिणामाः स्कन्धा	४७८
·५ स्कन्ध पुद्गलों की उत्पत्ति के कारण	४७८
·५ पुद्गल स्कन्ध की उत्पत्ति के कारण	४७९
·५९ स्कन्ध पुद्गल की पर्याय	४८०
·६० स्कन्ध पुद्गल-अगुरुलघु-गुरुलघु होता है	४८०
·६१ गंध के पुद्गल और वायुकाय	४८०
·६२ स्कन्ध पुद्गल के भेद	४८१
·१ अणवः स्कंधाश्च	४८१
·२ पुद्गल के दो भेद	४८१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·३ तीन भेद	४८२
स्कन्ध पुद्गल के भेद	४८२
·४ पुद्गल द्रव्य के चार भेद	४८३
·५ पुद्गल विभाजन के प्रकार	४८३
·६ स्कन्ध पुद्गल	४८४
द्रव्य स्कन्ध के भेद	४८४
·८ छः भेद	४८५
·९ स्कंध के भेद	४८६
·१० पुद्गल के धर्म	४८६
स्कन्ध के भेद	४८६
·६३ स्कंध पुद्गल और परमाणु पुद्गल	४८७
·१ मिश्र स्कंध-अचित महास्कंध	४८७
·२ सूक्ष्मस्कंध—परिभाषा अर्थ	४८७
·३ बादर स्कंध—परिभाषा अर्थ	४८७
·४ भेदों की परिभाषा अर्थ	४८८
·५ स्कंध पुद्गलों का सूक्ष्म परिणामावगाहन	४८८
·६४ स्कंध पुद्गल और चरम-अचरम	४८९
·२ स्कंध पुद्गल और चरम-अचरम	४९१
·६५ वर्गणा	४९७
·१ परिभाषा/अर्थ	४९७
·२ अणुवर्गणा	४९७
परिभाषा/अर्थ	४९७
·२ अणुवर्गणा	४९८
परिभाषा/अर्थ	४९८
·३ भेद	४९९
·४ परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा का उद्भव	४९९
·५ वर्गणाओं का वर्ण-गंध-रस-स्पर्श	४९९
·६ नयकी अपेक्षा वर्गणा का विवेचन	५००
·७ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के आश्रय स्कंध पुद्गल की वगणा	५०१
·१ द्रव्य अपेक्षा	५०१
·२ क्षेत्र अपेक्षा	५०१
·३ काल अपेक्षा	५०१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·४ भाव अपेक्षा	५०२
·५ प्रदेश अपेक्षा	५०२
·६ अवगाहन अपेक्षा	५०२
·७ स्थिति अपेक्षा	५०३
·८ भाव अपेक्षा	५०३
·१ वर्गणा	५०५
·२ वर्गणा	५०६
·३ वर्गणा के भेद	५०७
·४ भेद	५०७
·५ पुद्गल का ज्ञान	५०८
·१ अवधि ज्ञानी जीव किन-किन वर्गणाओं को जानता है	५०८
·६ पुद्गल का ज्ञान	५०९
अवधि ज्ञानी जीव किन-किन वर्गणाओं को जानता है	५०९
·७ वर्गणा	५१०
·६६ स्कन्ध पुद्गल की आत्मा	५११
·१ द्विप्रदेशी स्कन्ध की आत्मा	५११
·२ तीन प्रदेशी स्कन्ध पुद्गल की आत्मा	५१३
·३ चार प्रदेशी स्कन्ध पुद्गल की आत्मा	५१६
·४ पांच प्रदेशी स्कन्ध की आत्मा	५१८
·५ छः प्रदेशी स्कन्ध, सात प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कन्ध की आत्मा	५१८
·६७ स्कन्ध की विविध अपेक्षा से स्थिति	५२१
१) संतति की अपेक्षा	५२२
२) विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा	५२२
३) एक रूप की अपेक्षा	५२२
४) सकंपत्व की अपेक्षा	५२२
५) निष्कंपत्व की अपेक्षा	५२२
·२ स्कन्ध पुद्गल और सकंपता-निष्कंपता की अपेक्षा स्थिति	५२३
·३ सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा	५२४
·४ बादर परिणमन अपेक्षा	५२४
·६८ स्कन्ध पुद्गलों का ज्ञान	५२४
·२ जीव और पुद्गलों का ज्ञान	५२४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·३ पुद्गल का ज्ञान	५२५
मतिज्ञान से—शब्द-रस-स्पर्श-रूप-गंधादि का ज्ञान	५२५
·४ अवधि ज्ञानी-सर्व पुद्गल द्रव्यों को जान सकता है	५२६
परमाणु से अंतिम स्कंध पर्यन्त-रूपी द्रव्यों को अवधि दर्शन देखता है	५२६
परमावधि ज्ञानी समस्त पुद्गल द्रव्य और संख्यात पर्याय को जानता है	५२६
परमावधि ज्ञानी एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों को जानता है	५२६
पुद्गल का ज्ञान	५२६
परमावधि ज्ञानी सर्व पुद्गलों को जानता है	५२६
·५ पुद्गल का ज्ञान	५२८
अवधि ज्ञानी-सर्व पुद्गलों को जान सकता है	५२८
·६ मनपर्यव ज्ञानी को पुद्गलों का ज्ञान	५२८
मन:पर्यवज्ञानी-मनोवर्गणा के पुद्गलों को जानता है	५२८
स्कंध पुद्गल का ज्ञान	५२८
मन:पर्यवज्ञान अनंत-अनंतप्रदेशी स्कंध को जानता है	५२८
·६ पुद्गलों का ज्ञान	५२९
आहार के पुद्गलों का ज्ञान	५२९
·६९ स्कंध पुद्गल और संख्या	५३१
·१ द्रव्य की अपेक्षा स्कंध पुद्गलों की संख्या	५३१
स्कंध पुद्गल की संख्या	५३१
·२ क्षेत्रावगाहित स्कंध पुद्गल की संख्या	५३१
·६९·१ स्कंध पुद्गल और युग्म संख्या	५३२
द्रव्य की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की संख्या	५३२
एक वचन की अपेक्षा, बहुवचन की अपेक्षा	५३२
युग्म की अपेक्षा पुद्गल स्कंध	५३२
स्कंध पुद्गल और युग्म	५३३
स्कंध पुद्गल की प्रदेशावगाढता	५३३
स्कंध पुद्गल और युग्म	५३४
प्रदेश की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की संख्या	५३४
स्कंध पुद्गल और युग्म	५३५
प्रदेश की अपेक्षा स्कंध पुद्गलों की संख्या	५३५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·२ पुद्गल स्कंध चाक्षुष भी है तथा अचाक्षुष भी है	५३६
·७० स्कंध पुद्गल का अंतरकाल	५३७
·१ स्कंध पुद्गल का अंतरकाल	५३७
·२ स्कंध पुद्गल की सकंपता का अंतरकाल	५३७
·७१ स्कंध पुद्गल और तेजोलेश्या (शीत तेजोलेश्या-उष्ण-तेजोलेश्या)	५३९
संक्षिप्त-विपुल तेजोलेश्या की प्राप्ति	५४०
निर्जरा के पुद्गलों की सूक्ष्मता	५४२
छद्मस्थ को निर्जरित पुद्गलों का ज्ञान	५४३
विविध अपेक्षा से पुद्गल और वर्णादि	५४३
विविध अपेक्षा से पुद्गल और वर्णादि	५४४
स्कंध पुद्गल और करण	५४४
·७२ स्कंध पुद्गल और भाव करण	५४५
·७३ स्कंध और कर्म	५४५
·१ पुद्गल और ईर्यापथकर्म	५४५
·२ पुद्गलविपाकी कर्म-प्रकृत्तियाँ	५४६
पुद्गलविपाकी प्रकृत्तियाँ	५४७
शरीर के पुद्गल	५४७
पुद्गलविपाकी प्रकृतियाँ	५४७
·३ पुद्गल और कर्मों का फलविपाक	५४८
·४ विविध	५४९
·७४ जैनेतर ग्रन्थों में पुद्गल	५४९
·७५ पुद्गल के—अणु (परमाणु) और स्कंध—भेद सादि परिणामवाले हैं, अनादि परिणामवाले नहीं हैं	५४९
·१ २ परमाणु द्रव्यतः नित्य है	५४९
·७६ स्कंध का भेदन	५५०
·७७ पुद्गल का परिणमन	५५१
·७८ द्रव्य और भाव	५५१
·७९ नारकी और आहार के पुद्गल	५५२
नारकी और आहार के पुद्गल	५५२
नारकी और आहार के पुद्गल	५५३
·७९ असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार देव के आहार के पुद्गल	५५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·३ पृथ्वीकायिक से वनस्पतिकायिक	५५४
त्रीन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय	५५४
तिर्यंच पंचेन्द्रिययोनिक	५५५
मनुष्य—वाणव्यंतर-ज्योतिषी वैमानिकदेव	५५५
·८० स्कंध और अवगाहन क्षेत्र	५५६
स्कंध पुद्गल और क्षेत्रावगाह	५५७
पुद्गल का क्षेत्रावगाह	५५८
ज) विद्युत्-पुद्गल परिणाम	५५८
लक्षण की परिभाषा	५५९
पुद्गल का एक भेद	५५९
·८१ स्कंध	५५९
·८२ पुद्गल और पर्याय	५६१
·१ पुद्गल और पृथक्त्व	५६१
·२ पुदगल और काल	५६१
·३ पुद्गल के प्रदेश	५६२
·८३ अल्पबहुत्व	५६२
·१ द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा पुद्गल का अल्पबहुत्व	५६२
·२ द्रव्य की अपेक्षा पुद्गल का अल्पबहुत्व	५६२
·३ पुद्गल और आकाश	५६३
·४ पुद्गल अनंत है	५६३
·५ छः द्रव्यों की प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५६४
पुद्गल-अनंत है	५६४
·६ द्रव्य-प्रदेश-पर्याय की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५६४
·७ प्रदेश की अपेक्षा छः द्रव्यों का अल्पबहुत्व	५६४
पुद्गल अनंत है	५६४
·८ द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा छः द्रव्यों का अल्पबहुत्व	५६५
·९ दिशा की अपेक्षा पुद्गल का अल्पबहुत्व	५६६
·१० क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गल का अल्पबहुत्व	५६६
·११ अल्पबहुत्व—भेद की अपेक्षा	५६७
·१२ अल्पबहुत्व—भेद की अपेक्षा	५६७
पुद्गल के भेद की अपेक्षा परस्पर अल्पबहुत्व	५६७
·१३ परमाणु पुद्गल-स्कंध पुद्गल का अल्पबहुत्व	५६८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
द्रव्य की अपेक्षा	५६८
प्रदेश की अपेक्षा	५६८
द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा	५६८
·१४ प्रायोगिक पुद्गल	५६९
·१ पुद्गल स्कंध-शरीरवर्गणा का अल्पबहुत्व	५६९
·१५ प्रदेश की अपेक्षा वर्गणा का अल्पबहुत्व	५६९
·१६ शरीर के पुद्गलों का प्रदेशरूप अल्पबहुत्व	५७०
·१७ पुद्गल परिवर्तन का अल्पबहुत्व	५७०
पुद्गल परिवर्तन (संख्या की अपेक्षा)	५७१
पुद्गल परिवर्तन का अल्पबहुत्व	५७१
·१८·१ वर्गणा की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५७१
·१८·२ वर्गणा का अल्पबहुत्व	५७२
·१८·३ वर्गणा	५७३
वर्गणा—अनुभाग स्थान	५७३
·५ वर्गणा-स्पर्धक अल्पबहुत्व	५७४
·६ अल्पबहुत्व-स्पर्धक	५७४
·१ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा सप्रदेश-अप्रदेश पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५७५
·२० आयुष्य स्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५७६
द्रव्यस्थानायु-क्षेत्रस्थानायु-अवगाहनास्थानायु और भावस्थानायु पुद्गल का परस्पर अल्पबहुत्व	५७६
·२१ द्रव्य की अपेक्षा क्षेत्रावगाह पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५७६
·२२ प्रदेश की अपेक्षा क्षेत्रावगाह पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५७७
·२३ प्रदेशावगाह पुद्गलों में द्रव्य-प्रदेश-द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५७७
·२ द्रव्य की अपेक्षा क्षेत्रावगाह पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५७८
द्रव्य की अपेक्षा	
प्रदेश की अपेक्षा	
द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा	५७८
द्रव्य प्रदेशार्थ की अपेक्षा	५७९
·२४ पुद्गल और जीव का अल्पबहुत्व	५७९
·२५ प्रदेश की अपेक्षा पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५७९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·२६ परमाणु तथा स्कंध पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५८०
·१ सकंप-निष्कंप परमाणुओं तथा स्कंधों पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५८०
·२७ पुद्गल-स्थिति की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५८१
·१ द्रव्य-प्रदेश-द्रव्य-प्रदेश पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५८१
द्रव्य की अपेक्षा स्थिति	५८१
प्रदेश की अपेक्षा	५८१
द्रव्य-प्रदेश रूप में	५८२
·२ समय स्थिति की अपेक्षा पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५८२
·२८ परमाणु पुद्गल तथा स्कंध पुद्गल का अल्पबहुत्व	५८२
द्रव्य तथा प्रदेशों की अपेक्षा	५८४
·२९ संस्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५८४
·३० इन्द्रिय तथा कर्कशगुरु-मृदुलघु का अल्पबहुत्व	५८५
·१ कर्कशगुरु गुण की अपेक्षा	५८५
·२ मृदुलघुगुण की अपेक्षा	५८५
·३ कर्कश-गुरु गुण, मृदुलघु गुण की अपेक्षा	५८६
·३१ जीव दंडक की अपेक्षा-इन्द्रिय के कर्कशगुरु-मृदुलघु का अल्पबहुत्व	५८६
·३२ एक गुण काला आदि की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५८७
·३३ तेइस वर्गणा का समवाय से विवेचन-अल्पबहुत्व	५८८
·३४ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५८९
·३५ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५९१
द्रव्य-प्रदेश-द्रव्यप्रदेश की अपेक्षा	५९१
द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा	५९२
द्रव्य की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा पुद्गल स्कंध का परस्पर अल्पबहुत्व	५९२
प्रदेश की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा पुद्गल स्कंध का परस्पर अल्पबहुत्व	५९२
·३६ पुद्गल और अल्पबहुत्व	५९४
·१ द्रव्य प्रदेश की अपेक्षा परमाणुपुद्गल तथा पुद्गल स्कंध का	५९४
द्रव्य प्रदेश की अपेक्षा	५९४
·२ द्रव्य-प्रदेश-द्रव्यप्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५९५
·३ द्रव्य एवं प्रदेशों की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५९६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·३७ क्षेत्रावगाहित पुद्गलों का अल्पबहुत्व	५९६
·१ द्रव्य की अपेक्षा	५९६
·२ प्रदेशों की अपेक्षा	५९७
·३ द्रव्य व प्रदेश की अपेक्षा	५९७
·३८ समय स्थिति की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५९८
·३ द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व	५९८
·३९ गुण की अपेक्षा से पुद्गल का अल्पबहुत्व	५९९
द्रव्य रूप में	६००
प्रदेश रूप में—प्रदेश-द्रव्य रूप से	६०१
·४१ संख्यात प्रदेश में स्थित असंख्यात प्रदेशी परिमंडल संस्थान के अचरमखण्ड चरमखण्ड-चरमान्त प्रदेश-अचरमान्त प्रदेशों का द्रव्य-प्रदेश रूप में अल्पबहुत्व	६०१
द्रव्य रूप में	६०२
प्रदेश रूप में	६०२
प्रदेश-द्रव्य रूप में	६०२
·४२ संस्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व	६०३
·१ द्रव्य की अपेक्षा	६०३
·२ प्रदेश की अपेक्षा	६०३
·३ संस्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व	६०४
द्रव्य तथा प्रदेश की अपेक्षा	६०४
द्रव्य तथा प्रदेश की अपेक्षा	६०४
·४३ पुद्गलपरिवर्तननिर्वर्तन काल की अपेक्षा अल्पबहुत्व	६०४
पुद्गल परिवर्त	६०५
·४४ प्रयोग परिणत-मिश्रपरिणत-विस्रसापरिणत पुद्गल का अल्पबहुत्व	६०६
·४५ द्रव्य की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा दो प्रदेशी स्कंध का अल्पबहुत्व	६०६
·४६ द्रव्य की अपेक्षा परस्पर स्कंध पुद्गलों का अल्पबहुत्व	६०६
·४७ प्रदेश की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा दो प्रदेशी स्कंध का अल्पबहुत्व	६०७
·५० परमाणु पुद्गल तथा स्कंध पुद्गल का अल्पबहुत्व	६०७
·१ द्रव्य की अपेक्षा	६०७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·२ प्रदेश की अपेक्षा	६०७
·३ द्रव्यप्रदेश की अपेक्षा	६०७
१. द्रव्य की अपेक्षा	६०८
२. प्रदेश की अपेक्षा	६०८
द्रव्यतः-प्रदेशतः अपेक्षा	६०८
·५१ स्कंध का अल्पबहुत्व	६०८
·१ सकंप-निष्कंप स्कंध पुद्गलों का अल्पबहुत्व	६०८
·५२ पुद्गल उपनिधिकी खेत्ताणुपुव्वी	६०९
·५३ अल्पबहुत्व	६१०
·५४ परमाणु-स्कंध का परस्पर अल्पबहुत्व	६११
·५५ सकंप-निष्कंप स्कंधों का अल्पबहुत्व	६१२
·५६ अल्पबहुत्व	६१३
·५९ व्यावहारिक परमाणु (स्कंध पुद्गल) और उत्सेधांगुल	६१४
·६० पुद्गल का परिणाम	६१५
·६१ वर्ण-रस-यावत् गुणस्थान आदि भाव निश्चय नय से पुद्गल परिणाम तथा व्यवहार नय से जीव परिणाम है	६१५
·८४ स्कंध और नय	६१७
·१ निश्चय-व्यवहार नय से अजीव आदि के वर्णादि	६१७
·८५ पुद्गलों का अवस्थान अनियम से होता है	६१७
·८६ जीव और कर्म द्रव्यवर्गणा के पुद्गल	६१९
·८७ विस्रसा पुद्गल और दृष्टान्त	६१९
पुद्गल स्वभाव	६२०
·८८ पुद्गल और पाप-पुण्य	६२१
पुद्गल और पुण्य	६२२
पुद्गल	६२२
·८९ परमाणु-स्कंध	६२३
·९० पुद्गल-रूपी है	६२४
·९१ पुद्गल और भाव	६२४
·९२ स्कंध पुद्गल व उपग्रह	६२४
·९३ किस प्रकार के कर्म द्रव्य वर्गणा के पुद्गलों का भेदन होता है	६२४
·१ किस प्रकार के आहारद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों को एकत्रित करते हैं	६२५
·२ किस प्रकार के कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का उदीरण-वेदन-	६२५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
निर्जीर्ण होता है	६२५
·३ किस प्रकार के कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का अपव ़ न-उद्वर्तन-संक्रमण-निधत्तन-निकाचन होता है	६२६
·९४ पुद्गल और अचित्त वायुकाय	६२६
·९५ अजीव परिणाम-पुद्गल परिणाम	६२७
·१ भेद परिणाम	६२७
भेद परिणाम पांच प्रकार का है	६२८
·२ अगुरुलघुपरिणाम	६२९
·३ संस्थान	६३०
पुद्गल का संस्थान	६३०
संस्थान के भेद	६३१
संस्थान के भेद	६३१
संस्थान	६३२
संस्थान की संख्या	६३२
द्रव्यतः संख्या	६३२
प्रदेश संख्या	६३३
संस्थान की संख्या	६३३
द्रव्य की अपेक्षा	६३३
प्रदेश की अपेक्षा	६३३
·४ पुद्गल की अपेक्षा जीव के भेद	६३४
·५ पुद्गल द्रव्य का कार्य	६३४
·६ पुद्गल के लक्षण के विषय में कहा है	६३६
पुद्गल के गुण	६३६
·७ शब्द परिणाम	६३६
·७ शब्द	६३७
·८ बन्ध परिणाम	६३९
वैस्रसिक बंध	६३९
पुद्गल द्रव्य का जीव के साथ कर्म रूप में सम्बन्ध	६३९
पुद्गल और संस्थान	६४०
बन्ध	६४०
·९ सौक्ष्म्य	६४१
·१० स्थौल्य	६६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
·११ से ·१४ तम, छाया, आतप, उद्योत तथा प्रभा	६४२
·११ तम	६४२
·१२ छाया	६४२
·१३ आतप	६४२
·१४ उद्योत	६४२
·१५ प्रभा	६४२
पुद्गल के गुण	६४३
·१६·१९ पुद्गल के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श के भेद	६४४
पुद्गल परिणाम	६४४
वर्ण	६४५
पुद्गल में स्पर्शादि गुण	६४५
पुद्गल और दंडक के जीव	६४६
शरीर के वर्णादि	६४६
स्कंध पुद्गल द्रव्य और चंचलता	६४७
पुद्गल उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य वाला है	६४७
पुद्गलों के चार गुण	६४८
अध्ययन, गाथा, सूत्र आदि की संकेत सूची	६४९
संकलन-सम्पादन-अनुसंधान में प्रमुख ग्रन्थों की सूची	६४९
लेश्या-कोश पर विद्वानों की सम्मति	६५६
लेश्या-कोश पर विद्वानों की सम्मति	६५८
लेश्या कोश	६६७
क्रिया कोश	६६७
योग कोश	६६७
विद्वानों की सम्मति	६६७
मिथ्यात्वी का आध्यत्मिक विकास पर प्राप्त समीक्षा	६६९
क्रिया-कोश पर प्राप्त समीक्षा	६७३
क्रिया-कोश पर प्राप्त समीक्षा	६७५
वर्धमान जीवन कोश, प्रथम खण्ड पर प्राप्त समीक्षा	६७६
वर्धमान जीवन-कोश, द्वितीय खंड की समीक्षा	६८२
योग-कोश पर प्राप्त समीक्षा	६८७
लेश्या कोश, क्रिया कोश, योग कोश	६९१
लेश्या कोश पर प्राप्त समीक्षा	६९२
वर्धमान जीवन कोश, प्रथम खण्ड पर समीक्षा	६९६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०० शब्द विवेचन

·०१ शब्द व्युत्पत्ति

·०१·१ प्राकृत में 'पोग्गल' शब्द की व्युत्पत्ति

रूप—पोग्गल, पुग्गल

लिंग—पुँल्लिग (पोग्गला—भग० श ८ । उ १)
नपुंसक लिंग (पोग्गलाइं—सूर० प्रा ९)

धातु—√पूर + √गल
√पूर—पूर्यते=पूर्ण होना, मिलना।
√गल—गलति=निकलना, अलग होना।

संस्कृत के 'पुद्गल' शब्द से उ का ओकार, द् का लोप और ग का द्वित्व होने से प्राकृत का 'पोग्गल' शब्द बनता है।

'ओत्संयोगे'—हेम० ८।१।११५—इस सूत्र से पुद्गल शब्द के संयुक्त वर्णों के पूर्ववर्ती उकार का ओकार हो गया है। अर्थात् 'पु' का 'पो' हो गया है।

'सर्वत्र लवराम'—वर० ३।३—इस सूत्र की तरह संयुक्त व्यंजन के आद्याक्षर द् का लोप तथा अंत्याक्षर ग का द्वित्व होने से पुद्गल का पुग्गल बना और **'ओत्संयोगे'** सूत्र से पुग्गल का 'पोग्गल' हो गया।

·०१·२ पाली में 'पुग्गल' शब्द की व्युत्पत्ति

रूप—पुग्गल

लिंग—पुँल्लिग

धातु—√पुं + √गल > पुग्गल

पाली टीकाकारों ने पुग्गल की व्युत्पति विचित्र रूप से की है। 'पुं' का अर्थ नरक तथा 'गल' का अर्थ गलना, सड़ना > कष्ट पाना।

'पुन ति वुच्चति निरयो, तस्मिं गलन्ति इति पुग्गला'। 'पुं' को नरक कहा जाता है, उसमें जो गले वह पुद्गल।

संस्कृत शब्द पुद्गल से प्राकृत शब्द पुग्गल की तरह पाली शब्द पुग्गल की व्युत्पत्ति समझनी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०१·३ संस्कृत में पुद्गल शब्द की व्युत्पत्ति

रूप—पुद्गल

लिंग—त्रिलिंग

धातु—√पूर्×√गल्>पुद्गल (व्युत्पत्ति अनियमित)

—शसा० पृ० ४५७

पूरणात् गलनात् इति पुद्गलाः परमाणवः ।

—विष्णुपुराण

पूरणगलनान्वर्थसंज्ञत्वात् पुद्गलाः ।

"यथा भासं' करोति भास्कर इति भासनार्थमन्तर्नीय भास्कर संज्ञाऽन्वर्था प्रवर्तते तथा भेदात्, संघातात्, भेदसंघाताभ्यां च पूर्यन्ते गलन्ते चेति पूरणगलनात्मिकां क्रियां अंतर्भाव्य पुद्गलशब्दोऽन्वर्थः पृषोदरादिषु निपातितः, यथा 'शवशायनं श्मशानमिति' ।"

—राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४

पूरण होना अर्थात् मिलना, गलन होना अर्थात् अलग होना । जो मिलते हैं और जो अलग होते हैं उनकी संज्ञा—नामकरण पुद्गल है, जैसे 'भास' करने वाले को भास्कर कहा जाता है, उसी तरह जो भेद, संघात तथा भेदसंघात से पूरण और गलन को प्राप्त होता है वह पुद्गल है । पूरण तथा गलन क्रियाओं के संयोग से पुद्गल शब्द बनता है । यह शब्द **'शवशायनं—श्मशानं'** की तरह पृषोदरादिगण में अनियमित रूप में निष्पन्न होता है ।

राजवार्तिककार ने दूसरी व्युत्पत्ति निम्न प्रकार से की है—

'पुङ्गिलानाद्वा' अथवा, पुमांसो जीवाः, तैः शरीराहारविषयकरणोपकरणादिभावेन गिल्यन्त इति पुद्गलाः' ।

—राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४

पुंम्>पुरुष> जीव जिनको ग्रहण करे अर्थात् जीव जिनको शरीर, आहार, इन्द्रिय, उपकरणादि के रूप में ग्रहण करे वह पुद्गल ।

·०२ पुद्गल शब्द के प्राकृत में पर्यायवाची शब्द

'पोग्गल' के अनेक पर्यायवाची शब्द होते हैं ।

पोग्गलत्थिकायस्स णं भंते ! पुच्छा । गोयमा ! अणेगा अभिवयणा पन्नत्ता, तंजहा—पोग्गले ति वा, पोग्गलत्थिकाये ति वा, परमाणुपोग्गले ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा, दुपएसिए ति वा, तिपएसिए ति वा—जाव—असंखेज्जपएसिए त्ति वा, अणंतपएसिए ति वा, जे यावण्णे तहप्पगारा सव्वे ते पोग्गलत्थिकायस्स अभिवयणा।

—भग० श २० । उ २ । प्र ८ । पृ० ७९२

पोग्गल, पोग्गलत्थिकाय, परमाणुपोग्गल, दुपएसिअ, तिपएसिअ, एवं यावत् असंखेज्जपएसिअ, अणंतपएसिअ आदि तथा उसी प्रकार के अनेक शब्द पोग्गल' के अभिवचन अर्थात् पर्यायवाची शब्द हैं।

विभिन्न प्रकार के स्कंधों के नाम भी पोग्गल के पर्यायवाची शब्द हैं, यथा-—कम्म, रत्त, मांस, अनेक प्रकार की पुढवी, धाउ, कट्ठ, सद्द, तम, उज्जोअ, छाया, ताव, आतव, मन, सीयोसिणीय लेस्सा आदि।

रूपी, रूपी अजीव, रूपी अजीवद्रव्य—ये शब्द भी पुद्गल के पर्यायवाची हैं। रूपकायं भी पुद्गल का अभिवचन है। देखो—

—भग० श ७ । उ १० । प्र १, २ । पृ० ५२७-२८

·०३ विभिन्न भाषाओं में 'पुद्गल' शब्द के अर्थ

·०३·१ प्राकृत भाषा में 'पोग्गल' शब्द के अर्थ

संज्ञा—

परिभाषिक अर्थ—रूपादि विशिष्ट द्रव्य (पुं), मूर्त द्रव्य (पुं तथा नपुं)

सामान्य अर्थ—मांस (नपुं)

दार्शनिक अर्थ—जीव का अभिवचन, जीव, आत्मन् (पुं)

—पाइअ० पृ० ७६२

—भग० श ८ । उ १० । प्र ४५ । पृ० ५७४

—भग० श २० । उ २ । प्र ७ । पृ० ७९२

·०३·२ पाली भाषा में 'पुग्गल' शब्द के अर्थ

संज्ञा—

सामान्य अर्थ—व्यक्ति (दल, संघ, परिषद् से विपरीत), जन, नर

दार्शनिक अर्थ—चरित्र, आत्मन्, रागचरित्र, दोष, मोह, श्रद्धा, बुद्ध

विशेष अर्थ—जीव, प्राणी

बहुवचन—पुग्गला—लोग

—पाको० पकार खण्ड । पृ० ८५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०३ ३ संस्कृत भाषा में 'पुद्गल' शब्द के अर्थ

संज्ञा—पुं०
पारिभाषिक अर्थ—परमाणु (श्रीधर), द्रव्य
सामान्य अर्थ—देह
दार्शनिक अर्थ—आत्मन्
विशेष अर्थ—शिव का विशेषण
विशेषण—सुन्दर, रूपवान, चारु (आप्ते० तथा शसा०)
सुन्दर आकृति, आकारवाला, गुणवाला, (शसा०)

—आप्ते० पृ० ३४०
—शसा० पृ० ४५७

·०४ सविशेषण-ससमास-सप्रत्यय 'पोग्गल' शब्दों की सूची

·०१ अट्ठविहकम्मपोग्गलक्खंधो
·०२ अड्ढाइज्जपोग्गलपरियट्टं
·०३ अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं
·०४ अणंतपोग्गलपरियट्टं
·०५ अद्धपोग्गलपरियट्टं
·०६ अपोग्गला
·०७ असंखेज्जलोगमेत्तपोग्गलपरियट्टं
·०८ असुभपोग्गलावहार
·०९ आणापाणुपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल
·१० आणापाणुपोग्गलपरियट्टे
·११ उत्तमपोग्गले
·१२ उदगपोग्गल
·१३ उदयगदपोग्गलक्खंधो
·१४ उवड्ढपोग्गलपरियट्टं
·१५ एगपोग्गलनिविट्ठदिट्ठी
·१६ एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा
·१७ ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१८ ओरालियपोग्गलपरियट्ट

·१९ ओरालियसरीरपोग्गलाणं

·२० कम्मपोग्गलक्खंधो

·२१ कम्मगपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल

·२२ कम्मपोग्गलपरियट्टब्भंतरे

·२३ कम्मापोग्गलपरियट्टं

·२४ कम्मपोग्गलो

·२५ कम्मसरूवेणावट्ठिदपोग्गलाणमण्णपयडिसरूवेण

·२६ खेत्त-भव-काल-पोग्गलट्ठिदिविवागोदयक्खंधो

·२७ घाणपोग्गलाणं

·२८ जइणसमुग्घायसचित्तकम्मपोग्गलमयं

·२९ जीवपोग्गलजुडी

·३० जीव-पोग्गलमोक्खो

·३१ ट्ठिदपोग्गलक्खंधा

·३२ णिज्जरापोग्गले

·३३ णोआगमपोग्गलदव्वणिक्खेवेण

·३४ णोकम्मपोग्गला

·३५ तज्जोग्गपोग्गलमयं

·३६ तेयापोग्गलपरियट्टे

·३७ तेयापोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल

·३८ तेयासरीरपोग्गलाणं

·३९ थोवकम्मपोग्गलग्गहणट्ठं

·४० दव्विदियपोग्गलं

·४१ दिट्ठासेसपोग्गलदव्वस्स

·४२ नाणाविहसरीरपुग्गलविउव्विया

·४३ परमाणुआदिमहक्खंधंतंपोग्गलदव्वविसयओहिणाणकारणसगसंवेयणं (ओहिदंसणं)

·४४ परमाणुपोग्गलमेत्ते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४५ परमाणुपोग्गलवत्तव्वया

·४६ परमाणुपोग्गला

·४७ पुग्गललहुआ

·४८ पुग्गलवग्गणा

·४९ पुग्गलविवागि(णी)

·५० पोग्गल

·५१ पोग्गलकम्मस्स

·५२ पोग्गलकरण

·५३ पोग्गलकायं

·५४ पोग्गलगई

·५५ पोग्गलचयओ

·५६ पोग्गलजीवणिबद्धो

·५७ पोग्गलजुडो

·५८ पोग्गलजोणिया

·५९ पोग्गलट्ठिइया

·६० पोग्गलाणुभागो

·६१ पोग्गलणोभवोववायगई

·६२ पोग्गलत्थिकाए

·६३ पोग्गलत्थिकायपएसे

·६४ पोग्गलदव्व

·६५ पोग्गलदव्वप्पगोहिं

·६६ पोग्गलपडिघाये

·६७ पोग्गलपरिणामा

·६८ पोग्गलपरिणामे

·६९ पोग्गलपरियट्टे

·७० पोग्गलपरिसाड

·७१ पोग्गलपिंड

·७२ पोग्गलमेत्तविलयम्मि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·७३ पोग्गलमेत्तविसयओ

·७४ पोग्गलमोक्खो

·७५ पोग्गलाणमागमणं

·७६ पोग्गलाहारा

·७७ पोग्गलो

·७८ पोग्गले

·७९ पोग्गलोवचये

·८० बहियापोग्गलपक्खेवे

·८१ बहुकम्मपुग्गलगालणं

·८२ बहुपोग्गलग्गहणट्ठं

·८३ बहुपोग्गलणिज्जरणं

·८४ मणपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल

·८५ मणपोग्गलपरियट्ट

·८६ वइपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल

·८७ वइपोग्गलपरियट्टे

·८८ ववहारियपरमाणुपोग्गलाणं

·८९ वेउव्वियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल

·९० वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे

·९१ वेयणीयपोग्गलखंधं

·९२ संखाईयलोगपोग्गलसमानिबद्धाइं

·९३ सपोग्गला

·९४ सम्मत्तपुग्गलक्खयओ

·९५ सम्मत्तपुग्गले

·९६ सम्मत्तसुद्धपुग्गलपारिक्खए

·९७ सरपरिणदपोग्गलाणि

·९८ सव्वपोग्गला

·९९ सव्वोइयचरमपोग्गलावत्थं

·१०० सुक्कपोग्गलसंसिट्ठं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१०१ सुक्कपोग्गले

·१०२ सुभपोग्गलपक्खेव

·१०३ सुहुमपरमाणुपोग्गलाणं

·१०४ सुहुमसांपराइयचरिमसमयपरमाणुपोग्गलक्खंधकालो

·०४ सविशेषण-ससमास-सप्रत्यय 'पोग्गल' शब्दों की परिभाषा

·०४ ०१ अट्ठविहकम्मपोग्गलखंधो (अष्टविधकर्मपुद्गलस्कंधः)

—षट्० खं० ४ । २, १० । गा १ । टीका । पु १२ । पृ० ३०२

आठ प्रकार के कर्म पुद्गलों के स्कंध। इनको यहाँ वेदन कहा गया है, क्योंकि जिसका वर्तमान या भविष्यत् में वेदन किया जाय वह वेदना। बंधे हुए अष्टविध कर्म पुद्गलों का जीव अवश्य वेदन करता है।

·०४·०२ अड्डाइज्जपोग्गलपरियट्ट (सार्धद्वयपुद्गलपरावर्त)

—कसापा० गा २२ । टीका १८४ । भाग ४ । पृ० १०१

अढाई पुद्गलपरावर्त

यहाँ चतुर्गतिनिगोद के जीवों के प्रमाण को सिद्ध करने में अढाईपुद्गलपरावर्त शब्द का व्यवहार किया गया है।

पण्णवण्णा पद १८ में निगोद, निगोद के रूप में, कितने काल तक रहता है इस प्रश्न के उत्तर में क्षेत्र की अपेक्षा 'अड्डाइज्जपोग्गलपरियट्टा' शब्द का व्यवहार हुआ है।

·०४ ०३ अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ट (अनंतकाल-असंख्येयपुद्गल-परावर्त)

—कसापा० । गा० २२ । टीका ५० । भाग ५ । पु० ३९

वह अनन्तकाल जो असंख्यात पुद्गल परावर्त प्रमाण हो। यहाँ नपुंसकवेदियों की अजघन्य अनुभाग विभक्ति का उत्कृष्टकाल कहा गया है तथा यह अनन्तकाल असंख्यात पुद्गल परावर्त प्रमाण बताया गया है।

·०४ ०४ अणंतपोग्गलपरियट्ट (अनंतपुद्गलपरावर्त)

कसापा० गा २२ । टीका १८४ । भाग ४ । पृ० १०१

अनन्तपुद्गलपरावर्त—यहाँ अतीत काल में अनंतपुद्गलपरावर्त होते हैं— ऐसा कहा गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४·०५ अद्धपोग्गलपरियट्ट (अर्द्ध पुद्गलपरावर्त)

कसापा० । गा २२ । टीका २९० । भाग २ । पृ० २५३

एक पुद्गल परावर्त में जितना काल होता है उसके आधे काल को अर्द्धपुद्गल परावर्त कहते हैं। यथा—

जो जीव एक बार क्षायिक सम्यक्त्व से भिन्न सम्यक्त्व को प्राप्त कर लेता है, वह अनन्त संसार को छेदकर संसार में रहने के काल को उत्कृष्टतः अर्द्धपुद्गल परावर्त प्रमाण कर लेता है।

·०४·०६ अपोग्गला (अपुद्गलाः)

—ठाण० स्था २ । उ १ । सू ५७ । पृ० १८५

अपुद्गल—अर्थात् पुद्गलरहित

टीका—सपुद्गलाः कर्म्मादिपुद्गलवंतो जीवा, अपुद्गलाः—सिद्धाः ।

यहाँ जीव के दो भेद किये गये हैं, यथा—सपुद्गल जीव और अपुद्गल जीव। कर्मपुद्गलों से रहित जीव को अपुद्गल—सिद्ध कहते हैं।

·०४·०७ असंखेज्जलोगमेत्तपोग्गलपरियट्ट (असंख्यातलोकप्रमाणपुद्गल-परावर्त)

—कसापा० गा २२ । टीका १८४ । भाग ४ । पृ० १००

असंख्यात लोकप्रमाणपुद्गलपरावत ।

यहाँ पर यह कहा गया है कि असंख्यात लोकप्रमाण पुद्गलपरावर्त में जितने समय होते हैं उतने चतुर्गतिनिगोद जीवों का प्रमाण होता है।

·०४·०८ असुभपोग्गलावहार (अशुभपुद्गलापहार)

—णाया० श्रु १ । अ ९ । सू ८० । पृ० १०३९

अशुभपुद्गलापहार—अर्थात् पुद्गलों का अपहरण करना—अशुभपुद्गलों को शरीर से बाहर निकालना।

माकंदीपुत्रों की कथा में रत्नदेवी द्वारा उनके शरीर से अशुभ पुद्गलों के अपहार करने का कथन है।

·०४·०९ आणापाणुपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (आनप्राणपुद्गलपरावर्त निर्वर्तनाकाल)

आन-प्राण पुद्गल परावर्त के निष्पन्न होने का काल—इसमें अनन्त उत्सर्पिणी—अवसर्पिणी जितना काल लगता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४·१० आणापाणुपोग्गलपरियट्टे (आनप्राणपुद्गलपरावर्त)

—भग० श १२ । उ ४ । प्र १४ । पृ० ६६१

आन-प्राणपुद्गलपरावर्त—पुद्गल परावर्त के सातों भेदों में से एक भेद है। श्वासोच्छ्वास लेता हुआ जीव श्वासोच्छ्वास के प्रायोग्य द्रव्यों को समस्त भाव से श्वासोच्छ्वास रूप में जितने काल में ग्रहण करता है उसे आन-प्राणपुद्गलपरावर्त कहते हैं।

·०४·११ उत्तमपोग्गले (उत्तमपुद्गल)

—सूय० श्रु १ । अ १३ । गा १५ । पृ० १३०

टीका—'उत्तमपुद्गल आत्मा'।

यहाँ 'पुद्गल' शब्द का टीकाकार ने आत्मा अर्थ किया है। 'भगवई' में पुद्गल शब्द जीव के अभिवचनों में भी आया है। 'उत्तमपोग्गले' अर्थात् उत्तम—श्रेष्ठ आत्मा। यहाँ प्रज्ञा, तप, उच्चता, गोत्र तथा आजीविका (भिक्षा) के साधनों का मद न करने वाले भिक्षु को पंडित तथा उत्तम आत्मा कहा गया है। टीकाकार ने उत्तम आत्मा का अर्थ 'महतोपि महीयान्' भी किया है।

·०४·१२ उदगपोग्गल (उदकपुद्गल)

—ठाण० स्था ३ । उ ३ । सू१७६ । पृ० २१२

टीका—उदकप्रधानं पौद्गलं—पुद्गलसमूहो मेघ इत्यर्थः, उदकपौद्गलं पुद्गलसमूहो मेघ इत्यर्थः।

जिन पुद्गलों में उदक—जल की प्रधानता हो वे उदकपुद्गल, यथा—मेघ।

·०४·१३ उदयगदपोग्गलक्खंधो (उदयगतपुद्गलस्कंध)

—षट्० खण्ड ४ । २ । ३ । सू ३ टीका । पु १० । पृ० १६

उदयगतपुद्गलस्कंध।

जो पुद्गल स्कंध अर्थात् कर्मपुद्गल स्कंध उदय में आया हुआ है वह उदयगत-पुद्गलस्कंध।

·०४·१४ उवड्ढपोग्गलपरियट्टं (उपार्धपुद्गलपरावर्त)

—कसापा० गा २६ । टीका ९५ । भाग ८ । पृ० ३९

× × ×। "उवड्ढपोग्गलपरियट्टं" इदि उत्ते पोग्गलपरियट्टकालस्सद्धं देसूणं घेत्तव्वं, अद्धपोग्गलपरियट्टस्स समीवं उवड्ढपोग्गलपरियट्टमिदी-गहणादो × × ×।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपार्ध अर्थात् आधे से कुछ कम। आधे के समीप। उपार्धपुद्गलपरावर्त अर्थात् अर्ध पुद्गल परावर्त से कुछ कम काल।

·०४·१५ एगपोग्गलनिविट्ठदिट्ठी (एकपुद्गलनिविष्टदृष्टि)

—भग० श ३। उ २। प्र २१। पृ० ४५०

एक पुद्गल पर स्थिर दृष्टि।

भगवान् महावीर ने सुसमारपुर नगर के अशोक वन खण्ड में अशोक वृक्ष के नीचे पृथ्वी शिलापट्ट पर अष्टभक्त तप ग्रहण करके एक रात की महाप्रतिमा को अंगीकार कर एक पुद्गल पर दृष्टि को स्थिर रख कर ध्यान किया था। एक पुद्गल पर स्थिर दृष्टि—ध्यान का एक साधन है।

·०४·१६ एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा (एकप्रदेशिपरमाणुपुद्गल-द्रव्यवर्गणा)

—षट्० खं० ५। ६। सू ७६। पु १४। पृ० ५४

यहाँ पुद्गल वर्गणा का प्रकरण है, उसमें सर्व प्रथम एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा का वर्णन है अर्थात् परमाणु पुद्गल द्रव्य की एक वर्गणा कही गई है। परमाणु को एक प्रदेशी या अप्रदेशी कहा गया है।

इसी प्रकार द्विप्रदेशी पुद्गल द्रव्य वर्गणा यावत् अनन्तानन्त प्रदेशी पुद्गल द्रव्य वर्गणा होती है।

अनन्तानन्त प्रदेशी पुद्गल द्रव्य वर्गणा के ऊपर आहार द्रव्य वर्गणा होती है।

·०४·१७ ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (औदारिकपुद्गलपरावर्तनिर्वर्तनाकाल)

—भग० श १२। उ ४। प्र ३०। पृ० ६६२

औदारिक पुद्गल परावर्त के निष्पन्न होने में—परिसमाप्त होने में जितना काल लगे वह औदारिक पुद्गल परावर्त निष्पन्न काल कहलाता है। इसमें अनन्त उत्सर्पिणी—अवसर्पिणी जितना समय लग जाता है।

·०४·१८ ओरालियपोग्गलपरियट्टे (औदारिकपुद्गलपरावर्त)

—भग० श १२। उ ४। प्र १४। पृ० ६६०

टीका—'ओरालियपोग्गलपरियट्टे' त्ति औदारिकशरीरे वर्तमानेन जीवेन यदौदारिकशरीरप्रायोग्यद्रव्याणामौदारिकशरीरतया सामस्त्येन ग्रहणमसावौदारिकपुद्गलपरिवर्तः। एवमन्येऽपि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औदारिक शरीर में वर्तता हुआ जीव औदारिक शरीर के प्रायोग्य द्रव्यों को समस्त भाव से औदारिक शरीर रूप में जितने काल में ग्रहण कर लेता है उसे औदारिकपुद्गलपरावर्त कहते हैं।

·०४·१९ ओरालियसरीरपोग्गलाणं (औदारिकशरीरपुद्गल)

—षट्० खं० ५। ६। सू ४६ टीका। पु १४। पृ० ४२

जो पुद्गल जीव के औदारिक शरीर रूप प्रयोग से परिणत हुए हैं, वे औदारिक शरीर पुद्गल।

·०४·२० कम्मपोग्गलक्खंधो (कर्मपुद्गलस्कंध)

षट्० खं० ४। २। १२। सू ४ टीका। पु १२। पृ० ३७२

कर्म पुद्गलों का स्कंध — पिण्ड।

·०४·२१ कम्मगपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (कार्मणपुद्गलपरिवर्त-निवंर्तनाकाल)

—भग० श १२। उ ४। प्र ३०। पृ० ६६२

कार्मण पुद्गल परावर्त के निष्पन्न होने का काल, इसमें अनन्त उत्सर्पिणी—अवसर्पिणी जितना काल लगता है।

·०४·२२ कम्मपोग्गलपरियट्टब्भंतरे (कर्मपुद्गलपरिवर्ताभ्यंतर)

—कसापा० गा २२। टीका ५७५। भाग ४। पृ० २९७

कर्मपुद्गल परावर्त के भीतर। यथा—

टीका— × × × कम्मणिज्जरामोक्खेण आसण्णा कम्मपरमाणू अविण-ट्ठसंसकारत्तादो कम्मपोग्गलपरियट्टब्भंतरे लहुं कम्मभावेण परिणमंति। × × ×।

कर्म निर्जरा के द्वारा मुक्त होकर समीपवर्ती कर्मपरमाणु अविनष्ट संस्कार वाले हों तो वे कर्म-पुद्गलपरावर्त के भीतर अतिशीघ्र कर्म रूप से परिणत होते हैं।

·०४·२३ कम्मापोग्गलपरियट्टे (कार्मणपुद्गलपरावर्त)

—भग० श १२। उ ४। प्र १४। पृ० ६६०

कार्मण शरीर में वर्तता हुआ जीव कार्मण शरीर के प्रायोग्य द्रव्यों को समस्त भाव से कार्मण शरीर रूप में जितने काल में ग्रहण कर लेता है उसे कार्मणपुद्गल-परावर्त कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

.०४·२४ कम्मपोग्गलो (कर्मपुद्गल)

—षट्० खं० ४ । २ । ४ । सू २२ टीका । पु १० । पृ० ५४

कर्मवर्गणा के पुद्गलों को कर्मपुद्गल कहते हैं।

·०४·२५ कम्मसरूवेणावट्ठिदपोग्गलाणमण्णपयडिसरूवेण (कर्मस्वरूपेण अवस्थितपुद्गलानामन्यप्रकृतिस्वरूपेण)

—कसापा० । गा० २३ । टीका १ । भाग ८ । पु० २

× × × दुविहो बंधो अकम्मबंधो कम्मबंधो चेदि। तथा कम्मबंधो णाम कम्मइयवग्गणादो अकम्मसरूवेणावट्ठिदपदेसाणं गहणं। कम्मबंधो णाम कम्मसरूवेणावट्ठिदपोग्गलाणमण्णपयडिसरूवेण परिणमणं। × × ×।

यहाँ बंध दो प्रकार का बताया गया है— कर्मबंध और अकर्मबंध। जहाँ कार्मण वर्गणाओं में से अकर्म रूप से स्थित पुद्गलों का ग्रहण होता है वह अकर्मबंध है और जहाँ कर्मरूप से स्थित कर्म-पुद्गलों का अन्य प्रकृति रूप से परिणमन होता है वह कर्मबंध है।

·०४·२६ खेत्त-भव-काल-पोग्गलट्ठिदिविवागोदयखयो (क्षेत्र-भव-काल-पुद्गल-स्थितिविपाकोदयक्षय)

कसापा० गा ६२ । चू । भाग १० । पृ० १८७

क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलों का निमित्त पाकर स्थितिविपाक से (कर्मों का) उदय होकर क्षय होना।

× × × कम्मेण उदयो कम्मोदयो। अपक्कपाचणाए विणा जहा कालजणिदो कम्माणं ट्ठिदिक्खएण जो विवागो सो कम्मोदयो त्ति भण्णदे। सो वुण खेत्त-भव-काल-पोग्गलट्ठिदिविवागोदयखयो त्ति एदस्स गाहापच्छद्धस्स समुदायत्थो भवदि। × × ×। टीका ४१४

कर्म रूप से उदय का नाम कर्मोदय है। अपक्व पाचन के बिना कर्मों का स्थिति क्षयसे जो यथाकाल जनित विपाक होता है वह कर्मोदय कहा जाता है। परन्तु वह क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलों को निमित्त पाकर स्थितिविपाक से उदयक्षय रूप होता है।

·०४·२७ घाणपोग्गलाणं (घ्राणपुद्गल)

—ओव० सू १७० । पृ० ३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घ्राणपुद्गल अर्थात् वे पुद्गल जिनमें गंध-गुण की प्रधानता हो और जो घ्राणेन्द्रिय के द्वारा ग्रहण योग्य हों।

यहाँ केवलिसमुद्घात के समय में निर्ज्जरित होने वाले निर्जरा पुद्गलों की सूक्ष्मता को घ्राण-पुद्गलों की सूक्ष्मता के उदाहरण से समझाया गया है। कहा गया है कि छद्मस्थ मनुष्य समुद्घात जनित निर्जरा के पुद्गलों के किंचित् वर्ण रूप से वर्ण को, गध रूप से गंध को, रस रूप से रस को तथा स्पर्श रूप से स्पर्श को नहीं जानते हैं, नहीं देखते हैं।

यदि कोई महानुभाव देवता विलेपन के सुगंधित द्रव्य से भरे हुए डिब्बे को खोलता है यावत् उस सुगंधित द्रव्य को तीन बार चुटकी बजाने जितने काल में इक्कीस बार सम्पूर्ण जंबुद्वीप की परिक्रमा करके जल्दी आवे उतने काल में सम्पूर्ण जंबुद्वीप उस सुगंधित द्रव्य से व्याप्त हो जाता है लेकिन जंबुद्वीप में स्थित छद्मस्थ मनुष्य उन घ्राण के पुद्गलों को किंचित् वर्ण रूप से वर्ण को, गध रूप से गध को, रस रूप से रस को तथा स्पर्शरूप से स्पर्श को नहीं जानते हैं, नहीं देखते हैं। इस प्रकार यहाँ सूक्ष्म-पुद्गलों का विवेचन किया गया है।

·०४·२८ जइणसमुग्घायसचितकम्मपोग्गलमयं (जेनसमुद्घातसचित्तकर्म-पुद्गलमय)

—विशेभा० गा ६४४

टीका—जेनसमुद्घाते यः सचेतनजीवाधिष्ठितत्वात् सचित्तः कमपुद्गनमयो महास्कंधः।

जैन समुद्घात में सचित्तकर्मपुद्गल महास्कंध भी होता है। उसके समान अनुभावादि वाला अचित्त महास्कंध भी होता है।

केवली समुद्घात में जीवाधिष्ठित अनंतानंत कर्म पुद्गलमय सचित्त महास्कंध भी होता है तथा अनंतानंत परमाणु पुद्गल के समूह से बना हुआ अचित्त महास्कंध भी होता है। दोनों महास्कंधों का क्षेत्र, काल तथा अनुभाव समान होता है। दोनों महास्कंध समुद्घात के चौथे समय में सम्पूर्ण लोक प्रमाण क्षेत्र में व्याप्त होते हैं तथा आठ समय पर्यन्त रहते हैं। पाँच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस तथा चार स्पर्श से सोलह गुण रूप अनुभाव दोनों में समान होते हैं।

समुद्घातगत कर्मपुद्गलमय महास्कंध जीवाधिष्ठित होने से सचित्त होता है।

·०४·२९ जीवपोग्गलजुडी (जीवपुद्गलयुति)

—षट्० खं० ५। ५। सू ८२ टीका। पु १३। पृ० ३४८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—जीवाणं पोग्गलाणं च मेलणं जीव-पोग्गलजुडी णाम।

जीव और पुद्गलों का मिलना जीवपुद्गलयुति है। लेकिन यहाँ जीव और पुद्गल परस्पर में बंध को प्राप्त नहीं होते हैं क्योंकि—

टीका—एकीभावो बन्धः, सामीप्यं संयोगो वा युतिः।

एकीभाव का नाम 'बंध' है और समीपता या संयोग का नाम 'युति' है।

·०४·३० जीव-पोगलमोक्खो (जीव–पुद्गलमोक्ष)

—षट्० खं० ५ । ५ । सू ८२ टीका । पु १३ । पृ० ३४८

पुद्गल के साथ प्राप्त बन्धन से जीव छुटकारा पाता है वह जीवपुद्गलमोक्ष।

जब जीव औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस तथा कार्मण वर्गणाओं से मुक्त होता है वह जीवपुद्गलमोक्ष।

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय, योग आदि बन्ध हेतुओं से पुद्गलों से बंधन को प्राप्त जीव जब इस पुद्गलबंधन से मुक्त होता है वह जीवपुद्गलमोक्ष।

·०४·३१ ट्ठिदपोग्गलक्खंधा (स्थितपुद्गलस्कंध)

—षट्० खं० ४ । २ । १२ । सू १ टीका । पु १२ । पृ० ३७०

कम्मइयवग्गणाए ट्ठिदपोग्गलक्खंधा।

कार्मण वर्गणा स्वरूप से स्थित पुद्गलस्कंध।

ऐसे स्थित पुद्गल स्कंधों का ही आत्म-प्रदेशों के साथ बंधन होता है।

·०४·३२ णिज्जरापोग्गले (निर्जरापुद्गल)

—भग० श १८ । उ ३ । प्र ४ । पृ० ७६७

टीका—'निर्जरापुद्गलाः' निर्जीर्णकर्मदलिकानि सूक्ष्मास्ते पुद्गलाः प्रज्ञप्ता × × ×, सर्वलोकमपि तेऽवगाह्य तत्स्वभावत्वेनाभिव्याप्य तिष्ठन्तीति।

निर्जीर्ण—आत्मप्रदेशों से पृथक् हुए कर्मदलिकों को निर्जरा पुद्गल कहते हैं। वे सूक्ष्म होते हैं तथा सर्वलोक में फैले हुए हैं, सर्वलोक को अवगाह अभिव्याप्त करके रहते हैं।

·०४·३३ णोआगमपोग्गलदव्वणिक्खेवेण—(नोआगमपुद्गलद्रव्यनिक्षेप)

— षट्० खं० ५ । ६ । सू ७४ टीका । पु १४ । पृ० ५३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोआगम पुद्गलद्रव्यनिक्षेप—यहाँ पर जीव, धर्म, अधर्म, काल और आकाश द्रव्य वर्गणाओं को बाद देकर पुद्गलद्रव्य का ही निक्षेप किया गया है अतः इसे नोआगमपुद्गलद्रव्यनिक्षेप कहा गया है।

निक्षेप—वह प्रकरण या वर्णन जिससे पदार्थ का निश्चय होता है। जिससे नोआगमपुद्गल-द्रव्य का निश्चय किया जा सके वह नोआगमपुद्गलद्रव्यनिक्षेप।

·०४·३४ णोकम्मपोग्गला (नोकर्मपुद्गल)

—षट्० खं० ४। २। सू १०, १ टीका। पु १२। पृ० ३०२

कर्म वर्गणा के अतिरिक्त जो भी पुद्गलों की वर्गणा है वह नोकर्मपुद्गल।

·०४·३५ तज्जोगपोग्गलमयं (तद्योग्यपुद्गलमय)

—विशेभा० गा ३५२५

यहाँ मन का विवेचन है। जिससे मनन किया जाय वह मन। द्रव्यतः वह मनन द्रव्यमन से होता है और यह द्रव्यमन अपने योग्य पुद्गलमय होता है।

इसी प्रकार गाथा ३५२६ में द्रव्यवचन योग्य पुद्गलों का कथन है तथा गाथा ३५२७ में काययोग्य पुद्गलों का कथन है।

·०४·३६ तेयापोग्गलपरियट्टे (तैजसपुद्गलपरावत)

—भग० श १२। उ ४। प्र १४। पृ० ६६०

तैजस शरीर में वर्तता हुआ जीव तैजस शरीर के प्रायोग्य द्रव्यों को समस्त भाव से तैजस-शरीर रूप में जितने काल में ग्रहण कर लेता है उसे तैजसपुद्गलपरावर्त कहते हैं।

·०४·३७ तेयापोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (तैजसपुद्गलपरावर्तनिर्वर्तना काल)

—भग० श १२। उ ४। प्र ३०। पृ० ६६२

तैजस पुद्गल परावर्त के निष्पन्न होने का काल—इसमें अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी जितना काल लग जाता है।

·०४·३८ तेयासरीरपोग्गलाणं (तैजसशरीरपुद्गल)

—षट्० खं० ५। ६। सू ४६ टीका। पु १४। पृ० ४२

जो पुद्गल जीव के तैजसशरीर रूप में परिणत हुए हैं वे तैजसशरीरपुद्गल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४ ३९ थोवकम्मपोग्गलग्गहणट्ठं (स्तोककर्मपुद्गलग्रहणार्थं)

—कसापा० गा २२ । टीका १३१ । भाग ६ । पृ० १२६

मिथ्यात्व के जघन्य प्रदेश सत्कर्म वाला कौन होता है इस प्रश्न के उत्तर में सूक्ष्म निगोदियों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि पर्याप्त के योगों से अपर्याप्त के योग असंख्यात गुणहीन होते हैं। अतः उनके द्वारा थोड़े कर्म पुद्गलों का ग्रहण करने के लिये अद्धावास का कथन किया गया है।

·०४·४० दव्विंदियपोग्गलं (द्रव्येन्द्रियपुद्गल)

—गोक० गा ७९ । उत्तरार्द्धम्

द्रव्येन्द्रिय के पुदगल—

जाईए णोकम्मं दव्विंदियपोग्गलं होदि।

जातिकर्म का नोकर्म द्रव्येन्द्रियस्वरूप पुद्गल की रचना होती है। जातिकर्म—नामकर्म की एक प्रकृति।

·०४·४१ दिट्ठासेसपोग्गलदव्वस्स (दृष्टाशेषपुद्गलद्रव्य)

—कसापा० गा १ । टीका ६४ । भाग १ । पृ० ८३

सर्वावधिज्ञान का परिणाम—दृष्टाशेषपुद्गलद्रव्य।

× × × तेणं महावीरभंडारएणं इंदभूदिस्स × × × सव्वोहिणाणेणं दिट्ठासेसपोग्गलदव्वस्स × × ×।

महावीर स्वामी के प्रथम गणधर—इन्द्रभूति ने सर्वावधि ज्ञान द्वारा अशेष—समस्त पुद्गल द्रव्य का साक्षात्कार किया।

·०४·४२ नाणाविहसरीरपुग्गलविउव्विता (नानाविधशरीरपुद्गलविकुर्वणा)

—सूय० श्रु २ । अ ३ । सू २ । पृ० १६०

नानाविधशरीरपुद्गलविकुर्वणा अर्थात् नाना प्रकार के शारीरिक पुद्गल की रचना।

× × ×। अयरे वि य णं तेसिं (बीयकाया) पुढवि-जोणियाणं रूक्खाणं सरीरा नाणावण्णा नाणागंधा नाणारसा नाणाफासा नाणासंठाणसंठिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाणाविहसरीर-पुग्गल-विउव्विता ते जीवा कम्मोववन्नगा भवन्तीति-मक्खायं।

पृथ्वीयौनिक बीजकाय—वृक्षों के शरीर के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श, संस्थान, शरीर-पुद्गल आदि की रचना अपने-अपने कर्म के अनुसार अनेक प्रकार की होती है।

·०४·४३ परमाणु-आदिमहक्खंधंतं-पोग्गलदव्वविसय-ओहिणाणकारणसग-संवेयणं (ओहिदंसणं) (परमाणुआदिमहास्कंधपर्यन्तपुद्ल-द्रव्यविषयअवधिज्ञानकारण भूतस्वसंवेदन)

—षट्० खं० ५ । ५ । सू ८५ टीका । पु १३ । पृ० ३५५

परमाणु से लेकर महास्कंध पर्यन्त पुद्गल द्रव्य को विषय करने वाले अवधिज्ञान के कारणभूत स्वसंवेदन का नाम अवधिदर्शन है।

·०४·४४ परमाणुपोग्गलमेत्ते (परमाणुपुद्गलप्रमाण)

—भग० श १२ । उ ७ । प्र २ । पृ० ६६६

इस इतने बड़े विशाल लोक में परमाणु पुद्गल जितना रोके उतना प्रदेश भी नहीं है जहाँ जीव का जन्म-मरण नहीं हुआ हो।

·०४·४५ परमाणुपोग्गलवत्तव्वया (परमाणुपुद्गलवक्तव्यता)

—भग० श १८ । उ १० । प्र १ । पृ० ७७८

परमाणुपुद्गल सम्बन्धी वर्णन।

यहाँ वैक्रिय लब्धिधारी भावितात्मा अनगार के सामर्थ्य का—यथा-तलवार आदि की धार पर स्थित होने पर भी छेदन-भेदन नहीं होता है—वर्णन करते हुए भगवती सूत्र के पाँचवें शतक में परमाणुपुद्गल के वर्णन की भोलावण दी गई है।

·०४·४६ परमाणुपोग्गला (परमाणुपुद्गल)

—भग० श २ । उ १० । प्र ६६ । पृ० ४३५

'परमाणु' त्ति परमश्चासावात्यन्तिकोऽणुश्च सूक्ष्मः परमाणुः—द्व्यणुकादिस्कंधानाम् कारणभूतः, आह च—

कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः।
एकरसवर्णगंधो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च॥

—ठाण० स्था १ । सू ४५ । टीका में उद्धृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो पौद्गलिक द्रव्य का अन्तिम कारण है, सूक्ष्म और नित्य होता है, एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श वाला होता है तथा द्विप्रदेशी आदि स्कंधों का कारणभूत है वह परमाणुपुद्गल है।

'परमाणुपुद्गल' अर्थात् परम—पौद्गलिक द्रव्य का अन्तिम कारण है ; अणु—यह सूक्ष्म होता है तथा जो पुद्गल द्वि-अणु आदि स्कंधों का कारणभूत है वह परमाणु-पुद्गल।

·०४ ४७ पुग्गललहुआ—(पुद्गललघुता)

—अभिधा० भा ५। पृ० ९६८

'शरीरपुद्गलानाम् जाड्यापगमे'

शरीर के पुद्गलों की जाड्य—जड़ता के हट जाने से पुद्गललघुता होती है।

·०४·४८ पुग्गलवग्गणा (पुद्गलवर्गणा)

—अभिधा०। भाग ५। पृ० ९६८

पुद्गलों की वर्गणा—पुद्गलों का समुदाय। समगुणवाले—समजाति वाले पुद्गलों की एक वर्गणा कही जाती है, यथा—परमाणुपुद्गलों की एक परमाणु-पुद्गलवर्गणा।

·०४·४९ पुग्गलविवागि(णी) (पुद्गलविपाकी)

—कर्म० भाग ५। गा २१। पृ० १८

टीका—× × ×। "पुग्गलविवागि" त्ति पुद्गलेषु—शरीरतया परिणतेषु परमाणुविपाकः—उदयो यासां ताः पुद्गलविपाकिन्यः। × × ×।

शरीर रूप में परिणत परमाणुओं—पुद्गलों का उदय होकर विपाक होना—पुद्गलविपाक।

जिन कर्मप्रकृतियों का पुद्गल रूप से विपाक होता है वे पुद्गलविपाकिनी प्रकृतियाँ। नामकर्म की ३६ प्रकृतियों का पुद्गलविपाक होता है।

·०४ ५० पोग्गल (पुद्गल)

—भग० श ८। उ १०। प्र ४५। पृ० ५७४

जीव का एक अभिवचन पुद्गल भी है।

जीवे वि × × × जीवं पडुच्च पोग्गले।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव की अपेक्षा जीव को पुद्गल भी कहा गया है। अतः संसारी और सिद्ध दोनों प्रकार के जीवों को पुद्गल कहा गया है।

·०४·५१ पोग्गलकम्मस्स (पुद्गलकर्म)

—नियम० अधि १। गा १८

कत्ता भोत्ता आदा, पोग्गलकम्मस्स होदि ववहारो।
कम्मजभावेणादा, कत्ता भोत्ता दु णिच्छयदो॥

पुदगलकर्म—ज्ञानावरणीयादि द्रव्यकर्म।

यह आत्मा व्यवहारनय से पुद्गल कर्म का कर्त्ता और भोक्ता होता है और यही आत्मा (अशुद्ध) निश्चय नय से कर्म से उत्पन्न हुए भाव (राग द्वेष) का कर्त्ता और भोक्ता है।

·०४·५२ पोग्गलकरण (पुद्गलकरण)

—भग० श १९। उ ९। प्र ६। पृ० ७८९

करण—क्रिया।

पुद्गल की उस क्रिया को जिससे पुद्गल वर्ण, रस, गंध, स्पर्श तथा संस्थान में परिणमन करता है—पुद्गलकरण कहा जाता है।

·०४·५३ पोग्गलकायं (पुद्गलकाय)

—ठाण० स्था ७। सू० ५४२। पृ० २७७

पृथ्वीकायादि की तरह पुद्गलों को भी काय अर्थात् जीव संज्ञा देना।

"सर्व जीव है" ऐसा मत प्रतिपादन करने वाला विभंगज्ञानी जीव पृथ्वीकाय आदि की तरह पुद्गलों को भी जीव मानकर उनको भी 'पुद्गलकाय' कहता है क्योंकि वह मन्द वायुकाय के स्पर्श से पुद्गल राशि को कम्पन, स्पन्दन आदि एजन क्रियाओं को करते हुए देखता है अतः वह पुद्गल को जीव मानकर 'पुद्गलकाय' कहता है।

·०४·५४ पोग्गलगई (पुद्गलगति)

—पण्ण० प १६। सू ११११०। पृ० ४३३

मूल से किं तं पोग्गलगई? पोग्गलगई जण्णं परमाणुपोग्गलाणं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं गई पवत्तइ। से त्तं पोग्गलगई।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

परमाणुपुद्गल, द्विप्रदेशी स्कंधपुद्गल यावत् अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल जो देशान्तर गति करते हैं वह पुद्गलगति।

·०४ ५५ पोग्गलचयओ (पुद्गलचय)

—विशेभा० गा ३५२७

'पोग्गलचयओ'—पुद्गलों के इकट्ठा होने से।

·०४·५६ पोग्गलजीवणिबद्धो (पुद्गलजीवनिबद्ध)

—प्रव० अ २। गा ३६

पुद्गल और जीव का संबद्ध होना या संयुक्त होना।

पोग्गलजीवणिबद्धो धम्माधम्मत्थिकायकालड्ढो।
वट्टदि आगासे जो लोगो सो सव्वकाले दु॥

जिस आकाश क्षेत्र में पुद्गल और जीव निबद्ध या संयुक्त होकर रहते हैं वह क्षेत्र धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और काल से भरा हुआ है। वही क्षेत्र अतीत, अनागत और वर्तमान, तीन कालों में 'लोक'—नाम से कहा जाता है।

·०४·५७ पोग्गलजुडी (पुद्गलयुति)

—षट्०। खं ५। ५। सू ८२ टीका। पु १३। पृ० ३४८

वाएण हिंडिज्जमाणपण्णाणं व एक्कम्हि देसे पोग्गलाणं मेलणं पोग्गल-जुडी णाम।

वायु के कारण हिलने वाले पत्तों के समान एक स्थान पर पुद्गलों का मिलना पुद्गलयुति है। यहाँ पर युति शब्द का अर्थ केवल मात्र संयोग या समीपता है।

·०४·५८ पोग्गलजोणिया (पुद्गलयोनिक)

—भग० श १४। उ ६। प्र १। पृ० ७०१

टीका—पुद्गलाः शीताऽऽदिस्पर्शा योनिः येषां ते तथा। शीताऽऽदियोनिजनितेषु।

जिनकी योनि शीत तथा उष्ण स्पर्श वाले पुद्गलों की है वे पुद्गलयोनिक। अथवा जो जीव शीत या उष्ण पुद्गलों की योनि में उत्पन्न होते हैं वे पुद्गलयोनिक।

·०४·५९ पोग्गलट्ठितीया (पुद्गलस्थितिक)

—भग० श १४। उ ६। प्र १। पृ० ७०१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ नारकी जीव का विवेचन है। नरक में उनकी स्थिति का कारण पुद्गलों को अर्थात् आयुष्यकर्म के पुद्गलों को कहा गया है।

अतः नारकियों को पुद्गलस्थितिक कहा गया है, क्योंकि उनकी स्थिति आयुष्य-कर्म के पुद्गलों के आधार पर होती है।

·०४·६० पोग्गलाणुभागो (पुद्गलानुभाग)

षट्० खं० ५। ५। सू ८२। टीका। पु १३। पृ० ३४९

पुद्गल का अनुभाग।

छः द्रव्यों की शक्ति का नाम अनुभाग है।

जर-कुट्ठक्खयादिविणासणं तदुप्पायणं च पोग्गलाणुभागो। जोणिपाहुडे भणिदमंततंतसत्तीओ पोग्गलाणुभागो त्ति घेत्तव्वो।

ज्वर, कुष्ठ और क्षयादि का विनाश करना और उनका उत्पन्न कराना—इसका नाम पुद्गलानुभाग है। अथवा योनिप्राभृत में कहे गये मंत्र-तंत्र रूप शक्तियों का नाम पुद्गलानुभाग है।

·०४·६१ पोग्गलणोभवोववायगई (पुद्गलनोभवोपपातगति)

पण्ण० प १६। सू ११०१। पृ० ४३२

पुद्गल की जो गति भवरहित (नारकादि भवरहित), उत्पाद रहित (जन्म प्रक्रिया रहित) होती है वह पुद्गलनोभवोपपातगति।

मूल—से किं तं पोग्गलणोभवोववायगई? पोग्गलणोभवोववायगई जण्णं परमाणुपोग्गले लोगस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ पच्छिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, पच्छिमिल्लाओ वा चरिमंताओ पुरत्थिमिल्लं चरिमतं एगसमएणं गच्छइ, दाहिणिल्लाओ वा चरिमंताओ उत्तरिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, एवं उत्तरिल्लाओ दाहिणिल्लं, उवरिल्लाओ हेट्ठिल्लं, हेट्ठिल्लाओ वा उवरिल्लं। से त्तं पोग्गलणोभवोववायगई।

परमाणुपुद्गल जब लोक के पूर्वचरमांत से पश्चिम चरमांत तक, पश्चिम चरमांत से पूर्व चरमांत तक, दक्षिण चरमांत से उत्तर चरमांत तक, उत्तर चरमांत से दक्षिण चरमांत तक, ऊर्ध्वचरमांत से अधोचरमांत तक, या अधोचरमांत से ऊर्ध्व-चरमांत तक एक समय में गति करता है तब उस गति को पुद्गलनोभवोपपातगति कहा जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४·६२ पोग्गलत्थिकाए (पुद्गलास्तिकाय)

—भग० श २ । उ १० । प्र ५७ । पृ० ४३४

टीका—'अस्ति' इत्ययं निपातः कालत्रयाभिधायी, ततोऽस्तीति सन्ति, आसन्, भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशा राशयः, ते अस्तिकाया इति ।

'पुद्गलास्तिकाय' 'अस्ति' शब्द त्रिकालवर्ती निपात है—भूत में भी था, वर्तमान में भी है, भविष्यत् में भी रहेगा। काय अर्थात् बहुप्रदेशी है। पुद्गलास्तिकाय अर्थात् पुद्गल त्रिकालवर्ती है तथा बहुप्रदेशी है।

किसी-किसी टीकाकार ने 'अस्ति' शब्द का अर्थ त्रिकालवर्ती न करके प्रदेश अर्थ किया है तथा काय का अर्थ समूह किया है। अतः इस अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय का अर्थ पुद्गल प्रदेशों का समूह किया जाता है।

·०४·६३ पोग्गलत्थिकायपएसे (पुद्गलास्तिकायप्रदेश)

—भग० श ८ । उ १० प्र १७ । पृ० ५७१

टीका—पुद्गलास्तिकायस्य एकाणुकाऽऽदिपुद्गलराशेः प्रदेशो निरंशोऽशः पुद्गलास्तिकायप्रदेशः ।

परमाणुओं के एकीभाव होने से—मिलने से (परमाणुप्रचयात्मकाः स्कंधाः) पुद्गलास्तिकाय का स्कंध बनता है। उस पुद्गलस्कंध के निरंश—अविभाज्य अंश को पुद्गलास्तिकायप्रदेश (प्रदेशास्तस्यैव निरंशा अंशा) कहते हैं।

·०४·६४ पोग्गलदव्व (पुद्गलद्रव्य)

—अभिधा० भाग ५ । पृ० ११०७

पुद्गल एक द्रव्य है अर्थात् धर्मास्तिकायादि छः द्रव्यों में पुद्गल का भी द्रव्य रूप में कथन है।

·०४·६५ पोग्गलदव्वप्पगेहिं (पुद्गलद्रव्यात्मक)

—प्रव० अ १ । गा ३४

जो पुद्गल द्रव्यस्वरूप हो वह पुद्गलद्रव्यात्मक।

यहाँ जिन भगवान् के पुद्गलद्रव्यात्मक वचनों द्वारा दिए गये उपदेशों का वर्णन है और उसे श्रुत (द्रव्यश्रुत) भी कहा गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४·६६ पोग्गलपडिघाये (पुद्गलप्रतिघात)

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २११ । पृ० २१९

टीका—पुद्गलानाम्—अण्वादीनां प्रतिघातो—गतिस्खलनं पुद्गल-प्रतिघातः ।

पुद्गलों की गति का अवरोध—पुद्गलप्रतिघात ।

पुद्गलों का परस्पर में प्रतिघात होता है—इससे उनकी गति का अवरोध भी होता है ।

·०४·६७ पोग्गलपरिणामा (पुद्गलपरिणामक)

—भग० श १४ । उ ६ । प्र १ । पृ० ७०१

पुद्गलों का परिणमन करनेवाला ।

यहाँ नारकी जीवों का विवेचन है । नारकी जीव जिन पुद्गलों का आहार करते हैं उन आहार किये हुए पुद्गलों का परिणमन भी करते हैं । अतः वे नारकी पुद्गलपरिणामक कहे जाते हैं ।

·०४·६८ पोग्गलपरिणामे (पुद्गलपरिणाम)

—ठाण० स्था ४ । उ १ । सू २६५ । पृ० २२७

(पुद्गल अपने लक्षणगुणों को—जड़ता तथा रूप को परित्याग किए बिना) जो पुद्गल अपने वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श गुणों—पर्यायों में परिणमन करे, वह पुद्गलपरिणाम । यथा—

एक गुण काले वर्ण से अनन्त गुण काले वर्ण पर्यन्त परिणमन करना अथवा काले वर्ण से नीलादि अन्य वर्णों में परिणमन करना । इसी प्रकार गंध, रस, तथा स्पर्श का परिणमन समझ लेना चाहिए । स्कंध रूप होने से संस्थान रूप परिणमन भी होता है ।

·०४·६९ पोग्गलपरियट्टे (पुद्गलपरावर्त)

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू १९२ । पृ० २१६

पुद्गलपरावर्त—काल का एक प्रमाण है ।

टीका—पुद्गलानां—रूपिद्रव्याणामाहारकवर्जितानां औदारिकादि-प्रकारेण ग्रहणतः एकजीवापेक्षया परिवर्तनं—सामस्त्येन स्पर्शः पुद्गल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तः, स च यावता कालेन भवति स कालोऽपि पुद्गलपरिवर्तः, स चानन्तोत्सर्पिण्यवसर्पिणीरूप इति।

आहारक शरीर के पुद्गलों को बाद देकर अन्य ग्रहण योग्य पुद्गलों को जब एक जीव समस्त भाव से अर्थात् सब को स्पर्श कर लेता है उसे 'पुद्गलपरावर्त' कहते हैं। यह स्पर्श कार्य जितने समय में होता है वह काल भी 'पुद्गलपरावर्त' कहा जाता है तथा इसमें अनंत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी जितना काल लग जाता है।

मूल—एएसि णं भंते! परमाणुपोग्गलाणं साहणणा-भेदाणुवाएणं अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया? हंता, गोयमा! एएसि णं परमाणुपोग्गलाणं साहणणा— जाव मक्खाया।

—भग० श १२। उ ४। प्र १३। पृ० ६६०

टीका—"पुग्गलपरियट्ट त्ति" पुद्गलैः पुद्गलद्रव्यैः सह परिवर्ताः परमाणूनां मीलनानि पुद्गलपरिवर्ताः समनुगन्तव्या अवगन्तव्या भवन्ति।

पुद्गलों के द्वारा पुद्गल द्रव्यों के साथ परावर्त—पुद्गलपरावर्त। एक परमाणु का अन्य अनंत परमाणुओं के साथ संयोग-वियोग—एक पुद्गलपरावर्त।

·०४·७० पोग्गलपरिसाड (पुद्गलपरिशाट)

—अभिधा० भाग ५। पृ० ११६८

करण प्रेरण से होने वाले पुद्गलों का परिशाटन अर्थात् पुद्गलों का परित्याग करना—छोड़ना। अभिधा० परिदत्त संदर्भ—कर्मप्रकृति २ प्रक० (गाथा ९४)

·०४·७१ पोग्गलपिंडो (पुद्गलपिंड)

—गोक०। गा ६

पोग्गलपिंडो दव्वं तस्सत्ती भावकम्मं तु॥

पुद्गल द्रव्य का पिंड—पुद्गलपिंड।

यहाँ ज्ञानावरणादि रूप पुद्गल द्रव्य के पिण्ड को द्रव्यकर्म कहा गया है और इस पिण्ड में फल देने की शक्ति को भावकर्म कहा गया है।

·०४·७२ पोग्गलमेत्तविलयम्मि (पुद्गलमात्रविलय)

विशेभा० गा १८३९

पुद्गल मात्र का वियोग।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—किमिह'पुद्गलमात्रविलये'-समस्तकर्मपुद्गलपरिशाटसमये जीवस्यात्मनः स्वतत्त्वे वृत्तिमादधत एकान्तेन कृतं विहितं, येन कृतको मोक्षः स्यात्? एतदुक्तं भवति—इहात्मकर्मपुद्गलवियोगो मोक्षोऽभिप्रेतः। × × ×।

आत्मा से पुद्गल मात्र का—समस्त कर्मपुद्गलों का विलय—वियोग—परिशाटन को पुद्गलमात्रविलय कहते हैं और इससे मोक्ष का अभिप्रेत है।

·०४·७३ पोग्गलमेत्तविसयओ (पुद्गलमात्रविषय)

—विशेभा० गा २१३६

जुत्तमिह केवलं चेव पच्चओ नोहि—माणसं नाणं।
पोग्गलमेत्तविसयओ सामाइयारूवया ज च॥

यहाँ अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान का विषय पुद्गलमात्रविषय—रूपी द्रव्य-विषय कहा गया है।

·०४·७४ पोग्गलमोक्खो (पुद्गलमोक्ष)

—षट्० खं० ५। ५। सू ८२ टीका। पु १३। पृ० ३४८

बंध का विपरीत—मोक्ष। बंध से मुक्ति—मोक्ष है।

दो, तीन आदि (परमाणु) पुद्गलों का जो समवाय सम्बन्ध होता है वह पुद्गलबंध, अथवा स्निग्ध तथा रूक्ष गुणों के कारण पुद्गलों का जो परस्पर में बंध होता है वह पुद्गलबंध तथा जब इस प्रकार बंध को प्राप्त पुद्गलों का बन्ध टूटता है और विभिन्न पुद्गल पारस्परिक बन्ध से मुक्त होते हैं वह पुद्गलमोक्ष।

·०४·७५ पोग्गलाणमागमणं (पुद्गलानामागमनं)

—षट्० खं० ५। ५। सू ८२ टीका। पु १३। पृ० ३४७

तहा पोग्गलाणमागमणं गमणं चयणमुववादं च जाणदि। पोग्गलेसु अप्पिदपज्जाएण विणासो चयणं।

अण्णपज्जाएणं परिणामो उववादो णाम।

यहाँ पुद्गल के आगमन, गमन, अर्थात् आगति, गति, चयन और उपपाद का वर्णन है। टीकाकार ने पुद्गल को गति-आगति पर टीका नहीं की है, लेकिन चयन और उपपात पर टीका की है। यथा—पुद्गलों में विवक्षित पर्याय का नाश होना—चयन है तथा अन्य पर्याय रूप से परिणमन होना उपपाद है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४·७६ पोग्गलाहारा (पुद्गलाहारक)

—भग० श १४ । उ ६ । प्र० १ । पृ० ७०१

पुद्गलों का आहार करने वाला।

यहाँ नारकी जीव का विवेचन किया गया है। नारकी जीव पुद्गलों का आहार करते हैं अतः वे पुद्गलाहारक कहे जाते हैं।

·०४·७७ पोग्गली (पुद्गली)

—भग० श ८ । उ १० । प्र० ४५ । पृ० ५७४

'पोग्गली' जिस जीव के श्रोत आदि इन्द्रियाँ हों वह जीव पुद्गली। जो पुद्गल सहित हो वह पुद्गली। यथा—दंड सहित मनुष्य को दंडी कहा जाता है, छत्र सहित मनुष्य को छत्री कहा जाता है उसी प्रकार पुद्गल सहित जीव को पुद्गली कहा जाता है। अतः सिद्ध जीव पुद्गली नहीं होते हैं। संसारी जीव पुद्गली होते हैं।

·०४·७८ पोग्गले (पुद्गल)

—भग० श २० । उ २ । प्र ७ । पृ० ७९२

जीव के अभिवचनों में पुद्गल शब्द भी आया है।

मूल—जीवत्थिकायस्स णं भंते ! केवतिया अभिवयणा पन्नत्ता ? गोयमा ! अणेगा अभिवयणा पन्नत्ता × × × पोग्गले त्ति वा × × ×।

टीका—'पोग्गले' त्ति पूरणाद् गलनाच्च शरीरादीनां पुद्गलः।

जीव पुद्गलों को शरीर आदि के रूप में ग्रहण भी करता है और उत्सर्ग भी करता है अतः जीव का एक अभिवचन पुद्गल भी कहा गया है।

·०४·७९ पोग्गलोवचए (पुद्गलोपचय)

—भग० श ६ । उ ३ । प्र ५ । पृ० ४९३

पुद्गलोपचय—पुद्गलों का उपचय—संग्रह।

पुद्गलों का उपचय प्रयोग से भी होता है और स्वाभाविक रूप से भी।

वत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचए किं पओगसा, वीससा ? गोयमा ! पओगसा वि, वीससा वि।

वस्त्र में पुद्गल का उपचय प्रयोग से भी होता है और स्वाभाविक रूप से भी होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४·८० बहियापोग्गलपक्खेवे (बहिःपुद्गलप्रक्षेप)

—उवा० अ २ । सू ६ । पृ० ११३२

टीका—अभिगृहीतदेशाद् बहिः प्रयोजनसद्भावे परेषां प्रबोधनाय लेष्ट्वादिपुद्गलप्रक्षेपे ।

बहिः पुद्गल प्रक्षेपण से—अभिगृहीत क्षेत्र के बाहर प्रयोजनवश किसी का ध्यान आकर्षित करने के लिए अथवा अन्यथा पुद्गल—कंकड़, पत्थर आदि का फेंकना । यह श्रावक के देशावकाशिक व्रत का पाँचवाँ अतिचार है ।

श्रावक के दसवें व्रत के अनुसार जितने परिभ्रमण क्षेत्र की सीमा की गई हो, यदि उस सीमा के बाहर स्थित किसी का ध्यान आकर्षित करने के लिए—बुलाने के लिए पुद्गल—कंकड़ आदि फेंके जायें तो उस प्रक्षेपण से देशावकाशिक व्रत का पांचवाँ अतिचार लगता है ।

·०४·८१ बहुकम्मपुग्गलगालणं (बहुकर्मपुद्गलगालन)

—कसापा० गा २२ । टीका २१८ । भाग ७ । पृ० १०९

सामान्य अर्थ है—बहुत से कर्मपुद्गलों को गलाकर ।

कषाय की उत्तर प्रकृतियों की विभक्ति के अल्पबहुत्व की प्ररूपणा में अप्रत्याख्यान-मान के विवेचन में इस समास का व्यवहार हुआ है ।

·०४·८२ बहुपोग्गलग्गहणट्ठं (बहुपुद्गलग्रहणार्थं)

—कसापा० गा ५८ । टीका ४१ । भाग ९ । पृ० १८२

अनन्तानुबन्धियों का उत्कृष्ट प्रदेश संक्रमण किसके होता है ? इस प्रश्न के उत्तर के प्रसंग में बंध के द्वारा बहुत पुद्गलों के ग्रहण का कथन आया है ।

·०४·८३ बहुपोग्गलणिज्जरणं (बहुपुद्गलनिर्जरणार्थं)

—कसापा० गा २२ । टीका १३१ । भाग ६ । पृ० १२६

उदय के द्वारा बहुत कर्मपुद्गलों की निर्जरा कराने के लिए नीचे के बहुत कर्मस्कंधों का निक्षेप किया जाता है ।

·०४·८४ मणपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (मनःपुद्गलपरावर्तनिर्वर्तनाकाल)

—भग० श १२ । उ ४ । प्र ३० । पृ० ६६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन:पुद्गलपरावर्त के निष्पन्न होने का काल। इसमें अनंत उत्सर्पिणी—अवसर्पिणी जितना काल लगता है। यह काल आन-प्राणपुद्गलपरावर्त के निष्पत्तिकाल से अनंत गुणा है और इससे वचनपुद्गलपरावर्त निष्पत्तिकाल अनंत गुणा है। यद्यपि सभी पुद्गलपरावर्तों में अनंत कालचक्र जितना काल लगता है ऐसा कहा गया है।

·०४·८५ मणपोग्गलपरियट्टे (मन:पुद्गलपरावर्त)

—भग० श १२। उ ४। प्र १४। पृ० ६६०

मनोयोग में वर्तता हुआ जीव मनोयोग के प्रायोग्य द्रव्यों को समस्त भाव से—मनोयोग रूप से जितने काल में ग्रहण कर लेता है उसे मन:पुद्गलपरावर्त कहते हैं।

·०४·८६ वइपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (वचनपुद्गलपरावर्तनिर्वर्तना-काल)

—भग० श १२। उ ४। प्र ३०। पृ० ६६२

वचनपुद्गलपरावर्त के निष्पन्न होने का काल।

इसमें अनंत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी जितना काल लगता है। लेकिन इससे वैक्रियपुद्गलपरावर्तनिर्वर्तनाकाल अनंतगुणा होता है।

·०४·८७ वइपोग्गलपरियट्टे (वचनपुद्गलपरावर्त)

—भग० श १२। उ ४। प्र १४। पृ० ६६०

वचनयोग में वर्तता हुआ जीव वचनयोग के द्रव्यों को समस्त भाव से वचनयोग रूप में जितने काल में ग्रहण कर लेता है उसे वचनपुद्गलपरावर्त कहते हैं।

·०४·८८ ववहारियपरमाणुपोग्गलाणं (व्यावहारिकपरमाणुपुद्गल)

—अणुओ० सू ३४२। पृ० ११२५

टीका—अनन्तानां सूक्ष्मपरमाणुपुद्गलानां संबंधिनो ये समुदाया: द्व्यादिसमुदायाऽऽत्मकानि वृन्दानि तेषां या: समितयो बहूनि मीलनानि तासां समागम:—संयोग एकीभवनं समुदयसमितिसमागम:, तेन व्यावहारिकपरमाणुपुद्गल एको निष्पद्यते।

अनंत सूक्ष्म परमाणु पुद्गलों के संबंध से समुदाय होता है; दो तीन आदि समुदायों के वृन्द से समिति होती है। बहुत सी समितियों के मिलने से—समागम से—संयोग से—एकीभाव होने से समुदयसमितिसमागम कहलाता है। ऐसे अनंत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्मपरमाणुपुद्गलों के समुदयसमितिसमागम से एक व्यावहारिक परमाणुपुद्गल निष्पन्न होता है।

एक व्यावहारिक परमाणुपुद्गल में अनंतानंत परमाणुपुद्गल होते हैं।

·०४·८९ वेउव्वियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाल (वैक्रियपुद्गलपरावर्त-निर्वर्तनाकाल)

—भग० श १२ । उ ४ प्र ३० । पृ० ६६२

वैक्रियपुद्गलपरावर्त के निष्पन्न होने का काल।

इसमें अनन्त उत्सर्पिणी—अवसर्पिणी जितना काल लगता है। यह परावर्त सब पुद्गलपरावर्तों से बड़ा होता है।

·०४·९० वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे (वैक्रियपुद्गलपरावर्त)

—भग० १२ । उ ४ । प्र १४ । पृ० ६६०

वैक्रिय शरीर में वर्तता हुआ जीव वैक्रिय शरीर के प्रायोग्य द्रव्यों को समस्त भाव से वैक्रिय शरीर रूप में जितने काल में ग्रहण कर लेता है उसे वैक्रियपुद्गल-परावर्त कहते हैं।

·०४·९१ वेयणीयपोग्गलखंधं (वेदनीयपुद्गलस्कंध)

—षट्० खं० ४ । २ । ३ । सू ३ टीका । पु १० । पृ० १६

वेदन योग्य सुख-दुःख रूप कर्मपुद्गलस्कन्ध—वेदनीयपुद्गलस्कंध।

वेदणा णाम सुह-दुक्खाणि, लोगे तहा संववहारदंसणादो। ण च ताणि सुहदुक्खाणि वेयणीयपोग्गलखंधं मोत्तूण अण्णकम्मदव्वेहिंतो उप्पज्जंति। × × ×।

वेदना का अर्थ सुख और दुःख होता है, क्योंकि लोक में वैसा व्यवहार देखा जाता है और वे सुख-दुःख वेदनीय रूप पुद्गलस्कंध (सातावेदनीय और असाता-वेदनीय) के सिवाय अन्य कर्मद्रव्यों से उत्पन्न नहीं होते हैं।

·०४·९२ संखाईयलोगपोग्गलसमानिबद्धाइं (संख्यातीतलोकपुद्गलसमा-निबद्धानि)

—विशेभा० गा ८०८

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

असंख्यात लोकों में अवगाहित रूपी द्रव्य—पुद्गल द्रव्य।

टीका—उत्कृष्टतस्तु द्रव्यतः क्षेत्रतश्चाऽसंख्येयलोकाकाशखंडावगाढानि सर्वाण्यपि मूर्त-द्रव्याणि पश्यति। एतानि चैकस्मिन्नेव लोकाकाशेऽवगाढानि प्राप्यन्ते, शेषलोकावगाढानाम् तु दर्शनं शक्तिमात्रापेक्षयैवोच्यते। × × ×।

यहाँ अवधिज्ञान से जानने और देखने के विषय का विवेचन है। उसमें उत्कृष्ट शक्ति—सामर्थ्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि अवधिज्ञान में उत्कृष्ट रूप से असंख्यात लोकों में अवगाहित पुद्गलों—रूपी द्रव्यों को जानने—देखने की शक्ति होती है। यद्यपि वास्तविक रूप में लोकाकाश एक ही है।

·०४·९३ सपोग्गला (सपुद्गल)

—ठाण० स्था २। उ १। सू० ५७। पृ० १८५

सपुद्गल अर्थात् पुद्गल सहित।

टीका—सपुद्गलाः कर्म्मादिपुद्गलवन्तो जीवा, अपुद्गलाः—सिद्धाः।

यहाँ जीव के दो भेद किये गये हैं, यथा—सपुद्गल जीव और अपुद्गल जीव। कर्मादि पुद्गल से संयुक्त जीव—सपुद्गल कहलाते हैं।

·०४·९४ सम्मत्तपुग्गलक्खयओ (सम्यक्त्वपुद्गलक्षय)

—विशेभा० गा १३२०

सम्यक्त्व मोहनीय कर्म के पुद्गलों का क्षय।

सो तस्स विसुद्धयरो जायइ सम्मत्तपोग्गलक्खयओ।
दिट्ठी व्व सण्हसुद्धब्भपडलविगमे मणुसस्स॥

जिस प्रकार अभ्रपटल के दूर होने से मनुष्य की दृष्टि में स्पष्टता होती है, उसी प्रकार सम्यक्त्व मोहनीय के पुद्गलों का क्षय होने से जीव का सम्यग्दर्शन विशुद्धतर होता है।

·०४·९५ सम्मत्तपुग्गले (सम्यक्त्वपुद्गल)

—कर्म० भा ४। गा १४ टीका उद्धृत। पृ० १४३

सम्यक्त्व मोहनीय कर्म के पुद्गल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो उवसमसम्मद्दिट्ठी उवसमसेढीए कालं करेइ सो पढमसमए चेव सम्मत्तपुंजं उदयावलियाए छोढूण सम्मत्तपुग्गले वेएइ, तेण न उवसमसम्मद्दिट्ठी अपज्जत्तगो लब्भइ।

जब उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणी में काल को प्राप्त होता है तब प्रथम समय में सम्यक्त्व पुंज को उदयावली में लाकर सम्यक्त्व पुद्गलों का वेदन करता है अतः यह अपर्याप्तक उपशमसम्यग्दृष्टि के नहीं होता है।

यथा—उपशम श्रेणी में काल करनेवाला जीव अनुत्तरविमान के देवों में भी उत्पन्न होता है वहाँ वह जीव उपशमसम्यक्त्व के पुद्गलों के उदय से क्षयोपशम सम्यक्त्व को प्रथम समय में ही प्राप्त करता है।

·०४·९६ सम्मत्तसुद्धपुग्गलपरिक्खए (सम्यक्त्वशुद्धपुद्गलपरिक्षय)

—विशेभा० गा १३२१

सम्यक्त्वमोहनीय कर्म के शुद्ध पुद्गलों का परिक्षय।

मूल—जइ सुद्धजलाणुगयं वत्थं सुद्धं जलक्खएसुतरं।
सम्मत्तसुद्धपोग्गलपरिक्खए दंसणं पेवं॥

जिस प्रकार शुद्ध जल से धोया हुआ वस्त्र सूख जाने से शुद्ध होता है उसी प्रकार सम्यक्त्व मोहनीय रूप शुद्ध पुद्गलों का क्षय होने से सम्यग्दर्शन और भी शुद्ध होता है।

·०४·९७ सरपरिणदपोग्गलाणि (स्वरपरिणतपुद्गल)

—गोक० गा ८३

स्वर रूप से परिणत पुद्गल।

स्वरनामकर्म के उदय से नोकर्मरूप—सुस्वर-दुःस्वर रूप में परिणत हुए पुद्गल परमाणु।

·०४·९८ सव्वपोग्गला (सर्वपुद्गल)

—भग० श ५। उ ८। प्र २। पृ० ४८६

'सव्वपोग्गला' अर्थात् लोक में स्थित सर्वपुद्गल।

यहाँ लोक में स्थित सर्वपुद्गलों के सम्बन्ध में समवाय रूप से विभिन्न अपेक्षा से विवेचन किया गया है। यथा—वे सप्रदेशी भी हैं, अप्रदेशी भी हैं इत्यादि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०४ ९९ सव्वोइयचरमपोग्गलावत्थं (सर्वोदितचरमपुद्गलावस्थ)

—विशेभा० गा ५३३

टीका—तत् पुनः क्षपकश्रेणि प्रतिपन्नस्याऽनन्तानुबन्धिकषायचतुष्टय-मिथ्यात्वमिश्रपुञ्जेषु क्षपितेषु, सम्यक्त्वपुञ्जमप्युदीर्योदीर्यानुभूय निर्जरयतो निष्ठितोदीरणीयस्य सर्वोदितचरमपुद्गलावस्थं भवति।× × ×। इदमुक्तं भवति—क्षपितप्रायदर्शनसप्तकस्य सम्यक्त्वपुञ्जचरमपुद्गलग्रासमात्रमनु-भवतो वेदकसम्यक्त्वं भवति।

(क्षायक सम्यक्त्व को प्राप्त करनेवाली) क्षपकश्रेणी को प्रतिपन्न, अनन्तानु-बंधी कषायचतुष्क, मिथ्यात्व तथा मिश्रमोहनीय पुंज को क्षय करके सम्यक्त्व कर्मपुंज को बार-बार उदीर्ण-वेदन करके निर्जीर्ण करते हुए जब जीव के उदीरणा के योग्य सर्व शेष रहे हुए शेष बार के लिए उदीर्ण होने वाले सम्यक्त्व कर्मपुंज की जो अवस्था होती है उस अवस्था को सर्वोदितचरमपुद्गलावस्थ कहते हैं। इस अवस्था में वेदकसम्यक्त्व होता है।

·०४·१०० सुक्कपोग्गलसंसिट्ठे (शुक्रपुद्गलसंसृष्ट)

—ठाण० स्था ५। उ २। सू ४१६। पृ० २६१

शुक्र पुद्गलों से संसर्ग होने पर।

मूल—सुक्कपोग्गलसंसिट्ठे व से वत्थे अंतो जोणीए अणुपवेसेज्जा।

यहाँ स्त्री के बिना पुरुष संयोग के गर्भधारण के पाँच कारणों का विवेचन है, उनमें से एक कारण यह है—शुक्र पुद्गलों से संसृष्ट वस्त्र के स्पर्श होने पर शुक्र पुद्गल स्त्री के अन्तर्योनि में प्रवेश कर जाते हैं, इससे स्त्री बिना पुरुष संयोग के गर्भवती हो सकती है।

·०४·१०१ सुक्कपोग्गले (शुक्रपुद्गल)

—ठाण० स्था ५। उ २। सू ४१६। पृ० २६१

वीर्य के पुद्गल, पुरुष शरीरस्थ धातु विशेष के पुदगल।

·०४·१०२ सुभपोग्गलपक्खेव (शुभपुद्गलप्रक्षेप)

—णाया० श्रु १। अ १। सू ८०। पृ० १०३९

शुभपुद्गल का प्रक्षेप अर्थात् शुभ पुद्गल का प्रवेश कराना—शुभ पुद्गलों का शरीर में प्रवेश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माकन्दीपुत्रों की कथा में रत्नदेवी द्वारा उनके शरीर में शुभ पुद्गलों के प्रवेश कराने का कथन है।

·०४·१०३ सुहुमपरमाणुपोग्गलाणं (सूक्ष्मपरमाणुपुद्गल)

—जंबू० वक्ष २ । सू १९ । पृ० ५४३

मूल—अणंताणं सुहुमपरमाणुपोग्गलाणं समुदयसमिइसमागमेणं ववहारिए परमाणू निप्फज्जइ।

व्यावहारिक परमाणु की निष्पन्नता—उत्पत्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि अनन्तानन्त सूक्ष्म परमाणु पुद्गलों के समुदयसमिति—समागम से—एकीभाव होने से व्यावहारिक परमाणु उत्पन्न होता है। यहाँ अप्रदेशी परमाणु को अन्य व्यावहारिक परमाणुओं से सूक्ष्म होने के कारण सूक्ष्म विशेषण दिया गया है।

·०४·१०४ सुहुमसांपराइयचरिमसमयपरमाणुपोग्गलक्खंधकालो (सूक्ष्मसांपरायिकचरमसमयपरमाणुपुद्गलस्कंधकाल)

—कसापा० गा २२ । टीका ३५७ । भाग ३ । पृ० १९२

× × × अथवा सुहुमसांपराइयचरिमसमयपरमाणुपोग्गलक्खंधकालो एया ट्ठिदी णाम। तस्स एगसमयणिप्पण्णत्तादो। × × ×।

अथवा सूक्ष्मसांपरायिक गुणस्थान के अंतिम समय में पुद्गलपरमाणुओं के स्कंध (कर्मपुद्गलस्कंध) का जो काल है वह एक स्थिति कहलाती है क्योंकि यह स्थिति एक समय में निष्पन्न होती है।

·०५ परिभाषा के उपयोगी पाठ

·०५·१ पुद्गल की परिभाषा के उपयोगी पाठ

(१) कइविहा णं भंते ! सव्वदव्वा पन्नत्ता ? गोयमा ! छव्विहा सव्वदव्वा पन्नत्ता, तंजहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए जाव (आगासत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, जीवत्थिकाए) अद्धासमए।

—भग० श २५ । उ ४ । प्र ४ । पृ० ८६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) कइ णं भंते ! अत्थिकाया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंच अत्थिकाया पन्नत्ता, तंजहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए।

—भग० श २। उ १०। प्र ५३। पृ० ४३३

(३) तं सच्चे णं एसमट्ठे कालोदाई ! अहं पंचत्थिकायं पण्णवेमि, तंजहा—धम्मत्थिकायं, जाव (अधम्मत्थिकायं, आगासत्थिकायं, जीवत्थिकायं) पोग्गलत्थिकायं, तत्थ णं अहं चत्तारि अत्थिकाए अजीवत्थिकाए अजीवतया पण्णवेमि तहेव जाव एगं च णं अहं पोग्गलत्थिकायं रूविकायं (अजीवकायं) पण्णवेमि।

—भग० श ७। उ १०। प्र २। पृ० ५२८

(४) पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंध-रस-फासे ? गोयमा ! पंचवण्णे, पंचरसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे। से समासओ पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा—दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ। दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं, खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते, कालओ न कयाइ, न आसी जाव (न कयाइ भवइ, न कयाइ भविस्सइ त्ति, भुविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) णिच्चे, भावओ वण्णमंते—गंध-रस-फासमंते, गुणओ गहणगुणे।

—भग० श २। उ १०। प्र ५७। पृ० ४३४

—ठाण० स्था ५। उ ३। सू ४४१। पृ० २६६

(५) कइविहे णं भंते ! पोग्गलपरिणामे पन्नत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पोग्गलपरिणामे पन्नत्ते, तंजहा—वण्णपरिणामे, गंधपरिणामे, रसपरिणामे, फासपरिणामे, संठाणपरिणामे। वण्णपरिणामे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा—कालवण्णपरिणामे जाव सुक्किलवण्णपरिणामे। एवं एएणं अभिलावेणं गंध-परिणामे दुविहे, रसपरिणामे पंचविहे, फासपरिणामे अट्ठविहे। संठाणपरिणामे णं भंते ! कइविहे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पन्नत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा—परिमंडलसंठाणपरिणामे जाव आयतसंठाणपरिणामे ।

—भग० श ८ । उ १० । प्र १४ से १६ । पृ० ५७१

(६) बावीसविहे पोग्गलपरिणामे पन्नत्ते, तंजहा—कालवण्णपरिणामे १, नीलवण्णपरिणामे २, लोहियवण्णपरिणामे ३, हालिद्दवण्णपरिणामे ४, सुक्किल्लवण्णपरिणामे ५, सुब्भिगंधपरिणामे ६, दुब्भिगंधपरिणामे ७, तित्तरसपरिणामे ८, कडुयरसपरिणामे ९, कसायरसपरिणामे १०, अंबिलरसपरिणामे ११, महुररसपरिणामे १२, कक्खडफासपरिणामे १३, मउयफासपरिणामे १४, गरुफासपरिणामे १५, लहुफासपरिणामे १६, सीतफासपरिणामे १७, उसिणफासपरिणामे १८, णिद्धफासपरिणामे १९, लुक्खफासपरिणामे २०, गरुलहुफासपरिणामे २१, अगरुलहुफासपरिणामे । —सम० सम २२ । सू ६ । पृ० ३३५

(७) एस णं भंते ! पोग्गले अतीतं, अणंतं, सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! एस णं पोग्गले अतीतं, अणंतं सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया। एस णं भंते ! पोग्गले पडुप्पणं सासयं समयं भवतीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं । एस णं भंते ! पोग्गले अणागयं अणंतं सासयं समयं भविस्सतीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं ।

—भग० श १ । उ ४ । प्र १५६-८ । पृ० ३९८

(८) पोग्गलत्थिकाए णं पुच्छा। गोयमा ! पोग्गलत्थिकाएणं जीवाणं ओरालिय-वेउव्विय-आहारग-तेया-कम्मए-सोइंदिय-चक्खिंदिय-घाणिंदिय-जिब्भिंदिय-फासिंदिय-मणजोग-वयजोग-कायजोग-आणापाणूणं च गहणं पवत्तति, गहणलक्खणे णं पोग्गलत्थिकाए ।

—भग० श १३ । उ ४ । प्र १८ । पृ० ६८४

(९) एगंसि णं पोग्गलत्थिकायंसि रूविकायंसि अजीवकायंसि चक्किया केइ आसइत्तए वा सइत्तए वा जाव (चिट्ठइतए वा, णिसीइतए वा) तुयट्टित्तए वा। —भग० श ७ । उ १० । प्र ३ । पृ० ५२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१०) पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! किं गरुए, लहुए, गरुयलहुए, अगरुयलहुए ? गोयमा ! णो गरुए, णो लहुए, गरुयलहुए वि, अगरुयलहुए वि। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! गरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गरुए, णो लहुए, गरुयलहुए, णो अगरुयलहुए। अगरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गरुए, णो लहुए, णो गरुयलहुए, अगरुयलहुए।

—भग० श १। उ ९। प्र २८७-८८। पृ० ४११

(११) से किं तं पारिणामिए ? पारिणामिए दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—साइपारिणामिए य १ अणाइपारिणामिए य २ × × ×। से किं तं अणाइपारिणामिए ? अणाइपारिणामिए—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, अद्धासमए, लोए, अलोए, भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया।

—अणुओ०। सू २४८, २५०। पृ० १११२-१३

(१२) दव्वादेसेण वि मे अज्जो। सव्वे पोग्गला सपएसा वि, अपएसा वि, अणंता, खेत्तादेसेण वि एवं चेव, कालादेसेण वि, भावादेसेण वि एवं चेव।

—भग० श ५। उ ८। प्र २। पृ० ४८७

(१३) एगपएसोगाढा णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ? एवं चेव। (गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता) एवं जाव—असंखेज्जपएसोगाढा।

—भग० श २५। उ ४। प्र ३९। पृ० ८६४

(१४) दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—सुहुमा चेव बायरा चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल की एक परिभाषा

पुद्गल अजीव, रूपी, अस्तिकाय द्रव्य है।

द्रव्य की अपेक्षा पुद्गल अनन्त है ; क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गल लोक प्रमाण है ; काल की अपेक्षा कभी नहीं था, कभी नहीं है, कभी नहीं रहेगा, ऐसा नहीं है। सदा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था, सदा है, सदा रहेगा। पुद्गल अतीत, अनन्त शाश्वत काल में था, वर्तमान शाश्वत काल में है, अनागत अनन्त शाश्वत काल में रहेगा।

यह ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित तथा नित्य है।

भाव की अपेक्षा पुद्गल वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श वाला है। इसमें पाँच वर्ण, दो गंध, पाँच रस तथा आठ स्पर्श हैं। पुद्गल परिणामी है। पुद्गल का पाँच प्रकार से परिणमन होता है। यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श तथा संस्थान परिणामी है। वर्ण परिणमन पाँच प्रकार का है—काला-नीला-लाल-पीला-श्वेत। गंध परिणाम दो प्रकार है—सुगंध तथा दुर्गन्ध। रस परिणाम पाँच प्रकार का है—तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल तथा मधुर। स्पर्श परिणाम आठ प्रकार का है—कर्कश तथा मृदु ; गुरु तथा लघु ; शीत तथा उष्ण ; रूक्ष तथा स्निग्ध। संस्थान परिणाम पाँच प्रकार का है—परिमंडल, वृत, त्र्यंस, चतुष्कोण तथा आयत। पुद्गल का गुरुलघु तथा अगुरुलघु परिणाम भी होता है।

गुण की अपेक्षा पुद्गल ग्रहण गुण वाला है। जीव द्वारा पुद्गल का ग्रहण होता भी है। पुद्गल के द्वारा जीवों के औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस तथा कार्मण शरीरों का, श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, रस तथा स्पर्श इन्द्रियों का ; मन, वचन तथा काय-योगों का तथा श्वासोच्छ्वास का ग्रहण—प्रवर्तन होता है। पुद्गलास्तिकाय पर बैठना, सोना, खड़े रहना, नीचे बैठना और इधर-उधर आलोटना आदि क्रियाएँ की जा सकती हैं।

पुद्गल गुरु तथा लघु नहीं है। गुरुलघु तथा अगुरुलघु है। कोई पुद्गल गुरुलघु है, कोई अगुरुलघु है।

पुद्गल अनादि पारिणामिक भाव है, सादिपारिणामिक भाव नहीं है। पुद्गल पुद्गलत्व की अपेक्षा अनादि पारिणामिक भाव है।

द्रव्य की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल भी होते हैं, अप्रदेशी पुद्गल भी होते हैं। सप्रदेशी पुद्गल भी अनन्त हैं ; सप्रदेशी पुद्गल भी अनन्त हैं। परमाणु पुद्गल अप्रदेशी पुद्गल है, द्विप्रदेशी स्कंध से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कंध पुद्गल सप्रदेशी हैं।

क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गल अप्रदेशी भी होता है, सप्रदेशी भी होता है अर्थात् एक आकाश प्रदेश को अवगाहन करने वाला भी होता है, अनेक आकाश प्रदेश को अवगाहन करने वाला भी होता है।

काल की अपेक्षा पुद्गल अप्रदेशी भी होता है, सप्रदेशी भी होता है, अर्थात् एक समय की स्थितिवाला भी होता है, अनेक समय की स्थितिवाला भी होता है। यह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थिति परमाणुत्व तथा स्कंधत्व की अपेक्षा भी हो सकती है, अवगाहन तथा क्षेत्रान्तर की अपेक्षा भी हो सकती है ; भाव गुणों की अपेक्षा भी हो सकती है।

भाव की अपेक्षा पुद्गल अप्रदेशी भी होता है, सप्रदेशी भी होता है, अर्थात् एक अंश गुणवाला भी होता है, अनेक अंश गुणवाला भी होता है। यथा—एक अंश काला वर्ण गुणवाला भी होता है, अनेक अंश काला वर्ण गुणवाला भी होता है।

पुद्गल सूक्ष्म भी होता है, बादर भी होता है।

एक प्रदेश का अवगाहन करनेवाले पुद्गल से लेकर यावत् असंख्यात प्रदेश को अवगाहन करने वाले पुद्गल अनन्त हैं।

·०५·२ परमाणु पुद्गल की परिभाषा के उपयोगी पाठ—

(१) दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—परमाणुपोग्गला चेव नोपरमाणुपोग्गला चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

(२) कतिवहे भंते ! परमाणु पन्नत्ते ? गोयमा ! चउव्विहे परमाणु पन्नत्ते, तंजहा—दव्वपरमाणु, खेत्तपरमाणु, कालपरमाणु, भावपरमाणु।

—भग० श २०। उ ५। प्र १२। पृ० ८०१

(३) रूविणो चेवऽरूवी अजीवा दुविहा भवे।
अरूवी दसहा वुत्ता रूविणो वि चउव्विहा।।
खन्धा य खन्धदेसा य तप्पएसा तहेव य।
परमाणुणो य बोद्धव्वा रूविणो य चउव्विहा।।

—उत्त अ ३६। गा ४, १०। पृ० १०४९-५०

(४) परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ? गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता, एवं जाव अणंतपएसिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। प्र ३८। पृ० ८६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) परमाणु पोग्गले णं भंते ! किं सासए, असासए ? गोयमा ! सिय सासए, सिय असासए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–सिय सासए, सिय असासए, ? गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासए, वन्नपज्जवेहिं जाव फास-पज्जवेहिं असासए, से तेणट्ठेणं जाव सिय सासए, सिय असासए।

—भग० श १४। उ ४। प्र ५। पृ० ६९९

(६) परमाणु पोग्गले णं भंते ! कइवन्ने, कइगंधे, कइरसे, कइफासे पन्नत्ते ? गोयमा ! एगवन्ने, एगगंधे, एगरसे, दुफासे पन्नत्ते, तंजहा—जइ एगवन्ने सिय कालए, सिय नीलए, सिय लोहियए, सिय हालिद्दए, सिय सुक्किलए, जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे, सिय दुब्भिगंधे, जइ एगरसे सिय तित्ते, सिय कडुए, सिय कसाए, सिय अंबिले, सिय महुरे, जइ दुफासे सिय सीए य निद्धे य १, सिय सीए य लुक्खे य २, सिय उसिणे य निद्धे य ३, सिय उसिणे य लुक्खे य ४।

—भग० श २०। उ ५। प्र १। पृ० ७९३

(७) भावपरमाणू णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—१ वन्नमंते, २ गंधमंते, ३ रसमंते, ४ फासमंते।

—भग० श २०। उ ५। प्र १२। पृ० ८०१

(८) जे दव्वओ अपएसे से खेत्तओ णियमा अपएसे, कालओ सिय सपएसे, सिय अपएसे, भावओ सिय सपएसे, सिय अपएसे।

—भग० श ५। उ ८। प्र २। पृ० ४८७

(९) छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं किं जाणति पासति, उदाहु न जाणइ न पासइ ? गोयमा ! अत्थेगइए जाणइ ण पासइ, अत्थेगइए न जाणइ न पासइ। एवं जाव असंखेज्जपएसियं।

—भग० श १८। उ ८। प्र ७। पृ० ७७७

(१०) आहोहिए णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं ? किं जाणति पासति जहा छउमत्थे एवं आहोहिए वि।

—भग० श १८। उ ८। प्र १०। पृ० ७७७

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

(११) परमाहोहिए णं भंते! मणुस्से परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ तं समयं पासइ, जं समयं पासइ तं समयं जाणइ? णो इणट्ठे समट्ठे। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ? परमाहोहिए णं मणुस्से परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ, नो तं समयं पासइ, जं समयं पासइ, नो तं समयं जाणइ? गोयमा! सागारे से नाणे भवइ, अणगारे से दंसणे भवइ, से तेणट्ठेणं जाव नो तं समयं जाणइ एवं जाव अणंतपदेसियं।

—भग० श १८। उ ८। प्र ११। पृ० ७७७-८

(१२) केवली णं भंते! मणुस्से परमाणुपोग्गलं जहा परमाहोहिए तहा केवलीवि।

—भग० श १८। उ ८। प्र १२। पृ० ७७८

(१३) परमाणुपोग्गले णं भंते! असिधारं वा, खुरधारं वा ओगाहेज्जा? हंता, ओगाहेज्जा। से णं भंते! तत्थ छिज्जेज्जा वा भिज्जेज्जा वा? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थ कमइ, एवं जाव असंखेज्जापएसिओ। × × × एवं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं तहिं णवर, झियाएज्ज भाणियव्वं, एवं पुक्खलसंवट्टगस्स महामेहस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं "उल्लेसिया" एवं गंगाए महाणईए पडिसोयं हव्वं आगच्छेज्जा, तहिं विणिहायं आवज्जेज्ज उदगावत्तं वा उदगाबिंदुं वा ओगाहेज्जा से णं तत्थ परियावज्जेज्जा।

—भग० श ५। उ ७। प्र ५, ६, ८। पृ० ४८३

(१४) दव्व परमाणू णं भंते! कइविहे पन्नत्ते? गोयमा! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—अच्छेज्जे, अभेज्जे, अडज्झे, अगेज्झे।

—भग० श २०। उ ५। प्र १३। पृ० ८०१

(१५) परमाणुपोग्गले णं भंते! किं सअड्ढे, समज्झे, सपएसे; उदाहु अणड्ढे, अमज्झे, अपएसे? गोयमा? अणड्ढे, अमज्झे, अपएसे; णो सअड्ढे, णो समज्झे णो सपएसे।

—भग० श ५। उ ७। प्र ९। पृ० ४८३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१६) पाणाइवायवेरमणे, जाव मिच्छादंसणसल्लवेरमणे, × × ×। धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, जाव परमाणुपोग्गले, सेलेसीं (सिं) पडिवन्नए अणगारे एएणं दुविहा जीवदव्वा य अजीवदव्वा य जीवाणं परिभोगत्ताए नो हव्वमागच्छन्ति।

—भग० श १८। उ ४। प्र १। पृ० ७६९

(१७) परमाणुपोग्गले णं भंते! लोगस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ पच्चत्थिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, पच्चत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ पुरत्थिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, दाहिणिल्लाओ चरिमताओ उत्तरिल्लं जाव गच्छइ, उत्तरिल्लाओ चरिमताओ दाहिणिल्लं जाव गच्छइ, उवरिल्लाओ चरिमंताओ हेट्ठिल्लं चरिमंतं एवं जाव गच्छइ, हेट्ठिल्लाओ चरिमंताओ उवरिल्लं चरिमंतं एगसमएण गच्छइ? हंता गोयमा! परमाणुपोग्गले णं लोगस्स पुरत्थिमिल्लं त चेव जाव उवरिल्लं चरिमंतं गच्छइ।

—भग० श १६। उ ८। प्र ७। पृ० ७५२

(१८) परमाणुपोग्गला णं भंते! किं अणुसेढिं गइ पवत्तइ विसेढिं गइपवत्तइ? गोयमा! अणुसेढिं गइ पवत्तइ नो विसेढिं गइ पवत्तइ।

—भग० श २५। उ ३ प्र ५८। पृ० ८६०

(१९) से किं तं परिणामिए? परिणामिए दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—साइपारिणामिए य अणाइपारिणामिए य। से किं तं साइपारिणमिए? साइपारिणामिए अणेगविहे पन्नत्ते, तंजहा—गाहा—जुण्णसुरा × × × परमाणुपोग्गले, दुपएसिए जाव अणंतपएसिए।

—अणुओ० सू २४८, २४९

(२०) परमाणुपोग्गले णं भंते! कालओ केवच्चिरं होइ? गोयमा! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं। एवं जाव अणंतपएसिओ।

—भग० श ५। उ ७। प्र १६। पृ० ४८४

(२१) संतइं पप्प तेऽणाई, अपज्जवसिया वि य।
ठिइं पडुच्च साईया, सपज्जवसिया वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा १२। पृ० १०५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल की एक परिभाषा

परमाणुपुद्गल द्रव्य है और इसका नाम भी द्रव्यपरमाणु है। औधिक पुद्गल की तरह शाश्वत और अवस्थित द्रव्य है।

द्रव्य की अपेक्षा परमाणुपुद्गल अनन्त है, पुद्गल की तरह क्षेत्र की अपेक्षा लोकाकाश में है, काल की अपेक्षा त्रिकालवर्ती है। परमाणुपुद्गल अतीत अनन्त शाश्वत काल में था, यह वर्तमान शाश्वत काल में है, यह अनन्त शाश्वत भविष्यत् काल में रहेगा। यह द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत है, वर्ण-गंध-रस-स्पर्श भावों की अपेक्षा से अशाश्वत है। भाव की अपेक्षा परमाणु पुद्गल में एक वर्ण, एक गंध, एक रस तथा दो स्पर्श हैं अर्थात परमाणु में पाँच वर्णों में से कोई एक वर्ण होता है, दो गंधों में से कोई एक गंध होती है, पाँच रसों में से कोई एक रस होता है। यह द्विस्पर्शी है अर्थात् रूक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण—इन चार स्पर्शों में से परमाणु में कोई दो अविरोधी स्पर्श होते हैं। परमाणु में रूक्ष-शीत या रूक्ष-उष्ण या स्निग्ध-शीत या स्निग्ध-उष्ण स्पर्श होता है।

परमाणुपुद्गल जो द्रव्य की अपेक्षा अप्रदेशी है, वह क्षेत्र की अपेक्षा नियमतः अप्रदेशी है अर्थात् यह एक आकाश प्रदेश का ही अवगाहन करता है ; काल की अपेक्षा यह कदाचित् अप्रदेशी होता है, कदाचित् सप्रदेशी होता है, अर्थात् एक समय की स्थितिवाला भी होता है, अनेक समय की स्थितिवाला भी होता है ; भाव की अपेक्षा कदाचित् अप्रदेशी है, कदाचित् सप्रदेशी है अर्थात् एक अंश गुणवाला भी होता है, अनेक अंश गुणवाला भी होता है।

परमाणुपुद्गल इतना सूक्ष्म होता है कि छद्मस्थ तथा अवधिज्ञानी इसे देख नहीं सकते हैं केवल परमावधिज्ञानी तथा केवलज्ञानी इसे जानते और देखते हैं।

परमाणुपुद्गल तलवार की धार या क्षुर की धार (उस्तुरे की धार) पर रह सकता है, उस तलवार की धार या क्षुर की धार पर अवस्थित परमाणु पुद्गल का छेदन-भेदन नहीं होता है। परमाणुपुद्गल अग्निकाय के मध्य में प्रविष्ट होकर भी नहीं जलता है। परमाणुपुद्गल 'पुष्कर संवर्तक' नामक महामेघ के मध्य में प्रविष्ट होकर भी गीलेपन को प्राप्त नहीं होता है। परमाणुपुद्गल गंगा महानदी के प्रतिस्रोत-प्रवाह में प्रविष्ट होकर भी प्रतिस्खलित नहीं होता है। परमाणुपुद्गल उदगावर्त या उदकबिन्दु में प्रविष्ट होकर भी नष्ट नहीं होता है।

परमाणुपुद्गल अच्छेद्य है, अभेद्य है, अदाह्य है, अग्राह्य है। परमाणुपुद्गल अनर्घ है, अमध्य है, अप्रदेशी है परन्तु सार्ध नहीं है, समध्य नहीं है, सप्रदेशी नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुपुद्गल जीव के परिभोग में नहीं आता है क्योंकि यह जीव द्वारा अग्राह्य है।

परमाणुपुद्गल की उत्कृष्ट गति एक समय में लोक के पूर्व चरमान्त से पश्चिम चरमान्त में, पश्चिम चरमान्त से पूर्व चरमान्त में, दक्षिण चरमान्त से उत्तर चरमान्त में, उत्तर चरमान्त से दक्षिण चरमान्त में, ऊपर के चरमान्त से नीचे के चरमान्त में, नीचे के चरमान्त से ऊपर के चरमान्त में होती है। परमाणुपुद्गल की गति अनुश्रेणी होती है।

परमाणुपुद्गल सादि पारिणामिक भाव है, अनादि पारिणामिक भाव नहीं है।

परमाणुपुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट असंख्यातकाल की है।

वे (स्कंध और परमाणु) प्रवाह की अपेक्षा से अनादि अनन्त हैं तथा स्थिति की अपेक्षा से सादि-सांत हैं।

·०५ ३ स्कंध पुद्गल की परिभाषा के उपयोगी पाठ—

(१) **रूविणो चेवऽरूवी य अजीवा दुविहा भवे।**
अरूवी दसहा वुत्ता रूविणो वि चउव्विहा॥
खंधा य खंधदेसा य तप्पएसा तहेव य।
परमाणुणो य बोद्धव्वा रूविणो य चउव्विहा॥

—उत्त० अ ३६। गा ४, १०। पृ० १०४९-५०

(२) एगत्तेण पुहुत्तेण खंधाय य परमाणु य।

—उत्त० अ ३६। गा ११ पूर्वार्ध। पृ० १०५०

(३) परमाणुपोग्गला णं भंते! किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता? गोयमा! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता, एवं जाव अणंतपएसिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। प्र ३८। पृ० ८६४

(४) एस णं भंते! पोग्गले[१] अतीतं, अणंतं, सासयं समयं भुवीति, वत्तव्वं सिया? हंता, गोयमा! एस णं पोग्गले अतीतं, अणंतं, सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया। एस णं भंते! पोग्गले पडुप्पण्णं सासयं समयं भवतीति वत्तव्वं सिया? हंता, गोयमा! तं चेव उच्चारेयव्वं। एस णं

१. पोग्गलेति परमाणुरुतरत्रस्कंधग्रहणात्-वृत्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंते ! पोग्गले अणागयं अणंतं सासयं समयं भविस्सतीति वत्तव्वं सिया। हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं। एवं खंधेण वि तिन्नि आलावगा।

—भग० श १। उ ४। प्र १५६ से १५८। पृ० ३९८

(५) दुपएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने— पुच्छा। गोयमा ! सिय एगवन्ने, सिय दुवन्ने ; सिय एग गंधे, सिय दुगंधे ; सिय एग रसे, सिय दुरसे ; सिय दुफासे, सिय तिफासे, सिये चउफासे पन्नत्ते। एवं तिपएसिए वि, नवरं सिय एगवन्ने, सिय दुवन्ने, सिय तिवन्ने। एवं रसेसु वि, सेसं जहा दुपएसियस्स। एवं चउपएसिए वि, नवरं सिय एगवन्ने, जाव सिय चउवन्ने। एवं रसेसु वि, सेसं तं चेव। एवं पंचपएसिए वि, नवरं सिय एगवन्ने, जाव सिय पंचवन्ने, एवं रसेसु वि, गंध-फासा तहेव। जहा पंचपसिओ एवं जाव—असंखेज्जपएसिओ। (प्र ६)

सुहुम परिणए णं भंते। अणंतपएसिए खंधे कइवन्ने ? जहा पंचपए-सिए तहेव निरवसेसं। (प्र ७)

बादर परिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कइवन्ने ? पुच्छा। गोयमा ! सिय एगवन्ने, जाव सिय पंचवन्ने ; सिय एगगंधे, सिय दुगंधे ; सिय एगरसे, जाव सिय पंचरसे ; सिय चउफासे, जाव सिय अट्ठफासे पन्नते।

—भग० श १८। उ ६। प्र ६, ७, ८। पृ० ७७२

(६) जे दव्वओ सपएसे से खेत्तओ सिय सपएसे, सिय अपएसे, एवं कालओ, भावओ वि। जे खेत्तओ सपएसे से दव्वओ णियमा सपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए ; जहा दव्वओ तहा कालओ, भावओवि।

—भग० श ५। उ ८। प्र २। पृ० ४८७

(७) दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे किं सअड्ढे, समज्झे, सपएसे, उदाहु— अणड्ढे, अमज्झे, अपएसे ? गोयमा ! सअड्ढे, अमज्झे, सपएसे, णो अणड्ढे, णो समज्झे, णो अपएसे। तिप्पएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा ? गोयमा ! अणड्ढे, समज्झे, सपएसे, णो सअड्ढे, णो अमज्झे, णो अपएसे, जहा दुप्पएसिओ तहा जे समा ते भाणियव्वा, जे विसमा ते जहा तिपएसिओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तहा भाणियव्वा। संखेज्जपएसिए णं भंते ! किं खंधे सअड्ढे पुच्छा ? गोयमा ! सिय सअड्ढे, अमज्झे, सपएसे ; सिय अणड्ढे, समज्झे सपएसे। जहा संखेज्जपएसिओ तहा असंखेज्जपएसिओ वि, अणंतपएसिओ वि।

—भग० श ५। उ ७। प्र १० से १२। पृ० ४८३

(८) दुपएसिए णं पुच्छा, गोयमा ! सड्ढे, णो अणड्ढे ; तिपएसिए जहा परमाणुपोग्गले, चउपएसिए जहा दुपएसिए, पंचपएसिए जहा तिपएसिए, छप्पएसिए जहा दुपएसिए, सत्तपएसिए जहा तिपएसिए, अट्ठपएसिए जहा दुपएसिए, नवपएसिए जहा तिपएसिए, दसपएसिए जहा दुपएसिए।

संखेज्जपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! सिय सड्ढे सिय अणड्ढे, एवं असंखेज्जपएसिए वि, एवं अणंतपएसिए वि।

—भग० श २५। उ ४। प्र ८५, ८६। पृ० ८३८

(९) छउमत्थे णं भंते ! मणूसे दुपएसियं खंधं किं जाणइ, पासइ ? एवं चेव ! एवं जाव—असंखेज्जपएसियं [प्र ८]

छउमत्थे णं भंते ! मणूसे अणंतपएसियं खंधं किं पुच्छा। गोयमा ! अत्थेगइए जाणइ पासइ १, अत्थेगइए जाणइ न पासइ २, अत्थेगइए न जाणइ पासइ ३ अत्थेगइए न जाणइ न पासइ ४।

—भग० श १८। उ ८। प्र ८, ९। पृ० ७७७

(१०) आहोहिए णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं० किं जाणति-पासति ? जहा छउमत्थे एवं आहोहिए वि, जाव अणंतपएसियं।

—भग० श १८। उ ८। प्र १०। पृ० ७७७

(११) परमाहोहिए णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ तं समयं पासइ, जं समयं पासइ तं जाणइ ? णो इणट्ठे-समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ परमाहोहिए णं मणुस्से परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ नो तं समयं पासइ, जं समयं पासइ, नो तं समयं जाणइ। गोयमा !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सागारे से नाणे भवइ, अणगारे से दंसणे भवइ, से तेणट्ठेणं जाव नो तं समयं जाणइ, एवं जाव अणंतपएसियं।

—भग० श १८। उ ८। प्र ११। पृ० ७७७-७८

(१२) केवली णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं० जहा परमाहोहिए तहा केवली वि जाव अणंतपएसियं।

—भग० १८। उ ८। प्र १२। पृ० ७७८

(१३) परमाणुपोग्गले णं भंते ! असिधारं वा, खुरधारं वा, ओगाहेज्जा ? हंता, ओगाहेज्जा। से णं भंते ! तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थं कमइ, एवं जाव असंखेज्जपएसिओ। [प्र ५, ६]

अणंतपएसिए णं भंते ! खंधे असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ? हंता, ओगाहेज्जा। से णं तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा ? गोयमा ! अत्थेगइए छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा अत्थेगइए णो छिज्जेज्ज वा णो भिज्जेज्ज वा। [प्र ८]

एवं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं णवरं 'झियाएज्ज' भाणियव्वं, एवं पुक्खलसंवट्टगस्स महामेहस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं 'उल्लेसिया' ; एवं गंगाए महाणईए पडिसोयं हव्वं आगच्छेज्जा, तहिं 'विणिहायं' आवज्जेज्जा, उदगावत्तं वा उदगबिंदुं वा ओगाहेज्जा से णं तत्थ परियावज्जेज्जा। [प्र ८]

—भग० श ५। उ ७। प्र० ५ से ८। पृ० ४८३

(१४) परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं अणुसेढिं गई पवत्तइ विसेढिं गई पवत्तइ ? गोयमा ! अणुसेढिं गई पवत्तइ नो विसेढिं गई पवत्तइ। दुपएसिया णं भंते ! खंधाणं अणुसेढिं गई पवत्तइ ? एवं चेव, एवं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं।

—भग० श २५। उ ३। प्र ५८, ५९। पृ० ८६०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१५) से किं तं पारिणामिए ? पारिणामिए दुविहे पन्नत्ते, तं जहा—साइपारिणामिए य अणाइपारिणामिए य। से किं तं साइपारिणामिए ? साइपारिणामिए अणगविहे पन्नत्ते, तं जहा— गाहा—जुण्णसुरा × × × परमाणुपोग्गले, दुपएसिए जाव अणंतपएसिए।

—अणुओ० सू २४८-२४९। पृ० १११२-१३

(१६) परमाणुपोग्गले णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवं जाव अणंतपएसिओ।

—भग० श ५। उ ७। प्र १६। पृ० ४८४

(१७) संतइं पप्प तेऽणाई, अपज्जवसिया वि य।
ठिइं पडुच्च साईया, सपज्जवसिया वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा १२। पृ० १०५०

स्कंधपुद्गल की एक परिभाषा

स्कंधपुद्गल अजीव है, रूपी है, अस्तिकाय द्रव्य है। परमाणुओं के परस्पर मिलने से स्कंध होता है।

द्रव्य की अपेक्षा स्कंधपुद्गल अनंत है, पुद्गल की तरह क्षेत्र की अपेक्षा लोकाकाश में है ; काल की अपेक्षा त्रिकालवर्ती है। स्कंधपुद्गल अतीत अनंत शाश्वत काल में था, यह वर्तमान शाश्वत काल में है, यह अनंत शाश्वत भविष्यत् काल में रहेगा। भाव की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध कदाचित् एक वर्णवाला, कदाचित् दो वर्णमाला ; कदाचित् एक गंधवाला, कदाचित् दो गंधवाला ; कदाचित् एक रसवाला, कदाचित् दो रसवाला ; कदाचित् दो स्पर्शवाला, कदाचित् तीन स्पर्शवाला, कदाचित् चार स्पर्शवाला होता है। तीन प्रदेशी स्कंध कदाचित् एक वर्णवाला, कदाचित् दो वर्णवाला, कदाचित् तीन वर्णवाला ; कदाचित् एक गंधवाला, कदाचित् दो गंधवाला; कदाचित् एक रसवाला, कदाचित् दो रसवाला, कदाचित् तीन रसवाला होता है ; कदाचित् दो स्पर्शवाला, कदाचित् तीन स्पर्शवाला, कदाचित् कदाचित् चार स्पर्शवाला होता है। चार प्रदेशी स्कंध कदाचित् एक वर्णवाला, कदाचित् दो वर्णवाला, कदाचित् तीन वर्णवाला, कदाचित् चार वर्णवाला ; कदाचित् तीन रसवाला,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कदाचित् चार रसवाला ; कदाचित् दो स्पर्शवाला, कदाचित् तीन स्पर्शवाला, कदाचित् चार स्पर्शवाला होता है।

पंच प्रदेशी स्कंध भाव की अपेक्षा कदाचित् एक वर्णवाला, कदाचित् दो वर्णवाला, कदाचित् तीन वर्णवाला, कदाचित् चार वर्णवाला, कदाचित् पाँच वर्णवाला ; कदाचित् एक गंधवाला, कदाचित् दो गंधवाला ; कदाचित् एक रसवाला, कदाचित् दो रसवाला, कदाचित् तीन रसवाला, कदाचित् चार रसवाला, कदाचित् पाँच रसवाला ; कदाचित् दो स्पर्शवाला, कदाचित् तीन स्पर्शवाला, कदाचित् चार स्पर्शवाला होता है।

छः प्रदेशी स्कंध से लेकर यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंधपुद्गल को भाव की अपेक्षा पंच प्रदेशी स्कंध की तरह जानना।

सूक्ष्म परिणामवाला अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल को भी भाव की अपेक्षा पंचप्रदेशी की तरह जानना।

बादर परिणामवाला अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल भाव की अपेक्षा कदाचित् एक वर्णवाला, कदाचित् दो वर्णवाला, कदाचित् तीन वर्णवाला, कदाचित् चार वर्णवाला, कदाचित पाँच वर्णवाला; कदाचित् एक गंधवाला, कदाचित् दो गंधवाला; कदाचित् एक रसवाला, कदाचित् दो रसवाला, कदाचित् तीन रसवाला, कदाचित् चार रसवाला, कदाचित् पाँच रसवाला; कदाचित् चार स्पर्शवाला, कदाचित् पाँच स्पर्शवाला, कदाचित् छः स्पर्शवाला, कदाचित् सात स्पर्शवाला, कदाचित् आठ स्पर्शवाला होता है।

स्कंधपुद्गल द्रव्य की अपेक्षा सप्रदेशी है, अप्रदेशी नहीं है। स्कंधपुद्गल क्षेत्र की अपेक्षा अप्रदेशी भी होता है, सप्रदेशी भी होता है अर्थात् एक आकाश प्रदेश को अवगाहन करनेवाला भी होता है, अनेक आकाश प्रदेश को अवगाहन करनेवाला भी होता है। स्कंधपुद्गल काल की अपेक्षा सप्रदेशी भी होता है, अप्रदेशी भी होता है अर्थात् एक समय की स्थितिवाला भी होता है, अनेक समय की स्थितिवाला भी होता है। यह स्थिति स्कंधत्व की अपेक्षा भी है, अवगाहन तथा क्षेत्रान्तर की अपेक्षा भी हो सकती है तथा भावगुणों की अपेक्षा भी हो सकती है। भाव की अपेक्षा स्कन्धपुद्गल सप्रदेशी भी होता है, अप्रदेशी भी होता है अर्थात् एक अंश गुणवाला भी होता है, अनेक अंश गुणवाला भी होता है।

स्कंधपुद्गल सार्ध, अमध्य तथा सप्रदेशी होता है या अनर्ध, समध्य तथा सप्रदेशी होता है अर्थात् सम परमाणु संख्यावाले पुद्गलस्कंध सार्ध, अमध्य और सप्रदेशी है ; विषम परमाणु संख्यावाले पुद्गलस्कंध अनर्ध, समध्य और सप्रदेशी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध से लेकर असंख्यातप्रदेशी स्कंधपुद्गल इतने सूक्ष्म हैं कि छद्मस्थ तथा अवधिज्ञानी इसे देख नहीं सकते हैं केवल परमावधिज्ञानी तथा केवलज्ञानी इसे जानते और देखते हैं। कतिपय अनन्तप्रदेशी पुद्गलस्कंध इतने सूक्ष्म हैं कि छद्मस्थ तथा अवधिज्ञानी इसे देख नहीं सकते।

द्विप्रदेशी स्कंधपुद्गल से लेकर असंख्यातप्रदेशी स्कंधपुद्गल तलवार की धार या क्षुर की धार पर रह सकते हैं। उस तलवार की धार या क्षुर की धार पर अवस्थित इन स्कंधपुद्गलों का छेदन-भेदन नहीं होता है। ये पुद्गलस्कंध अग्निकाय के मध्य में प्रविष्ट होकर भी नहीं जलते हैं। ये पुद्गलस्कंध 'पुष्कर-सवर्तक' नामक महामेघ के मध्य में प्रविष्ट होकर भी गीलेपन को प्राप्त नहीं होते हैं। ये पुद्गलस्कंध गंगा महानदी के प्रतिस्रोत-प्रवाह में प्रविष्ट होकर भी प्रतिस्खलित नहीं होते हैं। ये पुद्गलस्कंध उदगावर्त या उदकबिन्दु में प्रविष्ट होकर भी नष्ट नहीं होते हैं।

इसी प्रकार कतिपय अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल भी इतने सूक्ष्म हैं कि तलवार की धार या क्षुर की धार पर स्थित होकर भी छेदन-भेदन को प्राप्त नहीं होते हैं। ये स्कंधपुद्गल अग्निकाय के मध्य में प्रविष्ट होकर भी नहीं जलते हैं। स्कंधपुद्गल 'पुष्कर-संवर्तक' नामक महामेघ के मध्य में प्रविष्ट होकर भी गीलेपन को प्राप्त नहीं होते हैं। ये पुद्गलस्कंध गंगा महानदी के प्रतिस्रोत-प्रवाह में प्रविष्ट होकर भी प्रतिस्खलित नहीं होते हैं। ये पुद्गलस्कंध उदगावर्त या उदकबिन्दु में प्रविष्ट होकर भी नष्ट नहीं होते हैं।

कतिपय अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल तलवार की धार या क्षुर की धार पर स्थित होकर छेदन-भेदन को प्राप्त होते हैं। ये स्कंधपुदपल अग्निकाय के मध्य में प्रविष्ट होकर जल जाते हैं। ये स्कंधपुद्गल 'पुष्कर-संवर्तक' नामक महामेघ के मध्य में प्रविष्ट होकर गीलेपन को प्राप्त होते हैं। ये पुद्गलस्कंध गंगा महानदी के प्रतिस्रोत में प्रविष्ट होकर प्रतिस्खलित होते हैं। ये पुद्गलस्कंध उदगावर्त या उदकबिन्दु में प्रविष्ट होकर नष्ट होते हैं।

द्विप्रदेशी स्कंधपुद्गल से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल—सबकी गति अनुश्रेणी होती है किन्तु विश्रेणी गति नहीं होती है।

द्विप्रदेशी स्कंधपुद्गल से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल—सबका सादि पारिणामिक भाव है, अनादि पारिणामिक भाव नहीं है।

द्विप्रदेशी स्कंधपुद्गल से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कंधपुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल की है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कंधपुद्गल संतति प्रवाह की अपेक्षा अनादि अनन्त है तथा स्थिति की अपेक्षा सादि शान्त है।

·०६ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई परिभाषा

·०६·१ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई पुद्गल की परिभाषा

(१) निर्युक्तिकार :—

पुद्गल की परिभाषा—नहीं मिली।

(२) शीलांकाचार्य :—

पुद्गल की परिभाषा—नहीं मिली।

(३) अभयदेवसूरि :—

(क) पूरणगलनधर्माणः पुद्गलाः।

—ठाण० स्था० १। सू० ५१ टीका

(ख) अस्ति—शब्देन प्रदेशा उच्यन्ते, अतस्तेषां काया राशयः, अस्तिकायाः, अथवा 'अस्ति' इत्ययं निपातः कालत्रयाभिधायी, ततोऽस्तीति सन्ति, आसन्, भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशा राशयः ते अस्तिकायाः × × ×। ततस्तदुपष्टम्भकत्वात् पुद्गलास्तिकायः।

भग० श २। उ १०। प्र ५३। टीका

(४) मलयगिरि :—

(क) पुद्गलानामेव रूपादिमत्त्वात्। रूपमेषामस्तीति रूपिणः, रूपग्रहणं गंधादीनामुपलक्षणम्।

—जीवा० प्रति १। सू ५। टीका

—पण्ण० प १। सू ४। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) पूरण-गलनधर्माणः पुद्गलाः ।

—कर्म० भाग ५ । गा ८६ टीका

(५) उमास्वामी :—

(क) रूपिणः पुद्गलाः ।

—तत्त्व० अ ५ । सू ५

(ख) स्पर्शरसगंधवर्णवन्तः पुद्गलाः ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २३

(ग) अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २

(६) अकलंकदेव :—

(क) पूरणगलनान्वर्थसंज्ञत्वात् पुद्गलाः ।

—राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४

यथा भासं करोति भास्कर इति भासनार्थमन्तर्नीय भास्करसंज्ञाऽन्वर्था प्रवर्तते तथा भेदात् संघातात् भेदसंघाताभ्यां च पूर्यन्ते गलन्ते चेति पूरण-गलनात्मिकां क्रियामन्तर्भाव्य पुद्गलशब्दोऽन्वर्थः पृषोदरादिषु निपातितः, यथा शवशायनं श्मशानमिति ।

—राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४

(ख) रूपिद्रव्यं मूर्तिमद्—द्रव्यमित्यर्थः । तदेह मूर्तिपर्यायवचनो रूपशब्दो ग्रहीतव्यः ।

—राज० अ ५ । सू ५ । पृ० ४४५

(७) वीरसेनाचार्य :—

जेसिमण्णोण्णमविरोहो ते तस्स दव्वस्स जादव्वभाविगुणा पोग्गलदव्वस्स रूव-रस-गंध-फास इव । × × × ।

—षट्० खं० ४ । १। सू ४४ टीका । पु ९ । पृ० ११६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती :—

उवजोगो वण्णचऊ लक्खणमिह जीवपोग्गलाणं तु।

—गोजी० गा ५६४ पूर्वार्ध

(९) विद्यानंदि :—

त्रिकालपूरणगलनात् पुद्गला इति निर्वचनं न प्रतिपक्षमुपयातीत्यव्यभिचारं सिद्धं।

—श्लोवा० अ ५। सू १। टीका

ततो रूपं मूर्तिरिति गृह्यते रूपादिसंस्थानपरिणामो मूर्तिः।

—श्लोवा० अ ५। सू ५। टीका

(१०) कुन्दकुन्दाचार्य :—

वण्णरसगंधफासा विज्जंते पोग्गलस्स सुहुमादो।

—प्रव० अ २। गा ४० पूर्वार्ध

(११) श्रुतसागरसूरि :—

पूर्यन्ते गलन्ति च पुद्गलाः धातोस्तदर्थातिशयेन योगः मयूरभ्रमरादिवत्।

—तत्त्ववृत्ति अ ५। सू २३

·०६·२ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई परमाणु की परिभाषा

(१) निर्युक्तिकार :—

परमाणु पुद्गल की परिभाषा—नहीं मिली।

(२) शीलांकाचार्य :—

परमाणु पुद्गल की परिभाषा—नहीं मिली।

(३) अभयदेवसूरि :—

(क) 'परमाणु' त्ति परमश्चासावात्यन्तिकोऽणुश्च सूक्ष्मः परमाणुः—द्व्यणुकादिस्कंधानां कारणभूतः, आह च—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः।
एकरसवर्णगन्धो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च ॥

—ठाण० स्था १। सू ४५। टीका

(ख) परमाणवो—निष्प्रदेशाः।

—ठाण० स्था १। सू ५१। टीका

(ग) परमाश्च ते अणवश्चेति परमाणवः।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। टीका

(४) मलयगिरि :—

(क) परमाश्च तेऽणवश्च परमाणवो निर्विभागद्रव्यरूपास्ते च ते पुद्गलाश्च परमाणुपुद्गलाः। स्कंधत्वपरिणामरहिताः केवलाः परमाणवः इत्यर्थः।

—पण्ण० प १। सू ६। टीका
—जीवा० प्र १। सू ५। टीका

(ख) ततः केवलोऽणुरेवाणुकः परमाणुरित्यर्थः एकोऽणुको यत्र स एकाणुकः।

—कर्म० भाग ५। गा ७५। टीका

(ग) प्रतिपरमाणुरूपरसगंधस्पर्शाः।

—जीवा० प्रति १। सू ५। टीका

(५) उमास्वामी :—

(क) परमाणुरप्रदेशो वर्णादिगुणेषु भजनीयः।

—प्रश० श्लो २०८

(ख) सर्वेषां प्रदेशाः सन्ति अन्यत्र परमाणोः।

—तत्त्व० अ ५। सू ६। भाष्य

(ग) अणोः प्रदेशा न भवन्ति। अनादिरमध्योऽप्रदेशो हि परमाणुः।

—तत्त्व० अ ५। सू ११। भाष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(घ) परमाणोरेकस्मिन्नेव प्रदेशे (अवगाहः)।

—तत्त्व० अ ५ । सू १४ । भाष्य

(६) पूज्यपादाचार्य :—

(क) अणोः प्रदेशाः न सन्ति ।

—सर्व० अ ५ । सू ११

(ख) एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे परमाणोरवगाहः ।

—सर्व० अ ५ । सू १४

(ग) अणोः प्रदेशमात्रत्वाद् द्वितीयादयोऽस्य प्रदेशा न सन्तीत्यप्रदेशोऽणुः ।

—सर्व० अ ५ । सू १

(७) अकलंदेव :—

रूपरसगंधस्पर्शयुक्ता हि परमाणवः एकगुणरूपादिपरिणताः ।

—राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४

(८) विद्यानंदि :—

(क) आत्मादिमात्ममध्यं च तथात्मान्तमतीन्द्रियम् ।
अविभागं विजानीयात् परमाणुमनंशकम् ॥

—श्लोवा० अ ५ । सू २५ में उद्धृत

(ख) स्पर्शरसगंधवर्णवंतोऽणवः ।

—श्लोवा० अ ५ । सू २५

(९) कुन्दकुन्दाचार्य :—

(क) सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू ।
सो सस्सदो असद्दो एक्को अविभागी मुत्तिभवो ॥

—पंच० गा ७७

(ख) अत्तादि अत्तमज्झं, अत्तंतं णेव इंदिए गेज्झं ।
अविभागी जं दव्वं, परमाणू तं विआणाहि ॥

—नियम० अधि १ । गा २६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१०) श्रुतसागरसूरि :—

अणोः एकस्य परमाणोः प्रदेशाः न भवन्ति ।

—तत्त्ववृत्ति० अ ५ सू ११

(११) हेमचंद्राचार्य :—

परमाणुः पुनरप्रदेश इति न केनचिज्जन्यते ।

—विशेभा० गा १७३७ । टीका

·०६·३ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई स्कंध की परिभाषा

(१) पूज्यपादाचार्य :—

(क) द्वयोरेकत्रोभयत्र च बद्धयोरबद्धयोश्च । त्रयाणामप्येकत्र द्वयोस्त्रिषु च बद्धानामबद्धानां च । एवं संख्येयासंख्येयानन्तप्रदेशानां स्कंधानामेकसंख्येयासंख्येयप्रदेशेषु लोकाकाशेऽवस्थानं प्रत्येतव्यम् ।

—सर्वं० स ५ । सू १४

(ख) स्थूलभावेन ग्रहणनिक्षेपणादिव्यापारस्कंधनात्स्कंधा इति संज्ञायन्ते । रूढौ क्रिया क्वचित्सती उपलक्षणत्वेनाश्रयते इति ग्रहणादिव्यापारायोग्येष्वपि द्व्यणुकादिषु स्कंधाख्या प्रवर्तते ।

—सर्व० अ ५ । सू २५

(२) विद्यानंदि :—

स्थौल्यात् ग्रहणनिक्षेपणादिव्यापारास्कन्दनात् स्कंधा, उभयत्र जात्यपेक्षा बहुवचनम् । अणुजात्याधाराणां स्कंधजात्याधाराणां तावन्तरतज्जातिभेदानामनन्तत्वात् । अणुस्कंधा इत्यस्तु लघुत्वादिति चेन्नोभयत्र संबंधार्थत्वाद् भेदकरणस्य ।

—श्लोवा० अ ५ । सू २५

(३) मलयगिरि :—

(क) 'स्कंधाः' स्कन्दन्ति शुष्यन्ति धीयन्ते च—पुष्यन्ते पुद्गलानां विघटनेन चटनेन चेति स्कंधाः, 'पृषोदरादय' इति रूपनिष्पत्तिः ।

—पण्ण० प १ । सू ६ । टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०७ पुद्गल के भेद

·०७ १ एक भेद

एगे परमाणू ।

टीका—'एगे परमाणु' स च स्वरूपतः एक एवान्यथा परमाणुरेवासौ न स्यादिति। अथवा समयादीनां प्रत्येकमनन्तानामपि तुल्यरूपापेक्षयैकत्वमिति। यथा परमाणोस्तथाविधैकत्वपरिणामविशेषादेकत्वं भवति तथा तत एवानन्ताणुमयस्कंधस्यापि स्यादिति दर्शयन् ।

—ठाण० स्था २। सू ४५। पृ० १८३

परमाणु स्वरूपतः एक ही है। यदि ऐसा नहीं माना जाय तो—यह 'परमाणु'—ऐसा नाम ही नहीं होता है। अथवा समय, प्रदेश और परमाणु अनंत होने पर भी तुल्य रूप की अपेक्षा उनमें एकपन है। जिस प्रकार तथाविध एकत्व परिणाम विशेष से परमाणु का एकपन होता है उसी प्रकार उसी कारण से अनंत परमाणुमय स्कंध का एकपन होता है।

·०७ २ दो भेद

·०७ २·१ सूक्ष्म परमाणु—व्यावहारिक परमाणु

परमाणू दुविहे पन्नत्ते, तं जहा सुहुमे अ वावहारिए अ।

—जंबू० वक्ष २। सू १९। पृ० ५४३

से किं तं परमाणू ? परमाणू दुविहे पन्नत्ते, तं जहा—सुहुमे य १ वावहारिए य २।

—अणुओ० सू ३४०। पृ० ११२४-२५

परमाणु के दो भेद हैं—यथा—सूक्ष्म परमाणु और व्यावहारिक परमाणु।

·०७·२·२ कारण परमाणु—कार्य परमाणु

परमाणू चेव दुवियप्पो।

—नियम० अ २। गा २० पूर्वार्ध

परमाणु दो प्रकार के हैं—यथा—कारण परमाणु और कार्य परमाणु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धाउचउक्कस्स पुणो, जं हेऊ कारणंति तं णेयो।
खंधाणं अवसाणं, णादव्वो कज्जपरमाणू।।

—नियम० अ २। गा २५

जो चार धातु का हेतु है वह कारण परमाणु है तथा स्कंधों का अंतिम भाग—कार्य परमाणु है।

पृथ्वी, जल, तेज और वायु—ये चार धातु हैं। जो इन चार धातुओं का कारण है वह कारण परमाणु कहलाता है अर्थात् जिन परमाणुओं के सम्बन्ध से ये चार धातुएँ परिणत होती हैं, स्कंध रूप दीखती हैं—वे परमाणु—कारण परमाणु कहलाते हैं।

गलते हुए पुद्गल द्रव्य-स्कंधों में अन्तिम अवस्था में रहा हुआ जो परमाणु है वह कार्य परमाणु है।

·०७·२·३ भिन्न पुद्गल तथा अभिन्न पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, त जहा—भिन्ना चेव अभिन्ना चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—भिन्न पुद्गल तथा अभिन्न पुद्गल।

टीका—'दुविहे' त्यादि भिन्नाः—विघटिता इतरे त्वभिन्नाः।

भिन्न अर्थात् अलग हुए पुद्गल तथा अभिन्न अर्थात् अलग नहीं हुए पुद्गल।

·०७·२·४ भिदुरधर्मी पुद्गल तथा नोभिदुरधर्मी पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तं जहा—भेउरधम्मा चेव नोभेउरधम्मा चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—भिदुरधर्मी पुद्गल तथा नोभिदुरधर्मी पुद्गल।

टीका—स्वयमेव भिद्यत इति भिदुरं भिदुरत्वं धर्मो येषां ते भिदुरधर्माणः अन्तर्भूतभावप्रत्ययोऽयं, प्रतिपक्षः प्रतीत एवेति।

जो स्वयं ही भेदा जाता है वह भिदुर है अर्थात् जिसका भिदुरधर्म है वह भिदुरधर्मी है। इस वाक्य में भावप्रत्यय अन्तर्भूत है। भिदुरधर्म से विपरीत नोभिदुरधर्म अर्थात् जो स्वयं नहीं भेदा जाता है वह नोभिदुरधर्मी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०७·२·५ परमाणुपुद्गल तथा नोपरमाणुपुद्गल (स्कंध)

(क) दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—परमाणुपोग्गला चेव नोपरमाणु-पोग्गला चेव।

टीका—परमाश्च ते अणवश्चेति परमाणवः, नोपरमाणवः—स्कंधाः।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

(ख) (पुद्गलाः) अणवः स्कंधाश्च।

× × × तत्राणवोऽबद्धाः स्कंधास्तु बद्धा एवेति।

—तत्व० अ ५। सू २५

(ग) अणुखंधवियप्पेण दु, पोग्गलदव्वं हवेइ दुवियप्पा।

—नियम० अ २। गा २० पूर्वार्ध

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—परमाणुपुद्गल तथा नोपरमाणुपुद्गल (स्कंध)।

जो अत्यन्त सूक्ष्म होता है उसे परमाणु—अणुपुद्गल कहते हैं और स्कंधों को नोपरमाणुपुद्गल कहते हैं। परमाणु अबद्ध होते हैं तथा स्कंध बद्ध होते हैं।

·०७·२·६ सूक्ष्म पुद्गल तथा बादर पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—सुहुमा चेव बायरा चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल दो प्रकार के होते हैं, यथा—सूक्ष्मपुद्गल तथा बादरपुद्गल।

टीका—सूक्ष्माः येषां सूक्ष्मपरिणामः शीतोष्णस्निग्धरूक्षलक्षणाश्चत्वार एवं च स्पर्शास्ते च भाषादयः, बादरास्तु येषां बादरः परिणामः पंचादयश्च स्पर्शास्ते चौदारिकादयः।

जिसका सूक्ष्मपरिणाम है तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष लक्षणविशिष्ट चार ही स्पर्शवाला है वह सूक्ष्म पुद्गल है, यथा—भाषादि (चार) वर्गणा के पुद्गल सूक्ष्म हैं और जिसका बादर परिणाम है तथा पाँच आदि स्पर्शवाला है वह बादर पुद्गल है। औदारिकादि वर्गणा के पुद्गल बादर हैं।

·०७·२·७ बद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल तथा नोबद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—बद्धपासपुट्ठा चेव नोबद्धपासपुट्ठा चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—बद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल तथा नोबद्धपार्श्वपृष्ट पुद्गल।

टीका—पार्श्वेन स्पृष्टा देहत्वचा छुप्ता रेणुवत्पार्श्वस्पृष्टास्ततो बद्धाः—गाढतरं श्लिष्टाः तनौ तोयवत् पार्श्वस्पृष्टाश्च ते बद्धाश्चेति राजदन्तादित्वाद् बद्धपार्श्वस्पृष्टाः, आह च—

'पुट्ठं रेणुं व तणुंमि बद्धमप्पीकयं पएसेहिं' ति, एते च घ्राणेन्द्रियादिग्रहणगोचराः, तथा नो बद्धाः किन्तु पार्श्वस्पृष्टा इत्येकपदप्रतिषेधः श्रोत्रेन्द्रियग्रहणगोचराः, यत उक्तम्—पुट्ठं सुणेइ सद्दं रूवं पुण पासई अपुट्ठं तु। गंधं रसं च फासं च बद्धपुट्ठं वियागरे। त्ति, उभयपदनिषेधे श्रोत्राद्यविषयाश्चक्षुर्विषयाश्चेति, इयमिन्द्रियापेक्षया बद्धपार्श्वस्पृष्टता पुद्गलानां व्याख्याता, एवं जीवप्रदेशापेक्षया परस्परापेक्षया च व्याख्येयेति।

शरीर की चमड़ी से रज की तरह स्पर्शित किये हुए—पार्श्वस्पृष्ट, उनसे बद्ध हुए—शरीर में पानी की तरह अतिशय रूप में मिले हुए; पार्श्वस्पृष्ट रूप बंधे हुए—बद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल।

यहाँ राजदंतादिगण में पठित होने से 'बद्ध' शब्द का पूर्व प्रयोग किया गया है—कहा है—

स्पृष्ट—शरीर में रज की तरह स्पर्श किये हुए हैं और बद्ध—प्रदेशों के द्वारा स्वयंकृत हैं अर्थात् उसके साथ मिले हुए हैं। ये बद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल घ्राणेन्द्रियादि के ग्रहणगोचर हैं तथा नोबद्धा—नहीं बंधे हुए हैं परन्तु पार्श्वस्पृष्ट अर्थात् बद्ध पद के निषेधवाले पुद्गल—श्रोत्रेन्द्रिय के ग्रहणगोचर हैं। आवश्यक सूत्र में कहा गया है—

श्रोत्रेन्द्रिय स्पृष्ट शब्द को सुनती है, चक्षुरिन्द्रिय अस्पृष्ट रूप को देखती है, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय क्रमशः बद्धस्पृष्ट गंध, रस, स्पर्श को जानती है। बद्धस्पृष्ट और पार्श्वस्पृष्ट—इन दो पदों के निषेध में श्रोत्रादि इन्द्रियों का (उक्त पुद्गल) विषय नहीं होता है परन्तु चक्षुरिन्द्रिय का विषय होता है।

इन्द्रिय की अपेक्षा—बद्धपार्श्वस्पृष्टता रूप पुद्गलों की व्याख्या की गई है। इसी प्रकार जीव के प्रदेश की अपेक्षा और अन्यान्य की अपेक्षा व्याख्या करने योग्य है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

विश्लेषण—गंधादि द्रव्यों की अपेक्षा भाषा के द्रव्य सूक्ष्म हैं, विशेष संख्यावाले और वासित करनेवाले हैं। श्रोत्रेन्द्रिय विषय को ग्रहण करने में घ्राणादि इन्द्रियों की अपेक्षा विशेष पटु होने के कारण स्पर्शमात्र से ग्रहण करती है। गंधादि द्रव्य भाषादि द्रव्य की अपेक्षा स्थूल, अल्प और अवासित स्वभाव वाले हैं तथा विषय को ग्रहण करने में श्रोत्रेन्द्रिय की अपेक्षा घ्राणादि इन्द्रियाँ अपटु हैं अतः बद्धस्पृष्ट होने से ही ग्रहण करती हैं।

•०७·२·८ पर्यायातीत पुद्गल तथा अपर्यायातीत पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—परियादितच्चेव अपरियादितच्चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—पर्यायातीत पुद्गल तथा अपर्यायातीत पुद्गल।

टीका—'परियाइय' त्ति विवक्षितं पर्यायमतीताः पर्यायातीताः पर्यात्ता वा—सामस्त्यगृहीताः कर्मपुद्गलवत्, प्रतिषेधः सुज्ञानः।

विवक्षित पर्याय को छोड़े हुए पुद्गलों को पर्यायातीत पुद्गल कहा जाता है अथवा कर्मपुद्गल की तरह समस्त रूप में ग्रहण किये हुए पुद्गलों को पर्यायातीत पुद्गल कहा जाता है। समस्त रूप में ग्रहण नहीं किये हुए पुद्गलों को अपर्यायातीत पुद्गल कहा जाता है।

•०७·२·९ आत्त पुद्गल तथा अनात्त पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तं जहा—अत्ता चेव अणत्ता चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—आत्त पुद्गल तथा अनात्त पुद्गल।

टीका—आत्ताः गृहीताः स्वीकृता जीवेन परिग्रहमात्रतया शरीरादितया वा।

आत्ता—अर्थात् जीव के द्वारा जो पुद्गल परिग्रह मात्र रूप में ग्रहण किये जाते हैं वे आत्त पुद्गल हैं अथवा शरीरादि रूप में ग्रहण किये हुए पुद्गलों को आत्त पुद्गल कहा जाता है। इसके विपरीत अनात्त पुद्गल जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'०७'२'१० इष्ट पुद्गल तथा अनिष्ट पुद्गल

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तं जहा—इट्ठा चेव अणिट्ठा चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२ पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—इष्ट पुद्गल तथा अनिष्ट पुद्गल।

टीका—× × ×। इष्यन्ते स्म अर्थक्रियार्थिभिरितीष्टाः। × × ×।

अर्थ क्रिया के अभिलाषियों से इच्छित पुद्गल इष्ट पुद्गल कहे जाते हैं। इसके विपरीत अनिष्ट पुद्गल जानना चाहिए। अर्थात् अनिच्छित पुद्गल को अनिष्ट पुदगल कहा जाता है।

'०७ २'११ कांत पुद्गल तथा अकांत पुद्गल

एवं कंता (दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तं जहा—कंता चेव अकंता चेव)।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—कांत पुद्गल तथा अकांत पुद्गल।

टीका—× × ×। कान्ताः कमनीया विशिष्टवर्णादियुक्ताः। × × ×।

सुन्दर और विशिष्ट वर्ण आदि से युक्त पुद्गल—कांत पुद्गल कहलाते हैं। इसके विपरीत अकांत पुद्गल कहलाते हैं। अर्थात् विशिष्ट वर्ण आदि से रहित पुद्गल—अकांत पुद्गल कहलाते हैं।

'०७ २'१२ प्रिय पुद्गल तथा अप्रिय पुद्गल

एवं × × × पिया (दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—पिया चेव अपिया चेव)।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—प्रिय पुद्गल तथा अप्रिय पुद्गल।

टीका—× × ×। प्रियाः—प्रीतिकराः—इन्द्रियाह्लादकाः। × × ×।

प्रिय—प्रीतिकर—इन्द्रियों को आह्लाद करने वाले पुद्गल को प्रिय पुद्गल कहते हैं तथा इसके विपरीत—अप्रीतिकर और इन्द्रियों को अनाह्लाद करनेवाले पुद्गलों को अप्रिय पुद्गल कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०७·२·१३ मनोज्ञ पुद्गल तथा अमनोज्ञ पुद्गल

एवं × × × मणुन्ना (दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तं जहा—मणुन्ना चेव अमणुन्ना चेव)।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—मनोज्ञ पुद्गल तथा अमनोज्ञ पुद्गल।

टीका—। मनसा ज्ञायन्ते शोभना एत इत्येवंविकल्पमुत्पादयन्तः शोभनत्वप्रकर्षाद्ये ते मनोज्ञाः। × × ×।

सुन्दरपन के प्रकर्ष से—जो मन से—ये सब जाने जाते हैं—ऐसे विकल्प को उत्पन्न करनेवाले पुद्गल—मनोज्ञ पुद्गल कहलाते हैं। इसके विपरीत अमनोज्ञ पुद्गल जानना चाहिए।

·०७·२·१४ मनोरम (मनाम) तथा अमनोरम (अमनाम) पुद्गल

एवं × × × मणामा (दुविहा पोग्गला पन्नता, तंजहा—मणामा चेव अमणामा चेव।)

ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२। पृ० १९२

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—मनोरम पुद्गल तथा अमनोरम पुद्गल।

टीका— × = ×। मनसो मता—वल्लभाः सर्वस्याप्युपभोक्तुः सर्वदा च शोभनत्वप्रकर्षादेव निरुक्तविधिना मणामा। × × ×।

सुन्दर रूप के प्रकर्ष से जो सब उपभोग करनेवाले—मन को जो सदा वल्लभकारी पुद्गल हों वे मनाम पुद्गल कहलाते हैं। इसके विपरीत अमनाम पुद्गल कहलाते हैं।

·०७·३ तीन भेद

प्रयोगपरिणत—मिश्रपरिणत—विस्रसापरिणत पुद्गल।

कइविहा णं भंते ! पोग्गला पन्नत्ता ? गोयमा ! तिविहा पोग्गला पन्नत्ता, तं जहा—पओगपरिणया, मीसापरिणया, वीससापरिणया।

—ठाण० स्था ३। उ ३। सू १८६। पृ० २१५

—भग० श ८। उ १। प्र १। पृ० ५३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—प्रयोगपरिणताः—जीवव्यापारेण तथाविधपरिणतिमुपनीताः, यथा पटादिषु कर्म्मादिषु वा, 'मीस' त्ति प्रयोगविस्रसाभ्याम् परिणताः, यथा—पटपुद्गलाः एवं प्रयोगेण पटतया विस्रसापरिणामेन चाभोगेऽपि पुराणतयेति, विस्रसा—स्वभावः तत्परिणता अभ्रेन्द्रधनुरादिवदिति।

—ठाण० स्था ३ । उ ३ । सू १८६ । टीका

पुद्गल के तीन प्रकार हैं, यथा—(१) प्रयोगपरिणत पुद्गल—जो जीव के व्यापार से तथाविध परिणति को प्राप्त हुए प्रयोग परिणत पुद्गल हैं। जैसे—वस्त्रादि में अथवा कर्मादि में जीव के व्यापार की सापेक्षता है।

(२) मिश्रपरिणत पुद्गल—प्रयोग और स्वभाव दोनों के मिश्रण से परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल मिश्रपुद्गल कहलाते हैं। जैसे—वस्त्र के पुद्गल ही प्रयोग परिणाम से वस्त्र रूप से और विस्रसा परिणाम से भोग नहीं करने पर भी जीर्ण (पुराने) रूप से परिणत होते हैं, अतः इस प्रकार के पुद्गलों को मिश्रपरिणत पुद्गल कहते हैं।

(३) विस्रसापरिणत—स्वभाव से परिणत हुए बादल, इन्द्रधनुषादि पुद्गलों को विस्रसापरिणत पुद्गल कहते हैं।

·०७४ चार भेद

(क) जे रूवी (अजीव) ते चउव्विहा पन्नत्ता तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला।

—भग० श २ । उ १० । प्र ६६ । पृ० ४३५

(ख) से किं तं रूविअजीवाभिगमे ? रूविअजीवाभिगमे चउव्विहे पन्नत्ते, तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला।

—जीवा० प्रति १ । सू ५ । पृ० १०५

(ग) से किं तं रूविअजीवपन्नवणा ? रूविअजीवपन्नवणा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला।

—पण्ण० प १ । सू ६ । पृ० २६५

(घ) खंधा य खंधदेसा य, तप्पएसा तहेव य।
परमाणुणो य बोद्धव्वा, रूविणो य चउव्विहा॥

—उत्त० अ ३६ । गा १०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(च) रूवीअजीवदव्वा णं भंते। कइविहा पन्नत्ता? गोयमा! चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला।

—अणुओ० । सू ४०२ । पृ० ११४२

(छ) खंधा य खंधदेसा खंधपदेसा य होंति परमाणू।
इदि ते चदुव्वियप्पा पुग्गलकाया मुणेयव्वा॥

—पंच० गा ७४

(ज) खंध देस पएसा, परमाणू पुग्गला चउहरूवी।

—कर्म० भाग १ । गा १५ । टीका

पुद्गल के चार प्रकार हैं. स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश और परमाणु।

·०७·५ पांच भेद

(क) रूविअजीवपन्नवणा चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला। ते समासओ पंचविहा पन्नत्ता तंजहा—वण्णपरिणया, गंधपरिणया, रसपरिणया, फासपरिणया, संठाण-परिणया।

—पण्ण० प १ । सू ६, ७ । पृ० २६५
—जीवा० प्रति १ । सू ५ । पृ० १०५

स्कन्धादि पुद्गल यथायोग्य रूप से—संक्षेप में पांच प्रकार के कहे गये हैं। यथा—(१) वर्णपरिणत—वर्ण रूप में परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल—वर्णपरिणाम वाले; (२) गंधपरिणत—गंध रूप में परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल—गंध परिणाम वाले; (३) रस परिणत—रस रूप में परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल—रस परिणाम वाले; (४) स्पर्शपरिणत—स्पर्श रूप में परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल—स्पर्श परिणाम वाले; (५) संस्थान परिणत—संस्थान रूप में परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल—संस्थान परिणाम वाले।

·०७·६ छः भेद

·०७·६·१ पृथ्वी-जल आदि भेद

(क) पुढवी जल च छाया चउरिंदियविसयकम्मपरमाणू।
छव्विहभेयं भणियं पोग्गलदव्वं जिणवरेहिं॥

—गोजी० गा ६०१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) पुढवी जलं च छाया चउरिंदियविसयकम्मपाओगा ।
कम्मातीदा येवं छब्भेया पोग्गला होंति ॥

—पंच० गा ७६ । टीका में उद्धृत

(ग) × × × तं च रूवि-अजीवदव्वं छव्विहं पुढवि-जल-छाया-चउरिंदियविसयकम्मक्खंधपरमाणू चेदि ।

—षट्० खं० १ । २ । सू १ । टीका । पु ३ । पृ० २-३

(घ) "पृथिवी सलिलं छाया चतुरिन्द्रयविषयकर्मपरमाणुः ।
षड्विधभेदं भणितं पुद्गलतत्त्वं जिनेंद्रेण" इत्यागमेन ॥

—श्लो० अ ५ । सू ३४ । टीका में उद्धृत

पुद्गल द्रव्य के छः भेद हैं, यथा--पृथ्वी, जल, छाया, चतुरिन्द्रिय विषय, कर्म और परमाणु ।

·०७ ६·२ स्थूल-स्थूल आदि भेद

(क) अइथूलथूल थूलं थूलंसुहुमं च सुहुमथूलं च ।
सुहुमं अइसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेयं ॥

—नियम० अधि २ । गा २२

(ख) बादरबादर बादर बादरसुहमं च सुहमथूलं च ।
सुहमं च सुहमसुहमं च धरादियं होदि छब्भेयं ॥

—गोजी० गा ६०२

(ग) पुद्गलद्रव्यं षड्विधं बादरबादर-बादर-बादरसूक्ष्म-सूक्ष्मबादर-सूक्ष्म-सूक्ष्मसूक्ष्मश्चेति ।

—कसापा० गा १३-१४ । टीका । भा १ । पृ० २१५

पुद्गलद्रव्य छः प्रकार का है—यथा—बादरबादर, बादर, बादरसूक्ष्म, सूक्ष्मबादर सूक्ष्म और सूक्ष्मसूक्ष्म ।

·०७·७ उन्नीस भेद

तत्थ मुत्ता एगूणवीसदिविधा । तंजहा—एयपदेसियवग्गणा संखेज्ज-पदेसियवग्गणा असंखेज्जपदेसियवग्गणा अणंतपदेसियवग्गणा आहारवग्गणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगहणवग्गणा तेजइयसरीरवग्गणा अगहणवग्गणा भासावग्गणा अगहण-वग्गणा मणोवग्गणा अगहणवग्गणा कम्मइयवग्गणा धुवखंधवग्गणा सांतर-णिरंतरवग्गणा धुवसुण्णवग्गणा पत्तेयसरीरवग्गणा धुवसुण्णवग्गणा बादर-णिगोदवग्गणा धुवसुण्णवग्गणा सुहुमणिगोदवग्गणा धुवसुण्णवग्गणा महा-खंधवग्गणा चेदि।

एत्थ तेवीसवग्गणासु चदुसु धुवसुण्णवग्गणासु अवणिदासु एगूणवीस-दिविधा पोग्गला होंति। पादेक्कमणंतभेदा।

—षट्० खं० ५। ५। सू ८२। टीका। पु १३। पृ० ३५१-२

मूर्त पुद्गल उन्नीस प्रकार के हैं। यथा—एकप्रदेशी वर्गणा, संख्यातप्रदेशी वर्गणा, असंख्यातप्रदेशी वर्गणा, अनन्तप्रदेशी वर्गणा, आहारवर्गणा, अग्रहणवर्गणा, तैजसशरीरवर्गणा, अग्रहणवर्गणा, भाषावर्गणा, अग्रहणवर्गणा, मनोवर्गणा, अग्रहणवर्गणा, कार्मणशरीरवर्गणा, ध्रुवस्कंधवर्गणा, सान्तरनिरंतरवर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, प्रत्येक-शरीरवर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, बादरनिगोदवर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, महास्कंधवर्गणा।

इन तेईस वर्गणाओं में से ध्रुवशून्यवर्गणाओं को निकाल देने पर उन्नीस प्रकार के पुद्गल होते हैं। प्रत्येक वर्गणा के अनन्त भेद होते हैं।

·०७ ८ तेईस भेद

अणुसंखासंखेज्जाणंता य अगेज्जगेहिं अंतरिया।
आहारतेयभासामणकम्मइया धुववखंधा॥
सांतरणिरंतरेण य सुण्णा पत्तेयदेहधुवसुण्णा।
बादरणिगोदसुण्णा सुहुमणिगोदा णभो महक्खंधा॥

—गोजी० गा ५९३-९४

वर्गणा की अपेक्षा समास में पुद्गलों के तेईस भेद होते हैं। सजातीय वस्तुओं के समुदाय को वर्गणा कहते हैं।

यथा—(१) अणुवर्गणा, (२) संख्याताणुवर्गणा, (३) असंख्याताणुवर्गणा, (४) अनन्ताणुवर्गणा, (५) आहारवर्गणा, (६) अग्राह्यवर्गणा, (७) तैजसवर्गणा, (८) अग्राह्यवर्गणा, (९) भाषावर्गणा, (१०) अग्राह्यवर्गणा, (११) मनोवर्गणा, (१२) अग्राह्यवर्गणा, (१३) कार्मणवर्गणा, (१४) ध्रुववर्गणा, (१५) सांतर-निरंतर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्गणा, (१६) शून्यवर्गणा, (१७) प्रत्येकशरीरवर्गणा, (१८) ध्रुवशून्यवर्गणा, (१९) बादरनिगोदवर्गणा, (२०) शून्यवर्गणा, (२१) सूक्ष्मनिगोदवर्गणा, (२२) नभोवर्गणा और (२३) महास्कंधवर्गणा।

·०७·९ छब्बीस भेद

परमाणुसंखऽसंखाऽ—णंतपएसा अभव्वणंतगुणा।
सिद्धाणणंतभागो, आहारगवग्गणा तितणू॥
अग्गहणंतरियाओ, तेयगभासामणे य कम्मे य।
धुवअधुवअच्चिता — सुन्नाचउअंतरेसुप्पिं॥
पत्तेगतणुसु बायर—सुहुमनिगोए तहा महाखंधे।
गुणनिप्फन्नसनामो, असंखभागंगुलवगाहो॥

—कर्मप्र० गा १८ से २०

परमाणु, संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी तथा अनंतप्रदेशी वर्गणा—इन चारों को टीकाकार ने 'अग्रहणवर्गणा' में ग्रहण किया है। आहारवर्गणा में औदारिक, वैक्रिय, आहारक—तीनों शरीरों को लिया गया है तथा इनके अंतर में अग्रहणवर्गणा होती है। इसके बाद तैजस, भाषा, मन तथा कार्मणवर्गणा और इनके अन्तर में अग्रहणवर्गणा होती है। इसके पश्चात् ध्रुवाचित्त, अध्रुवाचित्त वर्गणा होती है, अध्रुवाचित्तवर्गणा के बाद ध्रुवशून्यवर्गणा होती है। इसके बाद प्रत्येकशरीरी, बादरनिगोद, सूक्ष्मनिगोद तथा महास्कंधवर्गणा होती है तथा इनके अंतर में ध्रुवशून्यवर्गणा होती है।

टीकाकार ने भाषा और अग्रहणवर्गणा के बाद आनपान तथा अग्रहणवर्गणा का वर्णन किया है।

श्वेताम्बर-दिगम्बर मतानुसार पुद्गल वर्गणाओं का चार्ट

	श्वेताम्बर			दिगम्बर
१	अग्रहण	परमाणु	१	परमाणु
		संख्यातप्रदेशी	२	संख्यातप्रदेशी
		असंख्यातप्रदेशी	३	असंख्यातप्रदेशी
		अनंतप्रदेशी	४	अनंतप्रदेशी
२	औदारिक			
३	अग्रहण			

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४	वैक्रिय		
५	अग्रहण		
६	आहारक	५	आहारवर्गणा
७	अग्रहण	६	अग्रहण
८	तैजस	७	तैजस
९	अग्रहण	८	अग्रहण
१०	भाषा	९	भाषा
११	अग्रहण	१०	अग्रहण
१२	आनपान		
१३	अग्रहण		
१४	मन	११	मन
१५	अग्रहण	१२	अग्रहण
१६	कार्मण	१३	कार्मण
१७	ध्रुवाचित्त	१४	ध्रुव
१८	अध्रुवाचित्त (सांतर-निरंतर)	१५	सांतर-निरंतर
१९	ध्रुवशून्य	१६	शून्य
२०	प्रत्येकशरीरी	१७	प्रत्येकशरीरी
२१	ध्रुवशून्य	१८	ध्रुवशून्य
२२	बादरनिगोद	१९	बादरनिगोद
२३	ध्रुवशून्य	२०	शून्य
२४	सूक्ष्मनिगोद	२१	सूक्ष्मनिगोद
२५	ध्रुवशून्य	२२	नभ
२६	अचित्त महास्कंध	२३	महास्कंध

·०७·१० पाँच सौ तीस भेद

(क) वर्ण की अपेक्षा पुद्गल में गंध-रस-स्पर्श-संस्थान = कुल १०० भेद

वण्णओ जे भवे किण्हे भइए से उ गंधओ।
रसओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
वण्णओ जे भवे नीले, भइए से उ गंधओ।
रसओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
वण्णओ लोहिए जे उ, भइए से उ गंधओ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ वि य॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वण्णओ पीयए जे उ, भइए से उ गंधओ।
रसओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
वण्णओ सुक्किले जे उ, भइए से उ गंधओ।
रसओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा २३ से २७। पृ० ३२२

जे वण्णओ कालवण्णपरिणया ते गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, सठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि।२०।

जे वण्णओ नीलवण्णपरिणया ते गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि।२०।

जे वण्णओ लोहियवण्णपरिणया ते गधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वि वट्टसंठाणपरिणया वि त्रंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया ।२०।

जे वण्णओ हालिद्दवण्णपरिणया ते गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भि-गंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया कि कसाय-रसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुय-फासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफास-परिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि ।२०।

जे वण्णओ सुक्किलवण्णपरिणया ते गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भि-गंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसाय-रसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुय-फासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफास-परिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि ।२०।१००

जो पुद्गल काले वर्ण का है उसमें गंध, रस, स्पर्श की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल वर्ण से काले वर्ण रूप में परिणत होते हैं वे गंध से सुरभि सुगंध रूप में और दुरभि—दुर्गन्ध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटुरस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश स्पर्श रूप में, मृदु स्पर्श रूप में, गुरु स्पर्श रूप में, लघु स्पर्श रूप में, शीत स्पर्श रूप में, उष्ण स्पर्श रूप में, स्निग्ध स्पर्श रूप में रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल संस्थान रूप में, वृत्त—वर्तुल संस्थान रूप में, त्रिकोण संस्थान रूप में, चतुष्कोण संस्थान रूप में और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं।

इस प्रकार सर्व मिलकर बीस भंग कृष्ण वर्ण रूप में परिणत हुए पुद्गलों के होते हैं। [२०]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो पुद्गल नीले वर्ण का है उसमें गंध, रस, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल वर्ण से नील वर्ण रूप में परिणत होते हैं वे गंध से सुरभि गन्ध रूप में और दुरभि गंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से कटु, तिक्त, कषाय, आम्ल और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र—त्रिकोण, चतुरस्र—चतुष्कोण और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो लाल वर्ण के पुद्गल हैं उनमें गंध, रस, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल वर्ण से लोहित—रक्त वर्ण रूप में परिणत होते हैं वे गंध से सुरभि गंध रूप में और दुरभि गंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो पीत वर्ण के पुद्गल हैं उनमें गंध, रस, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल वर्ण से हारिद्र—पीला वर्ण रूप में परिणत होते हैं वे गंध से सुरभि गन्ध और दुरभिगन्ध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त कटु कषाय, आम्ल और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु गुरु, लघु. शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वर्तुल, त्रिकोण, चतुष्कोण और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो शुक्ल वर्ण के पुद्गल हैं उनमें गंध, रस, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल वर्ण से शुक्ल वर्ण रूप में परिणत होते हैं वे गंध से सुरभिगंध और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से कटु, तिक्त, कषाय, आम्ल और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

इस प्रकार २० भंग कृष्ण वर्ण रूप में परिणत हुए पुद्गलों के होते हैं, इसी प्रकार नील वर्ण रूप में, रक्तवर्ण रूप में, पीत वर्ण रूप में, शुक्ल वर्ण रूप में परिणत पुद्गलों के भी बीस-बीस भंग होते हैं। इस प्रकार पाँच वर्णों के १०० भंग होते हैं।

(ख) गंध की अपेक्षा पुद्गल में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श = कुल ४६ भेद

गंधओ जे भवे सुब्भी, भइए से उ वण्णओ।
रसओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंधओ जे भवे दुब्भी, भइए से उ वण्णओ।
रसओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा २८-२९। पृ० ३२२

जे गंधओ सुब्भिगंधपरिणया ते वण्णओ ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि णीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि णिद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि।२३।

जे गंधओ दुब्भिगंधपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि।२३।४६।

—पण्ण० प १। सू १०। पृ० ६-७

जो सुगन्धित पुद्गल हैं उनमें वर्ण, रस, स्पर्श और संस्थान की भजना होती है। अर्थात् जो पुद्गल गंध से सुरभि गंध रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से कृष्ण, नील, रक्त, पीत और शुक्ल रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल और मधुर रस में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार सर्व मिलकर तेईस भंग (५ वर्ण की अपेक्षा, ५ रस की अपेक्षा, ८ स्पर्श की अपेक्षा, ५ संस्थान की अपेक्षा) सुगंध रूप में परिणत हुए पुद्गलों के होते हैं।

जो दुर्गन्ध वाले द्रव्य हैं उनमें वर्ण, रस, स्पर्श और संस्थान की भजना होती है। अर्थात् जो पुद्गल गंध से सुरभि गंध रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से कृष्ण, नील, रक्त, पीत और शुक्ल रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं।

इस प्रकार सर्व मिलकर तेईस भंग दुर्गन्ध में परिणत हुए पुद्गलों के होते हैं। इस प्रकार सुगन्ध और दुर्गन्ध रूप में परिणत हुए पुद्गलों के मोट ४६ भग होते हैं।

(ग) रस की अपेक्षा पुद्गल में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श-संस्थान=कुल १०० भेद

रसओ तित्तए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
रसओ कडुए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
रसओ कसाए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
रसओ अंबिले जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
रसओ महुरए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ फासओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा ३० से ३४। पृ० ३२२-२३

जे रसओ तित्तरसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्ण-परिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्ण-परिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफास-परिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि।२०।

जे रसओ कडुयरसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्ण-परिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्ण-परिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि णिद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाण-परिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाण-परिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि।२०।

जे रसओ कसायरसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्ण-परिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्ण-परिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि।२०।

जे रसओ अंबिलरसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल-वण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया विलुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाण-परिणया वि आययसंठाणपरिणया वि ।२०।

जे रसओ महुररसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्ण-परिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल्लवण्ण-परिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्खफालपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाण-परिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाण-परिणया वि आययसंठाणपरिणया वि ।२०।१००।

—पण्ण० प १ । सू ११ । पृ० ७ ८

जो तिक्त रस वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल रस से तिक्त रस रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील, लोहित, हारिद्र और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गन्ध से सुरभि-गंध रूप में और दुरभि—दुर्गन्ध रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो कटु रस वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल रस से कटु रस रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील, लोहित, हारिद्र और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो कषाय रस वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल रस से कषाय रस रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील, लोहित, हारिद्र और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो आम्ल रस वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल रस से आम्लरस रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में नील, लोहित, हारिद्र और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गन्ध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमण्डल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं।

जो मधुररस वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, स्पर्श और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल रस से मधुर रस रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील, लोहित, हारिद्र और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं।

जिस प्रकार तिक्त रस रूप में परिणत हुए पुद्गलों के बीस भंग होते हैं उसी प्रकार कटु रस रूप में, आम्ल रस रूप में तथा मधुररस रूप में परिणत हुए पुद्गलों के भी बीस-बीस भंग होते हैं। पाँच रसों के कुल १०० भंग होते हैं।

(घ) स्पर्श की अपेक्षा पुद्गल में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श = कुल १८४ भेद

फासओ कक्खडे जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
फासओ मउए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
फासओ गुरुए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
फासओ लहुए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फासओ सीयए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
फासओ उण्हए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
फासओ निद्धए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥
फासओ लुक्खए जे उ, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए संठाणओ वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा ३५ से ४२। पृ० ३२३

जे फासओ कक्खडफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपटिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि।२३।

जे फासओ मउयफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल-वण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्ध-फासपरिणय वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि।२३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे फासओ गरुयफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल-वण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्ध-फासपरिणया वि लुक्खपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आययसंठाणपरिणया वि।२३।

जे फासओ लहुयफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल-वण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्ध-फासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाण-परिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाण-परिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि।२३।

जे फासओ सीयफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल-वण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि निद्ध-फासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि।२३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे फासओ उसिणफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तीत्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि निद्ध-फासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाणपरिणया वि आयतसंठाणपरिणया वि ।२३।

जे फासओ णिद्धफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किल-वण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिगया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाण-परिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससंठाण-परिणया वि आययसंठाणपरिणया वि ।२३।

जे फासओ लुक्खफासपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नील-वण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्कि-लवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि, दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि, संठाणओ परिमंडलसंठाण-परिणया वि वट्टसंठाणपरिणया वि तंससंठाणपरिणया वि चउरंससठाण-परिणया वि आययसंठाणपरिणया वि ।२३।

—पण्ण० प १ । सू १२ । पृ० ८-१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से कर्कश स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में, मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं।

नोट—इस प्रकार जो स्पर्श से कर्कश स्पर्श के परिणाम वाले हैं उनके ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, प्रतिपक्षी स्पर्श के अभाव होने से ६ स्पर्श और ५ संस्थान की अपेक्षा से—सर्व मिलकर २३ भेद होते हैं इसलिए कहा जाता है कि कर्कश स्पर्श के परिणाम वाले पुद्गलों के २३ भंग होते हैं।

जो मृदु (कोमल) स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से मृदु स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नीले वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में तथा दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु, कषाय, आम्ल और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमण्डल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

जो गुरु स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से गुरु स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

जो लघु स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से लघु स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष रूप मे भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

जो शीत स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से शीत स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

जो उष्ण स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से उष्ण स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

जो स्निग्ध स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से स्निग्ध स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभि गंध रूप में और दुरभि गंध रूप में भी परिणत होते हैं। रससे तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत और उष्ण स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

जो रूक्ष स्पर्श वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और संस्थान की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल स्पर्श से रूक्ष स्पर्श रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में और दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रससे तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत और उष्ण स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। संस्थान से परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान रूप में भी परिणत होते हैं। [२३]

इस प्रकार कर्कश स्पर्श रूप में परिणत हुए पुद्गल यावत् रूक्ष स्पर्श रूप में परिणत हुए पुद्गलों के कुल (२३ × ८ = १८४) १८४ विकल्प—भंग होते हैं।

(च) संस्थान की अपेक्षा पुद्गल में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श=कुल १०० भेद

परिमंडलसंठाणे, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए फासओ वि य॥
संठाणओ भवे वट्टे, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए फासओ वि य॥
संठाणओ भवे तंसे, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए फासओ वि य॥
संठाणओ य चउरंसे, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए फासओ वि य॥
जे आययसंठाणे, भइए से उ वण्णओ।
गंधओ रसओ चेव, भइए फासओ वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा ४३ से ४७। पृ० ३२४

जे संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि, लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि निद्धफासपरिणया वि लुक्ख-फासपरिणया वि।२०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे संठाणओ वट्टसंठाणपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि णिद्धफासपरिणया वि लुक्ख-फासपरिणया वि ।२०।

जे संठाणओ तंससंठाणपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि णिद्धफासपरिणया वि लुक्ख-फासपरिणया वि ।२०।

जे संठाणओ चउरंससंठाणपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि णिद्धफासपरिणया वि लुक्ख-फासपरिणया वि ।२०।

जे संठाणओ आययसंठाणपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि नीलवण्णपरिणया वि लोहियवण्णपरिणया वि हालिद्दवण्णपरिणया वि सुक्किलवण्णपरिणया वि, गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि दुब्भिगंधपरिणया वि, रसओ तित्तरसपरिणया वि कडुयरसपरिणया वि कसायरसपरिणया वि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंबिलरसपरिणया वि महुररसपरिणया वि, फासओ कक्खडफासपरिणया वि मउयफासपरिणया वि गरुयफासपरिणया वि लहुयफासपरिणया वि सीयफासपरिणया वि उसिणफासपरिणया वि णिद्धफासपरिणया वि लुक्खफासपरिणया वि ।२०।१००।

—पण्ण० प १ । सू १३ । पृ० ११-१२

जो परिमंडल संस्थान वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल संस्थान से परिमंडल संस्थान रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभि गंध रूप में तथा दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश स्पर्श मृदु स्पर्श रूप में, गुरु स्पर्श रूप में, लघु स्पर्श रूप में, स्निग्ध स्पर्श रूप में, रूक्ष स्पर्श रूप में, शीतल स्पर्श रूप में तथा उष्ण स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो वृत्त संस्थान वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल संस्थान से वृत्त संस्थान रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गन्ध से सुरभिगन्ध रूप में तथा दुरभिगन्ध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुर रस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश स्पर्श रूप में, मृदु स्पर्श रूप में, गुरु स्पर्श रूप में, लघु स्पर्श रूप में, स्निग्ध स्पर्श रूप में, रूक्ष स्पर्श रूप में, शीत स्पर्श रूप में और उष्ण स्पर्श में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो त्र्यस्र संस्थान वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल संस्थान से वृत्त संस्थान रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में तथा दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुररस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश स्पर्श रूप में, मृदु स्पर्श रूप में, गुरु स्पर्श रूप में, लघु स्पर्श रूप में, स्निग्ध स्पर्श रूप में, रूक्ष स्पर्श रूप में, शीत स्पर्श रूप में और उष्ण स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो चतुरस्र संस्थान वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल संस्थान से चतुरस्र संस्थान रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में तथा दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुररस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश स्पर्श रूप में, मृदु स्पर्श रूप में, गुरु स्पर्श रूप में, लघु स्पर्श रूप में, स्निग्ध स्पर्श रूप में, रूक्ष स्पर्श रूप में शीत स्पर्श रूप में और उष्ण स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

जो आयत संस्थान वाले पुद्गल हैं उनमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श की भजना है। अर्थात् जो पुद्गल संस्थान से आयत संस्थान रूप में परिणत होते हैं वे वर्ण से काले वर्ण रूप में, नील वर्ण रूप में, लोहित वर्ण रूप में, हारिद्र वर्ण रूप में और शुक्ल वर्ण रूप में भी परिणत होते हैं। गंध से सुरभिगंध रूप में तथा दुरभिगंध रूप में भी परिणत होते हैं। रस से तिक्त रस रूप में, कटु रस रूप में, कषाय रस रूप में, आम्ल रस रूप में और मधुररस रूप में भी परिणत होते हैं। स्पर्श से कर्कश स्पर्श रूप में, मृदु स्पर्श रूप में, गुरु स्पर्श रूप में, लघु स्पर्श रूप में, स्निग्ध स्पर्श रूप में, रूक्ष स्पर्श रूप में, शीत स्पर्श रूप में और उष्ण स्पर्श रूप में भी परिणत होते हैं। [२०]

नोट—जो संस्थान से परिमण्डल संस्थान रूप में परिणत होते हैं उनके ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस और ८ स्पर्श की अपेक्षा—सर्व मिलकर २० भेद होते हैं। जिस प्रकार परिमण्डल संस्थान रूप में परिणत हुए स्कन्धों के बीस भंग होते हैं उसी प्रकार २० भंग वृत्त संस्थान—वर्तुलकार रूप में परिणत हुए पुद्गलों के, २० भंग त्र्यस्र संस्थान रूप में परिणत हुए पुद्गलों के, २० भंग, चतुरस्र संस्थान रूप में परिणत हुए पुद्गलों के और २० भंग आयत संस्थान रूप में परिणत हुए पुद्गलों के भी होते हैं। सर्व मिलकर सौ भंग होते हैं।

इसी प्रकार वर्ण, गंध, रस, स्पर्श और संस्थान की अपेक्षा— सर्व मिलकर ५३० (पाँच सौ तीस) भंग पुद्गल के होते हैं।

'०७'११ अनेक भेद

रूवी अजीवरासी अणेगविहा पन्नत्ता।

—सम० पइ सम। सू १३७। पृ० २१३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—रूप्यजीवराशिश्चतुर्धा-स्कन्धा देशाः प्रदेशाः परमाणवश्चेति, ते च वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानभेदतः पञ्चविधाः संयोगतोऽनेकविधाः।

रूपी अजीवराशि अर्थात् अजीव पुद्गलों के संयोग की अपेक्षा अनेक भेद होते हैं।

·०७·१२ अनंत भेद

'अणवः स्कंधाश्च'।

टीका—उभयत्र जात्यपेक्षं बहुवचनं—अनन्तभेदा अपि पुद्गला अणु-जात्या स्कंधजात्या च।

—राज० अ ५। सू २५। पृ० ४९१

पुद्गल के अणु जाति तथा स्कंध जाति की अपेक्षा अनंत भेद भी होते हैं।

·पुद्गल पर विवेचन गाथा

·०८·१ **वोच्छं अप्पा-बहुयं दव्व-खेत्त-द्ध-भावओ वा वि।**
अपएस-सपएसाणं पोग्गलाणं समासेणं॥

रत्नसिंहसूरि टीका—द्रव्यतः सप्रदेशानामप्रदेशानां च, क्षेत्रतः सप्रदेशा-नामप्रदेशानां च, 'अद्धा' इति कालतः सप्रदेशानामप्रदेशानां च, भावतः सप्रदेशानामप्रदेशानां च, पुद्गलानामेकाणुकादिद्रव्याणामल्पबहुत्वं संक्षेपेण वक्ष्य इति।

द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से तथा भाव से पुद्गल सप्रदेशी भी होते हैं, अप्रदेशी भी होते हैं। इन सप्रदेशी तथा अप्रदेशी दोनों प्रकार के पुद्गलों का—परमाणु पुद्गल से आरंभ करके सभी पुद्गलों का सप्रदेशत्व तथा अप्रदेशत्व की अपेक्षा अल्प-बहुत्व संक्षेप में वर्णन किया जाता है।

दव्वेणं परमाणू खेत्तेणेगपएसमोगाढा।
कालेणेगसमइया अपएसा पोग्गला होंति॥२॥

रत्नसिंहसूरि टीका—अप्रदेशाः पुद्गला भवन्तीति सर्वत्र योज्यम्। तत्र द्रव्यतः परस्परासंपृक्ताः परमाणवोऽप्रदेशाः पुद्गला भवन्ति १ क्षेत्रत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकनभःप्रदेशव्यापिनोऽप्रदेशाः पुद्गला भवन्ति २ कालत एकसमयस्थित-योऽप्रदेशाः पुद्गला भवन्तीति ३।

परमाणु पुद्गल परस्पर असंपृक्त रहने के कारण द्रव्य की अपेक्षा अप्रदेशी होते हैं, एक आकाशप्रदेश में स्थित पुद्गल क्षेत्र की अपेक्षा अप्रदेशी होते हैं तथा एक समय की स्थितिवाले पुद्गल काल की अपेक्षा अप्रदेशी होते हैं।

भावेणं अपएसा एगगुणा जे हवंति वण्णाई।
ते च्चिय थोवा जं गुणबाहुल्लं पायसो दव्वे ॥३॥

अभयदेवसूरि टीका—वर्णादिभिरित्यर्थः। द्रव्ये प्रायेण द्व्यादिगुणा अनन्तगुणान्ताः कालकत्वादयो भवन्ति। एकगुणकालकत्वादयस्तु अल्पा इति भावः।

रत्नसिंहसूरि टीका—भावत एकगुणाः 'वण्णाई' इति वर्णादिभिः पुद्गला अप्रदेशा भवन्ति ४ अयमर्थः—एकगुणकालकैकगुणपीतकादयो वर्णतः, एकगुणसुरभिप्रभृतयो गन्धतः एकगुणतिक्तप्रभृतयो रसतः, एकगुण-रूक्षैकगुणस्निग्धप्रभृतयः स्पर्शतश्च पुद्गला भावाप्रदेशा भवन्तीत्यर्थः। त एव 'थोवा' इति सर्वस्तोकाः। यतो द्रव्ये प्रायशो गुणाः प्राचुर्येण भवन्तिः अयमर्थः—द्रव्ये प्रायेण द्व्यादिगुणा अनन्तगुणान्ताः कालत्वादयः स्थान-बाहुल्यादनन्तगुणा भवन्ति। एकगुणकालकत्वादयस्त्वेकैकस्थानवर्त्तित्वेनाल्पा इति भावः।

वर्ण-गंध-रस-स्पर्श आदि गुणों की अपेक्षा जो पुद्गल एक गुणवाले होते हैं वे भाव की अपेक्षा अप्रदेशी होते हैं अर्थात् एक गुण काले वर्णवाले ; एक गुण नीले वर्णवाले आदि वर्ण की अपेक्षा ; एक गुण सुगन्धवाले अथवा एक गुण दुर्गन्धवाले—गंध की अपेक्षा ; एक गुण तिक्त रस वाले, एक गुण कटु रस वाले आदि रस की अपेक्षा ; एक गुण रूक्षत्व वाले, एक गुण स्निग्धत्व वाले आदि स्पर्श की अपेक्षा—पुद्गल भाव की अपेक्षा अप्रदेशी होते हैं। भाव की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल सबसे अल्प होते हैं क्योंकि द्रव्य में गुणों का बाहुल्य होता है। द्व्यादि गुण से लेकर अनंत गुण कालापनादि पुद्गल स्थानबाहुल्य से अनंतगुणे होते हैं और एक गुणवाले का एक ही स्थान होता है, अतः भाव की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल सबसे अल्प होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्तो कालाएसेण अप्पएसा भवे असंखगुणा।
किं कारणं पुण भवे ? भण्णइ परिणामबाहुल्ला ॥४॥

अभयदेवसूरि टीका—अयमर्थः—यो हि यस्मिन् समये यद्वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्श-संघातभेद-सूक्ष्मत्व-बादरत्वादिपरिणामान्तरमाऽऽपन्नः स तस्मिन् समये तदपेक्षया कालतोऽप्रदेश उच्यते। तत्र एकसमयस्थितिः इति, अन्ये परिणामाश्च बहव इति प्रतिपरिणामं कालाऽप्रदेशसंभवात् तद्बहुलत्वमिति, एतदेव भाव्यते।

रत्नसिंहसूरि टीका—इतो भावाप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशा असंख्यगुणा भवेयुः, कुतो हेतोः ? उच्यते—परिणामानां बहुत्वात्। अयमर्थः—यो हि यस्मिन्समये यद्वर्णगंधरसस्पर्शसंघातभेदसूक्ष्मबादरत्वादिपरिणामान्तरापन्नः स तस्मिन्समये तदपेक्षया कालतोऽप्रदेश उच्यते। तत्र वर्णाः पञ्च, गन्धौ द्वौ, रसाः पञ्च, स्पर्शा अष्टौ, एतेषु च विंशतौ पदेषु प्रतिपदमेकगुणकाल-कादयोऽनन्तगुणकालकपर्यवसाना एकाद्येकोत्तरेणानन्ता भेदाः पुद्गलानां प्राप्यन्ते, तेषु च सर्वेषु भेदेषु प्रतिभेदं यदैकसमयस्थितिकास्तदा कालतोऽ-प्रदेशा भवन्ति। तथा विशकलितानां परमाणूनामेकपुद्गलस्कन्धतया परिणमनं संघातः। एकद्रव्यात्परमाणूनां विघटनं भेदः। एकस्मिन्नपि नभःप्रदेशे द्व्यादीनां परमाणूनामवस्थानं सूक्ष्मत्वम् सूक्ष्मपरिणामपरिणतस्य द्रव्यस्य परमाणुसंख्यानतिक्रमेण प्रतिसमयमनेकनभःप्रदेशव्यापितया भवनं बादरत्वम्। एतेष्वपि परिणामान्तरेषु यदा यदा तदात्वेन पुद्गला एक-समयस्थितिकाः प्राप्यन्ते, तदा तदा कालतोऽप्रदेशा उच्यन्ते। इति प्रति-परिणामं कालाप्रदेशसंभवात्तद्बहुत्वमिति।

भावतः अप्रदेशी पुद्गलों की अपेक्षा कालतः अप्रदेशी पुद्गल असंख्यातगुण होते हैं, क्योंकि परिणामों की बहुलता है। जिस समय में पुद्गल वर्ण-गध-रस-स्पर्श-संघात-भेद-सूक्ष्मत्व-बादरत्वादि अनेक परिणामों को प्राप्त होता है, उस समय वह काल की अपेक्षा अप्रदेशी रहता है अर्थात् उक्त प्रत्येक 'परिणाम' एक समय की स्थिति वाला भी हो सकता है। परिणामों की बहुलता है तथा प्रति परिणाम में कालतः एक समय की स्थिति प्राप्त होती है—अतः भावतः अप्रदेशी पुद्गलों की अपेक्षा एक समय की स्थिति वाले कालतः अप्रदेशी पुद्गल असंख्यातगुण होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावेण अपएसा जे ते कालेण हुंति दुविहा वि।
दुगुणादयो वि एवं भावेणं जावऽणंतगुणा ॥५॥

अभयदेवसूरि टीका—भावतो ये—अप्रदेशा एकगुणकालत्वादयो भवन्ति ते कालतो द्विधाऽपि भवन्ति—सप्रदेशाः, अप्रदेशाश्च इत्यर्थः तथा भावेन द्विगुणादयोऽपि अनन्तगुणान्ताः—'एवं' इति द्विविधा अपि भवन्ति। ततश्च—

रत्नदेवसूरि टीका—भावतो येऽप्रदेशास्ते कालतो द्विविधा अपि भवन्ति, अप्रदेशाः सप्रदेशाश्चेत्यर्थः। तत्र एकसमयस्थितिका अप्रदेशाः, द्वयादिसमय-स्थितयस्त्वेकाद्येकोत्तरेण यावदसंख्यातसमयस्थितयस्ते सर्वे सप्रदेशा इत्यभिप्रायः। तथा भावेन द्विगुणादयोऽनन्तगुणान्ताः, एवमिति द्विविधा, कालतः सप्रदेशा अप्रदेशा भवन्तीत्यर्थः।

भाव से जो पुद्गल अप्रदेशी होते हैं वे काल से अप्रदेशी—सप्रदेशी—दोनों प्रकार के होते हैं। इसी प्रकार जो पुद्गल भाव से सप्रदेशी अर्थात् द्विगुण यावत् अनन्त-गुणवाले होते हैं वे काल से अप्रदेशी—सप्रदेशी—दोनों प्रकार के होते हैं। भावगुण की अपेक्षा एक समय की स्थिति वाले पुद्गलों को कालतः अप्रदेशी कहा जाता है तथा दो समय से लेकर असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गलों को कालतः सप्रदेशी कहा जाता है।

कालाऽपएसयाणं एवं एक्केक्कओ हवइ रासी।
एक्केक्कगुणठाणम्मि एगगुणकालयाईसु ॥६॥

अभयदेवसूरि टीका—एकगुणकाल-द्विगुणकालादिषु गुणस्थानकेषु मध्ये एकैकस्मिन् गुणस्थानके कालाऽप्रदेशानाम् एकैको राशिर्भवति, ततश्चाऽ-नन्तत्वाद् गुणस्थानकराशीनाम् अनन्ता एव कालाऽप्रदेशराशयो भवन्ति।

रत्नसिंहसूरि टीका—एकगुणकालकद्विगुणकालकादिषु मध्ये एकैकस्मिन् गुणस्थानके कालाप्रदेशानामेकैकराशिर्भवति। अयमर्थः—एकगुणकालकादय एकाद्येकोत्तरया गुणवृद्धयाऽनन्तगुणकालकान्ताः प्रतिगुणस्थानमनन्ताः पुद्गलाः सन्ति। एवमेकगुणनीलकादयोऽपि लभ्यन्त इति। ततश्चानन्त-त्वाद्गुणस्थानकराशीनामनन्ता एव कालाप्रदेशराशयो भवन्तीति।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

एक गुण काला गुणस्थानक, द्विगुण काला गुणस्थानक यावत् अनंतगुण काला गुणस्थानक—इन गुणस्थानकों में एक-एक गुणस्थानक में काल की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गलों की एक-एक राशि होती है। गुणस्थानकों के अनंत होने के कारण कालतः अप्रदेशी पुद्गलों की राशि भी अनंत होती है। इसी प्रकार नीलादि अन्य गुणों में भी कालतः अप्रदेशी पुद्गलों की राशि का विवेचन कर लेना चाहिए। रत्नसिंहसूरि का कथन है कि प्रत्येक गुणस्थानक में अनंत पुद्गल होते हैं।

आहाणंतगुणत्तणमेवं कालापएसयाणं ति।
जं अणंतगुणट्ठाणेसु होंति रासी वि हु अणंता ॥७॥

अभयदेवसूरि टीका—'एवं' इति यदि प्रतिगुणस्थानकं कालाऽप्रदेश-राशयोऽभिधीयन्ते इति।

रत्नसिंहसूरि टीका—एवमिति यदि प्रतिगुणस्थानकं कालाप्रदेशराशयो-ऽभिधीयन्ते, ततो भावाप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशा अनन्तगुणाः प्राप्नुवन्ति। यतोऽनन्तेष्वेकगुणकालकद्विगुणकालकत्रिगुणकालकादिष्वनन्तगुणकालकपर्य-वसानेषु गुणस्थानकेषु राशयोऽप्यनन्ता भवन्ति, अथ चाऽसंख्यातगुणत्व-मिष्यत इति।

इस प्रकार एक गुण कालादि रूप गुणस्थानों के मध्य एक-एक गुणस्थान में काल से अप्रदेशी पुद्गलों की एक-एक राशि बनाई जाय अर्थात् एक गुण काला आदि गुणस्थानों के मध्य एक-एक गुणस्थान में काल से अप्रदेशी पुद्गलों की एक-एक राशि होती है। इस प्रकार होने से गुणस्थान की राशि के अनंतपन को लेकर काल से अप्रदेशी पुद्गलों की अनंत राशि होती है। यद्यपि शास्त्र में काल से अप्रदेशी पुद्गलों का असंख्यगुणपन कहा गया है। अर्थात् इस प्रकार यदि प्रति गुणस्थानक में काल से अप्रदेशी राशि का प्रतिपादन किया जाता है तो भाव से अप्रदेशी पुद्गलों से काल से अप्रदेशी पुद्गल अनंतगुण हो जाते हैं क्योंकि अनंत गुणस्थानकों में राशि भी अनंत होती है।

भण्णइ एगगुणाणवि अणंतभागम्मि जं अणंतगुणा।
तेणाऽसंखगुण च्चिय हवंति णाणंतगुणियत्तं ॥८॥

अभयदेवसूरि टीका—अयमभिप्रायः—यद्यपि अनंतगुणत्वादीनाम् अनंत-राशयः, तथापि एकगुणकालत्वादीनाम् अनंतभाग एव ते वर्तन्ते—इति न तद्द्वारेण कालाप्रदेशानाम् अनंतगुणत्वम्, अपि तु असंख्यातगुणत्वमेव इति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्नसिंहसूरि टीका—एकगुणकालकत्वादीनामप्यनन्तगुणकालकत्वादयोऽनन्तभाग एव वर्त्तन्ते, तेन भावाप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशाः परमाणुस्कन्धा असंख्यातगुणा एव भवन्ति, न त्वनन्तगुणा इति। अयमभिप्रायः—एकगुणकालकात्प्रभृति एकाद्येकोत्तरेण गुणवृद्ध्योत्कृष्टसंख्यातगुणकालं यावत्संख्यातानि गुणस्थानकानि लभ्यन्ते, ततः परमेकेनापि गुणेन वृद्धो जघन्याऽसंख्यातगुणकालकपुद्गलस्कंधो व्यपदिश्यते। ततः प्रभृत्येकाद्येकोत्तरेण गुणवृद्ध्योत्कृष्टासंख्यातगुणकालं यावदसंख्यातानि गुणस्थानकानि लभ्यन्ते, ततः परमेकेनापि गुणेन वृद्धो जघन्यानन्तगुणकालकपुद्गलस्कंधो व्यपदिश्यते। ततः प्रभृत्येकाद्येकोत्तरेण गुणवृद्ध्योत्कृष्टानन्तगुणकालं यावदनन्तानि लभ्यन्ते, तथा च सति यद्यप्यनन्तगुणकालकत्वादीनां पुद्गलस्कंधानामनन्तराशयोऽभिहिताः। तथाप्यनन्तस्यानन्तभेदत्वाद्वक्ष्यमाणैकगुणद्रव्यराशि १ संख्यातगुणद्रव्यराशि २ असंख्यातगुणद्रव्यराशि ३ अनन्तगुणद्रव्यराशि ४ रूपराशिचतुष्टये एकगुणकालकत्वादिद्रव्यराशेरपेक्षयाऽनन्तगुणकालत्वादिद्रव्यराशेः समग्रस्याप्यनन्तभागवृद्धत्वेनाभिहितत्वात्तच्चेह लघ्वनन्तत्वं ज्ञेयम्। ततः कालाप्रदेशानां नानन्तगुणत्वम्, अपि तु असंख्यातगुणत्वमेवेति।

इस प्रकार काल की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गलों का अनंतगुणपन हो जाता है क्योंकि अनंतगुणस्थानों में राशि भी अनंत होती है तथापि प्रत्येक गुणस्थान के काल की अपेक्षा से अप्रदेशी पुद्गलों की राशि कहलाती है। प्रत्युत्तर में कहा जाता है—वे अनंतराशियाँ एकगुणकालत्वादि के भी अनंतवें भाग रूप हैं अतः असंख्यातगुण ही है, किन्तु उनका अनंतगुण नहीं होता है। अर्थात् अनंतगुण कालत्वादि की अनंत राशियाँ हैं तो भी वे राशियाँ एक गुण कालत्वादि के अनंतवें भाग में ही वर्तती हैं अतः उन राशियों के द्वारा काल से अप्रदेशी पुद्गलों का अनंतगुणपन नहीं होता है किन्तु असंख्यातगुणपन ही होता है ॥८॥

एवं ता भावमिणं पडुच्च कालापएसिया सिद्धा।
परमाणुपोग्गलाइसु दव्वे वि हु एस चेव गमो ॥९॥

अभयदेवसूरि टीका—एवं तावद् 'भावं'—वर्णादिपरिणामं 'इमम्' उक्तस्वरूपम् एकाद्यनन्तगुणस्थानवर्तिनमित्यर्थः। प्रतीत्य कालप्रदेशिकाः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गलाः सिद्धाः, कालाप्रदेशता वा पुद्गलनां सिद्धा प्रतिष्ठिता। द्रव्येऽपि द्रव्यपरिणाममपि अंगीकृत्य परमाण्वादिषु एष एव भावपरिणामोक्त एव गमः—व्याख्या।

रत्नसिंहसूरि टीका— एवं तावद्भावं वर्णगंधादिपरिणामं इममभिहित-स्वरूपमेकाद्यनन्तगुणस्थानवर्त्तिनमित्यर्थः। प्रतीत्याश्रित्य कालतोऽप्रदेशाः पुद्गलाः सिद्धाः स्वरूपनिरूपणेन प्रतिष्ठिताः। द्रव्येऽपि द्रव्यपरिणाम-मप्याश्रित्य परमाण्वादिषु, एवं भावपरिणामाभिहित एव प्रकारो ज्ञेयः। अयमभिप्रायः—ये परमाणवः परस्परमसंपृक्तास्ते द्रव्यतोऽप्रदेशा उच्यन्त इति।

वर्णादि परिणाम भाव की अपेक्षा परमाणु पुद्गलादि में काल से अप्रदेशीपन सिद्ध होता है। इसी प्रकार द्रव्य में भी यही गमक जानना चाहिए। अर्थात् इस प्रकार यहाँ कहे हुए—वर्णादिरूप और एक से अनंत गुणस्थानवर्ती भाव की अपेक्षा काल से अप्रदेश पुद्गल सिद्ध होते हैं। अथवा पुद्गलों का काल से अप्रदेशीपन प्रतिष्ठित होता है। द्रव्य में भी द्रव्यपरिणाम को अंगीकार कर, परमाणु आदि पुद्गलों में यही भाव परिणामोक्त व्याख्या—गम समझनी चाहिए ॥९॥

एमेव होइ खेत्ते, एगपएसावगाहणाईसु।
ठाणंतरसंकंतिं, पडुच्च कालेण मग्गणया ॥१०॥

अभयदेवसूरि टीका—एवमेव द्रव्यपरिणामवद् भवति क्षेत्रे क्षेत्रमधिकृत्य एकप्रदेशावगाढादिषु पुद्गलभेदेषु स्थानान्तरगमनं प्रतीत्य कालेन कालाऽ-प्रदेशानां मार्गणा, यथा क्षेत्रतः, एवम् अवगाहनादितोऽपि—इत्येतदुच्यते:—

रत्नसिंहसूरि टीका—एवमेव द्रव्यपरिणामवद्भवति क्षेत्रे क्षेत्रमधिकृत्य एकप्रदेशावगाढादिषु पुद्गलभेदेषु स्थानान्तरगमनं प्रतीत्य कालेन काला-प्रदेशानां मार्गणा। अयमभिप्रायः—यथा द्रव्यपरिणाममाश्रित्य परमाणवो द्रव्यतोऽप्रदेशास्तथैकैकनभःप्रदेशावगाहितायां सत्यां स्वस्वक्षेत्रमुञ्चन्तः क्षेत्र-तोऽप्रदेशाः पुद्गला उच्यन्ते। यदा यदा तु स्वस्वक्षेत्रं विमुच्य क्षेत्रान्तरेषु पुद्गलाः संचरन्ति, प्रतिस्थानं च समयमेकमवतिष्ठन्ते, तदा तदा कालतोऽ-प्रदेशाः पुद्गला व्यपदिश्यन्ते इति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार क्षेत्राधिकार की अपेक्षा एकप्रदेशावगाहना आदि में स्थानान्तर-संक्रम की अपेक्षा काल से मार्गणा करनी चाहिए। अर्थात् इसी प्रकार द्रव्यपरिणाम की तरह क्षेत्र में क्षेत्र की विवक्षा कर एकप्रदेशावगाही आदि पुद्गल भेदों में स्थानांतर-गमन अर्थात् एक स्थान से दूसरे स्थान में जाने की अपेक्षा काल से अप्रदेशों की मार्गणा जैसे क्षेत्र से है वैसे ही अवगाहना से भी मार्गणा जाननी चाहिए ॥१०॥

संकोय - विकोय पि हु पडुच्च ओगाहणाय एमेव।
तह सुहुम - बायर - निरेय - सेय - सद्दाइपरिणामं ॥११॥

एवं जो सव्वो च्चिय परिणामो पुग्गलाण इह समये।
तं तं पडुच्च एसिं, कालेणं अप्पएसत्तं ॥१२॥

पाठान्तर—एवं जो सव्वोऽवि अ।

अभयदेवसूरि टीका—'एसिं' ति पुद्गलानाम् इत्यर्थः।

रत्नसिंहसूरि टीका—एवं उक्तप्रकारेण यः सर्वोऽपि च परिणामः पर्यायान्तरेण भवनं पुद्गलानामिति परमाणूनां स्कन्धानां चेहेति जिनप्रवचने वर्णितः; तं तं परिणाममाश्रित्य 'एसिं' इति पुद्गलानामेकसमयस्थितिकानां कालेनाप्रदेशत्वं ज्ञेयमिति।

इस प्रकार पुद्गलों के जो सब परिणाम होते हैं उन-उन सर्व परिणामों की अपेक्षा—पुद्गलों का काल की अपेक्षा अप्रदेशीपन है। अर्थात् पुद्गल—स्कंध पुद्गल और परमाणु पुद्गल जो हैं वे सब पुद्गल जो एक समय की स्थितिवाले हैं उनको काल की अपेक्षा अप्रदेशी जानना चाहिए।

कालेण अप्पएसा, एवं भावापएसएहिंतो।
होंति असंखिज्जगुणा, सिद्धा परिणामबाहुल्ला ॥१३॥

एत्तो दव्वादेसेण अप्पएसा हवंतिऽसंखगुणा।
के पुण ते ? परमाणू, कह ते बहुय ? त्ति तं सुणसु ॥१४॥

अणु-संखेज्जपएसिय-असंखऽणंतप्पएसिआ चेव।
चउरो च्चिय रासी पोग्गलाण लोए अणंताणं ॥१५॥

तत्थाणंतेहिंतो *सुत्तेऽणंतप्पसिएहिंतो।
जेणप्पएसट्ठाए भणिया अणुओ अणंतगुणा ॥१६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*पाठान्तर—सुत्तेणं तप्पएसिएहिंतो।

अभयदेवसूरि टीका—अनन्तेभ्योऽनन्तप्रदेशिकस्कधेभ्य: प्रदेशार्थतया परमाणवोऽनन्तगुणा सूत्रे उक्ताः सूत्रे चेदम् "सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा, परमाणुपुद्गला दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्ज-गुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखगुण" त्ति।

रत्नसिंहसूरि टीका—ये भावतोऽप्रदेशा एकगुणकालकादयः, ये च द्विगुणकालकादयोऽनन्तगुणकालकान्तादीन् यावद्भावतः सप्रदेशास्ते सर्वे कालत एकसमयस्थितिका अप्रदेशाः। 'एवं' इति अनेन व्याख्यानेन भावा-प्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशा एकगुणकालकद्विगुणकालकादीनां परिणामानन्त्या-त्पुद्गला असंख्यातगुणाः सिद्धा भवन्तीति।

इतोऽनन्तरोक्तेभ्यः कालाप्रदेशेभ्यो द्रव्यतोऽप्रदेशा असंख्यातगुणा भवन्ति। के पुनस्ते ? इत्याह—परमाणवः। कथं ते बहवः ? तदुच्यते।

परस्परासंबंधस्वभावानां परमाणूनामेको राशिः १, द्व्यणुकत्र्यणुका-दीनामुत्कृष्टसंख्याताणुकान्तानां स्कंधानां सर्वेषामपि संख्याताणुकव्यपदेश-भाजां द्वितीयो राशिः २, जघन्यासंख्याताणुकादीनामेकाद्येकोत्तरगुणवृद्धा-नामुत्कृष्टासंख्याताणुकान्तानां सर्वेषामप्यसंख्याताणुकव्यपदेशभाजां तृतीयो राशिः ३, जघन्यानन्ताणुकादीनामेकाद्येकोत्तरगुणवृद्धानामुत्कृष्टानन्ताणु-कान्तानां स्कंधानां सर्वेषामप्यनन्ताणुकव्यपदेशभाजां चतुर्थो राशिः ४, एत एव च राशयोऽनन्तानां पुद्गलानां लोके चतुर्दशरज्ज्वात्मके भवन्तीति।

'तत्थ' इति तेषु चतुर्षु राशिषु यद्यप्यनन्तप्रदेशिकाः स्कंधा अनन्ताः सन्ति, तथापि तेभ्योऽनन्तप्रदेशिकस्कंधेभ्यः प्रदेशार्थतया परमाणवोऽनन्त-गुणाः सूत्रे उक्ताः। सूत्रं चेदम्—"सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा। परमाणुपुग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए अणंतगुणा। संखिज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखिज्जगुणा। असंखिज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखगुणत्ति"।

इस प्रकार भाव की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल से काल की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल परिणाम की बहुलता से असंख्यगुण सिद्ध होते हैं। इससे द्रव्यादेश से अप्रदेशी पुद्गल असंख्यगुण हैं।

परन्तु परमाणु बहुत किस प्रकार हैं :—

लोक में अणु, संख्यातप्रदेश वाले, असंख्यगुणप्रदेश वाले और अनंतप्रदेश वाले— ये चार प्रकार की—अनंत पुद्गलों की चार राशियाँ हैं, जिससे अनंत प्रदेशवाले अनंत पुद्गलों से प्रदेशार्थ की अपेक्षा अणु अनंतगुणे हैं।

सूत्र में—अनंत प्रदेशवाले अनंत स्कंधों से प्रदेशार्थ की अपेक्षा परमाणु अनंतगुणे हैं। जैसा कि कहा गया है "द्रव्यार्थ की अपेक्षा अनंत प्रदेशवाले स्कंध सबसे थोड़े हैं; इससे उन्हीं स्कंधों के प्रदेश (प्रदेशार्थ की अपेक्षा) अनंतगुण हैं, इससे द्रव्यार्थ—प्रदेशार्थ की अपेक्षा परमाणु अनंतगुणे हैं; इससे संख्यात प्रदेशवाले स्कंध—द्रव्यार्थ की अपेक्षा संख्येय गुण हैं; इससे उन्हीं स्कंधों के प्रदेश (प्रदेशार्थ की अपेक्षा) संख्येय गुण हैं, इससे असंख्यात प्रदेशवाले स्कंध द्रव्यार्थ की अपेक्षा असंख्येय गुण हैं तथा इससे उन्हीं स्कंधों के प्रदेश (प्रदेशार्थ की अपेक्षा) असंख्येय गुण हैं।

संखेज्जतिमे भागे संखेज्जपएसियाण वट्टंति।
नवरमसंखेज्जपएसियाण भागे असंखइमे ॥१७॥

अभयदेवसूरि टीका—'संख्येयतमे भागे' संख्यातप्रदेशिकानाम्, असंख्याततमे भागे असंख्यातप्रदेशिकानाम् अणवो वर्तन्ते—उक्तसूत्र-प्रामाण्याद् इति।

रत्नसिंहसूरि टीका—संख्याताः प्रदेशाः परमाणवो येषां स्कंधानां ते तथा, तेषां संख्येयतमे भागे वर्त्तन्ते परमाणव इति। असंख्याताः प्रदेशाः परमाणवो येषां ते तथा, तेषां चासंख्येयतमे भागे वर्त्तन्ते, परमाणव इति उक्तसूत्रप्रामाण्यात्। अयमाशयः—यथा किल कल्पनया शतस्य संख्येयतमो भागो विंशतिः, शतस्यैवासंख्येयतमो दश, शतस्यैवानन्ततमो भागः पञ्च। एवमिहानया दिशा द्व्यणुकादिस्कंधेभ्यः प्रभृति संख्याताणुकस्कन्धान् यावद् यः संख्याताणुकस्कंधराशिस्तदपेक्षया परमाणवः संख्येयतमे भागे वर्त्तन्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इति । असंख्याताणुकस्कंधराश्यपेक्षया त्वसंख्येयभाग इति । परमार्थतस्तु परमाणूनामप्यनन्तत्वं वक्ष्यत इति ।

संख्यात प्रदेशवाले स्कंध संख्यातवें भाग में रहते हैं ; लेकिन असंख्यात प्रदेशवाले स्कंध असंख्यातवें भाग में रहते हैं ।

पूर्वोक्त सूत्र का प्रामाण्य होने से संख्यात प्रदेशवाले स्कंध के परमाणु संख्यातवें भाग में रहते हैं ; और असंख्यात प्रदेशवाले स्कंध के परमाणु अ संख्यातवें भाग में रहते हैं ।

द्विप्रदेशी स्कंध से लेकर संख्यातप्रदेशी स्कंध तक की संख्याताणुक स्कंध राशि की अपेक्षा से परमाणु संख्यातवें भाग में रहते हैं तथा असंख्याताणुक स्कंध राशि की अपेक्षा से असंख्यातवें भाग में रहते हैं । परमार्थतः परमाणुओं की संख्या अनंत कही गई हैं ।

सइ वि असंखेज्जपएसियाणं तेसिं असंखभागत्ते ।
बाहुल्लं साहिज्जइ फुडमवसेसाहि रासीहि ॥१८॥

अभयदेवसूरि टीका—संख्यातप्रदेशिका-ऽनन्तप्रदेशिकाऽभिधानाभ्याम्, इह च संख्यातप्रदेशिकाराशेः संख्यातभागवर्तित्वात् तेषां स्वरूपतो बहुत्व-मवगम्यते, अन्यथा तस्याऽपि असंख्येयभागे, अनन्तभागे वा तेऽभविष्यन् इति ।

रत्नसिंहसूरि टीका—सत्यप्यसंख्यातप्रदेशिकेभ्यः स्कन्धेभ्यः 'तेसिं' इति परमाणूनामसंख्येयभागत्वे बहुत्वं कथ्यते, निश्चितमेव शेषराशिभ्यां संख्यात-प्रदेशिकाऽनन्तप्रदेशिकाभिधानाभ्यामिति । अयमभिप्रायः—संख्यातप्रदेशि-कराशेरपेक्षया सूत्रे संख्यातभागवृत्तित्वं परमाणूनामुक्तं ततोऽवसीयते तेषां बहुत्वम् । अन्यथा संख्यातप्रदेशिकराशेरपेक्षयाऽसंख्येयभागेऽनंतभागे वा ते परमाणवोऽभविष्यन्निति ।

वे असंख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातवें भाग में अवस्थित हैं—तो भी बाकी की राशि अर्थात् संख्यातप्रदेशी स्कंध की राशि तथा अनंतप्रदेशी स्कंध की राशि से स्फुट प्रकार से बाहुल्य कहा जाता है । अर्थात् संख्यातप्रदेशवाली और अनंतप्रदेशवाली—ये दो प्रकार की राशियां हैं उससे और यहाँ संख्यातप्रदेशी राशि के संख्यात भाग-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्तिपन को लेकर स्वरूप से उनका बहुत्व जाना जाता है। यदि ऐसा नहीं होता है तो उसका असंख्येय अथवा अनंत भाग होता है।

जेणिक्करासिणो च्चिय, असंखभागेण सेसरासीणं।
तेणाऽसखेज्जगुणा, अणवो कालापएसेहिं ॥१९॥

अभयदेवसूरि टीका—'न शेषराश्यो' इत्यास्याऽयमर्थः-अनन्तप्रदेशिकराशेरनन्तगुणास्ते, संख्यातप्रदेशिकराशेस्तु संख्यातभागे, संख्यातभागस्य च विवक्षया नाऽत्यन्तम्—अल्पता, कालतः सप्रदेशेषु च वृत्तिमताम् अणूनां बहुत्वात्, कालाऽप्रदेशानां च सामयिकत्वेनाऽत्यन्तमल्पत्वात् कालाऽप्रदेशेभ्योऽसंख्यातगुणत्वं द्रव्याऽप्रदेशानाम् इति।

रत्नसिंहसूरि टीका—येनैकराशेरेवासंख्यातप्रदेशिकस्कंधाभिधानस्यैवासंख्यातभागेऽणवो वर्तन्ते, न शेषराश्योः संख्यातप्रदेशिकानन्तप्रदेशिकाभिधानयोरिति। अयमर्थः—अनन्तप्रदेशिकस्कंधराशेरनन्तगुणाः, सख्यातप्रदेशिकस्कंधराशेस्तु संख्यातभागे वर्त्तन्ते ; संख्यातभागस्य च विवक्षया पूर्वोक्तयुक्त्या च नात्यन्तमल्पतेति। तेन कालतः सप्रदेशेष्वप्रदेशेषु च वृत्तिमतामणूनां बहुत्वात् कालाप्रदेशानां च समयमात्रकालवस्थायित्वेनात्यन्तमल्पत्वात्कालाप्रदेशेभ्योऽसंख्यातगुणा द्रव्याप्रदेशा इति।

जिस कारण से एक राशि के ही असंख्येय भाग हैं, लेकिन शेष की दो राशियों के असंख्येय भाग नहीं हैं उस कारण से कालाप्रदेश से अणु असंख्येय गुण हैं।

शेष की दो राशियाँ नहीं हैं—इसका इस प्रमाण से निष्कर्ष है—अनंत प्रदेशिक राशि से वे अनंत गुण हैं। संख्यात प्रदेशिक राशि के तो सख्यातवें भाग हैं और विवक्षा से संख्यात भाग की अत्यन्त अल्पता नहीं है। काल की अपेक्षा सप्रदेश और अप्रदेश में वृत्तिवाले अणुओं का बहुत्व है और कालाप्रदेशिक परमाणु मात्र एक समय की स्थितिवाले होने के कारण अत्यन्त अल्प हैं तथा वैसा होने से—कालाप्रदेश पुद्गलों से द्रव्याप्रदेश पुद्गल असंख्यात गुण हैं।

एत्तो असंखगुणिया हवंति खेत्ताऽपएसिया समए।
जं ते तो (ता) सव्वे च्चिय, अपएसा खेत्तओ अणवो ॥२०॥

दुपएसियाइएसु वि पएसपरिवुड्ढिएसु ठाणेसु।
लब्भइ इक्किक्कोऽविअ रासी खेत्तापएसाणं ॥२१॥*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एत्तो खेत्ताएसेण चेव सपएसिया असंखगुणा।
एगपएसोगाढे मोत्तु सोसाऽवगाहणया ॥२२॥

ते पुण दुपएसोगाहणाइया सव्वपोग्गला सेसा।
ते य असंखेज्जगुणा, अवगाहणट्ठाण बाहुल्ला ॥२३॥

दव्वेण होंति एत्तो सपएसा पोग्गला विसेसाहिया।
कालेण य भावेण य, एमेव भवे विसेसाहिया ॥२४॥

*पाठान्तर लब्भइ इक्किक्को च्चिय रासी खेत्ताऽपएसाणं।

भवाइया वुड्ढी, असंखगुणिया जं अपएसाणं।
तो सप्पएसियाणं खेत्ताइविसेसपरिवुड्ढी ॥२५॥

अभयदेवसूरि टीका—एतद्भावना च वक्ष्माणस्थापनातोऽवसेया।

रत्नसिंहसूरि टीका—इतो द्रव्याप्रदेशेभ्यः क्षेत्राप्रदेशिका असंख्यातगुणा भवन्ति। यस्मात्ते एव परमाणवः 'ता' इति तावदर्थे स च क्रमोपन्यासे। वक्ष्यमाणगाथोक्तद्विप्रदेशादिद्रव्यापेक्षया एकैकनभःप्रदेशावगाहितया सर्वेऽपि क्षेत्रतोऽप्रदेशा एवेति। नह्येकः परमाणुर्बादरपरिणामोऽपि द्व्यादीन्नभः-प्रदेशान् व्याप्नोति।

प्रदेशशब्दः परमाणुपर्याय इह गृह्यते। ततो द्विप्रदेशादिकेष्वपि स्कंधेषु प्रदेशपरिवर्द्धितेषु स्थानेस्वेकाद्येकोत्तरेण परमाणुपरिवर्द्धितेषु क्षेत्राप्रदेशा-नामेकैक एव राशिर्लभ्यते। अयमर्थः—द्व्यणुकस्कंधा बादरपरिणामतया केचिद् द्विद्विनभःप्रदेशावगाहिनः, केचित्तु सूक्ष्मपरिणामतयैकैकनभःप्रदेशाव-गाहिन इति। एवं त्र्यणुकस्कंधाः केचिद्बादरपरिणामतया त्रित्रिनभः-प्रदेशावगाहिन, केचिद्बादरसूक्ष्मपरिणामतया द्विद्विनभःप्रदेशावगाहिनः, केचिदसूक्ष्मपरिणामतयैकैकनभःप्रदेशावगाहिनः। एवं चतुरणुस्कंधा अपि केचिच्चतुश्चतुर्नभःप्रदेशावगाहिनः, केचित्त्रित्रिनभःप्रदेशावगाहिनः, केचिद्-द्विद्विनभःप्रदेशावगाहिनः, केचित्त्वेकैकनभ.प्रदेशावगाहिन इति। अनया दिशा पञ्चाणुकषडणुकादयोऽनन्ताणुकान्ताः स्कंधा एकैकनभःप्रदेशावगाहि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोऽपि लभ्यन्त इति। तथा च सति द्व्यणुकादीनामनन्तनाणुकान्तानां क्षेत्रतोऽप्रदेशानां प्रतिप्रदेशं परमाणुवृद्धिस्थानमेकैक एव राशिरिति।

एभ्यः क्षेत्राप्रदेशेभ्यः सकाशात् क्षेत्रतः सप्रदेशा असंख्यातगुणा। यत एकैकप्रदेशावगाढान् स्कंधान्मुक्त्वा 'सेसावगाहणया' इति द्व्यादिनभः-प्रदेशावगाहिनः स्कंधा सर्वेपीह गृह्यन्त इति। अयमर्थः –द्व्यणुकस्कंधानां क्षेत्रावगाहनापेक्षया द्वौ राशी। एक एकैकनभःप्रदेशावगाढानां स्कंधानां, द्वितीयस्तु द्विद्विनभःप्रदेशावगाढानां स्कंधानाम्। तथा त्र्यणुकस्कंधानां क्षेत्रावगाहनापेक्षया त्रयो राशयः। एक एककनभःप्रदेशावगाढानां, द्वितीयो द्विद्विनभःप्रदेशावगाढानां, तृतीयस्तु त्रित्रिनभःप्रदेशावगाढानां स्कंधानाम्। तथा चतरणुकस्कंधानां चत्वारो राशयः। एक एकैकनभःप्रदेशावगाढागाम्, द्वितीयो द्विद्विनभःप्रदेशावगाढानाम्, तृतीयस्त्रित्रिनभःप्रदेशावगाढानाम्, चतुर्थस्तु चतुश्चतुर्नभःप्रदेशावगाढानां स्कंधानाम्। एवं पञ्चाणुस्कंधानां पञ्च राशयो यावदसंख्याताणुकस्कंधानां क्षेत्रावगाहनापेक्षयाऽसंख्याता राशयः। अनन्ताणुकस्कंधानां तु क्षेत्रावगाहापेक्षया नानन्ता राशयः, सकललोकाकाशप्रदेशाग्रस्यासंख्यातस्यैव सर्वत्र भणनादिति। एवं च सति ये द्व्यणुकादयोऽनन्ताणुकान्ताः स्कंधा एकैकनभःप्रदेशावगाहिस्कंधराशिवर्जा द्व्यादिनभःप्रदेशावगाहिनो राशयस्ते सर्वे क्षेत्रतः सप्रदेशा इति।

ते पुनर्द्विप्रदेशावगाहनादिकाः 'सव्वपुग्गला' इति समस्ता द्व्यणुका-दयोऽनन्ताणुकान्ताः स्कंधाः शेषा व्यतिरिक्ताः क्षेत्राप्रदेशपुद्गलेभ्य इत्यस्या-ध्याहारः। ते पुनः क्षेत्रतः सप्रदेशा असंख्यातगुणाः अवगाहनास्थानानां बाहुल्यात्। अयमाशयः—परमाण्वादीनामन्ताणुकस्कंधानामपि पुद्गला-नामेकैकनभःप्रदेशलक्षणमेकमेवावगाहनास्थानम्। क्षेत्राप्रदेशानां क्षेत्रतः सप्रदेशानां द्व्यादिनभःप्रदेशप्रभृतीन्यसंख्यातनभःप्रदेशपर्यन्तान्यसंख्यातान्य-वगाहनास्थानानीति। अथ द्रव्यतः कालतो भावतश्च सप्रदेशानां प्रमाणमाह—

एभ्यः क्षेत्रतः सप्रदेशेभ्यो द्रव्यतः सप्रदेशाः पुद्गला विशेषाधिकाः। तथा द्रव्यतः सप्रदेशेभ्यः कालतः सप्रदेशाः पुद्गला विशेषाधिकाः। एवं कालतः सप्रदेशेभ्यो भावतः सप्रदेशा विशेषाधिका इति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यस्मादप्रदेशानां पुद्गलानां भावादिका भावमादौ कृत्वा वृद्धिरसंख्य-गुणिता, आदिशब्दात्कालद्रव्यक्षेत्राणि गृह्यन्ते। अयमर्थः—भावाप्रदेशेभ्यः कालतोऽप्रदेशाः पुद्गला असंख्यगुणाः। कालाप्रदेशेभ्यो द्रव्याप्रदेशा असंख्य-गुणाः। द्रव्याप्रदेशेभ्यः क्षेत्राप्रदेशा असंख्यगुणा इति। 'तो' इति तस्मात्सप्रदेशानां पुद्गलानां क्षेत्रादिका क्षेत्रमादौ कृत्वा वैपरीत्येन क्रमशो विशेषपरिवृद्धिर्बोद्धव्या। क्षेत्रतः सप्रदेशेभ्यो द्रव्यतः सप्रदेशा विशे-षाधिकाः। द्रव्यतः सप्रदेशेभ्यः कालतः सप्रदेशा विशेषाधिकाः। कालतः सप्रदेशेभ्यो भावतः सप्रदेशा विशेषाधिका इति।

"सिद्धान्त में इसकी अपेक्षा क्षेत्राप्रदेश पुद्गल असंख्येय गुण हैं क्योंकि वे सब अणु क्षेत्र से अप्रदेश हैं। द्विप्रदेशिकादि पदों में भी प्रदेश परिवर्धित स्थानों में क्षेत्र से अप्रदेशों की एक-एक राशि प्राप्त होती है। इससे एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों को छोड़कर बाकी की अवगाहनायें क्षेत्रादेश से ही सप्रदेशी पुद्गल असंख्येय गुण होते हैं।

तथा वे द्विप्रदेशावगाहनादिक सर्वशेष पुद्गल-अवगाहना स्थान की बहुलता की अपेक्षा असंख्येय गुण होते हैं।

इससे द्रव्य से सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक हैं। इसी प्रकार काल से और भाव से विशेषाधिक हैं।

जिस कारण से—अप्रदेशों की भावादिक वृद्धि असंख्येय गुण है, उससे सप्रदेशों की क्षेत्रादि विशेष परिवर्द्धित है। अर्थात् भाव की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल से काल की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल असंख्येयगुण हैं; काल की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल से द्रव्य की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल असंख्येय गुण हैं तथा द्रव्य की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल से क्षेत्र की अपेक्षा अप्रदेशी पुद्गल असंख्येय गुण हैं। इसलिये क्षेत्र, द्रव्य, काल और भाव की अपेक्षा विपरीत क्रम से सप्रदेशी पुद्गलों की परिवृद्धि समझनी चाहिए :—

क्षेत्र की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल से द्रव्य की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक हैं, द्रव्य की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल से काल की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक हैं तथा काल की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल से भाव की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मीसाण संकमं पइ, सपएसा खित्तओ असंखगुणा ।
भणिया सट्ठाणे पुण, थोविच्चअ ते गहेअव्वा ॥२६॥

अभयदेवसूरि टीका—मिश्राणाम् इति अप्रदेश-सप्रदेशानां मीलितानां संक्रमं प्रति अप्रदेशेभ्यः, सप्रदेशेभ्यः सप्रदेशेषु अल्प-बहुत्वविचारे संक्रमे क्षेत्रतः सप्रदेशाः असंख्येयगुणाः क्षेत्रतोऽप्रदेशेभ्यः सकाशात्, स्वस्थाने पुनः केवलसप्रदेशचिन्तायां स्तोका एव ते क्षेत्रतः सप्रदेशा इति। एतदेव उच्यते ।

रत्नसिंहसूरि टीका—मिश्राणामित्यप्रदेशसप्रदेशानां मीलितानां संक्रमं प्रत्यप्रदेशेभ्यः सप्रदेशेष्वल्पबहुत्वविचारसंक्रमे क्षेत्रतोऽप्रदेशेभ्यः क्षेत्रतः सप्रदेशा असंख्येयगुणाः। स्वस्थाने पुनरप्रदेशान् विहाय केवलसप्रदेशचिन्तायां द्रव्यकालभावानां सप्रदेशानां क्रमशो विशेषाधिकानामपेक्षया स्तोका एव ते क्षेत्रतः सप्रदेशा इति ।

मिश्र के संक्रमण प्रत्यय सप्रदेशी क्षेत्र से असंख्यगुण कहे गये हैं तथा वे स्वयं के स्थान में थोड़े ही ग्रहण करना चाहिये । मिश्र अर्थात् साथ में मिले हुए अप्रदेश और सप्रदेश पुद्गल—उसके संक्रम प्रत्यय अप्रदेशों से सप्रदेशों के विषय के—अल्प-बहुत्व के विचार रूप संक्रमण में क्षेत्र से सप्रदेशी, क्षेत्र से अप्रदेशी से असंख्येय गुण हैं तथा स्वयं के स्थान में—मात्र सप्रदेशी के विचार में—वे क्षेत्र से सप्रदेश पुद्गल थोड़े ही हैं ॥२६॥

खेत्तेण सप्पएसा, थोवा दव्वद्धभावओ अहिया ।
सपएसप्पाबहुयं, सट्ठाणे अत्थओ एवं ॥२७॥

अभयदेवसूरि टीका—अर्थत इति व्याख्यानाऽपेक्षया ।

रत्नसिंहसूरि टीका—शेषसप्रदेशापेक्षया क्षेत्रतः सप्रदेशाः स्तोकाः, स्तोकत्वे च साध्ये युक्तिः पूर्वविचारितव । 'दव्वद्धभावओ अहिया' इति द्रव्यतः कालतो भावतश्च सप्रदेशाः क्रमशो विशेषाधिकाः। अर्थत इति व्याख्यानापेक्षया इत्थं स्वस्थाने सप्रदेशानां पुद्गलानामल्पबहुत्वमवगन्तव्यम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षेत्र की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल थोड़े हैं, इससे क्रमशः द्रव्य-काल-भाव की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक हैं। स्वस्थान में किसी की अपेक्षा के बिना सप्रदेशी पुद्गलों का अल्प-बहुत्व जानना चाहिए।

पढमं अपएसाणं, बीयं पुण होइ सप्पएसाणं।
तइयं पुण मीसाणं, अप्पबहुं अत्थओ तिन्नि॥२८॥

अभयदेवसूरि टीका—अर्थतो—व्याख्यानद्वारेण त्रीणि अल्पबहुत्वानि भवन्ति, सूत्रे तु एकमेव मिश्राऽल्प-बहुत्वम् उक्तमिति।

रत्नसिंहसूरि टीका—प्रथमं द्रव्याद्यप्रदेशानां चतुर्णां पुद्गलराशीनां परस्परमल्पबहुत्वमुक्तम्। द्वितीयं तेषामेव द्रव्यादितः सप्रदेशानाम्। तृतीयं मिश्राणामिति। सप्रदेशाप्रदेशानां मिलितानामित्यर्थतो व्याख्यान-द्वारेण त्रीण्यल्प-बहुत्वानि भवन्ति। सूत्रे त्वेकमेवाल्पबहुत्वमुक्तमिति।

प्रथम अप्रदेशी का, दूसरा सप्रदेशी का तथा तीसरा मिश्र का—इस प्रकार अर्थतः तीन प्रकार का अल्पबहुत्व होता है। अर्थ—व्याख्यान की अपेक्षा तीन प्रकार का अल्पबहुत्व है परन्तु सूत्र में एक ही मिश्र का अल्पबहुत्व है।

ठाणे ठाणे वड्ढइ भावाईणं जं अप्पएसाणं।
तं चिय भावाईणं, परिभस्सइ सप्पएसाणं॥२९॥

अभयदेवसूरि टीका—यथा किल कल्पनया लक्षं समस्तपुद्गलास्तेषु भाव-काल-द्रव्य-क्षेत्रतोप्रदेशाः क्रमेण एक-द्वि-पञ्च-दशसहस्रसंख्याः, सप्रदेशास्तु नवनवति-अष्टनवति-पञ्चनवति-नवतिसहस्रसंख्याः। ततश्च भावाऽप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशेषु सहस्रं वर्धते। तदेव भावसप्रदेशेभ्यः कालसप्रदेशेषु हीयते, इत्येवम् अन्यत्राऽपि इति। स्थापना चेयम्।

रत्नसिंहसूरि टीका—भावादीनामादिशब्दात्कालद्रव्यक्षेत्राणामप्रदेशानां स्थाने स्थाने यद्वर्द्धते, तदेव सप्रदेशानां भावादीनां परिभ्रश्यते। यथा किल कल्पनया लक्षं पुद्गलास्तेषु भावतः कालतो द्रव्यतः क्षेत्रतश्चा-प्रदेशाः क्रमेणैकद्विपञ्चदशसहस्रसंख्याः, सप्रदेशास्तु नवनवत्यष्टनवति-पंचनवति-नवतिसहस्रसंख्याः, ततश्च भावाप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशेषु सहस्रं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्धते, तदेव भावतः सप्रदेशेभ्यः कालतः सप्रदेशेषु हीयते। तथा यदेव कालाप्रदेशेभ्यो द्रव्याप्रदेशेषु सहस्रत्रयं वर्धते, तदेव कालसप्रदेशेभ्यो द्रव्य-सप्रदेशेषु हीयते। तथा यदेव द्रव्याप्रदेशेभ्यः क्षेत्राप्रदेशेषु सहस्रपंचकं वर्धते, तदेव द्रव्यसप्रदेशेभ्यः क्षेत्रसप्रदेशेषु हीयते।

अहवा खेत्ताईण जं अप्पएसाण हायए कमसो।
तं चिय खेत्ताईणं परिवड्ढइ सप्पएसाणं ॥३०॥

अवरो—परप्परसिद्धा वुड्ढी हाणी य होइ दोण्हं पि।
अप्पएस-सप्पएसाणं पोग्गलाणं सलक्खणओ ॥३१॥

ते चेव य ते चउहि वि, जमुवचरिज्जंति पोग्गला दुविहा।
तेण उ वुड्ढी हाणी, तेसिं अन्नोन्नसंसिद्धा ॥३२॥

अभयदेवसूरि टीका —चतुर्भिरिति भाव-कालादिभिः। उपचर्यन्ते इति विशेष्यन्ते।

रत्नसिंहसूरि टीका—अथवा द्रव्यक्षेत्रादीनां यदप्रदेशानां हीयते, क्रमशस्तदेव सप्रदेशानां क्षेत्रादीनां परिवर्धत इति। अयमर्थः—क्षेत्राप्रदेशेभ्यो द्रव्याप्रदेशेषु पंच सहस्रा हीयन्ते। तत एव क्षेत्रतः सप्रदेशेभ्यो द्रव्य-सप्रदेशेषु वर्धन्ते। तथा य एव द्रव्यतोऽप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशेषु त्रयः सहस्रा हीयन्ते त एव द्रव्यसप्रदेशेभ्यः कालसप्रदेशेषु वर्धन्ते। तथा यदेक सहस्रं कालाप्रदेशेभ्यो भावाप्रदेशेषु हीयते। तदेव कालसप्रदेशेभ्यो भावसप्रदेशेषु वर्धत इति।

परस्परतोऽन्योन्यापेक्षया देकर्षेण सिद्धा प्रतिष्ठिता स्वलक्षणतः स्वस्व-रूपतो वृद्धिर्हानिश्च भवति, द्वयोरपीति पुद्गलानां भावकालद्रव्यक्षेत्र-विशिष्टानां क्रमोत्क्रमाभ्यां वृद्धिहानिमतामप्रदेशराशेः सप्रदेशरा-शेश्चेत्यर्थः :

यस्मात्पुद्गला द्विविधाः सप्रदेशा अप्रदेशाश्चेत्यर्थः। उपचर्यन्ते विशिष्यन्ते चतुर्भिरपि भावकालादिभिः परमार्थतस्तु ते एव ते नान्ये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अयमर्थः—ये किल कल्पनया पुद्गला लक्षसंख्या उक्ताः परमार्थेन तु अनन्ताः सन्ति, तेषां मध्यात्केचित् द्रव्यतोऽप्रदेशाः शेषास्तु द्रव्यतः सप्रदेशाः। य एव द्रव्यतोऽप्रदेशाः सप्रदेशाश्च त एव च कालादिभिरप्यप्रदेशाः सप्रदेशाश्च विचार्यन्ते, तेन तेषां पुद्गलानां वृद्धिर्हानिश्चान्योन्यसंसिद्धा, इतरेतराश्रयेति परस्परापेक्षयेत्यर्थः।

एएसिं रासीणं णिदरिसणमिणं भणामि पच्चक्खं।
वुड्ढीए सव्वपुग्गला जावं तावाण लक्खाओ ॥३३॥

पाठान्तर—जावं तावाण लक्खो उ।

अभयदेवसूरि टीका—कल्पनया यावन्तः सर्वपुद्गलास्तावतां लक्ष इति।

रत्नसिंहसूरि टीका—कल्पनया यावन्तः सर्वपुद्गलास्तावतां लक्षमिति।

एक्कं च दो अ पंच य, दस य सहस्साइं अप्पएसाणं।
भावाईणं कमसो, चउण्हवि जहोवइट्ठाणं ॥३४॥

अभयदेवसूरि टीका—× × ×।

रत्नसिंहसूरि टीका—एकं द्वे पंच दश सहस्राणि अप्रदेशानां भावादीनां भावकालद्रव्यक्षेत्राणां चतुर्णामपि यथोपदिष्टानां क्रमेणावगन्तव्यानि।

णवई पंचाणवई अट्ठाणउई, तहेव नवनवई।
एवइयाइं सहस्साइं सप्पएसाण विवरीअं ॥३५॥

रत्नसिंहसूरि टीका—वैपरीत्येन सप्रदेशानां नवतिः पंचनवतिरष्टनवतिर्नवनवतिश्च सहस्राणां क्रमेणावगन्तव्या। वैपरीत्यं चेदम्—क्षेत्रतः सप्रदेशानां नवतिसहस्राणि। द्रव्यतः सप्रदेशानां पंचनवतिसहस्राणि। कालतः सप्रदेशानामष्टनवतिसहस्राणि। भावतः सप्रदेशानां नवनवतिसहस्राणीति।

एएसिं जहासंभवं अत्थोवणयं करिज्ज रासीणं।
सब्भावओ य जाणेज्जा ते अणंते जिणाभिहिए ॥३६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्नसिंहसूरि टीका—एतेषां पूर्वोक्तानां सप्रदेशाप्रदेशानां राशीनां यथासंभवमर्थोपनयमर्थभावनां कुर्यात्। अर्थभावना तु सप्रदेशाप्रदेशाना-मल्पबहुत्वविचाररूपा पूर्वव्याख्याने कृतैवेति नेह प्रतन्यते। अत्र लक्षसंख्यया पुद्गलानामल्पबहुत्वविचारणमव्युत्पन्नमतिशिष्यव्युत्पादनार्थम्। परमार्थ-तस्तु तान् पुद्गलाननन्तान् जिनाभिहितान् जानीयादिति।

—पुद्गल षट्त्रिंशिका

स्थान-स्थान में जिन भावादिक अप्रदेशों की वृद्धि होती है उन्हीं भावादिक सप्रदेशों की हानि होती है। जैसे कि कल्पना से सर्व पुद्गल एक लाख की संख्या वाले हैं उनमें भाव से अप्रदेशी पुद्गल १००० हैं; काल से अप्रदेशी पुद्गल २००० है, द्रव्य से अप्रदेशी पुद्गल ५००० हैं, क्षेत्र से अप्रदेशी पुद्गल १०००० हैं और भाव से सप्रदेशी पुद्गल ९९००० हैं, काल से सप्रदेशी पुद्गल ९८००० हैं, द्रव्य से सप्रदेशी पुद्गल ९५००० हैं, क्षेत्र से सप्रदेशी पुद्गल ९०००० हैं। इस कारण से भाव से अप्रदेशी से काल से अप्रदेशों में १००० की वृद्धि होती है। वही १००० की संख्या भाव सप्रदेशों से काल सप्रदेशों में हीन होती है। इसी प्रकार अन्यत्र भी जान लेना चाहिए।

अथवा क्षेत्रादि अप्रदेशों की क्रम से जितनी हानि होती है वही उतनी ही क्षेत्रादि—सप्रदेशों की परिवृद्धि होती है।

अप्रदेशी और सप्रदेशी—दोनों पुद्गलों की परस्पर हानि और वृद्धि संसिद्ध है।

जिस कारण वे दोनों प्रकार के पुद्गल चार प्रकार से उपचरित होते हैं उस कारण से उन पुद्गलों की परस्पर वृद्धि और हानि संसिद्ध है। चार प्रकार से अर्थात् भाव, काल, द्रव्य और क्षेत्र से उपचरित होते हैं, विशेषित होते हैं।

इन राशियों के प्रत्यक्ष ये उदाहरण कहे हैं। बुद्धि से ऐसी कल्पना करनी चाहिए—जितने पुद्गल हैं वे सब मिलकर १००००० एक लाख संख्या वाले हैं अर्थात् कल्पना से—जितने पुद्गल हैं उनकी एक लाख की संख्या समझनी चाहिए।

क्रमपूर्वक एक, दो, पाँच और दस हजार पुद्गल यथोपदिष्ट भावादिक—चारों की भी अपेक्षा अप्रदेशिक हैं।

नवे, पचानवे, अठानवे, उसी प्रकार निनानवे हजार पुद्गल भावादिक चारों की अपेक्षा विपरीत प्रकार से सप्रदेशिक हैं। अर्थात् क्षेत्रतः सप्रदेशी पुद्गल ९००००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं ; द्रव्यतः सप्रदेशी पुद्गल ९५००० हैं, कालतः सप्रदेशी पुद्गल ९८००० हैं, भावतः सप्रदेशी पुद्गल ९९००० हैं।

जैसा सम्भव हो वैसा ही राशियों का अर्थोपन्यास करना चाहिए और सद्भाव से सम्यग् प्रकार से ऐसा जानना चाहिए। जिनेश्वरों ने राशि अनन्त कही है।

·०८·२ परमाणु पर विवेचन गाथा

> खित्तोगाहणदव्वे, भावट्ठाणाउ अप्पबहुअत्ते।
> थोवा असंखगुणिया, तिन्नि अ सेसा कहं नेया? ॥१॥

रत्नसिंहसूरि टीका—इह पुद्गलानां क्षेत्रे, अवगाहनायां, द्रव्ये, भावे च स्थितिकालमाश्रित्य अल्पबहुत्वविचारे क्षेत्रस्थितिरल्पा। अवगाहनादीनां स्थितयः शेषास्तिस्रोऽपि प्रत्येकं क्रमेणाऽसंख्यगुणिताः कथं ज्ञेया? इति संक्षेपार्थः। विस्तरार्थस्तु—स्थानायुरिति पदं क्षेत्रादीनां प्रत्येकमभिसंबध्यते। तत्र क्षेत्रस्थानायुः, अवगाहनास्थानायुः, द्रव्यस्थानायुः, भावस्थानायुश्च। तत्र क्षेत्रस्थानायुः क्षेत्रे एकप्रदेशादौ स्थानं यत्पुद्गलानामवस्थानं तद्रूपमायुः क्षेत्रस्थानायुः, पुद्गलानामेकक्षेत्रेऽवस्थानमित्यर्थः १ अवगाहनाया नियतपरिमाणनभःप्रदेशव्यापित्वस्य पुद्गलानां स्थानमवस्थानं तद्रूपमायुरवगाहनास्थानायुः, पुद्गलानामेकयावगाहनयावस्थानकाल इत्यर्थः २ द्रव्यस्याणुत्वादिभावेन यदवस्थानं तद्रूपमायुर्द्रव्यस्थानायुः, पुद्गलानामेकस्कंधपरिणामेनावस्थानकाल इत्यर्थः ३ भावस्य कृष्णत्वादिगुणकदम्बकस्य स्थानमवस्थानं तद्रूपमायुर्भावस्थानायुः, पुद्गलेषु विवक्षितकृष्णत्वादिगुणानामवस्थानकाल इत्यर्थः ४। ननु क्षेत्रस्यावगाहनायाश्च को भेदः? उच्यते, क्षेत्रमवगाढमेव, अवगाहना तु विवक्षितात्क्षेत्रादन्यत्रापि पुद्गलानां तत्परिमाणक्षेत्रावगाहित्वमिति।

अयमभिप्रायः—यदा विवक्षितक्षेत्रे कश्चित्पुद्गलस्कन्धोऽसत्कल्पनया नभःप्रदेशदशकावगाढो यावत्तिष्ठति, तावत्क्षेत्रस्थानायुरित्युच्यते। यदा तु विवक्षितक्षेत्रात्क्षेत्रान्तरेषु स एव पुद्गलस्कन्धो नभःप्रदेशदशकावगाढतयैव यावत्संचरति, तावदवगाहनास्थानायुरित्युच्यते। यस्तु स एव पुद्गलस्कन्धो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विस्रसापरिणामेन पिण्डितरूतन्यायेन घनीभवन्नभःप्रदेशपंचकेऽपिण्डितरूत-न्यायेन स्फारीभवन्नभःप्रदेशपंचदशके वा यावत्तिष्ठति, तावद्द्रव्यस्थानायु-रित्युच्यते। यदा तु स एव पुद्गलस्कन्धः स्वपरमाणुवियोजनेन अपरपरमाणु-संयोजनेन वा द्रव्यान्तरत्वमापन्नोऽपि यावत्पूर्वपर्यायान् कृष्णत्वादीन्न मुञ्चति, तावद्भावस्थानायुरित्युच्यते। तेषां क्षेत्रावगाहनाद्रव्यभावस्थानायुषां पर-स्परेण यदल्पबहुत्वं तस्मिन् विचार्ये पुद्गलानां क्षेत्रावस्थानायुः सर्वस्तोकं, शेषाण्यवगाहनास्थानायुःप्रभृतीनि त्रीणि यथोत्तरमसंख्यगुणानीति कथमिति शिष्यप्रश्नः।

क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु, द्रव्यस्थानायु और भावस्थानायु—इन सब में क्षेत्रस्थानायु सबसे अल्प है और बाकी के तीन स्थान (उत्तरोत्तर) असंख्यगुण है।

यहाँ पुद्गलों के क्षेत्र, अवगाहना, द्रव्य और भाव में स्थितिकाल की अपेक्षा अल्पबहुत्व का विचार करने पर क्षेत्र की स्थिति अल्प होती है तथा अवगाहना, द्रव्य और भाव इन तीनों में प्रत्येक की स्थिति को क्रमशः असंख्यगुण कैसे माना जाय?

स्थानायु—यह पद क्षेत्रादि सभी के साथ संबद्ध होता है जिससे कहना होगा—क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु, द्रव्यस्थानायु और भावस्थानायु। एक प्रदेशादि क्षेत्र में पुद्गलों के अवस्थान को क्षेत्रस्थानायु कहते हैं। नियत परिमाण आकाश-प्रदेश में पुद्गलों का जो अवगाहन होता है उसे अवगाहनास्थानायु कहते हैं अर्थात् पुद्गलों की एक अवगाहना में जो काल व्याप्त होता है वह अवगाहनास्थानायु होती है।

पुद्गल द्रव्य का परमाणु, द्विप्रदेशी आदि स्कंध रूप से रहना—द्रव्यस्थानायु कहलाता है अर्थात् पुद्गलों का एक स्कंधपरिणाम में अवस्थानकाल। पुद्गलों के भाव—कृष्णत्वादि गुणों का जो अवस्थान है वह भावस्थानायु है अर्थात् पुद्गलों का श्यामत्वादि किसी एक गुण में विद्यमानता का समय भावस्थानायु कहलाती है—पुद्गलों में विवक्षित कृष्णत्वादि गुणों का अवस्थानकाल।

प्रश्न होता है कि क्षेत्र और अवगाहना में क्या भेद है? क्षेत्र तो अवगाढ है ही अर्थात् पुद्गलों से अवगाढ स्थान क्षेत्र कहलाता है। विवक्षित क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भी पुद्गलों का नियत क्षेत्र में रहना अवगाहना कहलाती है अर्थात् पुद्गलों का आधार स्थल रूप एक प्रकार का आकार अवगाहना कहलाती है और पुद्गल जहाँ रहता है, वह 'क्षेत्र' कहलाता है। अभिप्राय यह है कि—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवक्षित क्षेत्र में कोई पुद्गलस्कंध कल्पित रूप से आकाश के दस प्रदेशों को अवगाढ कर जब तक रहता है तब तक उस पुद्गलस्कंध का वह अवस्थान क्षेत्र-स्थानायु कही जाती है।

वही पुद्गलस्कंध जब विवक्षित क्षेत्र से क्षेत्रान्तरों में जाकर भी आकाश के दस ही प्रदेश को अवगाढ करके रहता है तब तक वह अवस्थान उसकी अवगाहना-स्थानायु कहलाती है।

जब वही पुद्गलस्कंध विस्रसापरिणाम वश पिण्डितरूत न्याय (एकत्रित और शब्दायमान) से संकुचित होता हुआ आकाश के पाँच प्रदेशों में अथवा अपिण्डितरूत न्याय (विस्तरित हुआ और शब्दायमान) से फैलता हुआ आकाश के पन्द्रह प्रदेशों को अवगाढ करके रहता है उतने समय पर्यन्त उस पुद्गलस्कंध की द्रव्यस्थानायु कहलाती है।

जब वही पुद्गलस्कंध स्व-परमाणु के वियोजन अथवा अपर-परमाणु के संयोजन से द्रव्यान्तरत्व को प्राप्त होकर भी जब तक अपने पूर्व पर्याय—कृष्णत्वादि गुण को नहीं छोड़ता है तब तक कृष्णत्वगुण में अवस्थान उस पुद्गलस्कंध की भावस्थानायु कहलाती है।

उन क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु, द्रव्यस्थानायु और भावस्थानायुओं में परस्पर में अल्पबहुत्व होता है तब विचार करने पर पुद्गलों की क्षेत्रस्थानायु सबसे कम होती है, शेष जो अवगाहनास्थानायु प्रभृति तीन हैं उनमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुण कैसे हैं यह प्रश्न रह जाता है।

खित्तामुत्तत्ताओ, तेण समं बंधपच्चयाभावा।
तो पोग्गलाण थोवो, खित्तावट्ठाणकालो उ॥२॥

अभयदेवसूरि टीका—क्षेत्रस्य अमूर्तत्वेन क्षेत्रेण सह पुद्गलानां विशिष्ट-बंधप्रत्ययस्य स्नेहादेरभावाद् नैकत्र ते चिरं तिष्ठन्ति इति शेषः, यस्माद् एवं तत इत्यादि वक्तव्यम्।

रत्नसिंहसूरि टीका—क्षेत्रास्याकाशस्यामूर्त्तत्वेन तेन क्षेत्रेण सह पुद्-गलानां विशिष्टबंधप्रत्ययस्य विशिष्टबंधकारणस्य स्नेहादेरभावान्नैकत्र क्षेत्रेऽतिचिरं तिष्ठन्तीति शेषः। अयमभिप्रायः—विवक्षितक्षेत्रे विशिष्ट-परिणामवन्तः पुद्गलाश्चिरावस्थानकारणाभावात् कियन्तमपि कालं स्थित्वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तमेव परिणाममत्यजन्तोऽपरापराणि क्षेत्राणि स्पृशन्तीति यस्मादेवं ततः पुद्गलानां क्षेत्रावस्थानकालः 'थोवो' इति सर्वस्तोकः इत्यर्थः ।

क्योंकि क्षेत्र (आकाश) अमूर्तिक होने से उसके साथ पुद्गलों के बंध का कारण स्निग्धत्व न होने से पुद्गलों का क्षेत्रावस्थान काल सबसे थोड़ा है अर्थात् क्षेत्र अमूर्तिमान होने के कारण, इसीलिए उसमें पुद्गलों का विशिष्ट बंध का कारण स्नेह आदि न होने के कारण—वह पुद्गल एक ही क्षेत्र में लम्बे काल तक नहीं रहता है ।

विवक्षित क्षेत्र में विशिष्ट परिणाम वाले पुद्गल एक स्थान में बहुत समय तक नहीं रहने के कारण—कुछ काल उस स्थान में रहकर उस परिणाम को न छोड़ते हुए दूसरे क्षेत्रों का स्पर्श करते है जिस कारण से ऐसा होता है। इस प्रकार क्षेत्रस्थानायु सबसे अल्प है ।

अन्नखित्तगयस्स वि, तं चिअ माणं चिरंपि संचरइ ।
ओगाहणनासे पुण, खित्तन्नत्तं फुडं होइ ।।३।।

अभयदेवसूरि टीका—इह पूर्वाऽर्धेन क्षेत्राद्धाया अधिका अवगाहनाद्धा इत्युक्तम् उत्तरार्धेन तु अवगाहनाद्धातो नाऽधिका क्षेत्राद्धा—इति ।

रत्नसिंहसूरि टीका—अन्यक्षेत्रगतस्यापि पुद्गलस्कंधस्य तदेव प्रमाणं सैवावगाहना चिरमपि संचरति अवतिष्ठते । अयमाशयः—विवक्षितक्षेत्रे यावत्सु आकाशप्रदेशेषु परमाणुस्कंधोऽवस्थित आसीत्, तावत्प्रदेशव्यापितयाऽन्यक्षेत्रगतोऽपि लभ्यत इति । अवगाहनानाशे पुनः क्षेत्रान्यत्वं स्फुटं भवति ; अवगाहनानाशश्च परमाणुस्कंधस्य संकोचेन स्तोकप्रदेशाऽवस्थायितायां विकाशेनाधिकप्रदेशावस्थायितायां वा संभवतीति ।

ओगाहणावबद्धा, खित्तद्धा अविकआवबद्धा य ।
न उ ओगाहणकालो, खित्तद्धामित्तसंबद्धो ।।४।।

अभयदेवसूरि टीका—अवगाहनायाम्—अगमनक्रियायाम् च नियता क्षेत्राद्धाविविक्षित-अवगाहनासद्भाव एव अक्रियासद्भाव एव च तस्या भावात्—उक्तव्यतिरेके च अभावात्—अवगाहानाद्धा न क्षेत्रमात्रे नियता, क्षेत्रद्धाया अभावेऽपि तस्या भावादिति ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

रत्नसिंहसूरि टीका—अवगाहनायां नियतप्रदेशव्यापितायां, अक्रियायां चागमनरूपायामबद्धा नितया नियन्त्रिता क्षेत्राद्धा एकक्षेत्रावस्थानकालो विवक्षितावगाहनासद्भाव एव अक्रियासद्भाव एव च क्षेत्राद्धाया भावात्। उक्तव्यतिरेके चाभावात्। अवगाहनाद्धा तु न क्षेत्रमात्रे नियता, क्षेत्राद्धाया अभावेऽप्यवगाहनाद्धाया भावादिति। अथ निगमनम्—

जम्हा तत्थन्नत्थ य, सच्चिअ ओगाहणा भवे खित्ते।
तम्हा खेत्तद्धाओऽवगाहणऽद्धा असंखगुणा ॥५॥

अभयदेवसूरि टीका—अथ द्रव्याऽऽयुर्बहुत्वं भाव्यते।

रत्नसिंहसूरि टीका—यस्मात्तत्र विवक्षितेऽन्यत्र च विवक्षितादितर-तस्मिंश्च क्षेत्रे सैव प्राक्तनक्षेत्रसंबद्धैवावगाहना भवेत्, तस्मात्क्षेत्राद्धाया सकाशादवगाहनाद्धाऽसंख्यातगुणेति।

एक स्थल से अन्य क्षेत्र में गए हुए पुद्गल भी उसी मान में वहाँ लम्बे काल तक रहते हैं। यदि अवगाहना का नाश हो जाता है तो क्षेत्र-भिन्नता स्फुट होती है।

पुद्गल स्कंध के अन्य क्षेत्र में जाने पर भी उसी प्रमाण में वही अवगाहना बहुत काल तक रहती है। इसका अभिप्राय यह है कि विवक्षित क्षेत्र में जितने आकाश प्रदेशों में परमाणु-स्कंध अवस्थित था उतने प्रमाण प्रदेश में व्यापकता अन्य क्षेत्र में जाने पर भी प्राप्त होती है। अवगाहना का नाश होने पर पुनः क्षेत्र का अन्यत्व स्फुट हो जाता है। अवगाहना का नाश दो कारणों से होता है—पहला कारण यह है—परमाणु-स्कंध-संकोच से, दूसरा कारण है—स्तोक प्रदेश के अवस्थान में विकास से या अधिक प्रदेश में अवस्थान से।

यहाँ पर पूर्वार्ध से—क्षेत्रकाल से अधिक अवगाहनाकाल होता है तथा उत्तरार्ध से अवगाहनाकाल से क्षेत्रकाल अधिक नहीं होता है। यह कैसे कहा गया है?

उत्तर में कहा जाता है कि—पुद्गलों का क्षेत्रावस्थान काल—अमुक क्षेत्र में नियत रूप से स्थित रहने का काल—अवगाहना और क्रियारहितपन से अवबद्ध है अर्थात् पुद्गल अमुक स्थल में नियत तभी रह सकता है जब वे अमुक अवगाहना में होते हैं और तब वह निष्क्रिय होता है अतः पुद्गलों का एकत्रावस्थान अवगाहना से और निष्क्रियपन से अवबद्ध है परन्तु उससे विपरीत अर्थात् अवगाहनाकाल-क्षेत्राव-स्थान काल मात्र में संबद्ध नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नियत प्रदेश अवगाहना में अक्रिया—अगमन रूप क्रिया में नियन्त्रित जो क्षेत्रकाल है वही एक क्षेत्रावस्थान काल है। अवगाहना और अक्रिया का सद्भाव ही क्षेत्रकाल माना जाता है। उपर्युक्त व्यतिरेक में सत्ता नहीं रहती है क्योंकि अवगाहना काल क्षेत्र मात्र में नियत नहीं रहता है चूंकि क्षेत्रकाल के अभाव में भी अवगाहना काल रहता है।

विश्लेषण—तात्पर्य यह है कि जिस समय पुद्गल की किसी प्रकार की—अमुक जाति की अवगाहना होती है अर्थात् वे पुद्गल स्वयं निष्क्रिय (हलन-चलन क्रिया से रहित) होते हैं तभी उन पुद्गलों का क्षेत्रावस्थान नियत होता है और यदि वैसा नहीं होता है तो उनकी किसी भी प्रकार की—अमुक जाति की अवगाहना नही होती है और वे पुद्गल निष्क्रिय नहीं होते तो उन पुद्गलों का क्षेत्रावस्थान संभव नहीं होता है। जब पुद्गलों का क्षेत्रावस्थान—अवगाहना और निष्क्रियता के अधीन है तब उससे विपरीत अर्थात् अवगाहना क्षेत्रमात्र में नियत नहीं है क्योंकि क्षेत्र और काल के अभाव में अवगाहना रहती है।

जिस कारण से विवक्षित क्षेत्र में तथा विवक्षित क्षेत्र से इतर क्षेत्र में वही पूर्वोक्त क्षेत्र संबंधी अवगाहना होती है अर्थात् एक क्षेत्र में रहा हुआ पुद्गल दूसरे क्षेत्र में जाने पर भी उसकी वही अवगाहना होती है इसलिए क्षेत्रस्थानायु की अपेक्षा अवगाहनास्थानायु असंख्यातगुण होती है।

अब द्रव्यस्थानायु का विचार किया जाता है :

संकोअविकोएण व, उवरमिआएऽवगाहणाए वि।
तित्तिअमित्ताणं चिअ, चिरंपि दव्वाणऽवत्थाणं ॥६॥

अभयदेवसूरि टीका—संकोचेन, विकोचेन चोपरतायाम् अपि अवगाहनायां यावन्ति द्रव्याणि पूर्वमासन् तावतामेव चिरमपि तेषाम् अवस्थानं संभवति। अनेनाऽवगाहनानिवृत्तौ अपि द्रव्यं न निवर्तते इत्युक्तम्, अथ द्रव्यनिवृत्तिविशेषेऽवगाहना निवर्तते एव इत्युच्यते।

रत्नसिंहसूरि टीका—संकोचेन विकोचेन वा अवगाहनायामुपरतायामपि यावन्ति द्रव्याणि यत्संख्याः पुद्गलाः स्कंधरूपतामापन्नाः पूर्वमासंस्तावतामेव चिरमपि तेषामवस्थानं संभवति। अयमाशयः—विवक्षितक्षेत्रप्रदेशव्यापित्वं नाम परमाणूनामवगाहना, तेभ्योऽल्पतरेषु बहुतरेषु च क्षेत्रप्रदेशेषु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तावतामेव पुद्गलानां सूक्ष्मी—भवनं संकोचः, स्फारीभवनं विकोचः। ततश्च संकोचविकोचाभ्यामवगाहनाया उपरमो भवतीति। एतवताऽव-गाहनानिवृतावपि द्रव्यं न निवर्तत इत्युक्तम्।

संकोच या विकोच के कारण अवगाहना के उपरत होने पर भी जितने द्रव्य, जितने संख्यक पुद्गल स्कंध रूप को पहले प्राप्त कर चुके हैं उतने ही द्रव्यों में बहुत काल तक उन पुद्गलों का अवस्थान संभव है। अभिप्राय यह है कि विवक्षित क्षेत्र प्रदेश की व्यापकता ही परमाणुओं की अवगाहना है। उससे अल्पतर या बहुतर क्षेत्र प्रदेशों में उतने ही पुद्गलों का सूक्ष्म होना संकोच है तथा विस्तार होना—फैलना विकोच है। इसके बाद संकोच और विकोच के द्वारा अवगाहना से उपरम होता है ; इससे सिद्ध होता है कि अवगाहना की निवृत्ति होने पर भी द्रव्य की निवृत्ति नहीं होती है। अर्थात् अवगाहना की निवृत्ति हो जाने पर भी द्रव्य लम्बे काल तक रहता है।

संघायभेयओ वा, दव्वोवरमे पुणाइ संखित्ते।
नियमा तद्दव्वोगाहणाहनासो न संदेहो ॥७॥

अभयदेवसूरि टीका—संघातेन, पुद्गलानां भेदेन वा तेषामेव यः संक्षिप्तः—स्तोकावगाहनः स्कंधः—न तु प्राक्तनाऽवगाहनः, तत्र यो द्रव्यो-परमो द्रव्याऽन्यथात्वम्, तत्र सति न च संघातेन न संक्षिप्तः स्कंधो भवति, तत्र सति सूक्ष्मतरत्वेनाऽपि तत्परिणतेः—श्रवणात् नियमात् तेषां द्रव्याणाम् अवगाहनाया नाशो भवति, कस्माद् एवम्। इत्यत उच्यते।

रत्नसिंहसूरि टीका—परमाणुस्कंधस्यापरपरमाणुभिः सह संगमः संघातः, तस्यैव कतिपयपरमाणूनां विघटनं भेदः, ततः संघाताद्भेदाद्वा पुनः परमाणूनां यः संक्षिप्तः स्तोकावगाहन (स्कंधो न तु प्राक्तनावगाहन) स्तत्र सति यो द्रव्योपरमो द्रव्यान्यत्वं लघुतया गुरुतया वा पूर्वपरिणामोच्छेद इत्यर्थः। तत्र सति (न च संघातेन न संक्षिप्तः स्कंधो भवति, तत्र सति सूक्ष्मतरत्वेनापि तत्परिणतेः श्रवणात्) नियमात्तेषां द्रव्याणामगाहनाया नाशो भवति।

संघात अथवा भेद से द्रव्य संक्षिप्त होता है। इसके होने के बाद द्रव्य का उपरम होता है तब उस द्रव्य की अवगाहना का नाश नियमतः होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु-स्कंध दूसरे परमाणुओं के साथ संघात होने से, उसी परमाणु-स्कंध का कुछ परमाणुओं के अलग होने से भेद होता है। चूंकि पुद्गलों के संघात या पुद्गलों के भेद से उन पुद्गलों का जो स्कंध है वह पूर्व की तरह अवगाहनावाला नहीं है, परन्तु संक्षिप्त—स्तोक अवगाहनावाला होता है अर्थात् वहाँ रहने पर द्रव्य का उपरम अर्थात् द्रव्य का परिणमन—लघुता और गुरुता के कारण पूर्वपरिणाम का उच्छेद होता है। संघात के द्वारा स्कंध संक्षिप्त नहीं होता है—ऐसी बात नहीं है—क्योंकि सूक्ष्मता होने के कारण उसकी परिणति सुनी जाती है। अस्तु पूर्व में जिस स्थिति में वह द्रव्य था उन स्थिति में द्रव्य का रहना नहीं हुआ। अतः उस प्रकार होने से नियम से उन द्रव्यों की अवगाहना का नाश होता है।

ओगाहद्धा दव्ये, संकोअविकोयओ य अवबद्धा।
न उ दव्वं संकोअणविकोअमित्तंमि संबद्धं ॥८॥

अभयदेवसूरि टीका—अवगाहनाद्धा द्रव्येऽवबद्धा नियतत्वेन संबद्धा, कथम् ? संकोचाद् विकोचाच्च संकोचादि परिहृत्य इत्यर्थः। अवगाहना हि द्रव्ये संकोचविकोचयोरभावे सति भवति, तत्सद्भावे च न भवति ; इत्येवं द्रव्ये अवगाहना अनियतत्वेन संबद्धा इत्युच्यते, द्रुमत्वे खदिरत्वम् इव, इति उक्तविपर्ययमाह—न पुनर्द्रव्यं संकोचन-विकोचनमात्रे सत्यप्यवगाहनायां नियतत्वेन संबद्धम्, संकोचनविकोचाभ्याम् अवगाहनानिवृत्तावपि द्रव्यं न निवर्तते इत्यवगाहनायां तन्नियतत्वेनाऽसंबद्धम् इत्युच्यते, खदिरत्वे द्रुमत्ववत्, इति। अथ निगमनम्।

रत्नसिंहसूरि टीका—अवगाहनाद्धा अवगाहनावस्थानकालो द्रव्येऽवबद्धा नियतत्वेन संबद्धा, कथं ? संकोचाद्विकोचाच्च परमाणूनां सूक्ष्मपरिणामतयाऽन्योन्यानुप्रवेशः संकोचः, सूक्ष्मपरिणामपरिणतानां तु बादरपरिणामतया भवनं विकोचः, तौ संकोचविकोचौ समाश्रित्येत्यर्थः। अवगाहना हि द्रव्ये संकोचविकोचयोरभावे भवति संकोचविकोचसद्भावे च न भवतीत्येवं द्रव्येऽवगाहना नियतत्वेन संबद्धेत्युच्यते—द्रुमत्वे खदिरत्वमिव नहि यत्र द्रुमत्वं नास्ति तत्र खदिरत्वं प्राप्यत ति। उक्तविपर्ययमाह—न पुनर्द्रव्यं संकोचनविकोचनमात्रे सत्यपि अवगाहनायां नियतत्वेन संबद्धं। संकोचनेन च अवगाहनानिवृत्तावपि द्रव्यं न निवर्त्तते इत्यवगाहनायां द्रव्यं नियतत्वेना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संबद्धमित्युच्यते खदिरत्वे द्रुमत्ववत्; खदिरत्वमन्तरेणापि द्रुमत्वस्य शिंशपादिष्वप्युपलम्भात्।

संकोच और विकोच की अतिरिक्त स्थिति में अवगाहनाकाल द्रव्य में सम्बद्ध है अर्थात् जिस समय द्रव्य संकोच और विकोच से रहित होता है उस समय उसमें अवगाहना संबद्ध रहती है परन्तु जिस समय संकोच और विकोच होता है उस समय द्रव्य में अवगाहना संबद्ध नहीं होती है अर्थात् संकोचन और विकोचन के अभाव में द्रव्य में अवगाहना होती है और संकोचनादि की विद्यमानता में द्रव्य में अवगाहना नहीं रहती है। इस प्रकार द्रव्य और अवगाहना का सहचरपन अनियत है परन्तु द्रव्य संकोचन और विकोचन मात्र में संबद्ध नहीं है अर्थात् संकोचन विकोचन हो या न हो किन्तु द्रव्य का सद्भाव रहता ही है।

अवगाहनाकाल अवगाहनावस्थानकाल रूप द्रव्य में नियत रूप से संबद्ध रहता है अर्थात् संकोच और विकोच को छोड़कर अवगाहनाकाल द्रव्य में नियत रूप से संबद्ध है। [परमाणुओं के सूक्ष्म परिणाम के द्वारा एक दूसरे में प्रवेश को संकोच कहते हैं तथा सूक्ष्म परिणाम से परिणत द्रव्यों का बादर परिणाम से परिणत होना—विकोच कहलाता है] इन दोनों संकोच और विकोच का आश्रय लेकर द्रव्य में संकोच और विकोच का अभाव होने पर अवगाहना होती है तथा संकोच और विकोच के सद्भाव में अवगाहना नहीं होती है। जिस प्रकार जहाँ पर द्रुमत्व नहीं है वहाँ पर खदिरत्व भी प्राप्त नहीं होता है। इसके विपर्यय में कहा गया है कि संकोच और विकोच मात्र का सद्भाव रहने पर अवगाहना में द्रव्य संकोच-विकोच की अपेक्षा नियत रूप से संबद्ध नहीं है। जिस प्रकार वृक्षपन में खदिर—खेरपन रहता है उसी प्रकार जिसके जब संकोच और विकोच का अभाव होता है तब द्रव्य में अवगाहना रहती है। अवगाहना की निवृत्ति होने पर भी द्रव्य का निवर्तन नहीं होता है क्योंकि अवगाहना में द्रव्य नियत रूप से संबद्ध नहीं रहता है। जैसे—खदिरत्व के न रहने पर भी द्रुमत्व-शिंशप आदि वृक्षों में प्राप्त होता है।

जम्हा तत्थन्नत्थ व, दव्वं ओगाहणाइ तं चेव।
दव्वद्धासंखगुणा, तम्हा ओगाहणऽद्धाओ ॥९॥

अभयदेवसूरि टीका—अथ भावायुर्बहुत्वं भाव्यते।

रत्नसिंहसूरि टीका—यस्मात्तत्र विवक्षितावगाहनायां अन्यत्र संकोच-विकोचकृतेऽवगाहनान्तरे द्रव्यं तदेव लभ्यते, चिरावस्थायित्वात्तद्द्रव्यावष्ट-ब्धपरमाणुसंख्यायास्तदवस्थत्वात्। तस्मादवगाहनाद्धातो द्रव्याद्धाऽसंख्य-गुणेति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संघायभेअओ वा, दव्वोवरमेऽवि पज्जवा संति ।
तं कसिणगुणविरामे, पुणाइ दव्वं न ओगाहो ॥१०॥

अभयदेवसूरि टीका—संघातादिना द्रव्योपरमेऽपि पर्यवाः सन्ति, यथा घृ(मृ)ष्टपटे शुक्लादिगुणाः—सकलगुणोपरमे तु न तद् द्रव्यम्, न चावगाहनाऽनुवर्तते अनेन पर्यायाणां चिरस्थानम्, द्रव्यस्य तु अचिरम् इत्युक्तम्, अथ कस्मादेवम् ? इत्युच्यते ।

रत्नसिंहसूरि टीका—संघातभेदौ पूर्ववत् । ततः संघातादिना द्रव्योपरमेऽपि द्रव्यान्यथात्वेऽपि पर्यवा वर्णगंधादयः सन्ति, यथा घृष्टपटे शुक्लादिगुणाः सकलगुणोपरमे पुनर्न तद्द्रव्यं न द्रव्यावगाहोऽनुवर्त्तते, अनेन पर्यवाणां चिरस्थानं द्रव्यस्यत्वचिरमित्युक्तम् ।

जिस कारण से वहाँ पर विवक्षित अवगाहना में और अन्यत्र संकोच-विकोच के द्वारा दूसरी अवगाहना में वही द्रव्य प्राप्त होता है क्योंकि तत्र स्थित परमाणु संख्या के बहुत समय तक रहने के कारण द्रव्य का वही रूप रहता है इसलिए अवगाहना-स्थानायु की अपेक्षा द्रव्यस्थानायु असंख्येयगुणा है ।

अब भावस्थानायु के अल्प-बहुत्व का विचार किया जाता है :

संघात अथवा भेद से द्रव्य का उपरम होता है परन्तु पर्याय विद्यमान रहता है । यदि सर्वगुणों का उपरम होता है तो द्रव्य भी नहीं रहता है और अवगाहना भी नहीं रहती है ।

द्रव्य का उपरम संघात और भेदपूर्वक होता है अतः संघात आदि के द्वारा द्रव्य के उपरम होने पर अर्थात् द्रव्य के अन्य रूप में परिणत होने पर उसके वर्ण, गंध, रस, स्पर्श आदि पर्याय रहते हैं । जिस प्रकार घृष्ट—साफ किये हुए वस्त्र में शुक्लादिगुण है उसी प्रकार संघातादि के द्वारा द्रव्य का उपरम होता है किन्तु पर्यायों की सत्ता रहती है । सर्वगुणों के उपरम होने पर न तो वह द्रव्य रहता है और न वह द्रव्य की अवगाहना का अनुवर्तन करता है । इस बात से यह स्पष्ट है कि पर्यायों का अवस्थान चिरकाल—लम्बे समय तक है और द्रव्य का अवस्थान अचिरकाल तक है ।

संघायभेयबंधाणुवत्तिणी निच्चमेव दव्वद्धा ।
न उ गुणकालो संघायभेयमित्तद्धसंबद्धो ॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभयदेवसूरि टीका—संघातभेदलक्षणाभ्यां धर्माभ्यां यो बंधः संबंधः, तदनुवर्तिनी तदनुसारिणी, संघाताद्यभाव एक द्रव्याद्धायाः सद्भावात्, तदभावे चाऽभावाद्, न पुनर्गुणकालः संघात-भेदमात्रकालसंबद्धः, संघातादि-भावेऽपि गुणानामनुवर्तनाद् इति।

रत्नसिंहसूरि टीका—इह विवक्षितपरमाणुस्कंधस्यापरपरमाणुभिः सह संगमः संघातः, तस्यैव कतिपयपरमाणूनां विघटनं भेदः, ततः संघातभेद-लक्षणाभ्यां धर्माभ्यां यो बंधः संबंधस्तदनुवर्त्तिनी तदनुसारिणी नित्यमेव द्रव्याद्धा। इह च संघातभेदबन्धानुवर्त्तित्वं द्रव्याद्धाया वैधर्म्यद्वारेण ज्ञेयम्, सघाताद्यभाव एव द्रव्याद्धाया सद्भावात् संघातादिसद्भावे चाभावात्। न पुनर्गुणकालो गुणावस्थानाद्धाः संघातभेदमात्रकालसबद्धः संघातादिसद्-भावेऽपि गुणानामनुवर्त्तनादिति।

जम्हा तत्थन्नत्थ व, दव्वे खित्तावगाहणासु च।
ते चेव पज्जवा संति तो तदद्धा असंखगुणा॥१२॥

रत्नसिंहसूरि टीका—यस्मात् 'तत्थन्नत्थ व' इति प्रत्येकमभिसंबध्यते, बंधानुलोम्याच्च द्रव्यादीनामन्यथोपन्यासः कृतः। ततश्च यस्मात्तत्रान्यत्र च क्षेत्रे तत्रान्यत्र चावगाहनायां, तत्रान्यत्र च द्रव्ये इति सर्वत्र चिरावस्थायि-त्वात्त एव लभ्यन्ते तस्मात्तदद्धेति पर्यायावस्थानकालोऽसंख्यातगुणेति।

द्रव्यकाल—हमेशा ही संघातबंध और भेदबंध के पीछे चलने वाला है और गुण-काल—संघात और भेद मात्र में सम्बद्ध नहीं है।

विवक्षित परमाणु स्कंध का दूसरे परमाणुओं के साथ संगम होने को संघात कहते हैं तथा उसी विवक्षित परमाणु स्कंध के कतिपय परमाणुओं के हट जाने को भेद कहते हैं अतः संघात और भेदमूलक धर्म से जो बंध होता है उसके पीछे अनुसरण करने वाला नित्य—तुल्य द्रव्यकाल है। यहाँ पर संघात और भेद के बंध का अनुवर्तन करना—द्रव्यकाल के वैधर्म्य के द्वारा जानना चाहिए। चूंकि द्रव्यकाल के सद्भाव में संघात आदि का अभाव होता है और संघातादि के सद्भाव में द्रव्यकाल का अभाव होता है किन्तु गुणस्थानकाल संघात और भेद मात्र काल से संबद्ध नहीं है यौंकि संघात आदि का सद्भाव रहने पर भी गुणों का अनुवर्तन होता है॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस कारण से वहाँ और अन्यत्र द्रव्यास्थान, क्षेत्रावस्थान तथा अवगाहनावस्थान में उनके वे ही पर्याय हैं अतः द्रव्यस्थानायु की अपेक्षा भावस्थानायु असंख्यगुण है।

जिस कारण से तत्र और अन्यत्र प्रत्येक से संबद्ध है। बंध और अनुलोम के कारण द्रव्यादि को अन्यथा रूप में रखा गया है। अतः जिस कारण से वहाँ और अन्यत्र क्षेत्र में, वहाँ और अन्यत्र अवगाहना में, वहाँ और अन्यत्र द्रव्य में—सब जगह चिरावस्थायी होने के कारण वे ही पर्याय प्राप्त होते हैं अतः द्रव्यकाल पर्यायों का ही अवस्थानकाल है और द्रव्यास्थानायु की अपेक्षा भावस्थानायु असंख्यगुणी है ॥१२॥

आह अणेगंतोऽयं दव्वोवरिमे गुणाणऽवत्थाणं।
गुणविप्परिणामंमि अ, दव्वविसेसो अणेगंतो ॥१३॥

अभयदेवसूरि टीका—द्रव्यविशेषो द्रव्यविपरिणामः।

रत्नसिंहसूरि टीका—नायमेकान्तो यद्द्रव्योपरमे गुणानामवस्थानं विनाशस्यापि दर्शनाद्गुणविनाशे च द्रव्यविशेषो द्रव्यविपरिणामोऽवश्यंभावो विनष्टेष्वपि गुणेषु द्रव्यस्य तदवस्थस्य दर्शनात्।

विप्परिणमंमि दव्वे, कम्मिवि गुणपरिणई भवे जुगवं।
कम्मि वि पुण तदवत्थेवि होइ गुणविप्परीणामो ॥१४॥

रत्नसिंहसूरि टीका—कस्मिन्नपि द्रव्ये स्वपरमाणुविघटनेनापरमाणुसंघट्टनेन वा विपरिणते द्रव्ये तुल्यकालं प्राक्तनपरिणामादीनां गुणानामपि विपरिणतिर्भवति। कस्मिन्नपि पुनर्द्रव्येऽपरपरमाणुसंगमस्वपरमाणुविगमाभावात्तदवस्थेऽपि गुणपरिणामो गुणविनाशो भवति, घटद्रव्ये तदवस्थेऽपि पाकेन प्राक्तनश्यामरूपादिगुणनाशदर्शनात्।

भण्णइ सच्चं किं पुण, गुणबाहुल्ला न सव्वगुणनासो।
दव्वस्स तदन्नत्तेवि बहुतराणं गुणाण ठिई ॥१५॥

रत्नसिंहसूरिटीका—द्रव्यान्यथात्वे गुणान्यथात्वं द्रव्यतादवस्थ्ये गुणान्यथात्वं च तदुक्तं तत् सत्यम्, अनयोरपि भङ्गकयोः कथंचिद्घटनात्किं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुनर्गुणानां वर्णगंधरसादीनां बाहुल्यादेकस्मिन् परमाणुस्कंधे भूयसामवस्थानान्न सर्वेषां गुणानां विनाशो भवति। द्रव्यस्य तदन्यत्वेऽपि परमाणुसंगमविगमाभ्यां नाशेऽपि बहुतराणां वर्णगंधरसादीनां नष्टेष्वपि केषुचित् परिणामादिषु गुणेषु गुणानां स्थितिरिति हेतोर्द्रव्यस्थानायुषो भावस्थानायुरसंख्यगुणमिति स्थितम्।

द्रव्य (स्कन्धत्व) का उपरम हो जाने पर गुणों की अवस्थिति रहती है—यह अनेकान्त है, क्योंकि कदाचित् गुणों का विनाश भी देखा जाता है।

गुण (कृष्णत्वादि) का विनाश हो जाने पर द्रव्य (स्कंधत्व) का विपरिणमन अवश्यंभावी है—इसे एकान्त नहीं माना जा सकता, क्योंकि गुण के विनष्ट हो जाने पर भी द्रव्य उसी अवस्था में रहता है।

जिस समय द्रव्य विपरिणाम को प्राप्त होता है उस समय किसी स्थल में युगपत् गुण की परिणति होती है तथा कहीं तदवस्थ—उस अवस्था में भी गुण का विपरिणाम होता है। अर्थात् किसी द्रव्य का विपरिणाम होने पर एक काल में गुण का भी परिणमन होता है और किसी द्रव्य की उसी अवस्था में गुण का विपरिणाम होता है।

किसी द्रव्न में स्वपरमाणु के विघटन या अपर परमाणु के संघटन से द्रव्य का विपरिणाम होने पर युगपत्—एक काल में प्राक्तन परिणाम आदि गुणों का भी विपरिणमन होता है। फिर किसी द्रव्य में अपर परमाणु के संगम तथा स्वपरमाणु के विगमन के अभाव में भी द्रव्य की उसी अवस्था में गुण परिणाम का विनाश होता है क्योंकि घट रूपी द्रव्य में उसी अवस्था में पाक के द्वारा प्राचीन श्यामादि गुणों का विनाश देखा जाता है ॥१४॥

उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं—फिर भी मैं सत्य कहता हूँ कि द्रव्य में गुणों का बाहुल्य होने से सब गुणों का नाश नहीं होता है तथा द्रव्य के अन्य अवस्था में परिणत होने पर भी बहुत से गुणों का अवस्थान रहता है।

द्रव्य के अन्यथा भाव में परिणत होने पर तथा द्रव्य के उसी अवस्था में रहने पर गुण का अन्य रूप में परिणत हो जाना जो कहा गया है वह सत्य है क्योंकि इन दोनों भंगों के किसी प्रकार घटित होने पर वर्ण, गंध, रस आदि गुणों की बहुलता से एक परमाणु स्कंध में बहुत से गुणों के अवस्थान रहने पर सभी गुणों का विनाश नहीं होता है। द्रव्य के अन्यथा रूप में परिणत होने पर परमाणु के संगम और वगम से बहुत से वर्ण, गंध, रसादि गुणों का नाश हो जाने पर उन नष्ट परिणाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदि गुणों में कुछ गुणों की स्थिति रहती है इसलिए द्रव्यस्थानायु से भावस्थानायु असंख्यातगुणी है ॥१५॥

—परमाणु षट्त्रिंशिका

·०९ नय और निक्षेप की अपेक्षा विवेचन

·०९·१ नय की अपेक्षा विवेचन

(क) गुरुयं लहुयं उभयं नोभयमिति वावहारियनयस्स ।
दव्व, लेट्ठु दीवो वाऊ वोमं जहा संख ॥
निच्छयओ सव्वगुरुं सव्वलहुं वा न विज्जए दव्वं ।
बायरमिह गुरुलहुयं अगुरुलहुं सेसयं सव्वं ॥

—विशेभा० गा ६५९-६०

टीका—इह यदूर्ध्वं तिर्यग् वा प्रक्षिप्तमपि पुनर्निसर्गादधो निपतति तद् गुरु द्रव्यम्, यथा लेष्ट्वादि । यत्तु निसर्गत एवोर्ध्वगति द्रव्यं तल्लघु, यथा दीपकलिकादि । नाप्यधोगति स्वभावं, किं तर्हि ? स्वभावेनैव तिर्यग्गति-धर्मकं तद् द्रव्यं गुरुलघु, यथा वाय्वादि । यत्पुनरूर्ध्वाऽधस्तिर्यग्गतिस्व-भावानामेकतरस्वभावमपि न भवति, सर्वत्र वा गच्छति तद्गुरुलघु, यथा—व्योमपरमाण्वादि । इति व्यावहारिकनयमतम् ।

निश्चयतस्तु—निश्चयनयमतेन, सवगुरु—एकान्तेन गुरुस्वभावं किमपि वस्तु नास्ति, गुरोरपि लेष्ट्वादेः परप्रयोगादूर्ध्वादिगमनदर्शनात् । एकान्तेन लघ्वपि नास्ति, अतिलघोरपि वाष्पादेः करताडनादिनाऽधोगमनादिदर्शनात् । तस्माद् नैकान्तेन गुरुलघु वा किमपि वस्त्वस्ति । अतो निश्चयनयस्येयं परिभाषा—यत् किमप्यत्र लोके औदारिकवर्गणादिकं भू-भूधरादिकं वा बादर वस्तु तत् सर्वं गुरुलघु, शेषं तु भाषा-ऽऽनाऽपान-मनोवर्गणादिकं परमाणु-द्व्यणुक-व्योमादिकं च सर्वं वस्त्वगुरुलघ्विति ।

व्यवहार नया की अपेक्षा लेष्टु, दीपक, वायु, आकाश क्रमशः गुरु, लघु, गुरुलघु, अगुरुलघु द्रव्य हैं, निश्चयनय की अपेक्षा सर्वथा गुरु अथवा सर्वथा लघु द्रव्य ही नहीं है केवल स्थूल द्रव्य गुरुलघु है और शेष सर्व अगुरुलघु है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो द्रव्य ऊँचा अथवा तिर्यक् फेंका जाता है परन्तु स्वभाव से ही नीचे गिर जाता है उसे गुरु द्रव्य कहते हैं, जैसे लेष्टु आदि। जिस द्रव्य की स्वभाव से ही ऊर्ध्वगति होती है उसे लघु द्रव्य कहते हैं, जैसे दीपकलिकादि। जिस द्रव्य की ऊँची अथवा नीची गति नहीं होती परन्तु स्वभाव से ही तिर्यग् गति होती है उसे गुरुलघु द्रव्य कहते हैं। जिस द्रव्य की ऊर्ध्व, नीची, तिर्यग् गति में से कोई भी गति नहीं होती है अथवा जिसकी सर्व जगह गति होती है उसे अगुरुलघु द्रव्य कहते हैं, जैसे आकाश, परमाणु — इस प्रकार व्यवहार नय की मान्यता है।

निश्चय नय की अपेक्षा एकान्त गुरु स्वभाव वाला कोई भी द्रव्य नहीं है क्योंकि लेष्टु आदि गुरु स्वभाव वाले हैं तो भी उनकी उर्ध्वगति देखी जाती है। एकान्तरूप से लघु द्रव्य भी नहीं है क्योंकि अति लघु स्वभाव वाले बाष्प आदि भी हस्त-ताडनादि के द्वारा अधोगामी होते देखे जाते हैं इसलिए एकान्तरूप से गुरु अथवा एकान्तरूप से लघु द्रव्य नहीं है। परन्तु निश्चय नय की अपेक्षा इस लोक में औदारिकादि वर्गणा और पृथ्वी-पर्वतादि तथा जो कोई भी स्थूल वस्तु है वह सर्व गुरुलघु है और शेष-भाषा-श्वासोच्छ्वास-मनोवर्गणा आदि तथा परमाणु, द्व्यणुक और आकाशादि सर्व अगुरुलघु द्रव्य हैं।

(ख) से किं तं नेगमववहाराणं अणोवणिहिआ दव्वाणुपुव्वी? २ पचविहा पन्नत्ता, तंजहा—अट्ठपयपरूवणया? भंगसमुक्कित्तणया २ भंगोवदंसणया ३ समोआरे ४ अणुगमे ५। से किं तं नेगमववहाराणं अट्ठपयपरूवणया? तिपएसिए आणुपुव्वी चउपएसिए आणुपुव्वी जाव दसपएसिए आणुपुव्वी संखेज्जपएसिए आणुपुव्वी असंखिज्जपएसिए आणुपुव्वी अणतपएसिए आणुपुव्वी, परमाणुपोग्गले अणाणुपुव्वी, दुपएसिए अवत्तव्वए, तिपएसिआ आणुपुव्वीओ जाव अणंतपएसियाओ आणुपुव्वीओ, परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वीओ दुपएसिआइं अवत्तव्वयाइं, से तं णेगमव-वहाराणं अट्ठपयपरूवणया।

—अणुओ० सू ९८-९९। पृ० १०९८-१०९९

नैगम और व्यवहार नय की अपेक्षा से अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी पांच प्रकार की कही गयी है—यथा—अर्थपदप्ररूपणा, भंगसमुत्कीर्तना—अर्थपद के भंगों का उत्कीर्तन-रूप, भंगोपदर्शनता, समवतार और अनुगम।

नैगम और व्यवहार नय की अपेक्षा से अर्थपदप्ररूपणा इस प्रकार है— जो तीन प्रादेशिक स्कंध, चतुःप्रादेशिक स्कंध यावत् दश प्रादेशिक स्कंध, संख्यातप्रादेशिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कंध, असंख्यात प्रादेशिक स्कंध, अनंतप्रादेशिक स्कंध हैं—ये सर्व आनुपूर्वी में सम्मिलित हैं। परमाणुपुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य है। द्विप्रदेशी स्कंध अवक्तव्य है (इस प्रकार एकवचन की अपेक्षा तीन भंग—विकल्प होते हैं।)

बहुवचन की अपेक्षा—तीन प्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध—आनुपूर्वी द्रव्य हैं। परमाणुपुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य है तथा द्विप्रदेशी स्कंध अवक्तव्य है।

(ग) से किं णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया? णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया? तिपदेसिए आणुपुव्वी १ परमाणुपोग्गले अणाणुपुव्वी २ दुपदेसिए अवत्तव्वए ३ तिपदेसिया आणुपुव्वीओ ४ परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वीओ ५ दुपदेसिया अवत्तव्वयाइं ६।—अहवा तिपदेसिए य परमाणुपोग्गले य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य १ अहवा तिपदेसिए य परमाणुपोग्गला य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीओ य २ अहवा तिपदेसिया य परमाणुपोग्गले य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वी य ३ अहवा तिपदेसिया य परमाणुपोग्गला य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य ४, अहवा तिपदेसिए य दुपदेसिए य आणुपुव्वी य अवत्तव्वए य १ अहवा तिपदेसिए य दुपदेसिया य आणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं य २ अहवा तिपदेसिया य दुपदेसिए य आणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य ३ अहवा तिपदेसिया य दुपदेसिया य आणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं य ४, अहवा परमाणुपोग्गले य दुपदेसिए य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य १ अहवा परमाणुपोग्गले य दुपदेसिया य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं य २ अहवा परमाणुपोग्गला य दुपदेसिए य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य ३ अहवा परमाणुपोग्गला य दुपदेसिया य अणाणुपुव्वीओ अवत्तव्वयाइं य ४। अहवा तिपदेसिए य परमाणुपोग्गले य दुपदेसिए य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य १ अहवा तिपदेसिए य परमाणुपोग्गले य दुपदेसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वयाइं य २ अहवा तिपदेसिए य परमाणुपोग्गला य दुपदेसिए य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य ३ अहवा तिपदेसिए य परमाणुपोग्गला य दुपदेसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं य ४ अहवा तिपदेसिया य परमाणुपोग्गले य दुपदेसिए य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य ५ अहवा तिपदेसिया य परमाणुपोग्गले य दुपदेसिया य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

य अवत्तव्वयाइं य ६ अहवा तिपदेसिया य परमाणुपोग्गला य दुपदेसिए य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वए य ७ अहवा तिपदेसिया य परमाणुपोग्गला य दुपदेसिया य आणुपुव्वीओ य अणाणुपुव्वीओ य अवत्तव्वयाइं य ८ से तं नेगम-ववहाराणं भंगोवदंसणया।

—अणुओ० । सू १०३ । पृ० १०९९

नैगम और व्यवहार नय की अपेक्षा से भंगोपदर्शनता इस प्रकार है—एक वचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध—आनुपूर्वी द्रव्य है, परमाणुपुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य है तथा द्विप्रदेशी स्कंध अवक्तव्य द्रव्य है।

बहुवचन की अपेक्षा—तीन प्रदेशी स्कंध आनुपूर्वी द्रव्य है, परमाणुपुद्गल अनानुपूर्वी द्रव्य है, द्विप्रदेशी स्कंध अवक्तव्य है।

द्विसंयोगी भंग का विवरण—एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध और परमाणुपुद्गल—एकस्वरूप से—आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी है। १

अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध और बहुवचन की अपेक्षा परमाणु-पुद्गल आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी द्रव्य है। २

अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध तथा एकवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी द्रव्य हैं। ३

अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध और परमाणु पुद्गल आनुपूर्वी तथा अनानुपूर्वी द्रव्य हैं। ४

अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध और द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी द्रव्य हैं। १ अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध और बहुवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। २ अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध तथा एकवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। ३ अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कध और द्विप्रदेशी स्कंध आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। ४

अथवा एकवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी द्रव्य हैं। १ अथवा एकवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल और बहुवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। २ अथवा बहुवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा एकवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। ३ अथवा बहुवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कंध अनानूपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। ४

अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध, परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कंध आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य हैं। १ अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध, परमाणु पद्गल तथा बहुवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध एक आनुपूर्वी, एक अनानुपूर्वी तथा बहुत से अवक्तव्य द्रव्य हैं। २ अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध; बहुवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा एकवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध— एक आनुपूर्वी, बहुत से अनानुपूर्वी तथा एक अवक्तव्य द्रव्य है। ३ अथवा एकवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध तथा बहुवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कंध—एक आनुपूर्वी, बहुत से अनानुपूर्वी तथा बहुत से अवक्तव्य द्रव्य हैं। ४ अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध तथा एकवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कंध—बहुत से आनुपूर्वी, एक अनानुपूर्वी तथा एक अवक्तव्य द्रव्य है। ५ अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध, एकवचन की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा बहुवचन की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध बहुत से आनुपूर्वी, एक अनानुपूर्वी तथा बहुत से अगक्तव्य द्रव्य हैं। ६ अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध, परमाणु पुद्गल और एकवचन की अपेक्षा द्रिप्रदेशी स्कंध—बहुत से आनुपूर्वी, बहुत से अनानुपूर्वी और एक अवक्तव्य द्रव्य है। ७ अथवा बहुवचन की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध, परमाणु पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कंध—बहुत से आनुपूर्वी, आनानुपूर्वी तथा अवक्तव्य द्रव्य हैं। ८

(घ) से किं तं संगहस्स अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी? संगहस्स अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा—अट्ठपयपरूवणा १ भंगसमुक्कित्तणया २ भंगोवदंसणया ३ समोयारे ४ अणुगमे ५। से किं तं संगहस्स अट्ठपयपरूवणया? संगहस्स अट्ठपयपरूवणया तिपएसिया आणुपुव्वी। चउप्पएसिया आणुपुव्वी जाव दसपएसिया आणुपुव्वी संखिज्जपएसिया आणुपुव्वी असंखिज्जपएसिया आणुपुव्वी अणंतपदेसिया आणुपुव्वी, परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वी, दुपदेसिया अवत्तव्वए।

—अणुओ० सू ११५-११६। पृ० ११००

संग्रहनय की अपेक्षा अनुपनिधि द्रव्यानुपूर्वी पाँच प्रकार की कही गयी है—यथा अर्थपदप्ररूपणा, भंगसमुत्कीर्तना, भंगोपदर्शनता, समवतार और अनुगम।

संग्रहनय की अपेक्षा अर्थपदप्ररूपणा इस प्रकार है—तीन प्रदेशी स्कन्ध, चतु:-प्रदेशी स्कन्ध, यावत् दसप्रदेशी स्कन्ध, संख्यातप्रदेशी स्कन्ध, असंख्यातप्रदेशी स्कंध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा अनन्तप्रदेशी स्कन्ध— ये आनुपूर्वी संज्ञक द्रव्य हैं, परमाणु पुद्‌गल अनानुपूर्वी सज्ञक द्रव्य हैं तथा द्विप्रदेशी स्कन्ध अवक्तव्य द्रव्य है।

(च) से किं तं संगहस्स भंगोवदंसणया? २ तिपएसिया आणुपुव्वी, परमाणुपोग्गला अणाणुपुव्वी, दुपएसिया अवत्तव्वए, अहवा तिपएसिया य परमाणुपोग्गला य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अहवा तिपएसिया य दुपएसिया आणुपुव्वी य अवत्तव्वए य अहवा परमाणुपोग्गला य दुपएसिया य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य अहवा तिपएसिया य परमाणुपोग्गला य दुपएसिया य आणुपुव्वी य अणाणुपुव्वी य अवत्तव्वए य, से तं संगहस्स भंगोवदंसणया।

—अणुओ० सू १२०। पृ० ११०१

संग्रहनय की अपेक्षा भंगोपदर्शनता इस प्रकार है—

१—तीन प्रदेशी स्कंध को आनुपूर्वी द्रव्य कहते हैं, २—परमाणु पुद्‌गल अनानुपूर्वी द्रव्य है तथा ३—द्विप्रदेशी स्कंध अवक्तव्य द्रव्य है।

द्विसंयोगी ३ भंग—अथवा तीन प्रदेशी स्कंध पुद्‌गल और परमाणु पुद्‌गल को आनुपूर्वी तथा अनानुपूर्वी द्रव्य कहते हैं। ४ अथवा तीन प्रदेशी स्कंध और द्विप्रदेशी स्कंध को आनुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं। ५ अथवा परमाणु पुद्‌गल और द्विप्रदेशी स्कंध को अनानुपूर्वी और अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं। ६ अथवा तीन प्रदेशी स्कंध, परमाणु पुद्‌गल और द्विप्रदेशी स्कंध को आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी तथा अवक्तव्य द्रव्य कहते हैं।

(छ) × × ×। निश्चयनयः—"कारणमेव तदन्त्यं, सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः। एकरसवर्णगंधो, द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च। इत्यादि लक्षणसिद्धं निर्विभागमेव परमाणुमिच्छति, यस्त्वेतरनेकैर्जायते तं सांशत्वात् स्कंधमेव व्यपदिशति, व्यवहारस्तु तदनेकतानिष्पन्नोऽपि यः शस्त्रच्छेदाग्निदाहाऽऽदिविषयो न भवति तमद्यापि तथाविधस्थूलताप्रतिपत्तेः परमाणुत्वेन व्यवहरति, ततोऽसौ निश्चयतः स्कंधोऽपि व्यवहारनयमतेन व्यावहारिकपरमाणुरुक्तः। × × ×।

—अभिधा० भाग ५। पृ० ५४०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निश्चयनय की अपेक्षा परमाणु—अन्त्य परमाणु कारण ही है, सूक्ष्म, नित्य है। उसमें एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श हैं तथा कार्यलिंग के द्वारा वह अनुमेय है। उपर्युक्त लक्षणों से परमाणु निर्विभाग सिद्ध ही है। जो पुद्गल इन अनेक परमाणुओं से उत्पन्न होता है उसको अंश रूप में स्कंध ही कहा जाता है किन्तु व्यवहार में उसकी अनेकता भी निष्पन्न होती है तथा जो शस्त्रछेदन, अग्निदाह आदि का विषय नहीं होता है ; उसे अभी भी इस प्रकार की स्थूलता के द्वारा परमाणु के रूप में व्यवहार होता है। अस्तु वह निश्चयनय से स्कंध होते हुए भी व्यवहार नय के द्वारा व्यावहारिक परमाणु कहा जाता है।

पुद्गलपरमाणोः यद्यपि निश्चयेन अबहुप्रदेशत्वमुक्तं तथापि उपचारेण बहुप्रदेशत्वमस्त्येव, यतः पुद्गलपरमाणुः अन्यपुद्गलपरमाणुभिः सह मिलति एकत्वकायत्वात् पिण्डीभवति तेनोपचारेण काय उच्यते।

—तत्त्ववृत्ति० अ ५। सू १

निश्चयनय से एक परमाणु पुद्गल बहुप्रदेशी नहीं है किन्तु उपचार से एक परमाणु पुद्गल भी बहुप्रदेशी कहा जाता है। क्योंकि उसमें अन्य परमाणुओं के साथ मिलकर पिण्डरूप में परिणत होने की शक्ति है।

(ज) णेगमणयस्स वत्तव्वएण सव्वदव्वं पोग्गलो। आत्त णाम गृहीतम्। आत्ताः गृहीताः आत्मसात्कृताः पुद्गलाः पुद्गलात्ताः। ते च पुद्गलाः षड्भिः प्रकारैरात्मसात् क्रियन्ते। तंजहा—गहणदो परिणामदो उवभोगदो आहारदो ममत्तीदो परिग्गहादो चेदि। विहासा। तंजहा हत्थेण वा पादेण वा जे गहिदा दंडादि पोग्गलात्ते गहणादो अत्ता पोग्गला। मिच्छत्तादि परिणामेहि जे अप्पणो कदा ते परिणामदो अत्ता पोग्गला। गंध-तंबोलादिया जे उवभोगे अप्पणो कदा ते उवभोगदो अत्ता पोग्गला। असण-पाणादि विहाणेण जे अप्पणो कदा ते आहारदो अत्ता पोग्गला। जे अणुराएण परिग्गहिया ते ममत्तीदो अत्ता पोग्गला। जे सायत्तो ते परिग्गहादो अत्ता पोग्गला।

अधवा, पोग्गलाणमत्ता रूव-रस-गंधफासा दि लक्खणं सरूवं पोग्गल-अत्ता णाम। तेसिं च अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढि त्ति रूवादिणं छव्विहाओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढीओ होंति। तासिं परूवणा जहा भावविहाणे कदा तहा कायव्वा। सट्ठाणस्स वि असंखेज्जलोगमेत्ताणि ट्ठाणाणि होंति। तेसिं पि एवं चेव परूवणा कायव्वा।

—षट्० खण्ड० ६। द्या १९। पु १६। पृ० ५१४-५१५

नैगमनय के विषय स्वरूप से सब द्रव्य पुद्गल है। आत्त शब्द का अर्थ गृहीत है। अतएव "आत्ताः पुद्गलाः पुद्गलात्ता" इस विग्रह के अनुसार यहाँ पुद्गलात्त पद से आत्मसात् किये गये पुद्गलों का ग्रहण है। ये पुद्गल छः प्रकार से आत्मसात् किये जाते है। यथा—ग्रहण से, परिणाम से, उपभोग से, आहार से, ममत्व से और परिग्रह से। इनकी विभाषा इस प्रकार है—

१—जो दण्डादि पुद्गल हाथ और पैर से ग्रहण किये जाते हैं—वे ग्रहण से आत्त पुद्गल कहलाते हैं।

२—मिथ्यात्व आदि परिणामों के द्वारा जो पुद्गल अपने किये गये हैं वे परिणाम से आत्त पुद्गल कहे जाते हैं।

३—जो गंध और ताम्बुल आदि पुद्गल उपभोग स्वरूप से अपने किये गये हैं उन्हें उपभोग से आत्त पुद्गल समझना चाहिए।

४—भोजन-पान आदि के विधान से जो पुद्गल अपने किये गये हैं, उन्हें आहार से आत्त पुद्गल कहते हैं।

५—जो पुद्गल अनुराग से गृहीत होते हैं वे ममत्व से आत्त पुद्गल है।

६—जो आत्माधीन पुद्गल है उनका नाम परिग्रह से आत्त पुद्गल है।

अथवा 'अत्त' का अर्थ आत्मा अर्थात् स्वरूप है। अतएव 'पोग्गलाण अत्ता पोग्गल अत्ताः इस विग्रह के अनुसार पुद्गलात्त' (पुद्गलात्मा) पद से पुद्गलों का रूप, रस, गंध व स्पर्श आदि रूप लक्षण विवक्षित है। उन रूपादिकों के अनंतभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनंतगुणवृद्धि ये छः वृद्धियां होती है। उनकी प्ररूपणा जैसे भावविधान में की गयी है वैसे करना चाहिए। स्वस्थान के भी असंख्यात लोकमात्र स्थान होते हैं। उनकी भी इसी प्रकार से प्ररूपणा करनी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·०९·०२ निक्षेप की अपेक्षा विवेचन

पोग्गल—अत्तंत्ति अणियोगद्दारे पोग्गलो णिक्खिविदव्वो। तंजहा-णाम-पोग्गलो ट्ठवणपोग्गलो दव्वपोग्गलो भावपोग्गलो चेदि चउव्विहो पोग्गलो। णामट्ठवणापोग्गला सुगमा। दव्वपोग्गलो आगम-णोआगम-दव्वपोग्गलभेदेण दुविहो। आगमपोग्गलो सुगमो। णोआगमपोग्गलो तिविहो जाणुगसरीर-भविय-तव्वदिरित्तं चेति। जाणुगसरीर-भवियं गदं। तव्वदिरित्तपोग्गलो थप्पो। भावपोग्गलो दुविहो आगम-णोआगमभाव-पोग्गलभेएण। आगमो सुगमो। णोआगमभावपोग्गलो रूव-रस-गंध फासादिभेएणं अणेयविहो। तत्थ णोआगमतव्ववदिरित्तदव्वपोग्गले पयदं।

—षट्० खण्ड० ६। द्वा १९। पु १६। पृ० ५१४

'पुद्गलात्त' इस अनुयोगद्वार में पुद्गल का निक्षेप किया जाता है। यथा—नाम पुद्गल, स्थापना पुद्गल, द्रव्य पुद्गल और भाव पुद्गल के भेद से पुद्गल चार प्रकार का है। इनमें नाम पुद्गल और स्थापना पुद्गल सुगम हैं। द्रव्यपुद्गल—आगमद्रव्य पुद्गल और नोआगमद्रव्य पुद्गल के भेद से दो प्रकार का है। आगम-द्रव्यपुद्गल सुगम है। नोआगमद्रव्यपुद्गल तीन प्रकार का है—ज्ञायक शरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त। ज्ञायक शरीर और भावी अवगत है। तद्व्यतिरिक्त नोआगम-द्रव्यपुद्गल को अभी छोड़ते हैं। आगम और नोआगम भावपुद्गल के भेद से भावपुद्गल दो प्रकार का है। उनमें आगमभाव पुद्गल सुगम है। नोआगमभाव-पुद्गल रूप, रस, गंध और स्पर्श आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। उनमें यहाँ तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्यपुद्गल प्रकृत है।

·१०·२९ औघिक पुद्गल का विवेचन

·११ पुद्गल के गुण

·११·०१ द्रव्यत्व

(क) कइविहा णं भंते! सव्वदव्वा पन्नत्ता? गोयमा! छव्विहा सव्वदव्वा पन्नत्ता, तंजहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए जाव (आगासत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, जीवत्थिकाए) अद्धासमए।

—भग० श २५। उ ४। सू ४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) से किं तं दव्वणामे? दव्वणामे छव्विहे पन्नत्ते, तंजहा— धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, अद्धासमए।

—अणुओ० सू २१८। पृ० ११०९

(ग) अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः। द्रव्याणि जीवाश्च।

—तत्त्व० अ ५। सू १, २

(घ) एदे कालागासा धम्माधम्मा य पुग्गला जीवा।
लब्भंति दव्व सण्णं कालस्स दु णत्थि कायत्तं॥

—पंच० गा १०२

(च) (द्रव्यं) जीव-पुद्गल-धर्माधर्म-कालाकाशभेदेन षड्विधं वा।

—कसापा० गा १३-१४। टीका। भा १। पृ० २१५

(छ) धर्मद्रव्यं, अधर्मद्रव्यं, आकाशद्रव्यं, पुद्गलद्रव्यं, कालद्रव्यमिति पंचाजीवद्रव्याणि।

—प्रशम० श्लो २०७। टीका

(ज) जीवेन सह पंचापि द्रव्याण्येते निवेदिताः।
गुणपर्ययवद्द्रव्यमिति लक्षणयोगतः॥
द्रूयते गुणपर्यायैर्यद्यद् द्रवति तानथ।
तद्द्रव्यं भण्यते षोढा सत्तामयमनश्वरं॥

—योसा०। अधि २। श्लो ४-५

पुद्गल द्रव्य है। लोक में केवल छः द्रव्य कहे गये है उनमें पुद्गल भी एक द्रव्य है।

·११·०२ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य स्वभाव

(क) उप्पण्णेइ वा विगमेइ वा धुवेइ वा।

—सिद्ध० अ ५। सू ६। पृ० ३२७ में उद्धृत

उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्।

—तत्त्व० अ ५। सू २९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) उत्पादव्ययाभ्यां ध्रौव्येण च युक्तं सतो लक्षणम् ; यदुत्पद्यते, यद् व्येति यच्च ध्रुवं तत् सत् ; अतोऽन्यदसदिति ।

—सिद्ध० अ ५ । सू २९—भाष्य

(ग) चेतनस्याचेतनस्य वा द्रव्यस्य स्वां जातिमजहत उभयनिमित्त-वशाद् भवान्तरावाप्तिरुत्पादनमुत्पादः । मृत्पिंडस्य घटपर्यायवत् । तथा पूर्वभावविगमनं व्ययः । यथा घटोत्पत्तौ पिंडाकृतेः । अनादिपारिणामिकस्वभावेन व्ययोदयाभावाद् ध्रुवति स्थिरीभवतीति ध्रुवः । ध्रुवस्य भावः कर्म वा ध्रौव्यम् । यथा मृत्पिंडघटाद्यवस्थासु मृदाद्यन्वयः तैरुत्पादव्यय-ध्रौव्यैर्युक्तं उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सदिति ।

—सर्व० अ ५ । सू ३०

(घ) रूवाइदव्वयाए न जाइ न य वेइ तेण सो निच्चो ।
एवं उप्पाय-व्वय-धुवस्स हावं मयं सव्वं ॥

—विशेभा० गा १९६५

टीका—रूप-रस-गंध-स्पर्शरूपतया मृद्द्रव्यरूपतया चासौ मृत्पिण्डो न जायते नापि व्येति विनश्यति । ततस्तद्रूपतया नित्योऽयमुच्यते, तेन रूपेण तस्य सर्वदावस्थितत्वात् । तदेवं मृत्पिडो निजाकारस्वशक्तिरूपतया विनश्यति, घटाकारतच्छक्तिरूपतयोत्पद्यते, रूपादिभावेन मृद्द्रव्यरूपतया चावतिष्ठते, इत्युत्पाद-व्यय-ध्रौव्यस्वभावोऽयमुच्यते । एवं घटोऽपि पूर्व-पर्यायेण विनश्यति, घटाकारयता तूत्पद्यते, रूपादिवेन मृद्द्रव्यतया चावतिष्ठत इत्यसावप्युत्पाद-व्यय-ध्रौव्यस्वभावः । एवमन्यदपि यदस्ति वस्तु, तत् सर्वमप्युत्पाद-यव्य-ध्रौव्यस्वभावमेवाभिमतं तीर्थकृताम् ।

(च) भावस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो ।
गुणपज्जएसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति ॥

—पंच० अधि १ । गा १५

टीका—भावस्य ततो हि द्रव्यस्य न द्रव्यत्वेन विनाशः । अभावस्यासतोऽन्यद्रव्यस्य न द्रव्यत्वेनोत्पादः । किंतु भावाः सन्ति द्रव्याणि सदुच्छेदमसदुत्पादं चान्तरेणैव गुणपर्यायेषु विनाशमुत्पादं चारंभते । यथाहि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घृतोत्पत्तौ गोरसस्य सतो न विनाशः न चापि गोरसव्यतिरिक्तस्यार्थान्तरस्यासतः उत्पादः किन्तु गोरसस्यैव सदुच्छेदमसदुत्पादश्चानुपलम्भमानस्य स्पर्शरसगंधवर्णादिषु परिणामेषु गुणेषु पूर्वावस्थया विनश्यत्सूत्तरावस्थया प्रादुर्भवत्सु नश्यति च नवनीतपर्य्यायो घृतपर्याय उत्पद्यते तथा सर्वभावानामपीति।

(छ) स्वजात्यपरित्यागेन भावांतरावाप्तिरुत्पादः, तथा पूर्वभावविगमो व्ययः। ध्रुवे स्थैर्यकर्मणो ध्रुवतीति ध्रुवस्तस्य भावः कर्म वा ध्रौव्यं तैर्युक्तं सदिति बोद्धव्यम्।

—श्लो० अ ५। सू ३०। पृ० ४३४

(ज) अपरिवत्तसहावेणुप्पादव्वयधुवत्तसंजुत्तं।
गुणवं च सपज्जायं जं तं दव्वंत्ति वुच्चति॥

—प्रव० अ २। गा ३

(छ) ध्रौव्योत्पादलयालीढा सत्ता सर्वपदार्थगा।
एकशोऽनंतपर्याया प्रतिपक्षसमन्विता॥

—योसा० अधि २। श्लो ६

(ञ) स्वजात्यपरित्यागेन भावान्तरावाप्तिरुत्पादः। चेतनस्य अचेतनस्य वा द्रव्यस्य स्वजातिमजहतः निमित्तवशात् भावान्तरावाप्तिरुत्पादनमुत्पादः इत्युच्यते मृत्पिडस्य घटपर्यायवत्। तथा पूर्वभावविगमो व्ययनं व्ययः। तेन प्रकारेण तथा स्वजात्यपरित्यागेन इत्यर्थः, पूर्वभावविगमो व्ययनं व्यय इति कथ्यते, यथा घटोत्पत्तौ पिंडाकृतेः। ध्रुवेः स्थैर्यकर्मणो ध्रुवतीति ध्रुवः। अनादिपारिणाकिकस्वभावत्वेन व्ययोदयाभावात् ध्रुवति स्थिरीभवति इति ध्रुवः ध्रुवस्य भावः कम वा ध्रौव्यम्। यथा पिंडघटाद्यवस्थासु मृदाद्यन्वयात्।

—राज० अ ५। सू ३०

(ट) भावो वि दव्वधम्मो तत्तो च्चिय तस्स निग्गमोपभवो।
दव्वस्स व भावाओ विणिग्गमो भावओऽवगमो॥
रूवाई पोग्गलाओ कसाय-नाणादओ य जीवाओ।
निंति पभवंति ते वा तेहिंतो तव्विओगम्मि॥

—विशेभा० गा १५४१-४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—यदा द्रव्यं पूर्वपर्यायेण विनश्यति, अपूर्वपर्यायेण तूत्पद्यते: तदा पूर्वपर्यायात् प्राक्तनभावाद् द्रव्यस्य निर्गतत्वाद् भावाद् निर्गमो भावनिर्गम इत्युच्यते। तथा रूपादयो भावाः पुद्गलद्रव्यात्, कषाय-ज्ञानादयश्च जीवाद् निर्गच्छन्ति, प्रभवन्तीति भावानां निर्गमो भावनिर्गम उच्यते।

(ठ) उप्पादट्ठिदिभंगा पोग्गलजीवप्पगस्स लोगस्स।
परिणामादो जायंते संघादादो च भेदादो॥

—प्रव० अ २। गा ३७। पृ० १८१

टीका—क्रियाभाववत्त्वेन केवलभाववत्वेन च द्रव्यस्यास्ति विशेषः। तत्र भाववन्तौ क्रियावन्तौ च पुद्गलजीवौ परिणामाद्भेदसंघाताभ्यां चोत्पद्यमानावतिष्ठमानभज्यमानत्वात्। शेषद्रव्याणि तु भाववन्त्येव परिणामादेवोत्पद्यमानावतिष्ठमानभज्यमानत्वादिति निश्चयः। तत्र परिणाममात्रलक्षणो भावः, परिस्पंदनलक्षणा क्रिया। तत्र सर्वाण्यपि द्रव्याणि परिणामस्वभावत्वात् परिणामेनोपात्तान्वयव्यतिरेकाण्यवतिष्ठ मानोत्पद्यमानभज्यमानानि भाववन्ति भवंति। पुद्गलास्तु परिस्पंदनस्वभावत्वात् परिस्पंदेन भिन्नाः संघातेन संहताः पुनर्भेदेनोत्पद्यमानावतिष्ठमानभज्यमानाः क्रियावन्तश्च भवन्ति। तथा जीवा अपि परिस्पंदनस्वभावत्वात्परिस्पदेन नूतनकर्मनोकर्मपुद्गलेभ्यो भिन्नास्तैः सह संघातेन संहताः पुनर्भेदेनोत्पद्यमानावतिष्ठमानभज्यमानाः क्रियावंतश्च भवन्ति।

द्रव्य उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त होता है।

द्रव्य के दो भेद हैं—चेतन और अचेतन। वे अपनी जाति को भी नहीं छोड़ते फिर भी उनमें अंतरंग और बहिरंग निमित्त के वश से प्रतिसमय जो नवीन अवस्था की प्राप्ति होती है उसे उत्पाद कहते हैं, यथा—मिट्टी के पिंड का घट पर्याय। पूर्व अवस्था के त्याग को व्यय कहते हैं, जैसे—घट की उत्पत्ति होने पर पिंड रूप आकार का त्याग। अनादिपारिणामिक स्वभाव से द्रव्य का व्यय नहीं होता है, किन्तु वह 'ध्रुवति' अर्थात् स्थिर रहता है अतः उसे ध्रुव कहते हैं तथा इस ध्रुव का भाव या कर्म ध्रौव्य कहलाता है, यथा—मिट्टी के पिंड और घट—दोनों अवस्थाओं में मृद्रूपता का अन्वय है। इस प्रकार अन्य द्रव्यों की तरह पुद्गल भी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य स्वभाव युक्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल जीवात्मक रूप लोक के उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप तीन परिणाम—संघात और भेद के द्वारा उत्पन्न होते हैं।

क्रिया और भाव रूप परिणाम द्रव्य की विशेषता है। द्रव्यों में जीव और पुद्गल—इन दो द्रव्यों में क्रिया और भाव—दोनों प्रकार के परिणाम होते हैं। इन परिणामों के द्वारा भेद-संघात-भेद से उनका उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप परिणमन होता है। अवशेष द्रव्यों में केवल भाव परिणाम होता है, जिससे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप परिणमन निश्चय से होता है। भाव का लक्षण परिणाम मात्र है तथा क्रिया का लक्षण परिस्पंदन है। सभी द्रव्य भाव परिणाम से उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप परिणमन करते हैं। पुद्गल परिस्पंदन स्वभाव से, परिस्पंदन के द्वारा भेद-संघात-भेद से उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप परिणमन करते हैं और क्रियावंत होते हैं तथा जीव भी परिस्पंदनस्वभाव से परिस्पंदन के द्वारा नूतन कर्म-नोकर्म पुद्गल मे भेद-संघात-भेद के द्वारा उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप परिणमन करते हैं तथा क्रियावंत होते है।

·११·०३ नित्यता तथा अवस्थिति

(१) रूवाइदव्वयाए न जाइ न य वेइ तेण सो निच्चो।

—विशेभा० गा १९६५। पूर्वार्ध

(२) पोग्गलत्थिकाए × × × जाव (न कयाइ भवइ × × × धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) णिच्चे। × × ×।

—भग० श २। उ १०। सू ५७

—ठाण० स्था ५। उ ३। सू ४४१

भग० टीका—द्रव्यतो शाश्वतः प्रदेशतः अवस्थितः।

(३) नित्यावस्थितान्यरूपाणि च। रूपिणः पुद्गलाः।

—तत्त्व० अ ५। सू ३-४

(४) नित्य—(क) तद्भावाव्ययं नित्यम्।

—तत्त्व० अ ५। सू ३०

(ख) नित्यग्रहणाद् धर्मादीनां स्वभावादप्रच्युतिराख्यायते।

—सिद्ध० अ ५। सू ३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ग) तत्स्वभावाव्ययत्वाच्च नित्यता सदा समस्त्येव ।

—सिद्ध० अ ५ । सू ४

(५) अवस्थित—(क) अवस्थितग्रहणादन्यूनानधिकत्वमाविर्भाव्यते, अनादिनिधनेयत्ताभ्यां न स्वतत्त्वं व्यभिचरन्ति ।

—सिद्ध० अ ५ । सू ३

(ख) अव्यतिकीर्यमाणस्वभावतयाऽवस्थितत्वम् ।

—सिद्ध० अ ५ । सू ४

पुद्गल नित्य तथा अवस्थित होता है ।

नित्य—द्रव्य के स्वभाव की प्रच्युति—व्यय न होना, स्वभाव का सदा तीनों काल में रहना, स्वभाव का समस्त भाव से पाया जाना द्रव्य की नित्यता है ।

अवस्थित—द्रव्य की संख्या में हानि-वृद्धि—कम या अधिक न होना, द्रव्य का अनादिनिधन होना, एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य के रूप से परिणमन न होना—द्रव्य की अवस्थिति है ।

·११·०४ अजीवत्व

(क) अजीवदव्वा णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—अरूविअजीवदव्वा य रूविअजीवदव्वा य ।४००

रूविअजीवदव्वा णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला ।४०२

—अणुओ० सू ४०० तथा ४०२

—भग० श २५ । उ २ । सू २

—पण्ण० प १ । सू ४, ६

(ख) अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः । द्रव्याणि जीवाश्च ।

—तत्त्व० अ ५ । सू १, २

(ग) दव्वं जीवमजीवं जीवो पुण चेदणोवजोगमओ ।
पोग्गलदव्वपमुह अचेदणं हवदि अजीवं ।।

—प्रव० अ २ । गा ३५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(घ) अज्जीवो पुण णेओ पुग्गलधम्मो अधम्म आयासं ।

—बृद्रस० गा १५ । पूर्वार्ध

(च) अजीवद्रव्यं पुद्गलापुद्गलभेदेन द्विविधम् ।

—कसापा० गा १३-१४ । टीका । भा १ । पृ० २१५

(छ) धर्माधर्माकाशानि पुद्गलाः काल एव चाजीवाः ।

—प्रशम० श्लो० २०७

टीका—धर्मद्रव्यं, अधर्मद्रव्यं, आकाशद्रव्यं, पुद्गलद्रव्यं, कालद्रव्यमिति पंचाजीवद्रव्याणि ।

(ज) धर्माधर्मनभःकालपुद्गलाः परिकीर्तिताः ।
अजोवा जीवतत्त्वज्ञैर्जीवलक्षणवर्जिताः ।

—योसा० अधि २ । श्लो १

पुद्गल द्रव्य अजीव-अचेतन होता है ।

·११·०५ अस्तिकायत्व

(क) कइ णं भंते ! अत्थिकाया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंच अत्थि-काया पन्नत्ता, तंजहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए ।

—भग० श २ । उ १० । सू ५३
—ठाण० स्था ५ । उ ३ । सू १
—सम० सम ५ । सू ५

भग० टीका—अस्ति-शब्देन प्रदेशा उच्यन्ते, अतस्तेषां काया राशयः अस्तिकायः, अथवा 'अस्ति' इत्ययं निपातः कालत्रयाभिधायी, ततोऽस्तीति सन्ति, आसन्, भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशाः राशयः, ते अस्तिकाया इति ।

(ख) जेसिं अत्थिसहाओ गुणेहिं सह पज्जएहिं विविहेहिं ।
ते होंति अत्थिकाया णिप्पण्णं जेहिं तइलुक्कं ।।

—पंच० अधि १ । गा ५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृत टीका—× × × अवयविनो हि जीवपुद्गलधर्म्माऽधर्म्माऽऽकाश-पदार्थास्तेषामवयवा अपि प्रदेशाख्याः परस्परव्यतिरेकित्वात्पर्याया उच्यन्ते। तेषां तैः सहान्यत्वे कायत्वसिद्धिरुपपत्तिमती।

(ग) सव्वे दव्वं इट्ठा, काल विणा अत्थिकाया य।

—कर्म० भा १ गा १५ में उद्धृत

(घ) उत्तं कालविजुत्तं णादव्वा पंच अत्थिकायादु।

—बृद्रस० गा २३

टीका—तदेव षड्विधं द्रव्यं कालेन वियुक्तं रहितं ज्ञातव्या. पंचास्तिकायास्तु।

(च) दव्वं छक्कमकालं पंचत्थिकायसण्णिदं होदि।
काले पदेसपचयो जम्हा णत्थित्ति णिद्दिट्ठं॥

—गोजी० गा ६१९

(छ) × × × पंचास्तिकायद्रव्याणि धर्माधर्माकाशपुद्गलजीवाख्यानि।

— श्लो० अ ५। सू ३

(ज) एदे छद्दव्वाणि य, कालं मोत्तूण अत्थिकायत्ति।
णिद्दट्ठा जिणसमये, काया हु बहुप्पदेसत्तं॥

— नियम० अधि २ गा। ३४

(झ) संति जदो तेणेदे अत्थित्ति भणंति जिणवरा जम्हा।
काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य॥

बृद्रस० गा २४

टीका—"संति जदो तेणेदे अत्थित्ति भणंति जिणवराः" सन्ति विद्यन्ते यत एते जीवाद्याकाशपर्यन्ताः पंच तेन कारणेनैतेऽस्तीति भणन्ति जिनवराः सर्वज्ञाः। "जम्हा काया इव बहुदेसा तम्हा काया य" यस्मात्काया इव बहुप्रदेशास्तस्मात् कारणात्कायाश्च भणंति जिनवराः × × ×।

(ञ) कालं विनास्तिकाया जीवमृते चाप्यकर्तृणि।

—प्रशम० श्लो २१४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—अथायमस्ति कायशब्दः किं सर्वद्रव्यविषयः ? नेत्याह—कालाद्-विनाऽस्तिकायाः ।

पुद्गल—अस्तिकाय है क्योंकि प्रदेशों का समूह पाया जाता है ।

·११·०६ रूपित्व मूर्तत्व

(क) रूविअजीवदव्वा णं भंते ! कइविहा पन्नता ? गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला ।

—अणुओ० सू ४०२

—भग० श २५ । उ २ । सू २

—पण्ण० प १ । सू ६

पण्ण टीका—× × × रूपमेषामस्तीति रूपिणः, रूपग्रहणं गंधादीनामुपलक्षणम्, तद्व्यतिरेकेण तस्यासंभवात् । × × × ।

(ख) खंध य खंधदेसा य तप्पएसा तहेव य ।
परमाणुणो य बोद्धव्वा, रूविणो य चउव्विहा ॥

—उत्त० अ ३६ । गा १०

(ग) रूपिणः पुद्गलाः ।

—तत्त्व० अ ५ । सू ४

(घ) रूपशब्दस्याऽनेकार्थत्वे मूर्तिपर्यायग्रहणं शास्त्रसामर्थ्यात् × × × । क्वचिन्मूर्तिपर्यायवचनः—रूपिद्रव्यं मूर्तिमद्—द्रव्यमित्यर्थः । तत्रेह मूर्तिपर्यायवचनो रूपशब्दो ग्रहीतव्यः × × × । तस्मात् रूपिणः पुद्गलाः मूर्तिमन्तः पुद्गलाः इत्यर्थः ।

—राज० अ ५ । सू ५

(च) × × × पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो । × × × ।

—वृद्रस० गा १५ पूर्वार्ध

टीका 'पुग्गल मुत्तो' पुद्गलो मूर्त्तः । कस्मात् 'रूवादिगुणो' रूपादिगुणसहितो यतः ।

(छ) 'मुत्तं पुग्गलदव्वं' × × × ।

—पंच० अधि १ । गा ९७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमृत टीका—स्पर्शरसगंधवर्णसद्भावस्वभावं मूर्तम्। × × × मूर्तः पुद्गलः एवैकः। × × ×।

(ज) खंधा देस पएसा, परमाणू पुग्गला चउहरूवी ॥

—कर्म० भा १। गा १५ में उद्धृत

(झ) मुत्तो रूवादिगुणो।

—प्रव० अ २। गा ८१

(ञ) पुद्गलवर्जमरूपं तु रूपिणः पुद्गलाः प्रोक्ताः।

—प्रशम० श्लो २०७ उत्तरार्ध

टीका—× × ×। तत्र तेषु पंचसु पुद्गलद्रव्यं रूपरसगंधस्पर्शवत्, शेषं द्रव्यचतुष्टयमरूपं, रूपादिवर्जितमित्यर्थः। रूपिणः इत्यत्र गंधरसस्पर्शाः सर्वदा रूपाविनाभाविन इति परमाणावपि संभवतीति दर्शितं भवति।

(ट) अमूर्ता निष्क्रियाः सर्वे मूर्तिमंतोऽत्र पुद्गलाः।
रूपगंधरसस्पर्शव्यवस्था मूर्तिरुच्यते ॥

—योसा०। अधि० २। श्लो ३

मूर्तामूर्तं द्विधा द्रव्यं मूर्तामूर्तंगुणयुतं।
अक्षग्राह्या गुणा मूर्ता अमूर्ताः संत्यतींद्रियाः ॥

—योसा०। अधि० २। श्लो २१

पुद्गल रूपी है—मूर्तिमान है अर्थात् रूप गुणवाला होता है। गंध, रस, स्पर्श आदि रूप में अविनाभावी है अतः रूप के कथन से उन सबका ग्रहण हो जाता है।

·११·०७ वर्ण-गंध-रस-स्पश

(क) पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइवण्णे, कइ गंध-रस-फासे? गोयमा! पंचवण्णे, पंचरसे, दुगंधे, अट्ठफासे × × × पन्नत्ते × × ×।

—ठाण० स्था० ५। उ ३। सू ४४१

—भग० श २। उ १०। सू ५७

—भग० श १२। उ ५। सू १५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) स्पर्शरसगंधवर्णवन्तः पुद्गलाः ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २३

(ग) स्पर्शः रसः गंधः वर्णः इत्येवंलक्षणाः पुद्गला भवन्ति । तत्र स्पर्शोऽष्टविधः—कठिनो मृदुर्गुरुर्लघुः शीत उष्णः स्निग्धो रूक्ष इति । रसः पंचविधः तिक्तः कटुः कषायोऽम्लो मधुरः इति । गंधो द्विविधः—सुरभिरसुरभिश्च । वर्णः पंचविधः—कृष्णो नीलो लोहितः पीतः शुक्लः इति ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २३—भाष्य

(घ) × × × स्पर्शश्च रसश्च गंधश्च वर्णश्च स्पर्शरसगंधवर्णास्त एतेषां सन्तीति स्पर्शरसगंधवर्णवन्तः ।

—सर्व० अ ५ । सू २३

(च) वण्णरसगंधफासा विज्जंते पोग्गलस्स सुहुमादो ।

—प्रव० अधि २ । गा ४० । पूर्वार्ध

जयसेन टीका—'वण्णरसगंधफासा विज्जंते पोग्गलस्स' चतुष्टयं विशेषलक्षणभूतं यथासंभवं सर्वपुद्गलेषु साधारणम् ।

(छ) उवजोगो वण्णचऊ लक्खणमिह जीवपोग्गलाणं तु ।

—गोजी० गा ५६४

(ज) × × × । रूविअजीवदव्वं तस्स लक्खणं वुच्चदे—रूपरसगंधस्पर्शवन्तः पुद्गलाः

—षट्० खं० १, २ । गा १ । टीका । पु ३ । पृ० २

(झ) भावविभत्ती दुविहा-जीवभावविभत्ती य अजीवभावविभत्ती य । × × × । अजीवाणं मुत्ताणं वण्णादि ४ ।

—सूय० । श्रु १ । अ ५ । चू । सू ६७

पुद्गल में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श होते हैं ।

·११·०८ स्वभाव गुण—विभावगुण

एयरसरूवगंधं, दो फासं तं हवे सहावगुणं ।
विहावगुणमिवि भणिदं, जिणसमये सव्वपयडत्तं ॥

—नियम० गा २७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल का स्वभाव गुण—एक रस, एक रूप (वर्ण), एक गंध तथा दो स्पर्श है। इसके विपरीत विभाग गुण है ऐसा जिन आगमों में वर्णन है।

·११·०९ द्रव्यकर्म

जं तं दव्वकम्मं णाम। × × ×

जाणि दव्वाणि सब्भावकिरियाणिप्फण्णाणि तं सव्वं दव्वकम्मं णाम।

—षट्० खं० ५, ४। सू १३, १४। पु १३। पृ० ४३

टीका— × × × पोग्गलदव्वस्स वण्ण-गंध-रस-फासविसेसेहि परिणामो सब्भावकिरिया × × ×।

जिस द्रव्य की जो सद्भाव या स्वभाव क्रिया है उस क्रिया को 'द्रव्यकर्म' नाम की संज्ञा दी गई है। पुद्गल द्रव्य का वर्ण, गंध, रस, स्पर्श का विशेष रूप से होने वाले परिणाम को द्रव्यकर्म कहा गया है।

·११·१० द्रव्ययोग

× × × णोआगमभावजोगो तिविहो— गुणजोगो, संभवजोगो, जुंजणजोगो चेदि। तत्थ गुणजोगो दुविहो-सच्चित्तगुणजोगो अच्चित्तगुणजोगो चेदि। तत्थ अच्चित्तगुणजोगो जहा रूव-रस-गंध-फासादीहि पोग्गल-दव्वजोगो × × ×।

—षट्० खं० ४, २, २। सू १७५। टीका। पु १०। पृ० ४३३

नोआगमभावयोग तीन प्रकार का होता है—यथा—(१) गुणयोग, (२) संभवयोग तथा (३) योजनायोग। गुणयोग दो प्रकार का होता है—यथा (१) सचित्त गुणयोग तथा (२) अचित्त गुणयोग।

अचित्त द्रव्यों के स्व-स्व गुणों में जो योग होता है वह अचित्तगुणयोग। पुद्गल के रूप, रस, गंध, स्पर्श आदि गुणों का जो योग होता है वह पुद्गल द्रव्य अचित्त गुणयोग है।

गुणयोग—जहाँ किसी द्रव्य के गुण या गुणों का योग हो वह गुणयोग। पुद्गल के रूप-रस-गंध-स्पर्श आदि गुणों का जो योग हो वह नोआगम भावपुद्गलद्रव्य अचित्त गुणयोग है।

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

·११·११ द्रव्यस्थान

णोआगमदव्वट्ठाणं तिविहं—जाणुगसरीरभविय-तव्वदिरित्तट्ठाणभेएण × × ×। तव्वदिरित्तदव्वट्ठाणं तिविहं—सच्चित्त-अचित्त-मिस्स-णोआगम-दव्वट्ठाणं चेति × × ×। जं तमचित्तदव्वट्ठाणं तं दुविहं—रूवि-अचित्त-दव्वट्ठाणमरूवि-अचित्तदव्वट्ठाणं चेदि। जं तं रूविअचित्तदव्वट्ठाणं तं दुविहं-अब्भंतरं बाहिरं चेदि। जं तमब्भंतरं [तं] दुविहं-जहवुत्ति-अजहवुत्तियं चेदि। जं तं जहवुत्तिअब्भंतरट्ठाणं तं किण्ह-णील-रुहिर-हालिद्द-सुक्किल-सुरहि-दुरहिगंधतित्त-कडुअ-कसायंबिल-महुर-णिद्ध-ल्हुक्ख-सीदु-सुणादि-भेदेणं अणेगविहं। जं तमजहवुत्तिरूवि-अचित्तट्ठाणं तं पोग्गलमुत्ति-वण्ण-गंध-रस-फास-अणुवजोगत्तादिभेदेण अणेगविहं। जं तं बाहिररूविअचित्त दव्वट्ठाणं तमेगागास-पदेसादिभेदेण असंखेज्जवियप्पं।

—षट्० खण्ड० ४, २, ४। सू १७५। पु १०। पृ० ४३५

नोआगमद्रव्यस्थान तीन प्रकार का होता है—यथा—(१) ज्ञायक शरीर, (२) भावी तथा (३) तद्व्यतिरिक्त।

तद्व्यतिरिक्त द्रव्यस्थान तीन प्रकार का होता है—यथा—(१) सचित्त, (२) अचित्त तथा (३) मिश्रनोआगमद्रव्यस्थान। रूपी (पुद्गल) अचित्तद्रव्यस्थान दो प्रकार का होता है—यथा—(१) आभ्यंतर और (२) बाह्य। आभ्यंतर रूपी अचित्त-द्रव्यस्थान दो प्रकार का होता है—यथा—(१) जहद्द्वृत्तिक तथा (२) अजहद्वृत्तिक।

जो जहद्वृत्तिक आभ्यंतर रूपी द्रव्यस्थान है वह कृष्ण, नील, रक्त, पीत, शुक्ल, सुरभिगंध, दुरभिगंध, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर-स्निग्ध-रूक्ष-शीत-उष्ण आदि भेद से अनेक प्रकार का होता है।

जो अजहद्वृत्तिक आभ्यंतर रूपी अचित्त द्रव्यस्थान है वह पुद्गल का मूर्तत्व, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श व उपयोग-हीनता आदि के भेद से अनेक प्रकार का होता है।

जो बाह्य रूपी अचित्त द्रव्यस्थान है वह एक आकाशप्रदेश आदि (एक आकाशप्रदेश, दो आकाशप्रदेश यावत् असंख्यातप्रदेश) के भेद से असंख्यात भेद रूप होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·११·१२ पूरण-गलन स्वभाव

(क) पूरणगलनधर्माणः पुद्गलाः ।

—कर्म० भा ५ । गा ८९ । टीका

—ठाण० स्था १ । सू ५१ । टीका

(ख) पूरणगलणसहावा पोग्गला णाम ।

—षट्० खण्ड० ५, ६ । गा ३७ । टीका । पु १४ । पृ० ३६

(ग) पूरणगलनस्वभावत्वात् पुद्गल इत्युच्यते ।

— वृद्रस० गा १५ । टीका

(घ) अमृत टीका—पूरणगलनधर्मत्वात् (पुद्गलाः) ।

—पंच० अधि १ । गा ७६

(च) त्रिकालपूरणगलनात् पुद्गला इति निर्वचनं न प्रतिपक्षमुपयातीत्य-व्यभिचारं सिद्धं ।

—श्लो० अ ५ । सू १ । पृ० ३९२-९३

(छ) पूरणाद् गलनाच्च पुद्गलाः ।

—सिद्ध० अ ५ । सू १

(ज) पुद्गलशब्दस्यार्थो निर्दिष्टः—पुंगिलत्वात् पूरणगलनाद्वा पुद्गल इति ।

—राज० अ ५ । सू १९ । पृ० ४७४

पुद्गल—पूरण-गलन धर्मवाला है—जिसमें मिलने का और अलग होने का स्वभाव हो वह पुद्गल है ।

·११·१३ परिणमन

(क) दसविहे अजीवपरिणामे पन्नत्ते × × × ।

—ठाण० स्था १० । सू ७१३

—पण्ण० । प १३ । सू ९४७ । पृ० ४१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भग० टीका—अजीवानां—पुद्गलानां परिणामोऽजीवपरिणामः ।

(ख) (पमाणं सत्तविहं) एदस्स सुत्तस्स अत्थविवरणं कस्सामो। तंजहा—णामपमाणं, ट्ठवणपमाणं, संखपमाणं दव्वपमाणं, खेत्तपमाणं, कालपमाणं, णाणपमाणं चेदि। × × ×। दव्वपमाणे × × × दव्वमिदि उत्ते परिणामिदव्वाणं जीव-पोग्गलाणमण्णेसिं परिच्छित्तिणिमित्ताणं गहणं, तत्थ पचयापचयभावदंसणादो संकोचविकोचत्तुवलंभादो च। ण च धम्मा-धम्मकालागासा परिणामिणो, तत्थ रूव-रस-गंध-फासोगाहण-संठाणंतर-संकंतीणमणुवलंभादो। अथवा, अण्णपरिच्छित्तिहेउ-दव्वं दव्वपमाणं णाम।

—कसापा० गा १। टीका २७। भा १। पृ० ३९-४०

(ग) परिणामि-जीव-मुत्तं × । × ×।

—वृद्रस० अधि २। गा १ पूर्वार्ध

टीका—परिणामपरिणामिणौ जीवपुद्गलौ स्वभावविभावपर्यायाभ्यां कृत्वा।

(घ) अण्णणिरावेक्खो जो, परिणामो सो सहावपज्जावो।
खंधसरूवेण पुणो, परिणामो सो विहावपज्जायो॥

—नियम० अधि २। गा २८

(च) द्रव्यस्य पर्यायो धर्मान्तरनिवृत्तिधर्मान्तरोपजननरूपः अपरिस्पं-दात्मकः परिणामः। जीवस्य क्रोधादिः, पुद्गलस्य वर्णादिः।

—सर्व० अ ५। सू २२। पृ० २९२

(छ) द्रव्यस्य स्वजात्यपरित्यागेन प्रयोगविस्रसालक्षणो विकारः परिणामः।

—राज० अ ५। सू २२। पृ० ४७७

(ज) परिणामो ह्यर्थान्तर-गमनं न च सर्वथा व्यवस्थानम्।
न च सर्वथा विनाशः, परिणामस्तद्विदामिष्टः॥

—ठाण० स्था ४। उ १। सू २६५। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वभाव और विभाव पर्यायों द्वारा परिणाम से परिणामी पुद्गल द्रव्य है (जो परिणमन अन्य की अपेक्षा से नहीं होता है वह स्वभाव पर्याय है, जो परिणमन स्कंध रूप से होता है वह विभाव-पर्याय है)। पुद्गल अपनी स्वद्रव्यजाति को नहीं छोड़ते हुए स्वाभाविक या प्रायोगिक परिणमन करता है। पुद्गल द्रव्य में हानि-वृद्धि तथा संकोच-विस्तार होता है अर्थात् पुद्गल रूप से रूपान्तर, रस से रसान्तर, गंध से गंधान्तर, स्पर्श से स्पर्शान्तर, अवगाहना से अवगाहनान्तर और आकार से आकारान्तर होता है अतः पुद्गल परिणामी है।

·११·१४ परिणाम

·११·१४·१ तीनों काल की अपेक्षा पुद्गल-परिणाम

एस णं भंते ! पोग्गले तीतमणंतं सासयं समयं लुक्खी, समयं अलुक्खी, समयं लुक्खी वा, अलुक्खी वा ? पुव्विं च णं करणे णं अणेगवण्णं अणेगरूवं परिणामं परिणमति ? अह से परिणामे निज्जिण्णे भवइ, तओ पच्छा एगवण्णे एगरूवे सिया ? [सू १]

एस णं भंते ! पोग्गले पडुप्पन्नं सासयं समयं० ? एवं चेव, एवं अणागयमणंतंपि।

—भग० श० १४। उ ४। सू १-२

टीका—'पुग्गले त्ति' पुद्गलः परमाणुः स्कंधरूपश्च। तीतमणंतं सासयं समयं ति। विभक्तिपरिणामादतीते अनन्ते अपरिणामत्वात्, शाश्वते अक्षयत्वात्, समये काले। समयं लुक्खीति। समयमेकं यावत् रूक्षस्पर्श-सद्भावाद्रूक्षोः तथा। समय अलुक्खीति। समयमेकं। 'यावद्रूक्ष-स्पर्शसद्भावादरूक्षो, स्निग्धस्पर्शवान् बभूव' इदच्च पदद्वयं परमाणौ स्कंधे च संभवति। तथा समयं लुक्खी वा अलुक्खीवत्ति समयमेव रूक्षश्चा-रूक्षश्च रूक्षस्निग्धलक्षणस्पर्शद्वयोपेतो बभूव। इद च स्कधापेक्षं यतो द्व्यणुकादिस्कधे देशो रूक्षो देशश्चारूक्षो भवतीति। एवं युगपद्रूक्षस्निग्ध-स्पर्शसंभवो, वाशब्दो चेह समुच्चयार्थो, एवं रूपश्च सन्नसौ किमनेकवर्णादि-परिणामं परिणमति पुनश्चैकवर्णादिपरिणामः स्यादिति पृच्छन्नाह—पुव्विं च णं करणे णं अणेगवण्णं अणेगरूवं परिणाम परिणमईत्यादि। पूर्वं च एकवर्णादिपरिणामात्प्रागेव करणेन प्रयोगकरणेन विस्रसाकरणेन वा;

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेकवर्णं कालनीलादिवर्णभेदेन अनेकरूपं गंधरसस्पर्शसंस्थानभेदेन परिणामं पर्यायं। परिणाम इति। अतीतकालविषयत्वावस्य परिणतवानिति द्रष्टव्यं।

'पुद्गल इति प्रकृतः' स च यदि परमाणुस्तदा समयभेदेनानेकवर्णादित्वं परिणतवान्, यदि च स्कंधस्तदायौगद्येनापीति। अहेसेत्ति—अथ अनंतरं स एष परमाणोः स्कंधस्य चानेकवर्णादिपरिणामो निर्जीर्णः क्षीणो भवति, परिणामान्तराधायककारणोपनिपातवशात्ततः पश्चान्निर्जरणानन्तर एक-वर्णोपेतवर्णान्तरत्वादेकरूपो विवक्षितगंधादिपर्यायापेक्षयाऽपरपर्यायाणामपे-तत्वात्।

सिय त्ति। बभूव, अतीतकालविषयत्वादस्येति प्रश्नः इहोत्तरमेतदेवेति—अनेन च परिणामिता पुद्गलद्रव्यस्य प्रतिपादितेति। एसणमित्यादि। वर्तमानकालसूत्रं, तत्र च पडुप्पणंति। विभक्तिपरिणामात्प्रत्युत्पन्ने वत्तमाने शाश्वते सदैव तस्य भावात्समये कालमात्रे। एवं चेव त्ति। करणात्पूर्व-सूत्रोक्तमिद दृश्यम्—समयं लुक्खी समय अलुक्खी समय लुक्खी वाऽलुक्खी-वेत्यादि, यच्चेहानन्तमिति नाधीत, तद् वर्तमानसमयस्यानन्तत्वासंभवात्, अतीतानागतसूत्रयोस्तु अनंतमित्यधीतं तयोरनन्तत्वसंभवादिति। अनन्तरं पुद्गलस्वरूप निरूपितं पुद्गलश्च स्कधो भवतीति पुद्गलभेदभूतस्य स्कंधस्य स्वरूपं निरूपयन्नाह—एसणं भंते! खधे इत्यादि।

पुद्गल अनंत शाश्वत अतीतकाल में कोई एक समय रूक्ष स्पर्शवाला, कोई एक समय अरूक्ष स्निग्ध स्पर्शवाला तथा कोई एक समय रूक्ष और स्निग्ध—दोनों प्रकार के स्पर्शवाला था। पूर्वकरण (प्रयोगकरण) और विस्रसाकरण के द्वारा अनेक वर्णवाले तथा (अनेक गध-रस-स्पर्श और संस्थान के भेद से) अनेक रूपवाले परिणाम में परिणत हुआ और उस अनेक वर्णादि परिणाम के क्षीण होने पर वह पुद्गल एक वर्णवाला और एक रूपवाला हुआ।

इसी प्रकार पुद्गल शाश्वत वर्तमानकाल में तथा अनंत अनागतकाल में एक समय तक रूक्ष स्पर्शवाला, एक समय तक स्निग्ध स्पर्शवाला तथा एक समय तक रूक्ष तथा स्निग्ध—दोनों प्रकार के स्पर्शवाला होता है तथा होगा। पूर्वकरण (प्रयोगकरण) और विस्रसाकरण के द्वारा अनेक वर्णवाले और (अनेक गंध-रस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्श और संस्थान भेद से) अनेक रूपवाले परिणाम रूप में परिणत होता है तथा होगा और उस अनेक वर्णादि परिणाम के क्षीण होने पर वह पुद्गल एक रूपवाला होता है और होगा।

यहाँ 'पुद्गल' शब्द से परमाणु और स्कंध दोनों का ग्रहण करना चाहिए। 'समयं लुक्खी' अर्थात् एक समय तक रूक्ष स्पर्शवाला रहा तथा 'समयं अलुक्खी' अर्थात् एक समय तक अरूक्ष—स्निग्ध स्पर्शवाला रहा।—ये दोनों पद परमाणु और स्कंध दोनों में संभव हैं। परमाणु में भी भिन्न समय में रूक्ष स्पर्श और भिन्न समय में स्निग्धस्पर्श पाया जा सकता है।

लेकिन तीसरा पद—यथा -एक समय में रूक्ष और स्निग्ध दोनों स्पर्शवाला—यह पद केवल स्कंध की अपेक्षा जानना चाहिए। क्योंकि द्वयणुकादि स्कंध का एक देश रूक्ष और एक देश स्निग्ध स्पर्शवाला हो सकता है। इस प्रकार द्वयणुकादि स्कंध में—युगपद् रूक्ष और स्निग्ध स्पर्श संभव है।

अस्तु वह (परमाणु या स्कंध) अनेक वर्णादि परिणाम में परिणत होता है और फिर एक वर्णादि परिणाम में परिणत होता है। अर्थात् एक वर्णादि परिणाम के पहले प्रयोगकरण द्वारा अथवा विस्रसाकरण द्वारा अनेक कृष्ण नीलादि वर्ण भेद से अनेक रूप में तथा अनेक गंध, रस, स्पर्श और संस्थान भेद से अनेक अवस्था में परिणत होता है। इस प्रकार पुद्गल अतीतकाल में अनेक वर्णादि परिणाम में परिणत हुआ और उस अनेक वर्णादि परिणाम के क्षीण होने पर वह पुद्गल एक वर्णवाला और एक रूप वाला हुआ था।

परमाणु पुद्गल मात्र समय भेद से अनेक वर्णादि रूप से परिणत हो सकता है परन्तु स्कंध समय भेद से या युगपद् भी अनेक वर्णादि रूप से परिणत हो सकता है। उस परमाणु या स्कंध का जब अनेक वर्णादि परिणाम निर्जीर्ण—क्षीण हो जाता है तब एक वर्णपर्याय में परिणत हो जाता है।

इसी प्रकार गंध-रस-स्पर्श पर्याय के विषय में भी जानना चाहिए।

यहाँ भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यत्काल—इन तीनों काल संबंधी प्रश्नोत्तर हैं।

इसी प्रकार स्कंध के विषय में भी प्रश्नोत्तर किए गये हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·११·१४·२ गुरुलघुत्व तथा अगुरुलघुत्व

पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! किं गरुए, लहुए, गरुयलहुए, अगरुयलहुए ? गोयमा ! णो गरुए, णो लहुए, गरुयलहुए वि, अगरुयलहुए वि। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! गरुयलहुय दव्वाइं पडुच्च णो गरुए, णो लहुए, गरुयलहुए, णो अगरुयलहुए। अगरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गरुए, णो लहुए, णो गरुयलहुए, अगरुयलहुए।

—भग० श १। उ ९। सू २८७-८८

टीका—'चउफास' त्ति सूक्ष्मपरिणामानि, 'अट्ठफास' त्ति बादराणि। गुरुलघुद्रव्यं रूपि, अगुरुलघुद्रव्यं तु अरूपि, रूपि च इति।

पुद्गल गुरुलघु तथा अगुरुलघु भी है परन्तु गुरु तथा लघु नहीं है। गुरुलघु द्रव्यों की अपेक्षा पुद्गल गुरुलघु है परन्तु गुरु, लघु तथा अगुरुलघु नहीं है। अगुरुलघु द्रव्यों की अपेक्षा पुद्गल अगुरुलघु है परन्तु गुरु, लघु तथा गुरुलघु नहीं है।

टीकाकार के अनुसार जो आठ स्पर्श वाले बादर—पुद्गल हैं वे गुरुलघु हैं तथा चार स्पर्शवाले जो सूक्ष्म पुद्गल हैं वे अगुरुलघु हैं।

·११·१४·३ पुद्गल परिणाम के भेद

(क) तीन भेद

कइविहा णं भंते ! पोग्गला पन्नत्ता ? गोयमा ! तिविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—पओगपरिणया, मीससापरिणया, वीससापरिणया य।

—भग० श ८। उ १। सू १

—ठाण० स्था ३। उ ३। सू १८६

पुद्गल परिणाम के तीन भेद हैं—यथा—प्रयोग परिणत, मिश्र परिणत और विस्रसापरिणत।

(ख) चार भेद

चउव्विहे पोग्गलपरिणामे—वण्णपरिणामे, गंधपरिणामे, रसपरिणामे, फासपरिणामे।

—ठाण० स्था ४। उ १। सू २६५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल परिणाम के चार भेद हैं—यथा—वर्णपरिणाम, गंधपरिणाम, रसपरिणाम और स्पर्शपरिणाम।

(ग) पाँच भेद

कइविहे णं भंते! पोग्गलपरिणामे पन्नत्ते? गोयमा! पंचविहे पोग्गलपरिणामे पन्नत्ते, तंजहा—वण्णपरिणामे, गंधपरिणामे, रसपरिणामे, फासपरिणामे, संठाणपरिणामे।

—भग० श ८। उ १०। सु १४

—उत्त० अ ३६। गा १५

पुद्गल परिणाम के पाँच भेद हैं—यथा—वर्णपरिणाम, गंधपरिणाम, रसपरिणाम, स्पर्शपरिणाम और संस्थान परिणाम।

(घ) दस भेद

अजीवपरिणामे णं भंते! कइविहे पन्नत्ते? गोयमा! दसविहे पन्नत्ते, तंजहा—बंधणपरिणामे, गतिपरिणामे, संठाणपरिणामे, भेदपरिणामे, वण्णपरिणामे, गंधपरिणामे, रसपरिणामे, फासपरिणामे, अगरुयलहुयपरिणामे, सद्दपरिणामे।

—ठाण० स्था १०। सू ७१३

—पण्ण० प १३। सू ९४७

अजीव परिणाम—पुद्गल परिणाम के दस भेद हैं—यथा—बंधनपरिणाम, गतिपरिणाम, संस्थानपरिणाम, भेदपरिणाम, वर्णपरिणाम, गंधपरिणाम, रसपरिणाम, स्पर्शपरिणाम, अगुरुलघुपरिणाम तथा शब्दपरिणाम।

(च) बाइस भेद

बावीसविहे पोग्गलपरिणामे पन्नत्ते, तंजहा—कालवण्णपरिणामे १, नीलवण्णपरिणामे २, लोहियवण्णपरिणामे ३, हालिद्दवण्णपरिणामे ४, सुक्किल्लवण्णपरिणामे ५, सुब्भिगंधपरिणामे ६, दुब्भिगंधपरिणामे ७, तित्तरसपरिणामे ८, कडुयरसपरिणामे ९, कसायरसपरिणामे १०, अंबिलरसपरिणामे ११, महुररसपरिणामे १२, कक्खडफासपरिणामे १३, मउयफासपरिणामे १४, गुरुफासपरिणामे १५, लहुफासपरिणामे १६, सीत-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फासपरिणामे १७, उसिणफासपरिणामे १८, णिद्धफासपरिणामे १९, लुक्खफासपरिणामे २०, गुरुलहुफासपरिणामे २१, अगुरुलहुफासपरिणामे २२।

—सम० सम० २२। सू ६

पुद्गल परिणाम के बाइस भेद हैं—यथा—काला वर्णपरिणाम, नील वर्णपरिणाम, लोहित वर्णपरिणाम, हारिद्र वर्णपरिणाम, शुक्ल वर्णपरिणाम, सुगंध परिणाम, दुर्गन्ध परिणाम, तिक्तरसपरिणाम, कटुरसपरिणाम, कषायरसपरिणाम, आंबिलरसपरिणाम, मधुररसपरिणाम, कर्कशस्पर्शपरिणाम, मृदुस्पर्शपरिणाम, गुरुस्पर्शपरिणाम, लघुस्पर्श-परिणाम, शीतस्पर्शपरिणाम, उष्णस्पर्शपरिणाम, स्निग्धस्पर्शपरिणाम, रूक्षस्पर्श-परिणाम, गुरुलघुस्पर्शपरिणाम, अगुरुलघुस्पर्शपरिणाम।

(छ) अनेक भेद

(क) रूपिषु तु द्रव्येषु आदिमान् परिणामोऽनेकविधः, स्पर्शपरिणामादिरिति।

—तत्त्व० अ ५। सू ४३-भाष्य

(ख) तत्रानेकः परिणामः पुद्गलेषु द्वयणुकादिस्कंधलक्षणः, शब्दादिः शुक्लपीतादिश्च, तत्र यदा द्वावणू विस्रसातो द्वयणुकस्कंधमारभेते, तदा द्वयणुकस्कंधपरिणाम आदिमान्, एवं शेषा अपि प्रयोगविस्रसाजनिता यथावद् द्रष्टव्या इति।

—सिद्ध० अ ५। सू ४३

पुद्गलों में द्वयणुकादि अनेक स्कंध होते हैं, शब्दादि अनेक गुण होते हैं तथा शुक्ल-पीतादि अनेक वर्ण होते हैं ; अतः पुद्गल के परिणाम भी अनेक होते हैं। यथा—दो अणु विस्रसा गति से द्वयणुक स्कंध का आरम्भ करते हैं तो द्वयणुक स्कंध-परिणाम होता है। इसी प्रकार विस्रसा और प्रयोग गति की अपेक्षा से तीन, चार, पांच आदि अणु स्कंधों के परिणाम के भेद अनेक जानने चाहिए।

·११·१५ ग्रहण गुण और परिभोग गुण

(क) पोग्गलत्थिकाए णं पुच्छा। गोयमा ! पोग्गलत्थिकाए णं जीवाणं ओरालिय-वेउव्विय-आहारग-तेया-कम्मए-सोइंदिए-चक्खिदिए-घाणिंदिए-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिब्भिंदिए-फासिंदिए-मणजोग-वयजोग-कायजोग-आणापाणूणं च गहणं पवत्तति, गहणलक्खणे णं पोग्गलत्थिकाए।

—भग० श १३। उ ४। सू १८

(ख) जीवदव्वाणं भंते ! अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, अजीवदव्वाणं जीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति ? गोयमा ! जीवदव्वाणं अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, नो अजीवदव्वाणं जीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव—'हव्वमागच्छंति' ? गोयमा ! जीवदव्वा णं अजीवदव्वे परियादियंति, अजीवदव्वे परियादिइत्ता ओरालियं वेउव्वियं आहारगं तेयगं कम्मगं, सोइंदियं जाव —फासिंदियं, मणजोगं, वइजोगं, कायजोगं, आणापाणुत्तं च निव्वत्तयंति, से तेणट्ठेणं जाव— 'हव्वमागच्छंति'।

नेरइयाणं भंते ! अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, अजीवदव्वाणं नेरइया परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति ? गोयमा ! नेरइयाणं अजीवदव्वा जाव हव्वमागच्छंति, नो अजीवदव्वाणं नेरइया हव्वमागच्छंति। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—जाव—'हव्वमागच्छंति ? गोयमा ! नेरइया अजीवदव्वे परियादियंति, अजीवदव्वे परियादिइत्ता वेउव्विय-तेयग-कम्मगं, सोइंदियं जाव फासिंदियं मणजोगं, वयजोगं, कायजोगं, आणापाणुत्तं च निव्वत्तयंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-एवं जाव वेमाणिया। नवरं सरीरइंदिय-जोगा भाणियव्वा जस्स जे अत्थि।

—भग० श २५। उ २। सू ४, ५

(ग) पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! × × ×। गुणओ गहणगुणे।

—ठाण० स्था ५। उ ३। सू ४४१

—भग० श २। उ १०। सू ५७

(घ) पोग्गलत्थिकायो गहणलक्खणो।

—सूय० श्रु १। अ ९। चू०। सू १०१

पुद्गल ग्रहण गुणवाला है अर्थात् पुद्गल का ग्रहण होता है। पुद्गल का ग्रहण जीवद्रव्य के द्वारा होता है। अन्य अजीव द्रव्यों के द्वारा नहीं होता है। पुद्गल जीवद्रव्य को ग्रहण नहीं करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव, पुद्‌गल को ग्रहण करके, उन ग्रहण किये हुए पुद्‌गलों को औदारिक-वैक्रिय-आहारक-तैजस-कार्मण पाँच शरीर रूप में ; श्रोत्रेन्द्रिय-चक्षुरिन्द्रिय-घ्राणेन्द्रिय-रसेन्द्रिय-स्पर्शेन्द्रिय पाँच इन्द्रिय रूप में ; मनयोग-वचनयोग-काययोग तीन योग रूप में तथा श्वासोच्छ्‌वासरूप में परिणमन करता है।

नारकी से यावत् वैमानिक देव तक के जीवदण्डक के सभी जीव पुदगलों को ग्रहण करके यथानुसार शरीर-इन्द्रिय-योग-श्वासोच्छ्‌वास रूप में उनका परिणमन करते हैं।

यह जानने की बात है कि सिद्ध जीव किसी भी प्रकार के पुद्‌गल का ग्रहण नहीं करते हैं।

·११·१६ अवस्थान आदि गुण

एगंसि णं पोग्गलत्थिकायंसि रूविकायंसि अजीवकायंसि चक्किया केई आसइत्तए वा, सइत्तए वा जाव (चिट्ठइत्तए वा निसीइत्तए वा) तुयट्टित्तए वा।

—भग० श ७। उ १०। सू ३

एक अजीव रूपी पुद्‌गलास्तिकाय पर ही बैठने में, सोने में, खड़े होने में, नीचे बैठने में या आलोटन करने में कोई भी समर्थ है अर्थात् पुद्‌गलास्तिकाय में ही सोना, बैठना, खड़ा होना, नीचे बैठना या आलोटन किया जा सकता है।

ये सब काम धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय तथा आकाशास्तिकाय में नहीं किये जा सकते हैं।

·१२ पुद्‌गल और पर्याय

·१२·०१ पर्याय का लक्षण

(क) एगत्तं च पुहत्तं च संखा संठाणमेव य।
संजोगा य विभागा य पज्जवाणं तु लक्खणं॥

—उत्त० अ २८। गा १३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिलना, भिन्न होना, संख्या, संस्थान, संयोग और विभाग—ये (पुद्गल) पर्यायों के लक्षण होते हैं।

(ख) अण्णणिरावेक्खो जो, परिणामो सो सहावपज्जाओ।
खंधसरूवेण पुणो, परिणामो सो विहावपज्जायो॥

—नियम० गा २८

जो परिणमन अन्य की अपेक्षा रहित होता है उसे स्वभाव पर्याय कहते हैं और जो परिणमन स्कंधरूप से होता है उसे विभावपर्याय कहते हैं।

टीकाकार का कथन है कि परमाणु पुद्गल में स्वभावपर्याय होता है क्योंकि उसमें अन्य की अपेक्षा नहीं है, अतः परमाणु पुद्गल में विभावपर्याय अर्थात् स्कंध-पर्याय नहीं होता है।

(ग) सद्दंधयारउज्जोओ, पहा छायातवे इ वा।
वण्णरसगंधफासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं॥

—उत्त० अ २८। गा १२

(घ) सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया॥

—वृद्रस० गा १६। पृ० ४५

(च) स्पर्शरसगंधवर्णाः शब्दो बंधश्च सूक्ष्मता स्थौल्यम्।
संस्थानं भेदतमश्छायोद्योतातपश्चेति॥

—प्रशम० श्लो २१६

टीका—स्पर्शादयः पुद्गलद्रव्यस्योपकाराः।

शब्द, बंध, अंधकार, उद्योत, प्रभा, छाया, धूप, संस्थान, भेद, आतप, वर्ण, गंध, रस और स्पर्श—ये पुद्गल के लक्षण हैं अथवा पर्याय हैं।

·१२·०२ एकत्व-पृथक्त्व

एगत्तेण पुहत्तेण खंधा य परमाणुणो।
लोएगदेसे लोए य भइयव्वा ते उ खेत्तओ॥

—उत्त० अ ३६। गा ११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लव टीका– एते स्कंधाश्च पुनः परमाणवः एकत्वेन पुनः पृथक्त्वेन लोकैकदेशे च पुनर्लोके क्षेत्रतो भक्तव्याः तत्र केचित् स्कंधाः परमाणवश्च एकत्वेन समानपरिणितिरूपेण लक्ष्यन्ते, अथ च स्कंधाः परमाणवश्च पृथक्त्वेन परमाण्वन्तरैरसंघातरूपेण लक्ष्यन्ते इति अध्याहारः, इति द्रव्यतो लक्षणं उक्तं अथ च क्षेत्रतः आह—ते स्कंधाः परमाणवश्च इति। तत् स्कंधपरमाणूनां ग्रहणेऽपि परमाणूनां एव एकप्रदेशावस्थानत्वात् ते परमाणवः स्कंधेषु लोकैकदेशे लोके सर्वत्र भक्तव्याः भजनीयाः दर्शनीया इति यावत् ते हि विचित्रत्वात् परिणतेर्बहुप्रदेशे तिष्ठन्ति।

अनेक परमाणुओं के एकत्व से स्कंध बनता है और उसका पृथक्त्व होने से परमाणु बनते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा से वे (स्कंध) लोक के एक देश और समूचे लोक में भाज्य हैं—असंख्य विकल्प युक्त हैं।

वे स्कंध और परमाणुगण कभी एकत्व से, फिर कभी पृथक्त्व से होते हैं। क्षेत्रतः ये स्कंध और परमाणुगण कभी लोक के एक देश में तथा कभी सारे लोक में पाये जाते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा इनका लोक-देश या लोक में पाया जाना भजनीय है। वहाँ कई स्कंध और परमाणुगण एकत्व से समान परिणति रूप में दिखाई देते हैं। वे स्कंध और परमाणुगण पृथक्त्व से अन्य परमाणुओं के साथ असंघात रूप से परिलक्षित होते हैं ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए। यह द्रव्य की अपेक्षा कथन है।

अब क्षेत्र की अपेक्षा से विवेचन किया जाता है—स्कंध और परमाणुओं का ग्रहण करने पर भी परमाणुओं की एक प्रदेश में ही स्थिति होने के कारण वे परमाणु स्कंधों में कभी लोक के एक देश में तथा कभी लोक में सर्वत्र भजनीय हैं—देखे जाते हैं क्योंकि उन परमाणुओं की परिणति की विचित्रता के कारण वे बहुत प्रदेश में रहते हैं।

·१२·०३ संयोग-युति

(क) नैरन्तर्येणावयवप्राप्तिमात्रं संयोगः।

—सिद्ध० अ ५। सू २६। पृ० ३६८

(ख) दव्वक्खेत्त-काल-भावेहि जीवादिदव्वाणं मेलण जुडी णाम। युति-बंधयोः को विशेषः? एकीभावो बंधः, सामीप्यं संयोगो वा युतिः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

× × ×। वाएण हिंडिज्जमाणपण्णाणं व एक्कम्हि देसे पोग्गलाणं मेलणं पोग्गलजुडी णाम।

—षट्० खण्ड० ५, ५। सू ८२। टीका। पु १३। पृ० ३४८

(ग) संयोगः परमाणूनां संघातादुपजायते।

—श्लो० अ ५। सू २७। पृ० ४३१

अवयवों का अन्तर के बिना अवस्थान संयोग कहलाता है। मात्र समीपता को युति—संयोग कहते हैं। वायु के कारण हिलने वाले पत्तों के संयोग के समान एक स्थान पर पुद्गलों के मिलन को पुद्गलयुति या पुद्गल-संयोग कहते हैं। यह पुद्गल-संयोग संघात से उत्पन्न होता है ऐसा आचार्य विद्यानंदि का मत है। द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा भाव चारों प्रकार से जीवादि द्रव्यों का संयोग घटित होता है। बंध में पुद्गलों का एकीभाव हो जाता है तथा संयोग या युति में केवल अन्तर रहित समीपता होती है। किसी प्रकार का बंधन नहीं होता है।

·१२·०४ संबंधन-संघात

दोहिं ठाणेहिं पोग्गला साहण्णंति, तंजहा-सइं वा पोग्गला साहण्णंति परेण वा पोग्गला साहण्णंति।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२

टीका—'स्वयं वे' ति स्वभावेन वा अभ्राविष्विव पुद्गलाः संहन्यन्ते—संबध्यन्ते, कर्मकर्तृप्रयोगोऽयं परेण वा पुरुषादिना संहन्यन्ते—संहताः क्रियन्ते, कर्म्मप्रयोगोऽयं।

दो प्रकार से पुद्गलों का संबंध होता है—यथा—(१) स्वभाव से—बादलादि में पुद्गलों का स्वयं मिलन होता है उसको स्वाभाविक संबंध कहा जाता है। (२) पर-प्रयोग से—पुरुषादि के द्वारा पुद्गलों के संबंध होने को पर-संबंध कहा जाता है।

·१२·०५ भेदन

दोहिं ठाणेहिं पोग्गला भिज्जंति, तंजहा—सइं वा पोग्गला भिज्जंति, परेण वा पोग्गला भिज्जंति।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो प्रकार से पुद्गलों का भेदन होता है अर्थात् पुद्गल अलग होते हैं—स्वयं से—स्वाभाविक रूप से अथवा पर-प्रयोग से।

·१२·०६ परिशटन-परिपतन-विध्वंसन

दोहिं ठाणेहिं पोग्गला परिसडंति, तंजहा—सइं वा पोग्गला परिसडंति परेण वा पोग्गला परिसाडिज्जंति, एवं परिवडंति, विद्धंसंति।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२

टीका—परिपतंति पर्वतशिखरादेरिवेति, परिशटन्ति कुष्ठादेर्निमित्ताद‌ङ्गुल्यादिवत्, विध्वस्यन्ते—विनश्यन्ति घनपटलवदिति।

दो प्रकार से पुद्गलों का परिशटन, परिपतन तथा विध्वंसन होता है—स्वयं से अथवा पर से। जैसे—कुष्ठ आदि के कारण अंगुली गल जाती है वैसे पुद्गलों का परिशटन होता है। जैसे—पर्वत के शिखर से वस्तु गिरती है वैसे पुद्गल का परिपतन होता है। जैसे—घन-बादल बिखर जाते हैं वैसे पुद्गल का विध्वंसन होता है।

·१२·०७ क्रिया

·१२·०७·१ सक्रियत्व

(क) आ आकाशादेव धर्मादीनि निष्क्रियाणि भवन्ति। पुद्गल-जीवास्तु क्रियावन्तः क्रियेति गतिकर्माह।

—तत्त्व० अ ५। सू ६। भाष्य

(ख) पोग्गलदव्वम्हि अणू संखेज्जादी हवंति चलिदा हु।
चरिममहक्खंधम्मि य चलाचला होंति हु पदेसा॥

—गोजी० गा ५९२

(ग) जीवा पुग्गलकाया सह सक्किरिया हवंति ण य सेसा।
पुग्गलकरणा जीवा खंधा खलु कालकरणा दु॥

—पंच० गा ९८। पृ० १५६

जय टीका—जीवाः पुद्गलकायाः "सह सक्किरिया हवंति" सक्रिया भवंति। × × ×। खंदा' स्कंदाः स्कंदशब्देनात्र स्कंदाणुभेदभिन्ना द्विधा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गला गृह्यन्ते। ते च कथंभूताः। सक्रियाः। कैः कृत्वा। 'कालकरणेहिं' परिणामनिर्वर्तककालाणुद्रव्यैः 'खलु' स्फुटम्।

धर्मास्तिकाय आदि—आकाशपर्यंत—तीनों द्रव्य निष्क्रिय हैं किन्तु पुद्गल और जीव—दोनों द्रव्य क्रियावान् हैं। यहाँ पर क्रिया शब्द से गतिकर्म को ग्रहण किया गया है।

पुद्गल द्रव्य में परमाणु तथा संख्यात, असंख्यात और अनंत अणु के जितने स्कंध हैं वे सभी चल है, किन्तु एक अंतिम महास्कंध चलाचल है क्योंकि उसमें कुछ परमाणु चल हैं और कुछ अचल हैं।

पुद्गल सहकार से सक्रिय—क्रियावंत होते हैं। स्कंध शब्द से यहाँ पर स्कंध और परमाणु—दोनों प्रकार के पुद्गलों का ग्रहण करना चाहिए। वे काल-द्रव्य के कारण सक्रिय होते हैं क्योंकि कालाणु द्रव्य के गुण-परिणाम का निर्वर्तक होता है।

·१२·०७·०२ एजनादि क्रिया

परमाणुपोग्गले णं भंते! एयइ, वेयइ, जाव (चलइ, फंदइ, घट्टइ, खुब्भइ, उदीरइ) तं तं भावं परिणमइ? गोयमा! सिय एयइ, वेयइ जाव—परिणमइ; सियं नो एयइ, जाव नो परिणमइ।

दुप्पएसिए णं भंते! खंधे एयइ, जाव परिणमइ? गोयमा! सिय एयइ, जाव परिणमइ, सिय नो एयइ, जाव नो परिणमइ; सिय देसे एयइ, देसे नो एयइ।

तिप्पएसिए णं भंते! खंधे एयइ। गोयमा! सिय एयइ, सिय नो एयइ, सिय देसे एयइ—नो देसे एयइ, सिय देसे एयइ—नो देसा एयंति; सिय देसा एयंति नो देसे एयइ।

चउप्पएसिए णं भंते! खंधे एयइ? गोयमा! सिय एयइ, सिय नो एयइ, सिय देसे एयइ—नो देसे एयइ, सिय देसे एयइ—नो देसा एयंति, सिय देसा एयंति—नो देसे एयइ; सिय देसा एयंति—नो देसा एयंति। जहा—चउप्पएसिओ तहा पंचपएसिओ, तहा जाव—अणंतपएसिओ।

—भग० श ५। उ ७। सू १ से ४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—'परमाणु'—इत्यादि 'सिय एयति' त्ति कदाचिद् एजते कादाचित्कत्वात् सर्वपुद्गलेषु एजनादिधर्माणाम्, द्विप्रदेशिके त्रयो विकल्पाः—१ स्याद् एजनम्, २ स्याद् अनेजनम्, ३ स्याद् देशेन एजनम्—देशेनाऽनेजनं चेति ; द्वयंशत्वात्तस्येति, त्रिप्रदेशिके पंच—आद्यास्त्रयः त एव, द्वयणुकस्याऽपि तदीयस्य एकत्वांशस्य तथाविधपरिणामेण एकदेशतया विवक्षितत्वात्, तथा ४ देशस्य एजनम्, देशयोश्चाऽनेजनम् इति चतुर्थः तथा ५ देशयोरेजनम्, देशस्य चाऽनेजनमिति पंचमः एवं चतुष्प्रदेशिकेऽपि, नवरम्—षट्, तत्र षष्ठो देशयोः एजनम्, प्रदेशयोरिव चाऽनेजनमिति।

परमाणु पुद्गल कदाचित् (१) कंपन करता है, (२) विशेष भाव से कंपन करता है, (३) देशांतर गति करता है, (४) स्पंदन-परिस्पंदन करता है, (५) सभी दिशाओं में गति करता है, (६) क्षुब्ध होता है अर्थात् प्रयत्नरूप से हलचल करता है तथा (७) उदीरण करता है। परमाणु पुद्गल उन-उन भावों में परिणमन करता है ; कदाचित् कंपन नहीं करता है यावत् उदीरण नहीं करता है तथा परमाणु पुद्गल उन-उन भावों में परिणमन नहीं करता है।

द्विप्रदेशी स्कंध—(१) कदाचित् कंपन करता है यावत् उदीरण करता है तथा उन-उन भावों में परिणमन करता है ; (२) कदाचित् कंपन नहीं करता है यावत् उदीरण नहीं करता है तथा उन-उन भावों में परिणमन नहीं करता है; (३) कदाचित् एक देश कंपन करता है तथा एक देश कंपन नहीं करता है।

तीन प्रदेशी स्कंध—(१) कदाचित् कंपन करता है; (२) कदाचित् कंपन नहीं करता है; (३) कदाचित् एक देश कंपन करता है, एक देश कंपन नहीं करता है; (४) कदाचित् एक देश कंपन करता है, बहु (दो) देश कंपन नहीं करते हैं; (५) कदाचित् बहु (दो) देश कंपन करते हैं, एक देश कंपन नहीं करता है।

चतुष्प्रदेशी स्कंध—(१) कदाचित् कंपन करता है; (२) कदाचित् कंपन नहीं करता है; (३) कदाचित् एक देश कंपन करता है, एक देश कंपन नहीं करता है; (४) कदाचित् एक देश कंपन करता है, बहुदेश कंपन नहीं करते हैं; (५) कदाचित् बहुदेश कंपन करते हैं, एक देश कंपन नहीं करता है; कदाचित् बहुदेश कंपन करते हैं, बहुदेश कंपन नहीं करते हैं।

इसी प्रकार पंचप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध में छः भंग—विकल्प समझने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१२·०७·०३ चलना क्रिया

(क) कइविहा णं भंते ! चलणा पन्नत्ता ? गोयमा ! तिविहा चलना पन्नत्ता, तंजहा—सरीरचलणा, इंदियचलणा, जोगचलणा।

—भग० श १७। उ ३। सू ८

टीका—'कई' त्यादि, चलणं त्ति एजना एव स्फुटतरस्वभावा 'सरीरचलण' त्ति शरीरस्य—औदारिकादेश्चलना—तत्प्रायोग्यपुद्गलानां तद्रूपतया परिणमेन व्यापारः शरीरचलना, एवमिन्द्रिययोगचलने अपि।

स्फुटतर स्वभाववाली एजनक्रिया को 'चलना' क्रिया कहते हैं। चलना तीन प्रकार की होती है, यथा—(१) शरीर-चलना—औदारिकादि शरीर रूप में पुद्गलों का प्रायोगिक परिणमन होना, (२) इन्द्रिय-चलना—श्रोत्रेन्द्रिय आदि इन्द्रियों के कार्य रूप में पुद्गलों का प्रायोगिक परिणमन होना, (३) योग-चलना—मनोयोग आदि तीनों योगों के रूप में पुद्गलों का प्रायोगिक परिणमन होना।

(ख) तिहिं ठाणेहिं अच्छिन्ने पोग्गले चलेज्जा, तंजहा—आहारिज्जमाणे वा पोग्गले चलेज्जा, विउव्वमाणे वा पोग्गले चलेज्जा ठाणाओ ठाणं संकामिज्जमाणे पोग्गले चलेज्जा।

टीका—'तिहों' त्यादि, छिन्नः खड्गादिना पुद्गलः समुदायाच्चलत्येवेत्यत आह—'अच्छिन्नपुद्गल' इति, 'आहारेज्जमाणे' त्ति आहारतया जीवेन गृह्यमाणः स्वस्थानाच्चलति, जीवेनाकर्षणात्, एवं विक्रियमाणो वैक्रियकरणवशवर्त्तितयेति, स्थानात्स्थानान्तरं संक्रम्यमाणो हस्तादिनेति।

—ठाण० स्था ३। उ १। सू १३८

(ग) दसहिं ठाणेहिमच्छिन्ने पोग्गले चलेज्जा, तंजहा—आहारिज्जमाणे वा चलेज्जा, परिणामेज्जमाणे वा चलेज्जा, उस्ससिज्जमाणे वा चलेज्जा, निस्ससिज्जमाणे वा चलेज्जा, वेदेज्जमाणे वा चलेज्जा, णिज्जरिज्जमाणे वा चलेज्जा, विउव्विज्जमाणे वा चलेज्जा परियारिज्जमाणे वा चलेज्जा, जक्खातिट्ठे वा चलेज्जा, वात परिग्गणे वा चलेज्जा।

—ठाण० स्था १०। सू ७०७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—'दसही' त्यादि स्पष्टं, नवरं 'अच्छिन्ने' त्ति अच्छिन्नः—अपृथग्भूतः शरीरे विवक्षितस्कंधे वा संबद्धः चलेत्—स्थानान्तरे गच्छेत् 'आहारेज्जमाणे' त्ति आह्रियमाणः—खाद्यमानः पुद्गलः आहारे वा अभ्यवह्रियमाणे सति पुद्गलश्चलेत्, परिणम्यमानः पुद्गल एवोदराग्निना खलरसभावेन परिणम्यमाणे वा भोजने, उच्छ्वस्यमानः—उच्छ्वासवायुपुद्गलः उच्छ्वस्यमाने वा—उच्छ्वसिते क्रियमाणे, एवं निःश्वस्यमानो निःश्वस्यमाने वा, वेद्यमानो निर्जीर्यमाणश्च कर्मपुद्गलोऽथवा वेद्यमाने, निर्जीर्यमाणे च कर्म्मणि, वैक्रियमाणे वैक्रियशरीरतया परिणम्यमाणः वैक्रियमाणे वा, शरीरे परिचार्यमाणो—मैथुनसंज्ञाया विषयीक्रियमाणः शुक्रपुद्गलादिः परिचायमाणो वा—भुज्यमाने स्त्रीशरीरादौ शुक्रादिरेव, यक्षाविष्टो—भूताद्यधिष्टितः यक्षाविष्टे सति पुरुषे यक्षावेशे वा सति तच्छरीरलक्षणः पुद्गलः, वातपरिगतो देहगतवायुप्रेरितः वातपरिगते वा देहे सति बाह्यावातेन वोत्क्षिप्त इति।

खड्ग आदि के द्वारा छिन्न होकर चलित नहीं हुए पुद्गलों को यहाँ अच्छिन्न पुद्गल कहा गया है। ऐसे अच्छिन्न पुद्गल तीन प्रकार से चलायमान होते हैं—यथा—(१) जीव के द्वारा आहार रूप में ग्रहण हो रहे पुद्गल जीव के द्वारा आकर्षण होने से स्वस्थान से चलित होते हैं ; (२) वैक्रिय किये जा रहे पुद्गल वैक्रियकरण के अधीन होने से चलित होते हैं तथा (३) एक स्थान से दूसरे स्थान में हस्तादि के द्वारा संक्रमण करते हुए पुद्गल चलित होते हैं।

अच्छिन्न—जो किसी शस्त्र द्वारा अलग नहीं हुआ हो। शरीरस्थ किसी विवक्षित अच्छिन्न स्कंध के संबंध को छोड़कर स्थानान्तर गमन होना—यह दस प्रकार से होता है—यथा—(१) आहार किये जाते हुए—खाये जाते हुए पुद्गल आहार के समय चलित होते हैं ; (२) जो पुद्गल परिणम्यमाण हो रहे हैं—जो भोजन के पुद्गल उदर में खल, रस आदि भावों से परिणमन हो रहे हैं, (३) उच्छ्वास वायु के पुद्गल उच्छ्वास होते समय या लेते समय, (४) निःश्वास किये जा रहे या हो रहे वायु के पुद्गल, (५) वेदन किये जा रहे कर्म पुद्गल, (६) निर्जरा किये जा रहे कर्मपुद्गल, (७) वैक्रिय हो रहे—वैक्रिय शरीर रूप में परिणमन हो रहे वैक्रिय पुद्गल, (८) मैथुन संभोग के समय शुक्रादि पुद्गलों का परिचरण, स्त्री शरीरादि का संभोग करते समय शुक्रादि रूप में निष्कासित पुद्गल, (९) भूतादि द्वारा अधिष्ठित, यक्षादि द्वारा आविष्ट पुरुष में यक्ष का आवेश होने पर उसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर के पुद्गलों का तीव्रता से हिलना-डुलना, (१०) देह में व्याप्त वायु से प्रेरित होकर अथवा बाह्य वायु से पुद्गलों का उत्क्षिप्त होना।

·१२·०७·०४ सकंपता-निष्कंपता

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सेए निरेए ? गोयमा ! सिय सेए, सिय निरेए। एवं जाव—अणंतपएसिए।

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं सेया, निरेया ? गोयमा ! सेया वि निरेया वि। एवं जाव अणंतपएसिया।

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं देसेए, सव्वेए, निरेए ? गोयमा ! नो देसेए, सिय सव्वेए, सिय निरेए। दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे—पुच्छा। गोयमा ! सिय देसेए, सिय सव्वेए, सिय निरेए। एवं जाव अणंतपएसिए।

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं देसेया, सव्वेया, निरेया ? गोयमा ! नो देसेया, सव्वेया वि निरेया वि। दुप्पएसिया णं भंते ! खंधा—पुच्छा। गोयमा ! देसेया वि, सव्वेया वि, निरेया वि। एवं जाव अणंतपएसिया।

—भग० श २५। उ ४। सू ८८, ८९; १०१ से १०४

परमाणु पुद्गल, द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध कदाचित् सकंप होते हैं; कदाचित् निष्कंप होते हैं।

परमाणु पुद्गल (बहुवचन), द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) सकंप भी होते हैं तथा निष्कंप भी होते हैं।

परमाणु पुद्गल का देशरूप से कंपन नहीं होता है; यदि कंपन होता है तो सर्वांशरूप से होता है; यदि निष्कंप होता है तो सर्वांशरूप से होता है।

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध का (१) कदाचित् देश रूप से कंपन होता है, (२) कदाचित् सर्वांशरूप से कंपन होता है तथा (३) कदाचित् निष्कंप होता है।

परमाणु पुद्गलों (बहुवचन) में किसी एक का देश रूप से कंपन नहीं होता है। यदि कंपन है तो सर्वांशरूप से होता है। परमाणु पुद्गलों में कंपन और निष्कंप की भजना है—कोई कंपन करता है, कोई निष्कंप रहता है।

द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) का देशरूप से भी कंपन होता है; सर्वांशरूप से भी कंपन होता है; निष्कंप भी रहते हैं।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

·१२·०८ गति

·१२·०८·०१ अनुश्रेणि गति

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं अणुसेढीं गती पवत्तति, विसेढिं गती पवत्तति ? गोयमा ! अणुसेढीं गती पवत्तति, नो विसेढीं गती पवत्तति। दुपएसिया णं भंते ! खंधाणं अणुसेढीं गती पवत्तति, विसेढीं गती पवत्तति ? एवं चेव ; एवं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं।

भग० श २५। उ ३। सू ५८-५९

परमाणु पुद्गल की गति अनुश्रेणी होती है परन्तु विश्रेणी नहीं होती है।

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध की गति भी अनुश्रेणी होती है ; विश्रेणी नहीं होती है।

·१२·०८·०२ नोभवोपपात गति

(क) से किं तं उववायगइ ? उववायगइ तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—खेत्तोववायगइ १ भवोववायगइ २ नोभवोववायगइ ३। × × ×। से किं तं नोभवोववायगइ ? नोभवोववायगइ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—पोग्गलनोभवोववायगइ य सिद्धनोभवोववायगइ य। से किं तं पोग्गलणोभवोववायगइ ? पोग्गलणोभवोववायगइ जण्णं परमाणुपोग्गले लोगस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ पच्चिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, पच्छिमिल्लाओ वा चरिमंताओ पुरत्थिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, दाहिणिल्लाओ वा चरिमंताओ उत्तरिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, एवं उत्तरिल्लाओ दाहिणिल्लं, उवरिल्लाओ हेट्ठिल्लं, हेट्ठिल्लाओ वा उवरिल्लं। से त्तं पोग्गलणोभवोववायगइ।

—पण्ण०। प १६। सू १०८५, १०९९, ११००, ११०१

टीका— × × ×। नोभवः भवव्यतिरिक्तः कर्मसंपर्कः— सम्पाद्यनैरयिकत्वादिपर्यायरहित इति भावः, स च पुद्गलः सिद्धो वा, उभयस्यापि यथोक्तलक्षणभवातीतत्वात्, उपपात एव गतिरुपपातगतिरिति।

(ख) परमाणुपोग्गले णं भंते ! लोगस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमंताओ पच्चच्छिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, पच्चच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरच्छिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ, दाहिणिल्लाओ चरिमंताओ उत्तरिल्लं जाव गच्छइ, उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ दाहिणिल्लं जाव गच्छइ, उवरिल्लाओ चरिमंताओ हेट्ठिल्लं चरिमंतं एवं जाव गच्छइ, हेट्ठिल्लाओ चरिमंताओ उवरिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छइ ? हंता गोयमा ! परमाणु-पोग्गलेणं लोगस्स पुरच्छिमिल्लं तं चेव जाव उवरिल्लं चरिमंतं गच्छइ।

—भग० श १६ । उ ८ । सू ७

टीका —'परमाणु' इत्यादि, इदं च गमनसामर्थ्यं परमाणोस्तथास्वभाव-त्वादिति मंतव्यमिति।

उपपातगति तीन प्रकार की होती है—यथा—क्षेत्रोपपातगति, भवोपपातगति तथा नोभवोपपातगति।

नोभव का अर्थ होता है—भव से रहित अर्थात् कर्म के संबंध से प्राप्त हुए नारकत्वादि पर्याय से रहित। वह नोभवोपपातगति पुद्गल अथवा सिद्ध के होती है। क्योंकि वे दोनों पूर्वोक्त स्वरूपवाले भव से रहित होते हैं।

अतः कहा गया है कि नोभवोपपातगति दो प्रकार की होती है—यथा—पुद्गलनोभवोपपातगति मथा सिद्धनोभवोपपातगति।

जो परमाणुपुद्गल एक समय में लोक के पूर्व चरमांत से पश्चिम चरमांत तक, पश्चिम चरमांत से पूर्व चरमांत तक, दक्षिण चरमांत से उत्तर चरमांत तक, उत्तर चरमांत से दक्षिण चरमांत तक, ऊपर के चरमांत से नीचे के चरमांत तक और नीचे के चरमांत से ऊपर के चरमांत तक जाता है उसे पुद्गलनोभवोपपातगति कहते हैं।

·१२·०८·०३ निक्षिप्त पुद्गल की गति

देवे णं भंते ! महिड्ढीए, जाव—महाणुभागे पुव्वामेव पोग्गलं खिवित्ता पभू तमेव अणुपरियट्टित्ता णं गेण्हित्तए ? हंता पभू। से केणट्ठेणं जाव—गिण्हित्तए ? गोयमा ! पोग्गले णं खिविखते समाणे पुव्वामेव सिग्घगई भवित्ता तओ पच्छा मंदगइ भवइ, देवेणं महिड्ढीए पुव्विं वि य पच्छा वि सीहे सीहगई चेव, तुरिए तुरियगई चेव, से तेणट्ठेणं जाव—पभू गेण्हित्तए।

—भग० श ३ । उ २ । सू २२-२३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—इह लेष्ट्वादिकं पुद्गलं क्षिप्तं गच्छन्तं क्षेपकमनुष्यस्तावद् ग्रहीतुं न शक्नोतीति दृश्यते, देवस्तु किं शक्नोति ? येन शक्रेण वज्रं क्षिप्तं संहृतं च।

महाऋद्धि वाला देव, पहले फेंके हुए पुद्गल को उसके पीछे जाकर ग्रहण कर सकता है क्योंकि जब पुद्गल फेंका जाता है तब प्रथम उसकी गति शीघ्र होती है और पश्चात् उसकी गति मंद हो जाती है। महाऋद्धि वाला देव पहले भी और पीछे भी शीघ्र और शीघ्रगति वाला होता है, त्वरित और त्वरिततर गति वाला होता है, अतः देव फेंके हुए पुद्गल के पीछे जाकर उसे ग्रहण कर सकता है। उदाहरणतः जैसे—शक्रेन्द्र ने अपने द्वारा अति तीव्र निक्षिप्त वज्र को उसके पीछे दौड़कर पकड़ लिया था।

·१२·०८·०४ गुरुगति-प्रणोदनगति-प्राग्भारगति

अट्ठ गइओ पन्नत्ताओ, तंजहा—णिरयगई, तिरियगई, जाव (मणुयगई, देवगई) सिद्धिगई, गुरुगई, पणोल्लणगई, पब्भारगई।

—ठाण० स्था ८। उ ३। सू ६२८

टीका—'गुरुगइ' त्ति भावप्रधानत्वान्निर्देशस्य गौरवेण—ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्गमनस्वभावेन या परमाण्वादीनां स्वभावतो गतिः सा गुरुगतिरिति, या तु परप्रेरणात् सा प्रणोदनगतिर्वाणादीनामिव, या तु द्रव्यान्तराक्रान्तस्य सा प्राग्भारगतिः यथा—नावादेरधोगतिरिति।

पुद्गल की गति तीन प्रकार की होती है—गुरुगति, प्रणोदनगति तथा प्राग्भारगति।

जिन (पुद्गलों) का ऊपर, नीचे तथा तिरछे गमन करने का स्वभाव हो उसे गुरुगति कहते हैं। यथा—परमाणु आदि की स्वभावतः ऐसी गति होती है।

दूसरे की प्रेरणा से जो गति होती है उसे प्रणोदन गति कहते हैं—यथा—वाण आदि की गति परप्रेरणा से होती है।

द्रव्यान्तर से आक्रांत होने पर जिसकी गति होती है उसे प्राग्भारगति कहते हैं। यथा—नाव आदि को द्रव्यान्तर से आक्रांत होने पर अधोगति होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१२·०८·०५ विहायोगति

से किं तं विहायगई ? विहायगई सत्तरसविहा पन्नत्ता, तंजहा—फुसमाणगई १, अफुसमाणगई २, उवसंपज्जमाणगई ३, अणुवसंपज्जमाणगई ४, पोग्गलगई ५, मंडूयगई ६, णावागई ७, णयगई ८, छायागई ९, छायाणुवायगई १०, लेसागई ११, लेस्साणुवायगई १२, उद्दिस्सपविभत्तगई १३, चउपुरिसपविभत्तगई १४, वंकगई १५, पंकगई १६, बंधणविमोयणगई १७, ॥११०५॥

से किं तं फुसमाणगई ? फुसमाणगई जण्णं परमाणुपोग्गले दुपदेसिय जाव अणंतपदेसियाणं खंधाणं अण्णमण्णं फुसित्ताणं गई पवत्तइ। से त्तं फुसमाणगई ॥११०६॥

से किं तं अफुसमाणगई ? अफुसमाणगई जण्णं एतेसिं चेव अफुसित्ताणं गती पवत्तइ। से त्तं अफुसमाणगई ॥११०७॥

से किं तं पोग्गलगई ? पोग्गलगई जण्णं परमाणुपोग्गलाणं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं गई पवत्तइ। से त्तं पोग्गलगई ॥१११०॥

से किं तं छायागई ? छायागई जण्णं हयच्छायं वा गयच्छायं वा नरच्छायं वा किन्नरच्छायं वा महोरगच्छायं वा गंधव्वच्छायं वा उसहच्छायं वा रहच्छायं वा छत्तच्छायं वा उवसंपज्जिताणं गच्छइ। से त्तं छायागई ॥१११४॥

से किं तं छायाणुवायगई ? छायाणुवायगई जण्णं पुरिसं छाया अणुगच्छइ नो पुरिसे छायं अनुगच्छइ। से त्तं छायाणुवायगई ॥१११५॥

—पण्ण० प १६। सू ११०५, ६, ७, १०, १४, १५

टीका—विहायसा—आकाशेन गतिर्विहायोगतिः, सा चोपाधिभेदात् सप्तदशविधा, तद्यथा—स्पृशद्गतिरित्यादि, तत्र परमाण्वादिकं यदन्येन परमाण्वादिकेन परस्परं संस्पृश्य संस्पृश्य संबंधमनुभूयानुभूयेत्यर्थः इति भावः गच्छइ सा स्पृशद्गतिः, स्पृशतो गतिरिति व्युत्पत्तेः, तद्विपरीता अस्पृशद्गतिः, यत्परमाण्वादिकमन्येन परमाण्वादिना सह परस्परं संबंधमननुभूय गच्छति, यथा परमाणुरेकेन समयेन एकस्माल्लोकान्तादपरं लोकां-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तमिति × × ×। छायागतिः—छायामनुसृत्य तदुपष्टम्भेन वा समाश्रयितुं गतिः छायागतिः, छायानुपातगतिरिति छायायाः स्वनिमित्तपुरुषादेरनुपातेन—अनुसरणेन गतिः छायानुपातगतिः, तथाहि—छायापुरुषमनुसरति न तु पुरुषः छायामतश्च्छायाया अनुपातगतिः।

विहायोगति अर्थात् आकाशप्रदेश में जो गति होती है उसे विहायोगति कहते हैं। पुद्गल सम्बन्धी विहायोगति पाँच प्रकार की होती है, यथा—(१) स्पृशद्गति, (२) अस्पृशद्गति, (३) पुद्गलगति, (४) छायागति, (५) छायानुपातगति।

१—परमाणुपुद्गल, द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध परस्पर एक दूसरे को स्पर्श करते हुए जो गति करते हैं उसे स्पृशद्गति कहते हैं।

२—इसके विपरीत अर्थात् परस्पर स्पर्श किये बिना परमाणु आदि की जो गति होती है उसे अस्पृशद्गति कहते हैं, यथा—परस्पर स्पर्श किये बिना परमाणु पुद्गल एक समय में एक लोकांत से दूसरे लोकांत तक जा सकता है।

३—परमाणु पुद्गल यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध की जो स्वाभाविक गति होती है उसे पुद्गलगति कहते हैं।

४—छाया के अनुसार अर्थात् छाया के अवलम्बन से जो गति होती है उसको छायागति कहते हैं अथवा छाया का आश्रय पाने के लिए जो गति होती है उसे छायागति कहते हैं—यथा—घोड़े की छाया, हाथी की छाया, मनुष्य की छाया, किन्नर की छाया, महोरग की छाया, गन्धर्व की छाया, वृषभ की छाया, रथ की छाया, छत्र की छाया के अनुसार जो गति होती है उसे छायागति कहते हैं।

५—छायानुपातगति—स्वकीय निमित्त पुरुषादि की गति के अनुसार छाया की गति। जिस प्रकार छाया पुरुषादि का अनुसरण करती है, किन्तु पुरुषादि छाया का अनुसरण नहीं करता है—यह छायानुपातगति है।

·१२·०८·०६ लोकबाह्यगति

चउहिं ठाणेहिं जीवा य पोग्गला य णो संचातेंति बहिया लोगंता गमणताते, तंजहा—गतिअभावेणं णिरुवग्गहताते, लुक्खताते, लोगाणुभावेणं।

—ठाण० स्था ४। उ ३। सू ३३७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—'चउहीं' इत्यादि, व्यक्तं, परमन्येषां गतिरेव नास्तीति 'जीवा य पुग्गला ये' त्युक्तम्, 'नो संचाएंति' न शक्नुवन्ति नालं 'बहिय' त्ति 'बहिस्ताल्लोकान्तात् अलोके इत्यर्थः, गमनताये-गमनाय गंतुमित्यर्थः, गत्यभावेन—लोकान्तात् परतस्तेषां गतिलक्षणस्वभावाभावादधो दीपशिखावत्, तथा निरुपग्रहतया धर्मास्तिकायाभावेन तज्जनितगत्युपष्टम्भाभावात् गन्त्र्यादिरहितपंगुवत्, तथा रूक्षतया सिकतामुष्टिवत् लोकान्तेषु हि पुद्गला रूक्षतया तथा परिणमन्ति यथा परतो गमनाय नालं × × ×। लोकानुभावेन—लोकमर्यादया विषयक्षेत्रादन्यत्र मार्त्तण्डमंडलवदिति।

पुद्गल की गति लोक के बाहर नहीं होती है। इसके चार कारण बताये गये हैं, यथा—(१) गति अभाव, (२) साहाय्य अभाव, (३) रूक्षता और (४) लोकानुभाव—लोकमर्यादा।

पुद्गल लोकांत से बाहर अर्थात् अलोक में गमन करने के लिए समर्थ नहीं है क्योंकि गति का अभाव है; लोकांत से आगे गतिलक्षण स्वभाव का अभाव है, जैसे—दीप शिखा का नीचे गमन नहीं हो सकता है वैसे ही पुद्गलों का अलोक में गमन नहीं हो सकता है।

निरुपग्रहपन से—अलोक में धर्मास्तिकाय का अभाव है अतः निरपेक्ष अर्थात् सहायक का अभाव होने के कारण पुद्गल का गमन अलोक में नहीं हो सकता है।

रूक्षता के कारण लोक में गति का अभाव देखा जाता है, यथा—बालुमुष्टिका। उसी प्रकार पुद्गल लोकांत में जाकर रूक्ष रूप से इस प्रकार परिणमन करता है जिससे लोक से आगे गति करने में समर्थ नहीं रहता है।

लोकमर्यादा ऐसी है जिससे पुद्गल अलोक में नहीं जा सकता है। जिस प्रकार सूर्यमंडल लोकमर्यादा के कारण अपने क्षेत्र को छोड़ नहीं सकता है।

·१२·०८·०७ गति प्रतिघात

तिविहे पोग्गलपडिघाए पन्नत्ते, तंजहा—परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलं पप्प पडिहण्णिज्जा, लुक्खत्ताए वा पडिहणिज्जा, लोगंते वा पडिहणिज्जा।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २११

टीका—पुद्गलानाम् अण्वादीनां प्रतिघातो—गतिस्खलनं पुद्गलप्रतिघातः, परमाणुश्चासौ पुद्गलश्च परमाणुपुद्गलः स तदन्तरं प्राप्य प्रतिह-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न्येत—गतेः प्रतिघातमापद्येत, रूक्षतया वा तथाविधपरिणामान्तरात् गतितः प्रतिहन्येत, लोकांते वा, परतो धर्मास्तिकायाभावादिति।

परमाणु—अणु आदि का गति-स्खलन पुद्गलप्रतिघात कहलाता है। पुद्गलों की गति का स्खलन तीन प्रकार से होता है—(१) परमाणु पुद्गल की गति परमाणु पुद्गल के द्वारा प्रतिहत होती है, (२) रूक्षता के कारण या तथाविध परिणाम को प्राप्त करने के बाद पुद्गल की गति प्रतिहत होती है, यथा—(३) लोकांत में, लोकांत के बाद धर्मास्तिकाय के अभाव के कारण पुद्गल की गति प्रतिहत होती है।

·१२·०८·०८ गति-स्थान-अवगाहनक्रिया

(क) गतिठाणोग्गहकिरिया जीवाणं पुग्गलाणमेव हवे।
धम्मतिये णहि किरिया मुक्खा पुण साधका होंति॥
जत्तस्स पहं उत्तस्स आसणं णिवसगस्स वसदी वा।
गदिठाणोग्गहकरणे धम्मतियं साधगं होदि॥

—गोजी० गा ५६५-६६

(ख) जीवानां पुद्गलानां च धर्माधर्मौ गतिस्थिती।
अवकाशं नभः कालो वर्तनां कुरुते सदा॥

—योसार०। अधि २। श्लो १५

गमन करने की, स्थित रहने की तथा अवगाह करने की क्रिया जीवद्रव्य तथा पुद्गलद्रव्य में ही होती है। धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में उक्त (तीनों) क्रियाएँ नहीं होती है क्योंकि न तो इनके स्थान चलायमान होते हैं और न प्रदेश ही चलायमान होते हैं, किन्तु ये तीनों ही द्रव्य जीव-पुद्गल की उक्त क्रियाओं के क्रमशः मुख्य साधक हैं।

गमन करनेवाले को मार्ग की तरह धर्म द्रव्य जीव-पुद्गल को गति में सहकारी होता है। ठहरने वाले को आसन की तरह अधर्म द्रव्य जीव-पुद्गल की स्थिति में सहकारी होता है। निवास करनेवाले को मकान की तरह आकाश द्रव्य जीव-पुद्गल आदि को अवगाह देने में सहकारी साधक होता है।

·१२·०८·९ चय-अपचय-छेदन-उपचय

लोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे कइदिसिं पोग्गला चिज्जंति? गोयमा! निव्वाघाएणं छद्दिसिं, वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं, सिय चउदिसिं, सिय पंचदिसिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे कइदिसिं पोग्गला छिज्जंति ? एवं चेव, एवं उवचिज्जंति, एवं अवचिज्जंति।

—भग० श २५ । उ ४ । सू ७, ८

लोक के एक आकाशप्रदेश में—निर्व्याघात रूप से छः दिशाओं से आकर पुद्गलों का चय होता है—एकत्रित होते हैं तथा व्याघात (बाधा पड़ने से) होने से कदाचित् तीन दिशाओं से, कदाचित् चार दिशाओं से तथा कदाचित् पाँच दिशाओं से पुद्गलों का चय होता है।

इसी प्रकार लोक के एक आकाशप्रदेश में निर्व्याघात रूप से छः दिशाओं से पुद्गलों का छेदन-विच्छेदन होता है तथा व्याघात होने से कदाचित् तीन दिशाओं से, कदाचित् चार दिशाओं से तथा कदाचित् पाँच दिशाओं से पुद्गलों का छेदन-विच्छेदन होता है।

इसी प्रकार लोक के एक आकाशप्रदेश में छः, पाँच, चार तथा तीन दिशाओं से पुद्गल का उपचय—संख्या में वृद्धि—गाढ रूप में एकत्रित होना होता है।

इसी प्रकार लोक के एक आकाशप्रदेश में पुद्गलों का अपचय—संख्या में हानि—समूह की प्रगाढता में कमी होती है।

·१२·०८·१० पुद्गल और स्पर्शनिक्षेप

तेरसविहे फासणिक्खेवे—णामफासे, ठवणफासे, दव्वफासे, एयखेत्तफासे, अणंतरखेत्तफासे, देसफासे, तयफासे, सव्वफासे, फासफासे, कम्मफासे, बंधफासे, भवियफासे, भावफासे चेदि × × ×। जं दव्वं दव्वेण पुसदि सो सव्वो दव्वफासो णाम × × ×। जं दव्वमेयक्खेत्तेण पुसदि सो दव्वो एयक्खेत्तफासो णाम × × ×। जं दव्वमणंतरक्खेत्तेण पुसदि सो दव्वो अणंतरक्खेत्तफासो णाम × × ×। जं दव्वदेसं देसेण पुसदि सो सव्वो देसफासो णाम × × ×। जं दव्वदेसं देसेण पुसदि सो सव्वो देसफासो–णाम × × ×। जं दव्वं सव्वं सव्वेण पुसदि, जहा परमाणुदव्वमिदि, सो सव्वो सव्वफासो णाम। जो सो फासफासो णाम सो अट्ठविहो—कक्खड-फासो, मउवफासो, गरुवफासो, लहुवफासो, णिद्धफासो, रुक्खफासो, सीदफासो, उण्हफासो। सो सव्वो फासफासो णाम।

—षट्० खं० ५, ३ । सू ३, १२, १४, १६, १८, २२, २४ । पु १३ ।
पृ० २, ११, १६, १७, १८, २१, २४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—तत्थ केण अत्थेण पयदं केण वा ण पयदं के वा तेरस अत्था त्ति पुच्छिदे तेरसण्णं फाससद्दत्थाणं परूवणं काऊण अपयदत्थे णिराकरिय पयदत्थपरूवणट्ठमागदो × × ×। परमाणुपोग्गलो सेसपोग्गलदव्वेण पुसदि ; पोग्गलदव्वभावेण परमाणुपोग्गलस्स सेसपोग्गलेहि सह एयत्तुवलंभादो। एयपोग्गलदव्वस्स सेसपोग्गलदव्वेहि संजोगो समवाओ वा दव्वफासो णाम। अधवा जीवदव्वस्स पोग्गलदव्वस्स य जो एयत्तेण संबंधो सो दव्वफासो णाम × × ×। पोग्गलदव्वं पोग्गलदव्वेण पुस्सिज्जदि, अणंताणं पोग्गलदव्वपरमाणूणं समवेदाणमुवलंभादो पोग्गलभावेण एयत्तदंसणादो वा × × ×। एक्कम्हि आगासपदेसे ट्ठिदअणंताणंतपोग्गलक्खंधाणं समवाएण संजोएण वा जो फासो सो एयक्खेत्तफासो णाम। बहुआणं दव्वाणं अक्कमेण एयक्खेत्तपुसणदुवारेण वा एयक्खेत्तफासो वत्तव्वो × × ×। एगागासपदेसक्खेत्तं पेक्खिऊण अणेगागासपदेसक्खेत्तमणंतरं होदि, एगाणेगसंखाणमंतरे। दुपदेसट्ठिददव्वाणमण्णेहि दोआगासपदेसट्ठिददव्वेहि जो फासो सो अणंतरक्खेत्तफासो णाम। दुपदेसट्ठियखंधाणं तिपदेसट्ठियखंधाणं च जो फासो सो वि अणंतरक्खेत्तफासो। एवं चदु-पंचादिपदेसट्ठिदखंधेहि दुसंजोगपरूवणाए विदियक्खो संचारेदव्वो जाव देसूणलोयट्ठियमहक्खंधेत्ति × × ×। एगस्स दव्वस्स देसं अवयव जदि (देसेण) अण्णदव्वदेसेण अप्पणो अवयवेण पुसदि तो देसफासोत्ति दट्ठव्वो। एसो देसफासो खंधावयवाणं चेव होदि, ण पोग्गलाणं णिरवयवत्तादो त्ति × × ×। जं किंचि दव्वमण्णेण दव्वेण सव्वं सव्वप्पणा पुसिज्जदि सो सव्वफासो णाम। जहा परमाणुदव्वमिदि। एदं दिट्ठंतवयणं। एदस्स अत्थो वुच्चदे जहा परमाणुदव्वमण्णेण परमाणुणा पुसिज्जमाणं सव्वं सव्वप्पणा पुसिज्जदि तहा अण्णो वि जो एवंविहो फासो सो सव्वफासो त्ति दट्ठव्वो × × ×। स्पृश्यत इति स्पर्शः कर्कशादिः। स्पृश्यत्यनेनेति स्पर्शस्त्वगिन्द्रियम्। तयोर्द्वयोः स्पर्शयोः स्पर्शः स्पर्शस्पर्शः। स च अष्टविधः—कर्कशस्पर्शः, मृदुस्पर्शः, गुरुस्पर्शः, लघुस्पर्शः, स्निग्धस्पर्शः, रूक्षस्पर्शः, शीतस्पर्शः, उष्णस्पर्शश्चेति।

अप्रकृत अर्थों का निराकरण कर प्रकृत अर्थ को प्रगट करने को निक्षेप कहते हैं। अप्रकृत अर्थों का निराकरण करके प्रकृत अर्थ का प्ररूपण करने के लिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्शनिक्षेप के अधिकार का कथन किया गया है। वह स्पर्शनिक्षेप तेरह प्रकार का होता है—यथा—(१) नामस्पर्श, (२) स्थापना स्पर्श, (३) द्रव्य स्पर्श, (४) एकक्षेत्र स्पर्श, (५) अनंतरक्षेत्र स्पर्श, (६) देशस्पर्श, (७) त्वक्स्पर्श, (८) सर्वस्पर्श, (९) स्पर्शस्पर्श, (१०) कर्मस्पर्श, (११) बंधस्पर्श, (१२) भव्यस्पर्श तथा (१३) भावस्पर्श।

जो एक द्रव्य दूसरे द्रव्य से स्पर्श को प्राप्त होता है—उसे द्रव्यस्पर्श कहते हैं, यथा—परमाणु पुद्गल शेष पुद्गल द्रव्यों के साथ स्पर्श को प्राप्त होता है। पुद्गल द्रव्यरूप से परमाणु पुद्गल का शेष पुद्गलों के साथ एकत्व पाया जाता है। एक पुद्गल द्रव्य का शेष पुद्गल द्रव्यों के साथ जो संयोग या समवाय होता है उसे 'द्रव्यस्पर्श' कहते हैं। अथवा जीव द्रव्य और पुद्गल द्रव्य का जो एकमेक संबंध होता है उसे द्रव्यस्पर्श कहते हैं। एक पुद्गल द्रव्य दूसरे पुद्गल द्रव्य के द्वारा स्पर्श को प्राप्त होता है, क्योंकि समवेत रूप में अनंत पुद्गल परमाणु पाये जाते हैं ; अथवा पुद्गल रूप से उसमें एकत्व देखा जाता है अतः इसे द्रव्यस्पर्श कहते हैं।

एक आकाश प्रदेश में स्थित अनंतानंत पुद्गल स्कंधों का समवाय संबंध या संयोग संबंध द्वारा जो स्पर्श होता है उसे एकक्षेत्रस्पर्श कहते हैं। अथवा बहुत द्रव्यों का युगपत् एक क्षेत्र की अवस्थिति से जो स्पर्श होता है उसे एकक्षेत्रस्पर्श कहते हैं।

जो द्रव्य अनंतर क्षेत्र के साथ स्पर्श करता है उसे अनंतरक्षेत्रस्पर्श कहते हैं। दो आकाश प्रदेश में स्थित द्रव्यों का दो आकाश के प्रदेशों में स्थित अन्य द्रव्यों के साथ जो स्पर्श होता है उसे अनंतरक्षेत्रस्पर्श कहते हैं। दो प्रदेशों में स्थित स्कंधों का और तीन प्रदेशों में स्थित स्कंधों का जो स्पर्श होता है उसे भी अनंतरक्षेत्रस्पर्श कहते हैं। इसी प्रकार चार, पाँच आदि प्रदेशों में स्थित स्कंधों के साथ दो संयोग का कथन करते समय कुछ कम लोक में स्थित महास्कंध के प्राप्त होने तक द्वितीय अक्ष का संचार करना चाहिए।

एक द्रव्य का देश अर्थात् अवयव यदि अन्य द्रव्य के देश अर्थात् उसके अवयव के साथ स्पर्श करता है तो उसे देशस्पर्श कहते हैं। यह देशस्पर्श स्कंधों के अवयवों का ही होता है, परमाणु रूप पुद्गलों का नहीं।

जो द्रव्य अन्य द्रव्य के साथ सर्वात्मना स्पर्श करता है उसे सर्वस्पर्श कहते हैं। जिस प्रकार परमाणु पुद्गल द्रव्य अन्य परमाणु पुद्गल के साथ स्पर्श करता है, तो सब का सर्वात्मरूप से स्पर्श करता है वैसे अन्य द्रव्य भी जो इस प्रकार स्पर्श करते हैं उसे सर्वस्पर्श कहते हैं।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

जो स्पर्श किया जाता है उसे स्पर्श कहते हैं—यथा—कर्कशादि। जिसके द्वारा स्पर्श किया जाय उसे स्पर्श कहते है—यथा त्वक् इंद्रिय। इन दोनों स्पर्शों का स्पर्श—स्पर्शस्पर्श कहा जाता है। वह स्पर्शस्पर्श आठ प्रकार का होता है—यथा—(१) कर्कशस्पर्श, (२) मृदुस्पर्श, (३) गुरुस्पर्श, (४) लघुस्पर्श, (५) स्निग्धस्पर्श, (६) रूक्षस्पर्श, (७) शीतस्पर्श तथा (८) उष्णस्पर्श।

·१२·०८·१२ औपनिधिका द्रव्यानुपूर्वी

से किं तं ओवणिहिया दव्वाणुपुव्वी? दव्वाणुपुव्वी तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—पुव्वाणुपुव्वी ? पच्छाणुपुव्वी २ अणाणुपुव्वी ३ य।

से किं तं पुव्वाणुपुव्वी? पुव्वाणुपुव्वी—धम्मत्थिकाए १ अधम्मत्थिकाए २ आगासत्थिकाए ३ जीवत्थिकाए ४ पोग्गलत्थिकाए ५ अद्धासमए ६। से तं पुव्वाणुपुव्वी।

से किं तं पच्छाणुपुव्वी? पच्छाणुपुव्वी-अद्धासमए ६ पोग्गलत्थिकाए ५ जीवत्थिकाए ४ आगासत्थिकाए ३ अधम्मत्थिकाए २ धम्मत्थिकाए १। से तं पच्छाणुपुव्वी।

से किं तं अणाणुपुव्वी? अणाणुपुव्वी एयाए चेव एगादियाए एगुत्तरियाए छगच्छगयाए सेढीए अण्णमण्णब्भासो दुरूवणो। से तं अणाणुपुव्वी।

अहवा ओवणिहिया दव्वाणुपुव्वी तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—पुव्वाणुपुव्वी १ पच्छाणुपुव्वी २ अणाणुपुव्वी ३।

से किं तं पुव्वाणुपुव्वी? पुव्वाणुपुव्वी परमाणुपोग्गले दुपएसिए तिपएसिए जाव दसपएसिए जाव संखिज्जपएसिए असंखिज्जपएसिए अणंतपएसिए। से तं पुव्वाणुपुव्वी।

से किं तं पच्छाणुपुव्वी? पच्छाणुपुव्वी—अणंतपएसिए असंखिज्जपएसिए संखिज्जपएसिए जाव दसपएसिए जाव तिपएसिए दुपएसिए परमाणुपोग्गले। ते तं पच्छाणुपुव्वी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से किं तं अणाणुपुव्वी ? अणाणुपुव्वी—एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवुणो। से तं अणाणुपुव्वी। से तं ओवणिहिया दव्वाणुपुव्वी।

—अणुओ० सू १३१ से १३८। पृ० ८५, ८६

टीका—'पूर्वानुपूर्वी' त्यादि तस्मात्प्रथमात्प्रभृति आनुपूर्वी अनुक्रमः परिपाटी पूर्वानुपूर्वी, पाश्चात्यात् चरमादारभ्य व्यत्ययेनैवानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी, न आनुपूर्वी अनानुपूर्वी यथोक्तप्रकाराद्व्यतिरिक्तरूपेत्यर्थः। तत्र द्रव्यानुपूर्व्यधिकारात् धर्मास्तिकायादीनामेव च द्रव्यत्वादिदमाह × × ×। 'से किं तं पच्छाणुपुव्वीत्यादि', पश्चात् प्रभृति प्रतिलोमपरिपाटी पश्चानुपूर्वी, उदाहरणमुत्क्रमेणेदमेव अद्धासमय इत्यादि। 'से किं तं अणाणुपुव्वी' त्यादि, न आनुपूर्वी अनानुपूर्वी यत्रायं द्विप्रकारोऽपि क्रमो नास्ति, एवमेवार्दवितर्कतया विवक्ष्यत इत्यर्थः।

द्रव्यों के स्वरूप को समीप करने की निधि को औपनिधिका द्रव्यानुपूर्वी कहते हैं। वह औपनिधिका द्रव्यानुपूर्वी तीन प्रकार की होती है—यथा—(१) पूर्वानुपूर्वी, (२) पश्चात् आनुपूर्वी तथा (३) अनानुपूर्वी।

प्रथम से आरम्भ कर—अनुक्रमतापूर्वक द्रव्यों के वर्णन करने को पूर्वानुपूर्वी कहते हैं—यथा—(१) धर्मास्तिकाय, (२) अधर्मास्तिकाय, (३) आकाशास्तिकाय, (४) जीवास्तिकाय, (५) पुद्गलास्तिकाय और (६) अद्धासमय।

चरम से प्रारम्भ कर प्रतिलोमपूर्वक द्रव्यों के वर्णन करते को पश्चात् आनुपूर्वी कहते हैं—यथा—(६) अद्धासमय, (६) पुद्गलास्तिकाय, (४) जीवास्तिकाय, (३) आकाशास्तिकाय, (२) अधर्मास्तिकाय तथा (१) धर्मास्तिकाय।

जिसमें पूर्वानुपूर्वी तथा पश्चात् अनुपूर्वी का क्रम न हो उसे अनानुपूर्वी कहते हैं। अनानुपूर्वी में क्रम की अस्त-व्यस्तता होती है।

धर्मास्तिकाय आदि षट् द्रव्यों की एक आदि से आरम्भ कर षट् गच्छरूप श्रेणी की जाय; इसके बाद षट् श्रेणी में स्थित अंकों को परस्पर अभ्यास करके (१×२×३×४×५×६) जो ७२० भंग होते हैं; उनमें से आदि और अंत के दो भंग न्यून कर देने पर ७१८ भंग शेष रह जाते हैं। चूंकि एक अंक पुर्वानुपूर्वी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है और ७२० वाँ अंक पश्चात् आनुपूर्वी है, अतः ७२० में से २ कम कर देने पर ७१८ अंक अवशेष रह जाते हैं अतः इसे अनानुपूर्वी कहते हैं।

अथवा औपनिधिका द्रव्यानुपूर्वी तीन प्रकार की होती है, यथा—(१) पूर्वानुपूर्वी, (२) पश्चात् आनुपूर्वी तथा (३) अनानुपूर्वी।

पूर्वानुपूर्वी निम्नप्रकार की है—परमाणुपुद्गल, द्विप्रदेशी, तीनप्रदेशी यावत् संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी तथा अनंतप्रदेशी स्कंध।

पश्चात् आनुपूर्वी निम्नप्रकार की है—अनंतप्रदेशी स्कंध, असंख्यातप्रदेशी, संख्यातप्रदेशी, यावत् दसप्रदेशी यावत तीनप्रदेशी, द्विप्रदेशी स्कंध तथा परमाणु-पुद्गल।

परमाणु आदि अनंत द्रव्यों की एक आदि से आरम्भकर अनंत गच्छरूप श्रेणी की जाय ; इसके बाद अनंत श्रेणी को परस्पर गुणन करने से यावत् भंग बन जाते हैं उसमें से आदि और अंत के दो भंग न्यून कर देने पर शेष भंग को अनानुपूर्वी कहते हैं। चूँकि आदि का भंग पूर्वानुपूर्वी है तथा अंत का भंग पश्चात् आनुपूर्वी है अतः आदि और अंत के दो भंग न्यून कर देने पर शेष रहे भंगों को अनानुपूर्वी कहते हैं।

·१२·१३ पुद्गल में भाव

·१ पुद्गल और अनादिपारिणामिक भाव

से किं तं अणादिपारिणामिए ? अणादिपारिणामिए × × ×। पोग्गलत्थिकाए × × ×।

—अणुओ० सू २५०। पृ० १११३

टीका—अनादिपरिणामिकस्तु धर्मास्तिकायादीनि, सद्भावस्य स्वतस्तेषामनादित्वादिति।

पुद्गलास्तिकाय में अनादिपारिणामिक होता है। पुद्गल अपने स्व-स्वरूप में स्थित रहता है अतः पुद्गलास्तिकाय में पुद्गलत्व की अपेक्षा अनादिपारिणामिक भाव होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ पुद्गल और सादि पारिणामिक भाव

से किं तं सादिपारिणामिए? सादिपारिणामिए अणेगविहे पन्नत्ते, तंजहा—× × ×। परमाणुपोग्गले, दुपदेसिए जाव अणंतपदेसिए।

—अणुओ० सू २४९। पृ० १११२-३

टीका—पुद्गलानामसंख्येयकालादूर्ध्वतः स्थित्यभावात्सादिपरिणामतेति।

परमाणुपुद्गल, द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध में स्थिति की अपेक्षा सादिपारिणामिक भाव होता है।

परमाणु, द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध की स्थिति उत्कृष्ट असंख्यातकाल से अधिक नहीं होती है अतः इनमें सादिपारिणामिक भाव कहा गया है।

·३ पुद्गल और उदय-पारिणामिक भाव

(क) उदयपरिणामिए पुग्गला उ सव्वेसु पुण जीवा।

—कर्म० भा १। गा १५। गाथा का उत्तरार्ध। टीका में उद्धृत

(ख) पोग्गलदव्वेसु ओदइय-पारिणामियाणं दोण्हं चेव भावाणमुवलंभा × × ×। पोग्गलदव्वभावा पुणकम्मोदएण विस्ससादो व उप्पज्जंति × × ×।

—षट्० खं० २, ७। गा १। टीका। पु ५। पृ० १८६, ८८

पुद्गल द्रव्य में उदय और पारिणामिक—दोनों भाव होते हैं। पुद्गल द्रव्य के भाव कर्मों के उदय से अथवा विस्रसा—स्वभाव से उत्पन्न होते हैं।

(ग) उदयपरिणामिरूपं तु सर्वभावानुगा जीवाः।

—प्रशम० श्लो २०९। उत्तरार्ध

टीका—पुद्गलद्रव्यं पुनरौदयिके भावे भवति पारिणामिके च। परमाणुः परमाणुरिति अनादिपारिणामिको भावः। आदिमत्पारिणामिकस्तु द्व्यणुकादिरभेन्द्रधनुरादिश्च। वर्णरसादिपारिणामिक परमाणूनां स्कंधानां चौदयिको भावः द्व्यणुकादिसंहतिपरिणामश्चेति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(घ) धम्माइ परिणामियभावे खंधा उदइए वि।

—कर्म० भा ४। गा ६९। उत्तरार्ध

टीका— × × × "खंधा उदए वि" त्ति 'स्कन्धा' अनंत-परमाण्वात्मका न तु केवलाणवः, तेषां जीवेनाऽग्रहणात्, 'औदयिकेऽपि' औदयिकभावेऽपि, न तु केवलं पारिणामिक इत्यपिशब्दार्थः। तथाहि—शरीरादिनामोदय-जनित औदारिकादिशरीरतया औदारिकादीनां स्कंधानामेवोदव इति भावः। उदय एवौदयिक इति व्युत्पत्तिपक्षे तु कर्मस्कंधलक्षणेऽजीवेऽप्यौ-दयिकभावो भवतीति भावः।

स्कंध पुद्गल में उदय भाव भी होता है। अनंत परमाणुओं से बने हुए स्कंधों में भी उदय भाव होता है।

परमाणु, संख्यातप्रदेशी स्कंध, असंख्यातप्रदेशी स्कंध में उदय भाव नहीं होता है क्योंकि जीव के द्वारा इनका ग्रहण नहीं होता है। कुछ अनंतप्रदेशी स्कंधों का भी जीव के द्वारा ग्रहण नहीं होता है। अतः परमाणु, संख्यातप्रदेशी स्कंध, असंख्यात-प्रदेशी स्कंध तथा अग्रहणीय अनंतप्रदेशी स्कंधों में उदय भाव नहीं होता है।

अस्तु अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल में केवल पारिणामिक भाव ही नहीं होता है, औदयिक भाव भी होता है। शरीरादि नामकर्म के उदय से जनित औदारिकादि शरीर रूप में परिणत—औदारिकादि स्कंधों का उदय होता है, अतः उनमें उदयभाव कहा गया है। यहाँ व्युत्पत्ति की अपेक्षा औदयिक भाव का कथन है क्योंकि कर्म-स्कंधों का लक्षण—'उदय' है अतः अजीव—पुद्गल में भी औदयिक भाव कहा जाता है।

·१२·१४ पुद्गल और पर्याय संख्या

·१ काय स्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या

(क) एक समय यावत् असंख्यात समय स्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या

एगसमयठिईयाणं पुच्छा। (केवइया पज्जवा पन्नत्ता) गोयमा! अनंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ? गोयमा!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगसमयठिईए पोग्गले एकसमयठिईयस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठणाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए तुल्ले, वण्णादि-अट्ठफासेहि छट्ठाणवडिए। एवं जाव दस समयठिईए।

संखेज्जसमयपठिईयाणं एवं चेव। नवरं ठिईए दुट्ठाण वडिए।

असंखेज्जसमयठिईयाणं एवं चेव। नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए।

—पण्ण० प ५। सू ५१५ से ५१८। पृ० ३६४

एक समय की स्थितिवाले पुद्गलों में अनंतपर्याय होते हैं। एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से स्थिति रूप से तुल्य है।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से कृष्णवर्ण-पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्णवर्णपर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत तथा शुक्लवर्ण पर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से सुगंध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार सुगन्ध-पर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गंध-पर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः एक समय की स्थितिवाले पुद्गल में अनंत पर्याय होती है।

जिस प्रकार एक समय की स्थितिवाले पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; अवगाहन रूप से चतुः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; स्थिति रूप से तुल्य है; वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (कर्कश आदि अष्ट स्पर्श) पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दो समय की स्थितिवाले पुद्गल दो समय की स्थितिवाले पुद्गल से यावत् दस समय की स्थितिवाले पुद्गल दस समय की स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है; प्रदेश रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; अवगाहन रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; स्थिति रूप से तुल्य है; वर्ण गंध-रस-स्पर्श (कर्कश आदि अष्ट स्पर्श) रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गलों में अनंत पुद्गल पर्याय होते हैं। संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो संख्यातभाग न्यून है अथवा संख्यातगुण न्यून (द्विस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो संख्यातभाग अधिक है अथवा संख्यातगुण अधिक (द्विस्थान अधिक) है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से सुगंध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गंध पर्याय रूप से संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक अथवा तुल्य है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से तिक्तरसपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल में अनंत पर्याय होती है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होती है। असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुः स्थान न्यून है यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचितन्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल छः स्थान न्यून-अधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल में अनंत पर्याय है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) जघन्य-उत्कृष्ट-अजघन्यअनुत्कृष्ट समय स्थितिवाले पुद्गल और पर्याय संख्या

(ख) जहण्णट्ठिईयाणं भंते ! पोग्गला णं पुच्छा (केवइया पज्जवा पन्नत्ता) गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णठिईए पोग्गले जहण्णठिईयस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाण-वडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए तुल्ले, वण्णादि-अट्ठफास-पज्जवेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसठिईए वि। अजहण्णमणुक्कोस-ठिईए एवं चेव। नवरं ठिईए वि चतुट्ठाणवडिए।

—पण्ण० प ५। सू ५५६। पृ० ३६९

जघन्य (एक समय) स्थितिवाले पुद्गलों में अनंतपर्याय होते हैं। जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थितिवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थितिवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुः-स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थितिवाले पुद्गल से स्थिति रूप से तुल्य है।

जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थिति पुद्गल से कृष्णवर्णपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थिति-वाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से ; सुगंध, दुर्गन्ध पर्याय रूप से ; तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से ; कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से— जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थितिवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार जघन्य स्थितिवाले पुद्गल जघन्य स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से तुल्य है ; अवगाहन रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; स्थिति रूप से तुल्य है ; वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (कर्कशादि आठ स्पर्श) रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल उत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; अवगाहन रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है। अथवा तुल्य है ; स्थिति रूप से तुल्य है ; वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (कर्कशादि आठ स्पर्श) रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; अवगाहत रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वर्ण-गंध-रस-स्पर्श रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है लेकिन स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य अनुत्कृष्ट (मध्यम) स्थितिवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितियाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्यअनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से ; सुगन्ध-दुगन्ध पर्याय रूप से, तिक्त कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से, कर्कश मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से—अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

'१२ १४ २ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा पुद्गल और पर्याय संख्या

(क) एक गुण यावत् अनंत गुण की अपेक्षा पुद्गल और पर्याय संख्या

(क) एगगुणकालगाणं पुच्छा। (केवइया पज्जवा पन्नत्ता?) गोयमा! अणंता पज्जवा। से केणट्ठे णं भंते! एवं वुच्चइ? गोयमा! एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालगस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, कालवण्णपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसेहिं वण्ण-गंध-रस-फासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, अट्ठेहिं फासेहिं छट्ठाण वडिए।५१९।

एवं जाव दसगुणकालए।५२०।

संखेज्जगुणकालए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे दुट्ठाणवडिए।५२१।

एवं असंखेज्जगुणकालए वि। णवरं सट्ठाणे चउट्ठाणवडिए।५२२।

एवं अणंतगुणकालए वि। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए।५२३।

एवं जहा कालवण्णस्स वत्तव्वया भणिया तहा सेसाण वि वण्ण-गंध-रस-फासाणं वत्तव्वया भाणियव्वा जाव अणंतगुणलुक्खे।५२४।

—पण्ण० प ५। सू ५१९-५२४ पृ० ३६४

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। एक गुण कृष्णवर्ण वाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्ण वाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले से कृष्णवर्णपर्याय रूप से तुल्य है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से नीलवर्णपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार नीलवर्णपर्याय रूप से एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही रक्त-पीत तथा शुक्लवर्णपर्याय रूप से एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से सुगंधपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगंधपर्याय रूप से एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्धपर्याय रूप से एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से तिक्तरसपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है ता षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार तिक्तरसपर्याय रूप से एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुररसपर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

जिस प्रकार एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहन रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्णवर्ण पर्यायरूप से तुल्य है; नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दो गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल दो गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से यावत् दस गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहन रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है। नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंतपर्याय होती है। संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है।

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून (द्विस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है। (द्विस्थान अधिक है।)

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से नीलवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार नीलवर्ण पर्याय रूप से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही रक्त-पीत-शुक्ल-वर्ण पर्याय रूप से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्ण-वर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यूम है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष-स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः संख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्णवर्णपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से नील वर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार नीलवर्ण पर्याय रूप से असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही रक्त-पीत-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्लवर्ण पर्याय रूप से असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्ण-वाले पुद्गल असंख्यातगुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से असंख्यात् गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। अनंत गुण कृष्णवर्ण-वाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान अधिक है।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अणंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से नीलवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण नीलवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

जिस प्रकार कृष्णवर्णवाले पुद्गलों का वर्णन किया है वैसे ही अन्य वर्णों का, (नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण) सुगन्ध-दुर्गंध का ; तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रसों का तथा कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शों का वर्णन करना चाहिए।

(ख) जघन्य-उत्कृष्ट-अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण की अपेक्षा पुद्गल और पर्याय संख्या

(ख) जहण्णगुणकालयाणं भंते! पोग्गलाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता? गोयमा! अणंता। से केणट्ठेणं? गोयमा! जहण्णगुणकालए पोग्गले जहण्णगुणकालयस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, कालवण्णपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसेहिं वण्ण-गंध-रस-फासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जहण्णगुणकालयाणं पोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता। एवं उक्कोसगुणकालए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणकालए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए।५५७।

एवं जहा कालवण्णपज्जवाणं वत्तव्वया भणिया तहा सेसाण वि वण्ण-गंध-रस-फासपज्जवाणं वत्तव्वया भाणियव्वा, जाव अजहण्णमणुक्कोसलुक्खे सट्ठाणे छट्ठाणवडिए।

— पण्ण० प ५। सू ५५८। पृ० ३६९-७०

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले (एक गुण कृष्णवाले) पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से नीलवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार नीलवर्ण पर्याय से जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्ण-वर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वैसे ही रक्त-पीत-शुक्ल-वर्ण पर्याय रूप से जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार सुगन्ध-दुर्गन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। उत्कृष्ट गुण कृष्ण-वर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुः-स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्ण-वर्णवाले पर्याय रूप से तुल्य है।

उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से नीलवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार नीलवर्ण पर्याय रूप से उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार सुगन्ध-दुर्गन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार कर्कश मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण-वाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

अजघन्य अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्णवर्णपर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार सुगन्ध-दुगन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः अजघन्य-अनुत्कृष्ट वर्णवाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं।

जिस प्रकार कृष्णवर्णवाले पुद्गलों का वर्णन किया है वैसे ही अन्य वर्णों का. (नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण) सुगन्ध-दुर्गन्ध का ; तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर-रसों का तथा कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शों का वर्णन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१२·१४ ३ क्षेत्रावगाहित पुद्गल और पर्याय संख्या

(क) एक प्रदेशावगाढ यावत् असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल और पर्याय संख्या

(क) एगपएसोगाढाणं पोग्गलाणं पुच्छा। (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादि उवरिल्लचउफासेहिं य छट्ठाणवडिए।

एवं दुपएसोगाढेवि जाव दसपएसोगाढे। संखेज्जपएसोगाढाणं पुच्छा। (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! संखेज्जपएसोगाढे पोग्गले संखेज्जपएसोगाढस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णाइ-उवरिल्लं चउफासेहिं य छट्ठाणवडिए।

असंखेज्जपएसोगाढाणं पुच्छा (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणंता पज्जवा। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! असखेज्ज-पएसोगाढे पोग्गले असंखेज्जपएसोगाढस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाण-वडिए, वण्णादि-अट्ठफासेहिं छट्ठाणवडिए।

—पण्ण० प ५। सू ५११ से ५१४। पृ० ३६३-६४

टीका—एगपएसोगाढाणं पोग्गलाणं भंते ! इत्यादि। अत्र (दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाएवडिए इति) इदमपि विवक्षितैकप्रदेशावगाढप-रमाण्वादिकं द्रव्यमिदमप्यपरैकप्रदेशावगाढं द्विप्रदेशाऽऽदिकं द्रष्टव्यमिति। द्रव्यार्थतया तुल्यता प्रदेशार्थतया षट्स्थानपतिता, अनंतप्रदेशकस्याऽपि स्कंधस्यैकस्मिन्नकाशप्रदेशेऽवगाह संभवात्। शेषं सुगमम्। एवं स्थिति-भावाऽऽश्रयाण्यपि सूत्राणि उपयुज्य भावनीयानि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से द्रव्यरूप से तुल्य है।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से प्रदेशरूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है, अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है, अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक है।)

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से अवगाहनरूप से तुल्य है।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है (चतुःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है (चतुःस्थान अधिक) है।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील, रक्त, पीत तथा शुक्लवर्ण रूप से एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छः स्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है, अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छः स्थान अधिक) है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गंध पर्याय रूप से एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित तुल्य है. कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है। (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से शीत स्पर्श पर्याय से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्याय रूप से एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः एक प्रदेशावगाढ पुद्गल में अनंत पर्याय होती है।

जिस प्रकार एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; अवगाहन रूप से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुल्य है ; स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष) रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दो प्रदेशावगाढ पुद्गल दो प्रदेशावगाढ पुद्गल से यावत् दस प्रदेशावगाढ पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहन रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष) रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है, अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःहस्थान अधिक) है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है (द्विस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है (द्विस्थान अधिक) है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है (चतुःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है। (चतुःस्थान अधिक) है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण रूप से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अणंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से तिक्त रस पर्याय से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से शीत स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है, अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्याय रूप से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं। असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है। अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो असंख्यात भाग न्यून है, अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है (चतुःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है (चतुःस्थान अधिक) है।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है (चतुःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है (चतुःस्थान अधिक) है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गंध पर्याय रूप से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से तिक्त रस पर्याय से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार तिक्त रस पर्यायरूप से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्यायरूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से कर्कश स्पर्श-पर्यायरूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छःस्थान अधिक) है।

जिस प्रकार कर्कश स्पर्शपर्यायरूप से असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल में अनंतपर्याय होती है।

(ख) जघन्य अवगाहना-उत्कृष्ट अवगाहना-अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहना वाले पुद्गल और पर्याय संख्या

(ख) जहण्णोगाहणगाणं भंते ! पोग्गलाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णोगाहणए पोग्गले जहण्णोगाहणगस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादि-उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए। उक्कोसोगाहणए वि एवं चेव। नवरं ठिईए तुल्ले। अजहण्णमणुक्कोसोगाहणगाणं भंते ! पोग्गलाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! अजहण्णमणुक्कोसोगाहणए पोग्गले अजहण्णमणुक्कोसोगाहणगस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णादि-अट्ठफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए।

—पण्ण० प ५। सू ५५५। पृ० ३६९

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गलों में अनंतपर्याय होते हैं। जघन्य अवगाहना वाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से अवगाहना रूप से तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से कृष्णवर्णपर्याय-रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्णवर्णपर्याय रूप से जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्णपर्याय रूप से जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से सुगंधपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगंध पर्याय रूप से जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से तिक्त रस पर्यायरूप सु कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से शीत स्पर्श पर्यायरूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्यायरूप से जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष-स्पर्श पर्यायरूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से द्रव्यरूप से तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से प्रदेशरूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से अवगाहना रूप से तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से स्थितिरूप से भी तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप से उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से तिक्त रस पर्यायरूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्यायरूप से उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्यायरूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से शीत स्पर्श पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्याय रूप से उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष-स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः उत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले पुद्गलों में अनंत पर्याय होते हैं। अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो चतुःस्थान न्यून है। यदि अधिक है तो चतुःस्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित अधिक हैं। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून हैं। यदि अधिक हैं तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक हैं अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक हैं अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से सुगन्ध पर्यायरूप से कदाचित् न्यून हैं, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक हैं। यदि न्यून हैं तो षट्स्थान न्यून हैं। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक हैं अथवा तुल्य हैं वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से तिक्तरसपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

जिस प्रकार तिक्तरस पर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से कर्कशस्पर्शपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो षट्स्थान न्यून है। यदि अधिक है तो षट्स्थान अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार कर्कशस्पर्शपर्याय रूप से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शपर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पुद्गल में अनंतपर्याय होते हैं।

·१३ पुद्गल की वर्गणा

·१ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा पुद्गल वर्गणा

एगा परमाणुपोग्गलाणं वग्गणा एवं जाव एगा अणंतपएसियाणं खंधाणं वग्गणा। एगा एगपएसोगाढं पोग्गलाणं वग्गणा जाव एगा असंखेज्ज-पएसोगाढाणं पोग्गलाणं वग्गणा। एगा एगसमयठिइयाणं पोग्गलाणं वग्गणा जाव असंखेज्ज समय-ठिइयाणं पोग्गलाणं वग्गणा। एगा एगगुणकालगाणं पोग्गलाण वग्गणा, जाव एगा असंखेज्ज गुणकालगाणं पोग्गलाणं वग्गणा। एगा अणंतगुणकालगाणं पोग्गलाणं वग्गणा। एवं वण्णा गंधा रसा फासा भाणियव्वा जाव एगा अणंतगुण-लुक्खाणं पोग्गलाणं वग्गणा। एगा जहन्नपएसियाणं खंधाणं वग्गणा एगा उक्कस्सपएसियाणं खंधाणं वग्गणा एगा अजहन्नुक्कस्सपएसियाणं खंधाणं वग्गणा। एवं जहन्नोगाहणयाणं उक्कोसोगाहणगाणं अजहन्नुक्कोसोगाहण-गाणं जहन्नठिइयाणं उक्कस्सठिइयाणं अजहन्नुक्कोसठिइयाणं जहन्नगुण-कालगाणं उक्कस्सगुणकालगाणं अजहन्नुक्कस्सगुणकालगाण एवं वण्णगंध-रसफासाणं वग्गणा भाणियव्वा, जाव एगा अजहन्नुक्कस्सगुणलुक्खाण पोग्गलाणं वग्गणा।

—ठाण० स्था १। सू ५१। पृ० १८५

टीका वर्गणा वर्गः समुदाय × × ×।

सजातीयवस्तुसमुदायो वर्गणा समूहो, वर्ग, राशिः इति पर्यायाः—

—विशेभा० गा ६३५। टीका

सामान्यतः समान गुण व जाति वाले या अन्य समानता वाले समुदाय को वर्गणा कहते हैं। समूह, वर्ग, राशि वर्गणा के पर्यायवाची शब्द हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१ द्रव्य की अपेक्षा वर्गणा—

परमाणु पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंधों यावत् अनंतप्रदेशी स्कंधों की प्रत्येक की एक वर्गणा होती है।

·२ क्षेत्र की अपेक्षा वर्गणा—

एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार दो प्रदेशावगाढ पुद्गलों की यावत् असंख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गलों की प्रत्येक की एक वर्गणा होती है।

·३ काल-स्थिति की अपेक्षा वर्गणा—

एक समय की स्थितिवाले पुद्गलों की एक समय की स्थिति की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार दो समय की स्थितिवाले पुद्गलों की यावत् असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गलों की उस-उस स्थिति की अपेक्षा एक वर्गणा होती है।

·४ भाव की अपेक्षा वर्गणा—

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों की एक गुण कृष्णवर्ण की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों की उस-उस वर्ण की अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अनंतगुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार नील, रक्त, पीत तथा शुक्लवर्ण के पुद्गलों की वर्गणा के विषय में समझना चाहिए।

एक गुण सुगंधवाले पुद्गलों की एक गुण सुगंध की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार द्विगुण सुगंधवाले यावत् असंख्यातगुण सुगंधवाले पुद्गलों की उस-उस सुगन्ध की अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अनंतगुण सुगंधवाले पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार दुर्गंधवाले पुद्गलों की वर्गणा के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण तिक्तरसवाले पुद्गलों की एक तिक्तरस की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् असंख्यातगुण तिक्तरसवाले पुद्गलों की उस-उस रस की अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अनंतगुण तिक्तरसवाले पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस के पुद्गलों की वर्गणा के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण कर्कशस्पर्शवाले पुद्गलों की एक गुण कर्कशस्पर्श की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् अनंतगुण कर्कशस्पर्शवाले पुद्गलों की उस-उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्श की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शवाले पुद्गलों की वर्गणा के विषय में भी समझना चाहिए।

जघन्य प्रदेशी स्कंधों (द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल) की एक वर्गणा होती है, उत्कृष्टप्रदेशी स्कंधों (उत्कृष्ट संख्या से अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल) की एक वर्गणा होती है यथा अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) प्रदेशी स्कंधों की एक वर्गणा होती है।

जघन्य अवगाहनावाले (एकप्रदेशावगाढ) पुद्गलों की एक वर्गणा होती है ; उत्कृष्टावगाहनावाले (उत्कृष्ट संख्या से असंख्यातप्रदेशावगाढ) पुद्गलों की एक वर्गणा होती है तथा अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले (संख्यात-असंख्यात-प्रदेशावगाढ) पुद्गलों की एक वर्गणा होती है।

जघन्य स्थितिवाले (एक समय की स्थितिवाले) पुद्गलों की जघन्य स्थिति की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। उत्कृष्ट स्थितिवाले (उत्कृष्ट संख्यावाली स्थिति—असंख्यात समय की स्थितिवाले) पुद्गलों की एक वर्गणा होती है तथा अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) स्थितिवाले पुद्गलों की एक वर्गणा होती है।

जघन्यगुण कृष्णवर्णवाले (एक गुण कृष्णवर्णवाले) पुद्गलों की जघन्य गुण कृष्णवर्ण की अपेक्षा एक वर्गणा होती है ; उत्कृष्टगुण कृष्णवर्णवाले पुद्गलों की उत्कृष्टगुण कृष्णवर्णकी अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अजघन्य-अनुत्कृष्टगुण कृष्ण-वर्णवाले पुद्गलों की अजघन्य-अनुत्कृष्टगुण कृष्णवर्ण की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार नील-रस-पीत तथा शुक्लवर्ण के पुद्गलों की वर्गणा के विषय में भी समझना चाहिए।

जघन्य गुण सुगंधवाले (एक गुण सुगंधवाले) पुद्गलों की जघन्य गुण सुगंध की अपेक्षा एक वर्गणा होती है ; उत्कृष्टगुण सुगंधवाले पुद्गलों की उत्कृष्टगुण सुगंध की अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अजघन्य-अनुत्कृष्टगुण सुगंधवाले पुद्गलों की अजघन्य-अनुत्कृष्टगुण की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार दुर्गंध के पुद्गलों की वर्गणाके विषय में भी समझना चाहिए।

जघन्यगुण तिक्तरसवाले (एक गुण तिक्तरसवाले) पुद्गलों की जघन्यगुण तिक्त-रस की अपेक्षा एक वर्गणा होती है ; उत्कृष्टगुण तिक्तरसवाले पुद्गलों की उत्कृष्ट-गुण तिक्तरस की अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अघन्य-अनुत्कृष्टगुण तिक्तरसवाले पुद्गलों की अजघन्य-अनुत्कृष्टगुण तिक्तरसवाले पुद्गल की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस के पुद्गलों की वर्गणा के विषय में भी समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्यगुण कर्कशस्पर्शवाले पुद्गलों की जघन्यगुण कर्कशस्पर्श की अपेक्षा एक वर्गणा होती है ; उत्कृष्टगुण कर्कशस्पर्शवाले पुद्गलों की उत्कृष्ट कर्कशस्पर्श की अपेक्षा एक वर्गणा होती है तथा अजघन्य-अनुत्कृष्टगुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गलों की अजघन्य-अनुत्कृष्ट कर्कशस्पर्श की अपेक्षा एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शवाले पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

·२ भावहानिप्ररूपणा की अपेक्षा पुद्गल की वर्गणा

नोट—तस्सेवबंधणिज्जस्स तत्थ इमाणि चत्तारि अणियोगद्दाराणि णायव्वाणि भवंति—वग्गणपरूवणा वग्गणणिरूवणा पदेसट्ठदा अप्पाबहुएत्ति ।।७०६।।

वग्गणपरूणदाए इमा एयपदेसिया परमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम ।।७०७।।

इमा दुपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम ।।७०८।।

एवं तिपदेसिय-चदुपदेसिय-पंचपदेसिय-छप्पदेसिय-सत्तपदेसिय-अट्ठपदेसिय-णवपदेसिय-दसपदेसिय-संखेज्जपदेसिय-असंखेज्जपदेसिय-अणंतपदेसिय अणंताणंतपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम ।।७०९।।

तासिमणंताणंतपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणाणमुवरिमाहार सरीरदव्ववग्गणा णाम ।।७१०।।

आहारसरीरदव्ववग्गणाणमुवरिमगहणदव्ववग्गणा णाम ।।७११।।

अगहणदव्ववग्गणाणमुवरितेजादव्ववग्गणा णाम ।।७१२।।

तेजा दव्ववग्गणाणमुवरि अगहणदव्ववग्गणा णाम ।।७१३।।

अगहणदव्ववग्गणाणमुवरि भासादव्ववग्गणा णाम ।।७१४।।

भासादव्ववग्गणाणमुवरिमगहणदव्ववग्गणा णाम ।।७१५।।

अगहणदव्ववग्गणाणमुवरिमणदव्ववग्गणा णाम ।।७१६।।

मणदव्ववग्गणाणमुवरिमगहणदव्ववग्गणा णाम ।७१७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगहणदव्ववग्गणाणमुवरि कम्मइयदव्ववग्गणा णाम ॥७१८॥

षट्० खण्ड० ५ । भा ४ । सू ७०६ से ७१८ । पृ० ५४२-४३ । पु १४

१—वर्गणा की अपेक्षा एक प्रदेशी परमाणुपुद्गल द्रव्यवर्गणा है ॥७०७॥

२—यह द्विप्रदेशी परमाणुपुद्गल द्रव्यवर्गणा है ॥७०८॥

१४—इसी प्रकार त्रिप्रदेशी, चतु:प्रदेशी, पंचप्रदेशी, षट्प्रदेशी, सप्तप्रदेशी, अष्टप्रदेशी, नवप्रदेशी, दशप्रदेशी, संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी, अनंतप्रदेशी और अनंतानंतप्रदेशी परमाणुपुद्गल द्रव्यवर्गणा होती है ॥७०९॥

१५—उन अनंतानंतप्रदेशी परमाणुपुद्गल द्रव्यवर्गणाओं के ऊपर आहारशरीर द्रव्य वर्गणा होती है ॥७१०॥

१६-१७—आहारशरीरद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर अग्रहणद्रव्यवर्गणा होती है। अग्रहणद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर तैजसद्रव्यवर्गणा होती है ॥७११-७१२॥

१८—तैजसद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर अग्रहणद्रव्यवर्गणा होती है ॥७१३॥

१९—अग्रहणद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर भाषाद्रव्यवर्गणा होती है ॥७१४॥

२०—भाषाद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर अग्रहणद्रव्यवर्गणा होती है ॥७१५॥

२१—अग्रहणद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर मनोवर्गणा होती है ॥७१६॥

२२—मनोद्रव्यवर्गणा के ऊपर अग्रहणद्रव्यवर्गणा होती है ॥७१७॥

२३—अग्रहणद्रव्यवर्गणाओं के ऊपर कार्मणवर्गणा होती है ॥७१८॥

नोट—औदारिकादि पांच शरीरों के ग्रहण योग्य है और ग्रहणयोग्य नहीं है—इस विषय को ध्यान में रखते हैं उपर्युक्त तेईसवर्गणाओं का कथन दूसरे तरीके से किये हैं।

वग्गणपरूवणदाए इमा एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम।

इमा दुपदेसिय परमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम।

—षट्० ५, ६ । सू ७६, ७७ । पु १४

टीका—दोण्णं परमाणुणं अजहण्णणिद्ध-ल्हुक्खगुणाणं समुदयसमागमेण दुपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा होदि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजघन्य स्निग्ध और रूक्ष गुणवाले दो परमाणुओं के समुदाय-समागम से द्विप्रदेशी परमाणुपुद्गल द्रव्यवर्गणा होती है।

एवं तिपदेसिय-चतुपदेसिय-पंचपदेसिय-छप्पदेसिय-सत्तपदेसिय-अट्ठपदेसिय-णवपदेसिय-दसपदेसिय-संखेज्जपदेसिय-असंखेज्जपदेसिय-परित्तपदेसिय अपरित्तपदेसिय -अणंतपदेसिय-अणंताणंतपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम ॥७८॥

—षट्० ५, ६। सू ७८। पु १४

इसी प्रकार त्रिप्रदेशी, चतु:प्रदेशी, पंचप्रदेशी, षट्प्रदेशी, सप्तप्रदेशी, अष्टप्रदेशी, नवप्रदेशी, दसप्रदेशी, संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी, परीतप्रदेशी, अपरीतप्रदेशी, अनंतप्रदेशी और अनंतानंतप्रदेशी परमाणुपुद्गल द्रव्यवर्गणा होती है।

अणंताणंत पदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणाणमुवरिआहारदव्ववग्गणा णाम ॥७९॥

—षट्० ५, ६। सू ७९। पु १४

·१४ पुद्गल की आत्मा

पोग्गलाणमत्ता रूव-रस-गंध-फासादिलक्खणं सरूवं पोग्गलअत्ता णाम। तेसिं च अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढि त्ति रूवादीणं छव्विहासो वड्ढीओ होंति। तासिं परूवणा जहा भावविहाणे कदा तहा कायव्वा। सट्ठाणस्स वि असंखेज्जलोगमेत्ताणि ट्ठाणाणि होंति। तेसिं पि एवं चेव परूवणा कायव्वा।

—षट्० पु १६। पृ० ५१५

'अत्त' का अर्थ आत्मा अर्थात् अर्थात् स्वरूप है। अत: 'पोग्गलाणं-अत्ता पोग्गल-अत्ता' इस अपेक्षा से पुद्गलात्त (पुद्गलात्मा) पद से पुद्गलों का रूप, रस, गंध व स्पर्श आदि रूप लक्षण विवक्षित है। उन रूपादिकों के अनंत भाग वृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनंतगुणवृद्धि—ये छ: वृद्धियाँ होती हैं। उनकी प्ररूपणा जैसे भावविधान में की गयी है वैसे करना चाहिए। स्वस्थान के भी असंख्यात लोक मात्र स्थान होते हैं। उनकी भी इसी प्रकार से प्ररूपणा करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१५ पुद्गल और संख्या

·१ द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलों की संख्या

(क) ते (रूविअजीवदव्वा) णं भंते ! किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ? गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वच्चइ-ते णं नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता ? गोयमा ! अणंता परमाणुपोग्गला, अणंता दुपएसिया खंधा जाव अणंता अणंत-पएसिया खंधा, से एएणं अट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ ते णं नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता।

—अणुओ० सू ४०३। पृ० ११४१

—पण्ण० प ५। सू ५३०। पृ० ३६२

(ख) परमाणुपोग्गलाणं भंते ! कि संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ? गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता, एवं जाव अणंतपएसिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। सू ३८। पृ० ८६४

(ग) अणंताणि य दव्वाणि काला पुग्गलजन्तवो।

—उत्त० अ २८। गा ८। पृ० १०२८

(घ) दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं।

—ठाण० स्था ५। उ ३। सू ४४१। पृ० २६६

—भग० श २। उ १०। सू ५७। पृ० ४३४

(ङ) सव्व जीवरासी वग्गिज्जमाणा वग्गिज्जमाणा अणंत-लोगमेत्त वग्गणट्ठाणाणि उवरि गंतूण सव्वपोग्गलदव्वं पावदि।

—षट्० खण्ड० ५, ५। सू ४८। टीका। पु १३। २६२-३

(च) × × ×। पुद्गल जीवास्त्वनेक द्रव्याणीति × × × परमाणु-प्रभृतीन्यनन्ताणुकस्कंधावसानानि × × ×।

—सिद्ध० अ ५। सू ५। पृ० ३२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छ) सिद्धा, निगोयजीवा, वणस्सई, काल, पोग्गला चेव।
सव्वमलोगागासं, छप्पेएऽणंतया नेया॥

—प्रवसा० गा ४०४

(ज) षडनन्तक्षपनाह—
सिद्धा निगोयजीवा, वणस्सई काल पुग्गला चेव।
सव्वमलोगनहं पुण, ति वग्गिउं केवलदुगम्मि॥

—कर्मप्र० भाग ४। गा ८५

टीका— × × × 'पुद्गलाः समस्तपुद्गलराशेः परमाणवः × × ×।

पुद्गल द्रव्य संख्या में संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है, अनंत है क्योंकि परमाणुपुद्गल अनंत है, द्विप्रदेशीस्कंध यावत दसप्रदेशीस्कंध अनंत है यावत् संख्यात-प्रदेशी स्कंध अनंत है, यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध अनंत है यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध अनंत है अतः पुद्गल संख्या की अपेक्षा अनंत है।

सब जीव राशि (जो स्वयं एक अनंत संख्या है) का उत्तरोत्तर वर्ग करते हुए जब अनंत लोक प्रमाण वर्ग-स्थान की प्राप्ति होती है उस वर्ग प्रक्रिया से प्राप्त संख्या के ऊपर जाने से सब पुद्गल द्रव्य की संख्या की प्राप्ति होती है।

·२ क्षेत्रावगाहित पुद्गल की अपेक्षा संख्या

(क) एगपएसोगाढा णं भंते! पोग्गला किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता? एवं चेव (नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता) एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढा।

—भग० श २५। उ ४। सू ३९। पृ० ८६४

(ख) एगपएसोगाढा पोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×। दुपएसोगाढा पोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×। तिपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता, एवं जाव (तिपएसोगाढा पोग्गला अणंता पन्नत्ता) तिगुणलुक्खापोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×।

चउपएसोगाढा पोग्गला अणंता (पन्नत्ता) × × ×। पंचपएसोगाढा पोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×। छप्पएसोगाढा पोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×। सत्तपएसोगाढा पोग्गला × × × अणंता पन्नत्ता। अट्ठपएसोगाढा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×। नवपएसोगाडा पोग्गला अणंता पन्नत्ता × × ×। दसपएसोगाढा पोग्गला अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था १ से १०

आकाश के एक प्रदेश को अवगाहकर रहने वाले पुद्गल (परमाणु हो या स्कंध) संख्यात तथा असंख्यात नहीं होते हैं, अनंत होते हैं। इसी प्रकार आकाश के दो प्रदेश को अवगाहकर रहने वाले पुद्गल यावत् दस प्रदेश को अवगाहकर रहने वाले पुद्गल अनंत होते हैं; यावत् आकाश के संख्यातप्रदेश को अवगाहकर रहने वाले पुद्गल अनंत होते हैं तथा—यावत् आकाश के असंख्यातप्रदेश को अवगाहकर रहने वाले पुद्गल अनंत होते हैं।

·३ काल-स्थिति की अपेक्षा पुद्गल और संख्या

(क) एक समयठिईया णं भंते! पोग्गला किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता? एवं चेव (गोयमा! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता?) एवं जाव असखेज्जसमयठिईया।

—भग० श २५। उ ४। सू ४०। पृ० ८६४

(ख) एवमेगसमयठिइया पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ५८) एवं जाव (दुसमयठिइया) (सू ११८)। एवं जाव (तिसमयठिइया) (सू २३४)। चउसमयठिइया पोग्गला अनंता (सू ३८८)। जाव (पंचसमयठिइया) (सू ४७४)। छसमयठिइया पोग्गला अनंता (सू ५४०)। जाव (सत्त-समयठिइया) (सू ५९३)। जाव (अट्ठसमयठिइया) (सू ६६०)। जाव (नवसमयठिइया) (सू ७०३)। दससमयठिइया पोग्गला अनंता पन्नत्ता) (सू ७८३)।

—ठाण० स्था १ से १०

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल (परमाणु हो या स्कंध) संख्यात तथा असंख्यात नहीं होते हैं, अनंत होते हैं। इसी प्रकार दो समय की स्थितिवाले यावत् दस समय की स्थितिवाले पुद्गल अनंत होते हैं; यावत् संख्यात समय की स्थिति-वाले पुद्गल अनंत होते हैं; यावत् असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल अनंत होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ भाव की अपेक्षा पुद्गल और संख्या

(क) एकगुणकालगाणं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ? एवं चेव, (गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता ?) एवं जाव अणंतगुणकालगा, एवं अवसेसा वि वण्ण-गंध-रस-फासा णेयव्वा जाव अणंतगुणलुक्खत्ति ।

—भग० श २५ । उ ४ । सू ४१ । पृ० ८६४

(ख) × × × एकगुणकालगा पोग्गला अनंता पन्नत्ता, एवं जाव एकगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ५८) (दुगुणकालगा) एवं जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ११८)। (तिगुणकालगा) एवं जाव तिगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता) (सू २३४) चउगुणकालगा पोग्गला अनंता जाव चउगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता (सू ३८८) (पंचगुणकालगा) जाव पंचगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ४७४) छःगुणकालगा पोग्गला जाव छगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता (सू ५४०) (सत्तगुणकालगा) जाव सत्तगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ५९३) (अट्ठगुणकालगा) जाव अट्ठगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ६६०) (नवगुणकालगा) जाव नवगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता। (सू ७०३) दसगुणकालगापोग्गला अनंता पन्नत्ता, एवं वन्नेहिं गंधेहिं, रसेहिं, फासेहिं दसगुणलुक्खा पोग्गला अनंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था १ से १०

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल (परमाणु हो या स्कंध) संख्यात तथा असंख्यात नहीं होते हैं ; अनंत होते हैं। इसी प्रकार दो गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल यावत् दस गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत होते हैं ; यावत् संख्यातगुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत होते हैं ; असंख्यातगुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् अनंतगुण कृष्णवर्णवाले अनंत पुद्गल होते हैं। इसी प्रकार नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्णवाले पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण सुगंधवाले पुद्गल (परमाणु हो ता स्कंध) संख्यात तथा असंख्यात नहीं होते हैं ; अनंत होते हैं। इसी प्रकार दो गुण सुगंधवाले पुद्गल यावत् दस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुण सुगंधवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् संख्यात गुण सुगंधवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत असंख्यातगुण सुगंधवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् अनंतगुण सुगंधवाले पुद्गल अनंत होते हैं। इसी प्रकार दुर्गंधवाले पु गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण तिक्तरसवाले पुद्गल (परमाणु हो या स्कंध) संख्यात तथा असंख्यात नहीं होते हैं ; अनंत होते हैं। इसी प्रकार दो गुण तिक्तरसवाले पुद्गल यावत् दस गुण तिक्तरसवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् संख्यातगुण तिक्तरसवाले पुद्गल अनत होते हैं यावत् असंख्यातगुण तिक्तरसवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् अनंतगुण तिक्तरसवाले पुद्गल अनत होते हैं। इसी प्रकार कटु-कषाय-आम्ल और मधुर रस वाले पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण कर्कशस्पर्शवाले पुद्गल (परमाणु हो या स्कंध) संख्यात तथा असंख्यात नहीं होते हैं ; अनंत होते हैं। इसी प्रकार दो गुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल यावत् दस गुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् संख्यातगुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल अनंत होते हैं ; यावत् असंख्यातगुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल अनंत होते हैं यावत् अनंतगुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल अनंत होते हैं। इसी प्रकार मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण स्निग्ध और रूक्ष स्पर्शवाले पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

·५ पुद्गल और युग्म संख्या

(क) पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! पुच्छा। (दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे, जाव-कलिओगे ? गोयमा ! सिय कडजुम्मे, जाव सिय कलियोगे × × ×।

धम्मत्थिकाए णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे पुच्छा ? गोयमा ! कडजुम्मे, नो तेओए, नो दावरजुम्मे, नो कलियोगे। एवं जाव अद्धासमए।

—भग० श २५। उ ४। सू ७, ८। पृ० ८६१

टीका—पुद्गलास्तिकायस्यानन्तभेदत्वेऽपि संघातभेदभाजनत्वाच्चातुर्विध्यमध्येयम् × × ×। अत एवाह उक्ता द्रव्यार्थता। अथ प्रदेशार्थता तेषामेवोच्यते "धम्मत्थि" इत्यादि। सर्वाण्यपि द्रव्याणि कृतयुग्मानि प्रदेशार्थतयाऽवस्थिता संख्यातप्रदेशत्वादवस्थिताऽनन्तप्रदेशत्वाच्चेति।

(ख) परमाणुपोग्गले णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे, तेओए, दावरजुम्मे, कलियोगे ? गोयमा ! नो कडजुम्मे, नो तेओए, नो दावरजुम्मे, कलियोगे। एवं जाव-अणंतपएसिए खंधे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुपोग्गलाणं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा—पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव-सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा, नो तेयोगा, नो दावरजुम्मा, कलियोगा। एवं जाव अणंतपए-सिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। सू ५९, ६०। पृ० ८६६-६७

पुद्गलास्तिकाय—द्रव्यरूप से—कदाचित् कृतयुग्म होता है, कदाचित् त्र्योज रूप होता है, कदाचित् द्वापरयुग्म होता है तथा कदाचित् कल्योज रूप होता है।

जिस संख्या में चार का भाग देने से पूरा-पूरा भाग जाय वह संख्या कृतयुग्म संख्या, जिसमें दो बाकी बचे वह द्वापरयुग्म संख्या, जिसमें तीन बाकी बचे वह त्र्योज संख्या तथा जिसमें एक बाकी बचे वह कल्योज संख्या है।

पुद्गलास्तिकाय की संख्या द्रव्यरूप से अनंत होती है परन्तु उसमें संघात—भेद होने के कारण उसकी अनंतता अनवस्थित होती है अतः पुद्गलास्तिकाय में द्रव्य-रूप में कृतयुग्मादि चारों राशियाँ पाई जाती है—कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज, कदाचित् द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप में पाई जाती है।

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और जीव के प्रदेश कृतयुग्म-संख्यक है क्योंकि उनके असंख्यात प्रदेश अवस्थित रहते हैं—इसी प्रकार पुद्गलास्तिकाय के अनंत प्रदेश अवस्थित होने के कारण कृतयुग्म राशि रूप होते हैं अर्थात् पुद्गलास्तिकाय का सर्वरूप से विवेचन करने से उसके अनंत प्रदेश अवस्थित रहते हैं, घटते-बढ़ते नहीं हैं। और वे अनंत प्रदेश कृतयुग्म-संख्यक होते हैं।

एक परमाणुपुद्गल-द्रव्य रूप से कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज रूप नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है परन्तु कल्योज रूप है।

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध कृतयुग्म रूप नहीं है, त्र्योज रूप नहीं है, द्वापरयुग्म रूप नहीं है परन्तु कल्योज रूप है।

परमाणुपुद्गलों का औघिक विवेचन करने से द्रव्य रूप से उनकी संख्या कदाचित् कृतयुग्म रूप, कदाचित् त्र्योजरूप, कदाचित् द्वापरयुग्म रूप तथा कदाचित् कल्योज रूप होती है।

तथा विधानादेश से (व्यक्तिगत रूप से) विवेचन करने पर द्रव्य रूप से उनकी संख्या कृतयुग्म, त्र्योज रूप, द्वापरयुग्म नहीं होती है परन्तु कल्योज रूप होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंधों यावत् अनंत प्रदेशी स्कंधों का औधिक विवेचन करने से द्रव्यरूप से उनकी संख्या कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज रूप, कदाचित् द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप होती है तथा विधानादेश से (व्यक्तिगत रूप से) विवेचन करने पर द्रव्यरूप से उनकी संख्या केवल कल्योज रूप होती है।

·६ पुद्‌गल अनन्त है

× × × जीवा अणंता अजीवा अणंता × × ×।

—सम० सू १४८

टीका—जीवपुद्‌गलानामनन्तत्वादनन्ता।

पुद्‌गल द्रव्य की अपेक्षा अनंत है।

·७ जाति अपेक्षा से पुद्‌गल अनंत है

जात्याधारानन्तभेदसंसूचनार्थं बहुवचनं (अणवः स्कन्धाश्च) क्रियते।

—तत्त्व० अ ५। सू २५ पर राजवार्तिक टीका। पद ३

यह अनंत पुद्‌गलजाति प्रकार से अनंत प्रकार के हैं।

·१६ पुद्‌गलों की पारस्परिक तुलना

·१ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा तुलना

कइविहे णं भंते ! तुल्लए पन्नत्ते ? गोयमा ! छव्विहे तुल्लए पन्नत्ते, तंजहा—दव्वतुल्लए, खेत्ततुल्लए, कालतुल्लए, भवतुल्लए, संठाणतुल्लए।

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'दव्वतुल्लए' २ ? गोयमा ! परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलस्स दव्वओ तुल्ले, परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलवइरित्तस्स दव्वओ णो तुल्ले, दुपएसिए खंधे दुपएसियस्स खंधस्स दव्वओ तुल्ले, दुपएसिए खंधे दुपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ णो तुल्ले, एवं जाव—दसपएसिए, तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियस्स, खंधस्स दव्वओ तुल्ले, तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ णो तुल्ले, एवं तुल्लअसंखेज्जपएसिए वि, एवं तुल्लअणंतपएसिए वि, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ 'दव्वतुल्लए २।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'खेत्ततुल्लए' २ ? गोयमा ! एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढस्स पोग्गलस्स खेत्तओ तुल्ले, एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढवइरित्तस्स पोग्गलस्स खेत्तस्स णो तुल्ले। एवं जाव-दसपएसोगाढ, तुल्लसंखेज्जपएसोगाढे तुल्लसंखेज्ज०, एवं तुल्लअसंखेज्ज-पएसोगाढे वि, से तेणट्ठेणं जाव—'खेत्ततुल्लए' २

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'कालतुल्लए' २ ? गोयमा ! एग-समयठिईए पोग्गले एगसमयठिइयस्स य पोग्गलस्स कालओ तुल्ले, एग-समयठिईए पोग्गले एगसमयठिईयवइरित्तस्स पोग्गलस्स कालओ णो तुल्ले, एवं जाव —दससमयट्ठिईए, तुल्लसंखेज्जसमयठिईए एवं चेव, एवं तुल्ल-असंखेज्जसमयट्ठिईए वि, से तेणट्ठेणं जाव—'कालतुल्लए २।

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'भावतुल्लए' २ ? गोयमा ! एग-गुणकालए पोग्गले एगगुणकालस्स पोग्गलस्स भावओ तुल्ले, एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालवइरित्तस्स पोग्गलस्स भावओ णो तुल्ले, एवं जाव—दसगुणकालए, एवं तुल्लसंखेज्जगुणकालए पोग्गले। एवं तुल्लअसंखेज्जगुण-कालए वि, जहा कालए एवं नीलए, लोहियए, हालिद्दे, सुक्किल्लए, एवं सुब्भिगंधे, एवं दुब्भिगंधे, एवं तित्ते, जाव महुरे, एवं कक्खडे, जाव लुक्खे।

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'संठाणतुल्लए' संठाणतुल्लए ? गोयमा ! परिमंडले परिमंडलस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले: परिमंडल-संठाणवइरित्तस्स संठाणओ णो तुल्ले, एवं वट्टे, तंसे, चउरंसे, आयए।

—भग० श १४। उ ७। सू ३, ४, ५, ६, ८। पृ० ७०३

पुद्गल की पारस्परिक तुल्यता पाँच प्रकार की होती है ; यथा—(१) द्रव्य-तुल्यता (२) क्षेत्रतुल्यता (३) कालतुल्यता (४) भावतुल्यता तथा (५) संस्थान तुल्यता।

·१ द्रव्य की अपेक्षा

एक परमाणु पुद्गल, दूसरे परमाणु पुद्गल के साथ द्रव्य से तुल्य है, किन्तु परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से व्यतिरिक्त अन्य द्विप्रदेशी स्कंधादि के साथ द्रव्य से तुल्य नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध, दूसरे द्विप्रदेशी स्कंध के साथ द्रव्य से तुल्य है, किन्तु द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से व्यतिरिक्त अन्य स्कंधों के साथ द्रव्य से तुल्य नहीं है ।

इसी प्रकार तीनप्रदेशी स्कंध यावत् दसप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी यावत् असंख्यातप्रदेशी यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध तक द्रव्य की अपेक्षा तुल्यता इसी प्रकार समझनी चाहिए ।

·२ क्षेत्र की अपेक्षा

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल, अन्य एक प्रदेशावगाढ पुद्गल के साथ क्षेत्र से तुल्य है, किन्तु एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से व्यतिरिक्त अन्य द्विप्रदेशावगाढ पुद्गलों के साथ क्षेत्र से तुल्य नहीं है ।

इसी प्रकार द्विप्रदेशावगाढ यावत् दस प्रदेशावगाढ यावत् संख्यातप्रदेशावगाढ यावत् असंख्यात-प्रदेशावगाढ पुद्गल तक क्षेत्र की अपेक्षा तुल्यता इसी प्रकार समझनी चाहिए ।

·३ काल की अपेक्षा

एक समय की स्थितिवाला पुद्गल, अन्य एक समय की स्थितिवाले पुद्गल के साथ काल से तुल्य है, किन्तु एक समय की स्थितिवाला पुद्गल एक समय की स्थितिवाले पुद्गल से व्यतिरिक्त अन्य द्विसमय आदि की स्थितिवाले पुद्गलों के साथ काल से तुल्य नहीं है ।

इसी प्रकार तुल्य द्विसमय की स्थितिवाला पुद्गल यावत् तुल्य दस समय की स्थितिवाला पुद्गल यावत् तुल्य संख्यात समय की स्थितिवाला पुद्गल यावत् तुल्य असंख्यात समय की स्थितिवाला पुद्गल तक काल की अपेक्षा तुल्यता इसी प्रकार समझनी चाहिए ।

·४ भाव की अपेक्षा

एक गुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल, अन्य एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल के साथ भाव से तुल्य है परन्तु एक गुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से व्यतिरिक्त अन्य द्विगुण कृष्णवर्णवाले आदि वर्णों के साथ भाव से तुल्य नहीं है ।

इसी प्रकार द्विगुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल यावत् दस गुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल, यावत् संख्यात गुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल यावत् असंख्यात गुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल यावत् अनंत गुण कृष्णवर्णवाला पुद्गल तक भाव की अपेक्षा तुल्यता इसी प्रकार समझनी चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार कृष्णवर्णवाले पुद्गल की भाव की अपेक्षा तुल्यता कही है— वैसे ही नील-रक्त-क्षीत-शुक्लवर्णवाले पुद्गल की भाव की अपेक्षा तुल्यता समझनी चाहिए।

इसी प्रकार सुगन्ध-दुर्गन्धवाले पुद्गल की; तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस वाले पुद्गल की तथा कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शवाले पुद्गल की भाव की अपेक्षा तुल्यता जाननी चाहिए।

·५ संस्थान की अपेक्षा

परिमंडल संस्थान, अन्य परिमंडल संस्थान के साथ तुल्य है परन्तु परिमंडल संस्थान परिमंडल संस्थान से व्यतिरिक्त अन्य वृत्तादि संस्थानों के साथ संस्थान से तुल्य नहीं है।

जिस प्रकार परिमंडल संस्थान की संस्थान की अपेक्षा तुल्यता कही है—वैसे ही वृत्त-त्र्यस्र-चतुरस्र-आयत संस्थान की संस्थान की अपेक्षा तुल्यता समझनी चाहिए।

·१७ पुद्गल और क्षेत्र

·१ पुद्गल लोकप्रमाण है

(क) धम्मो अहम्मो आगासं, कालो पुग्गलजंतवो।
एस लोगो त्ति पन्नत्तो, जिणेहिं वरदंसिहि॥

—उत्त० अ २८। गा ७। पृ० १०२८

(ख) चउहिं अत्थिकाएहिं लोग फुडे पन्नत्ते, तंजहा-धम्मत्थिकाएणं, अधम्मत्थिकाएणं, जीवत्थिकाएणं, पोग्गलत्थिकाएणं।

—ठाण० स्था ४। उ ३। सू ३३३। पृ० २४७

(ग) धम्माऽधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिए।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्ति॥

—बृद्रसं० गा २०

(घ) पोग्गलजीवणिबद्धो धम्माधम्मत्थिकायकालड्ढो।
वट्टदि आगासे जो लोगो सो सव्वकाले दु॥

प्रव० अ २। गा ३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(च) ओगाढगाढणिचिदो पोग्गलकायेहिं सव्वदो लोगो।
सुहुमेहिं बादरेहिं य णंताणंतेहिं विविहेहिं॥

— पंच० गा ६४

(छ) (पोग्गलत्थिकाए) खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते।

—भग० श २। उ १०। सू ५७। पृ० ३३४

(ज) जीवाजीवा द्रव्यमिति षट्विधं भवति लोकपुरुषोऽयम्।

—प्रशम० श्लो० २१०

टीका—जीवा अजीवा धर्माधर्माकाशपुद्गला; कालश्च षड्द्रव्याणि ×××। अत्र च जीवादीनां द्रव्याणमाधारभूतं यत्क्षेत्रं तल्लोक शब्दाभिधेयं लोकपुरुष इत्युक्तम्।

(झ) लोगस्स णं भंते! पुरच्छिमिल्ले चरिमंते किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा? ××× एवं जहा दसमसए अग्गेयी दिसा तहेव ×××। लोगस्स णं भंते! दाहिणिल्ले चरिमंते किं जीवा? एवं चेव, एवं पच्चच्छिमिल्ले वि, उत्तरिल्ले वि। लोगस्स णं भंते! उवरिल्ले चरिमंते किं जीवा-पुच्छा ×××। अजीवा जहा दसमसए तमाए तहेव निरवसेसं। लोगस्स णं भंते! हेट्ठिल्ले चरिमंते किं जीवा-पुच्छा ×××। अजीवा जहेव उवरिल्ले चरिमंते तहेव। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते किं जीवा पुच्छा ×××। एवं जहेव लोगस्स तहेव चत्तारि वि चरिमंता जाव-उत्तरिल्ले, उवरिल्ले तहेव, जहा दसमसए विमला दिसा तहेव निरवसेसं। हेट्ठिल्ले चरिमंते जहेव लोगस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते तहेव ×××। एवं जहा रयणप्पभाए चत्तारि चरमंता भणिया एवं सक्करप्पभाए वि, उवरिम हेट्ठिल्ला जहा रयणप्पभाए हेट्ठिल्ले। एवं जाव अहेसत्तमाए। एवं सोहम्मस्स वि जाव-अच्चुयस्स। गेविज्जविमाणाणं एवं चेव ×××। एवं जहा गेविज्जविमाणा तहा अणुत्तरविमाणा वि, ईसिपब्भारा वि।

—भग० श १६। उ ७। सू १ से ६। पृ० ७५१-५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ञ) पुद्गलाश्च परमाणुप्रभृतयः सर्वलोक इति।

—प्रथम० श्लो २१३। टीका

(ट) सूक्ष्मैः सूक्ष्मतरैर्लोकः स्थूलैः स्थूलतरैश्चितः।
अनंतैः पुद्गलैश्चित्रैः कुंभो धूमैरिवाभितः॥

—योसा० अधि २। श्लो २०

पुद्गल सर्वत्र लोक में है, अलोक में नहीं है। पुद्गल लोक में सर्वकाल में—अतीत-वर्तमान-भविष्यत् में होता है। सूक्ष्मपुद्गल, बादरपुद्गल, अनंतानंत विविधतावाले पुद्गलों से लोक सर्वत्रगाढा-खचाखच भरा हुआ है। अतः पुद्गल को लोक-प्रमाण कहा जाता है।

लोक के पूर्व चरमांत में, दक्षिण चरमांत में, पश्चिम चरमांत में, उत्तर चरमांत में, ऊपर के चरमांत में, नीचे के चरमांत में पुद्गल के स्कन्ध, देश, प्रदेश तथा परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

रत्नप्रभा पृथ्वी यावत् सातवीं पृथ्वी तक के पूर्व चरमांत में, दक्षिण चरमांत में, पश्चिम चरमांत में, उत्तर चरमांत में, ऊपर के चरमांत में, नीचे के चरमांत में पुद्गल के स्कंध-देश-प्रदेश-परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

सौधर्म देवलोक यावत् अच्युत देवलोक तक, ग्रैवेयक विमान, अनुत्तर विमान तथा ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के पूर्व चरमांत में, दक्षिण चरमांत में, पश्चिम चरमांत में, उत्तर चरमांत में, ऊपर के चरमांत में, नीचे के चरमांत में पुद्गल के स्कंध-देश-प्रदेश-परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

·२ पुद्गल लोक में सर्व दिशाओं में सर्वत्र है

(क) लोगागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा अजीवदेसा, अजीवप्पएसा ? × × ×। **जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—रूवी य अरूवी य, जे रूवी ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला।**

—भग० श २। उ १०। सू ६६। पृ० ४३५
—भग० श २०। उ २। सू २

लोए णं भंते ! किं जीवा ? जहा बिइयसए अत्थिउद्देसए लोगागासे।

—भग० श ११। उ १०। सू १३। पृ० ६३१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकाकाश—लोक में पुद्गल के स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

(ख) इंदा णं भंते ! दिसा किं १ जीवा, २ जीवदेसा, ३ जीवपएसा, ४ अजीवा, ५ अजीवदेसा, ६ अजीवपएसा ? × × ×। जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा य। जे रूविअजीवा ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला। (सू ६)

अग्गेयी णं भंते ! दिसा × × × जे रूविअजीवा ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—खंधा जाव परमाणुपोग्गला (सू ७)

जमा णं भंते ! दिसा किं जीवा ? जहा इंदा तहेव निरवसेसा। नेरई य जहा अग्गेयी। वारुणी जहा इंदा। वायव्वा जहा अग्गेयी। सोमा जहा इंदा। ईसाणी जहा अग्गेयी। विमलाए जीवा जहा अग्गेयी ए। अजीवा जहा इंदा। एवं तमाए वि।

—भग० श १० उ १। सू ६ से ८। पृ० ६१३-१४

दशों दिशाओं में पुद्गल के स्कंध, देश, प्रदेश तथा परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

·३ पुद्गल के आकाशप्रदेश का अवगाहन

(क) धम्मत्थिकाए णं भंते ! किं ओगाढे, अणोगाढे ? गोयमा ! ओगाढे, नो अणोगाढे। जइ ओगाढे किं संखेज्जपएसोगाढे, असंखेज्जपएसोगाढे, अणंतपएसोगाढे ? गोयमा ! नो संखेज्जपएसोगाढे, असंखेज्जपएसोगाढे, नो अणंतपएसोगाढे। जइ असंखेज्जपएसोगाढे किं कडजुम्मपएसोगाढ पुच्छा। गोयमा ! कडजुम्मपएसोगाढ नो तेओगपएसोगाढ, नो दावरजुम्मपएसोगाढे, नो कलिओगपएसोगाढ। एवं पोग्गलत्थिकाये।

—भग० श २५। उ ४। सू १० से १२। पृ० ८६१

टीका—'धम्मत्थिकाए" इत्यादि (असंखेज्जपएसोगाढे त्ति) असंख्यातेषु लोकाऽऽकाशप्रदेशेष्ववगाढोऽसौ, लोकाऽऽकाशप्रमाणत्वात्तस्येति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(कडजुम्मपएसोगाढे त्ति) लोकस्यावस्थिता संख्येयप्रदेशत्वेन कृतयुग्म-प्रदेशता, लोकाऽऽकाशप्रमाणत्वेन च धर्मास्तिकायस्यापि कृतयुग्मतैव। एवं सर्वास्तिकायानां, लोकावगाहित्वात्तेषाम् × × ×।

(ख) एक प्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम्।

—तत्त्व० अ ५। सू १४

(ग) अप्रदेशसंख्येयासंख्येयानन्तप्रदेशानां पुद्गलानामेकादिष्वाकाश-प्रदेशेषु भाज्योऽवगाहः भाज्यो विभाष्यो विकल्प्य इत्यनर्थान्तरम्। तद्यथा-परमाणोरेकस्मिन्नेव प्रदेशे, द्व्यणुकस्यैकस्मिन् द्वयोश्च, त्र्यणुकस्यैकस्मिन् द्वयोस्त्रिषु च, एवं चतुरणुकादीनां संख्येयासंख्येयप्रदेशस्यैकादिषु संख्येयेषु असंख्येयेषु च, अनंतप्रदेशस्य च।

— तत्त्व० अ ५। सू १४। भाष्य

(घ) एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे परमाणोरवगाहः द्वयोरेकत्रोभयत्र च बद्धयोरबद्धयोश्च। त्रयाणामप्येकत्र द्वयोस्त्रिषु च बद्धानामबद्धानां च। एवं संख्येयासंख्येयानन्तप्रदेशानां स्कंधानामेकसंख्येयासंख्येयप्रदेशेषु लोखाकाशेऽवस्थानं प्रत्येतत्वम् × × ×। अवगाहनस्वभावत्वात् सूक्ष्म-परिणामाच्च मूर्तिमतामप्यवगाहो न विरुध्यते एकापवरके अनेकदीप-प्रकाशावस्थानवत्।

— सर्व० अ ५। सू १४। पृ० २७९

(ङ) व्योमैकाशादिषु ज्ञेया पुद्गलानामवस्थितिः।

—योसा० अधि २। श्लो १३

(च) अहेलोगखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा ? एवं जहा इंदा दिसा तहेव निरवसेसं भाणियव्वं, जाव अद्धासमए। तिरियलोगखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा ? एवं चेव, एव उड्ढलोगखेत्तलोए वि × × ×।

—भग० श ११। उ १०। सू ११-१२। पृ० ६३१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छ) अहेलोगखेत्तलोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा ? × × ×। जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा-रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा य, रूवी तहेव × × ×। तिरियलोगखेत्तलोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा ? एवं जहा अहेलोगखेत्तलोगस्स तहेव, एवं उड्ढलोगखेत्तलोगस्स वि × × ×।

—भग० श ११ । उ १० । सू १५-१६ । पृ० ६३२

(ज) लोगस्स जहा अहेलोगखेत्तलोगस्स एगंमि आगासपएसे।

—भग० श ११ । उ १० । सू १६ । पृ० ६३२

पुद्गलास्तिकाय धर्मास्तिकाय की तरह अवगाहित होकर रहती है और असंख्यात-प्रदेश अवगाहित होकर रहती है क्योंकि लोकाकाश के प्रदेश असंख्यात है। पुद्गलास्तिकाय लोकाकाश के केवल संख्यातप्रदेश को ही अवगाहित करके नहीं रहती है, लोकाकाश के सर्वप्रदेशों में अवगाहित है। वह आकाश के अनंतप्रदेशों में अवगाहित होकर नहीं है। जब सर्व लोकाकाश को अवगाहित करती है तब इसकी प्रदेश संख्या कृतयुग्म होती है परन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म यथा कल्योज रूप प्रदेश संख्या नहीं होती है।

पुद्गलों का अवगाह लोकाकाश के एक प्रदेश या अधिक असंख्यात तक में विकल्प से होता है।

एक परमाणुपुद्गल का एक ही प्रदेश में अवगाह होता है। बंध को प्राप्त हुए या बंध को नहीं प्राप्त हुए दो परमाणु का आकाश के एक प्रदेश में या दो प्रदेश में अवगाह होता है ; बंध को प्राप्त हुए या बंध को नहीं प्राप्त हुए तीन परमाणु का आकाश के एक प्रदेश में, दो या तीन प्रदेश में अवगाह होता है।

इसी प्रकार चार प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी यावत् संख्यात प्रदेशी पुद्गल स्कंधों के विषय में समझना चाहिए। इनका अवगाह एक से लेकर अधिक से अधिक अपनी प्रदेश संख्या तक विकल्प से होता है। असंख्यातप्रदेशी तथा अनंतप्रदेशी स्कंधों का आकाश के एक प्रदेश में यावत् दस प्रदेश में यावत् संख्यातप्रदेश में यावत् असंख्यातप्रदेश में विकल्प से अवगाह होता है।

अवगाहन स्वभाव होने से तथा सूक्ष्म परिणमन होने से एक स्थान पर पुद्गलों का अवगाह हो जाता है। जैसे एक ढक्कन में अनेक दीपकों का प्रकाश रह जाता है वैसे ही मूर्तमान पुद्गलों का एक जगह अवगाह विरोध को प्राप्त नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्लेषण—चार प्रदेशी स्कंध का आकाश के एक प्रदेश में, दो, तीन या चार प्रदेश में अवगाह हो सकता है।

संख्यातप्रदेशी स्कंध का आकाश के एक प्रदेश में, दो, तीन, चार यावत् संख्यात-प्रदेश में अवगाह हो सकता है।

असंख्यातप्रदेशी स्कंध का आकाश के एक प्रदेश में, दो, तीन, चार यावत् संख्यातप्रदेश में यावत् असंख्यातप्रदेश में अवगाह हो सकता है।

अनंतप्रदेशी स्कंध का आकाश के एक प्रदेश में, दो, तीन, चार यावत् संख्यात-प्रदेश में यावत् असंख्यातप्रदेश में अवगाह हो सकता है।

अधोलोक, तिर्यग्लोक तथा ऊर्ध्वलोक में पुद्गल के स्कंध, देश, प्रदेश तथा परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

लोक के एक आकाशप्रदेश में, अधोलोक के एक आकाशप्रदेश में, तिर्यग्लोक के एक आकाशप्रदेश में तथा ऊर्ध्वलोक के एक आकाशप्रदेश में पुद्गल के स्कंध-देश-प्रदेश तथा परमाणु—चारों भेद पाये जाते हैं।

·४ पुद्गल का लोक में अभाव

(क) अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव ? गोयमा ! नो जीवा, जाव-नो अजीवप्पएसा, एगे अजीव दव्वदेसे।

—भग० श २। उ १०। सू ६६। पृ० ४३५

टीका—'एगे अजीवदव्वदेसे' त्ति अलोकाकाशस्य देशत्वं लोकालोक-रूपाकाशद्रव्यस्य भागरूपत्वाद्।

(ख) अलोए णं भंते ! किं जीवा ? एवं जहा अत्थिकायउद्देसए अलोगागासे, तहेव निरवसेसं जाव अणंतभागूणे।

—भग० श ११। उ १०। सू १४। पृ० ६३२

(ग) जीवा पुग्गलकाया धम्माधम्मा य लोगदोणण्णा।
तत्तो अण्णमण्णं आयासं अंतवदिरित्त॥

—पंच० गा ९१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अलोकाकाश—अलोक में पुद्गल नहीं है, अन्य द्रव्य भी नहीं है ; केवल आकाश द्रव्य का एक देश है अर्थात् लोकाकाश का भाग बाद देकर जितना आकाशास्तिकाय का क्षेत्र है उसको अलोकाकाश कहते हैं ; वह आकाश द्रव्य का एक देश है क्योंकि उससे लोक क्षेत्र बाद है। इस अलोक में पुद्गल द्रव्य का कोई भेद नहीं है।

नोट—अलोक में आकाश का देश, प्रदेश है। परन्तु स्कन्ध नहीं है।

·१८ पुद्गल और प्रदेश

·१ पुद्गल के प्रदेश की अनंतता

(क) आगासत्थिकाए वि, जीवत्थिकाए-पोग्गलत्थिकाए × × ×। तिण्णं वि पएसा अणंता भाणियव्वा।

—भग० श २। उ १०। सू ६२। पृ० ४३४

(ख) संख्येयाऽसंख्येयाश्च पुद्गलानाम्।

—तत्त्व० अ ५। सू १०

भाष्य-संख्येया असंख्येया-अनंताश्च पुद्गलानां प्रदेशा भवन्ति-अनन्ता इति वर्तते।

नाणोः

—तत्त्व० अ ५। सू ११

भाष्य अणोः प्रदेशा न भवन्ति।

(ग) 'च' शब्दादनन्ताश्चेत्यनुकृष्यते। कस्यचित्पुद्गलद्रव्यस्य द्व्यणुकादेः संख्येयाः प्रदेशाः कस्यचिदसंख्येया अनंताश्च।

—सर्वं० अ ५। सू १०। पृ० २७५

(घ) मूत्ते तिविहपदेसा।

—बृद्रसं० अधि १। गा २५। उत्तरार्ध

टीका—"मूत्ते तिविहपदेसा" मूर्त्ते पुद्गलद्रव्ये संख्यातासंख्यातानन्ताणूनां पिण्डाः स्कंधास्त एव त्रिविधाः प्रदेशा भण्यन्ते।

(ङ) जीवा पोग्गलकाया धम्माऽधम्मा पुणो य आगासं।
सपदेसेहिं असंखा णत्थि पदेस त्ति कालस्स॥

—प्रव० अ २। गा ४३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—स्कंधाकारपरिणतपुद्गलानां तु संख्येयासंख्येयानन्तप्रदेशत्वम् । किंतु पुद्गलव्याख्यानेन प्रदेशशब्देन परमाणवो ग्राह्या, न च क्षेत्रप्रदेशाः । कस्मात् पुद्गलानामनन्तप्रदेशक्षेत्रेऽवस्थानाभावादिति । परमाणो र्व्यक्ति-रूपेणैकप्रदेशत्वं शक्तिरूपेणोपचारेण बहुप्रदेशत्वम् ।

(च) व्योमानन्त्यप्रदेशं पुद्गलद्रव्यं च ।

—प्रशम० श्लो २१४ । टीका

(छ) प्रदेशा नभसोऽनंता अनंतानंतमानकाः ।
पुद्गलानां जिनैरुक्ताः परमाणुरनंशकः ।।

योसा० अधि २ । श्लो ११

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश—ये पाँच द्रव्य सप्रदेशी है तथा काल-द्रव्य अप्रदेशी है ।

स्कंध रूप में परिणत पुद्गल संख्यात-असंख्यात-अनंतप्रदेशी होते हैं । पुद्गल के प्रदेश शब्द से परमाणु को ग्रहण करना चाहिए ; परन्तु क्षेत्र-प्रदेश का नहीं । व्यक्तिगत भाव की अपेक्षा परमाणु एक प्रदेशी है अतः अप्रदेशी कहा जाता है तथापि परमाणु में मिलने की शक्ति होने से उपचार से उसे बहुप्रदेशी कहा जाता है अर्थात् दो परमाणु से लेकर संख्यात, असंख्यात, अनंत परमाणुओं के स्कंध तक प्रदेश भेद होने के कारण संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी तथा अनंतप्रदेशी जानना चाहिए ।

·२ पुद्गल के प्रदेश और द्रव्य-द्रव्यदेशत्व

एगे भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसे किं दव्वं, दव्वदेसे, दव्वाइं, दव्वदेसा ; उदाहु दव्वं च दव्वदेसे य, उदाहु दव्वं च दव्वदेसा य, उदाहु दव्वाइं च, दव्वदेसे य, उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसा य ? गोयमा ! सिय दव्वं, सिय दव्व-देसे, णो दव्वदेसा, णो दव्वं च दव्वदेसे य, जाव णो दव्वाइं च दव्वदेसा य ।

दो भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं, दव्वदेसे-पुच्छा । गोयमा ! सिय दव्वं, सिय दव्वदेसे, सिय दव्वाइं, सिय दव्वदेसा ; सिय दव्वं च दव्वदेसे य णो दव्वं च दव्वदेसा य ; सेसा पडिसेहेयव्वा ।

तिण्णि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं, दव्वदेसे-पुच्छा । गोयमा ! सिय दव्वं, सिय दव्वदेसे, एवं सत्त भंगा भाणियव्वा, जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसे य, णो दव्वाइं च दव्वदेसा य ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चत्तारि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं—पुच्छा। गोयमा ! सिय दव्वं, सिय दव्वदेसे ; अट्ठ वि भंगा भाणियव्वा, जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य, जहा चत्तारि भणिया, एवं पंच, छ, सत्त, जाव असंखेज्जा।

अणंता भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं ? एवं चेव, जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा च।

—भग० श ८। उ १०। सू १७ से २१। पृ० ५७१-२

टीका—पुद्गलास्तिकाय एकाणुकाऽऽदिपुद्गलराशेः प्रदेशो निरंशोंऽशः पुद्गलास्तिकायप्रदेशः परमाणुः द्रव्यं गुणपर्याययोगिद्रव्यदेशो द्रव्यावयवः। एवमेकत्व बहुत्वाभ्यां प्रत्येक विकल्पाश्चत्वारो द्विकसंयोगा अपि चत्वार एवति प्रश्नः। उत्तरं तु स्याद् द्रव्यं द्रव्यान्तरासंबंधे सति, स्याद् द्रव्यदेशो द्रव्यान्तरसंबंधे सति, शेषविकल्पानां तु प्रतिषेधः परमाणुरेकत्वेन बहुत्वस्य द्विकसंयोगस्य चाऽभावादिति।

दो भंते ! इत्यादि इहाऽष्टासु भंगकेषु मध्ये आद्याः पंच भवन्ति, न शेषास्तत्र द्वौ प्रदेशौ स्याद् द्रव्यं, कथं ?, यदा तौ द्विप्रादेशिकस्कंधतया परिणतौ तदा द्रव्यं १, यदा तु द्वयणुकस्कंधभावगतावेव तौ द्रव्यान्तरसंबंधमुपगतौ तदा द्रव्यदेशः २, यदा तु तौ द्वावपि भेदेन व्यवस्थितौ तदा द्रव्ये ३, यदा तु तावेव द्वयणुकस्कंधतामनापद्य द्रव्यान्तरेण संबंधमुपगतौ तदा द्रव्यदेशौ ४, यदा पुनस्तयोरेकः केवलतया स्थितो, द्वितीयश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धस्ततो, द्रव्यं च द्रव्यदेश्चेति पंचमः ५, शेषविकल्पानां तु प्रतिषेधोऽसंभवादिति।

तिण्णि भंते ! इत्यादि त्रिषुप्रदेशेष्वष्टमविकल्पवर्ज्जाः सप्त विकल्पाः संभवन्ति। तथाहि यदा त्रयोऽपि त्रिप्रादेशिकस्कंधतया परिणतास्तदा द्रव्यं १ यदा तु ते त्रिप्रादेशिकस्कंधतापरिणता एव द्रव्यान्तरसंबंधमुपगतास्तदा द्रव्यदेशः २, यदा पुनस्ते त्रयोऽपि भेदेन व्यवस्थिता द्वौ वा द्वयणुकीभूतावेकस्तु केवल एव स्थितस्ततः (दव्वाइं त्ति ३) यदा तु ते त्रयोऽपि स्कंधताम् गता एव द्वौ वा द्वयणुकीभूतावेकस्तु केवल एवमित्येव द्रव्यान्तरेण संबंद्धास्तदा (दव्वदेसा इति ४), यदा तु तेषां द्वौ द्वयणुकतया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणतावेकश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धोऽथवा एकः केवल एव स्थितो द्वौ तु द्वयणुकतया परिणतस्य द्रव्यान्तरेण संबद्धौ तदा (दव्वे च दव्वदेसे य त्ति ५) यदा तु तेषामेकः केवल एव स्थितो द्वौ च भेदेन द्रव्यान्तरेण संबद्धौ तदा (दव्वं च दव्वदेसा य त्ति ६), यदा पुनस्तेषां द्वौ भेदेन स्थितावेकश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धस्तदा (दव्वाइं च दव्वदेसे य त्ति ७) अष्टम—विकल्पस्तु न संभवति, उभयत्र त्रिषु प्रदेशेषु बहुवचनाभावात् ।

प्रदेशचतुष्टयादौ त्वष्टमोऽपि संभवत्युभयत्राऽपि बहुवचनसद्भावाविति ।

एक, द्वय अणुक आदि पुद्गलों की राशि-पिण्ड-स्कंध के निरंश-अविभाज्य अंश को पुद्गलास्तिकाय का प्रदेश कहते हैं ।

परमाणु को द्रव्य कहते हैं क्योंकि वह गुणपर्याययुक्त होता है लेकिन जब वह परमाणु किसी स्कंध का अंश होता है तब द्रव्य देश— द्रव्य का अवयव कहलाता है । स्वतंत्र परमाणु अप्रदेशी कहलाता है लेकिन किसी स्कध में जड़ित परमाणु प्रदेश कहलाता है ।

द्रव्य और द्रव्य देश के एक वचन तथा बहुवचन की अपेक्षा चार विकल्प बनते हैं तथा द्रव्य और द्रव्यदेश के युगल के भी एकवचन-बहुवचन की अपेक्षा चार विकल्प बनते हैं । यथा—

१—द्रव्य है ।

२—द्रव्य देश हैं ।

३—द्रव्य (बहुवचन) हैं ।

४—द्रव्य देश (बहुवचन) हैं ।

५—एक द्रव्य और एक द्रव्य देश है ।

६—एक द्रव्य और बहुत द्रव्य देश हैं ।

७—बहुत द्रव्य तथा एक द्रव्य देश है ।

८—बहुत द्रव्य तथा बहुत द्रव्य देश हैं ।

पुद्गलास्तिकाय के एक प्रदेश में प्रथम के दो भंग पाये जाते हैं । यद्यपि पुद्गलास्तिकाय के प्रदेश के द्रव्य और द्रव्य देश के एक वचन और बहुवचन की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपेक्षा चार विकल्प होते हैं तथापि पुद्गलास्तिकाय के एक प्रदेश में चार विकल्प नहीं होते हैं। केवल प्रथम के दो विकल्प होते हैं क्योंकि (प्रदेश) परमाणु एक है अतः उसमें द्विकसंयोगादि रूप बहुत्व का अभाव है।

पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश में प्रथम के पाँच भंग पाये जाते हैं। पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश—(१) जब वे दो प्रदेश द्विप्रदेशी स्कंध रूप में परिणत होते हैं तब उन्हें एक द्रव्य कहते हैं। २) जब वे द्विप्रदेशी स्कंधभाव को उपगत होकर दूसरे द्रव्य के साथ सम्बन्ध को प्राप्त हो जाते हैं तब उन्हें एक द्रव्य कहते हैं। (३) जब वे अलग-अलग व्यवस्थित होकर रहते हैं तब वे दो द्रव्य हैं अर्थात् बहुत द्रव्य हैं। (४) जब वे द्विप्रदेशी स्कंधभाव को प्राप्त न कर—दूसरे द्रव्य के साथ सम्बन्ध को प्राप्त हो जाते हैं तब उन्हें दो द्रव्य देश कहते हैं अर्थात् बहुत द्रव्य देश कहते हैं। (५) जब उनमें से एक प्रदेश अकेला स्थित होता है तथा दूसरा प्रदेश दूसरे द्रव्य के साथ सम्बन्धित हो जाता है तब एक द्रव्य है और दूसरा एक द्रव्य देश है। (६) शेष विकल्प सम्भव नहीं है अतः उनका प्रतिषेध किया गया है।

पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश में प्रथम के सात भंग पाये जाते हैं—(१) इनमें आंठवां भंग नहीं पाया जाता है क्योंकि तीन प्रदेशों में दोनों पक्ष में बहुवचन का अभाव है, उनके एक तरफ दो प्रदेश तथा एक तरफ एक प्रदेश ही सम्भव है अतः 'दव्वाइ'' तथा 'दव्वदेसा' भंग नहीं बन सकता है।

पुद्गलास्तिकाय के चार प्रदेशों, पाँच, छह, सात, आठ, नो, दस, संख्यात, असंख्यात तथा अनंत प्रदेशों में आठों भंग पाये जाते हैं।

·१९ पुद्गल का सप्रदेशत्व-अप्रदेशत्व

·१ द्रव्य अपेक्षा

·२ क्षेत्र अपेक्षा

·३ काल अपेक्षा

·४ भाव अपेक्षा

(क) दव्वादेसेण वि मे अज्जो ! सव्वे पोग्गला सपएसा वि, अप्पएसा वि अणंता, खेत्तादेसेण वि एवं चेव, कालादेसेण वि, भावादेसेण वि एवं चेव।

—भग० श ५। उ ८ सू २। पृ० ४८७

द्रव्य की अपेक्षा सर्व पुद्गल सप्रदेशी भी होते हैं, अप्रदेशी भी होते हैं, द्रव्य से सप्रदेशी तथा अप्रदेशी दोनों प्रकार के पुद्गल अनंत होते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सब पुद्गल सप्रदेशी भी होते हैं, अप्रदेशी भी होते हैं ; क्षेत्र से सप्रदेशी तथा अप्रदेशी दोनों प्रकार के पुद्गल अनंत होते हैं। काल की अपेक्षा भी सब पुद्गल सप्रदेशी भी होते हैं, अप्रदेशी भी होते हैं ; काल से सप्रदेशी तथा अप्रदेशी दोनों प्रकार के पुद्गल अनंत होते हैं तथा भाव की अपेक्षा भी सब पुद्गल सप्रदेशी भी होते हैं, अप्रदेशी भी होते हैं। भाव से सप्रदेशी तथा अप्रदेशी दोनों प्रकार के पुद्गल अनंत होते हैं।

परमाणुपुद्गल द्रव्य से अप्रदेशी होता है, द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल से लेकर अनंत-प्रदेशी स्कंध पुद्गल सप्रदेशी होते हैं। एक आकाशप्रदेश में अवस्थित पुद्गल क्षेत्र से अप्रदेशी होता है अनेक आकाशप्रदेश में अवस्थित पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेशी होता है। एक समय की स्थितिवाला पुद्गल काल से अप्रदेशी होता है, अनेक समय की स्थितिवाला पुद्गल काल से सप्रदेशी होता है। एक गुण काला पुद्गल भाव से अप्रदेशी होता है, अनेक गुण काला पुद्गल भाव से सप्रदेशी होता है। इसी प्रकार एक गुण वर्णवाला, एक गुण रसवाला, एक गुण गंधवाला तथा एक गुण स्पर्शवाला पुद्गल उस-उस अपेक्षा से भाव से अप्रदेशी होता है, अनेक गुणवर्णवाला, अनेक गुण रस-वाला, अनेक गुण गंधवाला तथा अनेक गुण स्पर्शवाला पुद्गल उस-उस अपेक्षा से भाव से अप्रदेशी होता है।

(ख) जे दव्वओ अपएसे से खेत्तओ णियमा अपएसे, कालओ सिय सपएसे, सिय अपएसे ; भावओ सिय सपएसे, सिय अपएसे, जे खेत्तओ अपएसे से दव्वओ सिय सपएसे, सिय अपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए, जहा खेत्तओ एवं कालओ, भावओ।

—भग० श ५। उ ८। सू २। पृ० ४८७

जो पुद्गल द्रव्य से अप्रदेशी है वह क्षेत्र से नियम से अप्रदेशी है, वह काल से कदाचित् सप्रदेशी है, कदाचित् अप्रदेशी है तथा वह भाव से कदाचित् सप्रदेशी है, कदाचित् अप्रदेशी है। द्रव्य से अप्रदेशी पुद्गल नियम से क्षेत्र का एक ही प्रदेश अवगाहन कर सकता है, अनेक क्षेत्र प्रदेश का अवगाहन नहीं कर सकता है। वह द्रव्य से अप्रदेशी पुद्गल काल से एक समय की स्थितिवाला भी होता है, अनेक समय की स्थितिवाला भी होता है। वह द्रव्य से अप्रदेशी पुद्गल भाव से एक गुणवाला भी होता है, अनेक गुण भाववाला भी होता है।

जो पुद्गल क्षेत्र से अप्रदेशी है वह द्रव्य से कदाचित् सप्रदेशी है, कदाचित् अप्रदेशी है ; वह क्षेत्र से अप्रदेशी पुद्गल काल से कदाचित् सप्रदेशी है, कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्रदेशी है ; वह क्षेत्र से अप्रदेशी पुद्गल भाव से कदाचित् सप्रदेशी है, कदाचित् अप्रदेशी है। एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करने वाले पुद्गल द्रव्य से अप्रदेशी अर्थात परमाणु भी हो सकते हैं, द्रव्य से सप्रदेशी अर्थात स्कंध भी हो सकते हैं। एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करने वाले पुद्गल काल से एक समय की स्थितिवाले भी होते हैं, अनेक समय की स्थितिवाले भी होते हैं। एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करने वाले पुद्गल भाव से एक गुणभाव वाले भी होते हैं, अनेक गुण भाव वाले भी होते हैं।

काल से अप्रदेशी पुद्गल अर्थात् एक समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य से कदाचित् सप्रदेशी अर्थात् स्कंध होता है, कदाचित् अप्रदेशी अर्थात् परमाणु होता है। वह काल से अप्रदेशी पुद्गल क्षेत्र से कदाचित् सप्रदेशी अर्थात् अनेक आकाश-प्रदेश का अवगाहन करने वाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी अर्थात् एक आकाश-प्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है तथा वह काल से अप्रदेशी पुद्गल भाव से कदाचित् सप्रदेशी अर्थात् अनेक गुणभाववाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी अर्थात् एक गुणभाववाला होता है।

भाव से अप्रदेशी पुद्गल अर्थात् एक गुण भाववाले पुद्गल द्रव्य से कदाचित् सप्रदेशी अर्थात् स्कंध होता है, कदाचित् अप्रदेशी अर्थात् परमाणु होता है। वह भाव से अप्रदेशी पुद्गल क्षेत्र से कदाचित् सप्रदेशी अर्थात् अनेक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी अर्थात् एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करने वाला होता है। वह भाव से अप्रदेशी पुद्गल काल से कदाचित् सप्रदेशी अर्थात् अनेक समय की स्थितिवाला भी होता है, कदाचित् अप्रदेशी अर्थात् एक समय की स्थितिवाला भी होता है।

(ग) जे दव्वओ सपएसे से खेत्तओ सिय सपएसे, सिय अपएसे ; एवं कालओ, भावओ वि। जे खेत्तओ सपएसे से दव्वओ णियमा सपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए, जहा दव्वओ तहा कालओ, भावओ वि।

—भग० श ५। उ ८। सू २। पृ० ४८७

जो पुद्गल द्रव्य से सप्रदेशी है अर्थात् स्कंध पुद्गल है वह क्षेत्र से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक आकाशप्रदेश का अवगाहन करने वाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है। वह काल से कदाचित् सप्रदेशी अनेक समय की स्थितिवाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक समय की स्थितिवाला, होता है। वह भाव से कदाचित् सप्रदेशी अनेक गुण भाववाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक गुण भाववाला होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेशी है अर्थात् अनेक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला है वह द्रव्य से नियम से सप्रदेशी स्कंध पुद्गल है। वह काल से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक समय की स्थितिवाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक समय की स्थितिवाला होता है। वह भाव से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक गुण भाववाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक गुण भाववाला होता है।

जो पुद्गल काल से सप्रदेशी है अर्थात् अनेक समय की स्थितिवाला है वह द्रव्य से कदाचित् सप्रदेशी स्कंध होता है, कदाचित् अप्रदेशी परमाणु होता है। वह काल से सप्रदेशी पुद्गल क्षेत्र से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है। वह काल से सप्रदेशी, पुद्गल भाव से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक गुण भाववाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक गुण भाववाला होता है।

जो पुद्गल भाव से सप्रदेशी है अर्थात् अनेक गुण भाववाला है वह द्रव्य से कदाचित् सप्रदेशी स्कंध होता है, कदाचित् अप्रदेशी परमाणु होता है। वह भाव से सप्रदेशी पुद्गल क्षेत्र से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक आकाशप्रदेश का अवगाहन करनेवाला होता है। वह भाव से सप्रदेशी पुद्गल काल से कदाचित् सप्रदेशी, अनेक समय की स्थितिवाला होता है, कदाचित् अप्रदेशी, एक समय की स्थितिवाला होता है।

·२० पुद्गलों की स्पर्शना

परमाणुपोग्गले णं भंते ! परमाणुपोग्गलं फुसमाणे किं १ देसेणं देसं फुसइ, २ देसेणं देसे फुसइ, ३ देसेणं सव्वं फुसइ, ४ देसेहिं देसं फुसइ, ५ देसेहिं देसे फुसइ, ६ देसेहिं सव्वं फुसइ, ७ सव्वेणं देसं फुसइ, ८ सव्वेणं देसे फुसइ, ९ सव्वेणं सव्वं फुसइ ? गोयमा ! १ णो देसेणं देसं फुसइ, २ णो देसेणं देसे फुसइ, ३ णो देसेणं सव्वं फुसइ, ४ णो देसेहिं देसं फुसइ, ५ णो देसेहिं देसे फुसइ, ६ णो देसेहिं सव्वं फुसइ, ७ णो सव्वेणं देसं फुसइ; ८ णो सव्वेणं देसे फुसइ, ९ सव्वेणं सव्वं फुसइ।

—भग० श ५ । उ ७ । सू १३ । पृ० ४८३

एवं परमाणुपोग्गले दुप्पएसियं फुसमाणे सत्तमणवमेहिं फुसइ।

परमाणुपोग्गले तिप्पएसियं फुसमाणे णिपच्छिमएहिं तिहिं फुसइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहा परमाणुपोग्गले तिप्पएसियं फुसाविओ एवं फुसावेयव्वो जाव-अणंतपएसिओ।

दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे परमाणुपोग्गलं फुसमाणे पुच्छा ! तइय-नवमेहिं फुसइ, दुप्पएसिओ दुप्पएसियं फुसमाणो पढम-तइय-सत्तम-नवमेहिं फुसइ, दुप्पएसिओ तिप्पएसियं फुसमाणो आइल्लएहि य, पच्छिल्ल-एहि य तिहिं फुसइ, मज्झिमएहिं तिहिं विपडिसेहेयव्वं, दुप्पएसिओ जहा तिप्पएसियं फुसाविओ एवं फुसावेअव्वो जाव अणंतपएसियं।

तिपएसिए णं भंते ! खंधे परमाणुपोग्गलं फुसमाणे पुच्छा ? तइय-छट्ठ-नवमेहिं फुसइ, तिपएसिओ दुपएसियं फुसमाणो पढमएणं, तइएणं, चउत्थ-छट्ठ-सत्तम-नवमेहिं फुसइ, तिपएसिओ तिपएसिअं फुसमाणो सव्वेसु वि ठाणेसु फुसइ।

जहा तिपएसिओ तिपएसिअं फुसाविओ एवं तिप्पएसिओ जाव-अणंत-पएसिएणं संजोएयव्वो।

जहा तिपएसिओ एवं जाव—अणंतपएसिओ भाणिअव्वो।

—भग० श ५। उ ७। सू १३, १४, १५। पृ० ४८३-८४

टीका—'परमाणुपोग्गले णं भंते !' इत्यादि, 'किं देसेणं देसं' इत्यादयो नव विकल्पाः, तत्र देशेन स्वकीयेन, देशं तदीयं स्पृशति, देशेन इत्यनेन देशम्, देशान्, सर्वम् इत्येवंशब्दत्रयपरेण त्रयः, एवं देशैरित्यनेन देशम्, देशान् [सर्वम्-३] सर्वेण इत्यनेन च त्रय एवेति। स्थापना—

१—देशेन देवम् ; ४—देशैः देशम् ; ७—सर्वेण देशम्।
२—देशेन देशान् ; ५—देशैः देशान् ; ८—सर्वेण देशान्।
३—देशेन सर्वम् ; ६—देशैः सर्वम् ९—सर्वेण सर्वम्।

अत्र च 'सर्वेण सर्वम्' इत्येक एव घटते, परमाणोर्निरंशत्वेन शेषाणाम् असंभवात्, ननु यदि 'सर्वेण सर्वं स्पृशति' इत्युच्यते तदा परमाण्वोः एकत्वा-ऽऽपत्तेः कथमपराऽपरपरमाणुयोगेन घटादिस्कंधनिवृत्तिरिति ? अत्रोच्यते—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'सर्वेण सर्वं स्पृशति' इतिकोऽर्थ.स्वात्मना सौ अन्योऽन्यस्य लगतः, न पुनरर्धाद्यंशेनअर्द्धादिदेशव्य तयोरभावात्, घटाद्यभावाऽऽपत्तिस्तु तदैव प्रसज्येत यदा तयोरेकत्वाऽऽपत्तिः, न च तयोः, सा स्वरूपभेदात्। 'सत्तम-नवमेहिं फुसइ, त्ति 'सर्वेण देशम्' 'सर्वेण सर्वम्' इत्येताभ्याम्—इत्यर्थः, तत्र यदा द्विप्रदेशिकः प्रदेशद्वयाऽवस्थितो भवति तदा तस्य परमाणुः 'सर्वेण देशं स्पृशति,' परमाणोः तद्देशस्यैव विषयत्वात्, यदा तु द्विप्रदेशिकः परिणाम-सौक्ष्म्याद् एक प्रदेशस्थो भवति तदा तं परमाणुः 'सर्वेण सर्वं स्पृशति' इत्युच्यते। 'निपच्छिमएहिं तिहिं फुसइ' त्ति त्रिप्रदेशिकम् असौ स्पर्शस्त्रिभिरन्त्यैः स्पृशति, तत्र यदा त्रिप्रदेशिकः प्रदेशत्रयस्थितो, भवति तदा तस्य परमाणुः—'सर्वेण देशं स्पृशति, परमाणोस्तद्देशस्यैव विषयत्वात्। यदा तु तस्यैकत्र प्रदेशे द्वौ प्रदेशौ, अन्यत्र एकोऽवस्थितः स्यात् तदा एकप्रदेशस्थित-परमाणुद्वयस्य परमाणोः स्पर्शविषयत्वेन 'सर्वेण देशौ स्पृशतिः इत्युच्यते। ननु द्विप्रदेशिकेऽपि युक्तोऽयं विकल्पः, तत्राऽपि प्रदेशद्वयस्य स्पृश्यमानत्वात्? नैवम्' यतस्तत्र द्विप्रदेशमात्र एवाऽवयवीति कस्य देशौ स्पृशति? त्रिप्रदेशिकेतु त्रयाऽपेक्षया द्वयस्य स्पर्शने एकोऽवशिष्यते, ततश्च 'सर्वेण देशौ' त्रिप्रदेशिकस्य स्पृशतीति व्यपदेशः साधुः स्याद् इति। यदा तु एकप्रदेशाऽवगाढोऽसौ तदा 'सर्वेण सर्वं स्पृशति' इति स्यादिति।

'दुपएसिए णं' इत्यादि। 'तइय-नवमेहिं फुसइ' त्ति यदा द्विप्रदेशिको द्विप्रदेशस्थस्तदा परमाणु 'देशेन सर्वं स्पृशति' इति तृतीयः यदा तु एक-प्रदेशाऽवगाढोऽसौ तदा 'सर्वेण सर्वम्' इति नवमः। 'दुप्पएसिओ दुप्पएसियं' इत्यादि। यदा द्विप्रदेशिकौ प्रत्येकं द्विप्रदेशावगाढौ तदा 'देशेन देशम्' इति प्रथमः, यदा तु एकः एकत्र, अन्यस्तु द्वयोस्तदा 'देशेन सर्वम्' इति तृतीयः, तथा 'सर्वेण देशम्' इति सप्तमः, नवमस्तु प्रतीत एवेति—अनया दिशाऽन्येऽपि व्याख्येया इति।

परमाणु पुद्गलादि की स्पर्शना की अपेक्षा नव विकल्प (भंग) बनते हैं।

१—एक देश से एक देश का स्पर्श।

२—एक देश से बहुत देशों का स्पर्श।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३—एक देश से सर्व का स्पर्श।

४—बहुत देशों से एक देश का स्पर्श।

५—बहुत देशों से बहुत देशों का स्पर्श।

६—बहुत देशों से सर्व का स्पर्श।

७—सर्व से एक देश का स्पर्श।

८—सर्व से बहुत देशों का स्पर्श।

९—सर्व से सर्व का स्पर्श।

(१) परमाणु पुद्गल की स्पर्शना

परमाणुपुद्गल परमाणुपुद्गल को केवल नववें भंग से स्पर्श करता है अर्थात् परमाणुपुद्गल परमाणुपुद्गल को स्पर्श करता हुआ सर्व से सर्व को स्पर्श करता है।

परमाणुपुद्गल द्विप्रदेशीस्कंध को सातवें तथा नववें भंग से स्पर्श करता है अर्थात् परमाणुपुद्गल द्विप्रदेशीस्कंध को स्पर्श करता हुआ—सर्व से एक देश का स्पर्श करता है, (सातवां भंग) तथा सर्व से सर्व का स्पर्श करता है। (नववां भंग)

परमाणुपुद्गल तीन प्रदेशी स्कंध को स्पर्श करता हुआ अन्तिम के तीन विकल्प (सातवां, आठवां, नववां) से स्पर्श करता है।

जिस प्रकार एक परमाणुपुद्गल द्वारा त्रिप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करने को कहा है उसी प्रकार एक परमाणुपुद्गल द्वारा चतुःप्रदेशी स्कंध को, पंचप्रदेशी स्कंध को यावत् (दस प्रदेशी स्कंध को यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध को यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध को) अनंतप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करने का कहना चाहिए।

(२) द्विप्रदेशादि स्कंध की स्पर्शना

द्विप्रदेशी स्कंध परमाणुपुद्गल को तीसरे तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध को पहले, तीसरे, सातवें तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है।

द्विप्रदेशी स्कंध तीनप्रदेशी स्कंध को पहले, दूसरे, तीसरे, सातवें, आठवें तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है। परन्तु मध्य के तीन विकल्प (पांचवां, छट्ठा, सातवां विकल्प) से स्पर्श नहीं करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध द्वारा त्रिप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करने को कहा है उसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध द्वारा यावत् (चतुःप्रदेशी स्कंध यावत् दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध) अनंतप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करने का कहना चाहिए।

तीन प्रदेशी स्कंध परमाणुपुद्गल को तीसरे, छट्ठे तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है।

तीन प्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध को पहले, तीसरे, चौथे, छट्ठे सातवें तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है।

तीन प्रदेशी स्कंध तीन प्रदेशी स्कंध को नवों ही भंगों से स्पर्श करता है।

जिस प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध द्वारा तीन प्रदेशी स्कंध की स्पर्शना कही गई है उसी प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध द्वारा यावत् (चतुःप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध) अनंतप्रदेशी स्कंध की स्पर्शना कहनी चाहिए।

जिस प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध द्वारा परमाणुपुद्गल, द्विप्रदेशी स्कंध यावत् दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत-प्रदेशी स्कंध की स्पर्शना कही गई है उसी प्रकार चतुःप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध द्वारा परमाणुपुद्गल, द्विप्रदेशी स्कंध यावत् दसप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध की स्पर्शना कहनी चाहिए।

(टीकार्थ)—जब एक परमाणु पुद्गल, एक परमाणु पुद्गल को स्पर्श करता है तब सर्व से सर्व को स्पर्श करता है, केवल एक नववां विकल्प ही पाया जाता है—परन्तु दूसरे विकल्प परमाणु पुद्गल में घटित नहीं होते हैं क्योंकि परमाणु निरंश—अंश रहित होता है।

प्रश्न उठता है कि 'परमाणु' सर्व से सर्व को स्पर्श करता है, यह विकल्प स्वीकार करने पर दो परमाणुओं की एकता हो जायगी। ऐसा होने पर भिन्न-भिन्न परमाणुओं के योग से जो घट आदि स्कंध बनते हैं—'यह बात कैसे घटित होगी।'

इसका समाधान इस प्रकार है—'सर्व से सर्व को स्पर्श करता है'—इस विकल्प का यह अर्थ नहीं है कि दो परमाणु परस्पर मिलकर एक हो जाते हैं, किन्तु इसका अर्थ यह है कि दो परमाणु परस्पर एक दूसरे का स्पर्श—समस्त स्वात्मा द्वारा करते हैं। क्योंकि परमाणुओं में 'अर्द्ध-आधा' आदि विभाग नहीं होते हैं। इसलिए दो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु अर्द्ध आदि विकल्प द्वारा स्पर्श नहीं कर सकते। घटादि पदार्थों के अभाव की आपत्ति तो तब आ सकती है—जबकि दो परमाणुओं की एकता हो जाती हो, परन्तु ऐसी बात नहीं है। दोनों परमाणु अपने-अपने स्वरूप में भिन्न ही रहते हैं, दोनों की एकता (स्वरूप-मिश्रण) नहीं होती। अतः घटादि पदार्थों के अभाव रूप पूर्वोक्त आपत्ति नहीं आ सकती।

जब परमाणु, द्विप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करता है, तब 'सर्व से देश ; रूप सातवां विकल्प और 'सर्व से सर्व' रूप नववां विकल्प—ये दो विकल्प पाये जाते हैं। जब द्विप्रदेशी स्कंध, आकाश के दो प्रदेशों पर स्थित होता है, तब परमाणुपुद्गल उस स्कंध के देश को अपने समस्त आत्मा द्वारा स्पर्श करता है। क्योंकि परमाणु का विषय उस स्कंध के देश को स्पर्श करने का ही है। अर्थात् आकाश के दो प्रदेशों पर स्थित द्विप्रदेशी स्कंध देश को ही परमाणु स्पर्श कर सकता है। जब द्विप्रदेशी स्कंध, परिणाम की सूक्ष्मता से आकाश के एक प्रदेश पर स्थित होता है, तब परमाणु सर्वात्म द्वारा उस स्कंध के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

जब परमाणुपुद्गल त्रिप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करता है तब अन्तिम के तीन विकल्प (सातवां, आठवां और नववां) पाये जाते हैं। जब तीन प्रदेशी स्कंध आकाश के तीन प्रदेशों पर रहा हुआ होता है तब परमाणु अपने सर्वात्म द्वारा उसके एक देश को स्पर्श करता है। क्योंकि तीन आकाश प्रदेशों पर रहे हुए तीन प्रदेशी स्कंध के एक प्रदेश को स्पर्श करने का ही परमाणु में सामर्थ्य है। (सातवां विकल्प)। जब तीन प्रदेशी स्कंध के दो प्रदेश एक आकाश पर रहे हुए हों और तीसरा एक प्रदेश अन्यत्र (दूसरे आकाश प्रदेश पर) रहा हुआ हो, तब एक आकाश प्रदेश पर रहे हुए दो परमाणुओं को स्पर्श करने का सामर्थ्य, एक परमाणु के होने से 'सर्व से बहुत देशों को स्पर्श करता है। (आठवां विकल्प)।

प्रश्न हो सकता है कि 'सर्व से बहुत देशों (दो देशों) को स्पर्श करता है—यह आठवां विकल्प जैसे तीन प्रदेशी स्कंध में घटाया गया है उसी तरह द्विप्रदेशी स्कंध में भी घटाना चाहिए। क्योंकि वहाँ पर भी उस द्विप्रदेशी स्कंध के दो प्रदेशों को वह परमाणु सर्वात्म द्वारा स्पर्श करता है। इसलिए यह विकल्प द्विप्रदेशी स्कंध में क्यों नहीं बतलाया गया है।

इसका समाधान इस प्रकार है—जिस प्रकार यह विकल्प तीन प्रदेशी स्कंध में घटाया गया है, उस प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध में घटित नहीं हो सकता है क्योंकि द्विप्रदेशी स्कंध स्वयं अवयवी है, वह किसी का अवयव नहीं है, तब वह कैसे कहा जा सकता है कि 'सर्व से ही देशों को स्पर्श करता है।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तीन प्रदेशी स्कंध में भी तीन प्रदेशों की अपेक्षा दो प्रदेशों का दो प्रदेशों का स्पर्श करते समय एक प्रदेश बाकी रहता है। अर्थात् उसके जो दो परमाणु एक आकाश प्रदेश पर रहे हुए हैं। वे दोनों भिन्न-भिन्न आकाश प्रदेश पर रहे हुए उस तीन प्रदेशी स्कंध के दो अंश हैं और एक परमाणु पुद्गल उन दो अंशों को स्पर्श करता है। इसलिए सर्व से दो देशों का स्पर्श करता है। इसलिए सर्व से दो देशों का स्पर्श करता है—इस प्रकार का व्यपदेश करना संगत है।

जब तीन प्रदेशी स्कंध परिणाम की सूक्ष्मता के कारण एक आकाश प्रदेश पर स्थित होता है, तब सर्व से सर्व को स्पर्श करता है—यह नववां विकल्प घटित होता है।

(इसी प्रकार परमाणु द्वारा चतुःप्रदेशी, पंचप्रदेशी आदि स्कंधों की स्पर्शना भी कहनी चाहिए।)

जब द्विप्रदेशी स्कंध, एक परमाणु पुद्गल को स्पर्श करता है, तब तीसरा और नववाँ—ये दो विकल्प घटित होते हैं। अर्थात् जब द्विप्रदेशी स्कंध, आकाश के दो प्रदेशों पर स्थित होता है, तब वह अपने एक देश द्वारा समस्त परमाणुओं को स्पर्श करता है और तब 'एक भाग से सर्व भाग को स्पर्श करता है।' (तीसरा विकल्प) जब द्विप्रदेशी स्कंध, आकाश के एक प्रदेश पर स्थित होता है, तब वह सर्वात्म द्वारा सर्व परमाणु को स्पर्श करता है। इसलिए यहाँ 'सर्व से सर्व, को स्पर्श करता है। (नववां विकल्प घटित होता है।)

जब द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करता है तब पहला, तीसरा, सातवाँ और नववाँ—ये चार विकल्प घटित होते है।

जब दोनों द्विप्रदेशी स्कंध, प्रत्येक-प्रत्येक दो-दो आकाश प्रदेशों पर स्थित होते हैं तब वे परस्पर एक देश से एक देश को स्पर्श करते हैं तब प्रथम विकल्प घटित होता है। जब एक द्विप्रदेशी स्कंध एक आकाश प्रदेश पर स्थित होता है और दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध दो आकाश प्रदेशों पर स्थित होता है, तब 'एक देश से सर्व को स्पर्श करता है—यह तीसरा विकल्प घटित होता है। क्योंकि दो आकाश प्रदेशों पर स्थित द्विप्रदेशी स्कंध, अपने एक देश द्वारा एक आकाश पर स्थित द्विप्रदेशी स्कंध के सर्व देशों को स्पर्श करता है। 'सर्व से देश को स्पर्श करता है'—यह सातवाँ विकल्प है क्योंकि एक आकाश पर स्थित द्विप्रदेशी स्कंध सर्वात्म द्वारा दो आकाश प्रदेशों पर स्थित द्विप्रदेशी स्कंध के एक देश को स्पर्श करता है।

जब दोनों द्विप्रदेशी स्कंध, प्रत्येक-प्रत्येक एक एक आकाश पर स्थित होते हैं ; तब 'सर्व से सर्व' को स्पर्श करता है—यह नववां विकल्प घटित होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार उपर्युक्त रीति से आगे के यथा-संभव विकल्प घटा लेने चाहिए।

·३ परमाणु पुद्गल और वायुकाय की स्पर्शना

परमाणुपोग्गले णं भंते ! वाउयाएणं फुडे ? वाउयाए वा परमाणु-पोग्गलेणं फुडे ?

गोयमा ! परमाणुपोग्गले वाउयाएणं फुडे, नो वाउयाए परमाणु-पोग्गलेणं फुडे।

—भग० श १८। उ १०। सू १९६। पृ० ७८५

परमाणु-पुद्गल वायुकाय से स्पृष्ट है, किन्तु वायुकाय परमाणु-पुद्गल से स्पृष्ट नहीं है।

विवेचन—वायु महान् (बड़ी) है। अनंतप्रदेशी पुद्गल स्कंध से वायुकाय का शरीर बना है और परमाणु पुद्गल प्रदेश रहित है। इसलिए परमाणु में वायु क्षिप्त (व्याप्त) नहीं होती, क्योंकि वह उसमें नहीं समा सकती।

अनन्त प्रदेशी स्कंध वायु से व्याप्त भी होता है तथा नहीं भी होता है।

·४ स्कन्ध पुद्गल और वायुकाय की स्पर्शना

दुप्पएसिए णं भंते ! खंध वाउयाएणं फुडे ? वाउयाए वा दुप्पएसिएणं खंधेणं फुडे ? एवं चेव। एवं जाव असंखेज्जपएसिए।१९७।

अणंत पएसिए णं भंते ! खंधे वाउयाएणं फुडे—पुच्छा।

गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे वाउयाएणं फुडे, वाउयाए अणंतपएसिएणं खंधे सिय फुडे सिय नो फुडे। १९८।

—भग० श १८ उ १०। सू १९७, १९८। पृ० ७८५

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध वायुकाय से स्पृष्ट है किन्तु वायु-काय द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध से स्पृष्ट नहीं है।

अनन्त प्रदेशी स्कन्ध वायुकाय से स्पष्ट है किन्तु वायुकाय, अनंतप्रदेशी स्कन्ध से कदाचित् स्पृष्ट होता है और कदाचित् स्पृष्ट नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन—अनंतप्रदेशी स्कंध वायु से व्याप्त होता है क्योंकि वह वायु की अपेक्षा सूक्ष्म है। जब वायु स्कंध की अपेक्षा अनंतप्रदेशी स्कंध महान होता है तब वायु अनंतप्रदेशी स्कंध से व्याप्त होती है, अन्यथा नहीं। इसलिए ऐसा कहा गया है कि अनंतप्रदेशी स्कंध वायु से व्याप्त होता है और वायु अनंतप्रदेशी स्कंध से कदाचित् व्याप्त होती है और कदाचित् नहीं होती।

·५ विशिष्ट पुद्गल स्कंध और वायुकाय की स्पर्शना

वत्थीणं भंते ! वाउयाएणं फुडे, वाउयाए वत्थिणा फुडे ? गोयमा ! वत्थी वाउयाएणं फुडे, नो वाउयाए वत्थिणा फुडे।

—भग० श १८। उ १०। सू १९९। पृ० ७८५

वस्ति (मशक) वायुकाय से स्पृष्ट है, वायुकाय वस्ति से स्पष्ट नहीं है।

विवेचन—मशक से जब हवा भरी जाती है, तब मशक वायु से व्याप्त होती है, क्योंकि वह समस्त रूप में उसके भीतर समायी हुई है। किन्तु वायुकाय, मशक से व्याप्त नहीं है। वह वायुकाय के ऊपर चारों ओर परिवेष्टित है।

·२१ पुद्गल की विविध अपेक्षा से स्थिति

(क) संतइं पप्प तेऽणाई अपज्जवसिया वि य।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य॥

—उत्त० अ ३६। गा १२। पृ० १०५०

लवटीका—ते स्कंधाः परमाणवश्च सन्तति अपरापरोत्पत्तिप्रवाहरूपां प्राप्य अनादयः आविरहितास्तथा अपर्यवसिताः अंतरहिता स्थिति प्रतीत्य क्षेत्रावस्थानरूपां स्थिति अङ्गीकृत्यसादिकाः सपर्यवसिताश्च वर्त्तन्ते।

(ख) (पोग्गलत्थिकाए) कालओ न कयाइ, न आसी जाव (न कयाइ भवइ, न कयाइ न भविस्सइ त्ति भुविं य भवइ य, भविस्सइ य, धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) णिच्चे × × ×।

—भग० श २। उ १०। सू ५७। पृ० ४३४

—ठाण० स्था ५। उ ३। सू ४४१। पृ० २६६

(ग) एस णं भंते ! पोग्गले अतीतं अणंतं, सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! एसणं पोग्गले अतीतं अणंतं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया। एसणं भंते ! पोग्गले पडुप्पण्णं, सासयं समयं भवतीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं। एस णं भंते ! पोग्गले अणागयं, अणंतं, सासयं समयं भविस्सतीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं। एवं खंधेणं वि तिण्णि आलावगा।

—भग० श १। उ ४। सू १५६ से १५८ पृ० ३९८

(घ) असंखकालमुक्कोसं एगं समयं जहन्निया।
अजीवाण य रूवीणं ठिई एसा वियाहिया॥

—उत्त० अ ३६। गा १३। पृ० १०५०

लवटीका—स्कंधानां परमाणूनां च उत्कृष्टा असंख्यकालं स्थिति जघन्यिका एक समया स्थितिः एषां अजीवानां रूपिणां पुद्गलानां स्थितिर्व्याख्याता।

(ङ) परमाणुपोग्गले णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवं जाव अणंतपएसिओ।

—भग० श ५। उ ७। सू १६। पृ० ४८४

टीका—'परमाणु' इत्यादि द्रव्यचिन्ता, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं त्ति असंख्येयकालात् परतः पुद्गलानां एकरूपेण स्थित्यभावात्।

(च) एगपएसोगाढे णं भंते ! पोग्गले सेए तम्मि वा ठाणे, अण्णम्मि वा ठाणे कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं, एवं जाव-असंखेज्जपएसोगाढे।

एगपएसोगाढे णं भंते ! पोग्गले णिरेए कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढे।

—भग० श ५। उ ७। सू १७, १८। पृ० ४८४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका —'एगपएसोगाढे णं इत्यादि क्षेत्रचिन्ता, 'सेए' त्ति सैजः सकंपः, 'तम्मि वा ठाणे' त्ति अधिकृत एव, 'अण्णम्मि व' त्ति अधिकृताद् अन्यत्र, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, त्ति पुद्गलानामाऽऽकस्मिकत्वा-ऽचलमस्य न निरेजत्वादीनामिव असंख्येयकालत्वम्, 'असंखेज्जपएसोगाढ' त्ति अनंतप्रदेशाऽवगाढस्य असंभवाद् असंख्यातप्रदेशावगाढ इत्युक्तम् ।

(छ) परमाणुपोग्गले णं भंते ! सेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं ।

परमाणु पोग्गले णं भंते ! निरेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । एवं जाव अणंत-पएसिए ।

परमाणुपोग्गला णं भंते ! सेया कालओ केवचिरं होंति ? गोयमा ! सव्वद्धं । परमाणुपोग्गला णं भंते ! निरेया कालओ केवचिरं होंति ? गोयमा ! सव्वद्धं । एवं जाव-अणंतपएसिया ।

—भग० श २५ । उ ४ । सू ९० से ९३ । पृ० ८६९

(ज) परमाणुपोग्गले णं भंते ! सव्वेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं । निरेये कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्को-सेणं असंखेज्जं कालं ।

दुपएसिए णं भंते ! खंधे देसेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं । सव्वेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं । निरेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । एवं जाव अणंत-पएसिए ।

परमाणुपोग्गला णं भंते ! सव्वेया कालओ केवचिरं होंति ? गोयमा ! सव्वद्धं । निरेया कालओ केवचिरं होंति ? सव्वद्धं । दुप्पएसिया णं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंते ! खंधा देसेया कालओ केवचिरं (होंति ? गोयमा !) सव्वद्धं । सव्वेया कालओ केवचिरं० (होंति ? गोयमा !) सव्वद्धं । निरेया कालओ केवचिरं० (होंति ? गोयमा !) सव्वद्धं । एवं जाव—अणंतपएसिया ।

—भग० श २५ । उ ४ । सू १०५ से ११४ पृ० ८७०

(भ) एकगुणकालए णं भंते ! पोग्गले कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवं जाव अणंतगुणकालए, एवं वण्ण-गंध-रस-फास जाव अणंतगुणलुक्खे ; एवं सुहुमपरिणए पोग्गले, एवं बादरपरिणए पोग्गले ।

सद्दपरिणए णं भंते ! पोग्गले कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं ; असद्दपरिणए जहा एकगुणकालए ।

—भग० श ५ । उ ७ । सू १९-२० पृ० ४८४

(१) संतति की अपेक्षा

पुद्गल (परमाणु हो या स्कंध) की स्थिति—संतति प्रवाह अर्थात् अपरापरोत्पत्तिप्रवाह की अपेक्षा अनादिअनंत होती है ।

पुद्गल अतीत अनंत शाश्वतकाल में था, वर्तमान शाश्वतकाल में है, अनागत अनंत शाश्वतकाल में रहेगा ।

(२) विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा

विवक्षित क्षेत्र में पुद्गल की अवस्थिति रूप स्थिति सादिसांत होती है ।

(३) एक रूप की अपेक्षा

परमाणु यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध की जघन्य स्थिति एक समय की और उत्कृष्ट स्थिति असंख्यातकाल की होती है । क्योंकि पुद्गल में एक रूप से असंख्यातकाल के पश्चात् उस रूप में स्थित रहने का अभाव होता है अर्थात् असंख्यातकाल के पश्चात् पुद्गल जिस रूप में होता है उस रूप में नहीं रह सकता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४) सकंपत्व की अपेक्षा

(५) निष्कंपत्व की अपेक्षा

एक आकाशप्रदेश में अवगाढ पुद्गल यावत् असंख्यात आकाशप्रदेश में अवगाढ पुद्गल स्वस्थान पर या दूसरे स्थान पर जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक सकंप रह सकता है।

एक आकाशप्रदेश में अवगाढ पुद्गल यावत् असंख्यातप्रदेश में अवगाढ पुद्गल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्येयकाल तक निष्कंप रह सकता।

सकंप पुद्गल की स्थिति उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक की ही होती है, निष्कंप पुद्गल की तरह असंख्यातकाल तक की नहीं होती है क्योंकि पुद्गलों का चलन—पुद्गलों में कंपन आकस्मिक होता है अतः निष्कंप पुद्गल की तरह सकंप पुद्गल असंख्येयकाल सकंप नहीं रह सकता है। कोई भी पुद्गल अनंतप्रदेशावगाढ नहीं होता है अतः असंख्यातप्रदेशावगाढ पुद्गल का ही विवेचन किया गया है। पुद्गल (बहुवचन) कुछ सकंप तथा कुछ निष्कंप रहते हैं अतएव ऐसा कहा जाता है कि पुद्गल सदा सकप-सदा निष्कंप रहते हैं। कोई भी समय ऐसा नहीं होता है जब सब पुद्गल सकंप हो अथवा सब पुद्गल निष्कंप हो। सब काल में कुछ पुद्गल सकंप रहते हैं, कुछ पुद्गल निष्कंप रहते हैं।

सकंप परमाणुपुद्गल यावत् सकंप अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय की तथा उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात भाग की होती है।

निष्कंप परमाणुपुद्गल यावत् निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय की तथा उत्कृष्ट असंख्यातकाल की होती है।

सकंप परमाणुपुद्गल (बहुवचन) यावत् सकंप अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) की स्थिति सदाकाल होती है।

निष्कंप परमाणुपुद्गल (बहुवचन) यावत् निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) की स्थिति सदाकाल होती है।

नोट—परमाणुपुद्गल (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) कुछ सकंप तथा कुछ निष्कंप रहते हैं अतः ऐसा कहा जाता है कि परमाणुपुद्गल (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) कुछेक सदा सकंप—सदा निष्कंप भी रहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुपुद्गल जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक सर्वांशरूप से संकप रह सकता है। चूंकि परमाणु एकप्रदेशी है अतः परमाणु का यदि कंपन होता है तो सर्वांशरूप से कंपन होता है, देशतः कंपन नहीं होता है।

द्विप्रदेशीस्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक देशतः (अंशतः) सकंप रह सकता है।

द्विप्रदेशीस्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल भी जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट आवलिका के असख्येयभाग तक सर्वांशरूप से सकंप रह सकता है।

परमाणुपुद्गल (बहुवचन) सदाकाल सर्वांशरूप से सकंप रहते हैं। परमाणु-पुद्गल (बहुवचन) कुछ सकंप (सर्वांशरूप से) तथा कुछ निष्कंप रहते हैं अतः ऐसा कहा जाता है कि परमाणुपुद्गल सदा सकंप (सर्वांशरूप से) भी रहते हैं।

द्विप्रदेशीस्कंध पुद्गल (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) सदाकाल— देशतः सकंप रहते हैं।

द्विप्रदेशीस्कंध पुद्गल (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशीस्कंध पुद्गल (बहुवचन) सदाकाल सर्वांशरूप से निष्कंप भी रहते हैं।

द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) कुछ देशतः सकंप रहते हैं, कुछ सर्वांशरूप से सकंप रहते हैं तथा कुछ निष्कंप रहते हैं अतः ऐसा कहा जाता है कि द्विप्रदेशादि स्कंध (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) सदाकाल देशतः सकंप तथा सदाकाल सर्वांशरूप से सकंप भी रहते हैं।

(६) वर्ण अपेक्षा

(७) गंध अपेक्षा

(८) रस अपेक्षा

(९) स्पर्श अपेक्षा

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल की एक गुण कृष्णवर्ण रूप स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् अनंत गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल की स्व-स्व गुण रूप स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण के पुद्गलों के विषय में समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक गुण सुगन्धवाले पुद्गल की एक गुण सुगन्ध रूप स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् अनंत गुण सुगन्धवाले पुद्गल की स्व-स्व गुण रूप स्थिति जघन्य एक समय की; उत्कृष्ट असंख्यातकाल की होती है। इसी प्रकार दुर्गन्ध पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण तिक्त रसवाले पुद्गल की एक गुण तिक्त रस रूप स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् अनंत गुण तिक्त रसवाले पुद्गल की स्व-स्व गुण रूप स्थिति जघन्य एक समय की; उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस के पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

एक गुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल की एक गुण कर्कश स्पर्श रूप स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत अनंत गुण कर्कश स्पर्शवाले पुद्गल की स्व-स्व गुण रूप स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है। इसी प्रकार मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पुद्गलों के विषय में भी समझना चाहिए।

(१०) सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा
(११) बादर परिणमन अपेक्षा

सूक्ष्म परिणत पुद्गल की सूक्ष्म परिणत रूप स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है।

बादर परिणत पुद्गल की बादर परिणत रूप स्थिति जघन्य एक समय की; उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है।

(१२) शब्द परिणति अपेक्षा
(१३) अशब्द परिणति अपेक्षा

शब्द परिणतवाले पुद्गल की शब्द परिणत रूप स्थिति जघन्य एक समय की; उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात भाग की होती है।

अशब्द परिणतवाले पुद्गल की अशब्द परिणत रूप स्थिति जघन्य एक समय की; उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२२ पुद्गल का विविध अपेक्षा से अंतरकाल

(क) परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

दुप्पएसियस्स णं भंते ! खंधस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, एवं जाव—अणंतपएसिओ।

एगपएसोगाढस्स णं भंते ! पोग्गलस्स सेयस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवं जाव-असंखेज्जपएसोगाढे।

एगपएसोगाढस्स णं भंते ! पोग्गलस्स णिरेयस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, एवं जाव-असंखेज्जपएसोगाढे, वण्ण-गंध-रस-फास-सुहुम-परिणाम-बायरपरिणयाणं एएसिं जं चेव संचिट्ठणा तं चेव अंतरं वि भाणियव्वं।

सद्दपरिणयस्स णं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

असद्दपरिणयस्स णं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ। गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

—भग० श ५। उ ७। सू २१ से २६। पृ० ४८४

टीका—'परमाणुपोग्गलस्स' इत्यादि, परमाणोरपगते परमाणुत्वे यद-परमाणुत्वेन वर्तनम् अ (आ) परमाणुत्वपरिणतेः तदन्तरम्—स्कंध-संबंधकालः, स च उत्कर्षतोऽसंख्यात इति। द्विप्रदेशिकस्य तु शेषस्कंध-संबंधकालः, परमाणुकालश्च अन्तरकालः—स च तेषामनन्तत्वात्' प्रत्येकं चोत्कर्षतोऽसंख्येयस्थितिकत्वाद् अनन्तः, तथा यो निरेजस्य कालः स सेजस्य

अंतरमिति कृत्वा उक्तं सजस्याऽन्तरमुत्कर्षतोऽसंख्यातः काल इति, यस्तु सेजस्य कालः स निरेजस्य अन्तरम् इति कृत्वोक्तं निरेजस्याऽन्तरमुत्कर्षत-आवलिकाया असंख्यातो भाग इति ; एकगुणकालकत्वादीनां चाऽन्तरम् एकगुणकाल (त्वादिकाल) समानमेव, न पुनर्द्विगुण कालत्वादीनाम् अनंतत्वेन तदन्तरस्य अनंतत्वम्-वचनप्रामाण्यात्' सूक्ष्मादिपरिणतानां तु अवस्थानतुल्यमेवाऽन्तरम्, यतो यदेव एकस्याऽवस्थानं तदेवाऽन्यस्याऽन्तरम्, तच्च असंख्येकालमानमिति । 'सद्दं' इत्यादि तु सूत्रसिद्धम् ।

(ख) परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! सेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ? गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । निरेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ? गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ।

दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स सेयस्स पुच्छा । गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं । निरेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ? गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइ भागं ; परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं । एवं जाव—अणंतपएसियस्स ।

परमाणु पोग्गलाणं भंते ! सेयाणं केवइयं कालं अंतरं होइ ? गोयमा ! नत्थि अंतरं । निरेयाण केवइयं कालं अंतर होइ ? गोयमा ! नत्थि अंतरं । एवं जाव—अणंतपएसियाणं खंधाणं ।

—भग० श २५ । उ ४ । सू ९४ से ९७ । पृ० ८६९

टीका—(परमाणु इत्यादि) (सट्ठाणंतरं पडुच्च त्ति) स्वस्थानं परमाणोः परमाणु भाव एव, तत्र वर्त्तमानस्य यदन्तरं चलनस्य च व्यवधानं निश्चलत्वभवनलक्षणं तत्स्वस्थानान्तरं, तत्प्रतीत्य (जहण्णेणं एक्कं समयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्ति) निश्चलता जघन्यकाललक्षणम् (उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ति) निश्चलताया एवोत्कृष्टकाललक्षणं, तत्र जघन्यतोऽन्तरं परमाणुरेकं समयं चलनादुपरम्य पुनश्चलतीत्येवम्, उत्कर्षतश्च स एवासंख्येयं कालं क्वचित्स्थिरो भूत्वा पुनश्चलतीत्येवं दृश्यमिति। (परट्ठाणंतरं पडुच्च त्ति) परमाणोर्यत्परस्थाने द्व्यणुकाऽऽदावन्तर्भूतस्यान्तरं चलनव्यवधानं तत्परस्थानान्तरं, तत्प्रतीत्य। (जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जंकालं त्ति) परमाणुपुद्गलो हि भ्रमन् द्विप्रदेशाऽऽदिकस्कंधमनुप्रविश्य जघन्यतः तेन सहैकः समयं स्थित्वा पुनर्भ्राम्यति' उत्कर्षतस्तु असंख्येयं कालं द्विप्रदेशाऽऽदिलया स्थित्वा पुनरेकतया भ्राम्यतीति। (निरेयस्सेत्यादि) निश्चलः सन् जघन्यतः समयमेकं परिभ्रम्य पुनर्निश्चलस्तिष्ठति, उत्कर्षतस्तु निश्चलतः सन्नावलिकाया असंख्येयं भागं चलनोत्कृष्टकालरूपं परिभ्रम्य पुनर्निश्चल एवं तिष्ठतीति स्वस्थानान्तरमुक्तम्। परस्थानान्तरं तु निश्चलः सन् ततः स्थानाच्चलितो जघन्यतो द्विप्रदेशाऽऽदौ स्कंधे एकं समयं स्थित्वा पुनर्निश्चल एव तिष्ठति। उत्कर्षतस्त्वसंख्येयं कालं तेन सह स्थित्वा पृथग्भूत्वा पुनस्तिष्ठति। (दुपएसियस्सेत्यादि) (उक्कोसेणं अणंतं कालं ति) कथं द्विप्रदेशिकः संश्चलितस्ततोऽनन्तैः पुद्गलैः सह कालभेदेन संबंधं कुर्वन्ननन्तेन कालेन पुनस्तेनैव परमाणुना सह संबंधं प्रतिपद्य पुनश्चलतीत्येवमिति।

(ग) परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! सव्वेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ? गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ; परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं एवं चेव। निरेयस्स केवइयं अंतरं होइ ? सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स देसेयस्स केवयइयं कालं अंतरं होइ ? सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतकालं। सव्वेयस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवइयं कालं० (अंतरं होइ ?) एवं चेव जहा देसेयस्स। निरेयस्स केवइयं० (कालं अंतरं होइ ?) सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं। एवं जाव-अणंतपएसियस्स।

परमाणुपोग्गलाणं भंते ! सव्वेयाण केवइयं कालं अंतर होइ ? नत्थि अंतरं। निरेयाणं केवइयं (कालं अंत होइ ?) नत्थि अंतरं।

दुपएसिया णं भंते ! खंधाणं देसेयाणं केवइयं कालं० (अंतरं होइ ?) नत्थि अंतरं। सव्वेयाणं केवइयं कालं० (अंतरं होइ ?) नत्थि अंतरं। निरेयाणं केवइयं काल० (अंतरं होइ ?) नत्थि अंतरं। एवं जाव-अणंतपएसियाणं।

—भग० श २५। उ ४। सू ११५ से १२४। पृ० ८७०-१

(घ) अणंत कालमुक्कोसं एगं समयं जहन्नयं।
अजीवाण य रूवीणं अंतरेयं वियाहियं॥

— उत्त० अ ३६। गा १४। पृ० १०५०

लवटीका अजीवानां रूपिणां पुद्गलानां स्कंध-देश-प्रदेश-परमाणूनां अंतरं—विवक्षितक्षेत्रावस्थिते प्रच्युतानां (पुनस्तात् क्षेत्राप्राप्तेर्व्यवधानं) अंतरं उत्कृष्टं अनंतकालं भवति ; जघन्यकं एकसमयं यावद् भवति।

इदं अन्तरं तीर्थकरैर्व्याख्यातं पुद्गलानां हि विवक्षित-क्षेत्रावस्थितितः प्रच्युतानां कदाचित्समयावलिकादि। संख्यानकालतो वा पल्योपमादेर्यावदनन्तकालादपितत् क्षेत्रावस्थितिः संभवतीति भावः।

(१) परमाणुत्व की अपेक्षा

एक परमाणु अपना परमाणु रूप छोड़कर स्कंध का प्रदेश बनकर पुनः परमाणु रूप को प्राप्त हो, इसके मध्य का काल स्कंध सम्बन्धकाल कहलाता है, यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है अतः परमाणु का अन्तर काल जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) स्कंधत्व की अपेक्षा

द्विप्रदेशी स्कंध अपना द्विप्रदेशी स्कंध रूप छोड़कर अन्य स्कंध रूप अथवा परमाणु रूप बनकर पुनः द्विप्रदेशी स्कंध रूप को प्राप्त हो ; इसके मध्य के काल को द्विप्रदेशी स्कध का अन्तर काल कहते हैं।

यह जघन्य एक समय का ; उत्कृष्ट अनंत काल का होता है क्योंकि बाकी सब स्कंध अनंत है और उन प्रत्येक स्कंध की उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात काल की होती है अतः द्विप्रदेशी स्कंध का अन्तर काल जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनंत काल का होता है।

(३) क्षेत्रान्तर की अपेक्षा

अजीव रूपी पुद्गलों की क्षेत्रस्थिति अन्तर काल अर्थात् विवक्षित क्षेत्र में स्थित स्कंध-देश-प्रदेश-परमाणु जब विवक्षित क्षेत्र से प्रच्युत होकर अन्य क्षेत्र को प्राप्त होते हैं तथा इस क्षेत्र से पुनः प्रथम क्षेत्र विवक्षित क्षेत्र को प्राप्त करते हैं इसका अन्तर काल—जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट अनत काल का होता है।

यहाँ जो अन्तर काल की विविक्षा की गयी है वह क्षेत्रान्तर की अपेक्षा की गयी है। यह अन्तर काल तीर्थङ्करों के द्वारा प्रतिपादित है। पुद्गल जब किसी विवक्षित क्षेत्र से च्यूत होकर पुनः उसी विवक्षित क्षेत्र को प्राप्त करता है इसका अन्तर काल कदाचित् एक समय का, कदाचित् आवलिका आदि संख्यात काल यावत् पल्योपम यावत् अनत काल तक का हो सकता है।

(४) सकंपत्व अपेक्षा

(५) निष्कंपत्व अपेक्षा

आकाश के एक प्रदेश में अवगाढ या यावत असंख्यात प्रदेश में अवगाढ सकंप पुद्गल निष्कंप होकर पुनः सकंप होता है यह उसके सकंपत्व का अन्तरकाल है और यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है।

आकाश के एक प्रदेश में अवगाढ या यावत् असंख्यात प्रदेश में अवगाढ निष्कंप पुद्गल सकंप होकर पुनः निष्कंप होता है यह उसके निष्कंपत्व का अन्तर काल है और यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यात भाग का होता है।

सकंप परमाणु का स्वस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अन्तरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है। यहाँ स्वस्थान से अभिप्राय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है कि परमाणु परमाणु भाव में रहता हुआ सकंपता से निश्चल होकर पुनः सकंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह सकंप परमाणु का स्वस्थान अन्तर काल है।

सकंप परमाणु का परस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अन्तर काल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है। यहाँ पर स्थान से अभिप्राय है कि सकंप परमाणु निश्चलता को प्राप्त कर द्विप्रदेशादि स्कंध में अन्तर्भाव होकर जब वह उस स्कंध से निकल कर पुनः परमाणु भाव को प्राप्त कर सकंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह सकंप परमाणु का पर स्थान अन्तरकाल है।

निष्कंप परमाणु का स्वस्थान की अपेक्षा (निष्कंपता) अन्तर काल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात भाग का होता है। यहाँ स्व-स्थान से अभिप्राय है कि परमाणु परमाणु भाव में रहता हुआ निष्कंपता से सकंप होकर पुनः निष्कंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह निष्कंप परमाणु का स्वस्थान अंतरकाल है।

निष्कंप परमाणु का परस्थान की अपेक्षा (निष्कंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है। यहाँ परस्थान से अभिप्राय है। कि निश्चल परमाणु चलित होकर द्विप्रदेशी स्कंधादि में अंतर्भूत होकर जब उस स्कंध से निकलकर पुनः परमाणु भाव को प्राप्त कर निश्चल होता है—इसमें जो काल लगता है वह निष्कंप परमाणु का परस्थान अंतरकाल है।

निश्चल परमाणु पुद्गल निश्चलता के स्थान से चलित होकर द्विप्रदेशादि स्कंध में अन्तर्भूत होकर—एक समय वहाँ स्थिर रहकर फिर बाहर निकल कर पुनः परमाणु भाव को प्राप्त कर निश्चल होता है वह निश्चल परमाणु का पर स्थान की अपेक्षा जघन्य अंतरकाल होता है। इसी प्रकार निश्चल परमाणु पुद्गल का पर स्थान की अपेक्षा उत्कृष्ट—असख्यात काल का अंतर काल होता है।

सकंप द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है। यहाँ स्व स्थान से अभिप्राय है कि द्विप्रदेशी स्कंध भाव में रहता हुआ सकंपता से निश्चल होकर पुनः सकंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह सकंप द्विप्रदेशी स्कंध का अनंत काल का होता है। यहाँ परस्थान से अभिप्राय है कि द्विप्रदेशी स्कंध चलित होकर अन्य पुद्गलों से सम्बन्ध स्थापित कर जघन्य एक समय उनके साथ रहकर फिर पृथग् होकर चलित होता है तथा उत्कृष्ट अनंतकाल तक भिन्न-भिन्न पुद्गलों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के साथ रहकर अनंतकाल बाद पुनः द्विप्रदेशी स्कंध होकर चलित होता है। यह अनंतकाल किस प्रकार लगता है। इसे टीकाकार के द्वारा इस प्रकार समझाया गया है —द्विप्रदेशी स्कंध चलित होकर अनंत पुद्गलों के साथ काल भेद से सम्बन्ध स्थापित करता हुआ अनंतकाल के पश्चात् उस द्विप्रदेशी स्कध रूप में वे ही दोनों परमाणु सम्बन्ध स्थापित कर चलित होते हैं इसमें अनंतकाल लगता है।

निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान की अपेक्षा (निष्कंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट आवलिका के असख्यात भाग का होता है। यहाँ स्व-स्थान से अभिप्राय है कि द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध भाव में रहता हुआ निष्कंपता से सकंप होकर पुनः निष्कंपता को प्राप्त करता है। इसमें जो काल लगता है वह निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान अतरकाल है।

अभिप्राय है कि निश्चल द्विप्रदेशी स्कंध चलित होकर अन्य पुद्गलों से काल-भेद से सम्बन्ध स्थापित करता हुआ कियत् काल उनके साथ रहकर फिर द्विप्रदेशी स्कंध भाव को प्राप्त कर निश्चल होता है। इसमें जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अनंतकाल लगता है। अनंतकाल क्यों लगता है इसको उसी प्रकार समझना चाहिए जैसा कि सकंप परस्थान में टीकाकार ने समझाया है।

जिस प्रकार सकंप द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल के अंतर काल के विषय में कहा है वैसा ही सकंप तीन प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध पुद्गल के अंतरकाल के विषय में समझना चाहिए।

जिस प्रकार निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल के अंतरकाल के विषय में कहा है वैसा ही निष्कप तीन प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध पुद्गल के अतरकाल के विषय में समझना चाहिए।

सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का अंतरकाल नहीं होता है। क्योंकि सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) में सर्वदा विद्यमान रहते हैं अतः सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का अंतर नहीं होता है।

इसी प्रकार निष्कंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का भी अंतरकाल नहीं होता है।

जिस प्रकार सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन के अंतरकाल के विषय में कहा है वैसा ही सकंप दो प्रदेशी (बहुवचन) यावत् दस प्रदेशी (बहुवचन) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध (बहुवचन) पुद्गलों के अंतरकाल के विषय में समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार निष्कंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) के अंतर काल के विषय में कहा है वैसा ही निष्कंप दो प्रदेशी (बहुवचन) यावत् दस प्रदेशी (बहुवचन) यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) पुद्गलों के अंतर काल के विषय में समझना चाहिए।

परमाणु सर्वांशरूप से ही कंपन करता है, देशतः कंपन नहीं करता है अतः सकंप परमाणु का स्वस्थान तथा परस्थान अंतरकाल (देखें २२) पाठ के अनुसार समझना चाहिए।

देशतः (अंशतः) सकंप द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है।

सर्वांशरूप से सकंप द्विप्रदेशी स्कंध का परस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अंतर काल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट अनंतकाल का होता है।

जैसा अंशतः तथा सर्वांशरूप से सकंप द्विप्रदेशी स्कंध के अंतरकाल के विषय में कहा है वैसा ही अंशतः तथा सर्वांशरूप से सकंप तीन प्रदेशी यावत् दसप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध के अंतरकाल के विषय में भी समझना चाहिए।

सर्वांशरूप से सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का अंतरकाल नहीं होता है।

अंशतः सकंप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) का भी अन्तरकाल नहीं होता है।

सर्वांश रूप से सकंप द्विप्रदेशी स्कन्ध (बहुवचन) का भी अन्तरकाल नहीं होता है।

जैसा अंशतः तथा सर्वांशरूप से सकंप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) के अंतरकाल के विषय में कहा है वैसा ही अंशतः तथा सर्वांशरूप से सकंप तीन प्रदेशी (बहुवचन) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध (बहुवचन) के विषय में भी समझना चाहिए।

(६) वर्णत्व अपेक्षा

(७) गंधत्व अपेक्षा

(८) रसत्व अपेक्षा

(९) स्पर्शत्व अपेक्षा

एक गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल अपने गुणत्व को छोड़कर अन्य संख्यक गुणत्व को प्राप्त कर पुनः एक गुण कृष्णत्व को प्राप्त होता है इसमें जितना समय लगता है यह उसका अंतरकाल है और यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार दो गुण यावत् अनंत गुण कृष्णत्व का अन्तरकाल समझना चाहिए।

कृष्णवर्ण की तरह अन्य वर्णों का अन्तरकाल समझना चाहिए।

वर्ण की तरह गंध-रस-स्पर्शत्व की अपेक्षा अन्तरकाल का वर्णन करना चाहिए।

(१०) सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा

(११) बादर परिणमन अपेक्षा

सूक्ष्म परिणत पुद्गल बादर रूप में परिणत होकर पुनः सूक्ष्म परिणमनत्व को प्राप्त होता है यह उसके सूक्ष्म परिणमनत्व का अन्तरकाल है और यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है।

इसी प्रकार बादर परिणत पुद्गल का अन्तरकाल समझना चाहिए।

(१२) शब्द परिणति अपेक्षा

(१३) अशब्द परिणति अपेक्षा

शब्द परिणत पुद्गल अशब्द रूप में परिणत होकर पुनः शब्द रूप परिणति को प्राप्त होता है—यह उसके शब्द परिणमन का अन्तरकाल है और यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है।

अशब्द परिणत पुद्गल शब्द रूप में परिणत होकर पुनः अशब्द रूप परिणति को प्राप्त होता है यह उसके अशब्द परिणमन का अन्तरकाल है और यह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात भाग का होता है।

·२३ पुद्गल और आकाशास्तिकाय

आगासत्थिकाएगं भंते ! जीवाणं 'अजीवा ण य' किं पवत्तति ?

गोयमा ! आगासत्थिकाएणं जीवदव्वाणं 'य अजीवदव्वाण य' भायणभूए।

एगेण वि से पुण्णे, दोहि वि पुण्णे सयंपि माएज्जा।
कोडिसएणं वि पुण्णे, कोडिसहस्संपि माएज्जा॥१॥

अवगाहणालक्खणे णं आगासत्थिकाए।

—भग० श १३। उ ४। सू ५८। पृ० ६०१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् आकाशास्तिकाय, जीव और अजीव द्रव्यों का भाजन भूत (आश्रय रूप) है अर्थात् आकाश से जीव और अजीव द्रव्यों के 'अवगाह' की प्रवृत्ति होती है। जैसा—गाथा में कहा है—

अर्थात्—एक परमाणु से पूर्ण या दो परमाणु से पूर्ण एक आकाश प्रदेश में सौ परमाणु भी समा सकते हैं। सौ करोड़ परमाणुओं से पूर्ण, एक आकाश प्रदेश में हजार करोड़ परमाणु भी समा सकते हैं। चूंकि आकाशास्तिकाय का लक्षण अवगाहना रूप है।

·२४ पुद्गलों का ज्ञान

·१ विषय का ग्रहण-ज्ञान

(क) रूप का ग्रहण चक्षुरिन्द्रिय द्वारा होता है।

चक्खुस्स रूवं गहणं वयंति × × ×

रूवस्स चक्खुं गहणं वयंति। चक्खुस्स रूवं गहणं वयंति

—उत्त० अ ३२। गा २२ पुर्वार्घ, २३

रूप चक्षुरिन्द्रिय का ग्रहण (विषय) है। चक्षु को रूप का ग्राहक कहते हैं और रूप का चक्षु का ग्राह्य कहते हैं।

(ख) शब्द का ग्रहण श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा होता है।

सोयस्स सद्दं गहणं वयंति × × ×।

सद्दस्स सोयं गहणं वयंति, सोयस्स सद्दं गहणं वयंति।

—उत्त० अ ३२। गा ३५-३६

शब्द को श्रोत्रेन्द्रिय का ग्राह्य विषय कहते हैं। श्रोत्रेन्द्रिय को शब्द का ग्राहक कहते हैं और शब्द को श्रोत्रेन्द्रिय का ग्राह्य कहते हैं।

(ग) गंध का ग्रहण घ्राणेन्द्रिय द्वारा होता है।

घाणस्स गंधं गहणं वयंति

गंधस्स घाणं गहणं वयंति × × × घाणस्स गंधं गहणं वयंति।

—उत्त० अ ३२। गा ४८-४९

गंध को घ्राणेन्द्रिय का ग्राह्य (विषय) कहते हैं। घ्राणेन्द्रिय को गंध का ग्राहक कहते हैं और गंध को घ्राणेन्द्रिय का ग्राह्य कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(घ) रस का ग्रहण रसेन्द्रिय द्वारा होता है।

जिब्भाए रसं गहणं वयंति × × ×।

रसस्स जिब्भं गहणं वयंति, जिब्भाए रसं गहणं वयंति

—उत्त० अ ३२। गा ६१-६२

रस को जिह्वा इन्द्रिय का ग्राह्य (विषय) कहते हैं। जिह्वा को रस का ग्रहण करने वाली कहते हैं और रस को जिह्वा इन्द्रिय का ग्राह्य कहते हैं।

(ङ) स्पर्श का ग्रहण स्पर्शेन्द्रिय द्वारा होता है।

कायस्स फासं गहणं वयंति × × ×।

फासस्स कायं गहणं वयंति, कायस्स फासं गहणं वयंति

—उत्त० अ ३२। गा ७४-७५

स्पर्श को काया-स्पर्शेन्द्रिय का ग्राह्य विषय कहते हैं। काया को स्पर्श का ग्राहक कहते हैं और स्पर्श को काया का ग्राह्य कहते हैं।

चक्खुदंसणावरणीयं गरुअलहुअणंतपदेसिएसु दव्वेसु णिबद्धं।१२।

—षट्० सू १२। पु १५ पृ० ६८९

टीका—संखेज्जासंखेज्जपदेसियपोग्गलदव्वं चक्खुदंसणस्स विसओ ण होदि। किंतु अणंतपदेसियपोग्गलदव्वं चेव विसओ होदि त्ति जाणावणट्ठमणंतपदेसिएसु दव्वेसु त्ति भणिदं। एदं वयणं देसामासियं, तेण सव्वेसिं दंसणाणमचक्खुसण्णिदाणमेसा परूवणा कायव्वा। गरुअलहु-अविसेसणं अणंतपदेसियक्खंधस्स होदि, गरुआणं लोहदंडादीणं हलुआणमक्कतूलादीणं च चक्खिंदिएण गहणुवलंभादो।× × × ण, चक्खिंदियविसए परमाणुआदीणमसंभवादो।

चक्षु दर्शनावरणीय कर्म गुरु व लघु ऐसे अनन्त प्रदेशवाले द्रव्यों में निबद्ध है।

संख्यात व असंख्यात प्रदेशवाले पुद्गल द्रव्य चक्षु दर्शन का विषय नहीं होता किन्तु अनन्त प्रदेशवाले पुद्गल द्रव्य ही उसका विषय होता है। इस बात को जतलाने के लिए 'अनन्त प्रदेश वाले द्रव्यों में 'यह कहा है। यह वचन देशमर्शक है। इसलिए उसके अचक्षु संज्ञा वाले सब दर्शनों की यह प्ररूपणा करनी चाहिए। 'गुरु व लघु यह अनन्त प्रदेशवाले स्कंध का विशेषण है, क्योंकि चक्षुरिन्द्रिय के द्वारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोहदंडादि रूप गुरु और अर्कतुल (आक के पेड़ का रूंआ) आदि रूप लघु पदार्थों का ग्रहण किया जाता है।

'अगुरुलघु' विशेषण नहीं किया जाता है। क्योंकि परमाणु आदि चक्षुरिन्द्रिय के विषय नहीं होते हैं।

·२ कर्मपुद्गलों को इन्द्रिय ज्ञान से नहीं जाना जाता है।

कर्मपुद्गलानातिसूक्ष्‍ तया चक्षुरादीन्द्रियागोचरत्वात्।

—कर्मग्र० भा ६। गा ५। टीका। पृ० १५०

—कर्मग्र० भा १। गा ३२। टीका। पृ० ४६

कर्म पुद्गल अति सूक्ष्म होने के कारण-चक्षु आदि इन्द्रियों के अगोचर है।

·३ पुद्गल और अवधि ज्ञान

(क) ओहिणाणं णाम दव्व-क्खेत्त-काल-भाव-वियप्पियं पोग्गल-दव्वं पच्चक्खं जाणदि।

—षट्० खण्ड १, १। सू २। टीका। पु १३। पृ० ९३

(ख) तजस-भाषा-द्रव्यापान्तरालवर्त्यनन्त-प्रदेशिकाद् द्रव्यादारभ्य विचित्रवृद्धया सर्वमूर्तद्रव्याण्युत्कृष्टविषयपरिमाणमवधेर्वक्ष्यते। प्रतिवस्तुगताऽसंख्येयपर्यायरूपं च भावतो विषयमानमभिधास्यते। अतः सर्वमपि पुद्गलास्तिकायं, अवधिग्राह्यांश्च तत्पर्यायानाश्रित्यानन्तोऽवधिविषयः सिद्धो भवति। ज्ञेयभेदाच्च ज्ञानभेदः।

—विशेभा० गा ५६९। टीका। पृ० २५९-६०

(ग) परमाणुपज्जंतासेसपोग्गल-दव्वाणमसंखेज्जलोगमेत्त-खेत्तकाल-भावाणं कम्मसंबंधवसेण पोग्गलभावमुवगयजीव [जीवदव्वा] णं च पच्चक्खेण × × ×।

—विशेभा० गा ५६९। टीका पृ० २६०

तैजस और भाषा द्रव्य के अन्तरालवर्ती अनन्त प्रदेशी द्रव्य से सर्वमूर्त द्रव्य को अवधि ज्ञान जानता है। भाव की अपेक्षा प्रत्येक वस्तु की असंख्यात पर्याय को जानता है अतः अवधिज्ञान सर्व पुद्गल द्रव्य को जानता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(घ) वड्ढंतो उण बाहिं लोयत्थं चेव पासई दव्वं।
सुहुमयरं सुहुमयर परमोही जाव परमाणु॥

—विशेभा० गा ६०६

× × × सूक्ष्मतरं, सूक्ष्मतमं यावत् परमावधिः सर्वसूक्ष्मं परमाणुमपि पश्यति।

—विशेभा० गा ६०६ टीका। पृ० २७२

लोक व्यवहार वृद्धिगत प्राप्त हुआ अवधि ज्ञान, लोक में स्थित द्रव्य को ही सूक्ष्मतर रूप में देखता है और परमावधि ज्ञानी एक परमाणु भी देखता है।

× × × परमाणुआदियाइं परमाण्वादिकानि अंतिमखधंति आपश्चिम स्कंधादिति मुत्तिदव्वाइं मूर्तिद्रव्याणि जं यस्मात् पस्सदि पश्यति जानीते ताणि तानि पच्चक्खं साक्षात् तं तत् ओहिदंसणं अवधि-दर्शनमिति द्रष्टव्यम्।

परमाणुमादिं कादूण जाव पच्छिमखंधोत्ति ट्ठिदपोग्गलदव्वाणमवगमादो पच्चक्खादो जो पुव्वमेव सुवसत्ती विसयउवजोगो ओहिणाणुप्पत्तिणिमित्तो तं ओहिदंसणमिदि घेत्तव्वं, अण्णहा णाण-दंसणाणं भेदाभावादो × × ×।

—षट्० खण्ड० २। भा १। सू ५६ टीका। पुस्तक ७। पृ० १०२

परमाणु से अन्तिम स्कंध पर्यन्त जितने मूर्तिक द्रव्य हैं उन्हें जिसके द्वारा साक्षात् देखता है या जानता है वह अवधि दर्शन है—ऐसा जानना चाहिए।

परमाणु से लेकर अन्तिम स्कंध पर्यन्त जो पुद्गल द्रव्य स्थित है उनके प्रत्यक्ष ज्ञान से पूर्व ही जो अवधि ज्ञान की उत्पत्ति का निमित्त भूत स्वशक्ति विषयक उपयोग होता है वही अवधि दर्शन है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अन्यथा ज्ञान और दर्शन में कोई भेद नहीं रहता।

·४ केवली को परमाणु पुद्गल का ज्ञान

(क) केवली में एक समय दोनों उपयोग का निषेध

केवली णं भंते! इमं रयणप्पभं पुढविं आगारेहिं हेतूहिं उवमाहिं दिट्ठंतेहिं वण्णेहिं संठाणेहिं पमाणेहिं पडोयारेहिं जं समयं जाणइ तं समयं पासइ जं समयं पासइ तं समयं जाणइ? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ केवली णं इमं रयणप्पभं पुढविं आगारेहिं जाव जं समयं जाणइ णो तं समयं पासइ जं समयं पासइ णो तं समयं जाणइ ? गोयमा ! सागारे से णाणे भवइ अणगारे से दंसणे भवइ, से तेणट्ठेणं जाव णो तं समयं जाणइ। एवं जाव अहेसत्तमं। एवं सोहम्मं कप्पं जाव अच्चुयं गेवेज्जगविमाणा अणुत्तरविमाणा ईसीपब्भारं पुढविं परमाणुपोग्गलं दुपएसियं खंधं जाव अणंतपएसियं खंधं।१९६३।

केवली णं भंते ! इमं रयणप्पभं पुढविं अणागारेहिं अहेतूहिं अणुवमाहिं अदिट्ठंतेहिं अवण्णहिं असंठाणेहिं अपमाणहिं अपडोयारेहिं पासइ, ण जाणइ ? हंता-गोयमा ! केवली णं इमं रयणप्पभं पुढविं अणागारेहिं जाव पासइ, ण जाणइ। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ केवली णं इमं रयणप्पमं पुढविं अणागारेहिं जाव पासइ ण जाणइ ? गोयमा ! अणगारे से दंसणे भवइ सागारे से णाणे भवइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ केवली णं इमं रयणप्पमं पुढविं अणागारेहिं जाव पासइ ण जाणइ। एवं जाव ईसीपब्भारं पुढविं परमाणुपोग्गलं अणंतपएसियं खंधं पासइ, ण जाणइ।१९६४।

—पण्ण० प ३०। सू १९६३, ६४

केवल ज्ञानी इस रत्नप्रभा पृथ्वी को आकारों से, हेतुओं से, उपमाओं से, दृष्टांतों से, वर्णो से, संस्थानों से, प्रमाणों से और प्रत्यवतारों से जिस समय जानते हैं उस समय नहीं देखते हैं तथा जिस समय देखते हैं उस समय नहीं जानते हैं।

इस कारण यह है कि जो साकार होता है वह ज्ञान होता है और जो अनाकार होता है वह दर्शन होता है। इसलिए जिस समय साकार (ज्ञान) होता है, उस समय अनाकार (दर्शन) ज्ञान नहीं रहेगा, इसी प्रकार जिस समय अनाकार ज्ञान (दर्शन) होगा उस समय साकार ज्ञान नहीं रहेगा। इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि केवल ज्ञानी जिस समय जानता है, उस समय देखता नहीं है। जिस समय देखता है, उस समय जानता नहीं है।

इसी प्रकार शर्करा पृथ्वी से यावत् अधः सप्तम नरक पृथ्वी तक के विषय में जानना चाहिए और इसी प्रकार का कथन सौधर्म कल्प से लेकर अच्युत कल्प, ग्रैवेयक विमान, अनुत्तर विमान, ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी, परमाणु पुद्गल, द्विप्रदेशिक स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक के जानने और देखने के विषय में समझना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाहिए। अर्थात् परमाणु पुद्गल व स्कन्ध पुद्गल आदि को जिस समय केवली जानते हैं उस समय देखते नहीं और जिस समय देखते हैं उस समय जानते नहीं हैं।

केवल ज्ञानी इस रत्नप्रभा पृथ्वी को अनाकारों से, अनुपमाओं से, अदृष्टान्तों से, अवर्णों से, असंस्थानों से, अप्रमाणों से और अप्रत्यवतारों से देखते हैं, जानते नहीं हैं। इसका कारण यह है कि—जो अनाकार होता है वह दर्शन (देखना) होता है और साकार होता है वह ज्ञान (जानना) होता है। इस अभिप्राय से हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि केवली इस रत्नप्रभा पृथ्वी को अनाकारों से यावत् देखते हैं, जानते नही हैं।

इसी प्रकार (अनाकारों से यावत् अप्रत्यवतारों से शेष छहों नरक पृथ्वियों, वैमानिक देवों के विमानों) यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी, परमाणु पुद्गल, द्विप्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध को केवली देखते हैं, किन्तु जानते नहीं हैं—यह कहना चाहिए।

·५ स्कन्ध पुद्गल का ज्ञान

केवली णं भंते ! परमाणुपोग्गलं परमाणुपोग्गलेत्ति जाणइ पासइ ? एवं चेव (हंता, जाणइ पासइ), एवं दुपएसियं खंधं, एवं जाव—जहा णं भंते ! केवली अणंतपएसियं खंधं अणंतपएसिए खंधेत्ति जाणइ पासइ तहा णं सिद्धे वि अणंतपएसियं जाव पासइ ? हंता, जाणइ, पासइ।

—भग० श १४। उ १०। सू १५३-५४। पृ० ६५३

केवली ज्ञानी परमाणु पुद्गलों को जानते हैं, देखते हैं चूंकि केवल ज्ञानी परमाणु पुद्गल को—यह परमाणु पुद्गल है—इस प्रकार जानते हैं, देखते हैं।

इसी प्रकार केवल ज्ञानी द्विप्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध को जानते हैं, देखते हैं।

इसी प्रकार सिद्ध भी परमाणु पुद्गल को जानते हैं, देखते हैं।

द्विप्रदेशी स्कन्ध से यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध को सिद्ध जानते हैं, देखते हैं।

नोट—यहाँ केवली शब्द से 'भवस्थ केवली' को ग्रहण करना चाहिए। अतः सिद्ध के विषय में पृथक् प्रश्न किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·६ छद्मस्थ को पुद्गल का ज्ञान

(क) छउमत्थे णं भंते ! मणूसे परमाणुपोग्गलं किं जाणइ पासइ, उदाहु न जाणइ न पासइ ? गोयमा ! अत्थेगइए जाणइ न पासइ, अत्थेगइए न जाणइ न पासइ ।

—भग० श १८ । उ ८ । सू ७ । पृ० ७७७

(ख) छउमत्थे णं भंते ! मणूसे दुपएसियं खंधं किंजाणइ पासइ ? एवं चेव । एवं जाव-असंखेज्जपएसियं । छउमत्थे णं भंते ! मणूसे अणंत-पएसियं खंधं किं-पुच्छा । गोयमा ! अत्थेगइए जाणइ पासइ १, अत्थे-गइए जाणइ न पासइ २, अत्थेगइए न जाणइ पासइ ३, अत्थेगइए न जाणइ न पासइ ।

—भग० श १८ । ८ । सू ८, ९ । पृ० ७७७

छदमस्थ मनुष्य द्विप्रदेशी स्कन्ध को न जानता है, न देखता है । इसी प्रकार यावत् संख्यात प्रदेशी स्कन्ध तथा असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध को न जानता है, न देखता है ।

छद्मस्थ मनुष्य में से अनंतप्रदेशी स्कंध को १—कतिपय जानते हैं, देखते हैं, २—कतिपय जानते हैं, देखते नहीं हैं ३—कतिपय नहीं जानते हैं पर देखते हैं और ४—कतिपय न जानते हैं, न देखते हैं ।

नोट—टीकाकार ने यहाँ छदमस्थ का अर्थ विशिष्ट अवधि ज्ञान रहित किया है ।

·७ निर्जरा के पुद्गलों का ज्ञान

नेरइया णं भंते ! ते निज्जरापोग्गले किं जाणंति-पासंति ? आहारेंति ? उदाहु न जाणंति-पासंति, न आहारेंति ?

मागंदिया पुत्ता । नेरइयाणं ते निज्जरापोग्गले न जाणंति, न पासंति, आहारेंति । एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया ।

—भग० श १८ । उ ३ । सू ६८

नारकी उन निर्जरा पुद्गलों को जानते-देखते नहीं हैं परन्तु आहार रूप में ग्रहण करते हैं । इस प्रकार यावत् पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक तक जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुस्सा णं भंते, णिज्जरापोग्गले किं जाणंति पासंति आहारेंति, उदाहु ण जाणति ण पासंति ण आहारेंति ?

मागंदिय पुत्ता। अत्थेगइया जाणंति, पासंति, आहारेंति। अत्थेगइया न जाणंति, न पासंति, आहारेंति।

से केणट्ठेणं ! एवं वुच्चइ-अत्थेगइया जाणंति-पासंति, आहारेंति ? अत्थेगइया न जाणंति, न पासंति, आहारेंति ?

मागंदिय पुत्ता। मणुस्सा दुविहा पण्णत्ता, तंजहा-संण्णिभूया य, असण्णिभूया य। तत्थणं जे ते असण्णिभूया य ते णं न जाणंति न पासंति, आहारेंति। तत्थणं जे ते सण्णिभूया ते दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—उववत्ता य अणुवउत्ता य। तत्थणं जे ते अणुवउत्ता ते णं न जाणंति न पासंति, आहारेंति। तत्थणं जे ते उवउत्ता तेणं जाणति पासंति, आहारेंति। से तेणट्ठेणं मागंदिय पुत्ता ; एवं वुच्चइ-अत्थेगइया न जाणंति न पासंति, आहारेंति। अत्थेगइया जाणंति पासंति, आहारेंति।

वाणमंतर-जोइसिया जहा नेरइया। (वेमाणिया) जहा मणुस्सा।

—भग० श १८। उ ३। सू ६९, ७०

कतिपय मनुष्य निर्जरा के पुद्गलों को जानते-देखते हैं और आहार रूप में ग्रहण करते हैं और कतिपय मनुष्य नहीं जानते हैं, नहीं देखते हैं परन्तु आहार रूप से ग्रहण करते हैं। इसका अभिप्राय यह है—

मनुष्य दो प्रकार के कहे गये हैं। संज्ञी भूत और असंज्ञीभूत। जो असंज्ञीभूत हैं वे निर्जरा के पुद्गलों को नहीं जानते हैं, नहीं देखते हैं किन्तु आहार रूप से ग्रहण करते हैं। जो संज्ञीभूत है वे दो प्रकार के कहे गये हैं यथा—उपयुक्त और अनुपयुक्त। जो अनुपयुक्त हैं, वे नहीं जानते हैं, नहीं देखते हैं किन्तु आहार रूप से ग्रहण करते हैं। और जो उपयुक्त है वे जानते हैं, देखते हैं और आहार रूप से ग्रहण करते हैं। इसलिये ऐसा कहा गया है कि कुछ मनुष्य नहीं जानते हैं, नहीं देखते और आहार रूप से ग्रहण करते हैं तथा कुछ जानते हैं, देखते हैं और आहार रूप से ग्रहण करते हैं। वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिए। वैमानिक देवों का कथन मनुष्य के समान जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२५ पुद्गल के भेद और उनके उदाहरण

·१ अणु तथा स्कंध

(पुद्गलाः) अणवः स्कन्धाश्च ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २५ । पृ० २७४

पुद्गल के दो भेद होते हैं, यथा—अणु और स्कन्ध ।

·२ अनन्त भेदा अपि पुद्गला अणुजात्या स्कंधजात्या च ।

—सर्वसि० अ ५ । सू २५

× × × **तत्राणवोऽबद्धाः, स्कंधास्तु बद्धाएवेति ।**

—तत्त्वभा० अ ५ । सू २५ पर भाष्य

परमाणु अबद्ध होते हैं अर्थात् वे परस्पर में असंश्लिष्ट होते हैं तथा स्कंध बद्ध होते हैं अर्थात् जब उन परमाणुओं का संश्लेष होकर संघात बन जाता है तब उसको स्कंध कहते हैं ।

·३ अणुखंधवियप्पेण दु, पोग्गलदव्वं हवेइ दुवियप्प ।
खंधा हु छप्पयारा, परमाणू चेव दुवियप्पो ।।

—नियः अ २ । गा २०

पुद्गल द्रव्य के दो प्रकार है—परमाणु पुद्गल और स्कंध पुद्गल । स्कंध-पुद्गल के छः प्रकार हैं । परमाणु दो प्रकार के हैं—कारण परमाणु और कार्य परमाणु ।

·४ राज टीका—उभयात्र जात्यापेक्षं बहुवचनं—अनन्तभेद अपि पुद्गला अणुजात्या स्कन्ध जात्या × × × ।

द्व विध्यमापद्यमानाः सर्वे गृह्यंत इति तद्‌जात्यावानन्तभेदसंसूचनार्थ बहुवचनं क्रियन्ते ।

—तत्त्वराज० अ ५ । सू २५

अर्थात् । 'अणव, स्कन्धा' इन बहुवचनात्मक शब्दों का व्यवहार जाति अपेक्षा से किया गया है । अणुजातियों और स्कंध जातियों की अपेक्षा अनंत भेद वाले होते है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणु तथा स्कंध इन दो भेदों में सभी पुद्गल ग्रहण हो जाते हैं, लेकिन इन दो भेदों की जातियों के आधार पर अनंत भेदों को बतलाने के लिए ही संसूचनार्थ बहुवचनों का प्रयोग किया गया है।

·५ स्पर्शरसगंधवर्णवंतोऽणवः। स्कंधाः पुनः शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्य-संस्थानभेदतमश्छायातपोद्योतवंतश्च।

—सर्वसि० अ ५। सू २५

परमाणु स्पर्श, रस, गंध और वर्णवान् होता है। शब्द, बंध, सौक्ष्म्य, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तप, छाया, आतप, उद्योत—ये सब स्कंध पुद्गल है।

·२५ पुद्गल के भेद व उनके उदाहरण

·६ चार भेद

सुहुमु थूलु वज्जरइ स-मद्दउ॥
थूलु - सुहुमु - जोण्हा - छायाइउ।
थूलु सलिलु वीरेण णिवेइउ॥
थूलु - थूलु पुणु धरणी - मंडलु।
सग्ग - विमाण - पडलु मणि - णिम्मलु॥
सुहुमइँ कम्माइयइँ स णामइँ।
मण - भासा - वग्गण - परिणामइँ॥

—वीरजि० संधि १२। कड १०

पुद्गल द्रव्य में सूक्ष्म, स्थूल, स्थूलसूक्ष्म और स्थूल स्थूल—ये चार प्रकार पाये जाते है।

प्रकाश और छाया—ये पुद्गल द्रव्य स्थूल-सूक्ष्म के उदाहरण है। स्थूल का उदाहरण जल है। स्थूल-स्थूल का यह धरणी मण्डल, एवं मणियों के समान स्वर्ग विमानपटल सूक्ष्म पुद्गल अपने-अपने नामों वाले नाना कर्मों के रूप में पाया जाता है, तथा मन और भाषा रूप वर्गणायें उसीके परिणमन है। ऐसा भगवान् ने दयापूर्वक कहा है।

·७ छह भेद

(क) बादरबादर, बादर, बादरसुहुमंच सुहुमथूलं च।
सुहुमं च सुहुमसुहमं च धरादियं होदि छब्भेयं॥

—गोजी० गा ६०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल के छः भेद हैं—यथा सूक्ष्म-सूक्ष्म, सूक्ष्म, सूक्ष्मबादर, बादरसूक्ष्म, बादर और बादरबादर।

(ख) ते होंति छप्पयारा तेलोक्कं जेहिं णिप्पण्णं ॥७६॥

—पंचश्वे०। श्लो ७६

टीका—तथैव च बादरसूक्ष्मत्वपरिणामविकल्पैः षट्प्रकारतामापद्य त्रैलोक्यरूपेण निष्पद्य स्थितवंत इति। तथाहि—बादरबादराः, बादराः, बादरसूक्ष्माः सूक्ष्मबादराः, सूक्ष्माः, सूक्ष्मसूक्ष्माः इति। तत्र छिन्नाः स्वयं संधानासमर्थाः काष्ठ पाषाणादयो बादरबादराः। छिन्नाः स्वयं संधान-समर्थाः क्षीरघृततैलतोयरसप्रभृतयो बादराः स्थूलोपलंभा अपि छेत्तुं भेत्तुं मादातुमशक्या छायाऽऽतपतमोज्योत्स्नादयो बादरसूक्ष्माः। सूक्ष्मत्वेऽपि स्थूलोपलंभाः स्पर्शरसगंधवर्णशब्दाः सूक्ष्मबादराः सूक्ष्मत्वेऽपि हि करणानु पलभ्याः कर्मवर्गणादयः सूक्ष्माः। अत्यंतसूक्ष्माः कर्मवर्गणाभ्योऽधो द्व्यणुक स्कन्धपर्यन्ताः सूक्ष्मसूक्ष्मा इति।

पुद्गल द्रव्य छः प्रकार का होता है—यथा—१—बादर-बादर, २—बादर, ३—बादर सूक्ष्म, ४—सूक्ष्म बादर, ५—सूक्ष्म तथा ६ सूक्ष्म-सूक्ष्म।

नोट—पुद्गल के सूक्ष्म, बादर दो भेद भी होते हैं। यहाँ इन दो भेदों का विश्लेषण कर ६ भेद कहे गये हैं।

१ बादर-बादर—जिस पुद्गल स्कन्ध का छेदन-भेदन न हो सके किन्तु अन्यत्र प्रायशः सामान्य से हो सके उस पुद्गल स्कन्ध को बादर-बादर कहते हैं। जैसे काष्ठ-पाषाण आदि बादर-बादर है।

२—बादर—जिस पुद्गल स्कन्ध का छेदन-भेदन न हो सके किन्तु अन्यत्र प्रायशः हो सके उस पुद्गल स्कन्ध (तरक LIQUIDS) को बादर कहते हैं—जैसे क्षीर, घृत, तैल, रस आदि बादर है।

३—बादर-सूक्ष्म—जिस पुद्गल स्कन्ध का छेदन-भेदन, अन्यत्र प्रायशः कुछ भी न हो सके, ऐसे नेत्र से दृश्यमान पुद्गल स्कन्ध को बादर-सूक्ष्म कहते हैं—जैसे, छाया आतप, तप, ज्योत आदि बादर-सूक्ष्म है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४—सूक्ष्म-बादर-नेत्र को छोड़कर चार इन्द्रियों के विषयभूत पुद्गल स्कन्ध को (Ultravisi Ble But Intrasensual Matters) सूक्ष्म-बादर कहते हैं। जैसे स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, शब्द आदि सूक्ष्म-बादर है।

५—सूक्ष्म—उन सूक्ष्म पुद्गल स्कंधों को जो अतीन्द्रिय (Vetravisible Matters) है उन्हें सूक्ष्म कहते हैं—जैसे कर्म-वर्गणा आदि सूक्ष्म है।

६—सूक्ष्म-सूक्ष्म—सूक्ष्मात् सूक्ष्म परमाणु (Ultimate atom) को सूक्ष्म-सूक्ष्म कहा गया है। अत्यन्त सूक्ष्म है। कर्म वर्गणा से भी नीचे द्विअणु स्कंध पर्यन्त सूक्ष्म-सूक्ष्म है। क्योंकि प्रथमतः यह अत्यन्त सूक्ष्म है—इससे सूक्ष्म और कोई पुद्गल नहीं है।

·२६ पुद्गल स्पर्श-रस-गंध-वर्णवाला है।

स्पर्शादयः परमाणुषु स्कन्धेषु च परिणामजा एवं भवन्ति।

—तत्त्व० अ ५। सू २४ का भाष्य

स्पर्शादि का परिणमन-परमाणु व स्कंध पुद्गलों में होता है।

परिप्राप्त बन्धपरिणामाः स्कन्धा।

—तत्त्व० अ ५। सू २५

परमाणु पुद्गलों के एकीभाव रूप का नाम स्कन्ध है।

·२७ पुद्गल स्कन्ध कितने परमाणु के बने हुए होते हैं।

संखेज्जासंखेज्जाणंता वा होंति पोग्गलपदेसा।
लोगागासेव ठिदो एगपदेसो अणुस्स हवे॥

—गोजी० गा ५८५

संख्यात या असंख्यात या अनन्त परमाणुओं से बने हुए स्कन्ध होते हैं। परमाणु एक प्रदेशी होता है। लोकाकाश में ही यह स्थिति हैं।

एगत्तेण पहुत्तेण, खंधा य परमाणु य।

—उत्त० अ ३६। गा ११

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

समवाय रूप में पुद्गल स्कन्ध है तथा भिन्न-भिन्न रूप में परमाणु है।

नोट—इस को —परमाणु पुद्गल को प्रत्यक्ष से परमावधिज्ञानी तथा केवलज्ञानी ही जान सकते हैं। अन्य जीव कार्य लिंग की अपेक्षा अनुमान से जान सकते हैं।

·३०·४९ परमाणु पुद्गल

·३१ परमाणु पुद्गल के गुण

·३१·१ द्रव्यत्व

(क) परमाणु दव्व एगदव्वं तु।

—विशेभा० गा १३८५। पूर्वार्ध

टीका—तत्र द्रव्ये द्रव्यतः परमाणुमेकं द्रव्यम्।

(ख) एगे भंते! पोग्गलत्थिकायपएसे किं दव्वं, दव्वदेसे, दव्वाइं, दव्वदेसा; उदाहु दव्वं च दव्वदेसे य, उदाहु दव्वं च दव्वदेसा य, उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसे य, उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसा य? गोयमा! सिय दव्वं, सिय दव्वदेसे, णो दव्वाइं, णो दव्वदेसा, णो दव्वं च दव्वदेसे य, जाव णो दव्वाइं च दव्वदेसा य।

—भग० श ८। उ १०। सू १७। पृ० ५७१-२

टीका - पुद्गलास्तिकाय एकाणुकाऽऽदिषु पुद्गलराशेः प्रदेशो निरंशोंऽशः पुद्गलास्तिकाय प्रदेशः परमाणुः द्रव्यं गुणपर्याययोगिद्रव्यदेशो द्रव्यावयवः। एवमेकत्व बहुत्वाभ्यां प्रत्येकं विकल्पा श्चत्वारो द्विकसंयोगा अपि चत्वार एवेति प्रश्नाः। उत्तरं तु स्याद् द्रव्यं द्रव्यान्तरासंबंधे सति, स्याद् द्रव्यदेशो द्रव्यान्तरसंबंधे सति, शेष विकल्पानां तु प्रतिषेधः परमाणुरेकत्वेन बहुत्वस्य द्विकसंयोगस्यचाऽभावादिति।

एक, द्वय अणुक आदि पुद्गल राशि-पिंड-स्कंध के निरंश-अविभाज्य अंश को पुद्गलास्तिकाय का प्रदेश कहते हैं।

परमाणु को द्रव्य कहते हैं क्योंकि वह गुणपर्याय युक्त होता है। लेकिन जब वह परमाणु किसी स्कंध का अंश होता है तब द्रव्य देश - द्रव्य का अवयव कहलाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। स्वतन्त्र परमाणु अप्रदेशी कहलाता है लेकिन किसी स्कंध में जड़ित परमाणु 'प्रदेश' वा द्रव्य देश कहलाता है।

(ग) × × ×। परमाणूणं परमाणुभावेण सव्वकालमवट्ठाणाभावादो दव्वभावो ण जुज्जदे ? ण पोग्गलभावेण उप्पादविणासवज्जिएण परमाणूणं पि दव्वत्तसिद्धीदो।

—षट्० खं० ५, ६। गा ७६। टीका। पु १४। पृ० ५५

यद्यपि परमाणु सदाकाल परमाणु रूप से अवस्थित नहीं रहते हैं तथापि परमाणुओं का पुद्गल रूप से उत्पाद और विनाश नहीं होता है अतः परमाणुओं में द्रव्यत्व सिद्ध होता है।

·३१·२ शाश्वत-अशाश्वत

परमाणु पुद्गल और शाश्वतता और अशाश्वतता।

परमाणु पुद्गल (नित्यता-अनित्यता) शाश्वत् भी है—अशाश्वत भी है।

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सासए, असासए ? गोयमा ! सिय सासए, सिय असासए। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'सिय सासए, सिय असासए ? गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासए, वन्नपज्जवेहिं, जाव फासपज्जवेहिं असासए, से तेणट्ठेणं जाव—सिय सासए, सिय असासए।

—भग० श १४। उ ४। सू ५। पृ० ६९९

परमाणु पुद्गल कथंचिद् शाश्वत-नित्य है और कथंचिद अशाश्वत-अनित्य है। द्रव्यार्थ की अपेक्षा नित्य है क्योंकि परमाणु पुद्गल का स्कंध के साथ अन्तर्भाव हो जाने पर भी उसका परमाणुत्व नष्ट नहीं होता है। वर्णपर्याय यावत् स्पर्शपर्यायों की अपेक्षा अनित्य है क्योंकि परमाणु पुद्गल की पर्यायों का परिणमन होता रहता है।

टीकाकार ने शाश्वत का अर्थ नित्य और अशाश्वत का अर्थ अनित्य किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३१ ३ नित्यता/अनित्यता

(क) × × ×। नित्यश्च भवति परमाणुः।

—ठाण० स्था १। सू ४५। टीका में उद्धृत

(ख) 'नित्यश्चेति' द्रव्यास्तिकनयापेक्षयाऽनुज्झितमूर्तिः पर्यायापेक्षया तु नीलादिभिराकारैरनित्य एवेति, न ततः परमणीयोऽस्ति द्रव्यमिति परमाणुः।

(ग) अयं सर्वोऽपि द्रव्यप्रस्तारः सदादि—परमाणुपर्यन्तो नित्यः। × × ×। द्रव्यार्थिकंकस्य सर्वस्य वस्तु नित्यत्वान्नोत्पद्यते न विनश्यति चेति स्थितम्।

—कसापा० भा १। गा १३-१४। टीका। पृ० २१६

परमाणु पुद्गल नित्य है अर्थात् परमाणु पुद्गल का कभी विनाश नहीं होता है। स्कंध रूप परिणमन होकर भी इसका व्यक्तित्व नष्ट नहीं होता है।

द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा परमाणु पुद्गल नित्य है ; पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा परमाणु पुद्गल अनित्य भी होता है क्योंकि नीलादि आकार अनित्य होते हैं। अतः यहाँ परमाणु पुद्गल को द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा नित्य कहा गया है तथा पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा अनित्य कहा गया है।

सभी द्रव्य परमाणु समेत नित्य है क्योंकि द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा समस्त द्रव्य नित्य है अतः न कोई वस्तु उत्पन्न होती है, न कोई वस्तु विनष्ट होती है—यह निश्चित है।

(घ) णिच्चो × × ×।

—पंच० गा ८०

जयसेन टीका—'णिच्चो' नित्यः। कस्मात्। 'पदेसदो' प्रदेशतः परमाणोः खलु एकेन प्रदेशेन सर्वदाविनश्वरत्वान्नित्यो भवति।

परमाणु प्रदेश की अपेक्षा नित्य है क्योंकि वह अपने एक प्रदेशत्व को त्रिकाल में भी विनष्ट नहीं करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३१·४ अजीवत्व

(क) रूविअजीवदव्वा णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणु-पोग्गला।

—पण्ण० प १ । सू ६ । पृ० २६५
—जीवा० प्रति १ । सू ५ । पृ० १०५

परमाणु पुद्गल—अजीव है।

(ख) रूवियाजीवविभत्ती चउव्विधा, तं जहा—खंधा, खंधदेसा, खंध-पएसा, परमाणुपोग्गला।

—सूय० अ ५ । चू० सू ६६

·३१·५ पूरण-गलन स्वभाव

अणूनां निरवयवत्वात् पूरणगलनक्रियाभावात् पुद्गलव्यपदेशाभावप्रसंग इति ; तन्न ; किं कारणम् ? गुणापेक्षया तत्सिद्धेः। रूपरसगंधस्पर्श-युक्ता हि परमाणवः एकगुणरूपादिपरिणताः द्वित्रिचतुःसंख्येयाऽसंख्येयाऽनं-तगुणत्वेन वर्धन्ते, तथैव हानिमपि उपयान्तीति गुणापेक्षया पूरणगलन-क्रियोपपत्तेः परमाणुष्वपि पुद्गलत्वमविरूद्धम्। अथवा गुण उपचार कल्पनम् पूरणगलनयोः भावित्वात् भूतत्वाच्च शक्त्यपेक्षया परमाणुषु पुद्गलत्वोपचारः।

—राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४

परमाणु पुद्गल शक्ति की अपेक्षा पूरण-गलन धर्मवाला है।

परमाणु पुद्गल में एक गुण, दो गुण, तीन गुण, चार गुण, (पाँच गुण, छह गुण, सात गुण, आठ गुण, नव गुण, दस गुण) सख्यातगुण, असंख्यातगुण तथा अनतगुण—रूप-गंध-रस-स्पर्श की हानि-वृद्धि होती रहती है अतः गुण की अपेक्षा परमाणु पुद्गल पूरण-गलन क्रियावाला है।

·३१·६ अनर्द्ध-अमध्य-अप्रदेशत्व

(क) परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सअड्ढे, समज्झे, सपएसे ; उदाहु अणड्ढे, अमज्झे, अपएसे ? गोयमा ! अणड्ढे, अमज्झे, अपएसे ; णो सअड्ढे, णो समज्झे, णो सपएसे।

—भग० श ५ । उ ७ । सू ९ । प्र० ४८३

(ख) परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सड्ढे अणड्ढे ? गोयमा ! नो सड्ढे, अणड्ढे ।

—भग० श २५ । उ ४ । सू ९ । पृ० ८६८

तओ अच्छेज्जा पन्नत्ता, तंजहा—समये, पएसे, परमाणू १, एवमभेज्जा २, अडज्झा ३, अगिज्झा ४, अणड्ढा ५, अमज्झा ६, अपएसा ७ ।

तओ अविभाइमा पन्नत्ता, तंजहा—समये, पएसे, परमाणू ।

—ठाण० स्था ३ । उ २ । सू १६५ । पृ० २११

टीका—'तओ अच्छेज्जे' त्यादि, छेत्तुमशक्या बुद्धया क्षुरिकाविशस्त्रेण वेत्यच्छेद्याः, छेद्यत्वे समयादि त्वायोगादिति । समयः-कालविशेषः प्रदेशो-धर्माधर्माकाशजीवपुद्गलानां निरवयवोंऽशः परमाणुः-अस्कंध पुद्गल इति उक्तं च —"सत्थेण सुतिक्खेणवि छेत्तुं भेत्तुं च जं किर न सक्का। तं परमाणुं सिद्धा वयंति आइं परमाणाणं ॥१॥ त्ति, 'एव' मिति पूर्व-सूत्राभिलापसूचनार्थं इति, अभेद्याः सूच्यादिना अदाह्या अग्निक्षारादिना अग्राह्या हस्तादिनां न विद्यतेऽर्द्धं येषामित्यनर्द्धा विभागद्वयाभावात्, अमध्या विभागत्रयाभावात् अत एवाह—'अप्रदेशाः' निरवयवाः, अत एवाविभाज्या-विभक्तुमशक्याः, अथवा विभागेन निर्वृत्ता विभागिमास्तन्नि-षधाद विभागिमाः ।

(ग) अपदेसो परमाणू तेण पदेसुब्भवो भणिदो ।

—प्रव० अ २ । गा ४५ । उत्तरार्ध

(घ) परमाणुरप्रदेशो वर्णादिगुणेषु भजनीयः ।

—प्रशम० श्लो २०८ । उत्तरार्ध

टीका—परमाणुस्तु न स्कंधशब्दाभिधेयोऽप्रदेशत्वात् । न हि तस्य द्रव्यप्रदेशाः सन्त्यन्ये । स्वयमेवासौ प्रदेशः प्रकृष्टोदेशोऽवयवः प्रदेशाः । न ततः परमन्यः सूक्ष्मतमोऽस्ति पुद्गलः । द्रव्यप्रदेशः वर्णगंधरसस्पर्शगुणेषु भजनीयः सेवनीयः । प्रदेशत्वेन सन्निहितस्य वर्णादयोऽवयवास्तैरवयवैः सप्रदेश एवासौ द्रव्यावयवैरप्रदेश इति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ङ) द्रव्यमित्यादिमध्यांतमविभागमतींद्रियं।
अविनाश्यग्निशस्त्राद्यैः परमाणुरुदाहृतं॥

—योगसार। अधि २। श्लो १०

(च) परमाणुरनंशकः।

—योगसार० अधि २। श्लो ११

परमाणु पुद्गल अच्छेद्य है, अभेद्य है, अदाह्य है, अग्राह्य है, अनर्द्ध है, अमध्य है, अप्रदेशी है, अविभागी है परन्तु सार्ध नहीं है, समध्य नहीं है और सप्रदेशी भी नहीं है।

बुद्धि द्वारा अथवा क्षुरिकादि के द्वारा (स्कंध से विच्छिन्न) परमाणु पुद्गल का छेदन नहीं होता है अतः परमाणु पुद्गल अच्छेद्य है क्योंकि छेदन करने में समय आदि के अयोग्य होता है। कहा है—"जो सुतीक्ष्ण शस्त्रों के द्वारा भी छेदा-भेदा न जा सके उसे ज्ञानी पुरुष परमाणु कहते हैं और वह अंगुल आदि प्रमाण का आदि—मूल-रूप है। सूची आदि के द्वारा अभेद्य है; अग्नि-क्षार आदि के द्वारा अदाह्य है, हस्तादि के द्वारा जिसके अर्द्धभाग ग्राह्य नहीं है अतः परमाणु पुद्गल अग्राह्य है। दो विभाग का अभाव होने से परमाणु पुद्गल अनर्द्ध है; तीन विभाग का अभाव होने से परमाणु पुद्गल अमध्य है। अतः कहा गया है कि परमाणु पुद्गल अप्रदेशी है, निरवयव है। इस प्रकार परमाणु का विभाग भी संभव नहीं है। अथवा जो विभाग से बने वह विभागवाला और ऐसे विभाग का निषेध होने से परमाणु अविभागी होता है।

(छ) परमाणुपोग्गलाणं भंते! किं सड्ढा, अणड्ढा? गोयमा! सड्ढा वा, अणड्ढा वा।

—भग० २५। उ ४। सू ८७। पृ० ८६८-६९

टीका—परमाणुपोग्गलेत्यादि। यदा बहवोऽणवः समसंख्या भवन्ति तदा सार्द्धाः यदास्तु विषमसंख्यास्तदा अनर्द्धाः। संघातभेदाभ्यामनवस्थितस्वरूपत्वात्तेषामिति।

जब परमाणुओं का समूह होता है तब उनकी संख्या बहुत होती है। और वह संख्या सम होती है तो वे सार्ध होते हैं और यदि संख्या विषम होती है तो वे अनर्द्ध होते हैं। परमाणु की संख्या संघात और भेद के कारण अवस्थित नहीं होती है इसलिए वे कभी समसंख्यक हो जाते हैं तथा कभी विषम-संख्यक हो जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३१ ७ अच्छेद्य-अभेद्यत्व

१ सूक्ष्म परमाणु का अच्छेद्य-अभेद्यत्व

(क) परमाणुपोग्गले णं भंते ! असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ? हंता, ओगाहेज्जा। से णं भंते ! तत्थ छिज्जेज्जा वा भिज्जेज्जा वा ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थं कमइ, एवं जाव-असंखेज्ज-पएसिओ × × ×।

एवं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं णवरं 'झियाएज्ज' भाणियव्वं, एवं पुक्खलसंवट्टगस्स महामेहस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं 'उल्ले सिया' एवं गंगाए महाणईए पडिसोयं हव्वं आगच्छेज्जा, तहिं विणिहायं आवज्जेज्ज, उदगावत्तं वा उदगबिंदु वा ओगाहेज्ज से णं तत्थ परियावज्जेज्ज।

—भग० श ५। उ ७। सू ५, ६, ८। पृ० ४८३

टीका—'परमाणु' इत्यादि 'ओगाहेज्ज' त्ति अवगाहेत आश्रयेत, 'छिद्येत' द्विधाभावं यायात्, 'भिद्येत' विदारणभावमात्रं यायात्। 'नो खलु तत्थ सत्थंकमइ' त्ति परमाणुत्वात्, अन्यथा परमाणुत्वमेव न स्याद् इति × × ×। 'उल्ले सिय' त्ति आर्द्रो भवेत्, 'विणिहायं आवज्जेज्ज' त्ति प्रतिस्खलनम् आपद्येत, 'परियावज्जेज्ज' त्ति पर्यापद्येत विनश्येत्।

परमाणु पुद्गल तलवार की या क्षुरधार (उस्तरे की धार) पर रह सकता है। उस तलवार की धार या क्षुर की धार पर स्थित परमाणु पर शस्त्र का आक्रमण नहीं हो सकता अतः तत्र स्थित परमाणु पुद्गल छिन्न-भिन्न नहीं होता है।

इसी प्रकार परमाणु पुद्गल अग्निकाय के बीचो-बीच में प्रवेश कर वहाँ स्थित रह कर भी परमाणु पुद्गल दग्ध नहीं होता है।

इसी प्रकार परमाणु पुष्कर संवर्तक नामक महामेघ के मध्य में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रह कर भी परमाणु पुद्गल आर्द्र भाव (गीलापन) को प्राप्त नहीं होता है।

इसी प्रकार गंगा महानदी के प्रतिश्रोत—प्रवाह में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रह कर भी परमाणु पुद्गल प्रतिस्खलित नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार उदगावर्त अथवा उदक बिन्दु में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित परमाणु पुद्गल विनष्ट नहीं होता है।

टीकाकार ने कहा है कि परमाणु में शस्त्र प्रवेश नहीं कर सकता है। यदि परमाणु में शस्त्र प्रवेश मान लिया जाय तो उसके परमाणुत्व की स्थिति नहीं बनती अर्थात् उसमें परमाणुत्व गुण का निरूपण नहीं किया जा सकता है।

(ख) छहिं ठाणेहिं सव्वजीवाणं णत्थि इड्डीति वा जुत्तीति वा, [जसेइ वा बलेति वा वीरिएइ वा पुरिसक्कार] (जाव) परक्कमेति वा, तंजहा × × × परमाणुपोग्गलं वा छिंदित्तए वा भिंदित्तए वा अगणिकातेण वा समोदहित्तते × × ×।

—ठाण० स्था ६। सू ४७९ पृ० २६९-७०

टीका—'छहो' त्यादि, षट्सु स्थानेषु सर्वजीवानां संसारिमुक्तरूपाणां नास्ति ऋद्धिः–विभूतिः, इतीति-एवंप्रकारा × × × परमाणुपुद्गलं वा छेत्तुं वा खड्गादिना द्विधा कृत्व भेत्तुं वा शूच्यादिना वा विध्या छेदादौ परमाणुत्व-हानेः अग्निकायेन समयदग्धुमिति सूक्ष्मत्वेन। दाहृयत्तस्येति।

कोई भी जीव अपनी ऋद्धि यावत् पराक्रम आदि से परमाणुपुद्गल के खड्ग आदि के द्वारा दो विभाग नहीं कर सकते हैं, सूची के द्वारा छेद नहीं सकते हैं, अग्निकाय में जला नहीं सकते हैं क्योंकि परमाणुपुद्गल सूक्ष्म है, अदाह्य है।

२ व्यावहारिक परमाणु का अच्छेद्य-अभेद्यत्व

(क) से किं तं वावहारिए ? वावहारिए अणंताणं सुहुमपरमाणु-पोग्गलाणं समुदयसमिइसमागमेणं से एगे वावहारिए परमाणुपोग्गले निप्फज्जइ। से णं भंते ! असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ? हंता ! ओगाहेज्जा। से णं तत्थ छिज्जेज्ज वा ? नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थ कमइ। से णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झं-मज्झेणं वीतीवदेज्जा ? हंता ! वितीवदेज्जा। से णं तत्थ डहेज्जा ? नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ।

से णं भंते ! पुक्खलसंवट्टयस्स महामेहस्स मज्झं-मज्झेणं वीतीवदेज्जा ? हंता ! वीतीवदेज्जा। से णं तत्थ उदउल्ले सिया ? नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से णं भंते ! गंगाए महानइए पडिसोयं हव्वमागच्छेज्जा ? हंता ! हव्वमागच्छेज्जा। से ण तत्थ विणिघायमावज्जेज्जा ? नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ।

से णं उदगावत्तं वा उदगबिंदु वा ओगाहेज्जा ? हंता। ओगाहेज्जा। से णं तत्थ कुच्छेज्ज वा परियावज्जेज्ज वा ? नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ।

सत्थेण सुतिक्खेण वि छेत्तुं भेत्तुं व जं किर न सक्का।
तं परमाणू सिद्धा वयंति आवी पमाणाणं॥

—अणुओ० सू ३४२-३४३। पृ० ११२५

—जंबु० वक्ष २। सू १९ पृ० ५४३ संक्षिप्त

(ख) सत्थे ण सुतिक्खेण वि छेत्तुं च जं किर न सक्का।
तं परमाणुं सिद्धा वयंति आइं पमाणाणं॥

—भग० श ६। उ ७। सू ६। पृ० ५०३

टीका—यद्यपि च नैश्चयिकपरमाणोरपि इदमेव लक्षणम्, तथापीह प्रमाणाधिकाराद् व्यावहारिक परमाणुलक्षणमिदम्।

(ग) अणुशब्देन व्यवहारेण पुद्गला उच्यन्ते, निश्चयेन तु वर्णादिगुणानां पूरण-गलनयोगात्पुद्गला इति। वस्तुवृत्त्या पुनरणुशब्दः सूक्ष्मवाचकः।

—वृद्रसं० गा २६। टीका

अनंत सूक्ष्म परमाणु पुद्गलों के समुदाय की समिति के समागम से एक व्यावहारिक परमाणु पुद्गल होता है।

वास्तव में व्यावहारिक परमाणु पुद्गल स्कंध होता है लेकिन अत्यन्त सूक्ष्मता के कारण इसको व्यावहारिक परमाणु पुद्गल कहा जाता है और इसे केवली भगवान अन्य स्कंधों का आदि भूत प्रमाण कहते हैं।

व्यावहारिक परमाणु पुद्गल तलवार की धार या क्षुर की धार पर रह सकता है। उस तलवार की धार या क्षुर की धार पर स्थित व्यावहारिक परमाणु पर शस्त्र का आक्रमण नहीं हो सकता है अतः तत्र स्थित व्यावहारिक परमाणु पुद्गल छिन्न-भिन्न नहीं हो सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यावहारिक परमाणु पुद्गल अग्निकाय के बीचों-बीच में प्रवेश कर वहाँ स्थित रहकर भी व्यावहारिक परमाणु पुद्गल दग्ध नहीं होता है।

व्यावहारिक परमाणु पुद्गल पुष्कर संवर्तक नामक महामेघ के मध्य में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर भी व्यावहारिक परमाणु पुद्गल आर्द्रभाव (गीलापन) को प्राप्त नहीं होता है।

व्यावहारिक परमाणु पुद्गल गंगा महानदी के प्रतिस्रोत— प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर भी व्यावहारिक परमाणु पुद्गल प्रतिस्खलित नहीं होता है।

व्यावहारिक परमाणु पुद्गल उदगावर्त अथवा उदगबिंदु में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित व्यावहारिक परमाणु पुद्गल विनष्ट नहीं होता है।

·३ द्रव्य रूप से अच्छेद्य, गुण रूप से छेद्य भी है।

अछेज्जस्स परमाणुस्स कथं छेदो कीरदे ? ण एस दोसो, तस्स दव्वमेव अछेज्जं, ण गुणा इदि अब्भुवगमादो।

—षट्० खण्ड ४, २, ७। सू १९९। टीका। पृ० ९३

द्रव्य की अपेक्षा परमाणु अच्छेद्य है परन्तु गुण की अपेक्षा छेद्य भी है।

·३१ ८ उपचारतः-अस्तिकायत्व

एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु॥

बृद्रसं० गा २६

टीका—'एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि बहुदेसो' एक प्रदेशोऽपि पुद्गलपरमाणुर्नानास्कंधरूपबहुप्रदेशतः सकाशाद् बहुप्रदेशो भवति। 'उवयारा' उपचाराद् व्यवहारनयात् "तेण य काओ भणंति सव्वण्हु" तेन कारणेन कायमिति सर्वज्ञा भणंतीति।

यद्यपि परमाणु पुद्गल एक प्रदेशी होता है तथापि नाना प्रकार के स्कंध रूप बहुप्रदेशों के कारण बहुप्रदेशी होता है। उपचार अर्थात् व्यवहारनय से सर्वज्ञ भगवान उसे 'काय' कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३१·९ रूपित्व-मूर्तत्व

(क) (परमाणू) सो सस्सदो असद्दो एक्को अविभागी मुत्तिभवो।

—पंच० श्लो० ७७

जयसेन टीका—'मुत्तिभवो अमूर्तात्परमात्म द्रव्याद्विलक्षणा या तु स्पर्शरसगंधवर्णवती मूर्तिस्तया समुत्पन्नत्वात् मूर्तिभवः इति सूत्राभिप्रायः।

(ख) 'रूपमेषामस्त्येषु वाऽस्तीति रूपिणइति'। एषामिति पुद्गलानां परमाणुद्व्यणुकादिक्रमभाजाम्, उक्तलक्षणं रूपं मूर्तिः साविद्यतइति रूपिणः।

—तत्त्व सिद्ध० अ ५। सू ४। पृ० ३२५

(ग) खंधा य खंधदेसा य तप्पएसा तहेव य।
परमाणुणो य बोद्धव्वा, रूविणो य चउव्विहा॥

—उत्त० अ ३६। गा १०। पृ० १०५०

परमाणु पुद्गल रूपी है—मूर्तिवान् है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के कारण परमाणु पुद्गल को मूर्तिवान कहा है।

·३१·१० वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

(क) भावपरमाणू णं भंते। कइविहे पन्नत्ते? गोयमा! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—१ वन्नमंते, २ गंधमंते, ३ रसमंते, ४ फासमंते।

—भग० श २०। उ ५। सू १६। पृ० ८०२

(ख) परमाणुपोग्गले णं भंते! कइवन्ने, जाव (कइगंधे, कइरसे,) कइफासे पन्नत्ते? गोयमा! एगवन्ने, एगगंधे, एगरसे, दुफासे पन्नत्ते।

—भग० श १८। उ ६। सू ५। पृ० ७७२

टीका—'परमाणुपोग्गले ण' मित्यादि, इह च वर्णगंधरसेसु पंच द्वौ पंच च विकल्पाः 'दुफासे' त्ति स्निग्धरूक्षशीतोष्णस्पर्शानामन्यतराविरुद्धस्पर्शद्वय-युक्तं इत्यर्थः, इह च चत्वारो विकल्पाः शीतस्निग्धयोः शीतरूक्षयोः उष्ण-स्निग्धयोः उष्णरूक्षयोश्च संबंधादिति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ग) परमाणुपोग्गले णं भंते ! कइवन्ने, कइगंधे, कइरसे, कइफासे पन्नत्ते ? गोयमा ! एगवन्ने, एगगंधे, एगरसे, दुफासे पन्नत्ते, तंजहा— जइ एगवन्ने सियकालए, सियनीलए, सिय लोहिए, सिय हालिद्दए, सिय सुक्किल्लए, जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे, सिय दुब्भिगंधे, जइ एगरसे सिय तित्त, सिय कडुए, सिय कसाए, सिय अंबिले, सिय महुरे, जइ दुफासे सिय सीए य निद्धे य १ सिय सीए य लुक्खे य २ सिय उसिणे य निद्धे य ३ सिय उसिणे य लुक्खे य।

—भग० श २० । उ ५ । सू १ । पृ० ७९३

(घ) परमाणुः एकरसवर्णगंधो द्विस्पर्शः ।

—ठाण० स्था ५ । सू ५ । टीका में उद्धृत

(ङ) रूपरसगंधस्पर्शयुक्ता हि परमाणवः एक गुणरूपादिपरिणता।

—तत्त्व० राज० अ ५ । सू १ । पृ० ४३४ । ला १८

(च) स्पर्शरसगंधवर्णवंतोणवः ।

—तत्त्व० श्लो० अ ५ । सू २५ । टीका

परमाणुपुद्गल में एक वर्ण, एक गंध, एक रस तथा दो स्पर्श होते हैं ।

एक वर्ण हो तो कदाचित् कृष्णवर्ण, कदाचित् नीलवर्ण, कदाचित् रक्तवर्ण, कदाचित् पीतवर्ण व कदाचित् शुक्लवर्ण होता है ।

एक गंध हो तो कदाचित् सुगंध, कदाचित् दुर्गन्ध होती है ।

एक रस हो तो कदाचित् तिक्त रस, कदाचित् कटु रस, कदाचित् कषायरस, कदाचित् आम्ल रस तथा कदाचित् मधुररस होता है ।

दो स्पर्श हो तो कदाचित् शीत और स्निग्ध, कदाचित् शीत और रूक्ष, कदाचित् उष्ण और स्निग्ध तथा कदाचित् उष्ण और रूक्ष होता है ।

अतः परमाणु के पाँच वर्णों में से कोई एक ही वर्ण होता है, दो गंधों में से कोई एक गंध होती है और पाँच रसों में से कोई एक रस होता है तथा चार स्पर्शों में कोई दो अविरोधी स्पर्श होते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छ) (परमाणुः) पंचानां रसानां द्वयोर्गंधयोः पंचविधस्य वर्णस्यान्यतमेनैकेन रसादिना युक्तः चतुर्णां स्पर्शानां मध्ये स्पर्शद्वयेनाविरुद्धेन युक्तः ।

—तत्त्वसिद्ध० अ ५ । सू २४ । पृ० ३६६

(ज) एयरसरूवगंधं दो फासं तं हवे सहावगुणं।
विहावगुणमिदि भणिदं, जिणसमये सव्वपयडत्तं ॥

—नियम० गा २७

परमाणुपुद्गल स्वभाव पुद्गल है और उसमें एक रस, एक वर्ण, एक गंध और दो अविरोधी स्पर्श होते हैं लेकिन विभाव गुण रूप विभाव पुद्गल भी होते हैं वे दो अणु आदि से लेकर संख्यात, असंख्यात और अनंत अणुओं के स्कंध रूप होते हैं—वे विभाव गुणधारी है ।

उपरोक्त स्वभाव और विभाव पुद्गलों का वर्णन जैन आगमो में स्पष्ट रूप से कथन किया गया है ।

·३१·११ अगुरुलघु

(क) सुहुमाणंतपदेसा, अगुरुलहू जाव परमाणू ॥

—विह० उ १ । सू ३४ । भाष्य गा २६८७

टीका—यानि च सूक्ष्मपरिणामपरिणतानि अनंतप्रादेशिकादीनि परमाणुपुद्गलं यावद् द्रव्याणि तानि सर्वाण्यगुरुलघूनि ।

(ख) × × ×। अगुरुलहूचउफासा अरूविदव्वा य होंति नायव्वा, सेसाओ अट्ठफासा अगुरूलहुया निच्छणयस्स चउफासा त्ति सूक्ष्मपरिणामानि, 'अट्ठफास' त्ति बादराणि ।

—भग० श १ । उ ९ । सू २८७ । टीका

(ग) अगुरुलहुपरिणामो परमाणूओ आरब्भ जाव असंखेज्जपदेसिया खंधा सुहुमपरिणयावि खंधा अगुरुलहुगा चेव ।

—सूय० अ १ चू० गा २५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चार स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष) वाले जो सूक्ष्म पुद्गल है वे अगुरुलघु हैं। परमाणुपुद्गल में चार स्पर्शों में से कोई दो अविरोधी स्पर्श होते हैं अतः परमाणु पुद्गल अगुरुलघु है।

·३१·१२ परिणमन

(क) रूपरसगंधस्पर्शयुक्ता हि परमाणवः एकगुणरूपादिपरिणताः द्वित्रिचतुः संख्येयाऽसंख्येयाऽनंतगुणत्वेन वर्धन्ते, तथैव हानिमपि उपयान्तीति × × ×।

—राज० अ ५। सू १। पृ० ४३४

(ख) अण्णणिरावेक्खो जो, परिणामो सो सहावपज्जावो॥

—नियम० अधि २। गा २८। पूर्वार्ध

रूप-रस-गंध-स्पर्श युक्त परमाणु पुद्गल में एक गुण, दो गुण, तीन गुण, चार गुण, (पाँच गुण, छह गुण, सात गुण, आठ गुण, नौ गुण, दस गुण) संख्यात गुण, असंख्यात गुण और अनंत गुण रूप-रस-गंध-स्पर्श गुणों की हानि-वृद्धि होती रहती है अतः परमाणु पुद्गल परिणामी है।

परमाणु पुद्गल में स्वभाव पर्याय होती है। जो परिणमन अन्य की अपेक्षा से नहीं होता है उसे स्वभाव पर्याय कहते हैं। परमाणु पुद्गल का परिणमन पर की अपेक्षा रहित होता है।

(ग) × × × परिणाम गुणो × × ×।

—पंच० गा० ७८

अमृत टीका—परिणामवशात् विचित्रो हि परमाणो परिणामगुणः क्वचित्कस्यचिद्रूपस्य व्यक्ताव्यक्तत्वेन विचित्रां परिणतिमादधाति।

पर्यायों के कारण परमाणु पुद्गल में नाना प्रकार के परिणाम गुण होते हैं। कहीं पर किसी एक गुण की प्रगटता-अप्रगटता के कारण नाना प्रकार की परिणति को धारण करते हैं।

·३१·१३ परमाणुपुद्गल जीव के परिभोग में नहीं आता

धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवे असरीरपडिबद्धे, परमाणुपोग्गले, सेलेसिं पडिवन्नए अणगारे × × ×। एए णं दुविहा जीवदव्वा य अजीवदव्वा य जीवाणं परिभोगत्ताए नो हव्वमागच्छंति।

—भग० श० १८। उ ४। सू १। पृ० ७६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल—जीव के परिभोग में नहीं आता है।

नोट—द्विप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध तथा असंख्यात प्रदेशी स्कंध भी जीव के परिभोग में नहीं आते हैं। व्यावहारिक परमाणु—जो अनंत प्रदेशी स्कंध से बना हुआ है वह भी जीव के परिभोग में नहीं आता।

·३१ ३४ अनवकाश-सावकाश नहीं है

× × × णाणवकासो ण सावकासो × × ×।

—पंच० गा० ८०

जयसेन टीका—'णाणवगासो' नानवकाशः किंत्वेकेन प्रदेशेन स्वकीय-वर्णादिगुणानामवकाशदानात्सावकाशः ; 'ण सावगासो' न सावकाशः किंत्वेकेन प्रदेशेन द्वितीयादिप्रदेशाभावान्निरवकाशः।

परमाणु पुद्गल अपने एक प्रदेण में भी स्वकीय वर्णादि गुणों को अवकाश देने में समर्थ है अतः परमाणु पुद्गल सावकाश हैं।

परमाणु पुद्गल अपने एक प्रदेश में स्थान देने में समर्थ नहीं है क्योंकि उसका एक प्रदेश आदि-मध्य-अंतरहित-निर्विभागी है अतः दो आदि प्रदेशों को स्थान देने की उसमें समर्थता नहीं है अतः अवकाश दान देने में असमर्थ कहा जाता है।

·३१·१५ अप्रदेशान्तत्व

× × ×। जं तं तव्वदिरित्तदव्वाणंतं तं दुविहं, कम्माणंतं णोकम्मा-णंतमिदि। × × ×। जं तं णोकम्माणंतं तं कडय-रुजगदीव समुद्रादि एयपदेसादि पोग्गलदव्वं वा। × × ×।

× × × एकप्रदेशे परमाणौ तद्व्यतिरिक्तापरो द्वितीयः प्रदेशोऽन्त-व्यपदेशभाक् नास्तीतिपरमाणुरप्रदेशानन्तः। तथा च कथमयं नोकर्म-द्रव्यानन्ते द्रव्यागतानन्त संख्यापेक्षया अनंतव्यपदेशभाज्यन्तर्भवेत् × × ×।

—षट्० खण्ड० १। भा २। सू २। टीका। पु ३। पृ० ८

तद्व्यतिरिक्त नो आगमद्रव्यानन्त दो प्रकार का है—कर्म तद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्यानन्त और नोकर्म-तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यानन्त। कटक, रुचकवरद्वीप और समुद्रादि अथवा एक प्रदेशादि पुद्गल द्रव्य—ये सब नोकर्मतद्व्यतिरिक्त नोआ-गमद्रव्यानंत है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक प्रदेशी परमाणु में उस एक प्रदेश को छोड़कर अन्त इस संज्ञा को प्राप्त होने वाला दूसरा प्रदेश नहीं पाया जाता है, इसलिये परमाणु अप्रदेशानन्त है। ऐसी स्थिति में द्रव्यगत अनंत सख्या की अपेक्षा अनंत संज्ञा को प्राप्त होनेवाले नो कर्म द्रव्यानन्त में वह अप्रदेशानन्त कैसे अन्तर्मूत हो सकता है अर्थात् नहीं हो सकता, इसलिए अप्रदेशानन्त भी स्वतन्त्र है।

३१·१६ परमाणुओं में स्पर्श गुण की सिद्धि

× × × सूक्ष्मेषु परमाण्वादिषु स्पर्शव्यवहारो न प्राप्नोति तत्र तद्-भावात् ? नैष दोषः, सूक्ष्मेष्वपि परमाण्वादिष्वस्ति स्पर्शः स्थूलेषु तत्काय-षुतद्दर्शनान्यथानुपपत्तेः नह्यत्यन्तासतां प्रादुर्भावोऽस्त्यतिप्रसङ्गात्। किंतु इन्द्रियग्रहणयोग्या न भवन्ति। ग्रहणायोग्यानां कथं स व्यपदेश इति चेन्न, तस्य सर्वदायोग्यत्वाभावात्। परमाणुगतः सर्वदा न ग्रहणयोग्यश्चेन्न, तस्यैव स्थूलकार्याकारेण परिणतौ योग्यत्वोपलम्भात् × × ×।

—षट्० खण्ड० १। भ १। सू ३३। टीका। पु १। पृ० २३८-३९

सूक्ष्म परमाणु में भी स्पर्श गुण है, अन्यथा परमाणुओं के कार्यरूप स्थूल पदार्थों में स्पर्श की उपलब्धि नहीं हो सकती। किन्तु स्थूल पदार्थों में स्पर्श पाया जाता है इसलिये सूक्ष्म परमाणुओं में भी स्पर्श की सिद्धि हो जाती है क्योंकि, न्याय का यह सिद्धान्त है कि जो अत्यन्त (सर्वथा) असत् होते हैं उनकी उत्पत्ति नहीं होती है। यदि सर्वथा असत् की उत्पत्ति मानी जाये तो अतिप्रसग हो जायगा। अर्थात् बांझ के पुत्र, आकाश के फूल आदि अविद्यमान बातों का भी प्रादुर्भाव मानना पड़ेगा। अतः परमाणुओं में स्पर्शादि गुण पाये जाते हैं किन्तु वे इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण करने योग्य नहीं होते हैं। परमाणुगत स्पर्श के इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण करने की योग्यता का सदैव अभाव नहीं है। क्योंकि जब परमाणु स्कंध रूप में स्थूलत्व को प्राप्त होते हैं, तब तद्गत धर्मों की इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण करने योग्यता पाई जाती है।

३१·१७ अविभागप्रतिच्छेद

(क) तत्थ एक्कम्हि परमाणुम्हि जो जहण्णवट्ठिदो अणुभागो तस्स अविभागपडिच्छेदो त्ति सण्णा।

—षट्० खण्ड० ४, २, ७। सू १९९। टीका। पु १२। पृ० ९२

एक परमाणु में जो जघन्य रूप से अवस्थित अनुभाग (गुण-शक्ति) है वह उसकी अविभाग प्रतिच्छेद संज्ञा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) णइगमणयमस्सिदूण जं जहण्णाणुभागट्ठाणं तस्स सव्व परमाणु-पुंजं एक दो कादूण ट्ठविय तत्थ सव्वमंदाणुभागपरमाणुं घेत्तूण वण्ण-गंध-रसे मोत्तूण पासं चेव बुद्धीए घेत्तूण तस्स पण्णाच्छेदो कायव्वो जाव विभागवज्जिदपरिच्छेदोत्ति। तस्स अंतिमस्स खंडस्स अच्छेज्जस्स अविभागपडिच्छेद इदि सण्णा।

—षट्० खण्ड० ४, २, ७। सू १९९। टीका। पु १२ पृ० ९२

नैगमनय का आश्रय करके जो जघन्य अनुभाग स्थान है उसके सब परमाणुओं के समूह को एकत्रित करके स्थापित करे। फिर उनमें से सर्वमंद अनुभाग से संयुक्त परमाणु को ग्रहण करके वर्ण, गंध, और रस को छोड़कर केवल स्पर्श का युक्ति से ग्रहणकर उसका विभाग रहित छेद होने तक प्रज्ञा के द्वारा छेद करना चाहिए। उस नहीं छेदने योग्य अन्तिम खण्ड की अविभाग प्रतिच्छेद संज्ञा है।

(ग) ××× इह सर्वजघन्यस्यापि पुद्गलस्य रसः केवलिप्रज्ञया छिद्यमानः सर्वजीवानन्तगुणान् भागान् प्रयच्छति। ते च भागा अतिसूक्ष्मतयाऽपरभागाभावान्निरंशा अंशा रसाणव इत्युच्यन्ते। रसाणवो रसविभागा रसपलिच्छेदा भावपरमाणवइति पर्याया।

—कर्म० भा ५। गा ७८। टीका

पुद्गल के सर्व जघन्य रस केवली प्रज्ञा से, छेद किये जा सकते हैं जो सर्वजीवों के अनन्त गुण भाग हैं। वे रस भाग अति सूक्ष्म है जिनका फिर दूसरा विभाग नहीं किया जा सकता हैं अर्थात् रस के निरंश अंश को रसाणु कहा जाता है।

रसाणु रस विभाग, रस पलिच्छेद तथा भाव परमाणु—ये पर्यायवाची शब्द हैं।

·३२ परमाणुपुद्गल और पर्याय

·३२·१ पर्याय का लक्षण

(क) अण्णणिरावेक्खो जो, परिणामो सो सहावपज्जावो।
खंधसरूवेण पुणो, परिणामो सो विहावपज्जायो।

—नियम० गा २८

(ख) पुद्गलपरमाणुरपि स्वभावेनैकोऽपि शुद्धोऽपि रागद्वेषस्थानीयबंधयोग्यस्निग्धरूक्षगुणाभ्यां परिणम्य द्व्यणुकादिस्कंधरूपविभावपर्यायैर्बहुविधो बहुप्रदेशो भवति।

—बृद्रसं० गा २६। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल में स्वभाव पर्याय होती है क्योंकि वह स्वभावतः एक है और शुद्ध है। परन्तु राग द्वेष के स्थानभूत बंध के योग्य स्निग्ध-रूक्ष गुणों के द्वारा द्वयणुक आदि स्कंध रूप में परिणमन करता है तब उसमें विभाव पर्याय होती है स्कंध अवस्था में वह बहुप्रदेशी होता है।

इसी विभाव पर्याय के कारण बहुप्रदेशता रूप कायत्व के कारण परमाणु पुद्गल को उपचारतः सर्वज्ञ देव ने काय कहा है।

.३२·२ एकत्व-पृथक्त्व

एगत्तेण पुहुत्तेण खंधा य परमाणो य।

—उत्त० अ ३६। गा ११। पूर्वार्ध। पृ० १०५०

अनेक परमाणुओं के एकत्व से स्कंध बनता है और उसका पृथक्त्व होने से पुनः परमाणु हो जाते हैं।

·३२·३ बंधन के नियम

(क) भाष्य-जघन्यगुणस्निग्धानां जघन्यगुणरूक्षाणां च परस्परेण बंधो न भवति ॥३३॥

सिद्ध टीका—जघन्यगुणस्निग्धानामित्यादि भाष्यम्। प्रकृतत्वाद् बंधः प्रतिषिध्यते न शब्देन, केषां बंधो न भवति? जघन्यगुणस्निग्धानां जघन्यगुणरूक्षाणां च। जघने भवो जघन्यः, (जघन्य इवान्यो जघन्यः) निकृष्ट इत्यर्थः, जघन्यश्चासौ गुणश्च जघन्यगुणः (जघन्यगुणः) स्निग्धो येषां वे जघन्यगुणस्निग्धाः पुद्गलास्तेषां जघन्यगुणरूक्षाणां च परस्परेण बंधः प्रतिषिध्यते, परस्परेणेति सजातीयविजातीयविशेषप्रतिपादनम्। स्व-स्थाने स्निग्धस्य स्निग्धेन नेष्यते बंधः, रूक्षस्यापि रूक्षेण नवास्ति बंधः, तथा परस्थानेऽप्येकगुणस्निग्धस्यैकगुणरूक्षेण नैवास्ति बंधः। सत्यप्येषां संयोगे स्निग्धरूक्षगुणत्वे च न परस्परमेकत्वपरिणतिलक्षणो बंधः समस्ति, किं पुनः कारण मत्रैषां बंधो न भवतीति?

तादृग्विधपरिणति शक्तेरभावात् परिणामशक्तयश्च द्रव्याणां विचित्राः क्षेत्रकालाद्यनुरोधिन्यः प्रयोगविस्रसापेक्षाः प्रभवन्ति, न जातुचित् पर्यनुयोग-वशेन पर्यनुयोक्तुरिच्छामनुरुध्यते, जघन्यश्च स्नेहगुणः स्तोकत्वादेव जघन्य-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणरूक्षं पुद्गलं न प्रत्यलः परिणामयितुम्, तथा रूक्षगुणोऽप्यल्पत्वाज्जघन्य गुणस्निग्धं नात्मसात्कर्तुं समर्थः, संख्यावाची चायं गुणशब्दः, यथैक एवास्य गुणः पुरुषस्येति, आधिक्यार्थे वा द्विगुणत्रिगुणमिति यथा, अस्ति च स्नेहादि-गुणानांप्रकर्षापकर्षभेदः, तद् यथा—जलादजाक्षीरं स्निग्धम्, अजाक्षीराद् गोपयः, गोपयसो महिषीपयः, ततः करभीपयः इत्युत्तरोत्तरस्नेहाधिकत्वम्, एषामेव पूर्वं पूर्वं रूक्षम्।

तत्रैकगुणस्निग्धस्यैक गुणस्निग्धे 'नेव द्वयादिना सर्वेण सदृशेन संख्येया-संख्येयानन्तानन्तगुणस्निग्धेन वा नास्ति बंधः' तथैव चैकगुणरूक्षस्यैकगुण रूक्षादिभिः सदृशैर्यावदनन्तगुणरूक्षैर्न भवति बंधः, तथैव चैकगुणरूक्षस्यैक-गुणरूक्षादिभिः सदृशैर्याववनन्तगुणरूक्षैर्न भवति बंधः, सूत्रव्यापारस्तु जघन्य-गुणस्निग्धानां जघन्यगुणरूक्षाणां च पुद्गलानां नास्ति बंधः परस्परम्, शेषं वक्ष्यमाणसूत्रव्याख्येयमुक्तं प्रसङ्गतः इत्येवमेतौ जघन्यगुणस्निग्धरूक्षौ विहायान्येषां मध्यमोत्कृष्टस्निग्धानां रूक्षैः सह स्निग्धैश्च रूक्षाणां परस्परेण बंधो भवति इति अर्थापत्तिलभ्योऽयमर्थः सामर्थ्यादवगम्यते, स च यादृशो यथा च भवति तं तादृशं तथा वक्ष्यामः, इहैतावदुपयुज्यत इति ॥३३॥

—तत्त्व० अ ५। सू ३३

जघन्य गुणांश स्निग्धों का तथा जघन्य गुणांश रूक्षों का परस्पर में बंधन नहीं होता है।

अजघन्य गुणवाले परमाणुओं का चिकनेपन और रूखेपन से एकीभाव होता है।

गुण का अर्थ है अंश। अजघन्य गुणवाले अर्थात् दो या दो से अधिक गुणवाले चिकने एवं रूखे परमाणुओं का क्रमशः अजघन्य गुणवाले रूखे और चिकने परमाणुओं के साथ एकीभाव होता है।

पृथक्-पृथक् परमाणु आपस में मिलते हैं उनका हेतु स्निग्धता और रूक्षता है। परमाणु चाहे विषमगुणवाले हो चाहे समगुणवाले हो, उनका परस्पर सम्बन्ध हो जाता है केवल एक ही बात है कि वे सब अजघन्य गुणवाले होने चाहिए।

एक गुणवाले परमाणुओं का एक गुणवाले परमाणुओं के साथ सम्बन्ध नहीं होता है। इसका फलितार्थ यह है कि स्निग्ध परमाणु रूक्ष परमाणु के साथ या रूक्ष परमाणु स्निग्ध परमाणु के साथ मिलें तब वे दोनों ही कम से कम द्विगुण स्निग्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं द्विगुण रूक्ष होने चाहिए। यदि इनमें एक और भी कमी हो तो उनका संबंध नहीं हो सकता।

यह विसदृश (विजातीय) परमाणुओं के एकीभाव की प्रक्रिया है।

सदृश परमाणुओं का एकीभाव दो गुण अधिक या उससे अधिक गुणवाले परमाणुओं के साथ होता है।

स्निग्ध परमाणुओं का स्निग्ध परमाणुओं के साथ एवं रूक्ष परमाणुओं का रूक्ष परमाणुओं के साथ संबंध तब होता है, जब उनमें (स्निग्ध या रूक्ष परमाणुओं में) दो गुण या उनसे अधिक गुणों का अन्तर मिले। उदाहरणस्वरूप एक गुण स्निग्ध परमाणु तीन गुण स्निग्ध परमाणु के साथ संबंध होता है किन्तु समान गुणवाले एवं एक गुण अधिक वाले परमाणु के साथ संबंध नहीं होता है।

देखिए यंत्र —

परमाणुओं के अंश	सदृश	विसदृश
१—जघन्य + जघन्य	नहीं	नहीं
२—जघन्य + एकाधिक	नहीं	नहीं
३—जघन्य + द्वयधिक	है	नहीं
४—जघन्य + त्र्यादिअधिक	है	नहीं
५—जघन्येतर + समजघन्येतर	नहीं	है
६—जघन्येतर + एकाधिकतर	नहीं	है
७—जघन्येतर + द्वयधिकतर	है	है
८—जघन्येतर + त्र्यादि अधिकतर	है	है

(ख) निद्धस्स निद्धेण दुआहियेण, लुक्खस्स लुक्खेण दुआहियेण।
निद्धस्स लुक्खेण उवेइ बंधो, जहन्नवज्जो विसमो समो वा।।

—पण्ण० पद १३। सू १४

·३२·४ बंधन तथा भेदन

·१ दो परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

दो भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति साहण्णित्ता किं भवइ ? गोयमा ! दुप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ।

—भग० श १२। उ ४। सू १। पृ० ६५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो परमाणु पुद्गल एकत्र होकर जब बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक द्विप्रदेशी स्कंध होता है। उस द्विप्रदेशी स्कंध के भेद-विभाग होने से उसके एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग होते हैं।

·२ तीन परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

(क) तिन्नि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति, साहण्णित्ता किं भवइ ? गोयमा ! तिपएसिए खंधे भवइ। से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि कज्जइ, दुहा कज्जमाण एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२। उ ४। सू २। सू० ६५४

तीन परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक तीन प्रदेशी स्कंध होता है। यदि उस तीन प्रदेशी स्कंध के भेद-विभाग होते हैं तो उनके दो या तीन विभाग होते हैं। यदि दो विभाग हो तो एक विभाग में एक परमाणु पुद्गल और दूसरे विभाग में एक द्विप्रदेशी स्कंध होगा। यदि तीन विभाग हो तो तीन परमाणु पुद्गल पृथक्-पृथक् रहेंगे।

·३ चार परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

(क) चत्तारि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति ? जाव पुच्छा। गोयमा ! चउपएसिए खंधे भवइ। से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि चउहा वि कज्जइ। दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा दो दुपएसिया खंधा भवंति। तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ। चउहा कज्जमाणे चत्तारि परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२। उ ४। सू ३। पृ० ६५४

चार परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस चतुष्प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन अथवा चार विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और दूसरा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा दो प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) यदि तीन विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा।

(३) यदि चार विभाग हों तो चार परमाणु पुद्गलों के चार अलग-अलग विभाग होंगे।

·४ पाँच परमाणुपुद्गलों का बंधन तथा भेदन

पंच भंते! परमाणुपोग्गला पुच्छा। गोयमा! पंचपएसिए खंधे भवइ। से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि चउहा वि पंचहा वि। कज्जइ। दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ। तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिप्पएसिए खंध भवइ। अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति। चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ। पंचहा कज्जमाणे पंच परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२ । उ ४ । सू ४ । पृ० ६५४

पांच परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक पंच प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस पंच प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार अथवा पाँच विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और दूसरा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा।

(२) यदि तीन विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा।

(४) यदि पाँच विभाग हों तो पाँच परमाणु पुद्गल के पाँच अलग-अलग विभाग होंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५ छह परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

छब्भंते ! परमाणपोग्गला० पुच्छा, गोयमा ! छप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि जाव छव्विहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खधे भवइ अहवा दो तिपएसिया खंधा भवन्ति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा तिन्नि दुपएसिया खंधा भवन्ति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला भवंति एगयओ दो दुप्पएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, छहा कज्जमाणे छ परमाणुपोग्गला भवंति ।

—भग० श १२ । उ ४ । सू ५ । पृ० ६५४

छः परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक छः प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस छः प्रदेशी स्कंध का भेद—विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार, पाँच अथवा छः विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और दूसरा एक पंचप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा चार प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(२) यदि तीन विभाग हों तो चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा और तीसरा-चौथा विभाग दो द्विप्रदेशी स्कंधों के होंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४) यदि पाँच विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवां विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा।

(५) यदि छः विभाग हों तो छः परमाणु पुद्गल के छः अलग-अलग विभाग होंगे।

·६ सात परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

सत्त भंते ! परमाणुपोग्गला० पुच्छा, गोयमा ! सत्तपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि जाव सत्तहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिप्पएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिन्नि दुपएसिए खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, सत्तहा कज्जमाणे सत्त परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२। उ ४। सू ६। पृ० ६५४-५५

सात परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक सात प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस सात प्रदेशी स्कंध का भेद—विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार, पाँच, छः अथवा सात विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और एक छः प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा पाँच प्रदेशी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कंध का एक विभाग होगा अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा।

(२) यदि तीन विभाग हों तो पाँच प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग द्विप्रदेशी स्कध का और चौथा विभाग तीन प्रदेशी स्कंध का होगा अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

(४) यदि पाँच विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवां विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के तीन विभाग होंगे तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(५) छः विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवां-छट्ठा विभाग एक-एक पर परमाणु पुद्गल का होगा।

(६) यदि सात विभाग हों तो सात परमाणु पुद्गल के सात अलग-अलग विभाग होंगे।

·७ आठ परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

अट्ठ भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा ! अट्ठपएसिए खंधे भवइ जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा दो चउप्प-एसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाण एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दोन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिया खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवन्ति, सत्तहा कज्जमाण एगयओ छ परमाणु-पोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, अट्ठहा कज्जमाण अट्ठ परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२। उ ४। सू ७। पृ० ६५५-५६

आठ परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक आठ प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस आठ प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात अथवा आठ विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और एक सात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा छः प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध विभाग और और दूसरा पाँच प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा चतुष्प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(२) यदि तीन विभाग हों तो छः प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा पाँच प्रदेशी स्कंध का विभाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंधों का विभाग और तीन प्रदेशी स्कध के दो विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो पाँच प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग द्विप्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग चतुष्प्रदेशी स्कंध का होगा अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग होंगे तथा तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग होगा, एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा तथा द्विप्रदेशी स्कधों के दो विभाग होंगे। अथवा द्विप्रदेशी स्कंधों के चार विभाग होंगे।

(४) यदि पांच विभाग हों तो चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के तीन विभाग होंगे, एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग होंगे तथा द्विप्रदेशी स्कंध के तीन विभाग होंगे।

(५) यदि छह विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ-छट्ठा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के चार विभाग होंगे तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(६) यदि सात विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचमा-छट्ठा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा।

(७) यदि आठ विभाग हों तो आठ परमाणु पुद्गल के आठ अलग-अलग विभाग होंगे।

·८ नव परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

नव भंते ! परमाणुपोग्गला० पुच्छा, गोयमा ! जाव नवविहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ, एवं एक्केक्कं संचा (रिए) रेंतेहिं जाव अहवा एगयओ चउप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु-पोग्गला एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ एगयओ परमाणु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पोग्गले एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा तिन्नि तिपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु-पोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि दुप्पएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणु-पोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ तिन्नि दुप्पएसिया खंधा भवंति, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, नवहा कज्जमाणे नव परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२। उ ४। सू ८। पृ० ६५६

नव परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक नव प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस नव प्रदेशी स्कंध का भेद विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार, पांच, छह, सात, आठ तथा नव विभाग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और एक आठ प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा सात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा छह प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा पाँच प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा।

(२) यदि तीन विभाग हों तो सात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा छह प्रदेशी स्कध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा पाँच प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और चतुष्प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा, एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग तथा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा तीन प्रदेशी स्कधों के तीन विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो छह प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग द्विप्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग पांच प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पद्गल का होगा, तीसरा विभाग तीन प्रदेशी स्कध का और चौथा विभाग चतुष्प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक द्विप्रदेशी स्कध का विभाग होगा तथा तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाभ होंगे। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

(४) यदि पाँच विभाग हों तो पाँच प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के तीन विभाग होंने, एक द्विप्रदेणी स्कंध का विभाग तथा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के तीन विभाग तथा तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग तथा एक तीन प्रदेशी स्कध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग होगा तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के चार विभाग होंगे।

(५) यदि छः विभाग हों तो चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ-छट्ठा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग, एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा तथा एक-एक परमाणु पुद्गल के चार विभाग होंगे। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के तीन विभाग तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

(६) यदि सात विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ-छट्ठा-सातवाँ विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के पाँच विभाग तथा द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(७) यदि आठ विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा एक-एक परमाणु पुद्गल के सात विभाग होंगे।

(८) यदि नव विभाग हों तो नव परमाणु पुद्गल के नव अलग-अलग विभाग होंगे।

·९ दस परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

दस भंते ! परमाणुपोग्गला० पुच्छा, गोयमा ! जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ नवपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ अट्ठपएसिए खधे भवइ एवं एक्केक्कं संचारेयव्वंति जाव अहवा दो पंचपएसिया खंधा भवन्ति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ चउप्पएसिए० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो चउप्पएसिओ खंधा भवंति अहवा एगयओ दो तिपएसिया खंधा० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो चउपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए० एगयओ तिपएसिए० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिन्नि तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा० एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एग० दो दुपएसिया खंधा एग० चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिन्नि दुपएसिया० एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा पंच दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाण एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए० एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा० एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए० एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ छ परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, नवहा कज्जमाणं एगयओ अट्ठ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ दसहा कज्जमाणे दस परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२। उ ४। सू ९। पृ० ६५६ से ५८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दस परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक दस प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस दस प्रदेशी स्कंध का भेद विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ, नव अथवा दस विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और एक नव प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा दूसरा आठ प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग तथा दूसरा सात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग तथा दूसरा छः प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा पाँच प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

२) यदि तीन विभाग हों तो आठ प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा सातप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा छः प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा पाँच प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा और तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो सात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग द्विप्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग छः प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग तीन प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग पाँच प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा और चतुष्प्रदेशी स्कध के दो विभाग होंगे। अथवा पहला विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का, दूसरा विभाग एक द्विप्रदेशी स्कंध का, तीसरा विभाग एक तीन प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा परमाणु पुद्गल का एक विभाग होगा और तीन प्रदेशी स्कधों के तीन विभाग होंगे। अथवा चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग तथा तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(४) यदि पाँच विभाग हों तो छः प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक-एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल के तीन विभाग होंगे, एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा एक पंच-प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के तीन विभाग, तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग, द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग तथा चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग, द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा और द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा द्विप्रदेशी स्कंधों के पाँच विभाग होंगे।

(५) यदि छः विभाग हों तो पाँच प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवा-छट्ठा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग, एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक-एक परमाणु पुद्गल के चार विभाग होंगे। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के चार विभाग तथा तीन प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग, द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग तथा एक परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् तीन विभाग होंगे। अथवा परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् दो विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के चार विभाग होंगे।

(६) यदि सात विभाग हों तो चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा दूसरा-तीसरा-चौथा-पाँचवाँ-छट्ठा-सातवाँ विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के पाँच विभाग, द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के चार विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

(७) यदि आठ विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा एक-एक परमाणु पुद्गल के सात विभाग होंगे। अथवा एक-एक परमाणु पुद्गल के छः विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

यदि नव विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग तथा एक-एक परमाणु पुद्गल के आठ विभाग होंगे।

यदि दस विभाग हों तो दस परमाणु पुद्गल के दस अलग-अलग विभाग होंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·१० संख्यात परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

संखेज्जा ण भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति एगयओ साह-णित्ता किं भवइ ? गोयमा ! संखेज्जपएसिए खंधे भवइ से भिज्जमाण दुहावि जाव दसहावि संखेज्जहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाण एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ संखेज्ज-पएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा दो संखेज्जपएसिए खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ संखेज्ज-पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले तिपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु-पोग्गले एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु-पोग्गला एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु-पोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दसपएसिए एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति एवं जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया खधा भवंति; अहवा चत्तारि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति,एवं एएणं कमेणं पंचगसंजोगोवि भाणियव्वो जाव नवगसंजोगो, दसहा कज्जमाणे एगयओ नव परमाणुपोग्गला एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ अट्ठ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ, एवं एएणं कमेणं एक्केक्को पूरेयव्वो जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ नव संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा दस संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२ । उ ४ । सू १० पृ० ६५८-५९

संख्यात परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक संख्यात प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस संख्यात प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ, नौ, दस अथवा संख्यात विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक पाँच प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक छः प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक सात प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक आठ प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक नव प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक दस प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा और एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(२) यदि तीन विभाग हों तो संख्यात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा पाँच प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा छः प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा सात प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा आठ प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा नव प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, दूसरा दस प्रदेशी स्कंध का विभाग और तीसरा संख्यात प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा चतुष्प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा पाँच प्रदेशी स्कंधों का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा छः प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा सात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा आठ प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा नव प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा दस प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो संख्यात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणुपुद्गल का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणुपुद्गल का होगा, तीसरा विभाग द्विप्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यातप्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणुपुद्गल का होगा, तीसरा विभाग तीन प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणुपुद्गल का होगा, तीसरा विभाग चतुष्प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु-पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग पाँचप्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग छः प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग सात प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग आठ प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग नव प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा, तीसरा विभाग दस प्रदेशी स्कंध का और चौथा विभाग संख्यात प्रदेशी स्कंध का होगा।

अथवा एक परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् दो विभाग होंगे तथा संख्यात प्रदेशी स्कंधों के भी दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक-पाँच प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक छः प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक सात प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक आठ प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक नव प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग, एक दस प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक पांच प्रदेशी स्कंध का विभाग और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक छः प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक सात प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक आठ प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कधो के तीन विभाग होंगे। अथवा एक नव प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे। अथवा एक दस प्रदेशी स्कंध का विभाग और संख्यात प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

अथवा संख्यात प्रदेशी स्कंधों के चार विभाग होंगे।

इस प्रकार क्रमानुसार पाँच संयोगी से लेकर नव संयोगी तक कथन करना चाहिए।

यदि दस विभाग हों तो संख्यात प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् नव विभाग होंगे। अथवा परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् आठ विभाग होंगे, नववाँ विभाग द्विप्रदेशी स्कंध का तथा दसवाँ विभाग संख्यात प्रदेशी का होगा।

इस प्रकार क्रमानुसार एक-एक की संख्या बढ़ाते जाना चाहिए यावत् अथवा एक दसप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा संख्यात प्रदेशी स्कंध के नव विभाग होंगे। अथवा दस संख्यात प्रदेशी स्कंध होते हैं।

यदि संख्यात विभाग हों तो परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् संख्यात विभाग होंगे।

·११ असंख्यात परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

असंखेज्जा णं भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहणित्ता किं भवइ ? गोयमा ! असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि जाव दस-हावि संखेज्जहावि असंखेज्जहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु-पोग्गले एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा एगयओ दस-पएसिए० एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ असंखेज्ज-पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए० एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगयओ दसपएसिए० एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ संखेज्जपएसिए० एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए० एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ एवं चउक्कगसंजोगो जाव दसगसंजोगो एवं जहेव संखेज्ज-पएसियस्स नवरं असंखेज्जयं एगं अहिगं भाणियव्वं जाव अहवा दस असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, संखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ संखेज्जा परमाणुपोग्गला एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ संखेज्जा दुपएसिया खंधा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जा दसपएसिया खंधा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ संखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्ज-पएसिए खंधे भवइ अहवा संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, असंखेज्जहा कज्जमाणे असंखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति ।

—भग० श १२ । उ ४ । सू ११ । पृ० ६५९

असंख्यात परमाणुपुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस असंख्यातप्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग हो तो दो से लेकर दस विभाग, संख्यात अथवा असंख्यात विभाग होंगे ।

यदि दो विभाग हों तो एक परमाणुपुद्गल का विभाग और एक असंख्यात-प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा । यावत् अथवा एक दस प्रदेशी स्कंध का विभाग और एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा । अथवा एक संख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग और एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा । अथवा असंख्यातप्रदेशी स्कंध के दो विभाग होंगे ।

यदि तीन विभाग हों तो परमाणुपुद्गल के पृथक्-पृथक् दो विभाग और संख्यातप्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा । अथवा एक परमाणुपुद्गल का विभाग, दूसरा द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा तीसरा असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा । अथवा यावत् अथवा एक परमाणुपुद्गल का विभाग, दूसरा दस प्रदेशी स्कंध का विभाग तथा तीसरा असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा एक परमाणुपुद्गल का विभाग, दूसरा संख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा एक परमाणुपुद्गल का विभाग और असंख्यातप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और असंख्यातप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। यावत् अथवा एक संख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग और असंख्यातप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा असंख्यातप्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

यदि चार विभाग हों तो असंख्यातप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक-एक परमाणुपुद्गल का होगा।

इस प्रकार क्रमानुसार चार संयोगी से लेकर दस संयोगी तक कथन करना चाहिए। जैसा संख्यातप्रदेशी का कथन किया गया है वैसा ही इन सबका कथन करना चाहिए परन्तु यहाँ एक 'असंख्यात' शब्द अधिक कहना चाहिए यावत् अथवा असंख्यातप्रदेशी स्कंधों के दस विभाग होंगे।

यदि संख्यात विभाग हों तो असंख्यातप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और परमाणु-पुद्गल के पृथग्-पृथग् संख्यात विभाग होंगे। अथवा असंख्यातप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और द्विप्रदेशी स्कंध के पृथग्-पृथग् संख्यात विभाग होंगे। इस प्रकार यावत् अथवा एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा दस प्रदेशी स्कंध के पृथग्-पृथग् संख्यात विभाग होंगे। अथवा एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध का विभाग तथा संख्यात-प्रदेशी स्कंधों के संख्यात विभाग होंगे।

अथवा असंख्यातप्रदेशी स्कंधों के संख्यात विभाग होंगे।

यदि असंख्यात विभाग हों तो परमाणुपुद्गल के पृथग्-पृथग् असंख्यात विभाग होंगे।

·१२ अनंत परमाणु पुद्गलों का बंधन तथा भेदन

अणंता णं भंते ! परमाणुपोग्गला जाव किं भवंति ? गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि जाव दसहावि संखेज्जहावि असंखेज्जहावि अणंतहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु-पोग्गले एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ एवं जाव अहवा दो अणंतपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाण एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ अणंत-पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ असंखेज्जपएसिए० एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए० एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए० एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए० खंधे एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि अणंतपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ एवं चउक्कसंजोगो जाव असंखेज्जगसंजोगो, एए सव्वे जहेव असंखेज्जाणं भणिया तहेव अणंताणवि भाणियव्वं नवरं एक्कं अणंतगं अब्भहियं भाणियव्वं जाव अहवा एगयओ संखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा एगयओ अणतपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा संखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति, असंखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ असंखेज्जा परमाणुपोग्गला एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ असंखेज्जा दुपएसिया खंधा एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ जाव अहवा एगयओ असंखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ असंखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा असंखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति, अणंतहा कज्जमाणे अणंता परमाणुपोग्गला भवंति।

—भग० श १२ । उ ४ । सू १२ । पृ० ६५९-६०

अनंत परमाणुपुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक अनंतप्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस अनंतप्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग हों तो दो, तीन यावत् दस विभाग, संख्यात, असंख्यात अथवा अनंत विभाग होंगे।

यदि दो विभाग हों तो एक परमाणुपुद्गल का विभाग और एक अनंतप्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। यावत् अथवा अनंतप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

यदि तीन विभाग हों तो पहला-दूसरा विभाग एक-एक परमाणुपुद्गल का होगा और तीसरा विभाग अनंतप्रदेशी स्कंध का होगा। अथवा पहला विभाग एक परमाणुपुद्गल का विभाग, दूसरा विभाग एक द्विप्रदेशी स्कंध का तथा तीसरा विभाग अनंतप्रदेशी स्कंध का होगा। यावत् अथवा एक परमाणुपुद्गल का विभाग, दूसरा एक असंख्यातप्रदेशी स्कंध का तथा तीसरा एक अनंतप्रदेशी स्कंध का होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा पहला विभाग एक परमाणु पुद्गल का तथा अनंत प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा पहला विभाग एक द्विप्रदेशी स्कंध का तथा अनंत प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। इस प्रकार यावत् पहला विभाग एक दस प्रदेशी स्कंध का तथा अनंत प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा पहला विभाग एक संख्यात प्रदेशी स्कंध का तथा अनत प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा पहला विभाग एक असंख्यात प्रदेशी स्कंध का तथा अनंत प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे। अथवा अनंत प्रदेशी स्कंधों के तीन विभाग होंगे।

यदि चार विभाग हों तो पहला-दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा और चौथा विभाग अनंत प्रदेशी स्कंध का होगा।

इस प्रकार क्रमानुसार चार संयोगी से लेकर संख्यात संयोगी तक कथन करना चाहिए। जैसा असंख्यात प्रदेशी स्कंध का कथन किया गया है वैसा ही इन सबका कथन करना चाहिए परन्तु यहाँ एक 'अनत' शब्द अधिक कहना चाहिए। यावत् अथवा संख्यात प्रदेशी स्कंधों के सख्यात विभाग होंगे और अनंत प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होंगे। अथवा असख्यात प्रदेशी स्कंधों के संख्यात विभाग होंगे और अनंत प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होंगे।

अथवा अनंत प्रदेशी स्कंधों के संख्यात विभाग होंगे।

यदि असंख्यात विभाग हों तो परमाणु पुद्गल के पृथक्-पृथक् असंख्यात विभाग होंगे और एक अनंत प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा द्विप्रदेशी स्कंध के पृथग्-पृथग् असंख्यात विभाग होंगे और एक अनंत प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। यावत् अथवा सख्यातप्रदेशी स्कंधों के असंख्यात विभाग होंगे और एक अनंत प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा असंख्यात प्रदेशी स्कंधों के असंख्यात विभाग होंगे और एक अनंत प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा असंख्यात अनंत प्रदेशी स्कंध होंगे।

अथवा परमाणु पुद्गल के पृथग्-पृथग् अनंत विभाग होंगे।

३२·५ क्रिया

·२ सकंपता-निष्कंपता

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·२१)

परमाणु पुद्गल का देश रूप से कंपन नहीं होता है, यदि कंपन होता है तो सर्वांश रूप से कंपन होता है। यदि निष्कंप होता है तो सर्वांश रूप से निष्कंप होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गलों (बहुवचन) में भी किसी एक का भी देश रूप से कंपन नहीं होता। यदि कंपन होता है तो सर्वांश रूप से कंपन होता है। परमाणु पुद्गलों में कंपन और निष्कंप की भजना है—कोई कंपन करता है, कोई निष्कंप रहता है।

·३ एजनादि क्रिया

परमाणु पुद्गल—कदाचित् (१) कंपन करता है, (२) विविध भाव से कंपन करता है, (३) देशांतर गति करता है, (४) स्पंदन-परिस्पंदन करता है, (५) सभी दिशाओं में गति करता है, (६) क्षुब्ध होता में अर्थात् समस्त रूप से हलचल करता है तथा (७) उदीरण करता है तथा परमाणु पुद्गल उन-उन भावों में परिणमन करता है ; कदाचित् कंपन नहीं करता है यावत् उदीरण नहीं करता है तथा उन-उन भावों में परिणमन नहीं करता है।

·३२·६ गति

·१ अनुश्रेणिगति

२ नोभवोपपातगति

·३ स्पृशद्गति-अस्पृशद्गति

[पाठ के लिए देखो—क्रमांक ·१२·०७·०२]

परमाणु पुद्गल की गति अनूश्रेणी होती है परन्तु विश्रेणी नहीं होती है।

परमाणु पुद्गल एक समय में लोक के पूर्व चरमांत से पश्चिम चरमांत तक, पश्चिम चरमांत से पूर्व चरमांत तक, दक्षिण चरमांत से उत्तर चरमांत तक, उत्तर चरमांत से दक्षिण चरमांत तक, ऊपर के चरमांत से नीचे के चरमांत तक व नीचे के चरमांत से ऊपर के चरमांत तक गमन कर सकता है। यह गति भी अनुश्रेणी होती है।

परमाणु पुद्गल की इस गति को पुद्गल नोभवोपपात गति कहते हैं।

परमाणु पुद्गल का परस्पर स्पर्श करते हुए जो गति होती है उसे स्पृशद् गति कहते हैं। इसके विपरीत परस्पर स्पर्श किये बिना परमाणु पुद्गल की जो गति होती है उसे अस्पृशद् गति कहते हैं।—यथा परस्पर स्पर्श किये बिना परमाणु पुद्गल एक समय में एक लोकांत से दूसरे लोकांत तक जाता है।

परमाणु पुद्गल की गति को पुद्गल गति से भी सम्बोधित किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ प्रतिघात (गति का प्रतिहनन)

(१) तिविहे पोग्गलपडिघाए पन्नते, तंजहा-परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलं पप्प पडिहन्निज्जा, लुक्खत्ताते वा पडिहणिज्जा, लोगंते वा पडिहन्निज्जा।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २११। पृ० २१९

टीका—'तिविहे' इत्यादि, पुद्गलानाम् अण्वादीनां प्रतिघातो-गतिस्खलनं पुद्गलप्रतिघातः, परमाणुश्चासौ पुद्गलश्च परमाणुपुद्गलः स तदन्तर प्राप्य प्रतिहन्येत गतेः प्रतिघातमापद्येत, रूक्षतया वा तथाविधपरिणामान्तरात् गतितः प्रतिहन्येत, लोकान्ते वा, परतो धर्म्मास्तिकायाभावादिति।

(२) यतस्त्रिविधं प्रतिघातमामनन्ति भगवंतः परमाणूनां—बंधनपरिणामोपकाराभाववेगाख्यम्।

—सिद्ध० अ ५। सू २६। पृ० ३६८

परमाणु पुद्गल की गति—तीन स्थिति अवस्था में प्रतिहत होती है—(१) गतिमान् परमाणु पुद्गल अन्य परमाणु पुद्गल से प्रतिघात पाकर गति से स्खलित होता है ; (२) गतिमान् परमाणु पुद्गल अन्य पुद्गल-स्कंध पुद्गल तथा अन्य परमाणु पुद्गल का संयोग प्राप्त करके रूक्ष या स्निग्ध गुणों के नियमों के अनुसार बंधन को प्राप्त होकर गति में स्खलित होता है, (३) गतिमान् परमाणु पुद्गल लोकांत में जाकर, तत्पश्चात् धर्मास्तिकाय के अभाव के कारण गति में स्खलित होता है।

तत्त्वार्थ सूत्र के टीकाकार ने परमाणु पुद्गल का प्रतिघात (गति-स्खलन) उपर्युक्त तीन प्रकार से ही माना है परन्तु क्रम इस प्रकार रखा है—(१) उपकाराभाव प्रतिघात, (२) बंधन परिणाम-प्रतिघात तथा (३) गतिवेग प्रतिघात।

·३२ ७ काल की संख्या का प्रविभक्त है

× × × पविहत्ता कालसंखाणं।

——पंच० गा ८०

अमृत टीका—एकेन प्रदेशेनैकाकाशप्रदेशातिवर्तिततद्गतिपरिणामापन्नेन समयलक्षणकाल विभागकरणात् कालस्य प्रविभक्ता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयसेन टीका—परमाणुरप्येक प्रदेशेन मंदगत्याऽणोरण्वंतरव्यतिक्रमण-लक्षणेन कृत्वा समयरूपव्यवहारकालस्य संख्यायाश्च प्रविभक्ता भेदको भवतीति।

एक आकाश प्रदेश में स्थित परमाणु पुद्गल मंदगति से अनंतर दूसरे आकाश में गमन करता है—इससे समय रूप जो काल परिणाम प्रगट होता है ; वह समय रूप व्यवहार काल की संख्या का भेदक होता है।

·३२·८ स्कंध का भेदक तथा कर्त्ता

× × ×। पदेसदो भेत्ता।
खंधाणं पि य कत्ता × × ×॥

—पंच० गा ८०

जयसेन टीका—परमाणुरप्येकप्रदेशगतनिस्नेहभावेन परिणतः सन् स्कंधानां विघटनकाले भेत्ता भेदको भवति × × ×। परमाणुरेकप्रदेशगत-स्निग्धभावेन परिणतः सन् द्वयणुकादिस्कंधानां कर्त्ता भवति।

परमाणु पुद्गल स्कंधों का भेदक भी है तथा कर्त्ता भी है।

परमाणु पुद्गल अपने एक प्रदेश से निस्नेह भाव से परिणत होकर स्कंधों से पृथग् हो जाता है तब परमाणु पुद्गल को स्कंधों का भेदक कहा जाता है।

परमाणु पुद्गल अपने एक प्रदेश से स्निग्ध भाव से परिणत होकर द्विप्रदेशी आदि स्कंधों के साथ संघात को प्राप्त होता है तब परमाणु पुद्गल को स्कंधों का कर्त्ता कहा जाता है।

·३२·९ देशस्पर्श का अभाव

जो सो देसफासो णाम।
जं दव्वदेसं देसेणं पुसदि॥

—षट्० खण्ड० ५, ३। सू १७-१८। पु १३। पृ० १८-१९

टीका—एगस्स दव्वस्स देसं अवयवं जदि (देसेण) अण्णदव्वदेसेणं अप्पणो अवयवेण पुसदि तो देसफासो त्ति दट्ठव्वो। एसो देसफासो खंधा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वयवा णं चेव होदि, ण परमाणुपोग्गलाणं, णिरवयवत्तादो त्ति ण पच्चवट्ठे यं।

परमाणूणं णिरवयवत्तासिद्धीदो। 'अपदेसं णेव इंदिए गेज्झं' इदि परमाणूणं णिरवयवत्तं परियम्मे वुत्तमिदि णासंकणिज्जं, पदेसो णाम परमाणू, सोजम्हि परमाणुम्हि समवेदभावेण णत्थि सो परमाणू अपदेसओ त्ति परियम्मे वुत्तो। तेण ण णिरवयवत्तं तत्तो गम्मदे। परमाणू सावयवो त्ति कत्तो णव्वदे? खंधभावण्णहाणुववत्तीदो। जदि परमाणू णिरवयवो होज्ज तो खंधाणमणुप्पत्तो जायदे। अवयवाभावेण देसफासेण विणा सव्वफासमुवगएहिंतो खंधुप्पत्तिविरोहादो। ण च एवं, उप्पण्णखंधुवलंभादो। तम्हा सावयवो परमाणू त्ति घेत्तव्वो।

—षट्० खण्ड० ५। भा १। सू १८। टीका। पु १३। पृ १८। १९

एक द्रव्य का देश अर्थात् अवयव यदि अन्य द्रव्य के देश अर्थात् उसके अवयव के साथ स्पर्श करता है उसे देशस्पर्श कहते हैं। यह देश स्पर्श स्कंधों के अवयवों का ही होता है, परमाणु रूप पुद्गलों का नहीं, क्योंकि वे निरवयव होते हैं। यदि कोई ऐसा निश्चय करे तो यह ठीक नहीं है। क्योंकि परमाणु निरवयव होते हैं, यह बात असिद्ध है। परमाणु अप्रदेशी होता है और उसका इन्द्रियों द्वारा ग्रहण नहीं होता। इस प्रकार परमाणुओं का निरवयवपन परिकर्म में कहा है। यह आशंका नहीं करनी चाहिए। क्योंकि प्रदेश का अर्थ परमाणु है। वह जिस परमाणु में समवेतभाव से नहीं है वह परमाणु अप्रदेशी है, इस प्रकार परिकर्म में कहा है। इसलिये परमाणु निरवयव होता है यह बात परिकर्म से नहीं जानी जाती।

स्कंधभाव को अन्यथा वह प्राप्त नहीं हो सकता, इसी से जाना जाता है कि परमाणु सावयव होता है।

यदि परमाणु निरवयव होवे तो स्कंधों की उत्पत्ति नहीं हो सकती है क्योंकि जब परमाणुओं के अवयव नहीं होंगे तो उनका एक देश स्पर्श नहीं बनेगा और एक देश स्पर्श के बिना सर्व स्पर्श मानना पड़ेगा जिससे स्कंधों की उत्पत्ति मानने में विरोध आता है। परन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि उत्पन्न हुए स्कंधों की उपलब्धि होती है। इसलिए परमाणु सावयव होता है—ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३२·१० अशब्दत्व

सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू।
सो सस्सदो असद्दो एक्को अविभागी मुत्तिभवो ॥

—पंच० श्लो० ७७

टीका— × × × परमाणुरपि शक्तिरूपेण शब्दकारणभूतोपि व्यक्तिरूपेण शब्दपर्यायरूपो न भवतीत्यशब्दः।

परमाणुपुद्गल व्यक्तिगतभाव से शब्द नहीं है, अशब्द है।

परमाणुपुद्गल को शब्द भी कहा गया है। क्योंकि वह शक्ति रूप से शब्द का कारण माना जाता है, स्कंध के साथ मिलकर परमाणुपुद्गल शब्दपर्याय की उत्पति का कारण माना जाता है।

३२ ११ परमाणुपुद्गल और पर्यायसंख्या

वण्णाइभावणंता।

—विशेभा० गा १३९६। उत्तरार्ध

टीका—(परमाणु) भावतः पुनर्वर्णगंधादिरूपा अनंता पर्यायाः।

परमाणुपुद्गल में भाव की अपेक्षा—वर्ण, गंध आदि की अपेक्षा अनंतपर्याय होते हैं।

·३२ ११ पर्याय संख्या

·१ औघिक अपेक्षा

परमाणुपोग्गलाणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ? गोयमा ! परमाणुपोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ परमाणुपोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ? गोयमा। परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए-जइ हीणे असंखेज्जइभागहीणे वा संखेज्जइभागहीणे वा संखेज्जइगुणहीणे वा असंखेज्जइगुणहीणे वा, अह अब्भइए असंखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्ज-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणमब्भहिए वा असंखेज्जगुणमब्भहिए वा ; कालवण्णपज्जवेहिं सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे अणंतभागहीणे वा असंखेज्जइ-भागहीणे वा संखेज्जइभागहीणे वा संखेज्जगुणहीणे वा असंखेज्जगुण-हीणे वा, अणंतगुणहीणे वा, अह अब्भहिए अणंतभागमब्भहिए वा असंखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्जइभागमब्भहिए वा संखेज्जगुणमब्भहिए वा असंखेज्जगुणमब्भहिए वा अणंतगुणमब्भहिए वा ; एवं अवसेसवण्ण-गंध-रस-फासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए। फासा णं सीय-उसिण-निद्धलुक्खेहिं छट्ठाणवडिए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ परमाणुपोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता।

—पण्ण० प ५। सू ७४। पृ० ३६२-३

टीका – 'परमाणुपोग्गलाणं भंते' इत्यादि स्थित्या चतुःस्थानपतितत्वं, परमाणोः समयादारभ्योत्कर्षतोऽसङ्ख्येयकालमवस्थानभावात्। कालाऽऽदि-वर्णपर्यायैः षट्स्थानपतितता: एकस्यापि परमाणोः पर्यायाऽऽनन्त्याविरोधात्। ननु परमाणुरप्रदेशो गीयते। ततः कथं पर्यायाऽऽनन्त्याविरोध, पर्यायाऽऽ-नन्त्ये नियमतः सप्रदेशत्वप्रसक्तेः ? तदयुक्तम्-वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्। परमाणुर्हि अप्रदेशो गीयते—द्रव्यरूपतया सांऽशो न भवतीति, न तु काल-भावाभ्यामिति। "अपएसो दव्वट्ठयाए उ" इति वचनात्। ततः काल-भावाभ्यां सप्रदेशत्वेऽपि न कश्चिद्दोषः तथा परमाण्वादीनामसंख्यातप्रदेश-कस्कंधपर्यन्तानां केषाञ्चिदनन्तप्रदेशकानामपिस्कंधानां तथा एकप्रदेशाव-गाढानां यावत्संख्यातप्रदेशावगाढानां शीतोष्णस्निग्धरूक्षस्पर्शाश्चत्वार एव स्पर्शाइति तैरेव परमाण्वादीनां षट्स्थानपतितता वक्तव्या, न शेषैः।

परमाणुपुद्गलों में अनंतपर्याय होते हैं। परमाणुपुद्गल परमाणुपुद्गल द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेशरूप से भी तुल्य है तथा अवगाहन रूप से भी तुल्य है।

परमाणुपुद्गल परमाणुपुद्गल से स्थितिरूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यातगुण न्यून है अथवा असंख्यातगुण न्यून है (चतुःस्थान न्यून)। यदि अधिक है तो असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यातगुण अधिक है अथवा असंख्यातगुण अधिक है (चतुःस्थान अधिक)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से कृष्णवर्णपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंतभाग न्यून है अथवा असंख्यातभाग न्यून है अथवा संख्यातभाग न्यून है अथवा संख्यातगुण न्यून है अथवा असंख्यातगुण न्यून है अथवा अनंतगुण न्यून है (छः स्थान न्यून)। यदि अधिक है तो अनंतभाग अधिक है अथवा असंख्यातभाग अधिक है अथवा संख्यातभाग अधिक है अथवा संख्यातगुण अधिक है अथवा असंख्यातगुण अधिक है अथवा अनंत-गुण अधिक है (छः स्थान अधिक)।

जिस प्रकार कृष्णवर्णपर्याय रूप से परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छः स्थान न्यून)। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छः स्थान अधिक) है।

जिस प्रकार सुगन्ध पर्याय रूप से परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्ध पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से तिक्त रस पर्याय से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है, अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छः स्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है (छः स्थान अधिक) है।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से शीत स्पर्श पर्याय से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) है। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छः स्थान अधिक) है।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्याय रूप से परमाणु पुद्गल परमाणु पद्गल से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है। अथवा तुल्य है अतः परमाणु पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

नोट—परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल से स्थिति रूप से चतुस्थान न्यूनाधिक होता है क्योंकि परमाणु पुद्गल एक समय से आरम्भ होकर उत्कृष्ट असंख्यात काल पर्यन्त एक स्थान में रहता है। कृष्ण आदि वर्ण रूप से छः स्थान न्यूनाधिक होते हैं। परमाणु को द्रव्य रूप से अंश नहीं होता है अतः परमाणु अप्रदेशी होता है परन्तु काल और भाव रूप से अप्रदेशीत्व एकांत रूप नहीं होता है अतः काल और भाव रूप से परमाणु सप्रदेशी भी होता है।

·२ समयस्थितिवाले

परमाणुपुद्गल और पर्यायसंख्या

जहण्णठिईयाणं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं पुच्छा ! गोयमा ! अणंता (पज्जवा पन्नत्ता)। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णठिईए परमाणुपोग्गले जहण्णठिईयस्स परमाणुपोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए तुल्ले, वण्णादि-डुफासेहि य छट्ठाणवडिए।

एवं उक्कोसठिईए वि।

अजहण्ण ,णुक्कोसठिईए वि एवं चेव। नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए।

—पण्ण० प ५। सू ५३२। पृ० ३६५

जघन्यस्थितिवाले परमाणुपुद्गल में अनंतपर्याय होते हैं।

जघन्यस्थितिवाले परमाणुपुद्गल की अन्यान्य जघन्यस्थितिवाले परमाणुपुद्गल से तुलना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) द्रव्यार्थ से तुल्य ।
(२) प्रदेशार्थ से तुल्य ।
(३) अवगाहनार्थ से तुल्य ।
(४) स्थिति अपेक्षा से तुल्य ।
(५) वर्ण-गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य ।

जघन्य स्थिति (एक समय) वाले परमाणु पुद्गल में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंतपर्याय होते हैं—ऐसा निरूपण किया गया है ।

जघन्य स्थिति (एक समय स्थिति) वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से प्रदेश रूप से तुल्य होते हैं ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से अवगाहना रूप से तुल्य होते हैं ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से स्थिति रूप से तुल्य होते हैं ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से वर्ण-पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से गंधपर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से रस-पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ।

जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल जघन्य स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से स्पर्शपर्याय रूप से शीतस्निग्ध अथवा शीत-रूक्ष अथवा उष्णस्निग्ध अथवा उष्णरूक्ष पर्याय रूप से) षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ।

उत्कृष्ट स्थितिवाले परमाणु पुद्गल में अनंतपर्याय होते हैं ।

उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल की अन्यान्य उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से तुलना—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) द्रव्यार्थ से तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा से तुल्य।
(५) वर्ण-गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते है। ऐसा निरूपण किया गया है।

उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल उत्कृष्ट स्थितिवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्यरूप से तुल्य होते हैं।

उत्कृष्ट स्थितिवाले परमाणु पुद्गल उत्कृष्ट स्थितिवाले परमाणु पुद्गल से प्रदेशरूप से भी तुल्य, अवगाहना रूप से भी तुल्य तथा स्थिति रूप से भी तुल्य होते हैं।

उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल उत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से वर्णपर्याय रूप से, गंधपर्याय रूप से, रसपर्याय रूप से तथा स्पर्शपर्याय रूप से (शीत-स्निग्ध अथवा शीतरूक्ष अथवा उष्णस्निग्ध अथवा उष्णरूक्षपर्याय रूप से) षट्स्थान न्यूनाधिक अथवा तुल्य होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति (मध्यम स्थिति) वाले परमाणु पुद्गल में अनंत-पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल की अन्यान्य अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक अथवा तुल्य है।
(५) वर्ण-गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंतपर्याय होते हैं—ऐसा निरूपण किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से द्रव्यरूप से तुल्य, प्रदेशरूप से भी तुल्य तथा अवगाहना रूप से तुल्य होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अर्थात् जघन्य-उत्कृष्ट की मध्यम स्थिति वाले परमाणु पुद्गल स्थिति की अपेक्षा पारस्परिक तुलना में एक दूसरे की अपेक्षा चतुःस्थान हीनाधिक अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से वर्णपर्यायरूप से, गंधपर्यायरूप से तथा रसपर्यायरूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले परमाणु पुद्गल से स्पर्शपर्यायरूप से (शीतस्निग्ध अथवा शीतरूक्ष अथवा उष्णस्निग्ध अथवा उष्णरूक्षपर्याय रूप से) षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

·३ वर्ण-गंध-रस-स्पर्शत्व अपेक्षा

जहण्णगुणकालयाणं परमाणुपोग्गलाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता (पज्जवा पन्नत्ता) से केणट्ठेणं? गोयमा! जहण्णगुणकालए परमाणुपोग्गले जहण्णगुणकालगस्स परमाणुपोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, काल वण्णपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसा वण्णा णत्थि, गंध-रस फासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणकालए वि। एवमजहण्णमणुक्कोसगुणकालए वि। णवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए × × ×।

एवं नील-लोहित-हालिद्द-सुक्किल्ल-सुब्भिगंध-दुब्भिगंध-तित्त-कडुय-कसाय-अंबिल-महुररसपज्जवेहि य वत्तव्वया भाणियव्वा। नवरं परमाणुपोग्गलस्स सुब्भिगंधस्स दुब्भिगंधो न भण्णइ, दुब्भिगंधस्स सुब्भिगंधो न भण्णइ, तित्तस्स अवसेसा ण भण्णंति। एवं कडुयादीण वि। सेसं तं चेव × × ×।

जहण्णगुणसीयाणं भंते! परमाणुपोग्गलाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता। (पज्जवा पन्नत्ता) से केणट्ठेणं? गोयमा! जहन्नगुणसीए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुपोग्गले जहण्णगुणसीयस्स परमाणुपोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्ण-गंध-रसेहिं छट्ठाणवडिए, सीयफासपज्जवेहिं य तुल्ले, उसिणफासे न भण्णंति, णिद्ध-लुक्ख-फासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणसीए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणसीए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए। ५४७× × ×।

एवं उसिणे निद्धे लुक्खे जहा सीए। परमाणुपोग्गलस्स तहेव परिवक्खो सव्वेसिं न भण्णइ त्ति भाणियव्वं।

—पण्ण० प ५। सू ५३८, ४४, ४७, ५३। पृ० ३६६ से ३६९

जघन्य गुण काले वर्णवाले परमाणु पुद्गल में अनंतपर्याय होते हैं।

जघन्य गुणकाले परमाणु का अन्यान्य जघन्य गुणकाले परमाणु पुद्गल से तुलना।

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(५) काले वर्ण से—तुल्य है।
(६) अवशेष वर्ण से—नहीं होते हैं।
(७) गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

जघन्य गुण काले वर्ण परमाणु पुद्गल में भी गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः जघन्य गुण काले वर्णवाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते हैं—ऐसा निरूपण किया गया है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले (एक गुण कृष्णवर्णवाले) परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से प्रदेश रूप से तुल्य है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से अवगाहनरूप से तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है। शेष के वर्ण (नील-रक्त-पीत-शुक्ल) नहीं होते हैं।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से दुर्गन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक हैं अथवा तुल्य हैं।

जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से तिक्त रस पर्याय से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार तिक्तरस पर्याय रूप से जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्याय रूप से जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट गुण कालेवर्णवाले परमाणु पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण परमाणु का अन्यान्य उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण परमाणु पुद्गल से तुलना।

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक व तुल्य।
(५) काले वर्ण से तुल्य है।
(६) अवशेष वर्ण से नहीं होते हैं।
(७) गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट गुण काले वर्ण परमाणु पुद्गल में भी गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः उत्कृष्ट गुण काले वर्णवाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते हैं—ऐसा निरूपण किया गया है।

जिस प्रकार जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहन रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; कृष्ण पर्याय रूप से तुल्य है (अवशेष वर्ण नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण नहीं होते हैं।) गंध-रस-स्पर्श पर्याय से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले परमाणु पुद्गल उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहन रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है (अवशेष-नील आदि चार वर्ण नहीं होते हैं।) गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण काले परमाणु पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण काले परमाणु का अन्यान्य अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुणकाले परमाणु पुद्गल से तुलना।

(१) द्रव्यार्थ से तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—तुल्य है।
(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(५) काले वर्ण से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(६) अवशेष वर्ण नहीं होते हैं।
(७) गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण काले वर्ण परमाणु पुद्गल में भी वर्ण गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षायों से अनंत पर्याय होते हैं—ऐसा निरुपण किया गया है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुल्य है, अवगाहन रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अर्थात् जघन्य-उत्कृष्ट के मध्यम गुण काले वर्णवाले परमाणु पुद्गल काले वर्ण की अपेक्षा पारस्परिक तुलना में एक दूसरे की अपेक्षा षट्स्थान हीनाधिक अथवा तुल्य होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से षटस्थान न्यूनाधिक है। अथवा तुल्य है। इसी प्रकार दुर्गन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से तिक्त रस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गल से शीत स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार उष्ण, स्निग्ध तथा रूक्ष पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार कृष्णवर्णवाले परमाणु पुद्गलों का वर्णन किया है वैसे ही अन्य वर्णों का (नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण) सुगन्ध-दुर्गंध का, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रसों का वर्णन करना चाहिए लेकिन सुरभिगन्धवाले परमाणु पुद्गल की पृच्छा में दुरभिगंधवाला न कहना चाहिए, दुरभिगंधवाले परमाणु पुद्गल की पृच्छा से सुरभिगंधवाला न कहना चाहिए। तिक्तरसवाला परमाणु पुद्गल की पृच्छा में अवशेष के रस (कटुक-कषाय-आम्ल-मधुर) न कहना चाहिए। इसी प्रकार कटुकादि रसवाले परमाणु पुद्गल के विषय में समझना चाहिए।

जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु का अन्यान्य जघन्य शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से तुलना।

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक व तुल्य।
(५) वर्ण-गंध-रस अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक व तुल्य।
(६) जघन्य शीत स्पर्श से—तुल्य है।
(७) उष्ण स्पर्श नहीं होता है।
(८) स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

जघन्य गुण शीत स्पर्श परमाणु पुद्गल में भी वर्ण-गंध-रस गुणों के पर्याय अनंत होते हैं तथा स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श गुणों के पर्याय भी अनंत होते हैं अतः जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं।

जघन्य गुण शीत स्वर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से प्रदेश रूप से तुल्य होते हैं।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से अवगाहन रूप से भी तुल्य है।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से सुगन्ध पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से दुर्गन्ध पर्याय रूप से भी षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से तिक्तरस पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार तिक्तरस पर्याय रूप से जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटुक-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से शीतस्पर्श पर्याय रूप से तुल्य है।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गलों में उष्ण स्पर्श नहीं होता है अतः उनमें उष्ण स्पर्श का निषेध किया गया है।

जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से स्निग्ध स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से भी षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट गुण शीतस्पर्श परमाणु पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल का अन्यान्य उत्कृष्ट गुण शीतस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा से—चतुःस्थान हीनाधिक व तुल्य।
(५) वर्ण-गंध-रस अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(६) उत्कृष्ट शीतस्पर्श से तुल्य।
(७) उष्ण स्पर्श नहीं होता है।
(८) स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श अपेक्षा से षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य है।

उत्कृष्ट गुण शीतस्पर्श परमाणु पुद्गल में भी वर्ण-गंध-रस गुणों के पर्याय अनंत होते हैं तथा स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श गुणों के पर्याय भी अनंत होते हैं अतः उत्कृष्ट गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते हैं।

जिस प्रकार जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल जघन्य गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहन रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वर्ण रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है गंध रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, रस रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; शीतस्पर्श पर्याय रूप से तुल्य है; (उष्ण स्पर्श नहीं होता है।) स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उत्कृष्ट गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल उत्कृष्ट गुण शीतस्पर्शवाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहन रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वर्ण रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; गंध-रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; रस-रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है ; शीत स्पर्श पर्याय रूप से तुल्य है (उष्ण स्पर्श नहीं होता है।) स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप है षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण शीत स्पर्श परमाणु पुद्गल में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण शीत स्पर्शवाले परमाणु पुद्गल का अन्यान्य अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण शीतस्पर्श परमाणु पुद्गल से तुलना।

(१) द्रव्यार्थ से तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(५) वर्ण-गंध-रस अपेक्षा से षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(६) मध्यम शीतस्पर्श अपेक्षा षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(७) उष्ण स्पर्श नहीं होता है।
(८) स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श अपेक्षा से षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण शीतस्पर्श परमाणु पुद्गल में भी वर्ण-गंध-रस गुणों के पर्याय अनंत होते हैं तथा स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श गुणों के पर्याय भी अनंत होते हैं अतः अजघन्य-अनुत्कृष्ट शीतस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण शीतस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण शीतस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है, अवगाहन रूप से भी तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वर्णरूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; गंधरूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; रसरूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; शीतस्पर्श पर्याय रूप से भी षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; (उष्ण-स्पर्श नहीं होता है)। स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से षट्स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार शीतस्पर्श वाले परमाणु पुद्गलके विषय में कहा गया है वैसे ही उष्ण, स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श वाले परमाणु पुद्गल के विषय में जानना चाहिए परन्तु सर्व परमाणुओं की पृच्छा में प्रतिपक्ष स्पर्श का कथन नहीं करना चाहिए। उष्ण-स्पर्श वाले परमाणु पुद्गल में शीतस्पर्श नहीं होता है; शीतस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल में उष्णस्पर्श नहीं होता है। स्निग्धस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल में रूक्ष स्पर्श नहीं होता है; रूक्षस्पर्श वाले परमाणु पुद्गल में स्निग्धस्पर्श नहीं होता है।

·३२·१२ भाव

से किं तं सादिपारिणामिए ? सादिपारिणामिए अणेगविहे पन्नत्ते, तंजहा— × × ×। परमाणुपोग्गले, दुपदेसिए जाव अणंतपएसिए।

—अणुओ० सू २४९ । पृ० १११२-३

परमाणु पुद्गल में (स्थिति की अपेक्षा) सादि पारिणमिक भाव होता हैं।

परमाणु पुद्गल की स्थिति असंख्यात काल से अधिक नहीं होती है अतः परमाणु पुद्गल में सादि पारिणमिक भाव कहा गया है।

·३३ परमाणु पुद्गल की वर्गणा

·१ औघिक विवेचन

(क) एगा परमाणुपोग्गलाणं वग्गणा एवं जाव एगा अणंतपएसियाणं खंधाणं वग्गणा।

—ठाण० स्था १ । सू ५१ । पृ० १८५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) वग्गणपरूवणदाए इमा एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम।

—षट्० खण्ड० ४, ६। सू ७६। पु १४। पृ० ५४

—षट्० खण्ड० ५, ६। सू ७०७। पु १४। पृ० ५४२

टीका—एगपदेसियपोग्गलदव्ववग्गणा परमाणुसरूवा; अण्णहा एगपदेसिय त्ति विसेसणाणुववत्तीए।

(ग) इह समस्तलोकाकाशप्रदेशेषु ये केचन एकाकिनः परमाणवो विद्यन्ते तत्समुदायः सजातीयत्वाद् एका वर्गणाः।

—कर्म० भा ५। गा ७५। टीका

(घ) अणंतेहि सरिस धणियपरमाणूहि एगावग्गणा होदि, दव्वट्ठियणयावलंबादो × × ×।

—कसापा० विह ४। भा ५। गा २२। टीका। पृ० ३४८

(ङ) परमाणुवग्गणम्मि ण अवरुक्कस्सं च सेसगे अत्थि।

—गोजी० गा ५९५। पूर्वार्ध

(च) वग्गणणिरूवणिदाए इमा एयपदेसिय परमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम किं भेदेण किं संघादेण किं भेदसंघादेण ॥९८॥ उवरिल्लीणं दव्वाणं भेदेण ॥९९॥

—षट्० खण्ड० ५, ६। सू ९८, ९९। पु १४। पृ० १२०-२१

टीका—दुपदेसियादि उपरिमवग्गणाणं भेदेणेव एयपदेसिया वग्गणा होदि, सुहुमस्स थूलभेदादो चेव उप्पत्तिदंसणादो। संघादेण भेदसंघादेण वा एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा ण होदि; एदम्हादो हेट्ठा वग्गणाण अभावादो।

सामान्यतः समान गुण व जातिवाले समुदाय को वर्गणा कहते हैं। इस समस्त लोकाकाश के प्रदेशों में जो स्वतंत्र रूप से परमाणु विद्यमान है उन परमाणु समुदाय की सजातीयता के कारण एक वर्गणा होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी आदि उपरिम वर्गणाओं के भेद से ही एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा होती है। क्योंकि सूक्ष्म की स्थूल के भेद से उत्पत्ति देखी जाती है। संघात और भेदसंघात से एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा की उत्पत्ति नहीं होती है क्योंकि इसके नीचे अन्य वर्गणाओं का अभाव है।

.३३ जीव और पुद्गल—

·१ जीव के द्वारा अग्राह्य वर्गणा

× × ×। एदाओ चत्तारि वि वग्गणाओ अगेज्झाओ।

—षट्० खण्ड ५। भा ४। सू ७८। टीका। पृ० १४

प्रथम परमाणु वर्गणा, दूसरी संख्यात वर्गणा, तीसरी असंख्यात वर्गणा और चौथी अनंत वर्गणा—ये चार प्रकार की वर्गणाएं अग्राह्य है अर्थात् जीव के द्वारा इनका ग्रहण नहीं होता है।

·३४ परमाणु पुद्गल को आत्मा

[आया भंते ! सोहम्मे कप्पे पुच्छा। गोयमा ! १ सोहम्मे कप्पे सिय आया, २ सिय णो आया जाव णोआयाइ य। से केणट्ठेणं भंते ! जाव आयाति णो आयाइ य ? गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया, २ परस्स आइट्ठे णो आया, ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य; से तेणट्ठेणं तं चेव जाव आयाति य णोआय य।] आया भंते ! परमाणु-पोग्गले, अण्णे परमाणुपोग्गले ? एवं जाव सोहम्मे कप्पे तहा परमाणु-पोग्गले वि भाणियव्वे।

—भग० श १२। उ १०। सू १६। पृ० ६७३

टीका—× × ×। आत्मा भवति स्वपर्यायापेक्षया सतीत्यर्थः। परस्स आइट्ठे नो आयत्ति।

जिस द्रव्य की जो स्वपर्याय हैं वह उसकी आत्मा है, अन्य द्रव्य की पर्याय उसकी अनात्मा है, द्रव्य की स्वपर्याय तथा पर द्रव्य की पर्याय—दोनों का संयुक्त विवेचन किया जाय तो अवक्तव्य है अतः परमाणु पुद्गल कथंचिद् आत्मा (सद्रूप) है तथा कथंचिद् अनात्मा (असद्रूप) है तथा कथंचिद् अवक्तव्य है। परमाणु पुद्गल अपने वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की पर्यायों की अपेक्षा आत्मा है तथा अन्य द्रव्यों की पर्यायों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की अपेक्षा अनात्मा है तथा अपनी पर्यायों तथा पर द्रव्य पर्यायों की विवक्षा से अवक्तव्य है।

·३५ परमाणु पुद्गल और संख्या

·१ द्रव्य अपेक्षा

(क) द्रव्य की अपेक्षा—गणनसंख्या

(मूल पाठ के लिए देखो क्रमांक ·१५)

द्रव्य की अपेक्षा परमाणु पुद्गल की संख्या संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है, अनंत है।

(ख) द्रव्य की अपेक्षा युग्म संख्या

परमाणुपोग्गलेणं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे, तेयोए, दावरजुम्मे, कलियोगे ? गोयमा ! नो कडजुम्मे, नो तेयोए, नो दावरजुम्मे, कलियोगे। एवं जाव अणंतपएसिए खंधे।

परमाणुपोग्गलाणं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा-पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा, जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं नो कड-जुम्मा, नो तेयोगा, नो दावरजुम्मा, कलियोगा। एवं जाव अणंतपएसिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। सू ५९-६०। पृ० ८६६-६७

टीका—परमाणुपुद्गला ओघादेशतः कृतयुग्मादयो भजनया भवन्ति, अनन्तत्वेऽपि तेषां संघातभेदतोऽनवस्थितस्वरूपतया द्विधानतस्तु एकैकशः कल्योजा एवेति।

एक परमाणु पुद्गल द्रव्य रूप से कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज रूप नहीं है, द्वापर-युग्म नहीं है परन्तु कल्योज रूप है।

टीकाकार ने कहा है परमाणु पुद्गल की संख्या अनंत होने पर भी उनमें संघात-भेद होने के कारण अनवस्थिति होती है अतः परमाणु पुद्गलों का सामान्य रूप से कथन करने से द्रव्य रूप से कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज रूप, कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप संख्या होती है। व्यक्तिगत रूप से कथन करने पर उनकी संख्या कल्योज रूप ही होती है परन्तु कृतयुग्म, त्र्योज रूप व द्वापरयुग्म नहीं होती है।

·२ प्रदेश अपेक्षा

परमाणुपोग्गले णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे० पुच्छा। गोयमा ! नो कडजुम्मे, नो तेओगे, नो दावरजुम्मे, कलिओगे × × ×। परमाणु-पोग्गला णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मा-पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा, जाव सिय कलियोगा। विहाणदेसेणं नो कडजुम्मा नो तेओगा' नो दावरजुम्मा, कलियोगा।

—भग० श २५। उ ४। सू ६१-६६। पृ० ८६७

एक परमाणु पुद्गल—प्रदेश रूप से कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज रूप नहीं है, द्वापर-युग्म नहीं है परन्तु कल्योज रूप है।

परमाणु पुद्गलों का औघिक विवेचन करने से प्रदेश रूप से उनकी संख्या कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित त्र्योज रूप, कदाचित् द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप होती है। तथा विधाना देश से (व्यक्तिगत रूप से) विवेचन करने पर प्रदेश रूप से उनकी संख्या कृतयुग्म, त्र्योज रूप, द्वापरयुग्म नहीं होती है परन्तु कल्योज रूप होती है।

·३ क्षेत्रावगाहित परमाणु अपेक्षा

प्रदेशावगाह की अपेक्षा

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढे—पुच्छा। गोयमा ! नो कडजुम्मपएसोगाढे, नो तेओगपएसोगाढे, नो दावरजुम्मपएसोगाढे, कलियोगपएसोगाढे × × ×। परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं कडजुम्म-पुच्छा। गोयमा। ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओगपएसोगाढा, नो दावर-पएसोगाढा, नो कलियोगपएसोगाढा। विहाणादेसेणं नो कडजुम्मपएसोगाढा, नो तेओगपएसोगाढा, वोदावरपएसोगाढा, कलिओगपएसोगाढा।

टीका—परमाणुः कल्योजप्रदेशावगाढ एव एकत्वात्। परमाणुपोग्गला-णमित्यादि-तत्रौघतः परमाणवः कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ा एवं भवन्ति सकल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकव्यापकत्वात् तेषां सकललोकप्रदेशानां चासंघातत्वादवस्थितत्वाच्च चतुरस्रतेति। विधानतस्तु कल्योजप्रदेशावगाढाः।

—भग० श २५। उ ४। सू ७१, ७५। पृ० ८६७-६८

एक परमाणु पुद्गल प्रदेशावगाह की अपेक्षा कृतयुग्म प्रदेशावगाढ नहीं है, त्र्योज प्रदेशावगाढ नहीं है, द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ नहीं है परन्तु कल्योज प्रदेशावगाढ है।

परमाणु पुद्गलों का औघिक विवेचन करने से प्रदेशावगाह की अपेक्षा क्षेत्र प्रदेश की संख्या कृतयुग्म प्रदेशावगाढ होती है परन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म तथा कल्योज प्रदेशावगाढ नहीं होती है तथा विधानादेश से (व्यक्तिगत रूप से) विवेचन करने पर प्रदेशावगाह की अपेक्षा उनकी संख्या कृतयुग्म, त्र्योज रूप तथा द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ नहीं होती है परन्तु कल्योज रूप प्रदेशावगाढ होती है।

·४ कालस्थिति (समय) अपेक्षा

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं कडजुम्मसमयठिईए-पुच्छा। गोयमा ! सिय कडजुम्मसमयट्ठिईए, जाव सिय कलिओगसमयट्ठिईए। एवं जाव-अणंतपएसिए। (सू० ७९)

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं कडजुम्म०—पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयठिईया, जाव—सिय कलिओगसमयठिईया ४। विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयठिईया वि, जाव—कलिओगसमयट्ठिईया वि ४ एवं जाव अणंतपएसिया (सू० ८०)

—भग० श २५। उ ४। सू ७९, ८०। पृ० ८६८

एक परमाणु पुद्गल काल (समय) की अपेक्षा कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज रूप, कदाचित् द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप समय स्थितिवाला होता है।

परमाणु पुद्गलों का औघिक विवेचन करने पर काल (समय) की अपेक्षा कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज रूप, कदाचित् द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप समय स्थितिवाले होते हैं। तथा विधानादेश से (व्यक्तिगत रूप से विवेचन करने पर काल (समय) की अपेक्षा उनकी स्थिति की समय-संख्या कृतयुग्म या त्र्योज या द्वापरयुग्म या कल्योज रूप होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५ भाव अपेक्षा

परमाणुपोग्गले णं भंते ! कालावन्नपज्जवेहिं किं कडजुम्मे, तेओगे? जहा ठिईए वत्तव्वया एवं वण्णेसु वि सव्वेसु। गंधेसु वि एवं चेव (एवं) रसेसु वि जाव—'महुरो रसो' त्ति × × ×। सीय-उसिण-निद्ध-लुक्खा जहा वण्णा × × ×।

टीका—सीओसिणनिद्धलुक्खा जहा वण्णत्ति। एतत्पर्यवाधिकारे पर-भाण्वादयोऽपि वाच्या इति भावः।

—भग० श २५। उ ४। सू ८१-८३। पृ० ८६८

एक परमाणु पुद्गल काले वर्ण पर्याय की अपेक्षा कदाचित् कृतयुग्म गुण, कदाचित् त्र्योज गुण, कदाचित् द्वापरयुग्म गुण तथा कदाचित् कल्योज गुण काले वर्ण पर्याय वाला होता है।

परमाणु पुद्गलों का औघिक विवेचन करने पर काले वर्ण पर्याय की अपेक्षा कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज रूप, कदाचित् द्वापरयुग्म तथा कदाचित् कल्योज रूप काले वर्ण पर्याय वाले होते हैं। तथा विधानादेश से (व्यक्तिगत रूप से) विवेचन करने पर काले वर्ण पर्याय की अपेक्षा उनकी संख्या कृतयुग्म भी होती है, त्र्योज रूप भी होती है, द्वापरयुग्म भी होती है तथा कल्योज रूप भी होती है।

जैसे काले वर्ण पर्याय की गुण संख्या अपेक्षा परमाणु पुद्गलों का वर्णन किया गया है वैसे ही शेष वर्णों का, (नील-रक्त-पीत-शुक्ल) सुगंध-दुर्गंध का; तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रसों का; शीत, उष्ण, स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्शों का वर्णन करना चाहिए।

·३६ परमाणु पुद्गल की उत्पत्ति के नियम

(क) भेदादणुः

—तत्त्व० अ ५। सू २७

भाष्य—भेदादेव परमाणुरुत्पद्यते, न संघातादिति।

(ख) अणोरुत्पत्तिर्भेदादेव, न संघातान्नापि भेदसंघाताभ्यामिति।

—सर्व० अ ५। सू २७। पृ० २९९

—राज० अ ५। सू २७। पृ० ४१४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ग) भेदादणुरिति प्रोक्तं नियमस्योपपत्तये ।

—तत्त्वश्लो० अ ५ । सू २७ । पृ० ४३१

(घ) सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू ।

—पंच० श्लो ७७ । पूर्वार्ध

टीका—उक्तानां स्कंधपर्य्यायाणं योऽन्त्यो भेदः स परमाणुः ।

(च) परमाणोस्तु स्कंधाद् भेदकृतमेव करणम् ।

—विशेभा० गा ३३११ । टीका

परमाणु की उत्पत्ति भेद से ही होती है, संघात से, भेद संघात से नहीं होती है। समस्त स्कंधों का जो अंत का भेद है उसे परमाणु कहते हैं।

·३७ परमाणु पुद्गल की स्पर्शना

(मूल पाठ के लिए देखो क्रमांक २०)

परमाणु-स्कंधादि की पारस्परिक की स्पर्शना की अपेक्षा नव विकल्प (भंग) बनते हैं—

(१) एक देश से एक देश का स्पर्श ।
(२) एक देश से बहुत देशों का स्पर्श ।
(३) एक देश से सर्व का स्पर्श ।
(४) बहुत देशों से एक देश का स्पर्श ।
(५) बहुत देशों से बहुत देशों का स्पर्श ।
(६) बहुत देशों से सर्व का स्पर्श ।
(७) सर्व से एक देश का स्पर्श ।
(८) सर्व से बहुत देशों का स्पर्श ।
(९) सर्व से सर्व का स्पर्श ।

·१ परमाणु पुद्गल की अन्य परमाणु पुद्गल से अथवा विविध प्रदेशी स्कंधों से स्पर्शना

परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल को केवल नौवें भंग से स्पर्श करता है अर्थात् परमाणु पुद्गल जब अन्य परमाणु पुद्गल को स्पर्श है तो सर्व से सर्व को स्पर्श करता है। दूसरे विकल्प इसमें घटित नहीं होते, क्योंकि परमाणु निरंश होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल द्विप्रदेशी स्कंध को सातवें तथा नौवें विकल्प से स्पर्श करता है। परमाणु पुद्गल जब द्विप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करता है तब या तो (१) सर्व से स्कंध के एक देश को या (२) सर्व से स्कंध के सर्व को स्पर्श करता है।

(१) जब द्विप्रदेशी स्कंध, आकाश के दो प्रदेशों पर स्थित होता है तब परमाणु पुद्गल उस स्कंध के किसी एक देश को अपने सर्वात्म द्वारा स्पर्श करता है। (२) जब द्विप्रदेशी स्कंध परिणाम की सूक्ष्मता से आकाश के एक प्रदेश पर स्थित होता है, तब परमाणु पुद्गल सर्वात्म द्वारा उस स्कंध के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

परमाणु पुद्गल तीन प्रदेशी स्कंध को सातवें, आठवें तथा नौवें विकल्प से स्पर्श करता है। परमाणु पुद्गल जब तीन प्रदेशी स्कंध को स्पर्श करता है तब या तो (१) सर्व से स्कंध के एक देश को, या (२) सर्व से स्कंध के बहुत देशों को या (२) सर्व से स्कंध के सर्व को स्पर्श करता है।

(१) जब तीन प्रदेशी स्कंध आकाश के तीन प्रदेशों पर स्थित होता है तब परमाणु पुद्गल उस स्कंध के किसी एक देश को अपने सर्वात्म द्वारा स्पर्श करता है।

(२) जब तीन प्रदेशी स्कंध के दो प्रदेश एक आकाश प्रदेश पर स्थित हो और तीसरा एक अन्य प्रदेश पर स्थित हो तब कोई एक परमाणु पुद्गल उस स्कंध के बहुत देशों को (दो देशों को) अपने सर्वात्म द्वारा स्पर्श करता है।

(३) जब तीन प्रदेशी स्कंध परिणाम की सूक्ष्मता से आकाश के एक प्रदेश पर ही स्थित होता है तब परमाणु पुद्गल सर्वात्म द्वारा उस स्कंध के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

जिस प्रकार एक परमाणु पुद्गल द्वारा तीन प्रदेशी स्कंध को स्पर्श करने का विवेचन किया गया है उसी आधार पर एक परमाणु पुद्गल द्वारा चतुःप्रदेशी स्कंध को, पंचप्रदेशी स्कंध को यावत् दस प्रदेशी स्कंध को यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध को यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध को यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध को स्पर्श करने का विवेचन करना चाहिए।

·२ विविध प्रदेशी स्कंधों की परमाणु पुद्गल से स्पर्शना

द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल परमाणु पुद्गल को तीसरे तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है। द्विप्रदेशी स्कंध जब परमाणु पुद्गल को स्पर्श करता है तब या तो (१) एक देश से परमाणु के सर्वात्म को या (२) सर्व से परमाणु के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) जब द्विप्रदेशी स्कंध, आकाश के दो प्रदेशों पर स्थित होता है तब द्विप्रदेशी स्कंध परमाणु पुद्गल के सर्वात्म को अपने एक देश द्वारा स्पर्श करता है।

(२) जब द्विप्रदेशी स्कंध परिणाम की सूक्ष्मता से आकाश के एक प्रदेश पर स्थित होता है तब द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल सर्वात्म द्वारा परमाणु पुद्गल के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

तीन प्रदेशी स्कंध पुद्गल परमाणु पुद्गल को तीसरे, छट्ठे तथा नववें विकल्प से स्पर्श करता है। तीन प्रदेशी स्कंध जब परमाणु पुद्गल को स्पर्श करता है तब या तो (१) एक देश से परमाणु के सर्वात्म को या (२) बहुत देशों से परमाणु के सर्वात्म को या (३) सर्व से परमाणु के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

(१) जब तीन प्रदेशी स्कंध, आकाश के तीन प्रदेशों पर स्थित होता है तब तीन प्रदेशी स्कंध परमाणु पुद्गल के सर्वात्म को अपने किसी एक देश द्वारा स्पर्श करता है।

(२) जब तीन प्रदेशी स्कंध के दो प्रदेश एक आकाशप्रदेश पर स्थित हो और तीसरा एक अन्य प्रदेश पर स्थित हो तब तीन प्रदेशी स्कंध परमाणु पुद्गल के सर्वात्म को अपने बहुत देशों (दो देशों) द्वारा स्पर्श कर सकता है।

(३) जब तीन प्रदेशी स्कंध परिणाम की सूक्ष्मता से आकाश के एक प्रदेश पर स्थित होता है तब तीन प्रदेशी स्कंध पुद्गल सर्वात्म द्वारा परमाणु पुद्गल के सर्वात्म को स्पर्श करता है।

जिस प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध द्वारा परमाणु पुद्गल को स्पर्श करने का विवेचन किया गया है उसी आधार पर चतुःप्रदेशी स्कंध, पंचप्रदेशी स्कंध यावत् दसप्रदेशी यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध द्वारा परमाणु पुद्गल को स्पर्श करने का विवेचन करना चाहिए।

·३८ परमाणु पुद्गल और वायुकाय

परमाणुपोग्गले णं भंते ! वाउयाएणं फुडे ? वाउयाए वा परमाणुपोग्गले णं फुडे ? गोयमा ! परमाणुपोग्गले वाउयाएणं फुडे, नो वाउयाए परमाणुपोग्गले णं फुडे।

—भग० श १८। उ १०। सू २। पृ० ७७८-७९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका — परमाणुपुद्गलो भदन्त ! वायुकायेन स्पृष्टो वायुकायो धारादिष्ववगाह नोक्ताऽथावगाहनामेव स्पर्शनालक्षणपर्यायान्तरेण परमाण्वादिमभिधातुमाह — परमाणुपोग्गलेणमित्यादि। "वाउवाएणं फुडति।" परमाणुपुद्गलो वायुकायेन स्पृष्टो व्याप्तो मध्ये क्षिप्त इत्यथः। "नो वाउयाए स्यादि" नो वायुकायः परमाणुपोग्गलेन स्पृष्टो व्याप्तो मध्ये क्षिप्तो वायो महत्त्वादणोश्च निप्रदेशत्वे नातिसूक्ष्यतया व्यापकत्वाभावादिति।

परमाणु पुद्गल वायुकाय को स्पृष्ट कर सकता है, उसमें व्याप्त हो सकता है तथा उसमें क्षिप्तप्रवेश कर सकता है परन्तु वायुकाय परमाणु पुद्गल को स्पृष्ट नहीं कर सकता है, उसमें व्याप्त नहीं हो सकता है तथा उसमें क्षिप्तप्रवेश नहीं कर सकता सकता है। क्योंकि वायुकाय महत्-स्थूल है. परमाणु अतिसूक्ष्म-अप्रदेशी है।

'वायुकायेन स्पृष्टो' का अर्थ टीकाकार ने इस प्रकार किया है — वायुकाय की धारादि में अवगाहन कर सकता है। अवगाहन और स्पर्श को पर्यायवाची माना है।

·३९ परमाणु पुद्गल का चरम-अचरमत्व

(क) परमाणुपोग्गलेणं भंते ! किं चरिमे, अचरिमे ? गोयमा ! दव्वादेसेणं नो चरिमे, अचरिमे ; खेत्तादेसेणं सिय चरिमे, सिय अचरिमे, कालादेसेणं सिय चरिमे, सिय अचरिमे भावादेसेणं सिय चरिमे, सिय अचरिमे।

—भग० श १४। उ ४। सू ६। पृ० ६९९

टीका — य परमाणु यस्माद्विवक्षितभावाच्च्युतः सन् पुनस्तं भावं न प्राप्स्यति स तद्भावापेक्षयाचरम एतद्विपरीतस्त्वचरम इति। तत्र 'दव्वादेसेणं' ति आदेशः प्रकारो द्रव्यरूप आदेशो द्रव्यादेशस्तेन नो चरमः सहि द्रव्यतः परमाणुत्वात्युतः संघातमवाप्यापि ततः च्युतः परमाणुत्वलक्षणं द्रव्यत्वमवाप्स्यतीति। 'खेत्तादेसेणं' ति क्षेत्रविशेषितत्वलक्षणप्रकारेण स्यात्कदाचिच्चरमः, कथं। यत्र क्षेत्रे केवलीसमुद्घातं गतस्तत्र क्षेत्रे यः परमाणुरवगाढोऽसौ तत्र क्षेत्रे तेन केवलिना समुद्घातगतेन विशेषितो न कदाचनाप्यवगाहं लप्स्यते केवलिनो निर्वाणगमनादित्येवं क्षेत्रतश्चरमोसाविति, निर्विशेषणक्षेत्रापेक्षयात्वचरमस्तत्क्षेत्रावगाहस्य तेन लप्स्यमानत्वादिति। 'कालादेसेणंति' कालविशेषितत्वलक्षण प्रकारेण। सिय चरिमत्ति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कथंचिच्चरमः, कथं:, यत्र काले पूर्वाह्णादौ केवलिना समुद्घातः कृतस्तत्रैव यः परमाणुः परमाणुतया संवृत्तः स तं कालविशेषं केवलिसमुद्घातविशेषितं न कदाचनापि प्राप्स्यति, तस्य केवलिनः सिद्धिगमनेन पुनः समुद्घाताभावादिति तदपेक्षया कालतश्चरमोयाविति, निर्विशेषणकालापेक्षयात्वचरमइति। 'भावाएसेणंति' भावो वर्णादिविशेषः तद्विशेषणलक्षणप्रकारेण स्याच्चरमः' कथं? विवक्षित केवलिसमुद्घातावसरे यः पुद्गलो वर्णादिभावविशेषं परिणतः स विवक्षित केवलिसमुद्घातविशेषितवर्णपरिणामापेक्षया चरमो यस्मात्तत्केवलिनिर्वाण पुनस्तं परिणामसौ न प्राप्स्यतीति, इव च व्याख्यानं चूर्णिकारमतमुपजीव्य कृतमिति, अनन्तरं परमाणोश्चरमत्वाचरमत्वलक्षणः परिणामः।

परमाणु पुद्गल—द्रव्य आदेश से चरम नहीं है, अचरम है; क्षेत्रादेश से कदाचित् चरम है, कदाचित् अचरम है; कालादेश से कदाचित् चरम है कदाचित् अचरम है और भावादेश से कदाचित् चरम है, कदाचित् अचरम है।

जो परमाणु विवक्षित भाव से रहित होकर पुनः उस भाव को कभी भी प्राप्त नहीं होता है, वह परमाणु उस भाव की अपेक्षा 'चरम कहलाता है और जो परमाणु उस भाव को पुनः प्राप्त होता है वह उस अपेक्षा 'अचरम' कहलाता है।

(१) द्रव्य की अपेक्षा परमाणु चरम नहीं है, अचरम है, क्योंकि परमाणु अन्य परमाणु या परमाणुओं से संघात को प्राप्त होकर स्कंध का प्रदेश बन जाता है लेकिन कालान्तर में वही परमाणु भेद को प्राप्त होकर पुनः परमाणु रूप को प्राप्त हो जाता है। अतः यह कहा जाता है कि परमाणु स्कंध में मिल जाने से चरम नहीं होता है बल्कि पुनः परमाणुत्व को प्राप्त होकर द्रव्य की अपेक्षा अचरम कहलाता है। यह टीकाकार का उद्धरण है।

(२) क्षेत्रादेश से (क्षेत्र की अपेक्षा) परमाणु पुद्गल कदाचित् चरम है, कदाचित् अचरम है। जिस क्षेत्र में कोई एक केवलज्ञानी समुद्घात को प्राप्त हुए थे, उस समय उस क्षेत्र में जो परमाणु वहाँ स्थित था, वह परमाणु वैसे समुद्घातित क्षेत्र को प्राप्त नहीं कर सकता है अतः वैसे समुद्घातित क्षेत्र की अपेक्षा वह परमाणु चरम है, ऐसा टीकाकार का कथन है।

विशेषण रहित क्षेत्र की अपेक्षा पपमाणु पुद्गल फिर उस क्षेत्र में अवगाढ हो सकता है अतः निर्विशेषण क्षेत्र की अपेक्षा परमाणु पुद्गल अचरम कहलाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) कालादेश से (काल की अपेक्षा) परमाणु पुद्गल कदाचित् चरम है, कदाचित् अचरम है। जिस प्रातःकाल आदि समय में कोई एक केवलज्ञानी समुद्घात को प्राप्त हुए थे, उस काल में जो परमाणु स्थित था—वह परमाणु वैसे समुद्घातित काल को प्राप्त नहीं कर सकता है अतः वैसे समुद्घातित काल की अपेक्षा वह परमाणु पुद्गल चरम है। ऐसा टीकाकार का उदाहरण है।

विशेषण रहित काल की अपेक्षा परमाणु पुद्गल अचरम है। परमाणु पुद्गल परमाणुत्व भाव को छोड़कर स्कंध के साथ मिल जाता है फिर उत्कृष्टतः असंख्यात काल के पश्चात् स्कंध से पृथग् होकर परमाणु भाव को प्राप्त होता ही है अतः निर्विशेषण काल की अपेक्षा परमाणु पुद्गल अचरम है।

(४) भाव की अपेक्षा परमाणु पुद्गल कदाचित् चरम है, कदाचित् अचरम है। कोई एक केवलज्ञानी समुद्घात को प्राप्त हुए थे उस समय परमाणु पुद्गल जिन वर्णादि भाव विशेष को प्राप्त हुआ था—वह परमाणु पुद्गल वैसे समुद्घातित वर्णादि भाव को प्राप्त नहीं कर सकता है अतः वैसे समुद्घातित भाव की अपेक्षा वह परमाणु पुद्गल चरम है। ऐसा टीकाकार का कथन है।

सामान्यतः परमाणु पुद्गल वर्णादि भावों में (षट् गुण हानि-वृद्धि) परिणमन करता रहता है अतः निर्विशेषण भाव की अपेक्षा परमाणु पुद्गल अचरम है।

(ख) परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं चरिमे १, अचरिमे २, अवत्तव्वए ३, ? चरिमाइं ४, अचरिमाइं ५, अवत्तव्वयाइं ६, ? उदाहु चरिमे य अचरिमे य ७, उदाहु चरिमे य अचरिमाइं च ८, उदाहु चरिमाइं च अचरिमे य ९, उदाहु चरिमाइं च अचरिमाइं च १०, ? पढमा चउभंगी, उदाहु चरिमे य अवत्तव्वए य ११, उदाहु चरिमे य अवत्तव्वयाइं च १२, उदाहु चरिमाइं च अवत्तव्वए य १३, उदाहु चरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १४, ? बीया चउभंगी, उदाहु अचरिमे य अवत्तव्वए य १५, उदाहु अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च १६, उदाहु अचरिमाइं च अवत्तव्वए य १७, उदाहु अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १८, ? तइया चउभंगी, उदाहु चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वए य १९, उदाहु चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २०, उदाहु चरिये य अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २१, उदाहु चरिये य अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २२, उदाहु चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वए य २३, उदाहु चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वयाइं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च २४, उदाहु चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं य २५, उदाहु चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २६, ? एवं एते छव्वीसं भंगा, गोयमा ! परमाणुपोग्गले नो चरिमे १, नो अचरिमे २, नियमा अवत्तव्वए ३, सेसा २३ भंगा पडिसेहेयव्वा।

—पण्ण० प १० । सू ७८२ । पृ० ३९०-९१

परमाणुम्मि य तइओ × × ×।

—पण्ण० प १० । ७९० । पृ० ३९३

टीका "परमाणुपोग्गले णं भंते !" इत्यादि, अत्र प्रश्नसूत्रे षट्विंशतिभंङ्गाः, यतस्त्रीणि पदानि चरमाचरमावक्तव्यालक्षणानि, तेषां चैकैकसंयोगे प्रत्येकमेकवचनास्त्रयो भङ्गाः, तद्यथा चरमोऽचरमोऽवक्तव्यकः, त्रयो बहुवचनेन, तद्यथा—चरमाणि १ अचरमाणि २ अवक्तव्यानि ३, सर्वसंख्यया षट्, द्विकसंयोगास्त्रयः, तद्यथा—चरमाचरमपदयोरेकः चरमावक्तव्यकपदयोर्द्वितीयः अचरमावक्तव्यकपदयोस्तृतीयः, एकैकस्मिन् चत्वारो भंगाः, तत्र प्रथमे द्विकसंयोगे एवं—चरमश्चाचरमश्च, चरमाश्चाचरमाश्च स्थापना। एवमेव चतुर्भंगी चरमावक्तव्यपदयोः, एवमेवाचरमावक्तव्यपदयोः, सर्वसंख्यया द्विकसंयोगे द्वादश भंगाः, त्रिकसंयोगे एकवचनबहुवचनाभ्यामष्टौ, स्थापना—। सर्वसंकलनया षड्विंशतिः। अत्र निर्वचनमाह—'परमाणुपोग्गले नो चरमे' इत्यादि, परमाणुपुद्गलश्चरमो न भवति, चरमत्वं ह्यन्यापेक्षं, न चान्यदपेक्षणीयमस्ति तस्य, अविवक्षणात्, न च सांशः परमाणुर्यनांशापेक्षया चरमत्वं प्रकल्प्येत, निरवयवत्वात् (तस्य), तस्मान्न चरमो, नाप्यचरमः, निरवयवतया मध्यत्वायोगात्' किन्त्ववक्तव्यः चरमाचरमव्यपदेश कारण (तः) शून्यतया चरमशब्देनाचरमशब्देन वा व्यपदेष्टुमशक्यत्वात्, वक्तुं शक्यं हि वक्तव्यं, यत्तु चरमशब्देन अचरमशब्देन वा स्वस्वनिमित्तशून्यतया वक्तुमशक्यं तदवक्तव्यमिति स्थापना—। शेषास्तु भंगाः प्रतिषेध्याः, परमाणौ तेषामसंभवात्' वक्ष्यति च—'परमाणुंमि य तइओ' अस्यायमर्थः परमाणौ—परमाणुचिन्तायां तृतीयो भङ्गः परिग्राह्यः, शेषास्तु निरवयवत्वेन प्रतिषेध्याः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल के चरम, अचरम तथा अवक्तव्य की अपेक्षा छबीस (२६) भंग—विकल्प बनते हैं।

यथा—चरम, अचरम और अवक्तव्य—ये तीन पद हैं ; उनमें एक-एक के संयोग से एकवचन के तीन भंग बनते हैं—(१) चरम, (२) अचरम तथा (३) अवक्तव्य।

बहुवचन के तीन भंग बनते हैं—(४) चरम, (५) अचरम और (६) अवक्तव्य।

इसी प्रकार एक संयोगी के कुल छः भंग बनते हैं।

चरम, अचरम और अवक्तव्य पद के तीन द्विकसंयोगी होते हैं—यथा—चरम और अचरम पद का प्रथम, चरम और अवक्तव्य पद का द्वितीय तथा अचरम और अवक्तव्य पद का तृतीय और उनमें एक-एक द्विकसंयोग के चार-चार भंग होते हैं।

प्रथम पद द्विकसंयोगी के इस प्रकार भंग बनते हैं। यथा—

(७) एकवचन चरम और एकवचन अचरम।
(८) एकवचन चरम और बहुवचन अचरम।
(९) बहुवचन चरम और एकवचन अचरम।
(१०) बहुवचन चरम और बहुवचन अचरम।

इसी प्रकार द्वितीयपद—चरम और अवक्तव्य पद द्विकसंयोगी के चार भंग बनते हैं—यथा—

(११) एकवचन चरम और एकवचन अवक्तव्य।
(१२) एकवचन चरम और बहुवचन अवक्तव्य।
(१३) बहुवचन चरम और एकवचन अवक्तव्य।
(१४) बहुवचन चरम और बहुवचन अवक्तव्य।

इसी प्रकार तृतीय पद—अचरम-अवक्तव्य पद द्विकसंयोगी के चार भंग बनते हैं—यथा—

(१५) एकवचन अचरम और एकवचन अवक्तव्य।
(१६) एकवचन अचरम और बहुवचन अवक्तव्य।
(१७) बहुवचन अचरम और एकवचन अवक्तव्य।
(१८) बहुवचन अचरम और बहुवचन अवक्तव्य।

इस प्रकार द्विकसंयोगी के कुल बारह भंग बनते हैं।

एकवचन और बहुवचन की अपेक्षा तीन संयोगी आठ भंग बनते हैं—यथा—

(१९) एकवचन चरम, एकवचन अचरम और एकवचन अवक्तव्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२०) एकवचन चरम, एकवचन अचरम और बहुवचन अवक्तव्य ।
(२१) एकवचन चरम, बहुवचन अचरम और एकवचन अवक्तव्य ।
(२२) एकवचन चरम, बहुवचन अचरम और बहुवचन अवक्तव्य ।
(२३) बहुवचन चरम, एकवचन अचरम और एकवचन अवक्तव्य ।
(२४) बहुवचन चरम, एकवचन अचरम और बहुवचन अवक्तव्य ।
(२५) बहुवचन चरम, बहुवचन अचरम और एकवचन अवक्तव्य ।
(२६) बहुवचन चरम, बहुवचन अचरम और बहुवचन अवक्तव्य ।

परमाणु पुद्गल चरम भी नहीं है, अचरम भी नहीं है किन्तु नियम से अवक्तव्य है। अवशेष भंग परमाणु पुद्गल में घटित नहीं होते हैं ।

परमाणु पुद्गल में केवल तीसरा भंग—अवक्तव्य भंग ही घटित होता है ।

परमाणु पुद्गल चरम नहीं होता है क्योंकि चरमत्व अन्य की अपेक्षा से होता है परन्तु परमाणु पुद्गल में अपेक्षा योग्य अन्य पदार्थ की विवक्षा नहीं है तथा परमाणु सांश—अवयव रहित है जिससे अवयव की अपेक्षा उसका चरमत्व प्रकल्पित हो सके। अतः परमाणु पुद्गल अवयव रहित होने से चरम नहीं है। अचरम भी नहीं है क्योंकि अवयव रहित होने से उसका मध्यत्व भी नहीं है परन्तु अवक्तव्य है। क्योंकि चरम अथवा अचरम व्यवहार का कारण होने से चरम शब्द से अथवा अचरम शब्द से उसका व्यवहार होना अशक्य है। जो शब्द के द्वारा कहा जा सकता है उसे वक्तव्य कहते हैं परन्तु जो चरम शब्द से अथवा अचरम शब्द से स्व-स्व की प्रवृत्ति निमित्त रहित होने से कहा नहीं जा सकता है उसे अवक्तव्य कहा जाता है। शेष के भंगों का प्रतिषेध करना चाहिए क्योंकि परमाणु पुद्गल में उन भंगों का होना संभव नहीं है। कहा है—"परमाणु में तीसरा भंग होता है अर्थात् परमाणु का विवेचन करने से तीसरा भंग ग्राह्य हैं शेष भंग अवयव रहित होने से प्रतिषेध योग्य है ।

·४० परमाणु पुद्गल और क्षेत्र

·१ परमाणु पुद्गल का आकाश प्रदेश अवगाहन

(क) अपदेसो परमाणू तेण पदेसुब्भवो भणिदो।

—प्रव० अ २ । गा ४५

जयसेन टीका—"अपदेसो परमाणु" अप्रदेशो द्वितीयादि प्रदेशारहितो योऽसौ पुद्गलपरमाणुः 'तेण पदेसुब्भवो भणिदो' तेन परमाणुना प्रदेशस्योद्भव उत्पत्तिर्भणिता। परमाणुव्याप्तक्षेत्रं प्रदेशो भवति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलाणुउट्टद्धं ।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥

—बृद्रस० गा २७

टीका—"जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलाणु उट्टद्धं तं खु पदेसं जाणे।" यावत्प्रमाणमाकाशमविभागिपुद्गलपरमाणुना विष्टब्धं व्याप्तं तदाकाशं खु स्फुटं प्रदेशं जानीहि ।

(ग) एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे परमाणोरवगाहः ।

—सर्व० अ ५ । सू १४ । पृ० ४७९

परमाणोरेकस्मिन्नेव प्रदेशे (अवगाहः) ।

—तत्त्व० अ ५ । सू १४-भाष्य

परमाणु पुद्गल दो आदि प्रदेशों से रहित है अतः परमाणु पुद्गल को अप्रदेशी कहा गया है। वह अविभागी परमाणु पुद्गल जितने आकाश प्रदेश को अवगाहित करता है उसे आकाश प्रदेश कहते हैं।

एक परमाणु आकाश के एक प्रदेश में ही अवगाह करता है।

(घ) (परमाणुः) क्षेत्रे क्षेत्रतस्त्वेकप्रदेशावगाढ एव ।

—विशेभा० गा १३९५ । टीका

·२ परमाणु पुद्गल और क्षेत्र

(ङ) अवष्टब्धो नभोदेशः प्रदेशः परमाणुना ।

—योगसार अधि २ । श्लो ९

·३ परमाणु और क्षेत्र

(च) पुद्गलाश्च परमाणु प्रभृतयः सर्वलोक इति ।

—प्रशम० श्लो २१३ । टीका

परमाणु सर्वलोक में है।

·४१ परमाणु का एकक (मान का एकक)

कइविहे णं भंते ! परमाणू पन्नत्ते ? गोयमा ! चउव्विहे परमाणू पन्नत्ते, तंजहा—१ दव्वपरमाणू, २ खेत्तपरमाणू, ३ कालपरमाणू, ४ भाव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणू। दव्वपरमाणू णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—१ अच्छेज्जे, २ अभेज्जे, ३ अडज्झे, ४ अगेज्झे। खेत्त-परमाणू णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! चउविहे पन्नत्त, तंजहा—१ अणद्धे, २ अमज्झे, ३ अपदेसे, ४ अविभाइमे। कालपरमाणू-पुच्छा। गोयमा ! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा-अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे। भाव-परमाणू णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—वण्णमंते, गंधमंते, रसमंते, फासमंते।

—भग० श २०। उ ५। सू १२ से १६। पृ० ८०१

टीका—तत्र द्रव्यरूपः परमाणुर्द्रव्यपरमाणुरेकोऽणुर्वर्णाऽऽदिभावानामविवक्षणाद् द्रव्यत्वस्यैव च विवक्षणादिति। एवं क्षेत्रपरमाणुराकाशप्रदेशः कालपरमाणुः समयः, भावपरमाणुः परमाणुरेव, वर्णाऽऽदिभावानां प्राधान्य-विवक्षणात् सर्वजघन्यकालत्वाऽऽदिर्वा (चउव्विहे त्ति) एकोऽपि द्रव्यपर-माणुर्विवक्षया चतुःस्वभावः। (अच्छेज्ज त्ति) छेद्यः शस्त्राऽऽदिना लताऽऽदिवत्, तन्निषेधादच्छेद्यः। (अभेज्ज त्ति) भेद्यः सूच्यादिना चर्म्म-वत्तन्निषेधादभेद्यः। (अडज्झे त्ति) अदाह्योऽग्निना सूक्ष्मत्वात्, अत एवाग्राह्यो हस्ताऽऽदिना। (अणद्धे त्ति) समसंख्याऽयवाभावात् (अमज्झे त्ति) विषम संख्याऽवयवाभावात् (अपएसे त्ति) निरंशोऽवयवाभावात्। (अविभाइमे त्ति) अविभागेन निर्वृत्तो अविभागीयः एकरूप इत्यर्थः। विभाजयितुमशक्योवेति।

परमाणु चार प्रकार का कहा गया है—(१) द्रव्य परमाणु, (२) क्षेत्र परमाणु, (३) काल परमाणु और (४) भाव परमाणु।

द्रव्य परमाणु-परमाणु पुद्गल है तथा वह अच्छेद्य है, अभेद्य है, अदाह्य है और अग्राह्य है।

क्षेत्र परमाणु आकाश का एक प्रदेश है वह अनर्घ है, अमध्य है, अप्रदेशी है और अविभागी है।

काल परमाणु एक समय है, वह अवर्णी है, अगंधी है, अरसी है तथा अस्पर्शी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव परमाणु भी परमाणु पुद्गल है ; वह चार तरह का कहा गया है—वर्ण-वाला, गंधवाला, रसवाला और स्पर्शवाला है ।

द्रव्य के सबसे छोटे रूप को परमाणु कहा जाता है ।

वर्णादि धर्म की विवक्षा सिवाय—एक परमाणु को द्रव्य परमाणु कहा जाता है । क्योंकि यहां द्रव्य की ही विवक्षा है ।

पुद्गल का एक सर्व जघन्य रूप परमाणु है उसे द्रव्य परमाणु कहते हैं । आकाश का प्रदेश क्षेत्र का परमाणु है । समय—काल का परमाणु है ।

वर्णादि धर्म के प्राधानता की विवक्षा से पुद्गल परमाणु को भाव परमाणु कहा जाता है ।

द्रव्य परमाणु विवक्षा से चतुःस्वभाववाला होता है । शस्त्रादि के द्वारा लतादि का छेदन होता है उसका निषेध करने के लिए परमाणु पुद्गल को अच्छेद्य कहा है अर्थात्—(१) शस्त्रादि के द्वारा परमाणु पुद्गल का छेदन नहीं होता है अतः परमाणु पुद्गल अच्छेद्य है ; (२) सूचि आदि के द्वारा अभेद्य है ; (३) सूक्ष्म होने के कारण परमाणु पुद्गल—अग्नि आदि के द्वारा अदाह्य है तथा (४) हस्तादि के द्वारा परमाणु पुद्गल को ग्रहण नहीं किया जा सकता है अतः परमाणु पुद्गल अग्राह्य है । परमाणु पुद्गल के समसंख्यावाले दो विभाग नहीं होते हैं अतः परमाणु पुद्गल अनर्ध है । विषम संख्यावाले अवयव नहीं होते हैं अतः परमाणु पुद्गल अमध्य है । निरवयव है अतः परमाणु पुद्गल अप्रदेशी है तथा परमाणु पुद्गल का विभाग न होने के कारण अविभागी है ।

·४४ परमाणु पुद्गल और चार धातु

(क) × × × धादूचदुक्कस्स कारणं जो दु ।

—पंच० गा ७८

अमृत टीका—ततः पृथिव्यप्तेजोवायुरूपस्य धादुचतुष्कस्यैक एव परमाणुः कारणं ।

(ख) धाउचउक्कस्स पुणो, जं हेऊ कारणंति तं णेयो ।
खंधाणं अवसाणं, णादव्वो कज्जपरमाणू ॥

—नियम० अधि० २ । गा २५

जो चार धातु का कारण है वह कारण परमाणु कहलाता है तथा स्कंधों का अन्तिम भाग कार्य परमाणु है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी, जल, तेज और वायु—ये चार धातु है। इन चार धातुओ का जो कारण है वह कारण परमाणु है अर्थात् जिन परमाणुओं के सम्बन्ध से ये चार धातुयें परिणत होती है स्कंध रूप दीखलाई पड़ती है, ये परमाणु कारण परमाणु कहलाते हैं।

·४३ परमाणु पुद्गल और ओघ जघन्य

सामित्तं दुविहं जहण्णपदे उक्कस्सपदे।

—षट्० खं० ४। २, ६। सू ६। पु ११। पृ० ८५-८६

तत्थ जहण्णं चउव्विहं—णाम-ट्ठवणा-दव्वभाव जहण्णं चेदि × × ×। दव्वजहण्णं दुविहं आगमदव्व जहण्णं णोआगम द्रव्व जहण्णं चेदि × × ×। णोआगमदव्व जहण्णं तिविहं—जाणुगसरीरभविय—तव्वदिरित्तणोआग-मदव्वजहण्णभेएण × × ×। तव्वदिरित्तणोआगमदव्व जहण्णं दुविहं—ओघजहण्णमादेसजहण्णं चेदि। तत्थ ओघजहण्णं चउव्विहं—दव्वदो, खेत्तदो, कालदो, भावदो चेदि। तत्थ दव्वजहण्णमेगो परमाणू। खेत्त-जहण्णमेगो आगास पदेसो। कालजहण्णमेगो समओ। भाव जहण्णं परमाणुम्हिएगो णिद्धत्तगुणो × × ×।

स्वामित्व दो प्रकार का होता है—जघन्य पद में तथा उत्कृष्ट पद में।

जघन्य पद चार प्रकार का होता है—नाम जघन्य, स्थापना जघन्य, द्रव्य जघन्य और भाव जघन्य। द्रव्य जघन्य दो प्रकार का होता है—आगम द्रव्य जघन्य और नोआगम द्रव्य जघन्य। नोआगम द्रव्य जघन्य तीन प्रकार का होता है—ज्ञायक शरीर नोआगम द्रव्य जघन्य, भावी नोआगम द्रव्य जघन्य और तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्य जघन्य। तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्य जघन्य दो प्रकार का होता है—ओघ-जघन्य और आदेशजघन्य।

ओघजघन्य—द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा से चार प्रकार का होता है।

(१) एक परमाणु (पुद्गल) को द्रव्य जघन्य कहा जाता है।
(२) एक आकाशप्रदेश को क्षेत्र जघन्य कहा जाता है।
(३) एक समय को काल जघन्य कहा जाता है।
(४) परमाणु में स्थित एक स्निग्धत्व गुण भाव जघन्य है।

द्रव्य जघन्य एक परमाणु पुद्गल होता है। क्षेत्र जघन्य एक आकाश प्रदेश होता है। काल जघन्य एक समय होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव जघन्य परमाणु पुद्गल का एक स्निग्धत्व आदि गुण होता है।

·४४ परमाणु पुद्गल के अस्तित्व का निरूपण

दीसइ सामग्गिमयं न याणवो संति नणु विरुद्धमिदं।
किं वाणूणमभावे निप्फण्णमिणं खप्फेहिं॥

—विशेभा० गा १७३८

टीका—× × × यदेव हि सामग्रीमयं किमपि दृश्यते भवता, तदेवाणु-संघातात्मकम्, अतः स्ववचनेनैव प्रतिपादितत्वात् कथमणवो न सन्ति? इति भावः। किञ्च, अणूनामभाव इदं सर्वमपि घटादि कार्यजातं किं खपुष्पैर्निष्पन्नम्, परमाण्वभावे तज्जनकमृत्पिण्डादिसामग्र्यभावात्? इति भावः। तस्माद् यस्मात् सामग्रीमयं दृश्यते इति प्रतिपद्यते भवता, तद्वदेव परमाणव इति।

किसी का कथन है—"सर्व सामग्री जो दिखाई देती है वह वस्तु है परन्तु परमाणु पुद्गल नहीं है।" परन्तु यह कथन सम्यग् नहीं है। यदि परमाणु पुद्गल का अभाव मान लिया जाय तो क्या कार्य आकाश पुष्प की तरह उत्पन्न हो सकते हैं।

जो भी सामग्रीमय—सामग्रीजन्य दिखाई देते हैं वे सब परमाणु पुद्गल के समुदायरूप है अतः परमाणु पुद्गल का अभाव कैसे हो सकता है। यदि परमाणु पुद्गल का अभाव होता तो ये सर्वकार्य – घटादि आकाश पुष्प की तरह कैसे उत्पन्न होते? परमाणु का अभाव मानने पर घटादि को उत्पन्न करने वाली मृत्पिंडादि सामग्री भी नहीं होती अतः सर्वसामग्री भी नहीं होती है।

सर्वसामग्रीमय जाने जाते हैं ऐसा जो कहते हैं वह सामग्री परमाणु ही है।

·४५ परमाणु पुद्गल—सामग्री-जन्य (कारण समूह) नहीं हैं

सव्वं सामग्गिमयं नेगंतोऽयं जओऽणुरपएसो।
अह सो वि सप्पएसो जत्थावत्था स परमाणू॥

—विशेभा० गा १७३७

टीका—सर्वं सामग्रीमयं सामग्रीजन्यं वस्त्वित्वमपि नकांतः यतो द्व्यणु-कादयः स्कंधाः सप्रदेशत्वाद् द्व्यादिपरमाणुजन्यत्वाद् भवन्तु सामग्रीजन्याः,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुः पुनरप्रदेश इति न केनचिज्जन्यते, इति कथमसौ सामग्रीजन्यः स्यात् ? अस्ति चासौ, कार्यलिंगगम्यत्वात् उक्तं च—

"मूर्तोऽणुरप्रदेशः कारणत्त्यं भवेत् तथा नित्यः।
एकरस-वर्ण-गंधो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च ॥

अथायमपि सप्रदेशः, तर्हिचतत्प्रदेशोऽणुर्भविष्यति, तस्यापि सप्रदेशत्वे तत्प्रदेशोऽणुरित्येवं तावत्, यावद् यत्र क्वचिद् निष्प्रदेशतया भवद्बुद्धेर-वस्थानं भविष्यति, स एव परमाणुः, तेनापि च सामग्रीजन्यत्वस्य व्यभिचार इति।

सर्ववस्तु सामग्री—कारण समूह से जघन्य है – ऐसा एकान्त नियम नहीं है क्योंकि परमाणु पुद्गल अप्रदेशी होने के कारण किसी से भी जन्य नहीं है। अर्थात् द्विप्रदेशी आदि स्कंध सप्रदेशी होने के कारण परमाणु आदि सामग्री से जन्य है परन्तु परमाणु पुद्गल अप्रदेशी होने से किसी से भी जन्य नहीं है। कहा है—परमाणु पुद्गल मूर्त-अप्रदेशी होने के कारण सर्व का अन्य कारण है, नित्य है। अतः परमाणु पुद्गल—सामग्री जन्य नहीं है।

·४६ परमाणु पुद्गल का ज्ञान

(क) दस ठाणाइं छउमत्थे सव्वभावेणं न जाणइ न पासइ, तंजहा १ धम्मत्थिकायं, २ अधम्मत्थिकायं, ३ आगासत्थिकायं, ४ जीव असरीर-पडिबद्धं, ५ परमाणुपोग्गलं, ६ सद्दं, ७ गंधं, ८ वातं, ९ अयंजिणे भविस्सइ वा ण वा भविस्सइ, १० अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्सइ वा न वा करेस्सइ।

एयाणि चेव उप्पन्न नाण-दंसणधरे अरहाजिणे केवली सव्वभावे णं जाणइ, तंजहा धम्मत्थिकायं, जाव करेस्सइ वा न वा करेस्सइ।

—भग० श ८। उ २। सू १६। पृ० ५४०

—ठाण० स्था १०। सू ७५४। पृ० ३१०

ठाण टीका—'दसे' त्यादि गतार्थं, नवरं छद्मस्थ इह निरतिशय एव द्रष्टव्योऽन्यथाऽवधिज्ञानी परमाण्वादि जानात्येव। 'सव्वभावेणं' त्ति सर्व-प्रकारेण × × ×।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) दसठाणाइं छउमत्थे मणुस्से सव्वभावेणं न जाणइ न पासइ, तंजहा—धम्मत्थिकायं १ अधम्मत्थिकायं २ आगासत्थिकायं ३ जीवं असरीरपडिबद्धं ४ परमाणुपोग्गलं ५ सद्दं ६ गंधं ७ वायं ८ अयंजिणे भविस्सइ वा नो भविस्सइ ९ अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्सइ वा नो वा १०।

एयाणि चेव उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सव्वभावेणं जाणइ पासइ, तंजहा—धम्मत्थिकायं जाव नो वा करिस्सइ।

—राय० सू १८६। पृ० ९५

(ग) छउमत्थे णं भंते! मणूसे परमाणुपोग्गलं किं जाणइ पासइ, उदाहु न जाणइ न पासइ? गोयमा! अत्थेगइए जाणइ न पासइ, अत्थेगइए न जाणइ न पासइ।

—भग० श १८। उ ८। सू ६, ७। पृ० ७७८

(घ) आहोहिए णं भंते! मणुस्से परमाणुपोग्गलं०? जहा छउमत्थे एवं आहोहिए वि, जाव अणंतपएसियं।

(ङ) परमाहोहिए णं भंते! मणूसे परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ तं समयं पासइ, जं समयं पासइ तं समयं जाणइ? णो इणट्ठे समट्ठे। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-परमाहोहिए णं मणूसे परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ नो तं समयं पासइ, जं समयं पासइ नो तं समयं जाणइ? गोयमा! सागरे से नाणे भवइ, अणगारे से दंसणे भवइ, से तेणट्ठेणं जाव-नो तं समयं जाणइ, एवं जाव अणंतपएसियं।

केवली णं भंते! मणुस्से परमाणुपोग्गलं०? जहा परमाहोहिए तहा केवली वि, जाव अणंतपएसियं।

—भग० श १८। उ ८। सू १० से १२। पृ० ७७७-७८

(च) केवली णं भंते! परमाणुपोग्गलं परमाणुपोग्गले त्ति जाणइ, पासइ? एवं चेव (हंता जाणइ, पासइ) × × ×।

—भग० श १४। उ १०। सू १३। पृ० ७०८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छ) न य पासइ अणुमन्नो छउमत्थो मोत्तुमोहिसंपन्नं।
तत्थ वि जो परमावहिनाणी तत्तो य किंचूणो॥
ते दो वि विसेसे उं अन्नो छउमत्थ केवली को सो।
जो पासइ परमाणुगहणमिणं जस्स होज्जाहि॥

—विशेभा० गा ३११५-१६

टीका— × × ×। तं च परमाणुमवधिज्ञानिनं मुक्त्वाऽन्यश्छद्मस्थो न पश्यति। तत्रापि सर्वोऽप्यवधिज्ञानी न तं पश्यति, किन्तु यः परमावधिज्ञानी, तस्माच्च परमावधेर्यः, किञ्चन्न्यूनावधिराधोवधिकः स एव तं पश्यति × × ×।

(ज) (ओहिणाणं णामं) उक्कस्सेणेग-परमाणुं जाणदि।

—षट्० खं० १। १। सू २। टीका। पु १। पृ० ९३

(झ) परमाणुआदियाइं अंतिमखंधत्ति मुत्तिदव्वाइं।
तं ओहिदंसणं पुण जं पस्सइ ताइं पच्चक्खं॥

—गोजी० गा ४८४

(ञ) न य पासइ अणुमन्नो छउमत्थो मोत्तुमोहिसंपन्नं।
तत्थ वि जो परमावहिनाणी तत्तो य किंचूणो॥
ते दो वि विसेसेउं अन्नो छउमत्थकेवली को सो।
जो पासइ परमाणुगहणमिणं जस्स होज्जाहि॥

—विशेभा० गा ३११५-१६

टीका—"केवली णं भंते ! परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणइ" इत्यादि-भगवत्या मुक्तम्, तं च परमाणुमवधिज्ञानिनं मुक्त्वाऽन्यश्छद्मस्थो न पश्यति। तत्रापि सर्वोऽप्यवधिज्ञानी न तं पश्यति, किन्तु यः परमावधि ज्ञानी, तस्माच्च परमावधेर्यः किञ्चन्न्यूनावधिराधोवधिकः स एव तं पश्यति तौ चाधोवधिक परमावधिज्ञानिनौ द्वावपि केवलिनः प्रथममेव निर्दिष्टौ, ततस्तयोर्द्वयोरपि विशेषतो निर्धार्य निर्दिष्टत्वात् कोऽन्यो हन्त ? छद्मस्थः केवली योऽसौ परमाणुपुद्गलं पश्यति, पश्यच्छद्मस्थस्य केवलिनः इदं त्वत्कल्पनया भगवत्यां ग्रहणं भवेत् इति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छद्मस्थ जीव, छद्मस्थ मनुष्य परमाणु पुद्गल को सर्वभाव से—सर्वप्रकार से नहीं जानता है, नहीं देखता है।

टीकाकार ने—यहाँ छद्मस्थ का अर्थ अवधिज्ञान आदि विशिष्ट ज्ञान रहित किया है क्योंकि विशिष्ट अवधिज्ञानी परमाणु आदि को जानता है।

कोई एक छद्मस्थ मनुष्य परमाणु पुद्गल को जानता है किन्तु देखता नहीं है तथा कोई एक छद्मस्थ मनुष्य परमाणु पुद्गल को न जानता है, न देखता है।

अवधिज्ञानी के अतिरिक्त अन्य छद्मस्थ मनुष्य परमाणु पुद्गल को नहीं देखते हैं। अवधिज्ञानी में भी—परमावधिज्ञानी और उससे कुछ न्यून अधो अवधिज्ञानी परमाणु पुद्गल को देखते हैं।

कोई एक आधोऽवधिक (अवधिज्ञानी) मनुष्य परमाणु पुद्गल को जानता है, किन्तु देखता नहीं है। कोई एक आधोऽवधिक लनुष्य परमाणु पुद्गल को न जानता है, न देखता है।

उत्कृष्ट अवधिज्ञानी प्रत्येक परमाणु को जानता है।

गोजी० के अनुसार अवधिदर्शन परमाणु से लेकर अंतिम महास्कंध तक के मूर्त पदार्थों को प्रत्यक्ष रूप से देखता है।

परमावधिज्ञानी (मनुष्य) परमाणु पुद्गल को जिस समय जानता है, उस समय देखता नहीं है और जिस समय देखता है, उस समय जानता नहीं है। क्योंकि परमावधिज्ञानी का ज्ञान साकार (विशेष ग्राहक) होता है और दर्शन अनाकार (सामान्य ग्राहक) होता है। अतः ऐसा कहा गया है कि परमावधिज्ञानी मनुष्य जिस समय परमाणु पुद्गल को जानता है उस समय देखता नहीं है; जिस समय परमाणु पुद्गल को देखता है उस समय जानता नहीं है।

केवली परमाणु पुद्गल को जानते हैं और देखते हैं परन्तु जिस समय जानते हैं उस समय देखते नहीं है तथा जिस समय देखते हैं उस समय जानते नहीं हैं क्योंकि केवल ज्ञानी का ज्ञान साकार होता है और दर्शन अनाकार होता है।

·४६ परमाणु पुद्गल और विविध अपेक्षा से स्थिति

(मूल पाठ के लिए देखो क्रमांक ·२१)

·१ संतति की अपेक्षा

परमाणु पुद्गल की स्थिति—संतति प्रवाह अर्थात् अपरापरोत्पत्ति-प्रवाह की अपेक्षा अनादि अनंत होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा

विवक्षित क्षेत्र में स्थित रहने की अपेक्षा परमाणु पुद्गल की स्थिति सादि-सांत होती है।

·३ स्वरूप की अपेक्षा

(परमाणुः) कालतस्तु जघन्यनस्तस्य स्थितिरेकः समयः, मध्यमतस्तु द्व्यादयः समया, उत्कृष्टस्त्वसंख्येया उत्सर्पिण्यवसर्पिण्य।

—विशेभा० गा १३९६। टीका

परमाणु पुद्गल की जघन्य स्थिति एक समय की और उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात-काल की होती है। क्योंकि परमाणु पुद्गल में असंख्यातकाल के पश्चात् स्वरूप से अर्थात परमाणु रूप में स्थित रहने का अभाव होता है।

·४ सकंपत्व की अपेक्षा

·५ निष्कंपत्व की अपेक्षा

सकंप परमाणु पुद्गल की जघन्य स्थिति एक समय की और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात भाग तक की होती है।

निष्कंप परमाणु पुद्गल की जघन्य स्थिति एक समय की और उत्कृष्ट असंख्यात-काल तक की होती है।

नोट—सकंप परमाणु पुद्गल की स्थिति उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक ही होती है; निष्कंप परमाणु पुद्गल की तरह असंख्यातकाल तक की नहीं होती है क्योंकि पुद्गलों का चलन आकस्मिक होता है अतः निष्कंप परमाणु पुद्गल की तरह सकंप परमाणु पुद्गल असंख्येयकाल सकंप नहीं रह सकता हैं।

सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) की स्थिति सदाकाल होती है।

इसी प्रकार निष्कंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) की स्थिति सदाकाल होती है।

नोट—परमाणु पुद्गल (बहुवचन) कुछ सकंप तथा कुछ निष्कंप रहते हैं अतएव ऐसा कहा जाता है कि परमाणु पुद्गल सदा सकंप— सदा निष्कंप रहते हैं। कोई भी समय ऐसा नहीं होता है कि जब सब परमाणु पुद्गल सकंप हो अथवा सब परमाणु पुद्गल निष्कंप हो—अतः सदाकाल कुछ परमाणु पुद्गल सकंप रहते हैं, कुछ परमाणु पुद्गल निष्कंप रहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु पुद्गल सर्वांश रूप से ही कंपन करता है, देशतः (आंशिक भाव में एकांश में कंपन कंपन) नहीं करता है अतः सर्वांश रूप से परमाणु की स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक की होती है।

परमाणु पुद्गल (बहुवचन) सदाकाल सर्वांश रूप से सकंप रहते हैं।

·४७ परमाणु पुद्गल और विविध अपेक्षा से अंतरकाल

(मूल पाठ के लिए देखो क्रमांक ·२२)

·१ परमाणुत्व की अपेक्षा

एक परमाणु अपना परमाणु रूप छोड़कर स्कंध का प्रदेश बनकर पुनः परमाणु रूप को प्राप्त हो, इसके मध्य का काल स्कंधसंबंधकाल कहलाता है वह जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यातकाल का होता है अतः परमाणु का अंतरकाल जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्यातकाल का होता है।

·२ विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा

परमाणु जब किसी एक विवक्षित क्षेत्र से प्रच्यूत होकर पुनः उस क्षेत्र को प्राप्त करते हैं इनका अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट अनंतकाल का होता है। लवटीकाकार कहते हैं कि यह अंतरकाल तीर्थंकरों के द्वारा प्रतिपादित है। पुद्गल यावत् स्कंध-देश-प्रदेश-परमाणु किसी एक क्षेत्र से प्रच्यूत होकर पुनः उसी क्षेत्र को प्राप्त करते हैं तब इनका अंतरकाल कदाचित् एक समय आदि का, कदाचित् आवलिकादि संख्यातकाल का अथवा पल्योपम आदि (असंख्यातकाल) काल का यावत् अनन्तकाल का होता है।

·३ सकंपत्व की अपेक्षा

सकंप परमाणु का स्वस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यातकाल का होता है। यहाँ स्वस्थान से अभिप्राय है कि परमाणु परमाणुभाव में रहता हुआ सकंपता से निश्चल होकर पुनः सकंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह सकंप परमाणु का स्वस्थान अंतरकाल है।

सकंप परमाणु का परस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है। यहाँ परस्थान से अभिप्राय है कि सकंप परमाणु द्विप्रदेशादि स्कंध में अंतभूत होकर निश्चलता को प्राप्त कर जब वह उस स्कंध से निकलकर पुनः परमाणुभाव को प्राप्त कर सकंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह सकंप परमाणु का परस्थान अंतरकाल है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ निष्कंपत्व की अपेक्षा

निष्कंप परमाणु का स्वस्थान की अपेक्षा (निष्कंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातभाग का होता है। यहाँ स्वस्थान से अभिप्राय है कि परमाणु परमाणुभाव में रहता हुआ निष्कंपता से सकंप होकर पुनः निष्कंपता को प्राप्त करता है इसमें जो काल लगता है वह निष्कंप परमाणु का स्वस्थान अंतरकाल है।

निष्कंप परमाणु का परस्थान की अपेक्षा (निष्कंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यातकाल का होता है। यहाँ परस्थान से अभिप्राय है कि निश्चल परमाणु चलित होकर द्विप्रदेशादि स्कंध में अन्तर्भूत होकर जब उस स्कंध से निकलकर पुनः परमाणुभाव को प्राप्त कर निश्चल होता है—इसमें जो काल लगता है वह निष्कंप परमाणु का परस्थान अंतरकाल है।

सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का अंतरकाल नहीं होता है क्योंकि सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) लोक में सर्वदा विद्यमान रहते हैं। अतः सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का अंतरकाल नहीं होता है।

इसी प्रकार निष्कंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का भी अंतरकाल नहीं होता है।

परमाणु सर्वांश रूप से ही कंपन करता है, निरंश नहीं होने के कारण देशतः कंपन नहीं करता है अतः सकंप परमाणु का स्वस्थान तथा परस्थान अंतरकाल (देखें क्रमांक ·२२) पाठ के अनुसार समझना चाहिए।

सर्वांश रूप से सकंप परमाणु पुद्गल (बहुवचन) का अंतरकाल नहीं होता है।

·४८ वर्गणा

·१ परमाणुवग्गणम्मि ण अवरुक्कस्सं च सेसगे अत्थि।
गेज्झमहाखंधाणं वरमहियं सेसगं गुणियं॥

टीका—परमाणुवर्गणायां जघन्योत्कृष्टे न स्तः अणूनां निर्विकल्पकत्वात् शेषद्वाविंशतिवर्गणा तु स्तः। तत्र ग्राह्यानां आहारतेजोभाषामनः कार्मण-वर्गणानां महास्कन्धवर्गणायाश्च उत्कृष्टानि स्वस्वजघन्याद्विशेषाधिकानि शेषषोडशवर्गणानां गुणितानि भवन्ति।

—गोजी० गा ५९६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुवर्गणा में जघन्य-उत्कृष्ट भेद नहीं है क्योंकि परमाणु निर्विकल्प-भेद रहित है। शेष बाइस वर्गणाओं के जघन्य-उत्कृष्ट भेद है। उनमें से ग्राह्यवर्गणा, आहारवर्गणा, तैजसशरीरवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्मणवर्गणा तथा महा-स्कंधवर्गणा है इनके उत्कृष्ट अपने-अपने जघन्य से विशेषाधिक है शेष सोलह वर्गणा के गुणित है।

एक श्रेणि के रूप में तेइस वर्गणा का कथन है।

नोट—पुद्गल द्रव्य में परमाणु और द्वयणुक आदि संख्यात, असंख्यात और अनंत परमाणुओं के स्कंधचलित होते हैं। अंतिम महास्कंध में प्रदेश चल-अचल है।[1]

·२ वर्गणा

वग्गणरासीपमाणं सिद्धाणंतिम पमाण मेत्तंपि।
दुगसहियपरमभेदपमाणवहाराणसंवग्गो॥

—गोजी० गा ३९२

अर्थात् कार्मणवर्गणा राशि का प्रमाण सिद्धराशि के अनंतवें भाग है।

गमन करते हुए दो परमाणुओं के परस्पर में अतिक्रमण करने में जितना काल लगता है उतना ही समय का प्रमाण है।[2]

व्यवहार, विकल्प, भेद तथा पर्याय ये सब एक अर्थ वाले हैं। द्रव्य प्रमाण से सब जीव अनंत है। इनसे पुद्गल परमाणु अनंत गुणे हैं।[3]

·३ मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलाः।
अकर्म्मकर्म्म नोकर्म्मजातिभेदेषु वर्गणा॥

—गोजी० गा ५९५। टीका में उद्धृत

अर्थात् पुद्गल शब्द मूर्तिमान् पदार्थों का और संसारी जीवों का वाचक है और वर्गणा शब्द अकर्मजाति के, कर्मजाति के और नोकर्मजाति के पुद्गलों को कहता है।

·४ वर्गणा

इह समस्तलोकाकाशप्रदेषु ये केचन एकाकिनः परमाणवो विद्यन्ते तत्समुदायः सजातीयत्वाद् एका वर्गणाः, एवं द्विप्रदेशिकानामनन्तानामपि

---

१. गोजी० गा ५९३
२. गोजी० गा ५७३
३. गोजी० गा ५८८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कंधानां सजातीयत्वाद् द्वितीया वर्गणा, त्रिप्रदेशिकानामनन्तानामपि स्कंधानां सजातीयत्वात् तृतीया वर्गणा, एवमेकैकपरमाणुवृद्धया संख्येक-प्रदेशिकानामनन्तानापि स्कंधानां सजातीयसमुदायरूपाः संख्याता वर्गणाः, असंख्यातप्रदेशिकस्कंधानामेकैकपरमाणुवृद्धानामसंख्येया वर्गणाः, अनंत-परमाणुनिष्पन्नस्कंधानामनन्तावर्गणाः, अनन्तानन्तप्रदेशिकानां स्कंधानाम-नन्तानन्तवर्गणाः।

सर्वा अप्येता अल्पपरमाणुमयत्वेन स्थूलपरिणामतया च स्वभावाद् जीवानां ग्रहे न समागच्छन्तीत्यग्रहणवर्गणा एताः सर्वा अप्युच्यन्ते। एताश्च सर्वाः समतिक्रम्य अभव्यानन्तगुणः सिद्धानन्तभागवर्तिभिःपरमाणुभिर्निष्पन्नैः स्कन्धैरब्धा ग्रहणप्रायोग्या जघन्यौदारिक वर्गणा भवन्ति, तत आरभ्य एकैकपरमाणुवृद्धस्कंधारब्धा औदारिकशरीरयोग्योत्कृष्टवर्गणोयावदेता अपि जघन्योत्कृष्टमध्यवर्तिग्योऽनन्ता वर्गणा भवन्ति, यतो जघन्यायाः सकाशाद् उत्कृष्टाया अनंतभागाधिकत्वं वक्ष्यते, अनन्तभागश्चानन्त परमाणुमयः, तत एकोत्तरप्रदेशोपचये इति मध्यवर्तिनो नामानन्त्यं न विरुध्यते।

''तह अगहणंतरिय' त्ति 'तथा' तेन एकैकपरमाणूपचयरूपेण प्रकारेण 'अग्रहणान्तरिताः' अग्रहणवर्गणान्तरिता वर्गणा भवन्ति। एतदुक्तं भवति—औदारिकशरीरोत्कृष्टवर्गणाभ्यः परत एकपरमाणुसमधिकस्कंधरूपा वर्गणा औदारिकशरीरस्यैव जघन्याऽग्रहणप्रायोग्या, ततो द्विपरमाण्वधिकस्कंधरूपा द्वितीयाऽग्रहणप्रायोग्या, एवमेकैकपरमाण्वधिकस्कंधरूपा वर्गणास्तावद् वाच्या यावदुत्कृष्टा अग्रहणप्रायोग्या, एवमेकैकपरमाण्वधिकस्कंधरूपा वगणास्तावद् वाच्या यावदुत्कृष्टा अग्रहणप्रायोग्या वर्गणा भवति, जघन्या-याश्च वर्गणायाः सकाशाद् उत्कृष्टा वर्गणा अनंतगुणा। गुणकारश्चाऽभव्या-नन्तगुण-सिद्धानन्तभागकल्पराशिप्रमाणो द्रष्टव्यः। एतासां चाग्रहणप्रा-योग्यता औदारिकं प्रति प्रभूतपरमाणुनिष्पन्नत्वात् सूक्ष्मपरिणामत्वाच्च वेदितव्येति × × ×।

—कर्म० भा ५। गा ७५ टीका। पृ० ८१-८२

विवेचन—एक प्रदेशी पुद्गल द्रव्यवर्गणा परमाणु स्वरूप होती है, अन्यथा एक प्रदेशी यह विशेषण नहीं बन सकता। परमाणु के एक प्रदेश को छोड़कर द्वितीयादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेश नहीं होते। जिसमें द्वितीयादि प्रदेश नहीं है वह अप्रदेश परमाणु है। उसमें अन्य पुद्गलों के साथ मिलने की शक्ति संभव है, इससे सिद्ध होता है कि परमाणु पुद्गल रूप है। परमाणुओं का पुद्गल रूप से उत्पाद और विनाश नहीं होता है अतः उनमें भी द्रव्यपना सिद्ध है।

अजघन्य स्निग्ध और रूक्ष गुणवाले दो परमाणुओं के समुदाय समागम से द्विप्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा है। द्रव्यार्थिकनय का अवलम्बन करने पर दो परमाणुओं का कथंचित् सर्वात्मना समागम होता है।

एकप्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा एक प्रकार की होती है। द्विप्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा, तीन प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा से उत्कृष्ट संख्यातप्रदेशी द्रव्यवर्गणा तक यह सब संख्यातप्रदेशी द्रव्यवर्गणा है।

प्रथम परमाणुवर्गणा, दूसरी संख्यातवर्गणा तीसरी असंख्यातवर्गणा और चौथी अनंतवर्गणा—ये चार प्रकार की वर्गणाएं अग्राह्य है। इसका यह आशय है कि जीव द्वारा इनका ग्रहण नहीं होता है।

सब वर्गणाएं परमाणु पुद्गलों से ही उत्पन्न हुई है। अतः सब वर्गणाओं की परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा यह संज्ञा है। तथा उस वर्गणा के एकादिप्रदेश यह विशेषण है अतः एक प्रदेशी और परमाणु पुद्गल इन दोनों पदों का ग्रहण करना चाहिए।

द्विप्रदेशी आदि उपरि वर्गणाओं के भेद से ही एक प्रदेशी वर्गणा होती है क्योंकि सूक्ष्म की स्थूल के भेद से ही उत्पत्ति देखी जाती है। संघात से और भेद-संघात से एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा नहीं होती है, क्योंकि इससे नीचे अन्य वर्गणाओं का अभाव है।

स्कंध पुद्गलों का विभाग होना भेद है; परमाणु पुद्गलों का समुदाय समागम होना संघात है। भेद को प्राप्त होकर पुनः समागम होना भेद-संघात है।

द्विप्रदेशी परमाणु पुद्गल वर्गणा आदि ऊपर के द्रव्यों के भेद से और नीचे के द्रव्यों के संघात से तथा स्वस्थान में भेद-संघात से होती है। चूंकि दो एक प्रदेशी परमाणु पुद्गलों के समुदाय समागम से द्विप्रदेशी वर्गणा होती है। त्रिप्रदेशी वर्गणा में एक परमाणु पुद्गल के विरोधी गुण के उत्पन्न होने से भेद को प्राप्त होने पर द्विप्रदेशी द्रव्यवर्गणा उत्पन्न होती है।

विशेष विवेचन—एक-एक परमाणु को अणुवर्गणा कहते हैं। द्वयणुक से लेकर एक-एक परमाणु बढते-बढते उत्कृष्टसंख्यात परमाणुओं के स्कन्ध पर्यन्तसंख्याताणुवर्गणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। उसमें जघन्य दो अणुओं का स्कन्ध है और उत्कृष्ट-उत्कृष्ट संख्यात परमाणुओं का स्कन्ध है। जघन्य परिमितासंख्यात् परमाणुओं से लेकर एक-एक अणु बढते-बढते उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात परमाणुओं के स्कन्ध पर्यन्त असंख्याताणुवर्गणा है। यहाँ जघन्य परीतासंख्यात परमाणुओं का स्कंध है और उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात परमाणुओं का स्कंध है।

उसके अनन्तर उत्कृष्ट असंख्याताणुवर्गणा में एक परमाणु अधिक होने पर अनन्ताणुवर्गणा का जघन्य होता है। उसे सिद्ध राशि के अनंतवें भाग प्रमाण अनंत से गुणा करने पर अनंताणुवर्गणा का उत्कृष्ट होता है। उसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर भी आहारवर्गणा का जघन्य होता है। उसमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे जघन्य में मिलाने पर आहारवर्गणा में एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की अग्राह्यवर्गणा जघन्य का होता है। उसमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग से भाग देकर जो लब्ध आवे उसे उसी में मिला देने पर अग्राह्यवर्गणा का उत्कृष्ट होता है।

इसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की तैजसशरीरवर्गणा का जघन्य होता है। उसमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग से भाग देने से जो लब्ध आवे उसे उसी में मिला देने पर तैजस शरीरवर्गणा का उत्कृष्ट होता है। उसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की अग्राह्यवर्गणा का जघन्य होता है। उसमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग से गुणा करने पर उसका उत्कृष्ट होता है। उसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की भाषावर्गणा का जघन्य है। उनमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग से भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे उसी में मिलाने पर उसका उत्कृष्ट होता है।

उसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की अग्राह्यवर्गणा का जघन्य है। उसमें अनंतगुणा उसका उत्कृष्ट होता है। उसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की मनोवर्गणा का जघन्य होता है। उसमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग से भाग देने पर जो लब्ध होता है उसे उसी में मिला देने पर उसका उत्कृष्ट होता है।

उसमें एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की अग्राह्यवर्गणा का जघन्य है। उससे अनन्त गुणा उसका उत्कृष्ट है।

उससे एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की कार्मणवर्गणा का जघन्य है। उसमें सिद्ध राशि के अनंतवें भाग से भाग देने पर जो लब्ध हो उसे उसी में मिला देने पर उसका उत्कृष्ट होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उससे एक परमाणु अधिक उससे ऊपर की ध्रुववर्गणा का जघन्य है। उसे अनंत-जीव राशि से गुणन करने पर उसका उत्कृष्ट होता है।

उससे एक परमाणु अधिक उससे ऊपर की सान्तर-निरन्तरवर्गणा का जघन्य है। उसे अनंत जीव राशि से गुणन करने पर उसका उत्कृष्ट होता है।

नोट—यहाँ इतना विशेष है कि परमाणुवर्गणासे लेकर सान्तरनिरन्तरवर्गणा पर्यन्त पन्द्रहवर्गणाओं का समानघन अनंतगुणे पुद्गलों के वर्गमूल प्रमाण होने पर भी क्रम से विशेषहीन है। उनका प्रतिभागहार सिद्ध राशि के अनंतवें भाग है।

उत्कृष्ट सान्तर-निरन्तरवर्गणा में एक परमाणु अधिक होने पर उससे ऊपर की शून्यवर्गणा का जघन्य होता है। उसे अनन्तगुणित जीव राशि के प्रमाण में गुणा करने पर उसका उत्कृष्ट होता है। इस प्रकार सोलहवर्गणा सिद्ध हुई।

१७ उससे ऊपर प्रत्येक शरीरवर्गणा है। एक जीव के एक शरीर के विस्र-सोपचय सहित कर्म-नोकर्म के स्कंध को प्रत्येक शरीर वर्गणा कहते हैं। शून्यवर्गणा के उत्कृष्ट से एक परमाणु अधिक होने पर जघन्य प्रत्येक शरीरवर्गणा होती है। इस जघन्य से पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणा करने पर उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा होती है।

१८—उसमें एक परमाणु अधिक होने पर जघन्य ध्रुव शून्यवर्गणा होती है। इस जघन्य को सब मिथ्यादृष्टि जीवों के प्रमाण को असंख्यातलोक में भाग देने पर जो प्रमाण आवे उससे गुणा करने पर उत्कृष्ट भेद होता है।

उससे एक परमाणु अधिक बादर-निगोदवर्गणा है। बादरनिगोदिया जीवों के विस्रयोपचय सहित कर्म-नोकर्म परमाणुओं में एक स्कंध को बादरनिगोद वर्गणा कहते हैं। जघन्य बादर निगोदवर्गणा में एक परमाणुहीन होने पर उत्कृष्ट ध्रुव शून्यवर्गणा होती है। तथा इस जघन्य को जगत् श्रेणि में असंख्यातवें भाग से गुणा करने पर उत्कृष्ट बादर निगोदवर्गणा होती है। उसमें एक परमाणु अधिक होने पर तीसरी शून्य वर्गणा होती है।

जघन्य सूक्ष्म निगोद जघन्यवर्गणा में एक परमाणु हीन करने पर तीसरी शून्यवर्गणा का उत्कृष्ट होता है।

जघन्य सूक्ष्म निगोद वर्गणा को पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणा करने पर उत्कृष्ट सूक्ष्म निगोदवर्गणा होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसमें परमाणु अधिक करने पर नभोवर्गणा का जघन्य होता है। इसका जगत्प्रतर के असंख्यातवें भाग से गुणा करने पर नभोवर्गणा का उत्कृष्ट होता है। उसमें एक बढाने पर महास्कंधवर्गणा का जघन्य होता है। इससे उसी का पल्य का असंख्यातवें भाग बढ़ाने पर महास्कंधवर्गणा का उत्कृष्ट होता है।

·५ वर्गणा पर दृष्टान्त

इह भरतक्षेत्रे मगधजनपदे प्रभूतगोमंडलस्वामी कुविकर्णो नाम गृहपतिरासीत्। स च तासां गवामतिबहुत्वात् सहस्त्रादिसंख्यापरिमितानां पृथग् पृथगनुपालनार्थं प्रभूतान् गोपालांश्चक्रे। ते च तासु परस्परं मीलितासु गोष्वात्मीया आत्मीयाः सम्यगजानन्तः सन्तो नित्यं कलहमकार्षुः। तांश्च तथाऽन्योन्यं विवदमानानुपलभ्याऽसौ तेषामव्यामोहार्थं कलहव्यवच्छित्तये च शुक्ल-कृष्ण-रक्त-कर्बुरादिभेदभिन्नानां गवां प्रतिगोपालं सजातीय-गोसमुदायरूपा भिन्ना वर्गणा व्यवस्थापितवानिति। एष दृष्टांत।

अथोपनय-उच्यते-इह गोमंडलप्रभुकल्पस्तीर्थंकरो गोपतुल्येभ्यः स्वशिष्येभ्यो गोसमूहमानं पुद्गलास्तिकायं तदसंमोहार्थं परमाण्वादिवर्गणा-विभागेन निरूपितवानिति।

—विशेभा० गा० ६३२। टीका

इस भरत क्षेत्र में मगध जनपद में प्रभूतगोमंडल का स्वामी कुविकर्ण नामक गृहपति रहता था। उसके पाप बहुतसी गायों का समूह था। पृथग्-पृथग् गायों की प्रतिपालना के लिए गोपालक थे।

व्याख्या—अस्तु परमाणु वर्गणा से अचित्त महास्कन्ध वर्गणा तक सजातीय वस्तुओं के समुदाय को वर्गणा कहते हैं। एक ही तरह के पुद्गलों के समुदाय, राशि या समूह को उन पद्गलों को वर्गणा कहते हैं। जैसे परमाणुओं के समूह को अबद्ध समूह को परमाणु वर्गणा कहेंगे व द्विप्रदेशी स्कंधों के समूह को द्विप्रदेशी वर्गणा कहेंगे। पुद्गलों के अनंत भेद हैं अतः वर्गणाओं के भी अनंत भेद होते हैं। लेकिन समास में पुद्गल वर्गणाओं के २३ भेद कहे गये हैं।

·४९ परमाणु पुद्गल और पुद्गल परिवर्त

एएसि णं भंते! परमाणुपोग्गलाणं साहणणा-भेदाणुवाएण अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हंता गोयमा ! एएसि णं परमाणुपोग्गलाणं साहणया भेदाणुवाएणं अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया।

—भग० श १२ । उ ४ । सू ८१ । ६५६०

पुद्गलों के द्वारा पुद्गल द्रव्यों के साथ परावर्त—पुद्गलपरावर्त। एक परमाणु का अन्य अनंत परमाणुओं के साथ संयोग-वियोग—एक पुद्गल परावर्त है।

·५०/६९ स्कन्ध पुद्गल—

·५१ स्कंध पुद्गल और विभाव गुण

विभावगुणमिदि भणिदं, जिणसमये सव्वपयडत्तं।

—नियम० गा २७। उत्तरार्ध

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् दसप्रदेशी स्कंध, यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध और अनंत प्रदेशी स्कंध को—विभाव गुण रूप विभाव पुद्गल कहा है।

·५१ स्कन्ध पुद्गल के गुण

·१ द्रव्यत्व

दविए, त्ति, द्रव्ये पुद्गल स्कंधरूपे × × ×।

—पिंडनि० गा ५५

टीका—ननु मूर्त्तेषु द्रव्येषु परस्परं संयोगतः संख्याबाहुल्यतश्च पिण्ड इति व्यपदेशो घटते।

स्कंध पुद्गल में परस्पर संयोग होता है—संख्या की बाहुलता भी है। द्रव्यतः स्कंध पुद्गल है।

·५१·२ स्कंध पुद्गल शाश्वत भी है अशाश्वत भी है

·१ परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सासए, असासए ? गोयमा ! सिए सासए, सिय असासए। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-सिए सासए, सिय असासए ? गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासए वण्णपज्जवेहिं जाव फास-पज्जवेहि असासए से तेणट्ठेणं जाव सिए सासए, सिए असासए।

—भग० श १४ । उ ४ सू ४९, ५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु शाश्वत भी है और अशाश्वत भी है। द्रव्यत्व की अपेक्षा से वह शाश्वत है। वर्ण-पर्याय (बाह्य स्वरूप) यावत् स्पर्श पर्याय आदि की अपेक्षा से अशाश्वत है, प्रति क्षण परिवर्तन शील है।

अस्तु परमाणु पुद्गल की तरह स्कंध पुद्गल भी द्रव्यतः शाश्वत है—भावतः अशाश्वत है।

नोट—प्रवाह की अपेक्षा तीनों काल में स्कंध का अस्तित्व रहेगा।

·२ एस णं पोग्गले अतीतमणंतं, सासयं भुवीति वत्तव्वं सिया। पोग्गले पडुप्पण्णं, सासयं समयं भवतीति वत्तव्वंसिया। पोग्गले अणागयमणंतं, सासयं समयं भविस्सतीति वत्तव्वं सिया। हंता गोयमा!

—भग० श १। उ ४। सू १९१-१९३

टीका—पोग्गलेति परमाणुरुत्तरत्वस्कन्धग्रहणात्।

पुद्गल अनंत अतीत में लगातार था, वर्तमानकाल में लगातार है तथा अनंत भविष्यत् काल में लगातार रहेगा।

अतः स्कंध पुद्गल भी तीनों काल में शाश्वत है। प्रवाह की अपेक्षा स्कंध पुद्गल शाश्वत है।

.३ नित्य तथा अवस्थित द्रव्य है

नित्यावस्थितान्यरूपाणि च। रूपिणः पुद्गलाः।

—तत्त्व० अ ५। सू ३, ४

पुद्गल—नित्य तथा अवस्थित द्रव्य है।

अस्तु स्कंध भी नित्य तथा अवस्थित द्रव्य है।

न जातुचिदनादिकालप्रसिद्धिवशोपनीता मर्यादामतिक्रामंति, स्वलक्षण-व्यतिकरो हि निर्भेदताहेतुः पदार्थानाम्, अतः स्वगुणमपहाय नान्यदीयगुण सम्परिग्रहमेतान्याविष्टन्ते, तस्मादवस्थितानीति।

—तत्त्व० अ ५। सू ३ भाष्य पर सिद्धसेनगणि टीका

पुद्गल नित्य तथा अवस्थित द्रव्य है। अतः यह कभी सर्वथा नष्ट नहीं होगा तथा कभी अन्य द्रव्य में परिणत नहीं होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतः स्कंध पुद्गल अपेक्षा दृष्टि से नित्य-अवस्थित द्रव्य है।

तद्भावाव्यय नित्यम्।

—तत्त्व० अ ५। सू ३०। छाया

जिसके स्वभाव का व्यय नहीं हो तथा जो सर्वथा विनष्ट नहीं हो वह नित्य है।

अवस्थित ग्रहणादन्यूनाधिकत्वमाविर्भाव्यते, अनादिनिधने यत्तास्यां न स्वतत्त्व व्यभिचरन्ति।

—तत्त्व० अ ५। सू ३। सिद्धसेनगणि टीका

जो संख्या में कमते या बढ़ते नहीं हैं, जो अनादि निधन है, जो सदा स्वस्वरूप में रहते हैं तथा जो न दूसरे को अपने रूप में परिणमाते हैं—वे अवस्थित है।

·५१·४ स्कंध पुद्गल का अजीवत्व

रूविअजीवदव्वा णं भंते! कइविहा पन्नत्ता? गोयमा! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा-खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला।

—पण्ण० प १। सू ६। पृ० २६५

—जीवा० प्रत्ति १। सू ५। पृ० १०५

सर्व प्रकार के स्कंध पुद्गल—अजीव हैं।

·५१·५ स्कंध पुद्गल का रूपित्व-मूर्तित्व

(क) खंधा य खंधदेसा य तप्पएसा तहेव य।
परमाणुणो य बोद्धव्वा, रूविणो य चउव्विहा॥

—उत्त० अ ३६। गा १०। पृ० १०५०

(ख) 'रूपमेषामस्त्येषु वाऽस्तीति रूपिण इति। एषामिति पुद्गलानां परमाणुद्व्यणुकादिक्रमभाजाम्, उक्तलक्षणं रूपं मूर्तिः सा विद्यत इति रूपिणः।

—तत्त्व सिद्ध० अ ५। सू ४। पृ० ३२५

स्कंध पुद्गल रूपी है—मूर्तिवान् है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के कारण स्कंध पुद्गल को मूर्तिवान् कहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५१ ६ स्कंध पुद्गल–अनर्द्ध भी है, सार्द्ध भी है, अमध्य भी है, समध्य भी है तथा सप्रदेशी है

(क) दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे किं सअड्ढे, समज्झे, सपएसे, उदाहु अणड्ढे, अमज्झे, अपएसे ? गोयमा ! सअड्ढे, अमज्झे, सपएसे, णो अणड्ढे, णो समज्झे, णो अपएसे।

तिप्पएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा ? गोयमा ! अणड्ढे, समज्झे, सपएसे, णो सअड्ढे, णो अमज्झे, णो अपएसे।

जहा दुप्पएसिओ तहा जे समा ते भाणियव्वा, जे विसमा ते जहा तिप्पएसिओ तहा भाणियव्वा।

संखेज्जपएसिए णं भंते ! किं खंधे सअड्ढे पुच्छा ? गोयमा ! सिय सअड्ढे, अमज्झे, सपएसे, सिय अणड्ढे, समज्झे, सपएसे।

जहा संखेज्जपएसिओ तहा असंखेज्जपएसिओ वि, अणंतपएसिओ वि।

—भग० श ५। उ ७। सू १० से १२। पृ० ४८३

टीका—'दुप्पएसिए' इत्यादि, यस्य स्कंधस्य समाः प्रदेशाः स सार्धः, यस्य तु विषमाः स समध्यः, संख्येय प्रदेशिकादिस्तु स्कंधः समप्रदेशिकः इतरश्च, तत्र यः समप्रदेशिकः स सार्धोऽमध्यः, इतरस्तु विपरीत इति।

(ख) दुपएसिए णं पुच्छा। (किं सड्ढे, अणड्ढे ?) गोयमा ! सड्ढे, नो अणड्ढे। तिपएसिए जहा परमाणुपोग्गले (नो सड्ढे, अणड्ढे।) चउ-पएसिए जहा दुपएसिए। पंचपएसिए जहा तिपएसिए। छप्पएसिए जहा दुपएसिए। सत्तपएसिए जहा तिपएसिए। अट्ठपएसिए तहा दुपएसिए। नवपएसिए जहा तिपएसिए। दसपएसिए जहा दुपसिए।

संखेज्जपएसिए णं भंते ! खंधे—पुच्छा। गोयमा ! सिय सड्ढे, सिय अणड्ढे। एवं असंखेज्जपएसिए वि। एवं जाव अणंतपएसिए वि।

—भग० श २५। उ ४। सू ८५-८६। पृ० ८६८

द्विप्रदेशी स्कंध—सार्ध है, सप्रदेशी है और अमध्य है किन्तु अनर्द्ध नहीं है, समध्य नहीं है और अप्रदेशी भी नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन प्रदेशी स्कंध अनर्द्ध है, समध्य है और सप्रदेशी है किन्तु सार्ध नहीं है अमध्य नहीं है और अप्रदेशी नहीं है।

द्विप्रदेशी स्कंध की तरह समसंख्या वाले अर्थात् चतुष्प्रदेशी स्कंध, छ:प्रदेशी स्कंध, अष्टप्रदेशी स्कंध तथा दसप्रदेशी स्कंध सार्ध है, सप्रदेशी है और अमध्य है किन्तु अनर्द्ध नहीं है, समध्य नहीं है और अप्रदेशी नहीं है।

तीन प्रदेशी स्कंध की तरह विषम संख्या वाले अर्थात् पाँच प्रदेशी स्कंध, सात प्रदेशी स्कंध तथा नौ प्रदेशी स्कंध अनर्द्ध है, समध्य है और सप्रदेशी है किन्तु सार्ध नहीं है, अमध्य नहीं है और अप्रदेशी नहीं है।

संख्यातप्रदेशी स्कंध कदाचित् सार्ध होता है, अमध्य होता है और सप्रदेशी होता है। कदाचित् अनर्द्ध होता है, समध्य होता है और सप्रदेशी होता है।

जिस प्रकार संख्यातप्रदेशी स्कंध के विषय में कहा गया है उसी प्रकार असंख्यात प्रदेशी स्कंध तथा अनंतप्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए।

संख्यातप्रदेशी स्कंध की तरह असंख्यातप्रदेशी स्कंध भी कदाचित् सार्ध होता है, अमध्य होता है और सप्रदेशी होता है। कदाचित् अनर्द्ध होता है, समध्य होता है और सप्रदेशी होता है।

दो, चार, छः, आठ, दस इत्यादि संख्यावाले प्रदेश—समसंख्यावाले प्रदेशी स्कध कहलाते हैं तथा वे स्कंध सार्ध होते हैं। तीन, पाँच, सात, नौ इत्यादि संख्या वाले प्रदेश—विषम संख्या वाले प्रदेशी स्कध कहलाते हैं तथा वे स्कंध समध्य (मध्य भाग सहित) होते हैं। संख्यातप्रदेशी स्कंध, असंख्यातप्रदेशी स्कंध और अनंतप्रदेशी स्कध समप्रदेशी भी (सम संख्यावाले प्रदेश युक्त) और विषम प्रदेशी (विषम संख्या वाले प्रदेश युक्त) भी होते हैं। जो समप्रदेशी होते हैं वे सार्ध और अमध्य होते हैं। जो विषमप्रदेशी होते हैं वे समध्य और अनर्द्ध होते हैं।

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं सड्ढा, अणड्ढा ? गोयमा ! सड्ढा वा, अणड्ढा वा। एवं जाव अणंतपएसिया।

—भग० श २५ । उ ४ । सू ८७ । पृ० ८६८-६९

परमाणुओं की तरह द्विप्रदेशी स्कंधों का समूह होता है तब उनकी संख्या बहुत होती है और वह संख्या सम होती है तो वे सार्ध होते हैं और संख्या विषम होती है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो वे अनर्द्ध होते हैं। द्विप्रदेशी स्कंध की संख्या संघात और भेद के कारण अवस्थित नहीं होती है अतः वे कभी समसंख्यक हो जाते हैं तथा कभी विषमसंख्यक हो जाते हैं।

इसी प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध यावत् दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् अनंतप्रदेशी स्कंधों की संख्या सम होती है तो वे सार्ध होते हैं और संख्या विषम होती है तो वे अनर्द्ध होते हैं।

(ग) द्व्यादिप्रदेशवन्तो यावदनन्तप्रदेशकाः स्कंधाः।

—प्रशम० श्लो २०८

टीका—द्व्यादिप्रदेशभाजः स्कंधाः संघाताः एकद्व्यणुकप्रभृतयः। द्वयोरण्वोस्त्रयाणां वेत्यादिप्रारब्धाः यावदनन्तप्रदेशाः सर्व स्कंधाः।

द्विप्रदेशी स्कंध दो परमाणुओं के संघात से बनता है यावत् अनंत स्कंध अनंतपरमाणुओं के संघात से बनता है।

·५१.६·१ स्कंध सप्रदेशी है

"द्व्यादिप्रदेशवन्तो यावदनन्तप्रदेशकाः स्कंधाः।

—प्रशम० श्लो २०८ पूर्वार्ध

दो प्रदेशी से लेकर अनंतप्रदेशी तक स्कंध सप्रदेशी होते हैं। स्कंध अप्रदेशी नहीं होता है।

·५१·७ स्कंध पुद्गल छिन्न-भिन्न होता भी है, नहीं भी होता है

परमाणुपोग्गले णं भंते! असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा? हंता, ओगाहेज्जा। से णं भंते! तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा? गोयमा! नो इणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थं कमइ, एवं जाव असंखेज्जपएसिओ।

अणंतपएसिए णं भंते! खंधे! असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा? हंता, ओगाहेज्जा। से णं तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा? गोयमा! अत्थेगइए छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा अत्थेगइए णो छिज्जेज्ज वा णो भिज्जेज्ज वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं णवरं झियाएज्ज' भाणियव्वं, एवं पुक्खलसंवट्टगस्स महामेहस्स मज्झंमज्झेणं, तहिं 'उल्लेसिया', एवं गंगाए महाणईए पडिसोयं हव्वं आगच्छेज्जा, तहिं विणिहायं आवज्जेज्ज, उदगावत्तं वा उदगबिंदुं वा ओगाहेज्ज से णं तत्थ परियावज्जेज्ज।

टीका — × × × "अत्थे गइए छिज्जेज्ज' त्ति तथाविधबादरपरिणामत्वात्, 'अत्थेगइए नो छिज्जेज्ज' त्ति सूक्ष्मपरिणामत्वात् × × ×।

—भग० श ५ । उ ७ । सू ७, ८ । पृ० ४८३

परमाणु पुद्गल की तरह — द्विप्रदेशी स्कंध यावत् दसप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध तलवार की धार या क्षुरधार (उस्तरे की धार) पर रह सकता है। उस तलवार की धार या क्षुर की धार पर स्थित उन स्कंधों पर शस्त्र का आक्रमण नहीं हो सकता है अतः तत्र स्थित द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कध छिन्न-भिन्न नहीं होता है।

कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध तलवार की धार या क्षुर की धार पर रह सकता है। उस तलवार की धार या क्षुर की धार पर स्थित कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध पर शस्त्र का आक्रमण होता है तथा कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध पर शस्त्र का आक्रमण नहीं होता है।

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध तक अग्निकाय के बीचो-बीच में प्रवेश कर वहाँ स्थित रहकर भी वे स्कंध पुद्गल दग्ध नहीं होते हैं।

कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध अग्निकाय के बीचो-बीच में प्रवेश कर वहाँ स्थित रहकर भी दग्ध नहीं होता है। तथा कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध अग्निकाय के बीचो-बीच में प्रवेश कर वहाँ स्थित रहकर दग्ध हो जाता है।

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध पुष्कर-संवर्तक नामक महामेघ के मध्य में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर भी वे स्कंध पुद्गल आर्द्रभाव (गीलापन) को प्राप्त नहीं होते हैं।

कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध पुष्कर-संवर्तक नामक महामेघ के मध्य में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर भी आर्द्रभाव को प्राप्त नहीं होता है तथा कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध पुष्कर-संवर्तक नामक महामेघ के मध्य में प्रवेश कर सकता है लेकिन वहाँ स्थित रहकर आर्द्रभाव को प्राप्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध गंगा महानदी के प्रतिस्रोत—प्रवाह में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर भी वे स्कंध प्रतिस्खलित नहीं होते हैं।

कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध गंगा महानदी के प्रतिस्रोत—प्रवाह में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर भी प्रतिस्खलित नहीं होता है। तथा कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध गंगा महानदी के प्रतिस्रोत प्रवाह में प्रवेश कर, वहाँ स्थित रहकर प्रतिस्खलित हो जाता है।

इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध उदगावर्त अथवा उदक बिन्दु में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित वे स्कंध पुद्गल विनष्ट नहीं होते हैं।

कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध उदगावर्त अथवा उदग बिन्दु में प्रवेश कर सकता है परन्तु तत्र स्थित रहकर वह विनष्ट नहीं होता है तथा कोई एक अनंतप्रदेशी स्कंध उदगावर्त अथवा उदग बिन्दु में प्रवेश कर, वहाँ स्थित रहकर विनष्ट हो जाता है।

टीकाकार ने कहा है—जो अनंतप्रदेशी स्कंध तथाविध बादर परिणाम वाला होता है, वह छेदन-भेदन को प्राप्त होता है और जो अनंतप्रदेशी तथाविध सूक्ष्म परिणाम वाला होता है वह छेदन-भेदन को प्राप्त नहीं होता है।

·५१·८ स्कंध पुद्गल का अस्तिकायत्व

(पाठ के लिए देखो—क्रमांक ·३१·८)

स्कंध पुद्गल बहुप्रदेशी होते हैं अतः स्कंध पुद्गल अस्तिकाय होते हैं।

·५१·९ स्कंध पुद्गल के वर्ण-रस-स्पर्श

(क) दुपएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने पुच्छा। गोयमा ! सिय एगवन्ने, सिय दुवन्ने, सिय एगगंधे, सिय दुगंधे, सिय एगरसे, सिय दुरसे, सिय दुफासे, सिय तिफासे, सिय चउफासे पन्नत्ते। एवं तिपएसिए वि, नवरं सिय एगवन्ने, सिय दुवन्ने, सिय तिवन्ने। एवं रसेसु वि, सेसं जहा दुपएसियस्स। एवं चउपएसिए वि, नवरं सिय एगवन्ने, जाव सिय चउवन्ने। एवं रसेसु वि, सेसं तं चेव। एवं पंचपएसिए वि, नवरं सिय एगवन्ने, जाव सिय पंचवन्ने, एवं रसेसु वि, गंधफासा तहेव।

जहा पंचपएसिओ एवं जाव—असंखेज्जपएसिओ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुहुमपरिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कइवन्ने ? जहा पंच-पएसिए तहेव निरवसेसं ।

बादरपरिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कइवन्ने पुच्छा। गोयमा ! सिय एगवन्ने, जाव सिय पंचवन्ने, सिय एगगंधे, सिय दुगंधे, सिय एगरसे, जाव-सिय पंचरसे, सिय चउफासे, जाव सिय अट्ठफासे पन्नत्ते।

—भग० श १८ । उ ६ । सू ६ से ९ । पृ० ७७२

·५१ ९ स्कंध पुद्गल में वर्ण-रस-स्पर्श

(ख) दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने० ? एवं जहा अट्ठारसमसए छट्ठुद्देसए जाव सिय चउफासे पन्नत्त। जइ एगवन्ने सिय कालए जाव सिय सुक्किल्लए, जइ दुवन्ने सिय कालए य नीलए य १, सिय कालए य लोहितए य २, सिय कालए य हालिद्दए य ३, सिय कालए य सुक्किल्लए य ४, सिय नीलए य लोहियए य ५, सिय नीलए य हालिद्दए य ६, सिय नीलए य सुक्किल्लए य ७, सिय लोहियए य हालिद्दए य ८, सिय लोहियए य सुक्किलए य ९, सिय हालिद्दए य सुक्किल्लए य १०, एवं एए दुयासंजोगे दस भंगा। जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे, सिय दुब्भिगंधे य। जइ दुगंधे सुब्भि-गंधे य दुब्भिगंधे य, रसेसु जहा वन्नेसु, जइ दुफासे सीए य निद्धे य, एवं जहेव परमाणुपोग्गले ४, जइ तिफासे सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १, सव्वे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे २, सव्वे निद्धे देसे सीए देसे उसिणे ३, सव्वे लुक्खे देसे सीए देसे उसिण ४, जइ चउफासे ? देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १, एए नव भंगा फासेसु।

तिपएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने० जहा अट्ठारसमसए छट्ठुद्दसे जाव चउफासे प०, जइ एगवन्ने सिय कालए जाव सुक्किल्लए ५, जइ दुवन्ने ? सिय कालए य सिय नीलए य १, सिय कालए य नीलगा य २, सिय कालगा य नीलए य ३, सिय कालए य लोहियए य १, सिय कालए य लोहियगा य २, सिय कालगा य लोहियए ३, एवं हालिद्दएण वि समं भंगा ३, एवं सुक्किल्लएण वि समं ३, सिय नीलए य लोहियए य एत्थं पि भंगा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३, एवं हालिद्दएणवि समं भंगा ३, एवं सुक्किल्लएणवि समं भंगा ३, सिय लोहियए य हालिद्दए य भङ्गा ३, एवं सुक्किल्लएणवि समं भंगा ३, सिय हालिद्दए य सुक्किल्लए य भंगा ३, एवं सव्वे ते दस दुयासंजोगा भंगा तीसं भवंति, जइ तिवन्ने ? सिय कालए य नीलए य लोहियए य १, सिय कालए य नीलए य हालिद्दए य २, सिय कालए य नीलए य सुक्किल्लए य ३, सिय कालए य लोहियए य हालिद्दए य ४, सिय कालए य लोहियए य सुक्किल्लए य ५, सिय कालए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ६, सिय नीलए य लोहियए हालिद्दए य ७, सिय नीलए य लोहियए य सुक्किल्लए य ८, सिय नीलए य हालिद्दए सुक्किलए य ९, सिय लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १०, एवं एए दस तियासंजोगा। जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे सिय दुब्भिगंधे, जइ दुगंधे सुब्भिगंधे य दुब्भिगंधे य भंगा ३, रसा जहा वन्ना। जइ दुफासे १, सिय सीए य निद्धे य, एवं जहेव दुपएसियस्स तहेव चत्तारि भंगा। जइ तिफासे सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १, सव्वे सीए देसे निद्धे देसा लुक्खा २, सव्वे सीए देसा निद्धा देसे लुक्खे सव्वे उसिण देसे निद्धे देसे लुक्खे एत्थवि भंगा तिन्नि ६, सव्वे निद्धे देसे सीए देसे उसिण भंगा तिन्नि ९, सव्वे लुक्खे देसे सीए देसे उसिण भंगा तिन्नि एवं १२, जइ चउफासे देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १, देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा २, देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसे लुक्खे ३, देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसा लुक्खा ५, देसे सीए देसा उसिणा देसा निद्धा देसे लुक्खे ६, देसा सीया देसे उसिण देसे निद्धे देसे लुक्खे ७, देसा सीया देसे उसिण देसे निद्धे देसा लुक्खा ८, देसा सीया देसे उसिणे देसा निद्धा देसे लुक्खे ९, एवं एए तिपएसिए फासेसु पणवीसं भंगा।

चउप्पएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने० जहा अट्ठारसमसए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते, जइ एगवन्ने सिय कालए य जाव सुक्किल्लए य ५, जइ दुवन्ने सिय कालए य नीलए य १, सिय कालए य नीलगा य २, सिय कालगा य नीलए य ३, सिय कालगा य नीलगा य ४, सिय कालए य लोहियए य। एत्थवि चत्तारि भंगा ४, सिय कालए य हालिद्दए य ४, सिय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालए य सुक्किल्लए य ४, सिय नीलए य लोहियए य ४, सिय नीलए य हालिद्दए य ४, सिए नीलए य सुक्किलए य ४, सिए लोहियए य हालिद्दए य ४, सिय लोहियए य सुक्किल्लए य ४, सिय हालिद्दए य सुक्किल्लए य ४, एवं एए दस दुयसंजोगा भंगा पुण चत्तालीसं ४०, जइ तिवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य २, सिय काल(ए)गा य नीलगा य लोहियए य ३, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य, एए णं चत्तारि भंगा। एवं कालानीला-हालिद्दएहिं भंगा ४, कालनीलसुक्किल्ल० ४, काललोहियहालिद्द० ४, काललोहियसुक्किल्ल० ४, कालहालिद्दसुक्किल्ल ४, नीललोहिय-हालिद्दगाणं भंगा ४, नीललोहियसुक्किल्ल० ४, नीललोहियसुक्किल्ल० ४, लोहियहालिद्दसुक्किल्लगाणं भंगा ४, एवं एए दसतियासंजोगा एक्केक्के संजोए चत्तारि भंगा, सव्वे ते चत्तालीसं भंगा ४०, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य सुक्किल्लए य २, सिय कालए य नीलए य हालिद्दए सुक्किल्लए य ३, सिय कालए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ४, सिय नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ५, एवमेए चउक्कगसंजोए पंच भंगा, एए सव्वे नउइ भंगा, जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे सिय दुब्भिगंधे, जइ दुगंधे सुब्भिगंधे य दुब्भिगंध य। रसा जहा वन्ना। जइ दुफासे जहेव परमाणुपोग्गले ४, जइ तिफासे सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १, सव्वे सीए देसे निद्धे देसा लुक्खा २, सव्वे सीए देसा निद्धा देसे लुक्खे ३, सव्वे सीए देसा निद्धा देसा लुक्खा ४, सव्वे उसिण देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं भंगा ४, सव्वे निद्धे देसे सीए देसे उसिणं ४, सव्वे लुक्खे देसे सीय देसे उसिणे ४, एए तिफासे सोलस भंगा, जइ चउफासे देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १, देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा २, देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसे लुक्खे ३, देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसा लुक्खा ४, देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ५, देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसा लुक्खा ६, देसे सीए देसा उसिणा देसा निद्धा देसे लुक्खे ७, देसे सीए देसा उसिणा देसा निद्धा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देसा लुक्खा ८, देसा सीया देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ९, एवं एए चउफासे सोलस भंगा भाणियव्वा जाव देसा सीया देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा, सव्वे एए फासेसु छत्तीसं भंगा।

पंचपएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने० जहा अट्ठारसमसए जाव सिय चउफासे प०, जइ वण्णे १, एगवन्नदुवन्ना जहेव चउप्पएसिए, जइ तिवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य २, सिय कालए य नीलगा य लोहियए य ३, सिय कालए य नीलगा य लोहियगा य ४, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य ५, सिय कालगा य नीलए य लोहियगा य ६, सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य ७, सिय कालए न नीलए य हालिद्दए य एत्थवि सत्त भंगा ७, एवं कालगनीलगसुक्किल्लएसु सत्त भंगा ७, कालगलोहियहालिद्दसु ७, कालगलोहियसुक्किल्लेसु ७, कालगहालिद्दसुकिल्लेसु ७, नीलगलोहियहालिद्दसु ७, नीलगलोहियसुक्किल्लेसु सत्त भंगा ७, नीलगहालिद्दसुक्किल्लेसु ७, लोहियहालिद्दसुक्किल्लेसुवि सत्त भंगा ७, एवमेए तियासंजोएणं सत्तरि भंगा, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य २, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य ३, सिय कालए य नीलगा य लोहियगे य हालिद्दगे य ४, सिय कालगा य नीलए य लोहियगे य हालिद्दगे य ५, एए पंच भंगा, सिय कालए य नीलए य लोहियए य सुक्किल्लए य एत्थवि पंच भंगा, एवं कालगनीलगहालिद्दसुक्किल्लएसुवि पंच भंगा, कालगलोहियहालिद्दसुक्किल्लएसुवि पंच भंगा ५, नीलगलोहियहालिद्दसुक्किल्लएसुवि पंच भंगा, एवमेए चउक्कगसंजोएणं पणवीसं भंगा, जइ पंचवन्ने कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किलए य। सव्वमेए एक्कगदुयगतियगचउक्कपंचगसंजोगेणं ईयालं भंगसयं भवइ। गंधा जहा चउप्पएसियस्स। रसा जहा वन्ना। फासा जहा चउप्पएसियस्स।

छप्पएसिए णं भंते ! खंधे कइवन्ने०? एवं जहा पंचपएसिए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते, जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्ना जहा पंचपएसियस्स, जइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य, एवं जहेव पंचपएसियस्स सत्त भंगा जाव सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य ७, सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य ८, एए अट्ठ भङ्गा, एवमेए दस तियासंजोगा एक्केक्कए संजोगे अट्ठ भंगा, एवं सव्वे वि तियगसंजोगे असीइ भंगा, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य २, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य ३, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दगा य ४, सिय कालए य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य ५, सिय कालए य नीलगा य लोहियए य हालिद्दगा य ६, सिय कालए य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य ७, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य ८, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य ९, सिय कालगा य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य १०, सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य ११, एए एक्कारस भंगा, एवमेए पंचचउक्कासंजोगा कायव्वा, एक्केक्कसंजोए एक्कारस भंगा, सव्वे ते चउक्कसंजोगेणं पणपन्नं भंगा, जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २, सिय कालए य नीलए य लोहियगे य हालिद्दगा य सुक्किल्लगे य ३, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ४, सिय कालए य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ५, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ६, एवं एए छब्भंगा भाणियव्वा, एवमेए सव्वे वि एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोगेसु छासीयं भंगसयं भवइ। गंधा जहा पंचपएसियस्स। रसा जहा एयस्सेव वन्ना, फासा जहा चउप्पएसियस्स।

सत्तपएसिए णं भंते! खंधे कइवन्ने० ? जहा पंचपएसिए जाव सिय चउफासे प०, जइ एगवन्ने ? एवं एगवन्नदुवण्णतिवन्ना जहा छप्पएसिस्स, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य २, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य ३, एवमेते चउक्कगसंजोगेणं पन्नरस भंगा भाणियव्वा जाव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य १५, एवमेए पंचचउक्क-संजोगा नेयव्वा, एक्केक्के संजोए पन्नरस भंगा, सव्वमेए पंचसत्तरि भंगा भवंति। जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २, सिय कालए य णीलए लोहियए य हालिद्दगा य सुक्किलए य ३, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य सुक्किलगा य ४, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ५, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लगा य ६, सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य ७, सिय कालए य नीलगा य लोहियए हालिद्दए य सुक्किल्लए य ८, सिय कालए य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य ९, सिय कालगे य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लगे य १०, सिय कालए य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ११, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १२, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य १३, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य सुक्किलए य १४, सिय कालगा य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १५, सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १६, एए सोलस भंगा, एवं सव्वमेए एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोगेणं दो सोलस भंगसया भवंति, गंधा जहा चउप्पएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जहा चउप्पए-सियस्स।

अट्ठपएसिए णं भंते! खंधे० पुच्छा, गोयमा! सिय एगवन्ने जहा सत्तपएसियस्स जाव सिय चउफासे पण्णत्ते। जइ एगवन्ने, एवं एगवन्न-दुवन्नतिवन्ना जहेव सत्तपएसिए, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य २, एवं जहेव सत्तपएसिए जाव सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगे य १५, सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगा य १६, एए सोलस भंगा, एवमेए पंच चउक्क-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संजोगा, एवमेए असीइ भंगा ८०, जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २, एवं एएणं कमेणं भंगा चा (उच्चा) रेयव्वा जाव सिय कालए य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य १५, एसो पन्नरसमो भंगो, सिय कालगा य नीलगे य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १६, सिय कालगा य नीलगे य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य १७, सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य सुक्किल्लगे य १८, सिय कालगा य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दगा य सुक्किलगा य १९, सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किलए य २०, सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २१, सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लगे य २२, सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य २३, सिय कालगा य नीलगा य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २४, सिय कालगा य नीलगा य लोहियगे, य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य २५, सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य २६, एए पंचसंजोएणं छव्वीसं भंगा भवंति, एवमेव सपुव्वावरेणं एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोगेहिं दो एक्कतीसं भंगसया भवंति, गंधा जहा सत्तपएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जहा चउप्पएसियस्स।

नवपएसियस्स पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने, जहेव अट्ठपएसिए जाव सिय चउफासे प०, जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्नतिवन्नचउवन्ना जहेव अट्ठ-पएसियस्स, जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १, सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २, एवं परिवाडीए एक्कतीसं भंगा भाणियव्वा जाव सिय कालगा य णीलगा य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य ३१, एए एकत्तीसं भंगा। एवं एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोगेहिं दो छत्तीसा भंगसया भवंति, गंधा जहा अट्ठपएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जहा चउपएसियस्स।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दसपएसिए णं भंते ! खंधे० पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने जहा नवपएसिए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते, जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्नतिवन्न-चउवन्ना जहेव नवपएसियस्स, पंचवन्नेवि तहेव नवरं बत्तीसइमो भंगो भन्नइ, एवमेए एक्कदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोएसु दोन्नि सत्ती सं) सा भंगसया भवंति, गंधा जहा नवपएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जहा चउप्पएसियस्स। जहा दसपएसिओ एवं संखेज्जपएसिओ वि, एवं असंखेज्जपएसिओ वि, सुहुमपरिणओ वि अणंतपएसिओ वि एवं चेव।

१—द्विप्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

द्विप्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण और कदाचित् दो वर्ण ; कदाचित् एक गंध और कदाचित् दो गंध ; कदाचित् एक रस और कदाचित् दो रस ; कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श और कदाचित् चार स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष) होते हैं।

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में एक वर्ण होता है तो कदाचित् कृष्णवर्ण यावत् कदाचित् श्वेतवर्ण होता है अर्थात् कदाचित् पाँच वर्णों में से कोई एक वर्ण होता है। (१.५)

यदि द्विप्रदेशी स्कंध दो वर्ण वाला होता है तो (१) कदाचित् काला और नीला-वर्ण वाला होता है, (२) कदाचित् काला और लालवर्ण, (३) कदाचित् काला और पीला वर्ण, (४) कदाचित् काला और श्वेतवर्ण, (५) कदाचित् नीला और लालवर्ण, (६) कदाचित् नीला और पीला वर्ण, (७) कदाचित् नीला और श्वेत वर्ण, (८) कदाचित् लाल और पीला वर्ण, (९) कदाचित् लाल और श्वेत वर्ण, (१०) कदाचित् पीला और श्वेत वर्ण वाला होता है। इस प्रकार द्विक-संयोगी दस भंग होते हैं।

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में एक गंध होती है तो कदाचित् दुर्गंध और कदाचित् सुगंध होती है। (१-२)

यदि द्विप्रदेशी स्कंध दो गंध वाला होता है तो दुर्गंध और सुगंध वाला होता है। (१)

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में एक रस होता है तो —कदाचित् तिक्तरस यावत् कदाचित् मधुररस होता है अर्थात् कदाचित् पाँच रसों में से कोई एक रस होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि द्विप्रदेशी स्कंध दो रस वाला होता है तो (१) कदाचित् तिक्त तथा कटु रस, (२) कदाचित् तिक्त और कषाय रस, (३) कदाचित् तिक्त तथा आम्लरस, (४) कदाचित् तिक्त तथा मधुररस, (५) कदाचित् कटु तथा कषाय रस, (६) कदाचित् कटु तथा आम्लरस, (७) कदाचित् कटु तथा मधुररस, (८) कदाचित् कषाय तथा आम्लरस, (९) कदाचित् कषाय और मधुररस, (१०) कदाचित् आम्ल और मधुररस वाला होता है। इस प्रकार द्विक संयोगी दस भंग होते हैं।

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में दो स्पर्श हो तो—(१) कदाचित् शीत और स्निग्ध, (२) कदाचित् शीत और रूक्ष, (३) कदाचित् उष्ण और स्निग्ध, (४) कदाचित् उष्ण और रूक्ष स्पर्श होता है।

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में तीन स्पर्श होता हो तो—(१) कदाचित् सर्व शीत स्पर्श, एक अंश रूक्ष और एक अंश स्निग्ध स्पर्श होता है, (२) कदाचित् सर्व उष्ण स्पर्श, एक अंश रूक्ष और एक अंश स्निग्ध स्पर्श वाला होता है, (३ कदाचित् सर्व स्निग्ध स्पर्श, एक अंश शीत और एक अंश उष्ण स्पर्श होता है, (४) कदाचित् सर्व रूक्ष स्पर्श, एक अंश शीत और एक अंश उष्ण स्पर्श होता है।(४)

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में चार स्पर्श हो तो— (१) उसका एक अंश शीत स्पर्श, एक अंश उष्ण स्पर्श, एक अंश स्निग्ध स्पर्श तथा एक अंश रूक्ष स्पर्श वाला होता है। इस प्रकार स्पर्श के नौ भंग होते हैं।

इस प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध में वर्ण के १५, गंध के ३, रस के १५ और स्पर्श के ९, सब मिलकर ४२ भंग होते हैं।

२—तीन प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

तीन प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण ; कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध; कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस ; कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श और कदाचित् चार स्पर्श होते हैं।

यदि तीन प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण हो तो—कदाचित् कृष्णवर्ण यावत् कदाचित् श्वेतवर्ण होता है अर्थात् कदाचित् पाँच वर्णों में से कोई एक वर्ण होता है। [१ ५]

यदि तीन प्रदेशी स्कंध में दो वर्ण हो तो—(१) कदाचित् उसका एक अंश काला और एक अंश नीला वर्ण वाला होता है, (२) कदाचित् एक अंश काला और दो अंश नीले वर्ण वाले होते हैं, (३) कदाचित् दो अंश काले वर्ण वाले और एक अंश नीला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्ण वाला होता है, (४) कदाचित् एक अंश काला वर्ण तथा एक अंश लाल वर्ण वाला होता है, (५) कदाचित् एक अंश काला और दो अंश लाल वर्ण वाले होते हैं, (६) कदाचित् दो अंश काले वर्ण वाले और एक अंश लाल वर्ण वाला होता है।

इसी प्रकार काले वर्ण के पीले वर्ण के साथ तीन भंग जानना चाहिए। [३ भंग]

इसी प्रकार काले वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ तीन भंग जानना चाहिए। [३ भंग]

इसी प्रकार नीले वर्ण के लाल वर्ण के साथ, नीले वर्ण के पीले वर्ण के साथ; नीले वर्ण के पीले शुक्ल वर्ण के साथ तीन-तीन भंग जानना चाहिए। [३ + ३ + ३ = ९ भंग]

इसी प्रकार लाल वर्ण के पीले वर्ण के साथ, लाल वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ तीन-तीन भंग जानना चाहिए। [३ + ३ = ६ भंग]

इसी प्रकार पीले वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ तीन भंग जानना चाहिए। [३ भंग]

ये सब मिलकर द्विक-संयोगी ३० भंग होते हैं।

यदि तीन प्रदेशी स्कंध में तीन वर्ण हो तो—

(१) कदाचित् काला, नीला और लाल वर्ण होता है।
(२) कदाचित् काला, नीला और पीला वर्ण होता है।
(३) कदाचित् काला, नीला और शुक्ल वर्ण होता है।
(४) कदाचित् काला-रक्त और पीला वर्ण होता है।
(५) कदाचित् काला रक्त और शुक्ल वर्ण होता है।
(६) कदाचित् काला, पीला और शुक्ल वर्ण होता है।
(७) कदाचित् नीला, रक्त और पीला वर्ण होता है।
(८) कदाचित् नीला, रक्त और शुक्ल वर्ण होता है।
(९) कदाचित् नीला, पीला और शुक्ल वर्ण होता है।
(१०) कदाचित् लाल, पीला और शुक्ल वर्ण होता है।

इस प्रकार त्रिकसंयोगी दस भंग होते हैं।

यदि तीन प्रदेशी स्कंध में एक गंध हो तो कदाचित् दुर्गंध और कदाचित् सुगंध होती है। [१-२]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि चार प्रदेशी स्कंध में दो गंध हो तो—(१) कदाचित् एक देश दुर्गंध तथा एक देश सुगंध होती है, (२) कदाचित् एक देश दुर्गंध तथा अनेक देश सुगंध होती है और (३) कदाचित् अनेक देश दुर्गंध तथा एक देश सुगंध होती है।

इस प्रकार गंध के एक संयोगी २ भंग तथा द्विकसंयोगी ३ भंग कुल ६ भंग होते हैं।

यदि द्विप्रदेशी स्कंध में दो स्पर्श हो तो—(१) कदाचित् शीत और स्निग्ध, (२) कदाचित् शीत और रूक्ष, (३) कदाचित् उष्ण और स्निग्ध और (४) कदाचित् उष्ण और रूक्ष स्पर्श होता है।

यदि तीन प्रदेशी स्कंध में तीन स्पर्श हो तो—(१) सर्व शीत, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है; (२) अथवा—सर्व शीत, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष होते हैं; (३) अथवा—सर्व शीत, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होता है; (४) अथवा—सर्व उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होता है; (५) अथवा—सर्व उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष होते हैं, (६) अथवा—सर्स उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होता है, (७) अथवा—सर्व स्निग्ध, एक देश शीत और एक देश उष्ण होता है, (८) अथवा—सर्व स्निग्ध, एक अंश शीत और अनेक अंश उष्ण होते हैं, (९) अथवा—सर्व स्निग्ध, अनेक अंश शीत और एक अंश उष्ण स्पर्श होता है, (१०) अथवा सर्व रूक्ष, अनेक अंश शीत और एक अंश उष्ण होता है, (११) अथवा—सर्व रूक्ष, एक अंश शीत और अनेक अंश उष्ण होते हैं, (१२) अथवा—सर्व रूक्ष, अनेक अंश शीत और एक अंश उष्ण स्पर्श होता है।

यदि तीन प्रदेशी स्कंध में चार स्पर्श हो तो—(१) एक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (२) अथवा—एक अंश शीत, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (३) अथवा—एक अंश शीत, एक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (४) अथवा—एक अंश शीत, अनेक उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (५) अथवा—एक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष होता है, (६) अथवा एक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होता है, (७) अनेक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होता है, (८) अथवा—अनेक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष होते हैं. (९) अथवा—अनेक अंश शीत, एक उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध में स्पर्श के कुल २५ (४ + १२ + ९ = २५ भंग) भंग होते हैं ।

इस प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध में वर्ण के ४५, गंध के ५, रस के ४५ और स्पर्श के २५ —ये सब मिलकर १२० भंग होते हैं ।

३—चार प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

चार प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श और कदाचित् चार स्पर्श होते हैं ।

यदि चार प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण हो तो —कदाचित् कृष्णवर्ण यावत् कदाचित् शुक्लवर्ण होता है अर्थात् कदाचित् पांच वर्णों में से कोई एक वर्ण होता है । [१-५]

यदि चार प्रदेशी स्कंध में दो वर्ण हो तो— (१) कदाचित् एक अंश काला और एक अंश नीला वर्ण वाला होता है, (२) कदाचित् एक अंश काला और दो अंश नीला वर्ण होता है, (३) कदाचित् दो अंश काला और एक अंश नीला वर्ण होता है, (४) कदाचित् दो अंश काला और दो अंश नीला वर्ण होता है, (५) कदाचित् एक अंश काला और एक अंश लाल वर्ण वाला होता है, (६) कदाचित् एक अंश काला और दो अंश लाल वर्ण वाला होता है, (७) कदाचित् दो अंश काला और एक अंश लाल वर्ण होता है, (८) कदाचित् दो अंश काला और दो अंश लाल वर्ण वाला होता है । [८ भंग]

इसी प्रकार काले वर्ण के पीले वर्ण के साथ; काले वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ; नीले वर्ण के लाल वर्ण के साथ; नीले वर्ण के पीले वर्ण के साथ; नीले वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ; लाल वर्ण के पीले वर्ण के साथ, लाल वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ तथा पीले वर्ण के शुक्ल वर्ण के साथ चार-चार भग जानना चाहिए । [४ × ८ = ३२ भंग]

इस प्रकार इन दस द्विक संयोग के ४० भंग होते हैं ।

यदि चार प्रदेशी स्कंध में तीन वर्ण हो तो—(१) कदाचित् काला, नीला और लाल वर्ण होता है, (२) कदाचित् एक अंश काला, एक अंश नीला और अनेक अंश लाल वर्ण होता है, (३) कदाचित् एक अंश काला, अनेक अंश नीला, एक अंश लाल वर्ण होता है, (४) कदाचित् अनेक अंश काला, एक नीला और एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंश लाल वर्ण होता है। इस प्रकार एक त्रिक संयोग के चार भंग होते हैं। (१ के ४ भंग)।

(२) इस प्रकार कदाचित् काला, नीला और पीला वर्ण के चार भंग।
(३) काला, नीला और श्वेत वर्ण के चार भंग।
(४) काला, लाल और पीला वर्ण के चार भंग।
(५) काला, लाल और श्वेत वर्ण के चार भग।
(६) काला, पीला और श्वेत वर्ण के चार भंग।
(७) नीला, लाल और पीला वर्ण के चार भंग।
(८) नीला, लाल और श्वेत वर्ण के चार भंग।
(९) नीला, पीला और श्वेत वर्ण के चार भंग।
(१०) और कदाचित् लाल, पीला, श्वेत वर्ण के चार भंग जानना चाहिए।

इस प्रकार दस त्रिक संयोग होते हैं और एक-एक त्रिक संयोग के चार-चार भंग होते हैं। ये सब मिल कर ४० भंग होते हैं।

यदि चार प्रदेशी स्कंध में चार वर्ण हो तो—(१) कदाचित् काला, नीला, लाल और पीला वर्ण होता है, (२) कदाचित् काला, नीला, लाल और श्वेत वर्ण होता है, (३) कदाचित् काला, नीला, पीला और श्वेत वर्ण होता है, (४) कदाचित् काला, लाल, पीला और श्वेत वर्ण होता है, (५) कदाचित् नीला, लाल, पीला और श्वेत वर्ण होता है।

इस प्रकार चतुःसंयोग के पाँच भंग होते हैं— सब मिलकर वर्ण सम्बन्धी ९० [५ + ४० + ४० + ५ = ९०] भंग होते हैं।

यदि चार प्रदेशी स्कंध में एक गंध हो तो कदाचित् दुर्गन्ध और कदाचित् सुगन्ध होती है।

यदि चार प्रदेशी स्कंध में दो गंध हो तो (१) कदाचित् एक अंश दुर्गन्ध तथा एक अंश सुगन्ध होती है, (२) कदाचित् एक अंश दुर्गन्ध तथा अनेक अंश सुगन्ध होती है, (३) कदाचित् अनेक अंश दुर्गन्ध तथा एक अंश सुगन्ध होती है और (४) कदाचित् अनेक अंश दुर्गन्ध तथा अनेक अंश सुगन्ध होती है।

इस प्रकार गंध के असंयोगी २ भंग तथा द्विकसंयोगी ४ भंग कुल ६ भंग होते हैं। जिस प्रकार वर्ण के ९० भंग कहे गये हैं, उसी प्रकार रस के ९० भंग कहने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि चार प्रदेशी स्कंध में दो स्पर्श हो तो परमाणु पुद्गल की तरह—(१) कदाचित् शीत और स्निग्ध, (२) कदाचित् शीत और रूक्ष, (३) कदाचित् उष्ण और स्निग्ध और (४) कदाचित् कदाचित् उष्ण और रूक्ष स्पर्श होता है।

यदि चार प्रदेशी स्कन्ध में तीन स्पर्श हो तो—(१) सर्व शीत, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है ; (२) अथवा सर्व शीत, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष होते हैं ; (३) अथवा सर्व शीत, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है ; (४) अथवा सर्व शीत, अनेक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है। (४ भंग)।

(५) अथवा सर्व उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है। (६) अथवा सर्व उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है। (७) अथवा सर्व उष्ण अनेक अश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है। (८) अथवा सर्व उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है।

इसी प्रकार सर्व स्निग्ध, एक अंश शीत और एक अंश उष्ण के चार भंग और सर्व रूक्ष, एक अंश शीत और एक अंश उष्ण के चार भंग होते हैं।

इस प्रकार तीन स्पर्श के सब मिल कर १६ भंग होते हैं।

यदि चार प्रदेशी स्कंध में चार स्पर्श हो तो—(१) एक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (२) अथवा एक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (३) अथवा एक अंश शीत, एक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (४) अथवा एक अंश शीत, एक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (५) अथवा एक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (६) अथवा एक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (७) अथवा एक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष होता है, (८) अथवा एक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष होता है, (९) अथवा अनेक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (१०) अथवा अनेक अंश शीत, एक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (११) अथवा अनेक अंश शीत, एक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (१२) अथवा अनेक अंश शीत, एक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है, (१३) अथवा अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (१४) अथवा अनेक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, एक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (१५) अथवा—अनेक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण, अनेक अंश स्निग्ध और एक अंश रूक्ष स्पर्श होता है, (१६) अथवा—अनेक अंश शीत, अनेक अंश उष्ण अनेक अंश स्निग्ध और अनेक अंश रूक्ष स्पर्श होता है।

इस प्रकार चार स्पर्श के सब मिल कर १६ भंग होते हैं।

ये सब मिलकर द्विकसंयोगी ४, त्रिकसंयोगी १६ और चतुःसंयोगी १६—इस प्रकार स्पर्श सम्बन्धी ३६ भंग होते हैं।

नोट—चतुष्प्रदेशी स्कंध में वर्ण के ९० भंग, गंध के ६ भंग, रस के ९० भंग और स्पर्श के ३६ भंग—ये सब मिलकर २२२ भंग होते हैं।

पाँच प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

पाँच प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श और कदाचित् चार स्पर्श होते हैं।

१—यदि पाँच प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण हो तो कदाचित् कृष्णवर्ण यावत् कदाचित् शुक्लवर्ण होता है अर्थात् कदाचित् पाँच वर्णों में से कोई एक वर्ण होता है [५ भंग]

२—जैसा चार प्रदेशी स्कंध में दो वर्ण के नियम का वर्णन किया है वैसे ही पाँच प्रदेशी स्कंध में दो वर्ण के नियम का वर्णन करना चाहिए। [४० भंग]

३—यदि पाँच प्रदेशी स्कंध में तीन वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक अंश काला, एक देश नीला और एक देश लाल वर्ण होता है, (२) कदाचित् एक अंश काला, एक अंश नीला और अनेक अंश लाल वर्ण होता है, (३) कदाचित् एक अंश काला, अनेक अंश नीला और एक अंश लाल वर्ण होता है, (४) कदाचित् एक अंश काला, अनेक अंश नीला और अनेक अंश लाल वर्ण होता है, (५) कदाचित् अनेक अंश काला, एक अंश नीला और एक अंश लाल वर्ण होता है, (६) कदाचित् अनेक अंश काला, एक अंश नीला और अनेक अंश लाल वर्ण होता है, (७) कदाचित् अनेक अंश काला, अनेक अंश नीला और एक अंश लाल वर्ण होता है। [७ भंग]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार कदाचित् काला, नीला और पीला वर्ण के सात भंग, होते हैं। [७ भंग]

अथवा—काला, नीला और श्वेत वर्ण के सात भंग होते हैं [७ भंग]

अथवा—काला, लाल और पीला वर्ण के सात भंग होते है (७ भंग) अथवा काला, लाल और शुक्ल वर्ण के सात भंग होते हैं। [७ भंग]

अथवा —काला, पीला और शुक्लवर्ण के सात भंग होते हैं। [७ भंग]

अथवा—नीला, लाल और पीला वर्ण के सात भंग होते हैं। [७ भंग]

अथवा—नीला, लाल और शुक्ल वर्ण के सात भंग होते हैं। [७ भंग]

अथवा—नीला, पीला और शुक्लवर्ण के सात भंग होते। (७ भंग) तथा लाल पीला और शुक्लवर्ण के भी सात भंग होते हैं। [७ भंग]

इस प्रकार दस त्रिक संयोग के सात-सात भंग होने से कुल ७० भंग होते हैं।

यदि पाँच प्रदेशी स्कंध में चार वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक अंश काला, नीला, लाल और पीला वर्ण होता है, (२) कदाचित् एक अंश काला, एक अंश नीला, एक अंश लाल और अनेक अंश पीला होता है, (३) कदाचित् एक अंश काला, एक अंश नीला, अनेक अंश लाल और एक अंश पीला होता है, (४) कदाचित् एक अंश काला, अनेक अंश नीला, एक अंश लाल और एक अंश पीला वर्ण होता है, (५) कदाचित् अनेक अंश काला, एक अंश नीला, एक अंश लाल और एक अंश पीला वर्ण होता है—इस प्रकार चतुःसंयोगी पाँच भंग होते हैं। [५ भंग]

इसी प्रकार कदाचित् एक देश काला, नीला, लाल और शुक्ल वर्ण के पाँच भंग होते हैं। [५ भंग]

इसी प्रकार काला, नीला, पीला और शुक्ल वर्ण के भी पाँच भंग होते हैं। [५ भंग]

इसी प्रकार काला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण के भी पाँच भंग होते हैं। [५ भंग]

इसी प्रकार नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण के भी पाँच भंग होते हैं। [५ भंग]

इस प्रकार चतुःसंयोगी २५ भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि पाँच प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण हो तो काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण होता है ।

इसी प्रकार एक संयोगी (असंयोगी) ५, द्विकसंयोगी ४०, त्रिकसंयोगी ७०, चतुःसंयोगो २५, और पंचसंयोगी १ भंग—इस प्रकार सब मिलकर वर्ण के १४१ भंग होते हैं ।

यदि पाँच प्रदेशी स्कंध में एक गंध हो तो कदाचित् दुर्गंध तथा कदाचित् सुगंध होती है ।

यदि पाँच प्रदेशी स्कंध में दो गंध हो तो—(१) कदाचित् एक अंश दुर्गंध तथा एक अंश सुगंध होती है, (२) कदाचित् एक अंश दुर्गंध तथा अनेक अंश सुगंध होती होती है, (३) कदाचित् अनेक अंश दुर्गंध तथा एक अंश सुगंध होती है और (४) कदाचित् अनेक अंश दुर्गंध तथा अनेक अंश सुगंध होती है ।

इस प्रकार गंध के ६ भंग होते हैं ।

जिस प्रकार पाँच प्रदेशी स्कंध में वर्ण की अपेक्षा [५ + ४० + ७० + २५ + १ = १४१] १४१ भगों की विवेचन किया गया है वैसे ही पांच प्रदेशी स्कंध में रस की अपेक्षा १४१ भगों को विवेचन करना चाहिए ।

जिस प्रकार चार प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा [द्विकसंयोगी ४ भंग, त्रिकसंयोगी १६ भंग और चतुःसंयोगी १६ भंग = ३६ भंग] ३६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही पाँच प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का विवेचन करना चाहिए ।

पाँच प्रदेशी स्कंध के विषय में वर्ण के १४१, गंध के ६, रस के १४१ और स्पर्श के ३६ । ये कुल मिलाकर ३२४ भंग होते हैं ।

५१·९ छः प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

छः प्रदेशी स्कंध में भी कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श और कदाचित् चार स्पर्श होते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१—यदि छः प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण हो तो कदाचित् कृष्ण वर्ण यावत् कदाचित् शुक्ल वर्ण होता है अर्थात् कदाचित् पाँच वर्णों में से कोई एक वर्ण होता है। [५ भग]

२—जैसे पाँच प्रदेशी स्कंध में दो वर्ण के ४० भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही छः प्रदेशी स्कंध में दो वर्ण के ४० भंगों का विवेचन करना चाहिए।

३—यदी छः प्रदेशी स्कंध में तीन वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला और एक देश लाल वर्ण होता है, (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला और अनेक देश लाल वर्ण होता है, (३) एक देश काला, अनेक देश नीला और एक देश लाल वर्ण होता है, (४) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला और अनेक देश लाल वर्ण होता है, (५) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला और एक देश लाल वर्ण होता है, (६) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला और अनेक देश लाल वर्ण होता है, (७) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला और एक देश लाल वर्ण होता है तथा (८) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला और अनेक देश लाल वर्ण होता है।

इस प्रकार त्रिकसंयोग के ८ भंग होते हैं।

इस प्रकार कदाचित् काला, नीला, पीला वर्ण के ८ भंग ; अथवा—काला, नीला, श्वेतवर्ण के ८ भंग ; अथवा काला, लाल और पीला वर्ण के ८ भग, अथवा काला, लाल और शुक्ल वर्ण के ८ भंग अथवा काला, पीला और शुक्ल वर्ण के ८ भंग, अथवा नीला, लाल, पीला वर्ण के ८ भग, अथवा नीला, लाल, शुक्ल वर्ण के ८ भंग, अथवा नीला, पीला, शुक्ल वर्ण के ८ भंग, अथवा लाल, पीला, शुक्ल वर्ण के ८ भंग होते हैं।

इस प्रकार दस त्रिकसंयोगों के ८० भंग होते हैं।

यदि छः प्रदेशी स्कन्ध में चार वर्ण हो तो (१) कदाचित् एक देश काला, नीला, लाल और पीला वर्ण होता है। (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल तथा अनेक देश पीला वर्ण होता है। (३) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (४) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला वर्ण होता है। (५) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (६) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

नीला, एक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है। (७) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल तथा एक देश पीला वर्ण होता है। (८) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल और एक देश वर्ण होता है। (९) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है। (१०) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (११) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है।

इस प्रकार चतुःसंयोगी ग्यारह भंग होते हैं।

इसी प्रकार कदाचित् काला, नीला, लाल और शुक्ल वर्ण के ग्यारह भंग ; काला, नीला, पीला और शुक्ल वर्ण के ग्यारह भंग ; काला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण के ग्यारह भंग ; नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण के ग्यारह भंग होते हैं।

इस प्रकार पाँच चतुःसंयोग जानने चाहिए। प्रत्येक चतुःसंयोग के ग्यारह-ग्यारह भंग होने से सब मिलकर ५५ भंग होते हैं।

यदि छः प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण हो तो (१) कदाचित् एक देश काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण होता है। (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (३) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (४) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला अनेक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (५) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (६) कदाचित अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। इस प्रकार छः भंग होते हैं।

इस प्रकार असंयोगी ५, द्विकसंयोगी ४०, त्रिक संयोगी ८०, चतुःसंयोगी ५५, पंचसंयोगी ६ सब मिलकर वर्ण सम्बन्धी १८६ भंग होते हैं।

जैसा पाँच प्रदेशी स्कंध में गंध का विवेचन किया है वैसे ही छः प्रदेशी स्कंध में गंध का विवेचन करना चाहिए। अर्थात्—यदि छः प्रदेशी स्कध में एक गंध हो तो (१) कदाचित् दुर्गन्ध ; (२) कदाचित् सुगन्ध होती है। यदि दो गंध हो तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) कदाचित् एक देश दुर्गन्ध और एक देश सुगन्ध होती है ; (२) कदाचित् एक देश दुर्गन्ध और अनेक देश सुगन्ध होती है ; (३) कदाचित् अनेक देश दुर्गन्ध और एक देश सुगन्ध होती है ; (४) कदाचित् अनेक देश दुगन्ध तथा अनेक देश सुगन्ध होती है। इस प्रकार गंध के असंयोगी २ भंग तथा द्विकसंयोगी ४ भंग=कुल ६ भंग होते हैं।

जिस प्रकार छः प्रदेशी स्कन्ध में वर्ण का विवेचन किया गया है [एक संयोगी ५ भग, द्विकसयोगी ४०, त्रिकसंयोगी ८०, चतुःसंयोगी ५५, पंचसंयोगी ६ भंग—सर्व मिलकर १८६ भंग] उसी प्रकार छः प्रदेशी स्कन्ध में रस का विवेचन करना चाहिए अर्थात् छः प्रदेशी स्कन्ध में एक संयोगी ५ भंग, द्विकसंयोगी ४० भंग, त्रिक सयोगी ८० भंग, चतुःसंयोगी ५५ भंग, पंचसंयोगी ६ भंग=सर्व मिल कर रस सम्बन्धी १८६ भंग होते हैं।

जिस प्रकार चतुष्प्रदेशी स्कन्ध में स्पर्श का विवेचन किया गया है उसी प्रकार छः प्रदेशी स्कन्ध में स्पर्श का विवेचन करना चाहिए अर्थात् छः प्रदेशी स्कन्ध में द्विकसंयोगी ४, त्रिकसंयोगी १६, चतुष्संयोगी १६ भंग—सब मिलकर स्पर्श सम्बन्धी ३६ भंग होते हैं।

इस प्रकार छः प्रदेशी स्कन्ध के विषय में वर्ण के १८६ ; गंध के ६, रस के १८६ और स्पर्श के ३६ —ये सब मिलकर ४१४ भंग होते हैं।

सात प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

सात प्रदेशी स्कंध में भी कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण. कदाचित् पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श, कदाचित् चार स्पर्श होते हैं।

१ जैसे छः प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का तथा तीन वर्ण के ८० भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के पाँच भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का तथा तीन वर्ण के ८० भंगों का विवेचन करना चाहिए।

२—यदि सात प्रदेशी स्कंध में चार वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला वर्ण होता है। (२) कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है। (३) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (४) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है। (५) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (६) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है। (७) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल तथा एक देश पीला वर्ण होता है। (८) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (९) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है। (१०) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला वर्ण होता है। (११) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है। (१२) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला वर्ण होता है। १३) अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला वर्ण होता है। (१४) अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता। (१५) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है।

इस प्रकार चतुःसंयोगी पन्द्रह भंग होते हैं।

इसी प्रकार कदाचित् काला, नीला, लाल व शुक्ल वर्ण के पन्द्रह भंग; काला, नीला, पीला, शुक्ल वर्ण के पन्द्रह भंग; काला, लाल, पीला, शुक्ल वर्ण के पन्द्रह भंग; नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण के पन्द्रह भंग होते हैं।

इस प्रकार पाँच चतुःसंयोगी भंग होते हैं। एक-एक चतुःसंयोग में पन्द्रह-पन्द्रह भंग होते हैं। सब मिलकर ७५ भंग होते हैं।

यदि सात प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक देश काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण होता है। (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला तथा अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (३) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (४) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (५) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (६) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक देश पीला और अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (७) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला तथा एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (८) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (९) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला तथा अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (१०) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (११) कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (१२) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला. एक देश लाल, एक देश पीला और एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (१३) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। (१४) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (१५) अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला, एक देश शुक्ल वर्ण होता है। (१६) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है।

इस प्रकार सोलह भंग होते हैं।—असंयोगी के पाँच भंग, द्विकसंयोगी के ४० भंग, त्रिकसंयोगी के ८० भंग, चतु:संयोगी के ७५ और पाँच संयोगी के १६ भंग होते हैं। ये सब मिलाकर २१६ भंग होते हैं।

जिस प्रकार चतुष्प्रदेशी स्कंध में गंध के भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में (असंयोगी २ भंग तथा द्विकसंयोगी ४—भंग= कुल मिलकर गंध सम्बन्धी ६ भंग होते हैं।) गंध के भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में वर्ण की अपेक्षा (५+४०+८०+७५+१६=२१६) २१६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही सात प्रदेशी स्कंध में रस की अपेक्षा २१६ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार चतुष्प्रदेशी में स्कंध में स्पर्श के भंगों का विवेचन किया है उसी प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में (द्विकसंयोगी ४, त्रिकसंयोगी १६, चतुष्संयोगी १६ भंग सब मिलकर स्पर्श सम्बन्धी ३६ भंग होते हैं।) स्पर्श के भंगों का विवेचन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में वर्ण के २१६ भंग, गंध के ६ भंग, रस के २१६ भंग और स्पर्श के ३६ भंग—ये सब मिलकर कुल ४७४ भंग होते हैं।

·४ आठ प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

अष्ट प्रदेशी स्कंध में भी कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श, कदाचित् चार स्पर्श होते हैं।

जैसे सात प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का तथा तीन वर्ण के ८० भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार आठ प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का तथा तीन वर्ण के ८० भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जैसे सात प्रदेशी स्कंध में चार वर्ण के १५ भंगों का विवेचन किया है वैसे ही आठ प्रदेशी स्कंध के चार वर्ण के १५ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

यथा—(१) यदि चार वर्ण वाला होता है तो (१) कदाचित् काला, नीला, लाल और पीला वर्ण होता है, (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल तथा अनेक देश पीला वर्ण होता है यावत् (१५) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल और एक देश पीला वर्ण होता है, (१६) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल और अनेक देश पीला वर्ण होता है।

एक चतुःसंयोग में १६ भंग होते हैं। इस प्रकार पाँच चतुःसंयोगी के सोलह-सोलह भंग होने से ८० भंग होते हैं।

यदि आठ प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक देश काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण होता है। (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है।

इस प्रकार अनुक्रम से भंग कहने चाहिए—(१५) यावत् कदाचित् एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है। (१६) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है। (१७) कदाचित् अनेक देश काला,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (१८) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है। (१९) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (२०) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता हैं। (२१) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (२२) कदाचित् अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है। (२३) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है। (२४) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (२५) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है। (२६) कदाचित् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है।

इस प्रकार पांच संयोगी २६ भंग होते हैं। ये सब मिलाकर अर्थात् असंयोगी ५, द्विकसंयोगी ४०, त्रिकसंयोगी ८०, चतुःसंयोगी ८० और पंचसंयोगी २६—ये वर्ण संबंधी २३१ भंग होते हैं।

जिस प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में गंध के भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार आठ प्रदेशी स्कंध में (असंयोगी २ भंग तथा द्विकसंयोगी ४ भंग कुल मिलाकर गंध संबंधी ६ भंग होते हैं।) गंध के भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार आठ प्रदेशी स्कंध में वर्ण की अपेक्षा (५ + ४० + ८० + ८० + २६ = २३१ भंग) २३१ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही आठ प्रदेशी स्कंध में रस की अपेक्षा २३१ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार चतुःप्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा (४ + १६ + १६ = ३६ भंग) ३६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही आठ प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का विवेचन करना चाहिए। अर्थात्—

जिस प्रकार चतुष्प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा (द्विक संयोगी ४, त्रिक संयोगी १६ और चतुःसंयोगी १६ (कुल ३६ भंग) ३६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही आठ प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार आठ प्रदेशी स्कंध में वर्ण के २३१ भंग, गंध के ६ भंग, रस के २३१ भंग और स्पर्श के ३६ भंग—ये सब मिलाकर ५०४ भंग होते हैं।

·५ नव प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

नव प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श, कदाचित् चार स्पर्श होते हैं।

जिस प्रकार आठ प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का, तीन वर्ण के ८० भंगों का, चार वर्ण के ८० भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का, तीन वर्ण के ८० भंगों का तथा चार वर्ण के ८० भंगों का विवेचन करना चाहिए।

यदि नव प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण हो तो—(१) कदाचित् एक देश काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल वर्ण होता है। (२) कदाचित् एक देश काला, एक देश नीला, एक देश लाल, एक देश पीला तथा अनेक देश शुक्ल वर्ण होता है। इस प्रकार क्रमपूर्वक ३१ भंग जानने चाहिए यावत् अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्ल वर्ण होता है।

नोट— आठ प्रदेशी में पाँच वर्ण के २६ भंग जानने चाहिए तथा (२७) एक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (२८) अनेक देश काला, एक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (२९) अनेक देश काला, अनेक देश नीला, एक देश लाल, अनेक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है। (३०) अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, एक देश पीला और अनेक देश शुक्लवर्ण होता है तथा (३१) अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला और एक देश शुक्लवर्ण होता है।

इस प्रकार वर्ण की अपेक्षा असंयोगी ५, द्विकसंयोगी ४०, त्रिकसंयोगी ८०, चतुःसंयोगी ८०, पंचसंयोगी ३१ भंग—सब मिलकर २३६ भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार आठ प्रदेशी स्कंध में गंध के भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में (असंयोगी २ भंग तथा द्विकसंयोगी ४ भंग—कुल मिलाकर गंध सम्बन्धी ६ भंग होते हैं।) गंध के भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में वर्ण की अपेक्षा (५ + ४० + ८० + ८० + ३१ = २३६ भंग) २३६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही नवप्रदेशी स्कंध में रस की अपेक्षा २३६ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार चतु:प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा (४ + १६ + १६ = ३६ भंग) ३६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही नव प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

इस प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में वर्ण के २३६ भंग, गंध के ६ भंग, रस के २३६ भंग तथा स्पर्श के ३६ भग—ये सब मिलाकर ५१४ भंग होते हैं।

·६ दस प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

दस प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् पाँच वर्ण ; कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध ; कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श तथा कदाचित चार स्पर्श होते हैं।

जिस प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का, तीन वर्ण के ८० भंगों का तथा चार वर्ण के ८० भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही दस प्रदेशी स्कंध में एक वर्ण के ५ भंगों का, दो वर्ण के ४० भंगों का, तीन वर्ण के ८० भंगों का तथा चार वर्ण के ८० भंगों का विवेचन जानना चाहिए।

जिस प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण के ३१ भंगों का विवेचन किया गया है। वैसे ही दस प्रदेशी स्कंध में पाँच वर्ण के ३१ भंगों का विवेचन करना चाहिए परन्तु यहाँ ३२ वां भंग (अनेक देश काला, अनेक देश नीला, अनेक देश लाल, अनेक देश पीला, अनेक देश शुक्लवर्ण) अधिक कहना चाहिए।

इस प्रकार दस प्रदेशी स्कंध में (असंयोगी ५ भंग, द्विक संयोगी ४० भंग, त्रिक संयोगी ८० भंग, चतु:संयोगी ८० भंग तथा पंचसंयोगी ३२ भंग = २३७ भंग) सब मिलकर वर्ण के २३७ भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार नव प्रदेशी स्कंध में गंध के भंगों का विवेचन किया गया है उसी प्रकार दस प्रदेशी स्कंध में (असंयोगी २ भग तथा द्विक संयोगी ४ भंग—कुल मिलाकर गंध सम्बन्धी ६ भंग होते हैं।) गंध के भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार दस प्रदेशी स्कंध में वर्ण की अपेक्षा (५+४०+८०+८०+३२=२३७ भंग) २३७ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही दस प्रदेशी स्कंध में रस की अपेक्षा २३७ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

जिस प्रकार चतुःप्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा (४+१६+१६=३६ भंग) ३६ भंगों का विवेचन किया गया है वैसे ही दस प्रदेशी स्कंध में स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का विवेचन करना चाहिए।

इस प्रकार दस प्रदेशी स्कंध में वर्ण के २३७ भंग, गंध के ६ भंग, रस के २३७ भंग तथा स्पर्श के ३६ भंग—ये सब मिलाकर ५१६ भंग होते हैं।

·७ संख्यात प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

·८ असंख्यात प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

·९ सूक्ष्म परिणत अनंत प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

जिस प्रकार दस प्रदेशी स्कंध में वर्ण की अपेक्षा २३७ भंगों का, (५+४०+८०+८०+३२=२३७ भंग) गंध की अपेक्षा ६ भंगों का, (२+४=६ भंग) रस की अपेक्षा २३७ भंगों का, (५+४०+८०+८०+३२=२३७ भंग) तथा स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का, (४+१६+१६=३६ भंग) विवेचन किया गया है वैसे ही संख्यात प्रदेशी स्कंध में, असंख्यात प्रदेशी तथा सूक्ष्म परिणाम वाला अनंत प्रदेशी स्कंध में भी वर्ण की अपेक्षा २३७ भंगों का, (५+४०+८०+८०+३२=२३७ भंग) गंध की अपेक्षा ६ भंगों का, (२+४=६ भंग) रस की अपेक्षा २३७ भंगों का (५+४०+८०+८०+३२=२३७ भंग) तथा स्पर्श की अपेक्षा ३६ भंगों का, (४+१६+१६=३६ भंग) विवेचन करना चाहिए।

संख्यात प्रदेशी स्कंध में, असंख्यात प्रदेशी स्कंध में तथा सूक्ष्म परिणत अनंत प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, कदाचित् दो स्पर्श, कदाचित् तीन स्पर्श तथा कदाचित् चार स्पर्श होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०—बादर परिणामवाले अनंत प्रदेशी स्कंध में वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

बादर परिणामवाले अनंत प्रदेशी स्कंध में कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् तीन वर्ण, कदाचित् चार वर्ण, कदाचित् पाँच वर्ण, कदाचित् एक गंध, कदाचित् दो गंध, कदाचित् एक रस, कदाचित् दो रस, कदाचित् तीन रस, कदाचित् चार रस, कदाचित् पाँच रस, होते हैं। कदाचित् चार स्पर्श, कदाचित् पाँच स्पर्श, कदाचित् छः स्पर्श, कदाचित् सात स्पर्श तथा कदाचित् आठ स्पर्श होते हैं।

नोट—बादर अनंत प्रदेशी स्कंध में मृदु, कर्कश, गुरु और लघु ये चार स्पर्श पाये जाते हैं। ऐसा टीकाकार ने लिखा है, किन्तु आगमानुसार यह कथन उचित नहीं है। बीसवें शतक के पाँचवें उद्देशक के अनुसार—बादर अनंत प्रदेशी स्कंध में चार से लगाकर आठ स्पर्श पाये जाते हैं। चार हो तो मृदु और कर्कश में से कोई एक, गुरु और लघु में ये कोई एक, शीत और उष्ण में से कोई एक और स्निग्ध और रूक्ष में से कोई एक—इस प्रकार चार स्पर्श पाये जाते हैं। पाँच स्पर्श हों तो चार युग्मों में से किसी भी युग्मों के दो और शेष तीन युग्मों में एक-एक इस प्रकार पाँच स्पर्श पाये जाते हैं। छः स्पर्श हों तो दो युग्मों के दो-दो और दो युग्मों में से एक-एक, यों छः स्पर्श पाये जाते हैं। सात स्पर्श हों तो तीन युग्मों में दो-दो और एक युग्म में से एक—ये सात स्पर्श पाये जाते हैं। आठ हों तो चार युग्मों के दो-दो, स्पर्श पाये जाते हैं।

५१·९ बायरपरिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कइवन्ने० ? एवं जहा अट्ठारसमसए जाव सिय अट्ठफासे पन्नत्ते, वन्नगंधरसा जहा दसपएसियस्स, जइ चउफासे सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे सीए सव्वे निद्धे १, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे लुक्खे २, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे उसिणे सव्वे निद्धे ३, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे उसिण सव्वे लुक्खे ४, सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे सीए सव्वे णिद्धे ५, सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे सीए सव्वे लुक्खे ६, सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे उसिणे सव्वे निद्धे ७, सव्वे कक्खड सव्वे लहुए सव्वे उसिणे सव्वे लुक्खे ८, सव्वे मउए सव्वे गुरुए सव्वे सीए सव्वे निद्धे ९, सव्वे मउए सव्वे गुरुए सव्वे सीए सव्वे लुक्खे १०, सव्वे मउए सव्वे गुरुए सव्वे उसिणे सव्वे निद्धे ११, सव्वे मउए सव्वे गुरुए सव्वे उसिणे सव्वे लुक्खे १२, सव्वे मउए सव्वे लहुए सव्वे सीए सव्वे निद्धे १३, सव्वे मउए सव्वे लहुए सव्दे सीए सव्वे लुक्खे १४, सव्वे मउए सव्वे लहुए सव्वे उसिणे सव्वे निद्धे १५, सव्वे मउए सव्वे लहुए सव्वे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसिणे सव्वे लुक्खे १६ । एए सोलस भंगा जइ पंच समाणे सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसा लुक्खा २, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे सीए देसा निद्धा दे(सा)से लुक्खे ३, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे सीए देसा निद्धा देसा लुक्खा ४, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ।४। एवं एए कक्खडेणं सोलस भंगा। सव्वे मउए सव्वे गुरुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, एवं मउएणवि सोलस भंगा, एवं बत्तीसं भंगा। सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए सव्वे निद्धे देसे सीए देसे उसिणे ४, सव्वे कक्खड सव्वे गुरुए सव्वे लुक्खे देसे सीए देसे उसिणे ४, एए बत्तीसं भंगा, सव्वे कखड सव्वे सीए सव्वे निद्धे देसे गुरुए देसे लहुए ४, एत्थवि बत्तीसं भंगा, सव्वे गुरुए सव्वे सीए सव्वे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए ४, एत्थवि बत्तीसं भंगा, एवं सव्वेते पंचफासे अट्ठावीसं भगसयं भवइ।

जइ छप्फासे सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १, सव्वे कक्खडे सव्वे गुरुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा २, एवं जाव सव्वे कक्खड सव्वे गुरुए देसा सीया देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा १६, एए सोलस भंगा। सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे, एत्थवि सोलस भंगा, सव्वे मउए सव्वे गुरुए देसे सीए देसे उसिणे देसे णिद्धे देसे लुक्खे, एत्थवि सोलस भंगा, सव्वे मउए सव्वे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे, एत्थवि सोलस भंगा, एए चउसट्ठि भंगा, सव्वे कक्खडे सव्वे सीए देसे गुरुए देसे लहुए देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं जाव सव्वे मउए सव्वे उसिण देसा गुरुया देसा लहुया देसा णिद्धा देसा लुक्खा एत्थवि चउसट्ठि भंगा, सव्वे कक्खडे सव्वे निद्धे देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे जाव सव्वे मउए सव्वे लुक्खे देसा गुरुया देसा लहुया देसा सीया देसा उसिणा १६, एए चउसट्ठि भंगा, सव्वे गुरुए सव्वे सीए दसे कक्खडे देसे मउए देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं जाव सव्वे लहुए सव्वे उसिणे देसा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कक्खडा देसा निद्धा देसा मउया देसा लुक्खा, एए चउसट्ठि भंगा, सव्वे गुरुए सव्वे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए देसे सीए देसे उसिणे जाव सव्वे लहुए सव्वे लुक्खे देसा कक्खडा देसा मउया देसा सीया देसा उसिणा, एए चउसट्ठि भंगा, सव्वे सीए सव्वे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए जाव सव्वे उसिणे सव्वे लुक्खे देसा कक्खडा देसा मउया देसा गुरुया देसा लहुया, एए चउसट्ठि भंगा, सव्वे ते छप्फासे तिन्नि-चउरासीया भंगसया भवंति ३८४।

जइ सत्तफासे सव्वे कक्खडे देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १, सव्वे कक्खडे देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसा लुक्खा ४, सव्वे कक्खडे देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे दे (स) सा लुक्खा ४, सव्वे कक्खडे देसे गुरुए देसे लहुए देसा सीया दसे उसिणं देसे णिद्धे दसे लुक्खे ४ सव्वे कक्खड देसे गरुए देसे लहुए देसा सीया देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे, सव्वेए सोलस भंगा भाणियव्वा, सव्वे कक्खडे देसे गुरुए देसा लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे, एवं गुरुएणं एगत्तेणं लहुएणं पुहुत्तेणं एएवि सोलह भंगा, सव्वे कक्खडे देसा गुरुया देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एएवि सोलस भंगा भाणियव्वा, सव्वे कक्खडे देसा गुरुया देसा लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे सुक्खे एएवि सोलस भंगा भाणियव्वा, एवमेए चउसट्ठि भंगा कक्खडेण समं, सव्वे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे। एवं मउएणवि समं चउसट्ठि भंगा भाणियव्वा, सव्वे गुरुए देसे कक्खडे देसे मउए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं गुरुएणवि समं चउसट्ठि भंगा कायव्वा, सव्वे लहुए देसे कक्खडे देसे मउए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे, एवं लहुएणवि समं चउसट्ठि भंगा कायव्वा, सव्वे सीए देसे कक्खड देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे निद्धे देसे लुक्खे। एवं सीएणवि समं चउसट्ठि भंगा कायव्वा, सव्वे उसिणे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे निद्धे देसे देसे लुक्खे एवं उसिणेणवि समं चउसट्ठि भंगा कायव्वा, सव्वे निद्धे देसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे। एवं निद्धेणवि समं चउसट्ठि भंगा कायव्वा, सव्वे लुक्खे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे। एव लुक्खेणवि समं चउसट्ठि भंगा कायव्वा जाव सव्वे लुक्खे देसा कक्खडा देसा मउया देसा गुरुया देसा लहुया देसा सीया देसा उसिणा, एवं सत्तफासे पंचबारसुत्तरा भंगसया भवंति।

जइ अट्ठफासे देसे कक्खड देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिण देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, देसे कक्खड देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसा सीया दे(सा)से उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसा सीया देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ४, एए चत्तारि चउक्का सोलस भंगा, देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसा लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे दसे लुक्खे, एवं एए गुरुएणं एगत्तएणं लहुएणं पुहत्तएणं सोलह भंगा कायव्वा, देसे कक्खड दसे मउए देसा गुरुया देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एएवि सोलस भगा कायव्वा, देसे कक्खड दसे मउए देसा गुरुया दसा लहुया दसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे। एएवि सोलस भंगा कायव्वा, सव्वेवि ते चउसट्ठि भंगा कक्खडमउएहिं एगत्तएहिं, ताहे कक्खडेणं एगत्तएणं मउएणं पुहत्तेणं एए ते चउसट्ठि भंगा कायव्वा, ताहे कक्खडेणं पुहत्तएणं मउएणं एगत्तएणं चउसट्ठि भंगा कायव्वा, ताहे एएहिं चेव दोहिंवि पुहुत्तेहिं चउसट्ठि भगा कायव्वा जाव देसा कक्खडा दसा मउया देसा गुरुया देसा लहुया देसा सीया देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा एसो अपच्छिमो भंगो, सव्वेएते अट्ठफासे दो छप्पन्ना भंगसया भवंति। एवं एए बायरपरिणए अणंतपएसिए खंधे सव्वेसु संजोएसु बारस छन्नउया भंगसया भवंति।

—भग० श २० । उ ५ । सू २ से ११ । पृ० ७९३ से ८०३

बादर परिणाम वाला (स्थूल) अनंत प्रदेशी स्कंध के विषय में अठारहवें शतक के छट्ठे उद्देशक के अनुसार कदाचित् यावत् आठ स्पर्श वाला भी कहा गया है— तक जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंत प्रदेशी बादर परिणाम वाले स्कंध के वर्ण, गंध और रस के भंग, दस प्रदेशी स्कंध के समान कहने चाहिए।

यदि वह चार स्पर्श वाला होता है तो—(१) कदाचित् सर्व कर्कश स्पर्श, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध होता है। (२) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व रूक्ष होता है। (३) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध होता है। (४) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष होता है। (५) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध होता है। (६) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व रूक्ष होता है। (७) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध होता है। (८) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष होता है। (९) कदाचित् सर्व मृदु, (कोमल), सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध होता है। (१०) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध होता है। (११) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध होता है। (१२) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व गुरु सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष होता है। (१३) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध होता है। (१४) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व रूक्ष होता है। (१५) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध होता है। (१६) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष होता है।

जब वह पांच स्पर्श वाला होता है तो—(१) सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है। (२) अथवा सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, एक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होता है। (३) अथवा सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, अनेक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है। (४) अथवा सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत अनेक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होता है। अथवा २—कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के पूर्ववत् चार भंग। ३—अथवा सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व शीत, एक देश स्निग्ध और एक रूक्ष के चार भंग। ४—अथवा कदाचित् सर्व कर्कश सर्व लघु, सर्व उष्ण, एक देश, स्निग्ध और एक देश रूक्ष के चार भंग। इस प्रकार कर्कश के साथ सोलह भंग होते हैं। अथवा सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्वशीत, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के पूर्ववत् चार भंग होते हैं। इस प्रकार मृदु के साथ भी कहने चाहिए। ये सोलह भंग हुए। इस प्रकार सर्व मिला कर ३२ भंग होते हैं। अथवा सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व स्निग्ध, एक देश शीत और एक देश उष्ण के सोलह भंग। अथवा सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व रूक्ष, एक देश शीत और एक देश उष्ण के सोलह भंग। ये सब मिलाकर बत्तीस भग होते हैं। अथवा कदाचित् पर्व कर्कश, सर्व शीत,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व स्निग्ध, एक देश गुरु और एक देश लघु पूर्ववत् ३२ भंग। अथवा कदाचित् सर्व गुरु, सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, एक देश मृदु के पूर्ववत् ३२ भंग। इस प्रकार सर्व मिलाकर पांच स्पर्श के १२८ भंग होते हैं।

जब वह छः स्पर्श वाला होता है तो, (१) सर्व कर्कश, सर्व गुरु, एक देश शीत एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध, और एक गुण रूक्ष होता है। (२) कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व गुरु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध, और अनेक देश रूक्ष होता है। इस प्रकार यावत् सर्व कर्कश, सर्व गुरु, अनेक देश शीत, अनेक देश उष्ण, अनेक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष—यह सोलहवां भंग है। इस प्रकार १६ भंग होते हैं। (२) कचाचित् सर्व कर्कश, सर्व लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्विग्ध व एक देश रूक्ष के सोलह भंग।

(३) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व गुरु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के सोलह भंग। (४) कदाचित् सर्व मृदु, सर्व लघु, एक देश शीत, एक दिश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के १६ भंग। ये सब मिलाकर ६४ भंग होते हैं।

अथवा कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व शीत, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है। इस प्रकार यावत् सर्व मृदु, सर्व उष्ण, अनेक देश गुरु, अनेक देश लघु, अनेक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होते हैं। यह चौसठवां भंग है। इस प्रकार इसके भी ६४ भंग होते हैं।

कदाचित् सर्व कर्कश, सर्व स्निग्ध, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत और एक देश उष्ण, होता है। यावत् कदाचित् सर्व मृदु, सर्व रूक्ष, अनेक देश गुरु, अनेक देश लघु, अनेक देश शीत और अनेक देश उष्ण होते हैं। यह चौसठवां भंग है। इस प्रकार यहाँ भी ६४ भंग होते हैं।

कदाचित् सर्व गुरु, सर्व शीत, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है।

इस प्रकार यावत् सर्व लघु, सर्व उष्ण, अनेक देश कर्कश, अनेक देश मृदु, अनेक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होते हैं। यह चौसठवां भंग है। इस प्रकार यहाँ भी ६४ भंग होते हैं।

कदाचित् सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश शीत और एक देश उष्ण होता है। इस प्रकार यावत् कदाचित् सर्व लघु, सर्व रूक्ष, अनेक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देश मृदु, अनेक देश शीत और अनेक देश उष्ण होते हैं। यह चौसठवां भंग है। इस प्रकार यहाँ भी ६४ भंग होते हैं।

कदाचित् सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु और एक देश लघु होता है।

इस प्रकार यावत् कदाचित् सर्व उष्ण, सर्व रूक्ष, अनेक देश कर्कश, अनेक देश मृदु, अनेक देश गुरु और अनेक देश लघु होता है। यह चौसठवां भंग है। इस प्रकार यहां पर भी ६४ भंग होते हैं। ये सब मिलाकर छः स्पर्श सम्बन्धी ३८४ भंग होते हैं।

जब वह सात स्पर्श वाला होता है, तो—(१) सर्व कर्कश, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है। ४-४ कदाचित् सर्व कर्कश एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत एक देश उष्ण, अनेक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होते हैं। (इस प्रकार चार भंग कहने चाहिए)। (२) कदाचित् सर्व कर्कश, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत, अनेक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के चार भंग। (३) कदाचित् सर्व कर्कश, एक देश गुरु, एक देश लघु, अनेक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के चार भंग। (४) कदाचित् सर्व कर्कश, एक देश गुरु, एक देश लघु, अनेक देश शीत, अनेक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के चार भंग। ये सब १६ भंग होते हैं।

(२) कदाचित् सर्व कर्कश, एक देश गुरु, अनेक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है। इस प्रकार 'गुरु' पद को एक वचन में और 'लघु' पद को अनेक (बहु) वचन में रखकर पूर्ववत् सोलह भंग यहां भी कहने चाहिए। (३) कदाचित् सर्व कर्कश, अनेक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के सोलह भंग। (४) कदाचित् सर्व कर्कश, अनेक देश गुरु, अनेक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के १६ भंग। ये ६४ भंग हुए। ये ६४ भंग 'सर्व कर्कश' के साथ बने हैं।

(२) कदाचित् सर्व मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता हैं। इस प्रकार मृदु के साथ भी ६४ भंग होते हैं। (३) कदाचित् सर्व गुरु, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष—इस प्रकार 'गुरु' के साथ भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४ भंग होते हैं। (४) कदाचित् सर्व लघु, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष, इस प्रकार लघु के साथ भी ६४ भंग होते हैं। (५) कदाचित् सर्व शीत, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष, इस प्रकार शीत के साथ भी ६४ भंग कहने चाहिए। (६) कदाचित् सर्व उष्ण, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष—इस प्रकार उष्ण के साथ भी ६४ भंग कहने चाहिए। (७) कदाचित् सर्व स्निग्ध, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत और एक देश उष्ण होता है। इस प्रकार स्निग्ध के साथ भी ६४ भंग कहने चाहिए।

(८) कदाचित् सर्व रूक्ष, एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत और एक देश उष्ण—इस प्रकार रूक्ष के साथ भी ६४ भंग यावत् सर्व रूक्ष, अनेक देश कर्कश, अनेक देश मृदु, अनुक देश गुरु, अनेक देश लघु, अनेक देश शीत और अनेक देश उष्ण होता है। इस प्रकार ये सब मिलाकर सात स्पर्श के ५१२ भंग होते हैं।

जब वह आठ स्पर्श वाला होता है, तो (१) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है। इसके चार भंग कहने चाहिए। (२) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश लघु, एक देश शीत, अनेक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष ये चार भंग। (३) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, अनेक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के चार भंग। (४) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, एक देश लघु, अनेक देश शीत, अनेक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के चार भंग। इस प्रकार चार चतुष्क के १६ भंग होते हैं। (२) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, एक देश गुरु, अनेक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष। इस प्रकार गुरु पद को एक वचन में और 'लघु' पद को बहुवचन में रखकर पूर्ववत् १६ भंग कहने चाहिए।

(३) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, अनेक देश गुरु, एक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के १६ भंग। (४) कदाचित् एक देश कर्कश, एक देश मृदु, अनेक देश गुरु, अनेक देश लघु, एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष के १६ भंग। ये सब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिलाकर ६४ भंग 'कर्कश और मृदु' के एक वचन में रखने से बनते हैं। (२) इन्हीं भंगों में 'कर्कश' को एक वचन में और 'मृदु' को बहुवचन में रखकर पूर्ववत् ६४ भंग कहने चाहिए। (३) 'कर्कश को बहुवचन में और 'मृदु' को एक वचन में रखकर फिर पूर्ववत् ६४ भग कहने चाहिए। (४) कर्कश और मृदु दोनों को बहुवचन में रखकर फिर ६४ भंग कहने चाहिए। यावत् अनेक देश कर्कश, अनेक देश मृदु, अनेक देश गुरु, अनेक देश लघु, अनेक देश शीत, अनेक देश उष्ण, अनेक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होते हैं। यह अन्तिम भंग है।

ये सब मिलाकर आठ स्पर्श के २५६ भंग होते हैं। इस प्रकार बादर परिणत अनंत प्रदेशी स्कंध के सब संयोग के मिलाकर १२९६ भंग स्पर्श सम्बन्धी होते हैं।

नोट—इस प्रकार बादर अनंत प्रदेशी स्कंध में स्पर्श के चतुःसंयोगी १६, पंच-संयोगी १२८, षट्संयोगी ३८४, सप्तसंयोगी ५१२ और अष्टसंयोगी २५६—ये कुल मिलाकर १२९६ भंग होते हैं। एक परमाणु से लेकर सूक्ष्म अनंत प्रदेशी स्कंध के ३९८ भंग होते हैं और बादर अनंत प्रदेशी स्कंध के १२९६ भंग होते हैं।

परमाणु से लेकर बादर अनंत प्रदेशी स्कंध तक वर्ण-गंध-रस-स्पर्श के कुल ६४७० भंग होते हैं। जिनका गणन पूर्व हो चुका है।

·५१·९ स्कंध और स्पर्श

परमाण्वादीनामसंख्यातप्रदेशकस्कन्धपर्यन्तानां केषांचिदनन्तप्रादेशिकानामपि स्कन्धानां तथा एकप्रदेशावगाढानां यावत्संख्यातप्रदेशावगाढानां शीतोष्णस्निग्धरूक्षरूपाश्चत्वार एव स्पर्शा इति प्रज्ञापनावृत्तौ।

—लोक प्र० स ११। गा १३ में उद्धृत। पृ० ५५०

असंख्यात प्रदेशी स्कंध तक, कितनेक अनंत प्रदेशी स्कंध, आकाश के एक प्रदेश में अवगाहित पुद्गल स्कंध यावत् आकाश के संख्यात प्रदेश में अवगाहित स्कंध में—शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष—चार स्पर्श मिलते है।

विवेचन—एक परमाणु में एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श होते हैं। किन्तु किसी भी स्थूल स्कंध में पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गंध और आठ स्पर्श मिलेंगे। स्पर्शों की अपेक्षा से स्कंधों के दो भेद हो जाते हैं—चतुःस्पर्शी स्कंध व अष्टस्पर्शी स्कंध। सूक्ष्म से सूक्ष्म पुद्गल जाति चतुःस्पर्शी स्कंधात्मक है। चतुःस्पर्शी पुद्गलों में उक्त आठ स्पर्शों में से शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष—ये चार स्पर्श मिलेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपेक्षा विशेषयों से यह भी कहा जा सकता है उक्त चार स्पर्श ही पुद्गल के मौलिक स्पर्श है। परमाणु में उक्त चारों में से ही कोई दो अविरोधी स्पर्श मिलेंगे। कोई परमाणु शीत या उष्ण होगा या स्निग्ध और रूक्ष होगा। मृदु, कठिन, गुरु, लघु, इन चार स्पर्शों में से किसी भी अकेले परमाणु में कोई स्पर्श नहीं मिलता। परिणाम यह हुआ कि ये चार स्पर्श मौलिक न होकर संयोगज हैं। इन चार स्पर्शों के उत्पाद की कोई व्यवस्थित प्रक्रिया मिल नहीं रही है। परन्तु तथा प्रकार की नियामक प्रक्रिया होनी अवश्य चाहिए, नहीं तो क्या कारण हो सकता है कि असंख्य अनंत परमाणुओं के संयोग से बने हुए स्कंधों में कुछ चतुःस्पर्शी ही रह जाते हैं और कुछ आठ स्पर्शी हो जाते हैं! यह एक विशेष बात है कि जैन दर्शनिकों ने गुरुत्व (भारीपन) और लघुत्व (हल्केपन) को मौलिक स्वभाव नहीं माना है। यह भी विभिन्न परमाणुओं का संयोगज परिणाम है। खोज की दृष्टि से यह एक महत्व का विषय है—स्थूलत्व से सूक्ष्मत्व की ओर जाते हुए पुद्गल भारी आदि गुणों से रहित हो जाते और सूक्ष्मत्व से स्थूल की ओर जाते हुए उससे गुरुत्व, मृदुत्व आदि योग्यताएं उत्पन्न हो जाती है।

·५१·१० तीनों काल की अपेक्षा स्कंध परिणाम

(एस णं भंते ! पोग्गले तीयमणंतं सासयं समयं लुक्खी, समयं अलुक्खी, समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा ? पुव्विं च णं करणेणं अणेगवण्णं अणेगरूवं परिणामं परिणइ ? अहे से परिणामे णिज्जिण्णे भवइ, तओ पच्छा एगवण्ण एगरूवे सिया ? हंता गोयमा ! एस णं पोग्गले तीयं तं चेव जाव एगरूवे सिया। एस णं भंते ! पोग्गले पडुप्पण्णं सासयं समयं० ? एवं चेव, एवं अणागयमणंतं पि) एस ण भंते ! खंधे तीय-मणंतं० ? एवं चेव, खंधे वि जहा पोग्गले।

—भग० श १४। उ ४। सू १ से ३। पृ० ६९९

किसी एक समय रूक्ष, किसी एक समय स्निग्ध तथा किसी एक समय रूक्ष-स्निग्ध—ये तीनों पद स्कंध पुद्गल पर घटित होते हैं। अतीत, वर्तमान तथा अनागत तीनों कालों में उपर्युक्त तीनों पद स्कंध पुद्गल पर घटित होते हैं। पूर्वकरण (प्रयोगकरण) और विस्रसाकरण के द्वारा अनेक वर्णवाले और अनेक रूप वाले परिणाम रूप में परिणत हुआ, होता है व होगा और उस अनेक वर्णादि परिणाम के क्षीण होने पर वह स्कंध एक वर्ण वाला और एक रूप वाला हुआ, होता है और होगा। (देखो क्रमांक ·११·१४·१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५१·१० स्कंध पुद्गल परिणामी है

(१) खंधसरूवेण पुणो, परिणामो सो विहावपज्जावो।

—नियम० अधि २। गा २८ उत्तरार्ध

स्कंध पुद्गल में विभाव पर्याय होती है। जो परिणमन अन्य की अपेक्षा से होता है उसे विभाव पर्याय कहते हैं। स्कंध पुद्गल का परिणमन पर की अपेक्षा से होता है अर्थात् स्कंध पुद्गल का परिणमन सजातीय परमाणुओं से होता है।

·२ एस णं भंते ! खंधे तीतं अणंतं सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया ? हंता गोयमा ! एसणं खंधे तीतं अणंतं सासयं समयं भुवीति वत्तव्वं सिया।

एस णं भंते ! खंधे पडुप्पणं सासयं समय भवतीति वत्तव्वं सिया ? हंता गोयमा ! एस णं खंधे अणागयं अणंतं सासयं समयं भवतीति वत्तव्वं सिया।

एस णं भंते ! खंधे अणागयं अणंतं सासयं समयं भविस्सतीति वत्तव्वं सिया ? हंता गोयमा ! एस णं खंधे अणागयं अणंतं सासयं समयं भविस्सतीति वत्तव्वं सिया।

—भग० श १। उ ४। सू १९४ से १९६

स्कंध पुद्गल अतीत अनंत शाश्वत काल में था। स्कंध पुद्गल वर्तमान शाश्वत काल में है। स्कंध पुद्गल अनंत और शाश्वत भविष्यत काल में रहेगा।

इस प्रकार स्कंध के तीन आलापक की पृच्छा की गई है—(१) अतीत अनंत शाश्वत काल, (२) वर्तमान शाश्वत काल और (३) अनंत शाश्वत भविष्यत् काल।

यहाँ अतीत काल को अनंत और शाश्वत कहा गया है। अतीत काल सदा से है, उसकी आदि (प्रारम्भ) नहीं है इस कारण वह परिमाण रहित है। परिमाण रहित होने के कारण वह अनंत है और अतीत काल सदा ही रहता है, कभी ऐसा अवसर नहीं आसकता कि लोक में अतीत काल न हो। इस कारण से अतीत काल को शाश्वत कहा है। वर्तमान काल भी शाश्वत है और भविष्यत् काल भी शाश्वत है।

नोट—परमाणु भी तीनों काल में शाश्वत था, शाश्वत है और शाश्वत रहेगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ द्रव्य का परिणाम

परिणामोऽवस्थान्तरगमनं न च सर्वथा ह्यवस्थानम्। न च सर्वथा विनाशः परिणामस्तद्विदामिष्टः।

—स्याद्‌वाद मंजरी

कोई द्रव्य न तो सर्वथा नित्य है, न सर्वथा विनाशी है अतः प्रत्येक द्रव्य का परिणाम स्वीकार करना इष्ट है।

द्रव्यस्य स्वजात्यपरित्यागेन प्रयोग विस्रसालक्षणो विकारः परिणामः।

—तत्त्वराज० ५, २२, १०

द्रव्य को निज की जाति या निज के स्वभाव को छोड़े बिना प्रयोग या विस्रास से उद्‌भावित विकार को परिणाम कहते हैं।

·४ परिणाम का लक्षण—

परिणामो ह्यर्थान्तरगमनं न च सर्वथा व्यवस्थानं।
न तु सर्वथा विनाशः परिणामस्तद्‌विदामिष्टः॥

—पण्ण० पद १३। टीका-मलय०

अर्थात् द्रव्य की अवस्थान्तर प्राप्ति को परिणाम कहते हैं। द्रव्य का सर्वथा एक रूप से रहना या विनाश हो जाना यह 'परिणाम' शब्द का अर्थ नहीं है।

·१ स्कन्धः सकलः समस्तः।

—प्राकृत भाषा गा ८१

·२ तदेकीभावः स्कन्धः।

—जैसिदी० प्र १। सू १८

·३ तेषां द्व्यानन्त परिमितानां परमाणूनामेकत्वेनावस्थानं स्कन्धः।

—जैसिदी० प्र १। सू १८

पुद्‌गल द्रव्यों की एक इकाई स्कंध है। दो से लेकर यावत् अनंत परमाणुओं का एकीभाव स्कंध है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ तद् भेदसंघाताभ्यामपि। स्कन्धस्य भेदतः संघाततोऽपि स्कन्धो भवति।

—जैसिदी० प्र २। सू १८

विभिन्न परमाणुओं का एक होना जैसे स्कंध है, वैसे विभिन्न स्कंधों का एक होना व एक स्कंध का एक से अधिक परमाणु की इकाई में टूटने का परिणाम भी एक स्वतन्त्र स्कंध है।

·५ तत्र अन्त्यं अशेषलोकव्यापि महास्कन्धस्य।

—जैसिदी० प्र १। सू १५

कम से कम दो परमाणुओं का एक स्कंध होता है जो द्विप्रदेशी स्कंध कहलाता है और कभी-कभी अनंत परमाणुओं के स्वाभाविक मिलन से एक लोक व्यापी महा-स्कंध भी बन जाता है।

स्कन्ध देश

·६ बुद्धिकल्पितो वस्त्वंशो देशः। वस्तुनोऽपृथग्भूतो बुद्धिकल्पितोंशो देश उच्यते।

—जैसिदी० प्र १। सू ३०

स्कन्ध एक इकाई है। उस इकाई से बुद्धि कल्पित एक भाग को स्कंधदेश कहा जाता है।

नोट—इस दण्ड का आधा भाग या वह इस पुस्तक का एक पृष्ठ है तो वह उस स्कन्ध रूप दण्ड का पुस्तक का एक देश कहलाता है। जिसे हम देश कहेंगे वह स्कन्ध से पृथग्भूत नहीं होगा। पृथग्भूत होने से तो वह स्वयं एक स्कन्ध की संज्ञा ले लेगा।

·७ प्रदेश

निरंशो देशः प्रदेशः कथ्यते।

—जैसिदी० १। ३१

परमाणु जब तक स्कंधगत है तब तक वह स्कंधप्रदेश कहलाता है।

नोट—वस्तु का वह अविभागी अंश जो सूक्ष्मतम है और जिसका फिर अंश नहीं बन सकता वह स्कंधप्रदेश है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·८ परमाणु

अविभाग्यः परमाणुः ।

—जैसिदी० प्र १ । सू १७

स्कंध का वह अन्तिम भाग जो विभाजित हो ही नहीं सकता, वह परमाणु है ।

·१ अन्तावि अन्तमज्झं अन्तन्तं णेव इन्द्रियगेज्झं ।
जं दव्वं अविभागी तं परमाणु विजानीहि ।।

—सर्वसि० सू २५ । टीका

अर्थात् जिसका आदि, अन्त और मध्य एक ही है अर्थात् वह स्वयं ही आदि है, स्वयं ही मध्य है और स्वयं ही अन्त है, जो इन्द्रिय ग्राह्य नहीं है, जो अविभागी है, ऐसे द्रव्य को परमाणु जानना चाहिए ।

·२ सौक्ष्म्याद्यात्मादयः आत्ममध्याः आत्मांताश्च ।

—राज० ५ । २५ । १

परमाणु सूक्ष्मता के कारण स्वयं ही आदि, स्वयं ही मध्य और स्वयं ही अन्त है ।

·३ एक रस, वर्ण, गन्ध, द्विस्पर्श शब्दकारणमशब्दम् ।
स्कन्धान्तरितं द्रव्यं परमाणु तं विजानीहि ।।

—पंचास्तकायसार ८८

परमाणु वह है—जिसमें एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श हो । जो शब्द का कारण हो पर स्वयं शब्द न हो और स्कंध से अतिरिक्त हो ।

·५२ स्कंध पुद्‌गल और पर्याय

·५२·१ स्कंध पुद्‌गल और पर्याय के लक्षण

खंधसरूवेण पुणो, परिणामो सो विभावपज्जावो ।

—नियम० गा २८ । उत्तरार्ध

टीकाकार कहते हैं—पुद्‌गल की स्कन्ध रूप पर्याय अपने सजातीय परमाणुओं से बंध रूप है । इस लक्षण से अशुद्ध है अतः स्कंध पुद्‌गल विभाव पर्याय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल का स्कंध रूप जो परिणमन होता है वह उसका विभाव पर्याय है।

सद्भावो हि, स्वभावो गुणैः सह पर्ययैश्चित्रः।
द्रव्यस्य सर्वकालमुत्पादव्यय ध्रुवत्वैः ॥

—प्रव० अ २। गा ४ की छाया

यह (यानी द्रव्य का अस्तित्व) गुण-पर्याय सहित है तथा उत्पाद्, व्यय व ध्रुवत्व संयुक्त है।

गुणपर्यायवद् द्रव्यम्।

—तत्त्व० अ ५। सू ३७

जिसमे गुण और पर्याय हो—उसे द्रव्य कहते हैं।

द्रव्याश्रयानिर्गुणा गुणाः।

—तत्त्व० अ ५। सू ४०

जो द्रव्य में रहते हैं, स्वयं निर्गुण है, वे ही गुण कहलाते हैं।

भावान्तरं संज्ञान्तरं च पर्यायः।

—तत्त्व० उ। ५। सू ३७ का भाष्य

संज्ञान्तर व भवान्तर को पर्याय कहते हैं।

·५२·२ स्कन्ध पुद्गल और एकत्व-पृथगत्व

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·१२·२)

एगत्तेण पुहुत्तेण खंधा य परमाणु य।

—उत्त० अ ३६। गा १०। पूर्वार्ध। पृ० १०५०

अनेक परमाणुओं के एकत्व से स्कंध बनता है और उनका पृथगत्व होने से पुनः परमाणु हो जाते हैं।

·५२·३ स्कन्ध पुद्गल और बंधन के नियम

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·३२·३)

दो परमाणु पुद्गल, तीन परमाणु पुद्गल, चार परमाणु पुद्गल या पाँच परमाणु पुद्गल स्निग्धता के कारण परस्पर बंधन को प्राप्त होते हैं। इन दो, तीन,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चार, पाँच आदि परमाणुओं के बंधन से बने हुए स्कंध अशाश्वत होते हैं और सदा उपचय और अपचय को प्राप्त होते रहते हैं।

बंधन के नियम

स्निग्धरूक्षत्वाद् बंधः ॥३२॥
न जघन्यगुणानाम् ॥३३॥
गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३४॥
द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३५॥

—तत्त्व० अ ५। सू ३२ से ३५

मूल—स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श गुणों के कारण पुद्गलों का बंध होता है।

स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श गुण यदि जघन्य हों तो बंधन नहीं होता है।

यदि स्पर्श गुण सदृश हो तथा गुणों में साम्य हो तो बंधन नहीं होता है। इससे प्रतिफलित होता है कि यदि स्पर्श गुण विसदृश हों तो तथा गुणों में साम्य हो तो बंधन होता है।

यदि स्पर्श गुण सदृश हो तथा गुणों में किसी एक पक्ष में दो या दो से अधिक गुण की अधिकता हो तो बंधन होता है।

इन नियमों से प्रतिफलित होता है कि स्पर्श गुण विसदृश हों तो, जघन्य गुण को बाद देकर, सभी सम-विषम गुणों में बंधन होता है।

·५२·३ बंधन के नियम

(क) समणिद्धयाए बंधो ण होति,
समलुक्खयाए वि ण होति ॥
वेमायणिद्धलुक्खत्तणेण,
बंधो उ खंधाणं ॥
णिद्धस्स णिद्धेण दुयाहिएणं,
लुक्खस्स लुक्खेण दुयाहिएणं ॥
णिद्धस्स लुक्खेण उवेइ बंधो,
जहण्णवज्जो विसमो समो वा ॥

—पण्ण० प १३। सू ९४८। पृ० ४१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—'समनिद्धयाए' इत्यादि, परस्परं समस्निग्धतायां—समगुणस्निग्धतायां तथा परस्परं समरूक्षतायां—समगुणरूक्षतायां बंधो न भवति, किंतु यदि परस्परं स्निग्धत्वस्य रूक्षत्वस्य च विषममात्रा भवति तदा बंधः स्कंधानामुपजायते, इयमत्र भावना—समगुणस्निग्धस्य परमाण्वादेः समगुणस्निग्धेन परमाण्वादिना सह संबंधो न भवति, तथा समगुणरूक्षस्यापि परमाण्वादेः समगुणरूक्षेण परमाण्वादिना सह संबंधो न भवति, किन्तु यदि स्निग्धः स्निग्धेन रूक्षः रूक्षेण सह विसमगुणो भवति, तदा विषममात्रत्वात् भवति तेषां परस्परं संबंधः। विषममात्रया बंधो भवतीत्युक्तं ततो विषममात्रानिरूपणार्थमाह—

"णिद्धस्स णिद्धेण दुयाहिएण" त्यादि, यदि स्निग्धस्य परमाण्वादेः स्निग्धगुणेनैव सह परमाण्वादिना बंधो भवितुमर्हति तदा नियमात् द्व्यादिकाधिकगुणेनैव परमाण्वादिनेति भावः, रूक्षगुणस्यापि परमाण्वादेः रूक्षगुणेन परमाण्वादिना सह यदि बंधो भवति तदा तस्यापि तेन द्व्याद्यधिकादिगुणनैव वान्यथा, यदा पुनः स्निग्धरूक्षयोर्बन्धस्तदा कथमिति चेत्? अत आह—'णिद्धस्स लुक्खेण' त्यादि, स्निग्धस्य रूक्षेण सह बंध उपैति—उपपद्यते जघन्यवर्जो विषमः समो वा, किं मुक्तं भवति? एक गुणस्निग्धं एकगुणरूक्षं च मुक्त्वा शेषस्य द्विगुणस्निग्धादिद्विगुणरूक्षादिना सर्वेण बंधो भवतीति।

गाथार्थ—स्निग्ध स्पर्श वाले पुद्गलों का यदि स्निग्ध स्पर्श गुण सम हो तो परस्पर में बंधन नहीं होता है। उसी प्रकार रूक्ष स्पर्श वाले पुद्गलों का यदि रूक्ष स्पर्श गुण सम हो तो परस्पर में बंधन नहीं होता है।

स्निग्ध स्पर्श वाले पुद्गलों का यदि स्निग्ध स्पर्श गुण विषम हो तो परस्पर में बंधन होता है। उसी प्रकार रूक्ष स्पर्श वाले पुद्गलों का यदि रूक्ष स्पर्श गुण विषम हो तो परस्पर में बंधन होता है।

इस प्रकार के बंधन से स्कंधों का निर्माण होता है।

स्निग्ध स्पर्श वाले पुद्गलों का परस्पर में यदि उनके स्निग्ध स्पर्श गुणों में दो गुण का अंतर हो तो बंधन होता है। उसी प्रकार रूक्ष स्पर्श वाले पुद्गलों का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परस्पर में यदि रूक्ष स्पर्श गुणों में दो गुण का अन्तर हो तो बंधन होता है—अर्थात् एक पुद्‌गल का स्पर्श गुण दूसरे पुद्‌गल के स्पर्श गुण से दो गुण अधिक हो तभी बंधन होता है।

स्निग्ध स्पर्श वाले पुद्‌गल का रूक्ष स्पर्श वाले पुद्‌गल के साथ—स्पर्श गुण सम हो या विषम हो दोनों का परस्पर बंधन होता है, लेकिन दोनों में से कोई जघन्य (एक) गुण वाला हो तो बंधन नहीं होता है।

टीकार्थ—परस्पर समान गुण स्निग्धता में बंधन नहीं होता है तथा परस्पर समान गुण रूक्षता में भी बंधन नहीं होता है परन्तु यदि स्निग्धता अथवा रूक्षता में गुणों की विषमता हो तो बंधन होता है।

स्निग्ध परमाणु आदि का विषम गुण स्निग्ध परमाणु आदि के साथ बंध होता है, उसी प्रकार रूक्ष परमाणु आदि का विषम गुण रूक्ष परमाणु आदि के साथ बंध होता है। यह बंध विषम मात्रा (गुणत्व) से होता है। यह विषम मात्रा कैसी होनी चाहिए—इस प्रश्न के उत्तर में कहा जाता हैं।

'णिद्धस्स णिद्धेणदुयाहिएण'—इत्यादि का भाव है कि यदि स्निग्ध परमाणु आदि का स्निग्ध परमाणु आदि के साथ बंध होता है तो नियम से बंध होने वाले दोनों पक्षों में से कोई एक पक्ष दो गुण या दो से अधिक गुण अधिकता वाला होता है। उसी प्रकार रूक्ष परमाणु आदि का रूक्ष परमाणु आदि से बंधन होता है तो एक तरफ दो गुण या द्वयाधिक गुण की अधिकता होगी।

स्निग्ध पुद्‌गल का रूक्ष पुद्‌गल से बंधन सम गुण या विषम गुण दोनों अवस्था में होता है लेकिन जघन्य गुण में बंधन नहीं होता है। एक गुण स्निग्ध, एक गुण रूक्ष को बाद देकर शेष दो गुण स्निग्धादि दो गुण रूक्षादि सर्व का बंध होता है।

	श्वेताम्बर मान्यताः		दिगम्बर मान्यता	
	पण्ण० टीका	तत्त्व० भा०	षट्०	तत्त्व० वि०
	सदृश विसदृश			
जघन्य + अघन्य	नहीं नहीं	नहीं नहीं	नहीं नहीं	नहीं नहीं
जघन्य + एकाधिक	नहीं नहीं	नहीं है	नहीं नहीं	नहीं नहीं
जघन्य + द्वय अधिक	नहीं नहीं	है है	नहीं नहीं	नहीं नहीं
जघन्य + त्रयादि अधिक	नहीं नहीं	है है	नहीं नहीं	नहीं नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्येतर+समाजघन्येतर	नहीं है	नहीं है	नहीं है	नहीं नहीं
जघन्येतर+एकाधिक ज०	नहीं है	नहीं है	नहीं है	नहीं नहीं
जघन्येतर+द्वय अधिक	है है	है है	है है	है है
जघन्येतर+त्र्यादि अधिक	है है	है है	नहीं है	नहीं नहीं

बंधन के नियम—

(ग) अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि

दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ? दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति × × ×।

तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ? तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति × × ×।

एवं जाव चत्तारि।

पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। एगयओ साहण्णित्ता खंधत्ताए कज्जं। खंधे वि य णं से असासए सया समियं। उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य।

—भग श० १। उ १०। सू ३१८, ३१९, ३२०। पृ० ४१५

टीका— × × × "दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए' त्ति एकस्य अपि परमाणोः शीतोष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्शानाम्-अन्यतरद् अविरुद्ध स्पर्शद्वयम्-एकदा एव अस्ति, ततो द्वयोरपि तयोः स्निग्धभावात् स्नेहकायोऽस्त्येव, ततश्च तौ विषमस्नेहात् संहन्येते, इदं च परमतानुवृत्त्या उक्तम्, अन्यथा रूक्षौ अपि रूक्षत्ववैषम्ये संहन्येते एवयदाहः—"समनिद्धयाए बंधो न होइ, समलुक्खयाए वि न होइ। वेमायनिद्ध-लुक्खत्तणणं बंधो उ खंधाणं" त्ति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस समय के अन्य तीर्थियों का वक्तव्य था कि दो, तीन, चार अथवा पाँच परमाणु—उनमें स्नेहकाय होने के कारण बंधन को प्राप्त होते हैं। लेकिन भगवान महावीर उनके इस कथन का प्रतिवाद करते हुए कहते हैं—

दो परमाणु पुद्गल परस्पर में बंधन को प्राप्त होते हैं और इस बंधन को प्राप्त होने का कारण इनकी स्निग्धता (स्नेहकाय) है। इसी प्रकार तीन, चार या पाँच परमाणु स्निग्धता के कारण परस्पर बंधन को प्राप्त होते हैं। ये दो, तीन, चार, पाँच आदि परमाणुओं के बंधन से बने हुए स्कंध आशाश्वत होते हैं और सदा उपचय और अपचय को प्राप्त होते रहते हैं।

टीकाकार इसका निम्न प्रकार से स्पष्टीकरण करते हैं। उनका कथन है कि केवल स्निग्धता ही परमाणुओं के बंधन का कारण नहीं है, रूक्षता भी बंधन का कारण है।

एक अकेले परमाणु में शीत-उष्ण, स्निग्ध-रूक्ष इन चार स्पर्शों में कोई दो अविरूद्ध स्पर्श एक काल में अवश्य होते हैं।

यदि दो परमाणुओ में स्निग्धता होती है तो उनका बंधन स्निग्धता गुण की विषमता के कारण होता है। तथा यदि दो परमाणुओं से रूक्षता होती है तो उनका बंधन भी रूक्षता गुण की विषमता के कारण होता है।

जैसे कहा है कि—"सम-स्निग्धता में तथा सम-रूक्षता में बंधन नहीं होता है। विषम स्निग्धता तथा विषम स्निग्धता तथा विषम रूक्षता होने से परमाणु से लेकर स्कंध तक बंधन होता है।"

टीका—जघन्य गुण स्निग्धों का जघन्य गुण स्निग्धों के साथ तथा जघन्य गुण रूक्षों का जघन्य गुण रूक्षों के साथ बंधन नहीं होता है।

निकृष्ट—निम्नतम को जघन्य कहते हैं। जघन्य शब्द से एक संख्या को और गुण शब्द से शक्ति के अंश को ग्रहण करना चाहिए। जघन्य गुणांश पुद्गलों का बंध नहीं होता है। यहाँ परस्पर शब्द से सजातीय-विजातीय दोनों ग्रहण करना चाहिए। अर्थात् एक गुण स्निग्ध पुद्गल का एक गुण स्निग्ध या एक गुण रूक्ष पुद्गल के साथ बंध नहीं होता है, उसी प्रकार एक गुण रूक्ष पुद्गल का एक गुण स्निग्ध या एक गुण रूक्ष पुद्गल के साथ बंध नहीं होता है।

स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य गुणांश स्निग्धों का जघन्य गुणांश स्निग्धों के साथ तथा जघन्य गुणांश रूक्षों का जघन्य गुणांश रूक्षों के साथ बंधन नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परस्थान की अपेक्षा एक गुणांश स्निग्ध का भी एक गुणांश रूक्ष के साथ बंध नहीं होता है इन सबका—स्निग्ध गुणांश और रूक्ष गुणांशों का संयोग होने पर भी परस्पर एकत्व परिणति रूप बंध नहीं होता है। क्या कारण में कि इन जघन्य गुणांश स्निग्धों का तथा जघन्य गुणांश रूक्षों का बंध नहीं होता है। वैसी परिणमन रूप शक्ति का अभाव होने के कारण बंध नहीं होता है। ऐसा बंधन अर्थात् जघन्य गुणांश पुद्गलों का बंधन के अभाव में नहीं होता है। संयोग होने पर भी वैसी परिणमन करने की शक्ति अभाव होने के कारण बंधन नहीं होता है।

द्रव्यों की परिणमन शक्ति विचित्र होती है ; वह परिणमन शक्ति क्षेत्र, काल आदि के अनुसार होती है तथा प्रयोग और विस्रसा की अपेक्षा प्रभावित होती रहती है। प्रयोग के वश प्रयोग करने वाले की कहीं भी प्रयोगवश जो परिणमन होता है उसमें प्रयोग करने वाले की इच्छा का अनुरोध न करें।

जघन्य स्निग्ध गुण स्तोक होने के कारण ही जघन्य गुण रूक्ष पुद्गल का परिणमन करने में समर्थ नहीं है। उसी प्रकार जघन्य रूक्ष गुण भी अल्प होने के कारण जघन्य गुण स्निग्ध को आत्मसात करने में समर्थ नहीं है।

यहाँ पर गुण शब्द संख्यावाची है, यथा—इस पुरुष का एक ही गुण है और आधिक्य अर्थ में द्विगुण, त्रिगुण का व्यवहार होता है। स्नेहादि गुणांशों के प्रकर्ष-अपकर्ष-न्यूनाधिक भेद होते हैं यथा—जल से बकरी का दूध, बकरी के दूध से गाय का दूध, गाय के दूध से भैंस का दूध तथा उससे हाथी का दूध स्निग्ध होता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर स्निग्ध गुण की अधिकता रहती है।

इन्हीं का यदि पूर्व-पूर्व की अपेक्षा विचार किया जाय तो पूर्व-पूर्व दूध रूक्ष होगा।

एक गुण स्निग्ध का एक गुण स्निग्ध के साथ बंध नहीं होता है। इसी प्रकार दो आदि सभी सदृश बोधक—संख्यात, असंख्यात, अनंत, अनंतानंत गुण स्निग्ध के साथ बंध नहीं होता है।

उसी प्रकार एक गुण रूक्ष का एक गुण रूक्ष के साथ बंधन नहीं होता है यावत् (दो आदि सभी सदृश बोधक— संख्यात, असंख्यात) अनंत गुण रूक्षों का सदृशों के साथ बंध नहीं होता है।

सूत्रार्थ का जहाँ तक संबंध हैं—जघन्य गुण स्निग्धों का तथा जघन्य गुण रूक्षों का परस्पर बंध नहीं होता है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

आगे के सूत्र की व्याख्या करेंगे। उसको प्रसंगवश यहाँ कहा है। इसी प्रकार जघन्य गुण स्निग्ध और जघन्य गुण रूक्ष—इन दोनों को छोड़कर अन्य मध्यम और उत्कृष्ट गुण स्निग्धों का रूक्षों के साथ तथा मध्यम और उत्कृष्ट गुण रूक्षों का स्निग्धों के साथ परस्पर बंधन होता है—यह अर्थ—अर्थापत्ति प्रमाण से लभ्य होता है। सामर्थ्य से जाना जाता है। वह जैसा—जिस प्रकार होता है उसका उसी प्रकार कहेंगे। यहीं यहां उपयुक्त होता है।

भाष्य—अत्राह—उक्तं भवता—जघन्यगुणवर्जानां (स्निग्धानां) रूक्षेण रूक्षाणां च स्निग्धेन सह बंधो भवतीति। अथ तुल्यगुणयोः किमत्यन्त प्रतिषेध इति ? अत्रोच्यते—न जघन्यगुणानामित्यधिकृत्येदमुच्यते—

सिद्ध० टीका—अत्राहेत्यादिना ग्रन्थेन संबंधं विधत्ते। प्रतिपादित भवताऽनन्तरं जघन्यगुणस्निग्धरूक्षयोर्नास्ति बंधः, तन्निषेधादन्येषां जघन्य गुणवर्जानां बंधप्रसङ्गे सदृशानां प्रतिषेधे यतो विधेय इत्यर्थापत्तिप्रापितं चेदं द्विगुणस्निग्धस्यैकगुणरूक्षेण सह एकगुणस्निग्धस्य द्विगुणरूक्षेण सह बंधो भवतीति।

एतदुक्तं भवति—निकृष्टस्निग्धरूक्षयोर्बन्ध प्रतिषेधान्मध्यमोत्कृष्टस्निग्ध-रूक्षगुणानां परस्परेण बंधः प्रतिज्ञातोऽर्थतः पृथगधिकारणानाम्। अथ तुल्यगुणयोः किमत्यन्तप्रतिषेध इति प्रश्नयति, प्रस्तुतानन्तरवचनोऽयमथ शब्दः, तुल्यगुणयोः स्निग्धाधिकरणयोरेकैकगुणयोः किमेकान्तेनैव प्रतिषेध इति प्रश्ने कृते अत्रोच्यत इत्याह। अत्यन्तप्रतिषेध एव, क्वाधिकृत इति चेदित्याह, न जघन्य गुणानामित्यधिकृत्येदमुच्यते यथैव स्निग्धरूक्षाणां जघन्यविषयाणां बंधाभावस्तथैव गुणसाम्ये सदृशानां बंधाभाव इति संबंधनीयम्। अथवा स्निग्धरूक्षयोभिन्नाधिकरणयोर्बन्धप्रतिषेधः कृतोऽथ तुल्य गुणयोः किं प्रतिपत्तव्यमिति सामर्थ्यादध्याहारं कृत्वा व्याख्येयम्, तुल्य गुणयोः स्निग्धाधिकरणयोः रूक्षाधिकरणयोर्वा किं बंधनिषेधः प्रति-पत्तव्यः, आहोस्विद् बंधविधिरिति ? आचार्य आह—अत्यन्तप्रतिषेध इति, एकान्तेनैव प्रतिषेधः, स पुनर्न जघन्यगुणानामित्यत्र सूत्रेऽधिकृतस्तमाश्रि-त्योच्यते।

—तत्त्व० अ ५। सू ३३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाष्य—जघन्य गुणांश स्निग्धों का तथा जघन्य गुणांश रूक्षों का परस्पर में बंधन नहीं होता है।

जघन्य गुणांश को बाद देकर स्निग्धों का रूक्ष के साथ तथा रूक्षों का स्निग्ध के साथ बंध होता है। क्या तुल्य गुणांश के बंधन का नितांत प्रतिषेध है। यह 'न जघन्य गुणानाम्' सूत्र के अधिकार से ही सिद्ध है।

टीका—जघन्य गुणांश स्निग्धों का और जघन्य गुणांश रूक्षों का बंध नहीं होता है। इसके (जघन्य गुणांश के) निषेध हो जाने से अन्य जो जघन्य गुणांश वर्जित हैं उनके बंध के प्रसंग में सदृशों के प्रतिषेध में यत्न करना चाहिए। यह अर्थापत्ति के द्वारा प्राप्त हुआ अर्थात् उसकी भी प्रसंग आया ; यदि—द्विगुणांश स्निग्ध का एक गुणांश रूक्ष के साथ तथा एक गुणांश स्निग्ध का द्विगुण रूक्ष के साथ बंध होता है।

निकृष्ट—जघन्य गुणांश स्निग्ध और जघन्य गुणांश रूक्षों के बंध के प्रतिषेध से मध्यम और उत्कृष्ट गुणांश स्निग्ध और रूक्षों का बंध होता है—ऐसा अर्थापत्ति से ज्ञात होता है।

अब प्रश्न उठता है कि क्या तुल्य गुणांशों के बंध का अत्यन्त प्रतिषेध है। तुल्य गुणांश स्निग्धों का एक-एक गुणांश वाले पुद्गलों का बन्ध क्या एकान्ततः नहीं होता है ऐसा प्रश्न करने पर कहा जाता है कि "अत्यन्त प्रतिषेध ही है।"

'न जघन्य गुणानाम्' इस सूत्र से ही यह बात सिद्ध होती है। जिस प्रकार जघन्य गुणांश स्निग्धों तथा जघन्य गुणांश रूक्षों का बन्ध नहीं होता है उसी प्रकार गुण साम्य रहने पर सदृशों का भी बन्ध नहीं होता है।

अथवा भिन्नाधिकरण वाले स्निग्ध और रूक्षों को बन्ध का प्रतिषेध किया गया है। अब तुल्य गुणों का क्या समझना चाहिए। इसके लिए अल्पाहार करके व्याख्या करनी चाहिए—अस्तु तुल्य गुण वाले स्निग्धों का तथा रूक्षों का बन्ध नहीं होता है—अर्थात् अत्यन्त प्रतिषेध ही है।

भाष्य—गुणसाम्ये सति सदृशानां बंधो न भवति तद् यथा—तुल्यगुण-स्निग्धस्य तुल्य गुणस्निग्धन, तुल्यगुणरूक्षस्य तुल्यगुणरूक्षेणेति।

टीका—गुणसाम्ये सतीत्यादि भाष्यम्। गुणाः—स्निग्धरूक्षास्तेषां समता साम्यं तस्मिन् गुणसाम्ये, सतीत्यनेन विशिष्टार्था सप्तमीं सूचयति। "यस्य च भावेन भावलक्षणम्" (पा० अ २, पा० ३, सू० ३७)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सति गुणसाम्ये तुल्य संख्यत्वे सदृशानां बंधो न भवति, गुणानां साम्येन ये सदृशाः, न क्रियासाम्येन, ते सति गुणसाम्ये सदृशास्तेषां बंधो नास्ति, पूर्वापवादविशेष समर्थनार्थमेवेदं – न जघन्यगुणानाम् (सू ३३) इत्यभिधाय तद्विशेषमपवदते, तं चापोह्यमानमुदाहरणेन स्पष्टयति। तद् यथेत्युदाहरणोपन्यासः, तुल्य गुणस्निग्धस्य तुल्यगुणस्निग्धेन तुल्यगुणरूक्षस्य तुल्यगुणरूक्षणेति सामान्योपन्यासः समस्तैक गुणस्निग्धरूक्षादि समगुणविकल्प संग्रहार्थः। तुल्यगुणः स्निग्धो यस्य स तुल्यगुणस्निग्धः, तुल्यः स्नेहगुणो यस्येत्यर्थः तस्यानेन सदृशेनैव तुल्यगुणस्निग्धेन बंधो नास्ति, परस्परं परिणति शक्तेरभावात् × × ×।

एक गुणस्निग्धो हि नैकगुणस्निग्धेन बध्यते, तथाऽनन्तपर्यवसानाद् द्विगुणादिस्निग्धाः द्विगुणादिस्निग्धैः समगुणैरनन्तपर्यवसानैः सह न बध्यन्ते, एवमेकगुणरूक्षोऽप्येकगुणरूक्षेण सह न बध्यते × × ×। तथा द्विगुणादिरूक्षा न द्विगुणादिरूक्षैरनन्तावसानैः सह बंधमनुभवन्तीति।

—तत्त्व• अ ५। सू ३४

भाष्य—अत्राह—सदृशग्रहणं किमपेक्षत इति ? अत्रोच्यते—गुणवैषम्ये सदृशानां बंधो भवतीति ॥३४॥

टीका—'अत्राह—सदृशग्रहणं किमपेक्षत इति। एवं मन्यते प्रष्टा, गुणसाम्ये सति बंधो न भवति, येषां च समा गुणाः प्रकर्षापकर्षवृत्ताः प्रतिविशिष्टसंख्यावच्छिन्नास्ते नियमेन गुणैः सदृशाः, इत्येतावताऽभिलषितेऽर्थे सिद्धे सदृश ग्रहणमतिरिच्यमानमपरार्थापेक्षि भवति, तं चापरमर्थमजानानः प्रश्नयति किमपेक्षते सदृशग्रहणमिति, आचार्योऽपि विशिष्टार्थप्रतिपत्तये सदृशग्रहणं चेतसि निधायाह अत्रोच्यत इति।

गुणवैषम्ये सदृशानां बंधो भवतीति, स्नेहगुणवैषम्ये रूक्षगुण वैषम्ये च बंधः समस्ति, केषामत आह—सदृशानामिति। एवमर्थं सदृशग्रहणमपेक्षते, सादृश्यं च स्नेहगुणमात्रनिबंधनं रौक्ष्यगुणमात्रनिबंधनं च संख्यानमाश्रित्य ग्राह्यम्, अतः सदृशानामपि स्नेहगुणसामान्येन रौक्ष्यगुणसामान्येन च

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकर्षापकर्षवृत्ततद्गुणवैषम्ये सति भवत्येव बंधः, तद्यथा—एकगुणस्निग्ध-स्त्रिगुणस्निग्धेन, द्विगुणस्निग्धश्चतुर्गुणस्निग्धेन, त्रिगुणस्निग्धः पंचगुण-स्निग्धेन, चतुर्गुणस्निग्धः षड्गुण स्निग्धेनेत्येवं यावदनन्तगुणस्निग्धो विषम-गुण इति। अन्ये त्विममिदधति सूरयः—एक गुणस्निग्धस्य द्विगुणस्निग्धेनैक-गुणरूक्षस्य द्विगुणरूक्षेणेति भावनीयम्, एतच्च सम्प्रदायेनागमोपनिबंध-दर्शनेन च प्रायो विसंवति इत्यनादरः।

—तत्त्व० अ ५। सू ३३

भाष्य—अत्राह—किमविशेषेण गुणवैषम्ये सदृशानां बंधो भवतीति? अत्रोच्यते।

टीका—अत्राहेत्यादिः संबंध प्रतिपादनपरो ग्रन्थः, किमविशेषेण गुण-वैषम्ये सदृशानां बंधो भवतीति यद्यविशेषेण ततः एकगुणस्निग्धस्य द्विगुण-स्निग्धेनापि बंध प्रसंगोऽनिष्टं चैतदा (दित्या?) रेकमाण प्रष्टरि सूरिराह-अत्रोच्यत इति, न सवषामेव, सदृशानां, किं तर्हि?

—तत्त्व० अ ५। सू ३४

भाष्य—द्व्यधिकादि गुणानां तु सदृशानां बंधो भवति।

सिद्ध० टीका—द्व्यधिकादिगुणानां तु सदृशानां बंधो भवतीत्यादि भाष्यम्। द्वाभ्यां गुणविशेषाभ्यामन्यस्मादधिको यः परमाणुः स आदिर्येषां ते द्व्यधिकादिगुणाः गुणशब्दोऽत्र गुणिवचनः। गुणवंतो गुणाः परमाणवः इत्यर्थः तेषां द्व्यधिकादिगुणानामणुनां सदृशानां बंधो भवति, सदृशानामिति स्नेहसामान्यं रूक्षसामान्यं चाश्रित्य सादृश्यं व्याख्येयम् × × ×।

—तत्त्व० अ ५। सू ३५

भाष्य—द्व्यधिकादि गुणानां तु सदृशानां बंधो भवति। तद्यथा-स्निग्धस्य द्विगुणाधिक स्निग्धेन, द्विगुणाद्यधिकस्निग्धस्य एकगुणस्निग्धेन, रूक्षस्यापि द्विगुणाद्यधिकरूक्षेण, द्विगुणाद्यधिकरूक्षस्य एकगुणरूक्षेण, एकादिगुणाधिक-योस्तु सदृशोर्बन्धो न भवति। अत्रतु शब्दो व्यावृत्ति विशेषणार्थ, प्रतिषेधं व्यावर्तयति बधं च विशेषयति ॥३५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका —तद्यथा—स्निग्धस्येत्यादिनोदाहरति। (एकगुण) स्निग्धस्येत्यनुक्तेऽपि संख्या गम्यते गुणश्चसामर्थ्यात्, द्विगुणाद्यधिकस्निग्धेनाणुना द्वाभ्यां स्नेहगुणविशेषाभ्यामेकगुणस्निग्धादधिको यस्तेन सहास्ति बंधः, यथैकगुणस्निग्धएकस्तदन्यस्त्रिगुणस्निग्धः, अत्रैकगुणस्निग्धस्यैकः समानो गुणस्त्रिगुणस्निग्धे (स्कंधे) अणौ वा शेषेण गुणद्वयेनाधिकः, द्विगुणाद्यधिकस्निग्धेनेत्यादिग्रहणादेकगुणस्निग्धस्य चतुर्गुणपंचगुणस्निग्धेनापि बंधसिद्धिः, तथा द्विगुणाद्यधिकस्निग्धस्यैकगुणस्निग्धेन सह बंधसंभवः।

ननु च प्रथमविकल्पान्नास्ति कश्चिद् विशेषोऽस्य स्पुटः, सत्यं, न कश्चिद् भेदः, तथापि तु बंधो द्व्यादिवृत्तिः, तत्र बध्यमानयोर्बध्यमानानां वा षठ्यन्तत्वे तृतीयान्तत्वे वा बंधाविशेषः इति प्रतिपत्त्यर्थमुभयथोच्चारणं चकार भाष्यकारः।

रूक्षस्यापीत्यादिभाष्यमुक्तप्रकारेणैव गमनीयम्। एवं द्व्यधिकादिगुणानां स्नेहवतां रौक्ष्यवतां च यथोक्तलक्षणो बंधो भवतीत्युच्यते, प्रतिषेधव्यावृत्तिप्रदर्शनार्थं भवति तुशब्दोपादनम् द्व्यधिकादिगुणानां बंधाभ्यनुज्ञाने चार्थापत्तिलभ्यफलप्रदर्शनार्थमिदमाह—एकादिगुणाधिकयोस्तु सदृशयोर्बंधो न भवति, प्रतिविशिष्टपरिणतिशक्तरभावात्, एक गुणस्निग्धस्य हि द्विगुणस्निग्धोऽणुरेकगुणाधिकः, द्विगुणस्निग्धस्य त्रिगुणस्निग्ध एकगुणाधिकः, त्रिगुणस्निग्धस्य चतुर्गुणस्निग्ध एकाधिकः इत्यादि यावदनन्तगुण एकाधिकः इति, एवं रूक्षस्यापि वाच्यम्, एकादिगुणाधिकयोरित्यत्रादिग्रहणाद् द्विगुणस्य त्रिगुणेन सह नास्ति बंधः, तत्रापि द्विगुणश्चैकगुणाधिकश्चेति द्विवचनम्, एवं शेषविकल्पयोजनमपि कार्यम्, तु शब्दः कमर्थंवयात् सूत्र इत्याशंकिते भाष्यकृहाह—अत्र तुशब्दो व्यावृत्तिविशेषणार्थः। तुशब्दस्यानेकार्थवृत्तित्वे सत्यप्यत्र सूत्रे व्यावृत्तिविशेषणं चोभयमर्थं परिगृह्यते, व्यावृत्तिश्च विशेषणं च व्यावृत्तिविशेषणे अर्थस्ते यस्य स यथोक्तः, तत्र व्यावृत्तिः-निवृत्तिः, विशेष्यतेऽनेनेति विशेषणं तदर्थो यस्यासौ व्यावृत्तिविशेषणार्थः, कस्य पुनर्व्यावृत्ति किं वा विशेष्यमाणमित्याह—प्रतिषेधं व्यावर्तयति बंध च विशेषयतीति। न जघन्यगुणानामिति प्रकृतप्रतिषेधस्तं व्यावर्तयति, यथा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऽधिकृतं च बंधं विशिनष्टि, गुणवैषम्ये सति सदृशानां गुणद्वयाधिकानां बंधो भवतीत्येवं विशेषणार्थः, ततश्च व्यावृत्ते प्रतिषेधे बंधे च विशेषिते द्वयधिकादिगुणानां बंधः सिद्धो निरपवाद इति। आगमगाथासंवादी चायं सूत्रचतुष्टयार्थः —

निद्धस्स निद्धेण दुआधिएण,
लुक्खस्स लुक्खेण दुआधिएण।
निद्धस्स लुक्खेण उवेति बंधो,
जहण्णवज्जो विसमो समो वा।

—पण्ण० प १३

गुणवैषम्ये सदृशानां द्वयधिकादिगुणानां तु बंधो भवतीत्यस्य वाचकं गाथाशकलमाद्यं, स्निग्धस्य स्निग्धेन सह रूक्षस्यापि रूक्षेण सहेति ततश्च "गुणसाम्ये सदृशानां" (सू ३४) भवति बंध इत्येतत् सूत्र लब्धम्। अथ स्निग्धरूक्षयोः परस्परेण कथमित्याह—पाश्चात्यमर्धम्। एतेन च "स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बंधः" (सू० ३२) "न जघन्यगुणानाम्" (सू० ३३) इति सूत्रद्वयपरिग्रहः स्निग्धगुणरूक्षयोश्च जघन्यगुणवर्जः परस्परेण विषमगुणयोः समगुणयोश्च बंधो भवतीति ॥३५॥

—तत्त्व० अ ५। सू ३५

भाष्य —अत्राह —परमाणुषु स्कंधेषु च ये स्पर्शादयो गुणास्ते किं व्यवस्थितास्तेषु आहोस्विदव्यवस्थिता इति ? अत्रोच्यते—अव्यवस्थिताः। कुतः ? परिणामात्। अत्राह—द्वयोरपि वध्यमानयोर्गुणवत्त्वे सति कथं परिणामो भवतीति ? उच्यते।

टीका अत्राह—परमाणुष्वित्यादिना ग्रन्थेन सूत्रं सम्बन्धाति। अत्रे-त्यौत्सर्गिके बंधलक्षणे सापवादे प्रतिपादिते पृच्छत्यजानानः, परिणामविशेषो हि बंधः, स च स्निग्धे रूक्षलक्षणपरिणामान्तरापाद्यः, अतः परमाणुषु ये स्पर्शादिगुणपरिणामाः स्कंधेषु वा शब्दादयस्ते किं नित्याः—सर्वदाव्यवस्थि-तास्तेषु परमाण्वादिष्वाहोस्विदव्यवस्थिता—भूत्वा पुनर्नभवन्तीति ? अय-मभिप्रायः प्रश्नयितुः —परमाणवः संहन्यमाना द्विप्रदेशादिकस्कंधाकृत्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणमन्ते परिमंडलादिपंचप्रकारसंस्थानरूपेण वेति, तत्र यदि व्यवस्थिताः परमाणुषु परिणामाः स्पर्शादयः स्कंधेषु वा स्पर्शादिशब्दादयस्ततस्तेषां व्यवस्थितत्वात् सर्वदा नोत्पादो न विनाशः, तौ चान्तरेण स्निग्धरूक्षगुणयोरण्वोः, परिणामभावे तदवस्थयो कुतो द्व्यणुकादिस्कंधपरिणामः? स्कंधेषु स्पर्शादिशब्दादिपरिणामस्यैकस्यैव नित्यतयेष्टत्वात् शेषस्पर्शादिशब्दादिपरिणामाभावः अथाव्यवस्थिताः, सर्वमिष्यमाणमुपपन्नम्, पूर्वकपरिणामत्यागेनोत्तरपरिणामान्तराभ्युपगमे स्पर्शादयोऽन्ये चान्ये च स्पर्शादिशब्दादयश्च क्षेत्रकालद्रव्यभावपरिणामविशेषाः स्युरित्यवगम्येत यथापरिणामं वस्त्विति, तन्नजाने कथमेतदिति, सति चाप्यव्यवस्थित्वे किं समगुणः समगुणतयैव परिणमयत्युत विषमगुणतयाऽपीति सन्दिहानं प्रतीवमत्रोच्यते—अव्यवस्थिताः परमाणुस्कंधेषु स्पर्शादयः, स्पर्शादि शब्दादयश्चेति, अनवस्थितत्वे प्रतिज्ञाते पुनः प्रश्नयति—कुतः पुनरनवस्थितत्वम्? एवं मन्यते—किं प्रतिज्ञामात्रेणानवस्थितत्वमुत काचिद् युक्तिरप्यस्तीतिएवमाशंकिते युक्तिमाह—परिणामादिति।

"तद्भावलक्षण परिणामो" वक्ष्यते (सू० ४१) स एव हि परमाणुः स्कंधो वा द्रव्यत्वादिजातिस्वभावमजहत् स्पर्शान्तरादिगुण शब्दान्तरादिगुणं प्रतिपद्यते, स्पर्शादिसामान्यमजहतः परमाण्वादयः स्पर्शादिविशेषानासादयन्ति, अतोऽवस्थितानवस्थितत्वमेषां स्पर्शादीनाम्, परिणन्तारो हि स्वशक्तिपाटवभाजो मरिचलवणहिङ्ग्वादयः परिणम्यं वस्तु क्वथिततक्रादिस्वाद्वाद्याकारेणात्मसात्कुर्वन्तो दृष्टाः, केचित् तु दधिगुडादयः परिणमनशक्तिस्वाभाव्यात् परस्परपरिणतिहेतवः, पूर्वषामेकतः परिणतिशक्तिः पाटवातिशयात्, एवं परिणामादनवस्थिताः स्पर्शादिशब्दादयः, परिणामानवस्थितत्वे प्रतिपादिते लब्धावकाशः पुनः अत्राह—द्वयोरपि बध्यमानयोर्गुणवत्त्वे सति कथं परिणामो भवतीति? एवं मन्यते—भवतु परिणतिविशेषादनवस्थितं गुणवत्त्वम्, अण्वोस्तु बध्यमानयोर्गुणवत्त्वे सति तुल्यगुणयोर्विषमगुणयोर्वा संख्यया द्विगुणस्निग्धस्य द्विगुणरूक्षस्य वेत्यादेस्तथैकगुणस्निग्धस्य त्रिगुणस्निग्धस्य चेत्यादेरेकगुणरूक्षस्य त्रिगुणरूक्षादेः कथं-केन प्रकारेण परिणामो भवति?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अयमभिप्रायः—किं द्विगुणस्निग्धो द्विगुणरूक्षं स्नेहात्मतया परिणमयत्युत द्विगुणरूक्षो द्विगुणस्निग्धं रूक्षात्मतया परिणमयतीति ? एवं शेषविकल्पाः द्रष्टव्याः। तथा किमेकगुणस्निग्धास्त्रिगुणस्निग्धामात्मसात्करोतीत्येवं त्रिगुणस्निग्धः एकगुणस्निग्धमित्यादिसंदेहविच्छेदायात्रोच्यते—

—तत्त्व० अ ५। सू ३५

भाष्य—स्निग्धरूक्षयोः पुद्गलयोः स्पृष्टयो बंधो भवति ॥३२॥

अत्र आह किमेष एकान्त इति।

सिद्ध टीका—'स्निग्धरूक्षयोरित्यादि भाष्यम्। स्नेहो हि गुण स्पर्शाख्यः, तत्परिणामः स्निग्धः, तथा रूक्षोऽपि, एकः स्निग्धोऽपरो रूक्षः, तयोर्भावः स्निग्धरूक्षत्वं तत्परिणामापत्तिः तस्मात् स्निग्धरूक्षत्वादिति हेतो पंचमी, अण्वोरणूनां वा बंधो भवति। × × ×। स्पृष्टयोरिति संयुक्तयोर्नासंयुक्तयोरिति, अनेन संयोगमात्रं गृहीतं संयोगपूर्वकसकलबंधज्ञापनार्थम्, तत्र बंधात् प्रतिघातो जायतेऽण्वोरणूनां वा, प्रतिघातश्चैकदेशावगाहेऽन्योन्यं प्रतिहननम्। × × ×।

अत्राहेत्यादिसंबंधप्रतिपत्तिः किमेषः एकांत इति ? किमिति प्रश्नार्थः, एष इत्यन्तरयोगार्थाभिसंबंधः, स्निग्धगुणानां, रूक्षगुणानां च बंधो भवतीति, इतिशब्दोऽवधारणार्थः। किमेष नियम एव सर्वस्य स्निग्धगुणस्य रूक्षगुणेन बंध इति, एवं पृष्टे अत्रोच्यते इत्याह—

भाष्य—स्निग्ध और रूक्ष पुद्गलों के स्पृष्ट होने से बंध रूप परिणमन होता है लेकिन यह एकांत नियम नहीं है।

टीका—पुद्गल के स्पर्श गुण के आठ भेदों में स्नेह और रूक्ष गुण भी हैं। इन स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श गुणों के कारण पुद्गल का बंध रूप परिणमन होता है।

पुद्गलों के स्पृष्ट होने से अर्थात् संयुक्त होने से बंध होता है, असंयुक्त का बंध नहीं होता है। पुद्गलों के सकल बंध संयोग पूर्वक ही होते हैं—ऐसा समझना चाहिए। बंध होने से दो अणुओं या अनेक अणुओं का परस्पर में प्रतिघात होता है और यह प्रतिघात जब एक देश अवगाही होता है तब अणुओं का परस्पर प्रतिहनन होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्निग्ध और रूक्ष स्पर्शों के कारण संयोग होने से ही बंध होता है— ऐसा एकान्त नियम नहीं है।

पुद्गल के बंधन के नियमों में गुण शब्द के दो अर्थ ग्रहण किये गये हैं— (१) पुद्गल के वर्ण, गंध, रस, स्पर्श गुण तथा (२) इन गुणों की शक्ति-अंश। यथा—एक गुण काला, दो गुण काला, अनेक गुण काला, अनंत गुण काला वर्ण। इसी प्रकार यहाँ पर एक गुण स्निग्ध, दो गुण स्निग्ध, अनेक गुण स्निग्ध, अनंत गुण स्निग्ध तथा एक गुण रूक्ष, दो गुण रूक्ष, अनेक गुण रूक्ष, अनंत गुण रूक्ष ग्रहण करना चाहिए।

हमने गुण की शक्ति के अंश के स्थान पर गुणांश शब्द का व्यवहार किया है।

(ग) मुत्तो रूवादिगुणो बज्झदि फासेहिं अण्णमण्णेहिं।

—प्रव० अ २। गा ८१

टीका—मूर्तयोर्हि तावत्पुद्गलयो रूवादिगुणयुक्तत्वेन यथोदितस्निग्ध-रूक्षत्वस्पर्शविशेषादन्योन्यबंधोऽवधार्यते।

(घ) णिद्धा वा लुक्खा वा अणुपरिणामा समा व विसमावा।
समदो दुराधिगा जदि बज्झंति हि आदिपरिहीणा॥
णिद्धत्तणेण दुगुणो चदुगुणणिद्धेण बंधमणुभवंति।
लुक्खेण वा तिगुणिदो अणु बज्झदि पंचगुणजुत्तो॥

—प्रव० अ २। गा ७३-७४

टीका—समतो द्व्यधिकगुणद्धि स्निग्धरूक्षत्वाद् बंधइत्युत्सर्गः, स्निग्ध-रूक्षद्व्यधिकगुणत्वस्य हि परिणामकत्वेन बंधसाधनत्वात्। न खल्वेकगुणात् स्निग्धरूक्षत्वाद्बंध इत्यपवादः एक गुणस्निग्धरूक्षत्वस्य हि परिणम्य परिणामकत्वाभावेन बंधस्यासाधनत्वात् × × ×। यथोदितहेतुकमेव परमाणूनां पिंडत्वमवधार्यं द्विचतुर्गुणयोस्त्रिपंचगुणयोश्च द्वयोः स्निग्धयोः द्वयोरूक्षयोर्द्वयोः स्निग्धरूक्षयोर्वा परमाण्वोर्बन्धस्य प्रसिद्धेः।

(च) णिद्धस्स णिद्धेण दुराधिएण लुक्खस्स लुक्खेण दुराधिएण।
णिद्धस्स लुक्खेण हवेइ बंधो जहण्णवज्जो विसमे समे वा॥

—गोजी० गा ६१४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छ) × × ×। जघन्यो गुणो येषां ते जघन्यगुणास्तेषां जघन्यगुणानां नास्ति बंधः। एतदुक्तं भवति—एकगुणस्निग्धस्य एकगुणस्निग्धेन द्वितीयादिसंख्येयाऽसंख्येयानन्तगुणस्निग्धेन वा नास्ति बंधः। तस्यैवैकगुणस्निग्धस्य एकगुणरूक्षेण द्वयादिसंख्येयाऽसंख्येयानन्तगुणस्निग्धेन वा नास्ति बंधः। तथा एकगुणरूक्षस्यापि योज्यमिति।

× × ×। सदृशग्रहणे पुनः सति द्विगुणस्निग्धानां द्विगुणस्निग्धैर्द्विगुण रूक्षाणां द्विगुणरूक्षैरित्येवमादिषु बंधनिषेधः कृतो भवति।

द्वयधिकश्चतुर्गुणः ॥१॥ द्वाभ्यां गुणाभ्यामधिकोः द्वयधिकः। कः पुनरसौ ? चतुर्गुणः ?

आदिशब्दस्य प्रकारार्थत्वात् पंचगुणादिसंप्रत्ययः ॥२॥ द्वयाधिकादीत्ययमादिशब्दः प्रकारार्थः। कः पुनरसौ प्रकारः ? द्वाभ्यामधिकता। तेन पंचगुणादीनां संप्रत्ययो भवति। 'अवयवेन विग्रहः समुदायो वृत्त्यर्थः' इति चतुर्गुणस्यापि ग्रहणं भवति। तेन द्वयधिकादिगुणानां तुल्यजातीयानामतुल्यजातीयानां च बंध उक्तो भवति, नेतरेषाम्। तद्यथा—द्विगुणस्निग्धस्य परमाणोः एकगुणस्निग्धेन द्विगुणस्निग्धेन त्रिगुणस्निग्धेन वा नास्ति बंधः, चतुर्गुणस्निग्धेन पुनरस्ति बंधः। तस्यैव पुर्नद्विगुणस्निग्धस्य पंचगुणस्निग्धेन षट्सप्ताष्टनवदशसंख्येयाऽसंख्येयानन्तगुणस्निग्धेन बंधो न विद्यते।

एवं त्रिगुणस्निग्धस्य पंचगुणस्निग्धेन बंधोऽस्ति, शेषैः पूर्वोत्तरैर्नभवति। चतुर्गुणस्निग्धस्य षट्गुणस्निग्धेनास्ति बंधः शेषैः पूर्वोत्तरर्नास्ति। एवं शेषेष्वपि योज्यः। तथा द्विगुणरूक्षस्य एकद्वित्रिगुणरूक्षैर्नास्ति बंधः, चतुर्गुणरूक्षेण त्वस्ति बंधः। तस्यैव द्विगुणरूक्षस्य पंचगुणरूक्षादिभिरुत्तरैर्नास्ति बंधः। एवं त्रिगुणरूक्षादिनामपि द्विगुणाधिकैर्बन्धो योज्यः। एवं भिन्नजातीयेष्वपि द्विगुणस्निग्धस्य एकद्वित्रिगुणरूक्षैर्नास्ति बंधः, चतुर्गुणरूक्षेणत्वस्ति बंधः, उत्तरैः पंचगुणरूक्षादिभिर्नास्ति। एवं त्रिगुणस्निग्धादीनां पंचगुणरूक्षादिभिरस्ति, शेषैः पूर्वोत्तरैर्नास्ति बंधः इति योज्यः।

—तत्त्वराज० अ ५। सू ३३ से ३५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधेऽधिकौ पारिणामिकौ

—तत्त्व० अ ५ । सू ३६

तत्त्व राज टीका — × × ×। यथा क्लिन्नगुडोऽधिकमधुररसःपतितानां रेण्वादीनां स्वगुणापादनात् परिणामकः, तथा अन्योऽपि अधिकगुणः अल्पीयसः परिणामक इति कृत्वा द्विगुणादिस्निग्धरूक्षस्य चतुर्गुणादिस्निग्ध-रूक्ष परिणामको भवतीति ततः पूर्वस्याप्रच्यवपूर्वकं तार्तीयकमवस्थान्तरं प्रादुर्भवतीत्येकस्कंधत्वमुपपद्यते, इतरथा हि शुक्लकृष्णतन्तुवत्संयोगे सत्य-प्यपरिणामकत्वात् सर्वं विविक्तरूपेणैवावतिष्ठेत। दृश्यते हि श्लेषे सति वर्णगंधरसस्पर्शानामवस्थान्तरभावः शुक्लपीतादिसंयोगे शुक्लपत्रवर्णादि-प्रादुर्भाववत्।

(ज) वो—तिण्णिआदिपोग्गलाणं जो समवाओ सो पोग्गलबंधो णाम × × ×। जेण-णिद्ध-ल्हुक्खादिगुणेण पोग्गलाणं बंधो होदि सो पोग्गल-बंधो णाम।

—षट्० खं० ५, ५। सू ८२। टीका। पु १३। पृ० ३४७

जो सो थप्पो सादियविस्ससाबंधो णाम तस्स इमो णिद्देसो—वेमादा णिद्धदा वेमादा ल्हुक्खदा बंधो।

—षट्० खं० ५, ६। सू ३२। टीका। पु १४। पृ० ३०

टीका— × × ×। णिद्धदाए विसरिसत्तं ल्हुक्खदं पेक्खिदूण ल्हुक्खदाए विसरिसत्तं णिद्धदं पेक्खिदूण घेत्तव्वं। तेण णिद्धपरमाणूणं ल्हुक्खपरमाणूहि सह बंधो होदि, गुणेण सरिसत्ताभावादो।

णिद्धणिद्धा ण बज्झंति ल्हुक्खल्हुक्खा य पोग्गला।
णिद्धल्हुक्खा य बज्झंति रूवारूवी य पोग्गला॥

—षट्० खं० ५, ६। सू ३४। टीका। पु १४। पृ० ३१

टीका— × × ×। णिद्धपरमाणू णिद्धपरमाणूहि ण बज्झंति, णिद्ध-गुणभावेण समाणत्तादो। ल्हुक्खा पोग्गला ल्हुक्खपोग्गलेहि सह बंधं णागच्छंति, ल्हुक्खगुणभावेण समाणत्तादो। बिदियद्धेण पढमसुत्तद्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परूवेदि। 'णिद्ध-ल्हुक्खाय बज्झंति' णिद्धा पोग्गला ल्हुक्खा पोग्गला च परोप्परं बंधमागच्छंति, विसरिसत्तादो। णिद्धल्हुक्खपोग्गलाणं किं गुणा विभागपडिच्छेदेहि सरिसाणं बंधो होदि आहो विसरिसाणं बंधो होदि त्ति पुच्छिदे 'रूवारूवी य पोग्गला बज्झंति' त्ति भणिदं। गुणविभागपडिच्छेदेहि समाणा जे णिद्धल्हुक्खगुणजुत्तपोग्गला ते रूविणोणाम ते वि बज्झंति। विसरिसा पोग्गला अरूविणो णाम। ते वि बंधमागच्छंति। णिद्धल्हुक्ख पोग्गलाणं गुणाविभागपडिच्छेदसंखाए सरिसाणमसरिसाणं च बंधो होदि त्ति भणिदं होदि।

वेमादा णिद्धदा वेमादा ल्हुक्खदा बंधो।

—षट्० खं० ५, ६। सू ३५। टीका। पु १४। पृ० ३२

टीका—× × ×। द्वे मात्रे यस्यां स्निग्धतायामधिके हीनेवा द्विमात्रा स्निग्धता, सो बंधो बंधकारणं होदि। णिद्धपोग्गला वेअविभागपडिच्छेदुत्तरणिद्धपोग्गलेहि वेअविभागपडिच्छेदहीणणिद्धपोग्गलेहि वा बज्झंति। तण्णिआदिअविभागपडिच्छेदुत्तरपोग्गलेहि तिण्णिआदिअविभागपडिच्छेदुत्तरपरिहीणपोग्गलेहि च बंधो णत्थि त्ति घेत्तव्वं। एवं ल्हुक्खपोग्गलाणं पि ल्हुक्खपोग्गलेहि सह बंधो वत्तव्वो।

णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिएण ल्हुक्खस्स ल्हुक्खेण दुराहिएण।
णिद्धस्सल्हुक्खेण हवेदिबंधो जहण्णवज्जे विसमे समे वा॥

—षट्० खं० ५, ६। सू ३६। पु १४। पृ० ३३

टीका—णिद्धस्स पोग्गलस्स अण्णंण णिद्धपोग्गलेण जदि बंधो होदि तो दुराहिएणव। ल्हुक्खस्स ल्हुक्खेण जदि बंधो होदि तो वि दुराहिएण बंधो होदि। णिद्धस्स सव्वपोग्गलस्स ल्हुक्खेण सव्वेणपोग्गलेण सह बंधो होदि सो कत्थ होदि त्ति भणिदे 'विसमे समे वा।' गुणाविभागपडिच्छेदेहि ल्हुक्खपोग्गलेण सरिसो णिद्धपोग्गलो समोणामा असरिसो विसमोणाम। तत्थ णिद्ध-ल्हुक्खेण पोग्गलाण बंधो होदि [त्ति] सव्वेसिं पोग्गलाणं बंधे 'संपत्ते जहण्णज्जे' त्ति भणिदं। जहण्णगुणाणं णिद्ध-ल्हुक्खपोग्गलाणं सत्थाणेण परत्थाणेण वा णत्थि बंधो। एवं गुणविसिट्ठाणं पोग्गलाणं बंधो होदि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो, तीन आदि पुद्गलों का (परमाणु पुद्गलों का) जो समवाय संबंध होता है उसे पुद्गल बंध कहते हैं। जिस स्निग्ध और रुक्ष आदि गुण के कारण पुद्गलों का बंध होता है उसे पुद्गल बंध कहते हैं।

विसदृश स्निग्धता और विसदृश रूक्षता बंध है। अर्थात् स्निग्धता में विसदृश्यता रूक्षता की अपेक्षा और रुक्षता में विसदृश्यता स्निग्धता की अपेक्षा समझनी चाहिए। फलस्वरूप स्निग्ध परमाणुओं का रूक्ष परमाणुओं के साथ बंध होता है और रूक्ष परमाणुओं का भी स्निग्ध परमाणुओं के साथ बंध होता है क्योंकि यहाँ गुण की अपेक्षा समानता नहीं पाई जाती है।

स्निग्ध परमाणु अन्य स्निग्ध परमाणुओं के साथ नहीं बंधते क्योंकि स्निग्ध गुण की अपेक्षा वे समान है। रूक्ष पुद्गल अन्य रूक्ष पुद्गलों के साथ नहीं बंधते, क्योंकि रूक्ष गुण की अपेक्षा वे समान है।

'णिद्धल्हुक्खा ण बज्झंति' अर्थात् स्निग्ध पुद्गल और रूक्ष पुद्गल परस्पर बंध को प्राप्त होते हैं, क्योंकि इनमें विसदृश्यता पाई जाती है। क्या गुणों के अविभाग प्रतिच्छेदों की अपेक्षा समान स्निग्ध और रूक्ष पुद्गलों का बंध होता है या अविभाग प्रतिच्छेदों की अपेक्षा विसदृश स्निग्ध और रूक्ष पुद्गलों का बंध होता है—ऐसा प्रश्न करने पर 'रूवारूवी य पोग्गला बज्झंति' यह कहा है। जो स्निग्ध और रूक्ष गुणों से युक्त पुद्गल गुणों के अविभाग प्रतिच्छेदों की अपेक्षा समान होते हैं वे रूपी कहलाते हैं। वे भी बंध को प्राप्त होते हैं। और विसदृश पुद्गल अरूपी कहलाते हैं —वे भी बंध को प्राप्त होते हैं।

स्निग्ध और रूक्ष पुद्गल गुणों के अविभाग-प्रतिच्छेदों की संख्या की अपेक्षा चाहे समान हों, चाहे असमान हों—उनका परस्पर बंध होता है।

द्विमात्रा स्निग्धता और द्विमात्रा रूक्षता (परस्पर) बंध है। जिस स्निग्धता में दो मात्रा अधिक या हीन होती है वह द्विमात्रा स्निग्धता कहलाती है—वह बंध है अर्थात् बंधन का कारण है। स्निग्ध पुद्गल दो अविभाग—प्रतिच्छेद अधिक स्निग्ध पुद्गलों के साथ या दो अविभाग-प्रतिच्छेद कम स्निग्ध पुद्गलों के साथ बंधते हैं। इनका तीन आदि अविभाग प्रतिच्छेद अधिक पुद्गलों के साथ और आदि अविभाग-प्रतिच्छेदक पुद्गलों के साथ बंध नहीं होता है। इसी प्रकार रूक्ष पुद्गलों का रूक्ष पुद्गलों के साथ बध का कथन करना चाहिए।

स्निग्ध पुद्गल का दो गुण अधिक स्निग्ध पुद्गल के साथ और रूक्ष पुद्गल का दो गुण अधिक रूक्ष पुद्गल के साथ बंध होता है। तथा स्निग्ध पुद्गल का रूक्ष पुद्गल के साथ जघन्य गुण के सिवाय विषम या सम गुण के रहने पर बंध होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्निग्ध सब पुद्गल का रूक्ष सब पुद्गल के साथ जो बंध होता है वह किस अवस्था में होता है, ऐसा पूछने पर 'विसमे समे वा' यह वचन कहा है। गुण के अविभाग-प्रतिच्छेदों की अपेक्षा रूक्ष पुद्गल के साथ सदृश स्निग्ध पुद्गल सम कहलाता है और असदृश स्निग्ध पुद्गल विषम कहलाता है। यहाँ स्निग्ध और रूक्ष गुण के द्वारा पुद्गलों का बंध होता है। इस नियम के अनुसार सब पुद्गलों का बंध प्राप्त होने पर 'जहण्णवज्जे' यह कहा है। जघन्य गुणवाले स्निग्ध और रूक्ष पुद्गलों का न तो स्वस्थान की अपेक्षा बंध होता है और न परस्थान की अपेक्षा ही बंध होता है।

इस तरह इस प्रकार के गुणविशिष्ट पुद्गलों का बंध होता है।

·५२·४ स्कंध पुद्गल और बंधन तथा भेदन
(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·३२·४)

दो परमाणु पुद्गल एकत्र होकर जब बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक द्विप्रदेशी स्कंध होता है। उस द्विप्रदेशी स्कंध के भेद-विभाग होने से उसके एक-एक परमाणु पुद्गल के दो विभाग होते हैं।

तीन परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक तीन प्रदेशी स्कंध होता है। यदि उस तीन प्रदेशी स्कंध के भेद-विभाग होते हैं तो उनके दो या तीन विभाग होते हैं। यदि दो विभाग हों तो एक विभाग में एक परमाणु पुद्गल और दूसरे विभाग में एक द्विप्रदेशी स्कंध होगा। यदि तीन विभाग हों तो तीन परमाणु पुद्गल पृथक्-पृथक् होंगे।

चार परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है और यदि इस चतुष्प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन अथवा चार विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा दो प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(२) यदि तीन विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु का होगा।

(३) यदि चार विभाग हों तो चार परमाणु पुद्गल के चार अलग-अलग विभाग होंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाँच परमाणु पुद्गल जब एकत्र होकर बंधन को प्राप्त होते हैं तब उनका एक पंच प्रदेशी स्कंध होता है। और यदि इस पाँच प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार अथवा पाँच विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु पुद्गल का विभाग और दूसरा एक चतुष्प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा अथवा एक द्विप्रदेशी स्कंध का विभाग और दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा।

(२) यदि तीन विभाग हों तो तीन प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा। अथवा एक परमाणु पुद्गल का विभाग और द्विप्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(३) यदि चार विभाग हों तो द्विप्रदेशी स्कंध का एक विभाग और दूसरा-तीसरा-चौथा विभाग एक परमाणु पुद्गल का होगा।

(४) यदि पाँच विभाग हों तो पाँच परमाणु पुद्गल के पाँच अलग-अलग विभाग होंगे।

तीन परमाणु से लेकर दस परमाणु तक यावत् संख्यात परमाणु; असंख्यात परमाणु यावत् अनंत परमाणु तक के बंधन तथा भेदन के विकल्प की जानकारी के लिए देखें—परमाणु पुद्गल ·३२·४·१ से ·३२·४·१२ तक

·५२ ५ स्कंध पुद्गल और पर्याय संख्या

दुपएसिया णं पुच्छा। (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! दुपएसिए दुपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सियतुल्ले सिय अब्भहिए—जइ हीणे पएसहीणे, अह अब्भहिए पएसमब्भहिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादीहिं उवरिल्लेहिं चउहिं फासेहि य छट्ठाणवडिए ॥५०५॥

एवं तिपएसिए वि। नवरं ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए—जइहीणे पएसहीणे वा दुपएसहीणे वा, अह अब्भहिए पएसमब्भहिए वा दुपएसमब्भहिए वा ॥५०६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं जाव दसपएसिए। नवरं ओगाहणाए पएसपरिवुड्ढी कायव्वा जाव दसपएसिए नवरं णवपएसहीणे त्ति ॥५०७॥

संखेज्जपएसियाणं पुच्छा (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ। गोयमा। संखेज्जपएसिय खंधे संखेज्जपएसियखंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए—जइ हीणे संखेज्जाभागहीणे वा संखेज्ज-गुणहीणे वा, अह अब्भइए एवं चेव, ओगाहणट्ठयाए वि दुट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादि-उवरिल्लचउफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए।

असंखेज्जपएसियाण पुच्छा (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! असखेज्जपएसिए खंधे असंखेज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाण-वडिए, वण्णादि-उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए ॥५०९॥

अणंतपएसियाणं पुच्छा। (केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?) गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे अणंतपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्ण-गंध-रस-फास-पज्जवेहिं छट्ठाणवडिए ॥५१०॥

—पण्ण० प ५। सू ५०५ से ५१०। पृ० ३६३

टीका— × × × परमाण्वादीनामसंख्यातप्रदेशकस्कंधपर्यन्तानां केषा-ञ्चिदनन्त प्रदेशकानामपि स्कंधानां तथा एक प्रदेशावगाढानां याव-त्संख्यातप्रदेशावगाढानां शीतोष्णस्निग्धरूक्षरूपाश्चत्वार एव स्पर्शा इति तेरेव परमाण्वादीनां षट्स्थानपतितता वक्तव्या, न शेषः।

द्विप्रदेशकस्कंध सूत्रे—(ओगाहणट्ठयाए सिय हीण सिय तुल्ले सिय अब्भहिए इत्यादि) यदा द्वावपि द्विप्रदेशकौ स्कंधौ द्विप्रदेशावगाढावेक-प्रदेशावगाढौ वा भवतस्तदा तुल्यावगाहनौ, यदा त्वेको द्विप्रदेशावगाढस्तदा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकप्रदेशावगाढो द्विप्रदेशावगाढापेक्षया प्रदेशहीनो, द्विप्रदेशावगाढस्तु तदपेक्षया प्रदेशाभ्यधिकः, शेषं प्राग्वत् ।

त्रिप्रदेशस्कंधसूत्रे—(ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे इत्यादि) यदा द्वावपि त्रिप्रदेशकौ स्कंधौ त्रिप्रदेशावगाढौ स्कंधौ त्रिप्रदेशावगाढौ द्विप्रदेशावगाढावेकप्रदेशावगाढौ वा तदा तुल्यौ, यदा त्वेकस्त्रिप्रदेशावगाढो वा द्विप्रदेशावगाढो वाऽपरस्तु द्विप्रदेशावगाढ एक प्रदेशावगाढो वा तदा द्विप्रदेशावगाढैकप्रदेशावगाढौ यथाक्रमं त्रिप्रदेशावगाढद्विप्रदेशावगाढापेक्षया एकप्रदेशहीनौ, त्रिप्रदेशावगाढद्विप्रदेशावगाढौ तु तदपेक्षया एक प्रदेशाभ्यधिकौ, यदा त्वेकस्त्रिप्रदेशावगाढोऽपर एक प्रदेशावगाढस्त्रिप्रदेशावगाढापेक्षया द्विप्रदेशहीनस्त्रिप्रदेशावगाढस्तु तदपेक्षया द्विप्रदेशाभ्यधिकः एवमेकैक प्रदेशपरिवृद्धया चतुःप्रदेशाऽऽदिषु स्कंधेष्ववगाहनामधिकृत्य हानिर्वृद्धिर्वा तावद्वक्तव्या यावद्दशप्रदेशकस्कंधः। तस्मिंश्च दशप्रदेशकस्कध एवं वक्तव्यम्—"जइ हीणे पएसहीणे वा दुपएसहीणे वा जाव नवपएसहीणे वा, अह अब्भहिए पएसमब्भहिए वा दुपएसमब्भहिए वा जाव नवपएसमब्भहिए इति।" भावना पूर्वोक्तानुसारेण स्वयं कर्तव्या।

संख्यातप्रदेशकस्कंध सूत्रे—(ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए इति) संख्येयभागेन संख्येयगुणेन वेति।

असंख्यात प्रदेशकस्कंधे—(ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए इति) असंख्यातभागेन संख्यातभागेन संख्यातगुणनाऽसंख्यातगुणेनेति।

अनंतप्रदेशस्कंधेऽप्यवगाहनार्थतया चतुःस्थानपतितता, अनंतप्रदेशावगाहनयाऽसंभवतोऽनन्तभागानन्तगुणाभ्यां वृद्धिहान्यसंभवात्।

द्विप्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है तथा प्रदेश रूप से भी तुल्य है।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है; यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है। (चतुःस्थान न्यून) यदि अधिक है तो असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है। (चतुः-स्थान अधिक)।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से कृष्ण वर्ण पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून) यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक)।

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से सुगंध पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है। (छःस्थान न्यून) यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक)

जिस प्रकार सुगंध पर्याय रूप से द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्व है वैसे ही दुर्गंध पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से तिक्त रस पर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है। (छःस्थान न्यून)। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक)।

जिस प्रकार तिक्त रस पर्याय रूप से द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से शीत स्पर्श पर्याय से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है (छःस्थान न्यून)। यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक)।

जिस प्रकार शीत स्पर्श पर्याय रूप से द्विप्रदेशी स्कंध द्विप्रदेशी स्कंध से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। अतः द्विप्रदेशी स्कंध में अनंत पर्याय होते हैं।

तीन प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

तीन प्रदेशी स्कंध तीन प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है तथा प्रदेश रूप से भी तुल्य है।

तीन प्रदेशी स्कंध तीन प्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है।

तीन प्रदेशी स्कंध तीन प्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

तीन प्रदेशी स्कंध तीन प्रदेशी स्कंध से कृष्णवर्णपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध तीन प्रदेशी स्कंध से नीलवर्णपर्याय रूप से, रक्त-वर्णपर्याय रूप से, पीतवर्णपर्याय रूप से, शुक्लवर्णपर्याय रूप से, सुगन्धपर्याय रूप से, दुर्गन्धपर्याय रूप से, तिक्तरसपर्याय रूप से, कटुरसपर्याय रूप से, कषायरसपर्याय रूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से, आम्लरसपर्याय रूप से, मधुरसपर्याय रूप से, शीतस्पर्शपर्याय रूप से, उष्णस्पर्शपर्याय रूप से, स्निग्धस्पर्शपर्याय रूप से, रूक्ष स्पर्शपर्याय रूप से छःस्थानन्यूनाधिक है अथवा तुल्य में।

इसी प्रकार चार प्रदेशी, पाँच प्रदेशी, छःप्रदेशी, सात प्रदेशी, आठ प्रदेशी, नव प्रदेशी तथा दस प्रदेशी स्कंधों के विषय में समझना चाहिए परन्तु—

चार प्रदेशी स्कंध चार प्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है।

पाँच प्रदेशी स्कंध पाँच प्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है।

छः प्रदेश स्कंध छः प्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है अथवा पाँच प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है अथवा पाँच प्रदेश अधिक है।

सात प्रदेशी स्कंध सात प्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है अथवा पाँच प्रदेश न्यून है अथवा छः प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है अथवा पाँच प्रदेश अधिक है अथवा छः प्रदेश अधिक है।

आठ प्रदेश स्कंध आठ प्रदेशी स्कंध से अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है अथवा पाँच प्रदेश न्यून है अथवा छः प्रदेश न्यून है अथवा सात प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है अथवा पाँच प्रदेश अधिक है अथवा छः प्रदेश अधिक है अथवा सात प्रदेश अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नव प्रदेशी स्कंध नव प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है अथवा पाँच प्रदेश न्यून है अथवा छः प्रदेश न्यून है अथवा सात प्रदेश न्यून है अथवा आठ प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है अथवा पाँच प्रदेश अधिक है अथवा छः प्रदेश अधिक है अथवा सात प्रदेश अधिक है अथवा आठ प्रदेश अधिक है।

दस प्रदेशी स्कंध दस प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है अथवा पाँच प्रदेश न्यून है अथवा छःप्रदेश न्यून है अथवा सात प्रदेश न्यून है अथवा आठ प्रदेश न्यून है अथवा नव प्रदेश न्यून है अथवा दस प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है अथवा पाँच प्रदेश अधिक है अथवा छःप्रदेश अधिक है अथवा सात प्रदेश अधिक है अथवा आठ प्रदेश अधिक है अथवा नव प्रदेश अधिक है।

संख्यात प्रदेशी स्कन्धों में अनंत पर्याय होते हैं।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से द्रव्य रूप से तुल्य है।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो संख्यात भाग न्यून है तथा संख्यात गुण न्यून है। (द्विस्थान न्यून)। यदि अधिक है तो संख्यात भाग अधिक है तथा संख्यात गुण अधिक है। (द्विस्थान अधिक है)।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो संख्यात भाग न्यून है तथा संख्यात गुण न्यून है (द्विस्थान न्यून)। यदि अधिक है तो संख्यात भाग अधिक है तथा संख्यात गुण अधिक है। (द्विस्थान अधिक है)।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कंध से कृष्णवर्णपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार कृष्णवर्णपर्याय रूप से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्णपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से सुगन्धपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार सुगन्धपर्याय रूप से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही दुर्गन्धपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से तिक्त रसपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार तिक्तरसपर्याय रूप से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से शीतस्पर्शपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार शीतस्पर्शपर्याय रूप से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उष्ण-स्निग्ध-रूक्षपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः संख्यात प्रदेशी स्कन्ध में अनंतपर्याय होते हैं।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्धों में अनंतपर्याय होते हैं।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से द्रव्य रूप से तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से प्रदेश रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक हैं अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से अवगाहना रूप से चतुस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से स्थिति रूप से भी चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्ल-वर्णपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से सुगन्ध-दुर्गंध पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है। अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध से तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल मधुररस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

असंख्यात प्रदेश स्कंध असंख्यात प्रदेशी स्कंध से शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्षपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

अनंत प्रदेशी स्कन्ध अनंत प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कंध अनंत प्रदेशी स्कंध से प्रदेश रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कंध अनंत प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कंध अनंत प्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कंध अनंत प्रदेशी स्कंध से कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्णपर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कन्ध अनंत प्रदेशी स्कन्ध से सुगन्ध-दुर्गन्ध पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कन्ध अनंत प्रदेशी स्कन्ध से तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अनंत प्रदेशी स्कन्ध अनंत प्रदेशी स्कन्ध से कर्कश स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार अनंत प्रदेशी स्कन्ध अनंत प्रदेशी स्कन्ध से मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

·५२·५·१ जघन्य-मध्यम-उत्कृष्ट प्रदेशी स्कंधों की संख्या पर्याय—

जहण्णपएसियाणं भंते ! खंधाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णपएसिए खंधे जहण्णपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए-जइ हीणे पएसहीणे अह अब्भइए पएसमब्भइए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्ण-गंध-रस-उवरिल्ल-चउफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए।

उक्कोसपएसियाणं भंते ! खंधाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! उक्कोसपएसिए खंधे उक्कोसपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादि-अट्ठफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए।

अजहण्णमणुक्कोसपएसियाणं भंते ! खंधाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ? गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! अजहण्णमणुक्कोसपएसिए खंधे अजहण्णमणुक्कोसपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादि अट्ठफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए।

—पण्ण० प ५। सू ५५४। पृ० ३६९

जघन्य प्रदेश वाले स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य प्रदेश वाले स्कंध जघन्य प्रदेश वाले स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है।

जघन्य प्रदेशवाले स्कंध जघन्य प्रदेशवाले स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है तथा यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है।

जघन्य प्रदेशवाले स्कंध जघन्य प्रदेशवाले स्कंध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य प्रदेशवाले स्कंध जघन्य प्रदेशवाले स्कंध से वर्ण पर्याय रूप से, (कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से) गंध पर्याय रूप से, (सुगंध-दुर्गंध पर्याय रूप से) रस पर्याय रूप से (तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से) तथा शीत उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष-स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट प्रदेश वाले स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध उत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है।

उत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध उत्कृष्ट प्रदेश वाले स्कंध से अवगाहना रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। स्थिति रूप से भी चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध उत्कृष्ट प्रदेश वाले स्कंध से वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध उत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से कर्कश, मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) प्रदेश वाले स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से प्रदेश रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से अवगाहना रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। स्थिति रूप से भी चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेशवाले स्कंध से कर्कश, मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५२·५·१ अवगाहना की अपेक्षा स्कंधपुद्गल की पर्याय—

जहण्णोगाहणगाणं भंते ! दुपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! जहण्णोगाहणए दुपएसिए खंधे जहण्णोगाहणगस्स दुपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, कालवण्णपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, सेसवण्ण-गंध-रसपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, सीय-उसिण-णिद्ध-लुक्खफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जहण्णोगाहणगाणं दुपएसियाणं पोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता। उक्कोसोगाहणए वि एवं चेव। अजहण्णमणुक्कोसोगाहणओ नत्थि ॥५२५॥

जहण्णोगाहणगाणं भंते ! तिपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता पज्जवा। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! जहा दुपएसिए जहण्णोगाहणए। उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव। एवं अजहण्णमणुक्कोसोगाहणए वि ॥५२६॥

जहण्णोगाहणयाणं भंते ! चउपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! जहा जहण्णोगाहणए दुपएसिए तहा उक्कोसोगाहणए चउपएसिए वि। एवं जहा उक्कोसोगाहणए दुपएसिए तहा उक्कोसोगाहणए चउप्पएसिए वि। एवं अजहण्णमणुक्कोसोगाहणए वि चउप्पएसिए। णवरं ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भइए-जइ हीणे पएसहीणे, अह ऽब्भहिए पएस-ब्भइए।

·५२·५·१ अवगाहना की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की पर्याय—

एवं जाव दसपएसिए णेयव्वं। णवरमजहण्णुक्कोसोगाहणए पएसपरि-वुड्ढी कातव्वा, जाव दसपएसियस्स सत्त पएसा परिवड्ढिज्जंति ॥५२८॥

जहण्णोगाहणगाणं भंते ! संखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं भंते। एवं वुच्चइ ? गोयमा ! जहण्णोगाहणगे संखेज्जपएसिए जहण्णोगाहणगस्स संखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसोगाहणए वि। अजहण्ण-मणुक्कोसोगाहणए वि एवं चेव। णवरं सट्ठाणे दुट्ठाणवडिए ॥५२९॥

जहण्णोगाहणगाणं भंते ! असंखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा। अणंता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! जहण्णोगाहणए असंखेज्जपएसिए खंधे जहण्णोगाहणगस्स असंखेज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णादि उवरिल्ल-फासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्को-सोगाहणए वि। अजहण्णमणुक्कोसोगाहणए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे चउट्ठाणवडिए ॥५३०॥

·५२·५·१ अवगाहना की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की पर्याय—

जहण्णोगाहणगाणं भंते ! अणंतपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! जहण्णोगाहणए अणंतपएसिए खंधे जहण्णोगाहणगस्स अणंतपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादिउवरिल्ल-चउफासेहिं छट्ठाणवडिए। उक्कोसोगाहणए वि एवं चेव। नवरं ठिईए वि तुल्ले। अजहण्णमणुक्कोसोगाहणगाणं भंते ! अणंतपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! अजहण्णमणुक्कोसोगा-हणए अणंतपएसिए खंधे अजहण्णमणुक्कोसोगाहणस्स अणंतपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाण-वडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादिअट्ठफासेहिं छट्ठाणवडिए।

—पण्ण० ५। सू ५२५-५३१। पृ० ३६४-५

टीका—(जहण्णोगाहगाणं भंते ! दुपएसियाणमित्यादि) जघन्या द्विप्रदेशकस्य स्कंधस्यावगाहना एकप्रदेशाऽऽत्मिका, उत्कृष्टा द्विप्रदेशा-ऽऽत्मिका। अत्र अपान्तरालं नास्तीति मध्यमा न लक्ष्यते। तत उक्तम् (अजहन्नुक्कोसोगाहणओ नत्थि इति) त्रिप्रदेशकस्य जघन्याऽवगाहना एकप्रदेशकरूपा, मध्यमा द्विप्रदेशरूपा, उत्कृष्टा त्रिप्रदेशरूपा। चतुःप्रदेशस्य जघन्या एकप्रदेशरूपा, उत्कृष्टा चतुःप्रदेशाऽऽत्मिका च मध्यमा द्विविधा-द्विविधप्रदेशाऽऽत्मिका च त्रिप्रदेशाऽऽत्मिका।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं च सति मध्यमावगाहनश्चतुःप्रदेशको मध्यमावगाहनचतुःप्रदेशापेक्षया यदि हीनस्तर्हि प्रदेशतो हीनो भवति, अथाभ्यधिकस्ततः प्रदेशतोऽधिकः। एवं पंचप्रदेशाऽऽदिषु स्कंधेषु मध्यमावगाहनामधिकृत्य प्रदेशपरिवृद्ध्या वृद्धिहानिश्च तावद्वक्तव्या यावद्दशप्रदेशके स्कंधे सप्तप्रदेशपरिवृद्धिः। सा चैवं वक्तव्या—"अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए दसपएसिए अजहन्नमणुक्कोसोगाहणस्स दसपएसियस्स खंधस्स ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे पएसहीणे दुपएसहीणे जाव सत्तपएसहीणे, अह अब्भहिए, पएसअब्भहिए दुपएसअब्भहिए० जाव सत्तपएसअब्भहिए" इति शेषं सूत्रं स्वयमुपरि भावनीयं, सुगमत्वात्, नवरमनन्तप्रदेशकोत्कृष्टावगाहना चिंतायाम्—(ठिईए वि तुल्ले इति) उत्कृष्टावगाहनः किलानन्तप्रदेशकः स्कंधः स उच्यते यः समस्तलोकव्यापी स चाचित्तमहास्कधः केवलिसमुद्घातकर्मस्कंधो वा, तयोश्चोभयोरपि दंडकपाटमंथान्तरपूरणकलक्षणश्चतुःसमयप्रमाणतेति तुल्यकालतः। शेषसूत्रमापादपरिसमाप्तेः प्रागुक्तभावनानुसारेण स्वयमुपयुज्य परिभावनीयम्।

·५२·५·१ क्षेत्रावगाहित स्कंध पुद्गल और पर्याय संख्या

जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है तथा अवगाहन रूप से भी तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनवाले द्विप्रदेशी स्कंध से कृष्णवर्णपर्याय रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो अनंत भाग न्यून है, अथवा असंख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात भाग न्यून है अथवा संख्यात गुण न्यून है अथवा असंख्यात गुण न्यून है अथवा अनंत गुण न्यून है। (छःस्थान न्यून) यदि अधिक है तो अनंत भाग अधिक है अथवा असंख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात भाग अधिक है अथवा संख्यात गुण अधिक है अथवा असंख्यात गुण अधिक है अथवा अनंत गुण अधिक है। (छःस्थान अधिक है।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार कृष्णवर्ण पर्याय रूप से जघन्य अवगाहना वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहना वाले द्विप्रदेशी स्कंध से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही शेष वर्ण—नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से, सुगंध-दुर्गंध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से, शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अतः जघन्य अवगाहना वाले द्विप्रदेशी स्कंध में अनंत पर्याय होते हैं।

जिस प्रकार जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वर्णपर्याय रूप से, (कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से) गंध पर्याय रूप से, (सुगन्ध-दुर्गन्ध पर्याय रूप से) रस पर्याय रूप से (तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल मधुर रस पर्याय रूप से) तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उत्कृष्ट अवगाहना वाले द्विप्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है, अवगाहना रूप से भी तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वर्णपर्याय रूप से, गध पर्याय रूप से, रस पर्याय रूप से तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

चूँकि द्विप्रदेशी स्कंध की अवगाहना-जघन्य एक प्रदेश क्षेत्र होती है तथा उत्कृष्ट दो प्रदेश क्षेत्र होती है अतः द्विप्रदेशी स्कंध की—अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहना नहीं होती है।

जघन्य अवगाहना वाले तीन प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य अवगाहना वाले तीन प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहना वाले तीन प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य हैं तथा अवगाहना रूप से भी तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय से, सुगन्ध-दुर्गन्ध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनवाले तीन प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट अवगाहनावाले तीन प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाले तीन प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है तथा अवगाहना रूप से भी तुल्य है, स्थिति रूप से चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से, सुगन्ध दुर्गन्ध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले तीन प्रदेशी स्कधों में भी अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले तीन प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले तीन प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है तथा अवगाहना रूप से भी तुल्य है। स्थिति रूप से चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से, सुगन्ध-दुर्गन्ध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है स्थिति रूप से चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वैसे ही जघन्य अवगाहनावाले चतु:प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले चतु:प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से भी तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है, अवगाहना रूप से भी तुल्य है, स्थिति रूप से चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार उत्कृष्ट अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है। स्थिति रूप से चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप स्पर्श से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। उसी प्रकार उत्कृष्ट अवगाहनावाले चतुष्प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहना वाले चतुष्प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है, अवगाहना रूप से भी तुल्य है। स्थिति रूप से भी चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले चतुष्प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले चतु:प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है, स्थिति रूप से चतु:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। लेकिन अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है ; यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है।

जिस प्रकार चतु:प्रदेशी स्कंध के विषय में कहा है वैसे ही पाँच प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए। परन्तु—अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहना में प्रदेश की वृद्धि-हानि करनी चाहिए। यथा—

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले पांच प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेशी अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले छ:प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले छ:प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले सात प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले सातप्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा यावत चार प्रदेश अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले आठ प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले आठ प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है यावत् पाँच प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा यावत् पाँच प्रदेश अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले नव प्रदेशी स्कंध से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले नव प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है यावत् छःप्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा यावत् छःप्रदेश अधिक है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले दस प्रदेशी स्कंध से अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले दस प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है यावत् सात प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा यावत् सात प्रदेश अधिक है।

जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से प्रदेश रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यनि न्यून है तो संख्यात भाग न्यून है तथा संख्यात गुण न्यून है। (द्विस्थान न्यून है।) यदि अधिक है तो संख्यात भाग अधिक है तथा संख्यात गुण अधिक है। (द्विस्थान अधिक है।)

जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले सख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से वर्ण पर्याय रूप से, (कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से) गंध पर्याय रूप से, (सुगन्ध-दुर्गंध पर्याय रूप से) रस पर्याय रूप से (तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से) तथा स्पर्श पर्याय रूप से (शीत-उष्ण-स्निग्ध रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है तथा वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उत्कृष्ट अवगाहनावाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है तथा वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। अवगाहना रूप से भी द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य अवगाहनावाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। शीत उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार जघन्य अवगाहना वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहना वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है वैसे ही उत्कृष्ट अवगाहना वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। अवगाहना रूप से तुल्य है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गध-रस स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। स्थिति रूप से भी चतुःस्थान न्यूनाधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंध जघन्य अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण पर्याय रूप से, गंध पर्याय रूप से तथा रस पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-स्पर्श पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट अवगाहनावाले अनंतप्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। अवगाहना रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से तुल्य है। वर्ण-गंध-रस-स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध रूक्ष पर्याय रूप से) पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

टीकाकार ने कहा है—उत्कृष्ट अवगाहनावाला अनंत प्रदेशी स्कंध उसको कहा जाता है जो समस्त लोक व्यापी होता है और वह अचित्त महास्कंध या केवलि-समुद्घात अवस्था में कर्मस्कंध रूप होता है। इन दोनों का काल-दण्ड-कपाट-मंथन तथा अंतरपूरण रूप चार समय का होता है अतः स्थिति रूप से तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट अवगाहनावाले अनंत प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, स्थिति रूप से भी चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है तथा कर्कश-मृदु-गुरु-लघु-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छः स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

कालस्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या

जघन्य-उत्कृष्ट-अजघन्य-अनुत्कृष्ट समय स्थिति वाले पुद्गल और पर्याय संख्या

·५२·५·२ जहण्णठिईयाणं दुपएसियाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता। से केणट्ठेणं भंते! गोयमा! जहण्णठिईए दुपएसिए जहण्णठिईयस्स दुपए-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे, अह अब्भतिए पएसअब्भहिए, ठिईए तुल्ले, वण्णादि-चउप्फासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसठिईए वि। अजहण्णमणुक्कोसठिईए वि एवं चेव। नवरं ठिईए चउट्ठाण-वडिए ॥५३३॥

एवं जाव दसपएसिए। नवरं पएसपरिवुड्ढी कातव्वा। ओगाहणट्ठयाए तिसु वि गमएसु जाव दसपएसिए एवं पएसा परिवड्ढिज्जंति ॥५३४॥

जहण्णट्ठिईयाणं भंते ! संखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णठिईए संखेज्जपएसिए खंधे जहण्णठिईयस्स संखेज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए, ठिईए तुल्ले, वण्णादि-चउफासेहि य छट्ठाण-वडिए। एवं उक्कोसठिईए वि। अजहण्णमणुक्कोसठिईए वि एवं चेव। नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए ॥५३५॥

जहण्णठिईयाणं असंखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णठिईए असंखेज्जपएसिए जहण्णठिईयस्स असंखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ओगाहण-ट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए तुल्ले, वण्णादिउवरिल्लचउप्फासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसठिईए वि। अजहण्णमणुक्कोसठिईए वि एवं चेव। नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए ॥५३६॥

जहण्णठिईयाणं अणंतपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णठिईए अणंतपएसिए जहण्णठिईयस्स अणंत-पएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए तुल्ले, वण्णादि-अट्ठफासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसठिईए वि। अजहण्णमणुक्कोसठिईए वि एवं चेव। नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए ॥५३७॥

—पण्ण० प ५। सू ५३३ से ५३७। पृ० ३६५-६६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है।

जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है तथा यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से तुल्य है।

जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, स्थिति रूप से तुल्य है, अवगाहना रूप से कदाचित् एक प्रदेश न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् एक प्रदेश अधिक है। वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। उसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहना रूप से कदाचित् एक प्रदेश न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् एक प्रदेश अधिक है, स्थिति रूप से तुल्य है. वर्ण-गंध-रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से तुल्य है, अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है। स्थिति रूप से चतुः-स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। वर्ण-गंध-रस स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध के विषय में कहा है वैसे ही तीन प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए—परन्तु जघन्य स्थिति वाले, मध्यम स्थिति वाले, उत्कृष्ट स्थिति वाले—इन तीन गमकों में प्रदेश की वृद्धि-हानि करनी चाहिए—यथा—

जघन्य स्थिति वाले तीन प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थिति वाले तीन प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थिति वाले तीन प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थिति वाले तीन प्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) स्थिति वाले तीन प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थिति वाले तीन प्रदेशी स्कंध से—अवगाहन रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले चार प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले चार प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृस्ट स्थितिवाले चार प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले चार प्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले चार प्रदेशी स्कंध अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिवाले चार प्रदेशी स्कंध से—अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, दो प्रदेश न्यून है अथवा तीन प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है, दो प्रदेश अधिक है अथवा तीन प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले पांच प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले पांच प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थितिवाले पाँच प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले पांच प्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पाँच प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पांच प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, दो प्रदेश न्यून है, तीन प्रदेश न्यून है अथवा चार प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है, दो प्रदेश अधिक है, तीन प्रदेश अधिक है अथवा चार प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले छः प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले छः प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थितिवाले छः प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले छः प्रदेशी स्कंध से; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले छः प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले छः प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, दो प्रदेश न्यून है, तीन प्रदेश न्यून है, चार प्रदेश न्यून है अथवा पाँच प्रदेशी न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है, दो प्रदेश अधिक है, तीन प्रदेश अधिक है, चार प्रदेश अधिक है अथवा पाँच प्रदेश अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य स्थितिवाले सात प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले सात प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थितिवाले सात प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले सात प्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले सात प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले सात प्रदेशी स्कध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, दो प्रदेश न्यून है, तीन प्रदेश न्यून है, चार प्रदेश न्यून है, पाँच प्रदेश न्यून है अथवा छ:प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है, दो प्रदेश अधिक है, तीन प्रदेश अधिक है, चार प्रदेश अधिक है, पाँच प्रदेश अधिक है अथवा छ:प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले आठ प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले आठ प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थितिवाले आठ प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले आठ प्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले आठ प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले आठ प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, दो प्रदेश न्यून है, तीन प्रदेश न्यून है, चार प्रदेश न्यून है, पाँच प्रदेश न्यून है, छ:प्रदेश न्यून है अथवा सात प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है, दो प्रदेश अधिक है, तीन प्रदेश अधिक है, चार प्रदेश अधिक है, पाँच प्रदेश अधिक है, छ:प्रदेश अधिक है अथवा सात प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले नवप्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले नवप्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थितिवाले नवप्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले नवप्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले नवप्रदेशी स्कंध अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिवाले नवप्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है। कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, यावत् आठ प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है यावत् आठ प्रदेश अधिक है।

जघन्य स्थितिवाले दस प्रदेशी स्कंध जघन्य स्थितिवाले दस प्रदेशी स्कंध से ; उत्कृष्ट स्थितिवाले दस प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट स्थितिवाले दस प्रदेशी स्कंध से ; अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले दस प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिवाले दस प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है यावत् नव प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है यावत् नव प्रदेश अधिक है।

·५२·५·३ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा स्कंध पुद्गल और पर्याय संख्या

जहण्णगुणकालयाणं भंते ! दुपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णगुणकालए दुपएसिए जहण्णगुणकालगस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भइए-जइ हीणे पएसहीणे, अह अब्भइए पएसमब्भठिईए ; ठिईए चउट्ठाणवडिए, कालवण्णपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसवण्णादि-उवरिल्लचउ-फासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणकालए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणकालए वि। एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५३९॥

एवं जाव दसपएसिए। णवरं पएसपरिवड्ढी, ओगाहणा तहेव ॥५४०॥

जहण्णगुणकालयाणं भंते ! संखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णगुणकालए संखेज्जपएसिए जहण्णगुणकालगस्स संखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए दुट्ठाण-वडिए, ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, कालवण्ण-पज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसेहिं वण्णादि-उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणकालए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणकालए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५४१॥

जहण्णगुणकालयाणं भंते ! असंखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जहण्णगुणकालए असंखेज्जपएसिए जहण्णगुणकालगस्स असंखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, काल-वण्णपज्जवेहिं तुल्ले,अवसेसेहिं वण्णादि-उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणकालए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणकालए वि एवं चेव। णवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५४२॥

जहण्णगुणकालयाणं भंते! अणंतपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अणंता। से केणट्ठेणं भंते ? एवं वुच्चति ? गोयमा। जहण्णगुणकालए अणंतपएसिए जहण्णगुणकालगस्स अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए,ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए,ठिईए चउट्ठाणवडिए, कालवण्णपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसेहिं वण्णादि-अट्ठफासेहि य छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणकालए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणकालए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५४३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं नील-लोहित-हालिद्द-सुविकल्ल-सुब्भिगंध-दुब्भिगंध-तित्त-कडुय-कसाय–अंबिल-महुररसपज्जवेहि य वत्तव्वया भाणियव्वा नवरं परमाणु-पोग्गलस्य सुब्भिगंधस्स दुब्भिगंधो न भण्णति, दुब्भिगंधस्स सुब्भिगंधो न भण्णति, तित्तस्स अवसेसा न भण्णंति, एवं कडुयादीण वि, सेसंतं चेव ॥५४४॥

जहण्णगुणकक्खडाणं अणंतपएसियाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता। से केणट्ठेण? गोयमा! जहण्णगुणकक्खडे अणंतपएसिए जहण्णगुण-कक्खडस्स अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णगंध-रसेहिं छट्ठाणवडिए, कक्खडफासपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसेहिं सत्तफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणकक्खडे वि। अजहण्णमणुक्कोसगुण-कक्खडे वि एवं चेव। नवरं सट्ठाण छट्ठाणवडिए ॥५४५॥

एवं मउय-गरुय-लहुए वि भाणियव्वे ॥५४६॥

जहण्णगुणसीयाणं दुपएसियाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता। से केणट्ठेणं? गोयमा! जहण्णगुणसीए दुपएसिए जहण्णगुणसीयस्स दुपए-सियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए तुल्ले, ओगाहणट्ठयाए सिय हिणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए—जइ हिण पएसहीणे, अह अब्भहिए पएसमब्भइए।

ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्ण-गंध-रसपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, सीयफा-सपज्जवेहिं तुल्ले, उसिणनिद्ध-लुक्खफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणसीए वि। अहण्णमणुक्कोसगुणसीए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५४८॥

एवं जाव दसपएसिए। नवरं ओगाहणट्ठयाए पएसपरिवुड्ढी कायव्वा जाव दसपएसियस्स णव पएसा वड्ढिज्जंति ॥५४९॥

जहण्णगुणसीयाणं संखेज्जपएसियाणं भंते! पुच्छा। गोयमा! अणंता। से केणट्ठेणं? गोयका! जहण्णगुणसीए संखेज्जपएसिए जहण्ण-गुणसीयस्स संखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णाईहिं छट्ठाणवडिए,

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले, उसिण-निद्ध-लुक्खेहिं छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणसीए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणसीए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५५०॥

जहण्णगुणसीयाणं असंखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता। से केणट्ठेणं? गोयमा! जहण्णगुणसीए असंखेज्जपएसिए जहण्णगुणसीयस्स असंखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए। ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादिपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले, उसिण-निद्ध-लुक्ख-फासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणसीए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणसीए वि एवं चेव। नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५५१॥

जहण्णगुणसीयाणं अणंतपएसियाणं पुच्छा। गोयमा! अणंता। से केणट्ठेणं? गोयमा! जहण्णगुणसीए अणंतपएसिए जहण्णगुणसीयस्स अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए, वण्णादिपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले, अवसेसेहिं सत्तफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए। एवं उक्कोसगुणसीए वि। अजहण्णमणुक्कोसगुणसीए वि एव चेव नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए ॥५५२॥

एवं उसिणे निद्धे लुक्खे जहा सीए। × × × ॥५५३॥

—पण्ण० प ५। सू ५३९ से ५४६, ५४८ से ५५३

जघन्य गुण काले वर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंधों में अनंतपर्याय होते हैं।

जघन्य गुण काले वर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध का अन्याश्य जघन्य गुण काले वर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।

(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।

(३) अवगाहनार्थ से—हीनाधिक वा तुल्य।

(४) स्थिति अपेक्षा—चतुःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) काले वर्ण से—तुल्य है।

(६) अवशेष वर्ण से—छ:स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

(७) गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से—षट्स्थान हीनाधिक वा तुल्य।

जघन्य गुण कालेवर्णवाले द्विप्रदेशी स्कंध में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः जघन्य गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध में भी इन अपेक्षाओं से अनंतपर्याय होते हैं—ऐसा निरूपण किया गया है।

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले (एक गुण कृष्णवर्ण वाले) द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध में द्रव्य रूप से तुल्य होते हैं। प्रदेश रूप से भी तुल्य होते हैं।

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है ; यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है।

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है।

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से नीलवर्ण पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक अथवा तुल्य है।

इसी प्रकार जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से सुगन्ध-दुर्गंध पर्याय रूप से, छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से छ:स्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध में अनंत पर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध का अन्यान्य उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—हीनाधिक वा तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा से—चतुःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(५) कालेवर्ण से—तुल्य।
(६) अवशेष वर्ण से—छःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(७) गंध-रस-स्पर्श-अपेक्षा से—छःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।

उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध में भी इन अपेक्षाओं से अनंतपर्याय होते हैं—ऐसा निरूपण किया गया है।

जिस प्रकार जघन्य गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है; प्रदेश रूप से तुल्य है; अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है; कदाचित् तुल्य है; कदाचित् अधिक है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है, अवशेष वर्ण (नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण) पर्याय अपेक्षा से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है; सुगंध-दुर्गंध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से, शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। उसी प्रकार उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है; प्रदेश रूप से भी तुल्य है; अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है—यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है; यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कृष्णवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है तथा अवशेष वर्ण—नील-रक्त-पीत-शुक्ल पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। सुगंध-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुर्गंध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट कृष्णगुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध का—अन्यान्य उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।
(२) प्रदेशार्थ से—तुल्य।
(३) अवगाहनार्थ से—हीनाधिक वा तुल्य।
(४) स्थिति अपेक्षा से—चतुःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(५) कालेवर्ण पर्याय से—छःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(६) अवशेषवर्ण से—छःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।
(७) गंध-रस-स्पर्श अपेक्षा से—छःस्थान हीनाधिक वा तुल्य।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध अजघन्य गुण कालेवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से भी तुल्य है. अवगाहना रूप से कदाचित् न्यून है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है, यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है, कृष्णवर्ण पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है। अवशेषवर्ण (नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण) पर्याय अपेक्षा से छःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है। सुगंध-पर्याय-रूप से ; तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुररस पर्याय रूप से ; शीत-उष्ण-स्निग्ध रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जिस प्रकार जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले, उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले तथा अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले द्विप्रदेशी स्कंध के विषय में कहा है वैसे ही तीन प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए परन्तु अवगानाह रूप से उसी प्रकार प्रदेश की वृद्धि करनी चाहिए। यथा—

जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले, उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले, अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले तीन प्रदेशी स्कंध—जघन्य गुण कृष्णवर्ण वाले, उत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले, अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण कृष्णवर्ण वाले तीन प्रदेशी स्कंध से अवगाहना रूप से कदाचित् हीन है, कदाचित् तुल्य है, कदाचित् अधिक है। यदि न्यून है तो एक प्रदेश न्यून है अथवा दो प्रदेश न्यून है। यदि अधिक है तो एक प्रदेश अधिक है अथवा दो प्रदेश अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य गुण काले वर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंधों में अनंतपर्याय होते हैं।

जघन्य गुण काले वर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंध का अन्यान्य जघन्य गुण कालेवर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।

(२) प्रदेशार्थ से—द्विस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(३) अवगाहनार्थ से—द्विस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(४) स्थिति रूप से—चतुःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(५) कालेवर्ण पर्याय रूप से—तुल्य है।

(६) अवशेष वर्ण पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

(७) गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्यगुण कृष्णवर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंध जघन्यगुण कृष्णवर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहना रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। कालेवर्ण पर्याय रूप से तुल्य है। अवशेषवर्ण—नील-रक्त-पीत-शुक्लवर्ण पर्याय रूप से, सुगंध-दुर्गंध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल मधुररस पर्याय रूप से, शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

उत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंधों में अनंतपर्याय होते हैं।

उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंध का अन्यान्य उत्कृष्ट गुण कालेवर्ण वाले संख्यातप्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से—तुल्य।

(२) प्रदेशार्थ से—द्विस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(३) अवगाहनार्थ से—द्विस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(४) स्थिति रूप से—चतुःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(५) कालेवर्ण पर्याय रूप से—तुल्य है।

(६) अवशेषवर्ण पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

(७) गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं। अतः उत्कृष्ट गुणवाले संख्यात प्रदेशी स्कंध में भी अनंत पर्याय होते हैं— ऐसा निरूपण किया गया है।

जिस प्रकार जघन्य गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, अवगाहन रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है. स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, काले वर्ण पर्याय रूप से तुल्य है, अवशेष वर्ण पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, गंध-रस स्पर्श पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, वैसे ही उत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध उत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है, प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है। अवगाहन रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है, स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है, काले वर्ण पर्याय रूप से—तुल्य है, अवशेष वर्ण—नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से, सुगंध-दुर्गंध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट कृष्ण गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट कृष्ण गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध का—अन्यान्य उत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से तुल्य है।

(२) प्रदेशार्थ से द्विस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(३) अवगाहनार्थ से—द्विस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(४) स्थिति रूप से—चतुःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(५) काले वर्ण पर्याय रूप से भी छःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(६) अवशेष वर्ण पर्याय रूप से— छःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

(७) गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात प्रदेशी स्कंध में भी इन अपेक्षाओं से अनंत पर्याय होते हैं ऐसा निरूपण किया गया है।

अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध अजघन्य-अनुत्कृष्ट गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; अवगाहन रूप से भी द्विस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; स्थिति रूप से - चतुःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है ; वर्ण (कृष्ण-नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय से) पर्याय रूप से, गंध (सुगंध-दुर्गंध पर्याय से) पर्याय रूप से, रस (तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय से) पर्याय रूप से तथा स्पर्श (शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष) पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है अथवा तुल्य है।

जघन्य गुण काले वर्ण वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंधों में अनंत पर्याय होते हैं।

जघन्य गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध का अन्यान्य गुण काले वर्ण वाले संख्यात प्रदेशी स्कंध से तुलना—

(१) द्रव्यार्थ से —तुल्य।

(२) प्रदेशार्थ से—चतुःस्थान न्यूनाधिक वा तुल्य।

(३) अवगाहनार्थ से—चतुःस्थान न्यूनाधिक वा तुल्य।

(४) स्थिति रूप से—चतुःस्थान न्यूनाधिक वा तुल्य।

(५) काले वर्ण पर्याय रूप से—तुल्य।

(६) अवशेष वर्ण पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक वा तुल्य।

(७) गंध-रस-स्पर्श पर्याय रूप से—छःस्थान न्यूनाधिक वा तुल्य।

जघन्य गुण काले वर्ण वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध में भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों के पर्याय अनंत होते हैं अतः जघन्य गुण काले वर्ण वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध में भी इन अपेक्षाओं से अनत पर्याय होते हैं ऐसा निरूपण किया गया है।

जघन्य गुण काले वर्ण वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध जघन्य गुण काले वर्ण वाले असंख्यात प्रदेशी स्कंध से द्रव्य रूप से तुल्य है ; प्रदेश रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है, अवगाहना रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है ; स्थिति रूप से चतुःस्थान न्यूनाधिक है ; काले वर्ण पर्याय रूप से तुल्य है ; अवशेष वर्ण नील-रक्त-पीत-शुक्ल वर्ण पर्याय रूप से, सुगंध-दुर्गंध पर्याय रूप से, तिक्त-कटु-कषाय-आम्ल-मधुर रस पर्याय रूप से तथा शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष पर्याय रूप से छःस्थान न्यूनाधिक है वा तुल्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ स्कंध पुद्गल अनंत है

·१ दुपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था २। उ ४। सू ४६३

तिपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २३४

चउपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था ४। उ ४। सू ३८८

पंचपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था ५। उ ३। सू ४७४

छप्पएसिया ण खंधा अणंता पण्णत्ता।

—ठाण० स्था ६। उ १। सू ५४०

सत्तपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था ७। सू ५९३

अट्ठपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था ८। सू ६६०

णवपएसिया खंधा अणता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था ९। सू ७०३

दसपएसिया खंधा अणंता पन्नत्ता।

—ठाण० स्था १०। सू ७८३

टीका—दशप्रदेशिका—दशाणुकाः स्कन्धाः समुच्चया इति।

द्विप्रदेशी स्कंध अनंत है तीन प्रदेशी स्कंध यावत् दश प्रदेशी स्कंध प्रत्येक प्रत्येक-अनंत है।

·२ परमाणुपोग्गलाणं भंते ! किं संखेज्जा ? असंखेज्जा ? अणंता ? गोयमा ! नो संखेज्जा ! नो असंखेज्जा। अणंता। एवं जाव अणंत-पदेसिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। सू १४७। पृ० ९२०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध—प्रत्येक-प्रत्येक संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है तथा अनंत है।

·५ द्रव्य देश से पुद्गल अनन्त है

·१ वण्णदेसेण सव्वे पोग्गला सपएसावि अप्पएसावि, अणंता ; खेत्ता-देसेण वि एवं चेव ; कालदेसेण वि, भावदेसेण वि एवं चेव।

—भग॰ श ५। उ ८। सू २

द्रव्यदेश से सर्व पुद्गल अनंत है अर्थात् सप्रदेशी पुद्गल भी अनंत है, अप्रदेशी पुद्गल भी अनंत है। इसी प्रकारक्षेत्र देश से भी, काल देश में भी तथा भाव देश से भी सब पुद्गल अनंत है।

नोट—सप्रदेशी पुद्गल द्रव्य देश से व क्षेत्र देश से नियम से स्कंध पुद्गल होते हैं।

·२ स्कंध पुद्गल के अनंत भेद

जात्याधारानन्तभेदसंसूचनार्थं बहुवचनं (अणवः स्कन्धाश्च) क्रियते।

—तत्त्व॰ अ ५। सू २५ पर राजवार्तिक टीका—पद ३

वे अनंत पुद्गल जाति अपेक्षा से अनन्त प्रकार के हैं।

नोट—यह अनन्त पुद्गल पर्यायार्थ से भी अनंतानंत प्रकार के हैं क्योंकि पर्याय अनंतानंत है।

·३ स्कंध की संख्या

सूक्ष्मस्थूलपरिणामाः स्युः प्रत्येलमनन्तकाः।

—लोकप्र॰ स ११। गा ७ पूर्वार्धं। पृ॰ ५४९

पुद्गलास्तिकाय का प्रत्येक स्कंध अनंत-अनंत है। पुद्गल स्कंध सूक्ष्म और बादर परिणाम वाले हैं।

·४ स्कंध के भेद—अनंत

अनन्त भेदाः स्कन्धाः स्युः केचन द्विप्रदेशकाः।
त्रिप्रदेशाद्यः संख्यासंख्यानन्तप्रदेशकाः॥

—लोकप्र॰ सा ११। गा ६। पृ॰ ५४९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कंध के अनंत भेद हैं, यथा—कितनेक द्विप्रदेशी स्कंध हैं, कितनेक तीन प्रदेशी स्कंध हैं, आदि (यावत्) कितनेक संख्यात प्रदेशी स्कंध है, कितनेक असख्यात प्रदेशी स्कंध है तथा कितनेक अनंत प्रदेशी स्कंध हैं।

·५ पुद्गल अनंत है

सिद्धा निगोयजीवा, वणस्सई कालपुग्गला चेव।
सव्वमलोगनहं पुण, तिवग्गिउं केवलदुगंमि॥

—कर्म० भाग ४ गाथा ८५

सिद्ध, निगोद के जीव, वनस्पतिकाय, अतीत—अनागत काल के सर्व समय, पुद्गल, (स्कंध-परमाणु) आकाश के प्रदेश, इन छः की प्रत्येक-प्रत्येक संख्या अनंत है। अतः पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा अनंत है।

·५३ स्कंध का अवगाहन क्षेत्र

(क) जावदियं आयासं अविभागीपुग्गलाणुउट्टद्धं।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्टाणदाणरिहं॥

—बृहद्० गा २७

टीका—सर्वाणूनां सर्वपरमाणूनां सूक्ष्मस्कंधानां च स्थानदानस्याव-काशदानस्याहम् योग्यं समर्थमिति। × × × सुहुमेहि बादरेहिं य णंताणं-तेहिं विविहेहिं ॥२॥ × × ×

जितना आकाश अविभागी पुद्गलाणु से रोका जाता है उसको सब परमाणुओं को (सूक्ष्म स्कंधों को) स्थान देने में समर्थ प्रदेश जानना चाहिए।

सब परमाणु और सूक्ष्म स्कंधों को अवकाश देने के लिए आकाश का प्रदेश समर्थ है। इस प्रकार की अवगाहन शक्ति आकाश में है।

स्निग्ध और रूक्ष गुण के कारण अनेक परमाणु मिलकर द्विप्रदेशी स्कंधादि, संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध व (सूक्ष्म) अनंत प्रदेशी स्कंध बनते हैं। सूक्ष्मता के कारण वे आकाश के एक प्रदेश पर स्थित हो सकते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५४ स्कंध पुद्गल और एजन-परिस्पंदन-कंपन

·१ स्कंध पुद्गल और एजनादि क्रिया

दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे एयइ, जाव—परिणमइ ? गोयमा ! सिय एयइ, जाव—परिणमइ, सिय णो एयइ, जाव-णो परिणमइ ; सिय देसे एयइ, देसे नो एयइ ।

तिप्पएसिए णं भंते ! खंधे एयइ ? गोयमा ! सिय एयइ, सिय नो एयइ, सिय देसे एयइ नो देसे एयइ, सिय देसे एयइ—नो देसा एयंति ; सिय देसा एयंति-नो देसे एयइ ।

चउप्पएसिए णं भंते ! खंधे एयइ ? गोयमा ! सिय एयइ, सिय नो एयइ, सिय देसे एयइ-नो देसे एयइ, सिय देसे एयइ-नो देसा एयंति, सिय देसा एयंति-नो देसे एयइ ; सिय देसा एयंति—णो देसा एयंति । जहा चउप्पएसिओ तहा पंचपएसिओ, तहा जाव अणंतपएसिओ ।

—भग० श ५ । उ ७ । सू २ से ४

२· पोग्गल दव्वम्हि अणू संखेज्जादी हवंति चलिदाहु ।
चरिममहक्खंधम्मि य चलाचला होंति हु पदेसा ॥

—गोजी० गा ५९२

परमाणु, द्विप्रदेशी आदि सभी स्कंध चलायमान है परन्तु अंतिम महास्कंध चलाचल है ।

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध कदाचित् सकंप होते हैं, कदाचित् निष्कंप होते हैं ।

द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध (बहुवचन) सकंप भी होते हैं तथा निष्कंप भी होते हैं ।

द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) यावत् (दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध) अनंत प्रदेशी स्कंध (बहुवचन) का देश रूप से भी कंपन होता है, सर्वांश रूप से भी कंपन होता है, निष्कंप भी रहते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध कदाचित् (१) कंपन करता है, (२) विविध भाव से कंपन करता है, (३) देशान्तर गति करता है, (४) स्पंदन-परिस्पंदन करता है, (५) सभी दिशाओं में गति करता है, (६) क्षुब्ध होता है अर्थात् प्रयत्न रूप से हलचल करता है तथा (७) उदीरण करता है तथा द्विप्रदेशी स्कंध उन-उन भावों में परिणमन करता है। तथा द्विप्रदेशी स्कंध कदाचित् कंपन नहीं करता है यावत् उदीरण नहीं करता है तथा द्विप्रदेशी स्कंध उन-उन भावों में परिणमन नहीं करता है। तथा द्विप्रदेशी स्कंध कदाचित् एक देश कंपन करता है तथा एक देश कंपन नहीं करता है।

तीन प्रदेशी स्कंध—(१) कदाचित् कंपन करता है ; (२) कदाचित् कंपन नहीं करता है, (३) कदाचित् एक देश कंपन करता है, एक देश कंपन नहीं करता है ; (४) कदाचित् एक देश कंपन करता है, बहुदेश कंपन नहीं करते हैं, (५) कदाचित् बहुदेश कंपन करते हैं, एक देश कंपन करता है।

चार प्रदेशी स्कंध, (१) कदाचित् कंपन करता है ; (२) कदाचित् कंपन नहीं करता है ; (३) कदाचित् एक देश कंपन करता है, एक देश कंपन नहीं करता है ; (४) कदाचित् एक देश कंपन करता है, बहुदेश कंपन नहीं करते हैं ; (५) कदाचित् बहुदेश कंपन करते हैं, एक देश कंपन करता है, (६) कदाचित् बहुदेश कंपन करते हैं तथा बहुदेश कंपन नहीं करते हैं।

इसी प्रकार पंचप्रदेशी स्कंध यावत् (यावत् दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध) अनंत प्रदेशी स्कंधों में छः भंग-विकल्प समझने चाहिए।

नोट—परमाणु, संख्यात, असंख्यात व अनंत परमाणुओं के जितने स्कंध हैं वे सभी चल है किन्तु एक अन्तिम महास्कंध चलाचल है क्योंकि उसमें कोई परमाणु चल है और कोई परमाणु अचल है।

स्कंध काल द्रव्य के कारण सक्रिय होते हैं क्योंकि कालाणु द्रव्य का गुण—परिणाम निर्वर्तक होता है।

.३ स्कंध पुद्गल और सकंपता-निष्कंपता

दुपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! सिय देसेए, सिय सव्वेए, सिय निरेए। एवं जाव अणंतपएसिए।

—भग० श २५। ४। सू २१३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कंध का (१) कदाचित् देश रूप से कंपन होता है, (२) कदाचित् सर्व रूप से कंपन होता है तथा (३) कदाचित् निष्कंप होता है।

दुपएसिया णं भंते ! खंधा-पुच्छा। गोयमा ! देसेया वि, सव्वेया वि, निरेया वि। एवं जाव अणंतपएसिया।

—भग० श २५। उ ४। सू २१५

द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध (बहुवचन का देश रूप से कंपन होता है, सर्वांश से भी कंपन होता है तथा निष्कंप भी रहते हैं।

·५५ पुद्गल की सक्रियता-अनित्यता

·१ द्रव्यार्थिकगुणभावे पर्यायार्थिकप्रधान्यात् सर्वभावा उत्पादव्यय-दर्शनात् सक्रिया अनित्याश्चेति।

—तत्त्वराज० अ ५। ७। २५

पर्यायार्थिक नय की प्रधानता तथा द्रव्यार्थिक नय की गौणता से द्रव्य को सक्रिय तथा अनित्य कहा जाता है। अतः पुद्गल इस अपेक्षा से सक्रिय तथा अनित्य है।

·२ क्रिया की परिभाषा

परिस्पन्दनलक्षणा क्रिया।

—प्रवचन सार २। ३७ की प्रदीपिकावृत्ति

क्रिया को परिस्पंन्दन लक्षण वाली कहा है।

नोट परिस्पंदन शक्ति (गुण) से ही पुद्गल क्रिया में समर्थ है— प्रवचन सार गा ३७ की प्रदीपिका वृत्ति।

·३ स्कंध पुद्गल की गति

दुपएसियाणं भंते ! खंधाणं अणुसेढि गती पवत्तइ ? विसेढि गती पवत्तइ ? एवं चेव ; एवं जाव-अणंतपएसियाणं खंधाणं।

—भग० श २५। उ ३। सू ९३ पृ० ९१४

द्विप्रदेशी स्कंध की गति अनुश्रेणी होती है, विश्रेणी गति नहीं होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार (संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी तथा अनंत प्रदेशी स्कंध) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध की गति अनुश्रेणी होती है, विश्रेणी गति नहीं होती है।

·४ पुद्गल की गति

देशान्तर प्रापिणी गति।

एक समयो विग्रहः लोकांतप्रापिणी गति।

परणामेरनियतताः।

पुद्गलानामपि गतिः स्थितीति।

—तत्त्व० अ २। सू २७, २९ टीका

नियम सामान्य से पुद्गल की देशान्तर प्रापिणी गति अनुश्रेणी होती है। लेकिन प्रयोग परिणाम षक्षात् विश्रेणी भी हो सकती है।

·५ स्कंध पुद्गल और विहायोगति

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·१२ ८·५)

(१) द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध की परस्पर स्पर्श करते हुए जो गति होती है उसे स्पृशद् गति कहते हैं।

(२) इसके विपरीत परस्पर स्पर्श किये बिना द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध की जो गति होती है उसे अस्पृशद गति कहते हैं।

(३) द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध की गति को पुद्गल गति कहते हैं।

(४) छाया भी अनंत प्रदेशी स्कंध है। छाया के अवलम्बन से जो गति होती है उसे छाया गति कहते हैं अथवा छाया का आश्रय पाने के लिए जो गति होती है उसे छाया गति कहते हैं यथा—घोड़े की छाया, हाथी की छाया, मनुष्य की छाया, किन्नर की छाया, महोरग की छाया, गांधर्व की छाया, वृषभ की छाया, रथ की छाया, छत्र की छाया के अनुसार जो गति होती है उसे छाया गति कहते हैं।

(५) छायानुपात गति—स्वकीय निमित्त पुरुषादि की गति के अनुसार छाया की गति। जिस प्रकार छाया पुरुषादि का अनुसरण करती है, किन्तु पुरुषादि छाया का अनुसरण नहीं करता है - यह छायानुपात गति है।

जिन स्कंध पुद्गलों की गति दूसरों की प्रेरणा से होती है उसे प्रणोदन गति कहते हैं। यथा-वाण आदि की गति पर प्रेरणा से होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यान्तर से आक्रांत होने पर जिसकी गति होती है उसे प्राग्भार गति कहते हैं। - यथा—नाव आदि की द्रव्यान्तर से आक्रांत होने पर अधोगति होती है।

·६ देव और निक्षिप्त पुद्गल गति

इह लेष्ट्वादिकं पुद्गलं क्षिप्तं गच्छन्तं क्षेपक मनुष्यस्तावद् ग्रहीतुं न शक्नोतीति दृश्यते, देवस्तु किं शक्नोति ? येन शक्रेण वज्रं क्षिप्तं संहृतं च।

—भग० श ३। उ २। सू २३। टीका

सामान्यत: कोई पुरुष पत्थर आदि को तीव्र गति से फेंक कर उसके पीछे दौड़ कर उसे पकड़ नहीं सकता है—ऐसा देखा जाता है, परन्तु देव फेंके हुए पदार्थ के पीछे जाकर उसे पकड़ सकते हैं ? उदाहरणत: शकेन्द्र ने अपने द्वारा अति तीव्र निक्षिप्त वज्र को उसके पीछे दौड़ कर पकड़ लिया था।

·७ स्कंध पुद्गल और गति

(मूल पाठ के लिए देखो—क्रमांक ·१२·८)

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध की गति अनुश्रेणी होती है परन्तु विश्रेणी नहीं होती है।

·८ पुद्गल और क्रिया

पुद्गलजीववर्तिनी या विशेष क्रिया देशान्तर प्राप्तिलक्षणा तस्या प्रतिषेधोऽयम्, नोत्पादादिसामान्यक्रियाया:।

—तत्त्व० अ ५ सू ६। की सिद्धसेनीय टीका में

पुद्गल और जीव देशान्तर क्रिया करते हैं। धर्म, अधर्म व आकाश— ये तीनों परिस्पंदन देशान्तर प्राप्ति आदि क्रिया विशेष नहीं कर सकते हैं। उत्पाद-व्ययादि सामान्य क्रिया का प्रतिषेध नहीं है।

कार्मणशरीरालंबनात्मप्रदेश परिस्पंदनरूपा क्रिया।

—तत्त्व श्लो० अ २ सू २५

कार्मण शरीर के संबंध से जीवात्मा के प्रदेशों में परिस्पंदन होता है अत: जीव को क्रियावंत कहा गया है। यह कंपन कर्म स्कंध पुद्गल के संयोग से होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५६ पुद्गल द्रव्य-निष्क्रिय-नित्य भी है

·१ पर्यायार्थिकगुणभावे द्रव्यार्थिकप्रधान्यात् सर्वे भावा अनुत्पादा व्ययदर्शनात् निष्क्रिया नित्याश्च।

—तत्त्व राज० अ ५ । ७ । २५

द्रव्यार्थिक नय की प्रधानता एवं पर्यायार्थिक नय की गौणता से द्रव्य को निष्क्रिय कहा जा सकता है।

·२ पुद्गल उत्पाद्-व्यय-ध्रौव्य गुण वाला है

भगवानपि व्याजहार प्रश्नत्रयमात्रेणद्वादशांगप्रवचनार्थं सकलवस्तु-संग्राहित्वात् प्रथमतः किलगणधरेभ्यः—'उप्पणेति वा विगमेति वा धुवेतिवा।

—तत्त्व० ५ । ६ सिद्धसेनगणि टीका

·३ जीव और पुद्गल की गति

(क) देवे ण भंते! महिड्ढिए जाव महाणुभागे पुव्वामेव पोग्गलं खिवित्ता पभू तमेव अणुपरियट्टित्ताणं गिण्हित्तए? हंता, पभू, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—देवेणं महिड्ढिए जाव गिण्हित्तए? गोयमा! पोग्गले खित्ते समाणे पुव्वामेव सिग्घगई भवित्ता तओ पच्छा मंदगई भवइ, देवेणं महिड्ढिए जाव महाणुभागे पुव्विंपि पच्छावि सीहे सीहगई तुरिए तुरियगई चेव से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चई जाव अणुपरियट्टित्ताणं गेण्हित्तए।

—जीवा० प्रति ३ । ४ सू १८८
—भग० श ३ । उ २ । सू २२, २३

महाऋद्धिवाला देव पहले फेंके हुए पुद्गल (अनंत प्रदेशी स्कंध) को उसके पीछे आकर ग्रहण कर सकता है क्योंकि जब पुद्गल फेंका जाता है तब प्रथम उसकी गति शीघ्र होती है और पश्चात् उसकी गति मंद हो जाती है। महाऋद्धिवाला देव पहले भी और पीछे भी शीघ्र और शीघ्रतर गति वाला होता है, त्वरित और त्वरित-तर गति वाला होता है। अतः फेंके हुए पुद्गल के पीछे आकर उसे ग्रहण कर सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—शकेन्द्र ने अपने द्वारा फेंके गये अति तीव्र निक्षिप्त पुद्गल को पीछे दौड़ कर पकड़ लिया था।

·४ क्रिया परिस्पंदात्मक है

परिस्पंदनलक्षणा क्रिया।

—प्रव० अ २। सू ३७ की प्रदीपिका वृत्ति

क्रिया को परिस्पंदन लक्षण वाली कहा गया है।

·५ पुद्गल और क्रिया

क्रियानेकप्रकारा हि पुद्गलानामिवात्मनाम्।

—तत्त्वश्लो० अ ७। सू ४६

प्रथमतः क्रिया के अनंत पर्यायों की अपेक्षा अनंत भेद हो सकते हैं। सामान्यतः क्रिया के अनेक भेद हैं।

·६ दो भेद

पुद्गलानामपि द्विविधा क्रिया-विस्रसा प्रयोगनिमित्ता च।

—तत्त्वराज अ ५। सू ७

विशेष अपेक्षाओं से क्रिया के दो भेद हैं—ये भेद निमित्त अपेक्षा से है।

(१) वैस्रसिक और (२) प्रायोगिक।

·५७ स्कंध पुद्गल और भाव

(पाठ के लिए देखो १२·१३)

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् (दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध) अनंत प्रदेशी स्कंधों में सादि पारिणामिक भाव होता है।

चूंकि व्यक्तिगत भाव से स्कंध पुद्गल की स्थिति असंख्यात काल से अधिक नहीं होती है अतः स्कंध पुद्गल में सादि पारिणामिक भाव कहा है।

·५८ स्कंध पुद्गल सामग्री जन्य (कारण-समूह) है

·१ ××× **यतो द्व्यणुकादयः स्कंधाः सप्रदेशत्वाद् द्व्यादिपरमाणु जन्यत्वाद् भवन्तु सामग्रीजन्याः।**

—विशेभा० गा १७३७। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी आदि स्कंध सप्रदेशी होने के कारण परमाणु आदि सामग्री से जन्य हैं।

·२ स्कंध कार्य-कारण रूप है

कार्यकारणरूपाः स्युर्द्विप्रदेशादयो यथा।
द्विप्रदेशो द्वयोरण्वो कार्यं त्र्यणुककारणम् ॥

—लोकप्र० सर्ग ११ । गा १० । पृ० ५४९

द्विप्रदेशी आदि जो स्कंध कहे गये हैं वे कार्य रूप भी हैं, कारण रूप भी हैं। यथा—द्विप्रदेशी स्कंध—दो परमाणुओं का कार्य हैं तथा तीन परमाणुओं के कारण भी है।

·३ परिप्राप्तबंधपरिणामाः स्कंधाः

—तत्त्वराज० अ ५ । सू २५, २६

परमाणु पुद्गल बद्ध होकर एकत्व रूप परिणमन करते हैं। इस एकीभाव रूप का नाम स्कंध है। स्कंध समवाची है।

·४ एवपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥

—बृहद्० अधि १ सू २६

परमाणु पुद्गल एक प्रदेशी है, लेकिन परमाणु मिलकर बहुप्रदेशी स्कंध होता है। अतः परमाणु पुद्गल को उपचार से काय कहा है।

५ स्कंध पुद्गलों की उत्पत्ति के कारण

·१ भेदसंघातेभ्यः उत्पद्यन्ते।

—तत्त्व० अ ५ । सू २६

·२ संघातानां द्वितयनिमित्तवशाद्विदारणं भेदः। पृथग् भूतानामेकत्वापत्तिः संघातः × × × भेदात्संघाताद् भेदः संघाताभ्यां च उत्पद्यन्त इति।

—सर्वसि० अ ५ । सू २६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ संहतानां द्वितयनिमित्तवशाद्विदारणं भेदः, विविक्तानामेकीभावः संघातः। × × × तदपेक्षो हेतुनिर्देशो भेदसंघातेभ्य इति निमित्तकारण-हेतुषु सर्वासां प्रदर्शनाद्भेदसंघातेभ्य उत्पद्यंत इति।

—तत्त्व श्लो० अ ५। सू २६। पृ० ४३१

·४ द्वयोःपरमाण्वोःसंघाताद् द्विप्रदेशःस्कंध उत्पद्यते। द्विप्रदेशस्याणोश्च त्रयाणं वा अणूनां संघातात् त्रिप्रदेशः। द्वयोर्द्विप्रदेशयोस्त्रिप्रदेशस्याणोश्च चतुर्णां वा अणूनां संघाताच्चतुःप्रदेशः। एवं संख्येयासंख्येयानन्तानामनन्ता-नन्तानां च संघातात्तावत्प्रदेशः। एषामेवभेदात्तावद् द्विप्रदेशपर्यन्ताः स्कंधा उत्पद्यन्ते।

एवं भेदसंघाताभ्यामेकसमयिकाभ्यां द्विप्रदेशादयः स्कन्धाउत्पद्यन्ते। अन्यतो भेदेनान्यस्य संघातेनेति।

—सर्वसि० अ ५। सू २६

× × × खंधाणं विहडणं भेदोणाम। परमाणुपोग्गलसमुदयसमागमो संघादो णाम। भेदं गंतूण पुणो समागमो भेद संघादो णाम। × × ×।

—षट्० खण्ड ५ भा ४। सू ९८। टीका पु १४

स्कन्धों का विभाग होना भेद हैं। परमाणुपुद्गलों का समुदाय समागम होना संघात है। भेदों से प्राप्त होकर पुनः समागम होना भेद-संघात है।

नोट—द्विप्रदेशी आदि स्कंध के भेद से ही एक प्रदेशी-परमाणु पुद्गल होता है क्योंकि सूक्ष्म की स्थूल से ही उत्पत्ति देखी जाती है। संघात से और भेद-संघात से एक प्रदेश परमाणु पुद्गल द्रव्य नहीं होता है क्योंकि उसके नीचे अन्य वर्गणाओं का अभाव है।

दो एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल के समुदाय-समागम से द्विप्रदेशी स्कंध होता है। तीन परमाणु के संघात से तीन प्रदेशी स्कंध तथा चार परमाणु के संघात से चार प्रदेशी स्कंध होता है। इसी प्रकार संख्यात, असंख्यात व अनंत प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए।

·५ पुद्गल स्कंध की उत्पत्ति के कारण

स्कंधस्योत्पत्तिनिमित्तं भेदसंघातादयो भवन्ति।

—आर्हतद० उल्लास २। सू २४९। पृ० ६६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कंध की उत्पत्ति में भेद, संघात आदि (भेद-संघात) कारण रूप है।

एगत्तेण, पुहुत्तेण, खन्धा य परमाणु य।

—उत्त० अ ३६। गा ११

समवाय रूप में पुद्गल स्कंध है तथा भिन्न रूप में परमाणु है।

·५९ स्कंध पुद्गल की पर्याय

(देखो पाठ के लिए क्रमांक ·१२·१)

स्निग्ध-रूक्ष गुणों के द्वारा द्व्यणुक आदि स्कंध रूप में परिणमन होता है तब उनमें विभाव पर्याय होती है। स्कंध अवस्था में वह बहुप्रदेशी होता हैं।

·६० स्कंध पुद्गल-अगुरुलघु-गुरुलघु होता है

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·११·१४ व ३१·११)

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध व सूक्ष्म अनंत प्रदेशी स्कध अगुरुलघु होते हैं तथा बादर अनंत प्रदेशी स्कंध आठ स्पर्शी होने से गुरुलघु होते हैं।

·६१ गंध के पुद्गल और वायुकाय

अह भंते ! कोट्ठपुडाणं वा जाव—केयइपुडाण वा अणुवायंसि उब्भिज्जमाणाण वा निब्भिज्जमाणाण वा उक्किरिज्जमाणाण वा विक्किरिज्जमाणाण वा ठाणाओ वा ठाणं संकामिज्जमाणाणं किं कोट्ठे वाति जाव केयई वाइ ? गोयमा ! नो कोट्ठे वाति, जाव-नो केयई वाति, घाणसहगया पोग्गला वाति।

—भग० श १६। उ ६। सू १०६। पृ० ७३२

कोई पुरुष कोष्टपुट (गन्ध द्रव्य का पुट्टा) यावत् केतकी पुट को एक स्थान से दूसरे स्थान लेकर जाता हो और अनुकूल हवा चलती हो, तो कोष्टपुट यावत् केतकी पुट नहीं बहते हैं परन्तु गंध के पुद्गल बहते हैं।

विवेचन—कोष्टपुट आदि सुगन्धित द्रव्य अनुकूल हवा की ओर ले जाये जाते हों तो उनकी सुगन्ध हवा में फैल कर घ्राण-ग्राह्य होती है।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

·६२ स्कंध पुद्गल के भेद

·१ अणवः स्कंधाश्च ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २५

राजटीका—उभयात्र जात्यापेक्षं बहुवचनं-अनन्तभेदा अपि पुद्गला अणुजात्या स्कन्धजात्या ।

अर्थात् अणवः स्कन्धाः इन बहुवचनात्मक शब्दों का व्यवहार यहां पर जाति-अपेक्षा से किया गया है। अणु-जातियों, स्कन्ध जातियों की अपेक्षा पुद्गल अनन्त भेद वाले होते हैं।

राजटीका—द्वैविध्यमापद्यमानाः सर्वे गृह्यंत इतितदजात्यावानन्त भेदसंसूचनार्थं बहुवचनं क्रियते ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २५

अर्थात् अणु तथा स्कन्ध—इन दो भेदों में सभी पुद्गल ग्रहण हो जाते हैं लेकिन इन दो भेदों की जातियों के आधार पर अनन्त भेदों को बतलाने के लिए ही संसूचनार्थ बहुबचनों का प्रयोग किया गया है।

·२ पुद्गल के दो भेद

समस्तपुद्गला एव द्विविधाः परमाणवः स्कन्धाश्चेति ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २५ की सिद्धसेनगणि टीका

परमाणु तथा स्कन्ध—परमाणु-परमाणु परस्पर में बन्धन को प्राप्त होकर जिस समवाय या समुदाय को प्राप्त होते हैं, उसे स्कन्ध कहते हैं।

स्कन्धास्तु बद्धा एवेति परस्पर संहृत्या व्यवस्थिता ।

—तत्त्व० अ ५ । सू २५ के भाष्य पर सिद्धसेनगणि टीका

ते एते पुद्गलाः समासतो द्विविधा भवंति, अणवः स्कन्धाश्च ।

तत्त्व० अ ५ । सू २४ का भाष्य तथा ५ । २५ का सूत्र

उपर्युक्त व्यक्तिगत परमाणु तथा स्कन्धनामीय परमाणु समवाय की अपेक्षा से पुद्गल के दो भेद—परमाणु और स्कंध होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ तीन भेद

(कइविहा णं भंते ! पोग्गला पन्नत्ता ? गोयमा !) तिविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा-पओगपरिणया, मीसापरिणया वीससापरिणया।

—ठाण० स्था ३। उ ३। सू १८६। पृ० २२५

टीका—प्रयोगपरिणताः—जीवव्यापारेण तथाविधपरिणतिमुपनीताः, यथा पटादिषु कर्म्मादिषु वा, 'मीसं' त्ति प्रयोगविस्रसाभ्यां परिणताः, यथा पटपुद्गला एव प्रयोगेण पटतया विस्रसापरिणामेन चाभोगेऽपि पुराणतयेति, विस्रसा-स्वभावः तत्परिणता अभेन्द्रधनुरादिविति।

—ठाण० स्था ३। उ ३। सू १८६। टीका

पुद्गल के तीन प्रकार है, यथा (१) प्रयोग परिणत जो—जीव के व्यापार से तथाविध परिणत को प्राप्त हुए प्रयोग परिणत पुद्गल है—जैसे वस्त्रादि में अथवा कर्मादि में जीव के व्यापार की सापेक्षता है। (२) मिश्रपरिणत—प्रयोग और स्वभाव दोनों के मिश्र से परिणाम को प्राप्त हुए पुद्गल मिश्र परिणत पुद्गल कहलाते हैं। जैसे वस्त्र के पुद्गल ही प्रयोग परिणाम से वस्त्र रूप से और विस्रसा परिणत है।

३ विस्रसा परिणत—ऐसे पुद्गल जिनका जीव का सहाय नहीं और स्वयं परिणत है—जैसे बादल, इन्द्रधनुष आदि।

स्कंध पुद्गल के भेद

तिविहा पोग्गला पण्णत्ता, तंजहा-पओग परिणया, मिससा परिणया, विससा परिणया।

—भग० श ८। उ १। सू २। पृ० ५३०

स्कंध पुद्गल के तीन भेद

(१) प्रयोग परिणत—वे पुद्गल जिनको जीवों ने ग्रहण करके परिणमन किया है उन्हें प्रयोग परिणत पुद्गल कहते हैं। आधुनिक विज्ञान इनको Organic Matters कहता है।

(२) मिश्र परिणत—वे पुद्गल जो जीव द्वारा परिणमन हुए हैं लेकिन अब जीव रहित होकर या जीव द्वारा निर्जरित होकर स्वयं परिणमित हो रहे हैं उनको मिश्र परिणत पुद्गल कहते हैं। जहाँ पुद्गल में स्थूल समय की अपेक्षा से जीव द्वारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणमन तथा स्वकीय परिणमन (Self-Transfarmation or Modifications) एक साथ हो रहे हैं वहाँ पुद्गल में मिश्र परिणमन कहा जा सकता है।

(३) वे पुद्गल जिनमें स्वकीय अपेक्षा से परिणमन हो रहा है या जिसके परिणमन में किसी जीव का सहाय्य नहीं है उनको विस्रसा परिणत पुद्गल कहते हैं।

·४ पुद्गल द्रव्य के चार भेद

जुत्तउ भिण्ण-वण्ण-विण्णासें।
खंधु देसु अद्धद्ध-पएसु वि॥
परमाणुउ अविहाइ असेसु वि।

घत्ता—तं सुहुमु वि थूलु-थूलु सुहुमु पुणुथूलु भणु।
थूलाणवि थूलु चउ-पयारु महु मुणइ मणु॥

वीरजि० संधि १२। का ९

रूप की अपेक्षा पुद्गल द्रव्य कृष्णादि नाना वर्णों से युक्त है। प्रमाण की अपेक्षा वह स्कंध, देश, प्रदेश, अर्ध प्रदेश, अर्धार्ध प्रदेश आदि रूप से विभाज्य होता हुआ परमाणु तक पहुँचता है, जहाँ उसका पुनः विभाजन नहीं हो सकता।

इस प्रकार यह पुद्गल सूक्ष्म भी है, स्थूल भी, स्थूल सूक्ष्म भी व स्थूल-स्थूल। इस प्रकार पुद्गल द्रव्य चतुर्भेद रूप जाना जाता है।

·५ पुद्गल विभाजन के प्रकार

(क) विश्लेषः भेदः—सच पचधा उत्करः, चर्णः खण्डः, प्रतरः, अनुतटिका।

—जैनसिदी० प्र १। सू १२ की टीका

पुद्गल द्रव्य का विभाजन पांच प्रकार से किया जाता है—उत्कर, चूर्ण, खण्ड, प्रतर और अनुतटिका।

(१) उत्कर—मूंग की फली का टूटना।

(२) चूर्ण—गेहूँ आदि का आटा।

(३) खण्ड—पत्थर के टुकड़े।

(४) प्रतर—अभ्रक के दल।

(५) अनुतटिका—तालाब की दरारें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) सेकिंतं रुविअजीवाभिगमे ?

रुविअसजीवाभिगमे चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—खंधा, खंधदेसा, खंधप्पएसा, परमाणुपोग्गला। ते समासओ पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा, वण्णपरिणया, गंधपरिणया, रसपरिणया, फासपरिणया, संठाणपरिणया।

—जीवा० १। १। सू ५

रूपी (पुद्गल) अजीवाभिगम चार प्रकार का कहा है, यथा—स्कंध, देश, प्रदेश, और परमाणु। वे समास में पाँच प्रकार से परिणत है—यथा—वर्ण परिणत, गंधपरिणत, रसपरिणत, स्पर्शपरिणत और संस्थान परिणत।

·६ स्कंध पुद्गल

द्रव्य स्कंध के भेद

से किं तं खंधे ? २ चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा—नामखंधे ठवणाखंधे दव्वखंधे भावखंधे।× × ×। से किं तं दव्वखंधे ? २ दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—आगमतो य नोआगमतो य।× × ×। से किं तं अचित्तदव्वखंधे ? २ अणेगविहे पन्नत्ते, तंजहा—दुपएसिए खंध तिपएसिए खंधे जाव दसपएसिए खंधे संखिज्जपएसिए खंधे असंखिज्जपएसिए खंधे अणंतपएसिए खंध से तं अच्चित्ते दव्वखंधे।× × ×।

—अणुओ० सू ५२, ५६, ६३

स्कन्ध के चार प्रकार है, यथा—नाम स्कन्ध, स्थापना स्कंध, द्रव्यस्कंध और भावस्कन्ध। द्रव्य स्कंध, दो प्रकार का कहा है। यथा—आगम और नो आगम द्रव्य स्कंध। अचित्त द्रव्य स्कंध अनेक प्रकार का कहा है, यथा—द्विप्रदेशी स्कंध यावत् दस प्रदेशी स्कंध, संख्यात प्रदेशीस्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध व अनतप्रदेशी स्कंध।

·७ अहवा जाणयसरीरभविअसरीरवइरित्ते दव्वखंधे तिविहे पन्नत्ते, तंजहा—कसिणखंधे अकसिणखंधे अणेगदवियखंधे।× × ×। से किं तं अकसिणखंधे ? २ से चेव दुपएसियादीखंधे जाव अणंतपएसिए खंधे। से तं अकसिणखंधे। से किं तं अणेगदवियखंधे ? २ तस्स चेव देसे अवचिए तस्स चेव उवचिए। से तं अणेगदविअखंधे।

—अणुओ० सू ६५, ६७, ६८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा जाणक शरीरभविशरीरव्यक्तिरिक्त द्रव्य स्कंध तीन प्रकार का कहा है, यथा—कसिण स्कंध, अकसिण स्कंध और अनेक द्रव्य स्कंध। अकसिण स्कंध—द्विप्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी स्कंध व अनंत प्रदेशी स्कंध।

अनेक द्रव्य स्कंध—देश से अवचित तथा देश से उपचित हैं।

·८ छः भेद

अतिस्थूलस्थूलाः स्थूलाः, स्थूलसूक्ष्माश्च, सूक्ष्मस्थूलाश्च।
सूक्ष्मा अति सूक्ष्मा इति धरादयो भवति षड्भेदा॥

—नियमसार गा २१

पुद्गल तत्त्व को समझाने के लिए नाना अपेक्षाओं से नाना भेद-प्रभेदों में बांटा है। ये भेद-प्रभेद अत्यन्त वैज्ञानिक विधि से किये गये हैं—अस्तु छः भेद—सूक्ष्मता और स्थूलता को लेकर पुद्गल स्कंध छः प्रकार का है—

(१) अतिस्थूल, (२) स्थूल, (३) स्थूल-सूक्ष्म, (४) सूक्ष्म-स्थूल, (५) सूक्ष्म व (६) अति सूक्ष्म।

भूपर्वताद्या भणिता अतिस्थूलस्थूला इति स्कन्धा।
स्थूला अपि विज्ञेयाः सर्पिर्जलतेलाद्याः॥२२॥

छाया तपाद्याः स्थूलेतर स्कन्धा इति विजानीहि।
सूक्ष्मस्थूला इति भणिताः, स्कन्धा श्चतुरक्षविषयाश्च॥२३॥

सूक्ष्मा भवन्ति स्कन्धाः प्रायोग्यकर्मवर्गणाश्च पुनः।
तद्विपरीत स्कन्धा अतिसूक्ष्मा इति प्ररूपयन्ति॥२४॥

—नियमसार

(१) जिस पुद्गल स्कंध का छेदन-भेदन तथा अन्यत्र वहन सामान्य रूप से हो सके वह पुद्गल अति स्थूल (Solid) कहलाता है। जैसे—भूमि, पत्थर, पर्वत आदि।

(२) जिस पुद्गल स्कंध का छेदन-भेदन न हो सके किन्तु अन्यत्र वहन हो सके वह पुद्गल स्कंध (Liquids) को स्थूल कहते हैं। जैसे—घृत, जल, तेल आदि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) जिस पुद्गल स्कंध का छेदन-भेदन अन्यत्र वहन कुछ भी न हो सके ऐसे नेत्र से दृश्यमान पुद्गल स्कंध (Visible Energies) को स्थूल-सूक्ष्म कहते हैं। जैसे—छाया, ताप आदि।

(४) नेत्र को छोड़ कर चार इन्द्रियों के विषय भूत पुद्गल स्कंध (Ultravisi-Ble But Intra Sensual Mattar) को सूक्ष्म-स्थूल कहते हैं। जैसे—वायु तथा अन्य प्रकार की गैसें।

(५) वे सूक्ष्म पुद्गल स्कंध जो अतीन्द्रिय (Ultra Sensual Mattar) को सूक्ष्म कहते हैं। जैसे—मनोवर्गणा, भाषावर्गणा, कार्यवर्गणा आदि के पुद्गल।

(६) ऐसे पुद्गल स्कंधों को जो भाषावर्गणा व मनोवर्गणा के स्कन्धों से भी सूक्ष्म है। अति सूक्ष्म (Altimate Atom) कहते हैं। जैसे—द्विप्रदेशी स्कंध आदि।

·९ स्कंध के भेद

स च स्कंधो दशधा-शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य, स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्-छाया-ऽऽतपो-द्योतभेदात्।

—आर्हतद० पृ० ६२७ में उद्धृत

स्कंध के दस प्रकार हैं शब्द, बंध, सौक्ष्म्य, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप और उद्योत।

·१० पुद्गल के धर्म

शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपोद्योतप्रभावांश्च।

—जैसिद्धी० प्र १। सू १२

शब्द, बन्ध, सौक्ष्म्य, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप, उद्योत, प्रभा आदि पुद्गल के धर्म है।

स्कंध के भेद

शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायातपोद्योतवंतश्चस्कंधा इति।

—तत्त्वश्लो० अ ५। सू २४। पृ० ४३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्द, बन्ध, सौक्ष्म्य, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप, उद्योत, प्रभा आदि स्कंध पुद्गल है।

·६३ स्कंध पुद्गल और परमाणु पुद्गल

सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू।

—पंच० गा ७७

समस्त स्कंधों का जो अंत का भेद है उसे परमाणु कहते हैं।

·१ मिश्र स्कंध-अचित महास्कंध

खंधदुगदेहजोग्गत्तणेण वा देहवग्गणाउत्ति।
सुहुमो दरगयबायरपरिणामो मीसयक्खंधो॥

—विशेभा० गा ६४२

मिश्र स्कंध और अचित्त महास्कंध की मूर्त्ति की योग्यता के सम्मुख होने से—शरीर वर्गणा कही जाती है। अनंतानंत परमाणुओं से बना हुआ, कुछ सूक्ष्म परिणाम तथा कुछ बादर परिणाम के सम्मुख हुआ स्कंध—मिश्रस्कंध कहलाता है।

·२ सूक्ष्मस्कंध

परिभाषा-अर्थ

चतुःस्पर्शादिमत्त्वे सति सूक्ष्मपरिणामपरिणतिरूपत्वं सूक्ष्मस्कंधस्य लक्षणम्।

—आर्हतद सू २२९। पृ० ६१२

चार स्पर्श आदि से युक्त—सूक्ष्म परिणाम को प्राप्त हुआ स्कन्ध—सूक्ष्म स्कन्ध है।

·३ बादर स्कंध

परिभाषा-अर्थ

अष्टस्पर्शादिमत्त्वे सति बादरपरिणामपरिणतिरूपत्वं बादरस्कंधस्य लक्षणम्।

—आर्हतद० सू २३०। पृ० ६१२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्ट स्पर्श आदि से युक्त—बादर परिणाम को प्राप्त हुआ—स्कन्ध—बादर स्कन्ध है।

·४ भेदों की परिभाषा-अर्थ

× × × 'खंध' त्ति परमाणुप्रचयात्मकाः स्कंधाः' स्कन्धदेशा द्व्यादयो विभागाः, स्कंधप्रदेशास्तस्यैव निरंशा अंशाः परमाणुपुद्गलाः स्कधभावमनापन्नाः परमाणवः।

—भग० श २। उ १०। सू ६६। टीका

परमाणु प्रचय को स्कन्ध कहते हैं, दो, तीन आदि स्कन्ध के भाग को स्कन्ध देश कहते हैं, निरंश अंश को प्रदेश कहते हैं अर्थात् स्कन्ध के अविभागी अंश को स्कन्ध प्रदेश कहते हैं। स्कन्ध भाव को नहीं प्राप्त हुए पुद्गल को परमाणु पुद्गल कहते हैं।

स्कन्ध—जो पुद्गलों के अलग होने से शोषण को प्राप्त होते हैं और पुद्गलों के मिलने से वृद्धि को प्राप्त होते हैं उन्हें स्कन्ध कहा जाता है। पृषोदरादि में पाठ होने से स्कन्ध शब्द की निष्पत्ति होती है।

स्कन्ध देश—स्कन्धों के ही स्कन्ध रूप परिणाम को नहीं छोड़ते हुए—बुद्धिकल्पित दो, तीन आदि प्रदेश के समुदाय रूप विभाग को स्कन्ध देश कहते हैं।

स्कन्ध प्रदेश—स्कन्ध रूप परिणामों को प्राप्त हुए स्कन्धों के ही बुद्धिकल्पित प्रकृष्ट-अत्यन्त सूक्ष्म देश—निर्विभाग को स्कन्ध प्रदेश कहते हैं।

परमाणु—परम-अत्यन्त सूक्ष्म अणु जिसके भाग की कल्पना नहीं हो सकती है। इस प्रकार निर्विभाग द्रव्य रूप पुद्गल को परमाणु पुद्गल कहते हैं। अस्तु स्कन्ध रूप परिणाम रहित केवल परमाणु को जानना चाहिए।

·५ स्कंध पुद्गलों का सूक्ष्म परिणामावगाहन

स्यादेतदसंख्यातप्रदेशोलोकः, अनन्तप्रदेशस्यानन्तप्रदेशस्या च स्कन्धस्याधिकरणमिति विरोधस्ततो नानान्त्यमिति नैष दोषः। सूक्ष्मपरिणामवगाहन शक्तियोगात् परमाण्वादयो हि सूक्ष्मभावेन परिणता एककस्मिन्नप्याकाशप्रदेशेऽनन्तानन्तानामवस्थानं न विरुद्धयते।

—सर्वार्थसिद्धि अ ५। सू १०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् यह असंख्य प्रदेशी लोकाकाश में अनन्त और अनन्तानन्त प्रदेशी स्कन्धों का अधिकरण कैसे हो सकता है। इसमें कोई आपत्ति नहीं है। सूक्ष्म परिणाभावगहन-शक्ति के योग से परमाणु आदि सूक्ष्म भाव को परिणत हो जाते हैं। अतः एक-एक आकाश प्रदेश में अनन्तानन्त परमाणु व स्कन्धों का अवस्थान निर्विरोध होता है।

·६४ स्कंध पुद्गल और चरम-अचरम

·१ दुपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! दुपएसिए खंधे सिय चरिमे १ नो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३। सेसा २३ भंगा पडिसेहे-यव्वा ॥७८२॥

तिपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! तिपएसिए खंधे सिय चरिमे १ नो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३ नो चरिमाइं ४ नो अचरि-माइं ५ नो अवत्तव्वयाइं ६ नो चरिमे य अचरिमे य ७ नो चरिमे य अचरिमाइं ८ सिय चरिमाइं च अचरिमे य ९ नो चरिमाइं च अचरि-माइं च १० सिय चरिमे य अवत्तव्वए य ११ सेसा १५ भंगा पडिसे-हेयव्वा ॥७८३॥

चउपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! चउपएसिए णं खंधे सिय चरिमे १ नो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३ नो चरिमाइं ४ नो अचरिमाइं ५ नो अवत्तव्वयाइं ६ नो चरिमे य अचरिमे य ७ नो चरिमे य अचरिमाइं च ८ सिय चरिमाइं च अचरिमे य ९ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च १० सिय चरिमे य अवत्तव्वए य ११ सिय चरिमे य अवत्त-व्वयाइं च १२ नो चरिमाइं च अवत्तव्वए य १३ नो चरिमाइं च अवत्त-व्वयाइं च १४ नो अचरिमे य अवत्तव्वए य १५ नो अचरिमे य अवत्त-व्वयाइं च १६ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वए य १७ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १८ नो चरिमे य अचरिमे च अवत्तव्वए य १९ नो चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २० नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २१ नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २२ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वए य २३ सेसा भंगा पडिसेहेयव्वा ॥७८४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! पंचपएसिए णं खंधे सिय चरिमे १ नो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३ णो चरिमाइं ४ नो अचरिमाइं ५ नो अवत्तव्वयाइं ६ सिय चरिमे य अचरिमे य ७ नो चरिमे य अचरिमाइं च ८ सिय चरिमाइं च अचरिमे य ९ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च १० सिय चरिमे य अवत्तव्वए य ११ सिय चरिमे य अवत्तव्वयाइं च १२ सिय चरिमाइं च अवत्तव्वए य १३ नो चरिमाइं च अवत्तव्वयाइ च १४ नो अचरिमे य अवत्तव्वए य १५ नो अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च १६ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वए य १७ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १८ नो चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वए य १९ नो चरिमे य अचरिमे च अवत्तव्वयाइं च २० नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २१ नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २२ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वए य २३ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २४ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २५ नो चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २६ ॥७८५॥

छप्पएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! छप्पएसिए णं खंधे सिय चरिमे १ णो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३ नो चरिमाइं ४ नो अचरिमाइं ५ नो अवत्तव्वयाइं ६ सिय चरिमे य अचरिमे य ७ सिय चरिमे य अचरिमाइं च ८ सिय चरिमाइं च अचरिमे य ९ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च १० सिय चरिमे य अवत्तव्वए य ११ सिय चरिमे य अवत्तव्वयाइं च १२ सिय चरिमाइं च अवत्तव्वए य १३ सिय चरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १४ नो अचरिमे य अवत्तव्वए य १५ नो अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च १६ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वए य १७ णो अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १८ सिय चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वए य १९ नो चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २० नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २१ नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २२ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वए य २३ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २४ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २५ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २६ ॥७८६॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

·२ स्कंध पुद्गल और चरम-अचरम

सत्तपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! सत्तपएसिए णं खंधे सिय चरिमे १ नो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३ नो चरिमाइं ४ नो अचरिमाइं ५ नो अवत्तव्वयाइं ६ सिय चरिमे य अचरिमे य ७ सिय चरिमे य अचरिमाइं च ८ सिय चरिमाइं च अचरिमे य ९ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च १० सिय चरिमे य अवत्तव्वए य ११ सिय चरिमे य अवत्तव्वयाइं च १२ सिय चरिमाइं च अवत्तव्वए य १३ सिय चरिमाइं च अत्तव्वयाइं च १४ नो अचरिमे य अवत्तव्वए य १५ नो अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च १६ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वए य १७ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १८ सिय चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वए य १९ सिय चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २० सिय चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २१ नो चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २२ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वए य २३ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वयाइ च २४ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २५ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २६ ॥७८७॥

अट्ठपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा। गोयमा ! अट्ठपएसिए खंधे सिय चरिमे १ णो अचरिमे २ सिय अवत्तव्वए ३ नो चरिमाइं ४ नो अचरिमाइं ५ नो अवत्तव्वयाइं ६ सिय चरिमे य चरिमे य ७ सिय चरिमे य अचरिमाइं च ८ सिय चरिमाइं च अचरिमे य ९ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च १० सिय चरिमे य अवत्तव्वए य ११ सिय चरिमे य अवत्तव्वयाइं च १२ सिय चरिमाइं च अवत्तव्वए य १३ सिय चरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १४ नो अचरिमे य अवत्तव्वए य १५ नो अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च १६ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वए य १७ नो अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च १८ सिय चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वए य १९ सिय चरिमे य अचरिमे य अवत्तव्वयाइं च २० सिय चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २१ सिय चरिमे य अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २२ सिय चरिमाइं च अचरिमे य अवत्तव्वए य २३ सिय चरिमाइं च अचरिमे य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवत्तव्वयाइं च २४ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वए य २५ सिय चरिमाइं च अचरिमाइं च अवत्तव्वयाइं च २६

—पण्ण० पद १० सू ७८२ से ७८८

·३ संखेज्जपएसिए असंखेज्जपएसिए अणंतपएसिए खंधे जहेव अट्ठपएसिए तहेव पत्तेयं भाणियव्वं ॥७८९॥

—पण्ण० प १०। सू ७८९

गाहा—

·४ परमाणुम्मि य तइओ पढमो तइओ य होइ दुपएसे।
पढमो तइओ नवमो एक्कारसमो य तिपएसे ॥१८५॥
पढमो तइओ नवमो दसमो एक्कारसो य बारसमो।
भंगा चउप्पएसे तेवीसइमो य बोद्धव्वो ॥१८६॥
पढमो तइओ सत्तमनवदसएक्कारबारतेरसमो।
तेवीसचउव्वीसो पणुवीसइमो य पंचमए ॥१८७॥
वि चउत्थ पंचं छट्ठं पणरस सोलं च सत्तरट्ठारं।
वीसेक्कवीसबावीसगं च वज्जेज्ज छट्ठम्मि ॥१८९॥
बिचउत्थपंचछट्ठं पण्णर सोलं च सत्तरऽट्ठारं।
बावीसइमविहूणा सत्तपएसम्मि खंधम्मि ॥१९०॥
बिचउत्थपंचछट्ठं पण्णर सोलं च सत्तरट्ठारं।
एए वज्जिय भंगा सेसा सेसेसू खंधेसु ॥१९१॥

—पण्ण० पद १०। सू ७९० में

देखो—२६ भांगों का विवरण ·३९

द्विप्रदेशी स्कंध कदाचित् चरिम है, अचरिम नहीं है, कदाचित् अवक्तव्य है। अवशेष तेबीस भांगों का प्रतिषेध करना चाहिए।

तीन प्रदेशी स्कंध—१ कदाचित् चरिम है, २ अचरिम नहीं हैं, ३ कदाचित् अवक्तव्य है (एकवचन की अपेक्षा), ४ चरिम नहीं है, ५ अचरिम नहीं है, ६ अवक्तव्य नहीं है (बहुवचन की अपेक्षा), ७ चरम और अचरम नहीं है, ८ एकवचन चरम और बहुवचन अचरम नहीं है, ९ कदाचित् बहुवचन चरम और एकवचन अचरम है, १० बहुवचन चरम और अचरम नहीं है, ११ कदाचित् एकवचन चरम और अवक्तव्य है। शेष पंद्रह भंगो का प्रतिषेध करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुष्प्रदेशी स्कंध—१ कदाचित् चरम हैं, २ अचरम नहीं है, ३ कदाचित् अवक्तव्य है, ४ चरिम नहीं है, ५ अचरम नहीं है, ६ अवक्तव्य नहीं है, ७ चरम नहीं है और अचरम है, ८ चरम नहीं है तथा अचरम है, ९ कदाचित् चरम है तथा अचरम है, १० कदाचित् चरम है तथा अचरम है, ११ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १२ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १३ चरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १४ चरम नहीं है तथा अवक्तव्य है १५ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १६ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १७ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १८ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १९ चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २० चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २१ चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २२ चरिम नहीं है, अचरम है व अवक्तव्य है, २३ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है। शेष भंगो का प्रतिषेध करना चाहिए।

नोट—'पढमो तइओ य होइ दुपएसे' अर्थात् पहला तथा तीसरा भंग द्विप्रदेशी स्कंध में होता है।

तीन प्रदेशी स्कंध में पहला, तीसरा, नववां और ग्यारहवां भंग होता है।

चतुःप्रदेशी स्कंध में पहला, तीसरा, नववां, दसवां, ग्यारहवां, बारहवां तथा तेइसवां—ये सात भांगे घटित होते हैं।

पंच प्रदेशी स्कंध—(१) कदाचित चरम है, २ अचरम नहीं है, ३ कदाचित् अवक्तव्य है, ४ चरम नहीं है, ५ अचरम नहीं है, ६ अवक्तव्य नहीं है, ७ कदाचित् चरम है तथा अचरम है, ८ चरम नहीं है तथा अचरम है, ९ कदाचित् चरम है, व अचरम है, १० कदाचित् चरम है तथा अचरम है, ११ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १२ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १३ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १४ चरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १५ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १६ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १७ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १८ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १९ चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है २० चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २१ चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २२ चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २३ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २४ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २५ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २६ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है।

नोट—पंच प्रदेशी स्कंध में पहला, तीसरा, सातवां, नववां, दसवां, ग्यारहवां,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बारहवां, तेरहवां, तेइसवां, चौबीसवां तथा पचीसवां— ग्यारह भांगे होते हैं, बाकी का प्रतिषेध करना चाहिए।

छः प्रदेशी स्कंध — १ कदाचित् चरम है, २ अचरम नहीं है, कदाचित् अवक्तव्य है, ४ चरम नहीं है, ५ अचरम नहीं है, ६ अवक्तव्य नहीं है, ७ कदाचित् चरम है, व अचरम है, ८ कदाचित् चरम है तथा अचरम है, ९ कदाचित् चरम है तथा अचरम है, १० कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, ११ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १२ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १३ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १४ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १५ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १६ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १७ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १८ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १९ कदाचित् चरम, अचरम तथा अवक्तव्य है, २० चरम नहीं है, अचरम है, अवक्तव्य है, २१ चरम नहीं है, अचरम है, तथा अवक्तव्य है, २२ चरम नहीं है, अचरम है तथा अवक्तव्य है है, २३ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तन्य है, २४ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २५ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है तथा २६ कदाचित चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है।

नोट—दूसरा, चौथा, पांचमा, छट्ठा, पन्द्रहवां, सोलहवां, सत्तरवां, अठारवां, बीसवां, इककीसवां, बाइसवां, इन ग्यारह भांगो को छोड़कर बाकी के पन्द्रह भांगे छः प्रदेशी स्कध में होते हैं।

सात प्रदेशी स्कंध — १ कदाचित् चरम है, २ अचरम नहीं है, ३ कदाचित् अवक्तव्य है, ४ चरम नहीं है, ५ अचरम नहीं है, ६ अवक्तव्य नहीं है, ७ कदाचित् चरम है, अचरम है, ८ कदाचित् चरम है, अचरम है, ९ कदाचित् चरम हैं, तथा अचरिम है, १० कदाचित् चरम है तथा अचरम है, ११ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १२ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १३ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १४ कदाचित् चरम है यथा अवक्तव्य है, १५ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १६ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १७ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १८ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १९ कदाचित् चरम है, अचरम है, अवक्तव्य है, २० कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २१ कदाचित् चरम है, अचरम हैं तथा अवक्तव्य है, २२ कदाचित् चरम है, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, २३ कदाचित् चरम हैं, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, २४ कदाचित् चरम हैं, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, २५ कदाचित् चरम हैं, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, २६ कदाचित् चरम हैं, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—दूसरा, चौथा, पांचवां, छट्ठा, पंद्रहवां, सोलहवां, सत्तरवां, अठारवां और बावीसवां—इन भांगो को छोड़कर बाकी के भांगे सात प्रदेशी स्कंध में जानना चाहिये।

आठ प्रदेशी स्कंध—कदाचित् चरम है, २ अचरब नहीं है, ३ कदाचित् अवक्तव्य है, ४ चरम नहीं हैं, ५ अचरम नहीं हैं, ६ अवक्तव्य नहीं है, ७ कदाचित् चरम है, अचरम है, ८ कदाचित् चरम है तथा अचरम हैं, ९ कदाचित् चरम हैं तथा अचरम हैं, १० कदाचित् चरम है तथा अचरम हैं, ११ कदाचित् चरम है तथा अवक्तव्य है, १२ कदाचित् चरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, १३ कदाचित् चरम हैं तथा अवक्तव्य है, १४ कदाचित् चरम हैं तथा अवक्तव्य है, १५ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १६ अचरम नहीं है तथा अवक्तव्य है, १७ अचरम नहीं हैं तथा अवक्तव्य है, १८ अचरम नहीं हैं तथा अवक्तव्य हैं, १९ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २० कदाचित् चरम है, अचरम हैं, तथा अवक्तव्य हैं, २१ कदाचित् चरम है, अचरम हैं तथा अवक्तव्य है, २२ कदाचित् चरम है, अचरम है तथा अवक्तव्य है, २३ कदाचित् चरम है, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, २४ कदाचित् चरम हैं अचरम है तथा अवक्तव्य है, २५ कदाचित् चरम है, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं, २६ कदाचित् चरम हैं, अचरम हैं तथा अवक्तव्य हैं।

नोट—आठ प्रदेशी स्कंध में दूसरा, चौथा, पांचवां, छट्ठा, पंद्रहवां, सोलहवां, सतरवां तथा अठारहवां—इन आठ भांगों को छोड़ कर बाकी के सब भांगे मिलते हैं।

संख्यात प्रदेशी स्कंध, (नौ प्रदेशी स्कंध, दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध) असंख्यात प्रदेशी स्कंध तथा अनंत प्रदेशी स्कंध-प्रत्येक स्कंध के सम्बन्ध में जैसा आठ प्रदेशी स्कंध के विषय में कहा—वैसा ही इनके सम्बन्ध में कहना चाहिए।

१—अस्तु परमाणु में तीसरा विकल्प, द्विप्रदेशी स्कंध में पहला तथा तीसरा विकल्प, होता है। तीन प्रदेशी स्कंध में पहला, तीसरा, नववां तथा ग्यारवां विकल्प होता है।

२—चतुः प्रदेशी स्कंध में पहला, तीसरा, नववां, दसवां, ग्यारवां, बारहवां तथा तेइसवां विकल्प होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३—पंच प्रदेशी स्कंध में पहला, तीसरा, सातवाँ, नववां, दसवां, ग्यारहवां, बारहवां, तेरहवां, तेइसवां, चौवीसवां तथा पचीसवां विकल्प होता है।

४—छः प्रदेशी स्कंध में दूसरा, चौथा, पांचवां, छट्ठा, पंद्रहवां, सोलहवां, सतरहवां, अठारहवां, बीसवां, इक्कीसवां तथा बाइसवां भंग के सिवाय अन्य भंग जानना चाहिए।

५—सात प्रदेशी स्कंध में दूसरा, चौथा, पांचवां, छट्ठा, सोलहवां, सतरहवां, अठारहवाँ और बाइसवाँ विकल्प सिवाय अवशेष भंग जानना चाहिए।

अवशेष स्कंधों के विषय में (अष्ट प्रदेशी स्कंध, नवप्रदेशी स्कंध, दस प्रदेशी स्कंध, संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध, अनंत प्रदेशी स्कंध) दूसरा, चौथा, पांचवां, छट्ठा, पंद्रहवां, सोलहवां, सतरहवां, अठारहवां विकल्पों को छोड़कर अवशेष भंग जानना चाहिए।

नोट—दो प्रदेशी स्कंध में १, ३ (पहला, तीसरा) दो भांगे मिलते हैं यथा—
१ [·] [·], ३ [··] उसी प्रकार उपयोग लगाकर भांगे जान लेने चाहिए।

नोट—परमाणु पुद्गल का मध्य नहीं है अतः चरम नहीं है तथा अन्त भी नहीं है अतः अचरम नहीं है, अवक्तव्य है। द्विप्रदेशी स्कंध यदि आकाश के दो प्रदेश को अवगाहित कर रहते है तो पहले की अपेक्षा दूसरा चरम तथा दूसरे की अपेक्षा पहला चरम है। अचरम नहीं है क्योंकि उन परमाणु स्कंध के तीन विभाग नहीं होते हैं। यदि द्विप्रदेशी स्कंध आकाश के एक प्रदेश से अवगाहित कर रहे तो चरम-अचरम दोनों नहीं है अतः अवक्तव्य है। अतः द्विप्रदेशी स्कंध में पहला व तीसरा भंग मिलता है। अवशेष २४ भांगे नहीं मिलते हैं।

यदि तीन प्रदेशी स्कंध के दो प्रदेश सम श्रेणी में रहे व एक विषम श्रेणी में रहे तो सम श्रेणी की अपेक्षा चरम है व विषम श्रेणी की अपेक्षा अवक्तव्य है। (ग्यारहवां भंग) यदि तीन परमाणु तीन प्रदेश अवगाह कर रहे तो तब दोनों तरफ दो परमाणु रहे वे बहुवचन आश्री चरम है और एक परमाणु बीच में है वह एक वचन आश्री अचरिम है (नौवां भग)। इस प्रकार तीन प्रदेशी स्कध में ४ भांगे मिलते हैं। (१, ३, ९, ११) शेष २२ भंग नहीं मिलते हैं।

इस प्रकार उपयोग लगाकर सर्व स्कंध के विषय में जान लेना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·६५ वर्गणा

१· परिभाषा/अर्थ

(क) सजातीयपुद्गलानां समूहो वर्गणोच्यते ।
मौक्तिकानां मिथस्तुल्य गुणानामिव राशयः ।।
कुचिकर्णो यथा नाना-वर्णा संख्येयधेनुकः ।
चक्र गवां सवर्णानां समुदायान् पृथक् पृथक् ।।
तथाकृते चाभूवंस्ताः सुज्ञानाः सुग्रहा यथा ।
तथा तीर्थङ्करोद्दिष्टाः पुद्गल वर्गणा अपि ।।

—लोकप्र० सर्ग ३५ । गा ४ से ५ । पृ० ६५०

मोतियों की राशि की तरह परस्पर श्वेतादि तुल्य गुणवाले सजातीय पुद्गलों के समूह को वर्गणा कहते हैं ।

जिस प्रकार अलग-अलग वर्णवाली असंख्यात गायों के समूह में से एक समान वर्णवाली गायों के समूह को कुचिकर्णनामक सेठ अलग-अलग रखता था—उस प्रकार करने से उन गायों का उसको ज्ञान रहता था—उसी प्रकार तीर्थंकर कथित पुद्गल वर्गणामें भी सम्यग् प्रकार से समझी जा सकती है और सम्यग् प्रकार से ग्रहण की जा सकती है ।

(ख) कुइयण्णगोविसेसोवलक्खणोवम्मओ विणेयाणं ।
दव्वाइवग्गणाहिं पोग्गलकायं पयंसेंति ।।

—विशेभा० गा ६३२

सजातीयवस्तुसमुदायो वर्गणा, समूहो, वर्गः, राशिः इति पर्यायाः ।

—विशेभा० गा ६३५ । टीका

·२ अणुवर्गणा

परिभाषा/अर्थ

(क) वग्गणपरूवणदाए इमा एयपदेसिया परमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा-णाम ।

—षट्० खण्ड ५, ६ । सू ७०७ । पु १४ पृ० ५४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) अणंतेहि सरिसधणियपरमाणूहि एगा वग्गणा होदि, दव्वट्ठिय-णयावलंबादो।

—कसापा० विह० ४। भा ५। गा २२। टीका। पृ० ३४८

(ग) पुद्‌गलसमुदायविशेषे।

—अभिधा० भा ५। पृ० ९६८

(घ) असंख्यातानामनन्तानां च परमाणूनां समुदाये।

—अभिधा० भा ५। पृ० ५४१

(ङ) इह समस्तलोकाकाशप्रदेशेषु ये केचन एकाकिनः परमाणवो विद्यन्ते तत्समुदायः सजातीयत्वाद् एकावर्गणाः।

—कर्म० भा ५। गा ७५। टीका। पृ० ८१

(च) एकाकिनः संति लोके येऽनंताः परमाणवः।
एकाकित्वेन तुल्यानां तेषामेकात्र वर्गणा॥

— लोकप्र० सर्ग ३५। श्लो ७

(छ) ××× एगपदेसियपोग्गलदव्ववग्गणा परमाणुसरूवा ×××।

—षट्० खण्ड ५, ६। सू ७६। टीका। पु १४। पृ० ५४

वर्गणापरूपणा की अपेक्षा यह एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा है। इस समस्त लोकाकाश प्रदेश में एकाकि (अलग अस्तित्व छुटे हुए) इस प्रकार के अनंत परमाणु लोक में है। उनका एकीपन तुल्य होने के कारण उसकी एक वर्गणा समझनी चाहिए। एक प्रदेशी पुद्गल द्रव्य वर्गणा परमाणु स्वरूप होती है।

२· अणुवर्गणा

परिभाषा/अर्थ

वर्गणा शब्द की भावाभिव्यक्ति अंग्रेजी के Grouping शब्द में पूर्ण रूप से व्यक्त होती है। सजातीयवस्तुसमुदायो वर्गणा समूहो, वर्गः राशिः इति पर्यायाः—विशेभा० गा ६३५। टीका। अर्थात् समान गुण और जाति वाले समुदाय को वर्गणा कहते हैं। वर्गणा, समूह, वर्ग, राशि—ये पर्यायवाची शब्द हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ भेद—

परमाणुवग्गणम्मि ण अवरुक्कस्सं च सेसगे अत्थि।

—गोजी॰ गा ५९५ पूर्वार्धं

परमाणु—अणुवर्गणा में जघन्य तथा उत्कृष्ट भेद नहीं है।

एगा परमाणुपोग्गलाणं वग्गणा। एवं जाव एगा अणंतपएसियाणं खंधाणं पोग्गलाणं वग्गणा।

—ठाण॰ स्था १। सू ५१। पृ॰ १८५

परमाणु पुद्गलों की एक वर्गणा है।

·४ परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा का उद्भव

वग्गणणिरूवणिदाए इमा एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा णाम किं भेदेण किं संघादेण किं भेदसंघादेण × × ×। उवरिल्लीणं दव्वाणं भेदेण।

—षट्॰ खण्ड ५, ६, ४। सू ९८-९९। पु १४

टीका—दुपदेसियादिउवरिमवग्गणाण भेदेणव एयपदेसिया वग्गणा होदि, सुहुमस्स थूलभेदादो चेव उप्पत्तिदंसणादो। संघादेण भेदसंघादेण वा एयपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गणा ण होदि।

द्विप्रदेशी आदि उपरिम वर्गणाओं के भेद से ही एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा होती है क्योंकि सूक्ष्म की स्थूल के भेद से ही उत्पत्ति देखी जाती है। संघात से और भेद-संघात से एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्य वर्गणा नहीं होती है क्योंकि इससे नीचे अन्य वर्गणाओं का अभाव है।

·५ वर्गणाओं का वर्ण-गंध-रस-स्पर्श

औदारिक- प्रभृतमएताश्चाहारकावधिः।
अष्टस्पर्शाः पंचवर्णरस - गंधद्वयान्विता ॥४१॥

एकवर्णरसगंधः स्याद् द्विस्पर्शश्च यद्यपि।
परमाणुस्तथाप्येते समुदायव्यपेक्षया ॥४२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तजसाद्या वर्गणा अ-प्येवं वर्णादिभिः स्मृताः।
स्पर्शतस्तु चतुःस्पर्शा-स्तेषां मृदुलघुध्रुवौ ॥४३॥

अन्यौ द्वौ च स्निग्धशीतौ स्निग्धोष्णौ वा प्रकीर्त्तितौ।
रूक्षोष्णौ रूक्षशीतौ वा विज्ञेयौ यथागमं ॥४४॥

अयं पंच संग्रहवृत्तिशतकबृहट्टीकाद्यभिप्रायः।

टीका—कर्मप्रकृतिप्रज्ञप्त्याद्यभिप्रायेण त्वेतासु स्निग्धोष्णरूक्षशीत-रूपमेव स्पर्शचतुष्टयं स्यान्नान्यदिति।

—लोकप्र० । सर्ग ३५ । गा ४१ से ४४ । पृ० ६५५

औदारिक से आहारक तक की वर्गणायें अष्टस्पर्शी, पंचवर्णी, पंचरसवाली और दो गंधवाली होती है।

यद्यपि परमाणु—एक वर्ण, एक रस, एक गंध और दो स्पर्शवाला होता है। आठ स्पर्श जो कहे गये हैं वह समुदाय (स्कंध) की अपेक्षा कहे गये हैं।

तैजसादि वर्गणा भी इसी प्रकार वर्ण, गंध, रस वाली होती है। (प्रथम की तीन वर्गणा की तरह पाँच वर्ण, पाँच रस—दो गंध वाली होती है।) परन्तु स्पर्श की अपेक्षा चतुःस्पर्श वाली होती है। उसमें मृदु और लघु—ये दो स्पर्श निरंतर होते हैं और दूसरे दो स्निग्ध और शीत अथवा स्निग्ध और उष्ण स्पर्श होते हैं। अथवा रूक्ष और उष्ण अथवा रूक्ष और शीत—ये दो स्पर्श होते हैं।

·६ नयकी अपेक्षा वर्गणा का विवेचन

वग्गणपरूवणदाए ताणि चेव तिण्णि अणियोगद्दाराणि। तत्थपरूवणदाए अत्थि जहण्णिया वग्गणा। एवं णेदव्वं जाव उक्कस्सवग्गणेत्ति। एवं परूवणा गदा।

पमाणं वुच्चदे—अणंतेहि सरिसधणियपरमाणूहि एगा वग्गणा होदि, दव्वट्ठियणयावलंबादो। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिदे वग्गो वि वग्गणा होदि। णिव्वियप्पवग्गस्स कधं वग्गणत्तं ? ण, उवरिमएगोलि पेक्खिदूण सवियप्पस्स वग्गणत्तं पडि विरोहाभावादो। विरोहे वा महाखंडवग्गणाए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धुवसुण्णवग्गणाणं च ण वग्गणत्तं होज्ज, सरिसधणियाभावादो। ण च एवं, वग्गणाणं तेवीससंखाए अभावप्पसंगादो।

—कसायपा० विहृ ४। भा ५। गा २२। टीका। पृ० ३४९

द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा समान अविभाग प्रतिच्छेदों के धारक अनंत परमाणुओं की एक वर्गणा होती है, पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा एक वर्ग की वर्गणा होती है। वर्ग में वर्गणा इसलिये हैं—क्योंकि उपरिम एक पंक्ति को देखते हुए पंक्ति का वर्ग भी सविकल्प है, अतः उसके वर्गणा होने में कोई विरोध नहीं है। यदि विरोध हो तो महास्कंध वर्गणा और ध्रुवशून्य वर्गणाएँ भी वर्गणा नहीं हो सकती, क्योंकि उनमें समान धनवालों का अभाव है। किन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि ऐसा होने से वर्गणाओं की जो तेईस संख्या बतलाई गई है उसके अभाव का प्रसंग प्राप्त होता है।

·७ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के आश्रय स्कंध पुद्गल की वर्गणा

(मूल पाठ के लिए देखो क्रमांक ·१३)

·१ द्रव्य अपेक्षा

टीका—इतो द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य पुद्गलवर्गणैकत्वं चिन्त्यते—पूरणगलनधर्माणः पुद्गलाः, ते च स्कन्धा अपि स्युरिति विशेषयति-परमाणवो निष्प्रदेशास्ते च पुद्गलाश्चेति विग्रहस्तेषां, एवं करणात्, दुपएसियाणं खंधाणं तिचउपंचछसत्तट्ठनवदससंखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाणं अनंतपएसियाणमिति दृश्यमिति, कृता द्रव्यतः पुद्गलचिन्ता।

·२ क्षेत्र अपेक्षा

अतः क्षेत्रतः क्रियते—'एगा एगपएसे' त्यादि, एकस्मिन् प्रदेशे क्षेत्रास्यावगाढ़ाः—अवस्थिता एक प्रदेशावगाढ़ास्तेषां ते च परमाणवादयोऽनन्तप्रादेशिकस्कन्धान्ताः स्युः अचिन्त्यत्वात् द्रव्यपरिणामस्य, यथा— पारदस्यैकेन कर्षेण चारिताः सुवर्णस्य ते सप्ताप्येको भवन्ति, पुनर्वामिताः प्रयोगतः सप्तैव त इति।'

·३ काल अपेक्षा

कालत साह—'एगा एगसमए' त्यादि, एकं समयं यावत् स्थितिः परमाणुत्वादिना एकप्रदेशावगाढादित्वेन एकगुणकालादित्वेन वाऽवस्थानं येषां ते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक समयस्थितिकास्तेषामिति, इह च अनन्तसमयस्थितेः पुद्गलानामभावाद् असंखेज्जसमयट्ठितीयाणमित्युक्तमिति ।

·४ भाव अपेक्षा

भावत पुद्गलानाह- एकेन गुणो-गुणनं ताडनं यस्य स एकगुणः, एकगुणः कालो वर्णो येषां ते एकगुणकालकाः, तारतम्येन कृष्णतरकृष्णतमादीनां येभ्यः आरभ्य प्रथमुत्कर्षप्रवृत्तिर्भवतीति भावस्तेषाम्, एवं सर्वाण्यपि भावसूत्राणि षट्यधिद्विशतप्रमाणानि वाच्यानि २६०, विंशतेः कृष्णादिभावानां त्रयोदशभिगु णनादिति ।[1]

·५ प्रदेश अपेक्षा

साम्प्रतं भंग्यन्तरेण द्रव्यादिविशेषितानां जघन्यादिभेदभिन्नानां स्कन्धानां वर्गणैकत्वमाह 'एगा जहन्नपएसियाणं' मित्यादि, जघन्याः सर्वाल्पाः प्रदेशाः परमाणवस्ते सन्तियेषां ते जधन्य प्रदेशिकाः द्व्यणुकादयः इत्यर्थः, स्कन्धाः—अणुसमुदयास्तेषां उत्कर्षन्तीत्युत्कर्षाः उत्कर्षवन्तः उत्कृष्टसंख्याः परमानन्ताः प्रदेशाः—अणवस्ते सन्ति येषां ते उत्कर्षप्रदेशिकाः तेषाः जघन्याश्च उत्कर्षाश्च जघन्योत्कर्षाः, न तथा ये ते अजघन्योत्कर्षप्रदेशिका मध्यमा इत्यर्थः ते प्रदेशाः सन्ति येषां ते अजघन्योत्कर्षप्रदेशि स्तेषाम्, एतेषां चानन्तवर्गणत्वेऽप्य जघन्योत्कर्ष शब्दव्यप देश्यत्वादेकवर्गणात्वमिति ।

·६ अवगाहन अपेक्षा

'जहन्नोगाहणगाणं' ते अवगाहन्ते—आसते यस्यां साऽवगाहना-क्षेत्रप्रदेशरूपा सा जघन्य येषां ते स्वार्थिककप्रत्ययाज्जघन्यावगाहनकास्तेषाम्, एकप्रदेशावगाढानामित्यर्थः । उत्कर्षावगाहनाकानामसंख्यातप्रदेशावगाढानामित्यथः, अजघन्योत्कर्षवगाहनकानां संख्येयासंख्येयप्रदेशावगाढानामित्यर्थः ।[2]

---

१. एकस्यादारभ्यदशान्ताः संख्येयासंख्येस्या नन्ताश्चेति त्रयोदश ।

२. स्वस्ववर्गणायां जघन्यानां वर्गणानामनेकविधत्वात् द्व्यणुकादय इति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·७ स्थिति अपेक्षा

जघन्या-जघन्यसंख्या समयापेक्षया स्थितिर्येषां ते जघन्यस्थितिकाः एकसमय स्थिति का इत्यर्थः तेषां, उत्कर्षा—उत्कर्षवत् संख्या समयापेक्षया स्थितिर्येषां ते तथा तेषामसंख्यातसमयस्थितिका नामित्यर्थः तृतीय कण्ठ्यं ।

·८ भाव अपेक्षा

जघन्ये—जघन्यसंख्याविशेषणकेनेत्यर्थः गुणो-गुणनं ताडनं यस्य स तथा (तथा) विधः कालो वर्णो येषां ते जघन्यगुणकालकास्तेषाम्' एव-मुत्कषगुणकालकानामनन्तगुण कालकानामित्यर्थः, तृतीयं कंठ्य, एवं भाव-सूत्राण्यपि षष्टिभावनीयामीति ।

सामान्यस्कन्धवर्गणैकत्वाधिकारादेवाजघन्योत्कर्षप्रदेशिकास्याजघन्यो-त्कर्षप्रदेशावगाढ़स्य स्कन्धविशेषस्यैकत्वमाह ।

टीका—सर्वेषां वर्गणा वर्गः समुदायः ।

—ठाण स्था १ । सू ५१ । टीका

वर्गणा अर्थात् सजातीय समूह ।

१—द्रव्य की अपेक्षा वर्गणा

द्विप्रदेशी स्कन्ध की एक वर्गणा होती है । इसी प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध यावत् दस प्रदेशी स्कंध, संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध तथा अनन्त प्रदेशी स्कंध प्रत्येक की एक वर्गणा होती है ।

२—क्षेत्र की अपेक्षा

स्कंध पुद्गल आकाशास्तिकाय के एक प्रदेश से असंख्यात प्रदेश में अवगाहित कर रह सकते हैं । अतः एक प्रदेशावगाढ़ परमाणु व स्कंध पुद्गलों की एक वर्गणा होती है । इसी प्रकार दो प्रदेशावगाढ़ स्कंध पुद्गलों की यावत् असंख्यात प्रदेशाव-गाढ़ स्कंध पुद्गलों की प्रत्येक की, एक वर्गणा होती है ।

३—काल स्थिति की अपेक्षा

एक समय की स्थिति वाले परमाणु व स्कंध पुद्गलों की एक वर्गणा होती है । इसी प्रकार दो समय की स्थितिवाले यावत् असंख्यात समय की स्थितिवाले परमाणु व स्कंध पुद्गलों की एक वर्गणा होती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४—भाव की अपेक्षा

एक गुण कृष्णवर्णवाले परमाणु व स्कंध पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार द्विगुण यावत् अनंत गुण कृष्णवाले पुद्गलों की एक वर्गणा होती है। इसी प्रकार नील, रक्त, पीत तथा शुक्ल वर्ण के पुद्गलों के विषय मे समझना चाहिए।

इसी प्रकार दो गंध, पाँच रस तथा आठ स्पर्श के विषयों में समझना चाहिए।

जघन्य प्रदेशी स्कंधों (द्विप्रदेशी स्कंध पुद्गल) की एक वर्गणा होती है। उत्कृष्ट प्रदेशी स्कंधों (उत्कृष्ट संख्या से अनंत प्रदेशी स्कध पुद्गल) की एक वर्गणा होती है तथा अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) प्रदेशी स्कंधों की एक वर्गणा होती है।

·८ वर्गणा

अथोल्लंघ्याखिला एताः सिद्धानंतांशसंमितैः।
अभव्येभ्योऽनंतगुणः परमाणुभिरुद्गतः ॥१३॥
स्कंधैर्याः स्युः सभारब्धा वर्गणा विस्रसावशात्।
जघन्या ग्रहणार्हाः स्यु-स्ताः किलौदारिकोचिताः ॥१४॥
आभ्यश्चैककाणुवृद्धा मध्यमा ग्रहणोचिताः।
तावद् ज्ञेया यावदौदा-रिकार्होत्कृष्टवर्गणाः ॥१५॥
उत्कृष्टौदारिकार्हाभ्य - श्चैकेनाप्यणुनाधिका।
भवंति पुनरप्यौदा - रिकानर्हा जघन्यतः ॥१६॥
ततश्चैकैकाणुवृद्धा अनर्हा मध्यमा बुधैः।
तावद् ज्ञेया पुनर्याव - दुत्कृष्टाः स्युरनर्हकाः ॥१७॥
एता बह्वणुनिष्पन्न - त्वात्सूक्ष्माः परिणामतः।
तत औदारिकानर्हाः स्थूलस्कंधोद्भवं हि तत् ॥१८॥
यथा यथाणुभूयस्त्वं परिणामस्तथा तथा।
स्कंधेषु सूक्ष्मः स्यात्तथा - मल्पत्वे स्थूलमिष्यते ॥१९॥
औदारिकापेक्षयैव किलताः प्रचुराणुकाः।
स्युः सूक्ष्मपरिणामाश्च वैक्रियापेक्षया पुनः ॥२०॥
स्वल्पाणुजातत्वात्स्थूल - परिणामा अमूस्ततः।
वैक्रियानुचिताः सूक्ष्म - स्कंधोत्थं प्राच्यतो हि तत् ॥२१॥

—लोकप्र० सर्ग ३५/गा १३ से २१/पृ० ६५१-५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके बाद—सिद्ध के अनंतवें भाग तथा अभव्य से अनंत गुने परमाणुओं से बने हुए स्कंधों से विस्रसा परिणाम बनी हुई वर्गणाएँ औदारिक शरीर योग्य जघन्य ग्रहण योग्य वर्गणा जाननी चाहिए। इससे एक एक परमाणुओं की वृद्धि होने से स्कंधवाली वर्गणा मध्यम वर्गणा ग्रहणयोग्य वहाँ तक जाननी चाहिए जहाँ तक औदारिक उत्कृष्ट ग्रहण योग्य वर्गणा होती है। उत्कृष्ट औदारिक ग्रहण योग्य वर्गणा से एक प्रदेश अधिक परमाणुवाली अनंत औदारिक शरीर के अयोग्य जघन्य वर्गणा जाननी चाहिए। इसके बाद एक एक अणु की वृद्धि होने से—औदारिक शरीर के अयोग्य मध्यम वर्गणा वहाँ तक जाननी चाहिए यावत् उत्कृष्ट औदारिक अयोग्य वर्गणा होती है। ये सब वर्गणा बहु परमाणुओं से निष्पन्न होने के कारण स्वाभाविक सूक्ष्म परिणामवाली होती है अतः औदारिक शरीर के अग्रहण योग्य है क्योंकि औदारिक शरीर स्थूल स्कंधों से उत्पन्न होता है।

जैसे जैसे परमाणुओं की वृद्धि होती है वैसे-वैसे स्कंधों में परिणाम सूक्ष्म होता है और जैसे-जैसे परमाणु अल्प होते हैं वैसे-वैसे परिणाम स्थूल होते हैं। वह वर्गणा औदारिक शरीर की अपेक्षा ही प्रचुर परमाणुओं वाली और सूक्ष्म परिणाम वाली होती है। और वैक्रिय की अपेक्षा स्वल्प परमाणुओं से उत्पन्न होने से स्थूल परिणामवाली होती है इसलिए वह वैक्रिय परीर के ग्रहण योग्य नहीं है क्योंकि वैक्रिय शरीर पूर्व के औदारिक शरीर की अपेक्षा सूक्ष्म स्कंधों से उत्पन्न होता है।

·१ वर्गणा

(क) उत्कृष्टौदारिकानर्हा यास्ता एकाणुनाधिकाः।
जघन्या वैक्रियार्हाः स्यु-स्ततो द्व्याद्यणुभिर्युताः॥
मध्यमा वैक्रियार्हाः स्यु - स्तदर्होत्कृष्टकावधि।
जघन्यमध्यमोत्कृष्टा वैक्रियानुचितास्ततः॥
वैक्रियापेक्षया भूयो - ऽणुकाः सूक्ष्मा अमूः किल।
आहारकापेक्षया च स्थूलाः स्तोकाणुका इति॥

—लोकप्र० सर्ग ३५/गा २२ से २४/पृ०६५२

औदारिक के अयोग्य उत्कृष्ट वर्गणा से एक परमाणु से अधिक वह जघन्य वैक्रिय के ग्रहणयोग्य वर्गणा समझनी चाहिए। उसमें दो आदि परमाणुओं के युक्त होने से मध्यम वैक्रिय योग्य वर्गणा होती है वह वैक्रिय योग्य उत्कृष्ट वर्गणा तक समझनी चाहिए। उसके बाद वैक्रिय के अयोग्य जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट वर्गणा समझनी चाहिए। क्योंकि वह वैक्रिय की अपेक्षा वृद्धि परमाणु वाली और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्म परिणाम वाली है तथा आहारक की अपेक्षा वह स्थूल परिणाम वाली और अल्प परमाणुवाली है।

·२ वर्गणा

(क) जघन्यमध्यमोत्कृष्टा-स्तत आहारकोचिताः।
तदनर्हास्ततस्त्रेधा ततश्च तैजसोचिताः ॥२५॥

ततस्तथैव त्रिविधा-स्तैजसानुचितास्ततः।
त्रेधा भाषोचिता भाषा-नुचिताश्च ततस्त्रिधा ॥२६॥

आनप्राणो चितास्त्रेधा तदनर्हास्ततस्त्रिधा।
मनोऽर्हास्तदनर्हाश्च त्रिविधा स्युस्ततः क्रमात् ॥२७॥

जघन्यमध्यमोत्कृष्टाः कर्मणामुचितास्ततः।
भवंति वर्गणास्त्रेधा याभ्यः कर्म प्रजायते ॥२८॥

इतोऽप्यूर्ध्वं ध्रुवाचित्ता-दयो या संति वर्गणा।
नार्थाभावात्ता इहोक्ताः प्रोक्तास्त्वावश्यकादिषु ॥२९॥

—लोकप्र० सर्ग ३५ गा २५ से २९। पृ० ६५३

उसके बाद आहारक के योग्य जघन्य-मध्यम और उत्कृष्ट वर्गणा जाननी चाहिए। उसके बाद उसके योग्य तीन प्रकार की वर्गणा जाननी चाहिए। उसके बाद तैजस के योग्य तीन प्रकार की वर्गणा जाननी चाहिए।

इसके बाद क्रमशः तैजस के अयोग्य तीन प्रकार की वर्गणा, इसके बाद भाषा के योग्य तीन प्रकार की वर्गशा, इकके बाद भाषा के अयोग्य तीन प्रकार की वर्गणा, इसके बाद आनप्राण—श्वासोच्छ्वास के योग्य तीन प्रकार की वर्गणा, इसके बाद श्वासोच्छ्वास के अयोग्य तीन प्रकार की वर्गणा, इसके बाद मन के योग्य तीन प्रकार की वर्गणा, इसके बाद मन से अयोग्य तीन प्रकार की वर्गणा होती है।

इसके बाद जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट—तीन प्रकार की कार्मण के योग्य वर्गणा जाननी चाहिए, जिसके द्वारा कर्म का बंध होता है।

इसके बाद दूसरी ध्रुव अचित्तादिक वर्गणा जाननी चाहिए।

नोट—कर्मप्रकृति और प्रज्ञापना आदि के अभिप्राय से तैजसादि वर्गणाओं में स्निग्ध, उष्ण, रुक्ष और शीत ये—चार स्पर्श होते है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ वर्गणा के भेद

**(क) औदारिकवैक्रियांगा - हारक - तैजसोचित्ताः ।
भाषोच्छ्वासमनः कर्मयोग्याश्चेत्यष्ट वर्गणाः ॥**

—लोकप्र० सर्ग ३५ । गा ३ । पृ० ६५०

औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, भाषा, उच्छ्वास, मन और कर्म—ये आठ वर्गणा है ।

**(ख) ओराल-विउव्वा-हार-तेय-भासा-णुपाणमण-कम्मो ।
अह दव्ववग्गणाणं कमो विवज्जासओ खेत्ते ॥**

— विशेभा० गा ६३१

·४ भेद

(क) × × × दुपदेसियपरमाणुपोग्गलदव्ववग्गण्पहुडि जाव उक्कस्स-संखेज्जपदेसियदव्ववग्गणेत्ति ताव एसा संखेज्जपदेसियवग्गणाणाम रुवणुक्कस्ससंखेज्जमेत्तवियप्पा × × ×।

—षट्० खण्ड ५, ६ सू ७८ । टीका । पु १४ । पृ० ५७-५८

एगा परमाणुपोग्गलाणं वग्गणा। एवं जाव एगा अणंतपएसियाणं खंधाणं पोग्गलाणं वग्गणा।

—ठाण० स्था १ । सू ५१ । पृ १८५

टीका— × × ×। एवं करणात् दुपएसियाण खंधाणं तिचउपंचछ-सत्तट्ठनवदससंखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाण, मिति दृश्यमिति ।

द्विप्रदेशी परमाणु पुद्गल स्कंध द्रव्य वर्गणा से लेकर उत्कृष्ट संख्यात प्रदेशी द्रव्य वर्गणा तक—यह सब संख्यात द्रव्य वर्गणा है । इसके एक कम उत्कृष्ट संख्यात भेद होते हैं । द्विप्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, तीन प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है । चार प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, पंचप्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, छ:प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, सात प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, आठ प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, नव प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, दस प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है, संख्यात प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है । असंख्यात प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है तथा अनंत प्रदेशी स्कंध वर्गणा एक है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५ पुद्गल का ज्ञान

·१ अवधि ज्ञानी जीव किन-किन वर्गणाओं को जानता है

संखेज्ज मणोदव्वे भागो लोग-पलियस्स बोधव्वो।
संखेज्ज कम्मदव्वे लोए थोवूणयं पलियं॥

—विशेभा० गा ६६९

टीका—मनोवर्गणागतं मनःपरिणामयोग्यं द्रव्यं मनोद्रव्यं तस्मिन् मनोद्रव्ये मनोद्रव्यविषयेऽवधौ 'संखेज्ज त्ति' संख्येयतमो भागो लोक-पल्योपमयोर्विषयत्वेन बोद्धव्यः। इदमुक्तं भवति—मनोवर्गणाद्रव्यं पश्य-न्नवधिः क्षेत्रतो लोकस्य संख्याततमं भागं, कालतस्तु पल्योपमस्य संख्येयतमं भागं पश्यतीति। 'संखेज्ज कम्मदव्वे त्ति' कर्मवर्गणागतं कर्मणो योग्यं द्रव्यं तद्विषयेऽवधौ संख्येया लोकपल्योपमभागास्तद्विषयतयाऽवगन्तव्याः। इद-मुक्तं भवति-कर्मवर्गणाद्रव्यं पश्यन्नवधिः क्षेत्रतो लोकस्य संख्येयान् भागान् पश्यति, कालतस्तु पल्योपमस्य संख्येयान् भागानवलोकयति। 'लोए थोवूणयं पलियं ति' चतुर्दशरज्ज्वात्मकलोकविषयेऽवधौ कालतः स्तोकोनं पल्योपमं विषयतया बोद्धव्यम्।

इदमत्र हृदयम्-क्षेत्रतः समस्तलोकं पश्यन्नवधिः कालतः स्तोकोनं पल्यो-पमं पश्यति। द्रव्येण सह-क्षेत्र-कालयोरुपनिबन्धे प्रस्तुते केवलयोस्त-योरुपनिबंधप्ररूपणं विस्मरणशीलतासूचकमिति चेत्। नैवम्, साक्षादिह द्रव्योपनिबंधो नोक्तः, सामर्थ्यात् त्वसौ प्रोक्त एव, तथाहि—पूर्वं 'काले चउण्ह वुड्ढी' इत्युक्तमेव। कालवृद्धिश्चानन्तरोक्तकर्मद्रव्यदर्शकापेक्षया-ऽत्रोक्तैव। ततश्चास्य समस्तलोकस्तोकोनपल्योपमदर्शिनः सामर्थ्यात् कर्म-द्रव्योपर्येव किमपि द्रव्यं विषयत्वेन द्रष्टव्यम्।

अतएव च तदुपर्यपि ध्रुववर्गणादिद्रव्यं पश्यतः क्षेत्र-कालवृद्धिक्रमेण परमावधिसंभवोऽप्युनुमीयते।

जो अवधि ज्ञानी काल से पल्योपम के संख्यातवें भाग को, क्षेत्र से लोक के संख्यातवें भाग को देखता है वह अवधि ज्ञानी मनोवर्गणा-द्रव्य को जानता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो अवधि ज्ञानी काल से पल्योपम के संख्यातवें भाग को, क्षेत्र से लोक के संख्यातवें भाग को देखता है वह अवधि ज्ञानी कार्मणवर्गणा द्रव्य को जानता है।

जो अवधिज्ञान संपूर्णलोक को देखता है वह कुछ न्यून पल्योपम काल को देखता है।

कर्म द्रव्य के बाद—उसके ऊपर ध्रुववर्गणादि द्रव्य को देखता हुआ— अनुमान से—क्षेत्र-कालवृद्धि के क्रम से परमावधिज्ञान संभव है।

.६ पुद्गल का ज्ञान

अवधि ज्ञानी जीव किन-किन वर्गणाओं को जानता है

तेया-कम्मशरीरेतेयादव्वे य भासदव्वे य।
बोधव्वमसंखेज्जा दीव-समुद्दा य कालो य॥

—विशेभा० गा ६७३

टीका—शरीरशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते। तैजसशरीरे कार्मणशरीरे चैतद्विषयेऽवधावित्यर्थः ; तथा, तैजसवर्गणाद्रव्यविषयेऽवधौ, भाषावर्गणा-द्रव्यगोचरे, भाषावर्गणाद्रव्यगोचरे चावधौ क्षेत्रतः प्रत्येकमसंख्येया द्वीप-समुद्राः, कालश्चासंख्येय पल्योपमासंख्येयभागरूपो विषयत्वेन बोद्धव्यः। कार्मणशरीरादप्यबद्धानां तजसवर्गणाद्रव्याणां सूक्ष्मत्वात् तद् बृहत्तरं, तेभ्योऽपि भाषाद्रव्याणां सूक्ष्मत्वात् तद् बृहत्तमं द्रष्टव्यम् × × ×।

तैजस शरीर तथा कार्शण शरीर को देखने वाले अवधिज्ञानी तथा तैजस वर्गणा द्रव्य और भाषावर्गणा द्रव्य को देखने वाले अवधिज्ञानी क्षेत्र से असंख्यात द्वीप-समुद्र और काल से पल्योपम के असंख्यातवें भाग को देखते हैं। यद्यपि यहाँ पर तैजस शरीर और कार्मण शरीर को देखने वाले अवधिज्ञान का विषय सामान्यतः समान है फिर भी तैजस शरीर की अपेक्षा कार्मण शरीर सूक्ष्म है, कार्मण शरीर की अपेक्षा भाषा वर्गणा द्रव्य सूक्ष्म है अतः तैजस शरीर की अपेक्षा कार्मण शरीर का विषय, कार्मण शरीर की अपेक्षा भाषा वर्गणा का द्रव्य बृहतर है।

(देखो क्रमांक ·१३ तथा ·३३)

तेईस वर्गणाओं में से आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा और कार्मण शरीरवर्गणा—ये पाँच वर्गणाएँ जीव द्वारा ग्रहण योग्य है, शेष नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी दो स्कंध भेद को प्राप्त होकर जब पूर्व सबद्ध परमाणुओं के साथ या अन्य परमाणुओं के साथ समागम को प्राप्त होते हैं तब द्विप्रदेशी वर्गणा स्वस्थान में भेद-संघात से उत्पन्न होती है।

स्कंध के टूटने का नाम भेद है। परमाणुओं के समागम का नाम संघात है और स्कंध का भेद होकर मिलने का नाम भेद-संघात है।

मात्र सान्तर-निरंतर वर्गणा को लेकर अशून्य रूप जितनी वर्गणाएं हैं वे सब स्वस्थान की अपेक्षा भेद-संघात से ही उत्पत्ति होती है।[1] इतनी बात अवश्य है कि किन्हीं सूत्र-पोथियों में सान्तर-निरंतर वर्गणा की उत्पत्ति भी पूर्व की वर्गणाओं के संघात से, उपरिम वर्गणाओं के भेद से और स्वस्थान की अपेक्षा भेद-संघात से बतलाई है।

बादर और सूक्ष्म निगोद वर्गणा में अन्तर यह है कि बादर निगोद वर्गणा दूसरों के आश्रय में रहती है और सूक्ष्म निगोद वर्गणा जल में, स्थल में व आकाश में सर्वत्र बिना आश्रय के रहती है।

उत्कृष्ट अनंतप्रदेशी द्रव्य वर्गणायें एक अंक के मिलाने पर जघन्य औदारिक वर्गणा होती है। यह वर्गणा जीवों के द्वारा ग्राह्य है। फिर एक अधिक के क्रम से अभव्यों से अनंतगुणे और सिद्धों के अनंतवें भाग प्रमाण भेदों के जाने पर अंतिम औदारिक वर्गणा होती है। विशेषों का प्रमाण अभव्यों से अनंतगुणा और सिद्धों के अनंतवें भाग प्रमाण होता हुआ भी उत्कृष्ट औदारिक द्रव्य वर्गणा के अनंतवें भाग प्रमाण है।

·७ वग्गणा

ओरालिय-वेउव्विय-आहारशरीरपाओग्गपोग्गलक्खंधाणं आहारदव्व-वग्गणा त्ति सण्णा। एवमेसा पंचमी वग्गणा ॥५॥

—षट्० खण्ड ५, ६। सू ९९। टीका। पु १४

अर्थात् औदारिक, वैक्रियिक और आहारक शरीरों के योग्य पुद्गल स्कंधों की आहार द्रव्य वर्गणा संज्ञा है। इस प्रकार यह पांचवीं वर्गणा है। (१—अणुवर्गणा, २—संख्याताणुवर्गणा, ३—असंख्याताणुवर्गणा, ४—अनंताणुवर्गणा तथा ५—आहार वर्गणा।)

१—षट् खंडागम पु १४।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·६६ स्कंध पुद्गल की आत्मा

·१ द्विप्रदेशी स्कंध की आत्मा

आया भंते ! दुपएसिए खंधे, अन्ने दुपएसिए खंधे ? गोयमा ! दुपएसिए खंधे १ सिय आया, २ सिय नो आया, ३ सिय अवत्तव्वं-आयाइय नो-आयाति य, ४ सिय आया य नोआया य, ५ सिय आया य अवत्तव्वं आयाति य नोआयाति य, ६ सिय नोआया य अवत्तव्वं-आयाति य नो-आयाति य। [सू १८]

से केणट्ठेणं भंते ! एवं तं चेव जाव—'नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नोआयाति य ? गोयमा ! १ अप्पणो आदिट्ठे आया, २ परस्स आदिट्ठे नोआया, ३ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं दुपएसिए खंधे आयाति य नो आयाति य, ४ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भाव-पज्जवे दुप्पएसिए खंधे आया य नो आया य, ५ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो-आयाइ य, ६ देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे नोआया य अवत्तव्वं आयाति य नोआयाति य, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयाति य। अवत्तव्व—आयाति य नोआयाति य।

—भग० श १८। उ १०। सू १८, १९ पृ० ५८४

द्विप्रदेशी स्कंध कथंचित् आत्मा सद्रूप है, कथंचित् नो आत्मा असद्रूप है और सद्-असद्रूप होने से कथंचित् अवक्तव्य है। ४ कथंचित् सद्रूप है और कथंचित् असद्रूप है। ५ कथंचित् सद्रूप है और सदसद् उभय रूप होने से अवक्तव्य है। ६ कथंचित् असद्रूप है और सदसद् उभय रूप होने से अवक्तव्य है।

इसका कारण यह है कि द्विप्रदेशी स्कंध अपने स्वरूप की अपेक्षा सद्रूप है, आत्मा है, पररूप की अपेक्षा असद्रूप है, आत्मा नहीं है और उभयरूप से अवक्तव्य है।

४—एक देश की अपेक्षा एवं सद्भाव पर्याय की विवक्षा तथा एक देश की अपेक्षा से एवं असद्भाव पर्याय की विवक्षा से द्विप्रदेशी स्कंध सद्रूप है और असद्रूप है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५—एक देश की अपेक्षा, सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश की अपेक्षा से सद्भाव और असद्भाव—इन दोनों पर्यायों की अपेक्षा से द्विप्रदेशी स्कध पुद्गल सद्रूप और असद्रूप उभय होने से अवक्तव्य है।

६—एक देश की अपेक्षा, असद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के सद्भाव असद्भाव रूप उभय पर्याय की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध असद्रूप और अवक्तव्य रूप है।

विवेचन—आत्मा का अर्थ है सद्रूप और अनात्मा का अर्थ है असद्रूप। किसी भी वस्तु को एक साथ सद्रूप और असद्रूप नहीं कहा जा सकता। उस दशा में वस्तु अवक्तव्य कहलाती है। स्व-पर पर्यायों से आत्मस्वरूप और अनात्मरूप अर्थात् सद् और असद्रूप—इन दोनों द्वारा एक बार कहना अशक्य है।

अस्तु—द्विप्रदेशी स्कंध के विषय में छ भंग बनते हैं, इनमें से पहले के तीन भंग सम्पूर्ण स्कंध की अपेक्षा से बनते हैं। ये असंयोगी है। बाकी के तीन भग देश की अपेक्षा है जो कि द्विसंयोगी है द्विप्रदेशी स्कंध होने से उसके एक देश की स्वपर्यायों द्वारा सद्रूप की विवक्षा की जाय और दूसरे देश की पर पर्यायों द्वारा असद्रूप से विवक्षा की जाय, तो द्विप्रदेशी स्कंध अनुक्रम से कथंचित् सद्रूप और कथंचित् असद्रूप होता है। उसके एक देश की स्वपर्यायों द्वारा सद्रूप से विवक्षा की जाय और दूसरे देश में सदसद् उभय रूप से विवक्षा की जाय, तो कथंचित् सद्रूप और कथंचित् अवक्तव्य कहलाता है। उस द्विप्रदेशी स्कध के एक देश की पर्यायों द्वारा असद्रूप से विवक्षा की जाय और दूसरे देश की उभय रूप से विवक्षा की जाय, तो असद्रूप और अवक्तव्य कहलाता है। कथंचित् सद्रूप, कथंचित् असद्रूप और कथंचित् अवक्तव्य रूप—इस प्रकार सातवां भंग द्विप्रदेशी स्कंध में नहीं बनता है। क्योंकि उसके केवल दो अंश ही है। त्रिप्रदेशी स्कधों में तो सातों भग बनते हैं।

दूसरी तरह से आत्मा के तीन भेद है—

नोट—१ जो अपनी पर्यायों की अपेक्षा सत्स्वरूप विद्यमान हो उसे आत्मा कहते हैं।

२—जो पर पर्यायों की अपेक्षा असत्स्वरूप हो, अविद्यमान हो, उनको नोआत्मा कहते हैं।

३—जो स्वपर्यायों की अपेक्षा सत्स्वरूप है और परपर्यायों की अपेक्षा असत्स्वरूप है ऐसा मिश्ररूप जो शब्दों से कहा नहीं जाय सके उसे अवक्तव्य कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ तीन प्रदेशी स्कंध पुद्गल की आत्मा

आया भंते ! तिपएसिए खंधे ? अन्ने तिपएसिए खंधे ? गोयमा ! तिप-एसिए खंध सिय आया १ सिय नोआया २ सिय अवत्तव्वं आयाइ य नो-आयाइ य ३ सिय आया य नोआया य ४ सिय आया य नोआयाओ य ५ सिय आयाओ य नोआया य ६ सिय आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ७ सिय आया य अवत्तव्वाइं आया(इ)ओ य नोआयाओ य ८ सिय आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नोआयाइ य ९ सिय नोआया य अवत्तव्वं आयाइ य नोआयाइ य १० सिय नोआया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नोआयाओ य ११ सिय नोआयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नोआयाइ य नोआयाइ य १२ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य १३ से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तिपएसिए खंधे सिय आया—एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव सिय आया य नो आया य अवत्तव्व आयाइ य नोआयाइ य ? गोयमा ! अप्पणो आइट्ठे आया १ परस्स आइट्ठे नोआया २ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ३ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भाव-पज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नोआया य ४ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य नोआयाओ य ५ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आयायो य नो आया य ६ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभय-पज्जवे तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ७ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ८ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ९ एए तिन्नि भंगा, देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नोआया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १० देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ११ देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १२ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नोआया य अवत्तव्वं आयाइ य नोआयाइ य १३ से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ तिपएसिए खंध सिय आया तं चेव जाव नो आयाइ य।

—भग० श १२। उ १०। सू २२०-२१ पृ० ५८४-८५

अर्थात् त्रिप्रदेशी स्कंध १ कथंचित् आत्मा है। (विद्यमान है।) २ कथंचित् नो आत्मा है, ३ आत्मा तथा नो आत्मा इस उभय रूप से कथंचित् अवक्तव्य है, ४ कथंचित् आत्मा तथा कथंचित् नो आत्मा है।

५—कथंचित् आत्मा और नो आत्माएं हैं।

६—कथंचित् आत्माएं और नो आत्मा है।

७—कथंचित् आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

८—कथंचित् आत्मा और आत्माएं तथा नो आत्माएं उभय रूप से अवक्तव्य है।

९—कथंचित् आत्माएं और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

१०—कथंचित् नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

११—कथंचित् नो आत्मा और आत्माएं तथा नो आत्माएं उभय रूप से अवक्तव्य है।

१२—कथंचित् नो आत्माएं और आत्माएं तथा नो आत्माएं उदय रूप से अवक्तव्य है।

१३—कथंचित आत्मा, नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

इसका कारण यह है कि तीन प्रदेशी स्कंध—१—अपने आदेश (अपेक्षा) से आत्मा है, २—पद के आदेश से नो आत्मा है, ३—उभय के आदेश से आत्मा और नो आत्मा—इस उभय रूप से अवक्तव्य है, ४—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा त्रिप्रदेशी स्कंध आत्मा और नो आत्मा रूप है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से वह त्रिप्रदेशी स्कंध आत्मा तथा नो आत्माएं हैं।

६—बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कंध आत्माएं और नो आत्मा हैं।

७—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभय (सद्भाव और असद्भाव) पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कंध आत्मा और आत्माएं तथा नो आत्माएं उभय रूप से अवक्तव्य है।

८—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से उभय पर्याय की विवक्षा से त्रिप्रदेशी स्कंध आत्मा और आत्माएं तथा नो आत्माएं इस उभय रूप से अवक्तव्य है।

९—बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के आदेश से उभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कंध आत्माएं और आत्मा तथा नो आत्मा इस उभय रूप से अवक्तव्य है। ये तीन भंग जानने चाहिए।

१०—एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभय पर्याय की अपेक्षा से तीन प्रदेशी स्कंध नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा से अवक्तव्य है।

११—एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कंध नो आत्माए और आत्माएं तथा नो आत्माए इस उभय रूप से अवक्तव्य है।

१२—बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से तीन प्रदेशी स्कंध नो आत्माए और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

१३—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध कथंचित् आत्मा नोआत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है। अतः तीन प्रदेशी स्कंध के विषय में उपर्युक्त कथन किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ चार प्रदेशी स्कंध पुद्गल की आत्मा

आया भंते ! चउप्पएसिए खंधे ? अन्ने० पुच्छा, गोयमा ! चउप्पएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य अवत्तव्वं ४ सिय नो आया य अवत्तव्वं ४ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं सिय आयाइ य नो आयाइ य १६ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य १७ सिय आया य नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १८ सिय आयाओ य नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १९ से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ चउप्पएसिए खंधे सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं तं चेव अट्ठे पडिउच्चारेयव्वं, गोयमा ! अप्पणो आइट्ठे आया १ परस्स आइट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ३ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे चउभंगो, सब्भावपज्जवेणं तदुभएण य चउभंगो, असब्भावेणं तदुभएण य चउभंगो, देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य, देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा तदुभयपज्जवा चउप्पएसिए खंधे आया य नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य १७ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नोआयाइ य १८ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आयाओ य नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १९ से तेणट्ठेणं गोयमा ! वुच्चइ चउप्पएसिए खंधे सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं निक्खेवे ते चेव भंगा उच्चारेयव्वा जाव नो आयाइ य ।

—भग० श १२ । उ १० । सू २२२ से २२३

चतुष्प्रदेशी स्कंध १—कथंचित आत्मा है, २—कथंचित् नो आत्मा है, ३—आत्मा नो आत्मा उभय रूप से कथंचित् अवक्तव्य है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४-७—कथंचित् आत्मा और नो आत्मा है (एक वचन और बहुवचन आश्री चार भंग)।

८-११—कथंचित् आत्मा और अवक्तव्य है। (एक वचन और बहुवचन आश्री चार भंग)।

१२-१५—कथंचित् नो आत्मा और अवक्तव्य है (एक वचन और बहुवचन आश्री चार भंग)।

१६—कथंचित आत्मा और नो आत्मा तथा आत्मा, नो आत्मा रूप से अवक्तव्य है।

१७—कथंचित् आत्मा, नो आत्मा तथा आत्माएं और नो आत्माएं रूप से अवक्तव्य है।

१८—कथंचित् आत्मा, नो आत्माएं तथा आत्मा और नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

१९—कथंतित् आत्माएं, नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा रूप से अवक्तव्य है।

इस प्रकार कहने का कारण यह है कि—

१—अपने आदेश से आत्मा है।

२—पद के आदेश से नो आत्मा है।

३—तदुभय के आदेश से आत्मा और नोआत्मा—इस उभय रूप से अवक्तव्य है।

४ से ७—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से (एक वचन और बहुवचन आश्री) चार भंग होते हैं।

८-११—सद्भाव पर्याय और तदुभय पर्याय की अपेक्षा से (एक वचन बहुवचन आश्री) चार भंग होते हैं।

१२-१५—असद्भाव पर्याय और तदुभय पर्याय की अपेक्षा से (एक वचन बहुवचन आश्री) चार भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कंध आत्मा, नो आत्मा और आत्मा नो आत्मा उदय रूप से अवक्तव्य है।

१७—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से, तदुभय पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कंध आत्मा, नो आत्मा और आत्माएं, नो आत्माएं उभय रूप से अवक्तव्य है।

१८—एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कंध आत्मा नो आत्माएं और आत्मा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

१९—बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभव पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कंध आत्माएं, नो आत्मा और आत्मा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य हैं।

इस लिये ऐसा कहा जाता है कि चतुष्प्रदेशी स्कंध कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नोआत्मा है, कथंचित् नो आत्मा और कथंचित् अवक्तव्य है। इस निक्षेप में पूर्वोक्त सभी भंग यावत् नो आत्मा है, तक कहना चाहिए।

नोट—चतुष्प्रदेशी स्कंध में भी त्रिप्रदेशी स्कंध के समान जानना चाहिए। किन्तु यहाँ उन्नीस भंग बनते हैं। उनमें से तीन भंग सम्पूर्ण स्कंध की अपेक्षा से असंयोगी होते हैं। बाद में बारह भंग द्विसंयोगी होते हैं। शेष चार भंग त्रिसंयोगी होते हैं।

·४ पांच प्रदेशी स्कंध की आत्मा

·५ छः प्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध की आत्मा सात प्रदेशी

आया भंते! पंचपएसिए खंधे अन्ने पंचपएसिए खंधे? गोयमा! पंचपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य सिय आया य नो आया य ४ सिय अवत्तव्वं (४) आया य नो आया य ४ (नो आया य अवत्तव्वेण य) तियगसंजोगे एक्को ण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पडइ, से केणट्ठेणं भंते ! तं चेव पडिउच्चारेयव्वं ? गोयमा ! अप्पणो आइट्ठे आया १ परस्स आइट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं ३ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे एवं दुयगसंजोगे सव्वे पडंति तियगसंजोगे एक्को ण पडइ।

छप्पएसियस्स सव्वे पडंति, जहा छप्पएसिए एवं जाव अणंतपएसिए। सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।

—भग० श। १२ उ १०। सू २२४-२२६ पृ० ५८६-८७

पंच प्रदेशी स्कंध—१—कथंचित् आत्मा है, २—कथंचित् नो आत्मा है, ३—आत्मा नो आत्मा रूप कथंचित् अवक्तव्य है।

४-७—कथंचित् आत्मा, नो आत्मा और आत्मा, नो आत्मा उभय रूप से कथंचित् अवक्तव्य है।

८ से ११—कथंचित् आत्मा और अवक्तव्य के चार भंग।

१२ से १५—कथंचित् नो आत्मा और अवक्तव्य के चार भंग, त्रिक संयोगी आठ भंग में से एक आठवां भंग घटित नहीं होता अर्थात् सात भंग होते हैं। कुल मिला कर बावीस भंग होते हैं।

इसके कथन का कारण यह है कि—

१—पंच प्रदेशी स्कंध अपने आदेश से आत्मा है।

२—पर के आदेश से नो आत्मा है।

३—तदुभय के आदेश से अवक्तव्य है, एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नो आत्मा है। इस प्रकार द्विक संयोगी सभी भंग पाये जाते हैं। त्रिसंयोगी आठ भंग होते हैं। उनमें से आठवां भंग घटित नही होता।

छ:प्रदेशी स्कंध के विषय में ये सभी भंग घटित होते हैं। छ:प्रदेशी स्कंध के समान यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध तक कहना चाहिए।

विवेचन—पंचप्रदेशी स्कंध के २२ भंग होते हैं। इनमें से पहले के तीन भंग पूर्ववत् सकला देश रूप है। इसके बाद द्विसंयोगी बारह भंग है। त्रिसंयोगी आठ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंग पाये जाते हैं। उनमें से यहाँ प्रथम के सात भंग ग्रहण करने चाहिए। आठवां भंग यहाँ असंभव होने से घटित नहीं हो सकता। छःप्रदेशी स्कंध में और इसके आगे यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध तक तेईस-तेईस भंग होते हैं।

नोट—इन तीन आत्माओं के भांगे २३ (असंयोगी ३, दो संयोगी १२ व तीन संयोगी ८)।

असंयोगी तीन भंग

१—आत्मा, २—नो आत्मा, ३—अवक्तव्य।

दो संयोगी बारह भंग—

१—आत्मा एक, नो आत्मा एक।
२—आत्मा एक, नो आत्मा बहुत।
३—आत्मा बहुत, नो आत्मा एक।
४—आत्मा बहुत, नो आत्मा बहुत।
५—आत्मा एक, अवक्तव्य एक।
६—आत्मा एक, अवक्तव्य बहुत।
७—आत्मा बहुत, अवक्तव्य एक।
८—आत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत।
९—नो आत्मा एक, अवक्तव्य बहुत।
१०—नो आत्मा एक, अवक्तव्य एक।
११—नो आत्मा बहुत, अवक्तव्य एक।
१२—नो आत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत।

तीन संयोगी आठ भंग—

१—आत्मा एक, नो आत्मा एक, अवक्तव्य बहुत।
२—आत्मा एक, नो आत्मा एक, अवक्तव्य बहुत।
३—आत्मा एक, नो आत्मा बहुत, अवक्तव्य एक।
४—आत्मा एक, नो आत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत।
५—आत्मा बहुत, नो आत्मा एक, अवक्तव्य एक।
६—आत्मा बहुत, नो आत्मा एक, अवक्तव्य बहुत।
७—आत्मा बहुत, नो आत्मा बहुत, अवक्तव्य एक।
८—आत्मा बहुत, नो आत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत।

परमाणु पुद्गल में तीन असंयोगी भंग पाये जाते हैं। दो प्रदेशी स्कंध में ६ भंग पाये जाते हैं, असंयोगी ३ और दो संयोगी ३—पहला, पांचवां और आठवां।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तीनप्रदेशी स्कंध में १३ भंग पाये जाते हैं—यथा—३ असंयोगी, ९ दो संयोगी (चौथा, आठवां और बारहवां ये तीन भग छोड़कर, शेष ९ भंग) और तीन संयोगी १ (पहला भग)।

चतुष्प्रदेशी स्कंध में १९ भंग पाये जाते हैं, यथा —३ असंयोगी, १२ दो संयोगी और ४ तीन संयोगी (पहला, दूसरा, तीसरा और पांचवां)।

पंचप्रदेशी स्कंध में २२ भंग पाये जाते हैं—यथा —३ असंयोगी, १२ दो संयोगी और ७ तीन संयोगी (आठवां भंग छोड़कर शेष सात)।

छः प्रदेशी स्कंध में २३ भंग पाये जाते हैं।

इसी प्रकार सात प्रदेशी स्कंध में, आठ प्रदेशी स्कंध में यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध में प्रत्येक में तेईस-तेईस भंग पाये जाते हैं।

नोट —दो प्रदेशी स्कंध में छः भांगे होते हैं—इनमें पहले के तीन भांगे सकल (सब) स्कंध की अपेक्षा से होते हैं। इनमें पहले के तीन भांगे सकल (सब) स्कंध की अपेक्षा से होते हैं। बाकी के तीन भांगे देश की अपेक्षा से होते हैं। द्विप्रदेशी स्कंध होने से उसका एक देश की स्वपर्याय के द्वारा सत् रूप विवक्षा की जाय और दूसरे देश की पर्याय के द्वारा असत् रूप विवक्षा की जाय तो द्विप्रदेशी स्कंध में चौथा भांगा यानी दो संयोगी का पहला भांगा (कथंचित् आत्मा रूप और कथंचित् नोआत्मा रूप) पाया जाता है। जब द्विप्रदेशी स्कंध के एक देश की स्वपर्याय के द्वारा सत् रूप विवक्षा की जाय और दूसरे सत और असत् उभय रूप में विवक्षा की जाय तब पांचवां भांगा यानी दो संयोगी का पांचवां भांगा (कथंचित् आत्मा और कथंचित् अवक्तव्य) पाया जाता है। जब द्विप्रदेशी स्कंध का एक देश पर पर्याय के द्वारा असत् रूप विवक्षा की जाय और दूसरे देश की उभय रूप विवक्षा की जाय तब छट्ठा भांगा यानी दो संयोगी का नवबां भांगा (नोआत्मा और अवक्तव्य पाया जाता है।

तीन प्रदेशी स्कंध में १३ भांगे पाये जाते हैं। उसमें असंयोगी ३ भांगे सकल स्कंध की अपेक्षा से होते हैं। दो संयोगी नव भांगे—१-२-३-५-६-७-९-१०-११ (समुच्चय दो संयोगी १२ भांगे में से चौथा, आठवां, और बारहवां—ये तीन भांगे छोड़कर) तीन संयोगी आत्मा एक, नो आत्मा, एक अवक्तव्य एक यह भांगा पाया जाता है।

·६७ स्कंध की विविध अपेक्षा से स्थिति

·१ (पाठ के लिए देखो क्रमांक ·२१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) संतति की अपेक्षा

स्कंध की स्थिति—संतति प्रवाह अर्थात् अपरापरोत्पत्ति प्रवाह की अपेक्षा अनादिअनंत होती है।

(२) विवक्षित क्षेत्र की अपेक्षा

विवक्षित क्षेत्र में स्कंध पुद्गल की अवस्थिति रूप स्थिति सादिसांत होती है।

(३) एक रूप की अपेक्षा

× × ×। द्व्यणुकादिस्कंधाः सादिसपर्यवसिताः, एकेन द्व्यणुकत्वादिना परिणामेनोत्कृष्टतोऽपि पुद्गलद्रव्यस्याऽसंख्येयकालमेव स्थितेः। अनागताद्धा भविष्यत्कालरूपा साद्यपर्यवसिता × × ×।

—विशेभा० गा २०३४। टीका

द्विप्रदेशी स्कंध से अनंतप्रदेशी स्कंध की (व्यक्तिगतभाव) स्थिति—अधिक से अधिक असंख्यातकाल पर्यंत है। द्विप्रदेशी आदि स्कंध का स्थिति सादि-सपर्यवसित है।

नोट—जघन्य स्थिति एक समय की जाननी चाहिए।

एकक्षणाद्यसंख्येयकालान्तस्थितिशालिनः।

—लोकप्र० सर्ग ११। गा ७ उत्तरार्ध

पुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्यातकाल की है।

(पाठ के लिए देखो क्रमांक २१)

(४) सकंपत्व की अपेक्षा

(५) निष्कंपत्व की अपेक्षा

एक आकाश प्रदेश में अवगाढ़ स्कंध पुद्गल यावत् असंख्यात प्रदेश में अवगाढ़ स्कंध पुद्गल स्वस्थान पर या दूसरे स्थान पर जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक सकंप रह सकता है।

एक आकाश में यावत् असंख्यात प्रदेश अवगाढ़ स्कंध पुद्गल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्येयकाल तक निष्कंप रह सकता है।

नोट—कोई भी स्कंध पुद्गल अनंतप्रदेशावगाढ़ नहीं होता है अतः असंख्यात प्रदेशावगाढ़ का ही विवेचन किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ स्कंध पुद्गल और सकंपता-निष्कंपता की अपेक्षा स्थिति

·१ दुपएसिए णं भंते ! खंधे देसेए कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं । [सू २१८]

द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक देश कंपक रहता है ।

सव्वेए कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेण आवलियाए असंखेज्जइभागं । [सू २१९]

द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक सर्व कंपक रहता है ।

निरए कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । एवं जाव अणंतपएसिए [सू २२०]

द्विप्रदेशी स्कंध जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक निष्कंपक रहता है ।

इसी प्रकार तीन प्रदेशी स्कंध यावत् अनंत स्कंध के सकंपक और निष्कंपक के विषय में समझना चाहिए ।

·२ दुप्पएसिया णं भंते ! खंधा देसेया कालओ केवच्चिरं ? सव्वद्धं । [सू २२४]

सव्वेया कालओ केवच्चिरं होंति ? सव्वद्धं । [सू २२४]

निरेया कालओ केवच्चिरं होंति ? सव्वद्धं । एवं जाव अणंतपएसिया । [सू २२५]

—भग० श २५ । उ ४ । सू ११२ से ११४

सकंप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) की स्थिति सदा काल होती है ।

निष्कप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) की स्थिति सदा काल होती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट— द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध कुछ देशतः सकंप रहते हैं, कुछ सर्वांश रूप से सकंप रहते हैं। तथा कुछ निष्कंप रहते हैं। अतः ऐसा कहा जाता है कि द्विप्रदेशादि स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध पुद्गल (बहुवचन) सदा काल देशतः सकंप तथा सदा काल सर्वांश रूप से सकंप भी रहते हैं।

नोट— क्रियानेक प्रकारा हि पुद्गलानामिवात्मनाम्।

—तत्त्वश्लो० अ ७ । सू ४६

सामान्यतः क्रिया के अनेक भेद होते हैं।

पुद्गलानामपि द्विविधा क्रिया विस्रसा प्रयोगनिमित्ता च।

—तत्त्वराज० अ ५ । ७ । १७

पुद्गलों की भी दो प्रकार की क्रिया होती है। १—वैस्रसिक और प्रयोगिक। निमित्त अपेक्षा से भेद है।

·३ सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा

·४ बादर परिणमन अपेक्षा

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·२१)

सूक्ष्म परिणत स्कंध तथा बादर परिणत स्कंध पुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्यात काल की होती है।

·६८ स्कंध पुद्गलों का ज्ञान

·१ कर्मपुद्गलानामतिसूक्ष्मतया चक्षुरादीन्द्रियाऽगोचरत्वात्।

—कर्मग्र० भा १ । गा ३२ । टीका । पृ० ४६

कर्म पुद्गल सूक्ष्म होने के कारण चक्षुरिन्द्रिय के अगोचर है।

·२ जीव और पुद्गलों का ज्ञान

अत्थि णं आउसो ! 'घाणसहगया पोग्गला' ? हंता अत्थि, 'तुब्भे णं आउसो ! घाणसहगयाणं पोग्गलाणं रूवं पासह' ? णो इणट्ठे समट्ठे।

अत्थि णं आउसो ! 'अरणिसहगए अगणिकाए' ? हंता अत्थि। 'तुब्भे णं आउसो ! अरणिसहगयस्स अगणिकायस्स 'रूवं पासह' ? णो इणट्ठे समट्ठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ अत्थि णं आउसो ! समुद्दस्स पारगयाइं रूवाइं ? हंता अत्थि, तुब्भेणं आउसो ! समुद्दस्स पारगयाइं रूवाइं पासह ? णो इणट्ठे समट्ठे ।

अत्थि णं आउसो ! देवलोगगयाइं रूवाइं, हंता अत्थि । 'तुब्भेणं आउसो ! देवलोगगयाइं रूवाइं पासह ? णो इणट्ठे समट्ठे । एवामेव आउसो । अहं वा तुब्भे वा अन्नो वा छउमत्थो जइ जो जं न जाणइ न पासइ तं सव्वं न भवति, एवं भे सुबहुए लोए ण भविस्सीति कट्टु × × × ।

—भग० श १८ । उ ७ । सू १५ । पृ० ७७४

टीका—'अत्थि ण' मित्यादि, 'घाणसहगय' त्ति घ्रायते इति घ्राणो-गंध गुणस्तेन सहगताः तत्सहचरितास्तद्वन्तो घ्राणसहगताः 'अरणिसहगए' त्ति अरणिः—अग्न्यर्थं निर्मन्थनीयकाष्ठं तेन सहगतो यः स तथा तं × × × ।

घ्राण सहगत अर्थात् गंध गुणवाले पुद्गलों को छद्मस्थ जीव नहीं देख सकता है । अरणि के काष्ठ में स्थित अग्नि को भी नहीं देख सकता है । समुद्र के पारगत स्थित रूपी—पुद्गल पदार्थ है उनको भी नहीं देख सकता है ।

देवलोक में स्थित रूप—पुद्गल पदार्थों को भी नहीं देख सकता है ।

यदि यह मान लिया कि छद्मस्थ जिन-जिन वस्तुओं को नहीं जानता है, नहीं देख सकता है उन-उन सब वस्तुओं की अवस्थिति नहीं होती है तो लोक में बहुत वस्तुओं का अभाव हो जाता है परन्तु लोक में ऐसे बहुत से पदार्थ है जिनको छद्मस्थ नहीं देख सकता है । यहाँ छद्मस्थ से अवधि ज्ञान रहित जीव समझना चाहिए । (छद्मस्थोऽवधिज्ञानरहितोऽवसेयः । न, पुनरकेवलिमात्रम्) ।

.३ पुद्गल का ज्ञान

मतिज्ञान से—शब्द-रस-स्पर्श-रूप-गंधादि का ज्ञान

× × × इंदिय-णोइंदिएहि सद्द-रस-परिस-रूव-गंधादि विसएसु ओग्गह-ईहावाय-धारणाओ मदिणाणं × × × ।

—कसायपा० भा १ । गा १ । टीका । पृ० ४२

इन्द्रिय और मन के निमित्त से शब्द-रूप-स्पर्श-रस-गंधादि विषयों में अवग्रह-ईहा-अवाय और धारणा रूप जो ज्ञान होता है वह मतिज्ञान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ अवधि ज्ञानी-सर्व पुद्गल द्रव्यों को जान सकता है

× × × परमाणु पज्जंतासेसपोग्गलदव्वाणम-संखेज्जलोगमेत्तखेत्तकाल-भावाणं कम्मसंबंधवसेण पोग्गलभावमुवगयजीव × × ×।

—कसायपा० भा १। गा १। टीका। पृ० ४३

महास्कंध से लेकर परमाणुपर्यंत समस्त पुद्गल द्रव्यों को, असंख्यात लोक-प्रमाण क्षेत्र, काल और भावों को तथा कर्म के संबंध से पुद्गल भाव को प्राप्त हुए जीवों को जो प्रत्यक्ष रूप से जानता है उसे अवधि ज्ञान कहते हैं।

परमाणु से अंतिम स्कंध पर्यन्त-रूपी द्रव्यों को अवधि दर्शन देखता है

परमाणुआदिआइं अंतिमखंधं त्ति मुत्तिदव्वाइं।
तं ओहिदंसण पुण जं पस्सइ ताइं पच्चक्खं॥

—गोजी० गा ४८५

अवधि दर्शन परमाणु से लेकर अन्तिम स्कंध पर्यन्त मूर्तिक द्रव्यों को देखता है।

परमावधि ज्ञानी समस्त पुद्गल द्रव्य और संख्यात पर्याय को जानता है

× × ×। द्रव्यं तु सर्वं रूपं पश्यति। भावं तु तेषामेव रूपिद्रव्याणां पर्यायान् वक्ष्यमाणसंख्यान् जानाति।

—विशेभा गा ६८६। टीका

परमावधि ज्ञानी द्रव्यतः सर्व पुदगल द्रव्यों को जानता है, भावतः उन पुद्गल द्रव्यों की संख्यात पर्यायों को जानता है।

परमावधि ज्ञानी एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों को जानता है

पुद्गल का ज्ञान

परमावधि ज्ञानी सर्व पुद्गलों को जानता है

एगपएसोगाढं परमोही लहइ कम्मगसरीरं।
लहइ य अगुरुयलहुयं तेयसरीरे भवपुहुत्तं॥

—विशेभा० गा ६७५

टीका—एकस्मिन्नाकाशप्रदेशेऽवगाढं स्थितमेकप्रदेशावगाढं परमाणु-द्व्यणुकाद्यनन्ताणुकस्कंधपर्यन्तं सर्वमपि द्रव्यं, परमश्चासावधिश्च परमाव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धिरुत्कृष्टावधिरित्यर्थः, लभते पश्यति, तथा कार्मणशरीरं च लभते। आह्-'एकप्रदेशावगाढं' इति सामान्योक्तौ कथं परमाणु-द्वयणुकादिकं द्रव्यं गम्यते, यावता 'एकप्रदेशावगाढं कार्मणशरीरं' इत्युपात्तमेव कस्माद् न योज्यते ? नैवम्, कार्मणशरीरस्याऽसंख्येयप्रदेशावगाहित्वेनैकप्रदेशावगाढत्वासंभवादिति। अगुरुलघु च द्रव्यं सर्वमपि परमावधिः पश्यति 'च' शब्दाद् गुरुलघु च सर्वं पश्यति। 'च' शब्दाद् गुरुलघु च सर्वं पश्यति। जात्यपेक्षं चैकवचनम्, अन्यथा ह्येकप्रदेशावगाढानि कार्मणशरीराण्यगुरुलघूनि गुरुलघूनि च सर्वाण्यपि द्रव्याण्यसौ पश्यतीत्यवगंतव्य मिति। तथा तैजस-शरीरविषयेऽवधौ कालतो भवपृथक्त्वं परिच्छेद्यतयाऽवगंतव्यम् × × ×।

रूपगतं लभते सर्वम्, इत्यस्य वक्ष्यमाणत्वात्। अत्रोच्यते—यः सूक्ष्मं परमाण्वादिपश्यति तेन बादरं कार्मणशरीराद्यवश्यमेव द्रष्टव्यम्, यो या बादरं पश्यति तेन सूक्ष्ममवश्यं ज्ञातव्यमित्ययं न कोऽपि नियमः, × × × इत्येवं समस्तपुद्गलास्तिकायविषयत्वं परमावधेराविष्कृतं भवति × × ×।

एक प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्य, कार्मण शरीर और अगुरुलघुद्रव्य को परमावधि ज्ञान देखता है ; जो अवधिज्ञान दो से नव भव तक देखता है वह तैजस शरीर को देखता है।

पुद्गल का ज्ञान

एक प्रदेशावगाढ—एक आकाश प्रदेश में स्थित परमाणु, दो प्रदेशी स्कंध से अनंत प्रदेशी स्कंध सर्व पुद्गल द्रव्य तथा कार्मण शरीर—परमावधिज्ञान-उत्कृष्टावधि ज्ञान देखता है।

कार्मण शरीर आकाश के असंख्यात प्रदेशों को अवगाहित कर रहता है अतः वह आकाश के एक प्रदेश को अवगाहित कर नहीं रहता है। अस्तु परमावधिज्ञानी अगुरुलघु सर्व पुद्गल द्रव्य को और गुरुलघु सर्व द्रव्य को देखता है। जाति की अपेक्षा एक वचन है ऐसा नहीं कहा जाता है तो एक आकाश प्रदेश में अवगाहित कार्मण शरीर अगुरुलघुद्रव्य तथा गुरुलघुद्रव्य को परमावधिज्ञानी देखता है। जो परमाणु आदि सूक्ष्म द्रव्य को देखता है वह कार्मण शरीरादि (स्थूल) को अवश्यमेव देखता है, जो बादर द्रव्य को देखता है वह सूक्ष्म द्रव्य को अवश्य देखता है—ऐसा नियम नहीं है। परमावधिज्ञानी समस्त पुद्गलों को देखता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५ पुद्गल का ज्ञान

अवधि ज्ञानी-सर्व पुद्गलों को जान सकता है

दव्वओ णं ओहिनाणी जहन्नेणं अणंताइं रूविदव्वाइं जाणइ पासइ, उक्कोसेणं सव्वरूविदव्वाइं जाणइ पासइ।

—कर्मग्र० भा २। गा ८। टीका। पृ० २१

अवधिज्ञानी द्रव्य की अपेक्षा जघन्य से अनंत रूपी द्रव्यों को जानता है—देखता है तथा उत्कृष्ट से सर्व रूपी द्रव्यों को जानता है, देखता है।

·६ मनपर्यव ज्ञानी को पुद्गलों का ज्ञान

दव्वओ उज्जुमई अणंते अणंतपएसिए खंधे जाणइ पासइ। ते चेव विउलमई अब्भहियतराए विमलतराए जाणइ पासइ।

—कर्मग्र० भा १। गा ८। टीका। पृ० २२

ऋजुमति मन:पर्यवज्ञान द्रव्य की अपेक्षा अनंत प्रदेशी स्कंध को जानता है, देखता है ; विपुलमति आभ्यंतर रूप से—विमलतररूप से जानता है, देखता है।

मन:पर्यवज्ञानी-मनोवर्गणा के पुद्गलों को जानता है

× × ×। मनपर्यवज्ञानी मनोद्रव्याणि सूक्ष्माण्यपि पश्यति, चिन्तनीयं तु घटादि स्थूलमपि न पश्यति × × ×।

—विशेभा० गा ६७५। टीका। पृ० २९२

मन:पर्यवज्ञानी-मनोद्रव्यों को—सूक्ष्म होने से भी प्रत्यक्ष देखता है परन्तु चिन्तनीय घटादिवस्तु स्थूल होने पर भी नहीं देखता है।

स्कध पुद्गल का ज्ञान

मन:पयवज्ञान अनंत-अनंतप्रदेशी स्कंध को जानता है

× × ×तत्थ दव्वओ णं उजुमती अणंते अणंतपएसिए खंधे जाणइ पासइ × × ×।

—नंदी० सू ३८

ऋजमति मन:पर्यवज्ञान द्रव्य से अनंत प्रदेशी अनंत स्कन्धों को जानता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—प्रज्ञापना के टीकाकार ने कहा है

केवलमेत्तं वैक्रियशरीरान्तर्गता इति न गर्भाधान हेतवः ।

—प्रज्ञा० पद ३४ । सू ३२३-टीका

अर्थात् देव के उस शुक्र से अप्सरा में गर्भाधान नहीं होता, क्योंकि देवों के वैक्रिय शरीर होता है ।

स्पर्शादि से परिचारणा करने वाले देवों के भी शुक्र-विसर्जन होता है । वृत्तिकार ने इस विषय में स्पष्टीकरण किया है कि देव-देवी का कायिक सपर्क न होने पर भी दिव्य प्रभाव के कारण देवी में शुक्र-सक्रमण होता है और उसका परिणमन भी उन देवियों के रूप लावण्य में वृद्धि करने में होता है ।[1]

·६ पुद्गलों का ज्ञान

आहार के पुद्गलों का ज्ञान

णेरइया णं भंते ! जे पोग्गले आहारत्ताए गेण्हंति किं जाणंति पासंति आहारेंति ? उयाहु ण जाणंति ण पासंति आहारेंति ?

गोयमा ! ण जाणंति ण पासंति, आहारेंति ।

एवं जाव तेइंदिया ।

—पण्ण० प ३४ । सू २०४०-४१

नैरयिक जिन पुद्गलों को आहार के रूप में ग्रहण करते हैं वे उन पुद्गलों को न तो जानते हैं और न देखते हैं किन्तु उनका आहार करते हैं ।

इसी प्रकार (असुर कुमार से लेकर यावत्) त्रीन्द्रिय तक कहना चाहिए ।

चउरिंदियाणं पुच्छा । गोयमा ! अत्थेगइया ण जाणंति पासंति आहारेंति, अत्थेगइया ण जाणंति ण पासंति आहारेंति ।

—पण्ण० सू ३४ । पृ० २०४२

कई चतुरिन्द्रिय आहार्यमाण पुद्गलों को नहीं जानते हैं, किन्तु देखते हैं व आहार करते हैं और कई चतुरिन्द्रिय न तो जानते हैं, न देखते हैं किन्तु आहार करते हैं ।

१—शुक्रपुद्गल-संक्रमो दिव्यप्रभावादवसेयं ।—प्रज्ञा० सू ३२६-टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गलों का ज्ञान

पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा,

गोयमा ! अत्थेगइया जाणंति पासंति आहारेंति १ अत्थेगइया जाणंति न पासंति आहारेंति २ अत्थेगइया ण जाणंति पासंति आहारेंति ३ अत्थेगइया ण जाणंति ण पासंति आहारेंति ४ एवं मणूस्साण वि ।

—पण्ण० पद ३४ । सू २०४३-४४

कतिपय पंचेन्द्रिय तिर्यंच (आहार्यमाण पुद्गलों को) जानते हैं, देखते हैं और आहार करते हैं १ कतिपय जानते हैं, देखते नहीं हैं और आहार करते हैं २ कतिपय जानते नहीं हैं, देखते हैं और आहार करते हैं ३ कतिपय पंचेन्द्रिय तिर्यंच न जानते हैं और नहीं देखते हैं किन्तु आहार करते हैं ।

इसी प्रकार मनुष्यों के विषय में जानना चाहिए ।

पुद्गलों का ज्ञान

वाणमंतर-जोतिसिया जहा णेरइया ।

—पण्ण० पद ३४ । सू २०४५

वाणव्यन्तरों और ज्योतिष्कों का कथन नैरयिकों के समान समझना चाहिए ।

पुद्गलों का ज्ञान

वेमाणियाणं पुच्छा ।

गोमया ! अत्थेगइया जाणंति पासंति आहारेंति ? अत्थेगइया ण जाणंति ण पासंति आहारेंति ।

से केणट्ठे णं भंते ! एवं वुच्चति अत्थेगइया जाणंति पासंति आहारेंति अत्थेगइया ण जाणति ण पासंति आहारेंति ?

गोयमा ! वेमाणिया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा-माईमिच्छद्दिट्ठिउववण्णगा य अमाईसम्मद्दिट्ठिउववण्णगा, एवं जहा इंदियउद्देसए पढमे भणितं जहा भाणियव्वं जाव से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति ।

—पण्ण० पद ३४ । सू २०४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैमानिक देव जिन पुद्गलों को आहार के रूप में ग्रहण करते हैं उनमें से (१) कई वैमानिक देव (आहार्यमाण पुद्गलों को) जानते हैं, देखते हैं और आहार करते हैं। और (२) कोई न तो जानते हैं, न देखते हैं, किन्तु आहार करते हैं।

इसका कारण यह है कि वैमानिक देव दो प्रकार के कहे गये हैं—यथा—मायी मिथ्यादृष्टि उपपन्नक और अमायी सम्यग्दृष्टि उपपन्नक।

इस प्रकार जैसे (सू ९८८ में उक्त) प्रथम इन्द्रिय उद्देशक में कहा है, वैसे ही यहाँ सब यावत्—इस कारण से हे गौतम। ऐसा कहा गया है—यहाँ तक कहना चाहिए।

विवेचन—चौवीस दंडकवर्ती जीवों द्वारा आहारमाण पुद्गलों को जानने-देखने पर यहाँ पर विचार किया है। वहाँ एक तालिका दी जा रही है, जिससे आसान से जाना जासके। देखो—पुद्गल कोश खंड २

·६९ स्कंध पुद्गल और संख्या

·१ द्रव्य की अपेक्षा स्कंध पुद्गलों की संख्या

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·१५)

द्विप्रदेशी स्कंध अनंत है यावत् दस प्रदेशी स्कंध अनंत है यावत् संख्यात प्रदेशी स्कंध अनंत है यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंध अनंत है यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध अनंत है। अतः स्कंध पुद्गल संख्या की अपेक्षा अनंत है।

स्कंध पुद्गल की संख्या

परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं संखेज्जा ? असंखेज्जा ? अणंता ? गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता। एव जाव अणंतपदेसिया खंधा।

—भग० श २५। उ ४। सू १४७

द्विप्रदेशी स्कंध अनंत है, संख्यात और असंख्यात नहीं है। तीन प्रदेशी स्कंध से अनंत प्रदेशी स्कंध तक अनंत है, संख्यात और असंख्यात नहीं है।

·२ क्षेत्रावगाहित स्कंध पुद्गल की संख्या

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·१५)

आकाश के एक प्रदेश को अवगाहित करने वाले स्कंध पुद्गल अनंत है। इसी प्रकार आकाश के दो प्रदेश अवगाहित करने वाले स्कंध पुद्गल अनंत है यावत्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दस प्रदेश, यावत् संख्यात प्रदेश यावत् आकाश के असंख्यात प्रदेश को अवगाहित करने वाले स्कंध पुद्गल अनंत है।

·६९·१ स्कंध पुद्गल और युग्म संख्या

द्रव्य की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की संख्या

एक वचन की अपेक्षा, बहुवचन की अपेक्षा

परमाणुपोग्गले णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे, तेओए, दावरजुम्मे, कलिओगे ? गोयमा ! नो कडजुम्मे, नो तेओए, नो दावरजुम्मे, कलिओगे। एवं जाव अणंतपएसिए खंधे।

—भग० श २५ । उ ४ । सू १६८ पृ० ९२४

एक वचन की अपेक्षा—परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ से कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापर-युग्म नहीं है, कल्योज है। इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापर युग्म नहीं है, कल्योज है।

परमाणुपोग्गला णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा ; विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा, नो तेओगा, नो दावरजुम्मा, कलिओगा। एव जाव अणंत पएसिया खंधा।

—भग० श २५ । उ ४ । सू १६९ । पृ० ९२४

परमाणु पुद्गल बहुत परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ की अपेक्षा— ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है। विधानादेश से कृतयुग्म. त्र्योज और द्वापर युग्म नहीं है, किन्तु कल्योज है। इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंधों के विषय में जानना चाहिए।

नोट—परमाणु पुद्गल अनन्त होने पर भी उनमें संघात और भेद के कारण अनवस्थित रूप होने से वे ओघादेश से कृतयुग्मादि होते हैं। विधानादेश से अर्थात् प्रत्येक की अपेक्षा तो वे कल्योज ही होते हैं। इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध आदि के विषय में भी कृतयुग्मादि संख्या से स्वयंमेव घटित कर लेना चाहिए।

युग्म की अपेक्षा पुद्गल स्कंध

दुप्पएसिया णं पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, नो तेयोगपएसोगाढा, नो दावरजुम्मपएसोगाढा, नो कलिओगपएसोगाढा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विहाणादेसेणं नो कडजुम्मपएसोगाढा, नो तेयोगपएसोगाढा, दावरजुम्म-पएसोगाढा वि, कलियोगपएसोगाढा वि [सू १८५]

तिप्पएसिया णं पुच्छा। गोयमा! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, नो तेयोगपएसोगाढा, नो दावरजुम्मपएसोगाढा, नो कलियोगपएसोगाढा। विहाणादेसेणं नो कडजुम्मपएसोगाढा, तेओगपएसोगाढा वि, दावरजुम्म-पएसोगाढा वि, कलिओगपएसोगाढा वि। [सू १८६]

चउप्पएसिया णं पुच्छा। गोयमा! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, नो तेओगपएसोगाढा, नो दावरजुम्मपएसोगाढा, नो कलियोगपएसोगाढा। विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि जाव कलिओगपएसोगाढा वि। एवं जाव अणंतपएसिया [सू १८७]

—भग० श २५। उ ४। सू १८५ से १८७ पृ० ९२६

द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, त्र्योज, द्वापर युग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं है। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ और त्र्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं है। द्वापर युग्म भी होते हैं, कल्योज प्रदेशावगाढ़ भी होते हैं।

तीन प्रदेशी स्कंध— ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, त्र्योज, द्वापर युग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं है। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं, किन्तु त्र्योज प्रदेशावगाढ़, द्वापर प्रदेशावगाढ़ और कल्योज प्रदेशावगाढ़ है।

चतुष्प्रदेशी स्कंध ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, त्र्योज, द्वापर युग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं है। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ भी है।

इसी प्रकार पंचप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए।

स्कंध पुद्गल और युग्म

स्कंध पुद्गल की प्रदेशावगाढता

दुपएसिए णं पुच्छा। गोयमा! नो कडजुम्मपएसोगाढे, णो तेयोग-पएसोगाढे, सिय दावरजुम्मपएसोगाढे सिय कलियोगपएसोगाढे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिपएसिए णं पुच्छा। गोयमा ! णो कडजुम्मपएसोगाढे सिय तेयोग-पएसोगाढे, सिय दावरजुम्मपएसोगाढे, सिय कलियोगपएसोगाढे।

चउप्पएसिए णं पुच्छा। गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढ, जाव सिय कलियोगपएसोगाढे। एवं जाव अणंतपएसिए।

—भग० श २५। उ ४। सू १८१ से १८४ पृ० ९२५, २६

द्विप्रदेशी स्कंध कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ और त्र्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं, कदाचित् द्वापर युग्म प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है।

त्रिप्रदेशी स्कंध कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं, किन्तु कदाचित् त्र्योज प्रदेशावगाढ़, द्वापर प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है।

चतुष्प्रदेशी स्कंध कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है।

इसी प्रकार पंचप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए।

स्कध पुद्गल और युग्म

प्रदेश की अपेक्षा स्कंध पुद्गल की संख्या

दुपएसिए पुच्छा (पएसट्ठयाए)। गोयमा ! नो कडजुम्मे, नो तेओए, दावरजुम्मे, नो कलिओगे।

तिपएसिए—पुच्छा। गोयमा ! नो कडजुम्मे, तेओए, नो दावरजुम्मे, नो कलिओए।

चउप्पएसिए—पुच्छा। गोयमा ! कडजुम्मे, नो तेओए, नो दावरजुम्मे, नो कलिओए। पंचपएसिए जहा परमाणुपोग्गले। छप्पएसिए जहा दुप्पएसिए। सत्तपएसिए जहा तिपएसिए। अट्ठपएसिए जहा चउपएसिए। नव पएसिए जहा परमाणुपोग्गले। दसपएसिए जहा दुप्पएसिए [सू १७३]

संखेज्जपएसिए णं भंते ! पोग्गले—पुच्छा। गोयमा ! सिय कडजुम्मे, जाव—सिय कलिओए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं असंखेज्जपएसिए वि, अणंतपएसिए वि।

—भग० श २५। उ ४। सू १७१ से १७४ पृ० ९२४

द्विप्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से कृतयुग्म, त्र्योज और कल्योज नहीं है, द्वापर युग्म है।

तीन प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से कृतयुग्म, द्वापर युग्म और कल्योज नहीं है, त्र्योज है।

चतुष्प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से कृतयुग्म है किन्तु त्र्योज, द्वापर युग्म और कल्योज नहीं है।

परमाणु पुद्गल के समान पंचप्रदेशी स्कंध कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापर युग्म नहीं है, कल्योज है, द्विप्रदेशी स्कंध के समान छःप्रदेशी स्कंध, त्रिप्रदेशी स्कंधवत् सप्त प्रदेशी स्कंध, चतुष्प्रदेशी स्कंधवत् अष्टप्रदेशी स्कंध, परमाणु पुद्गल के समान नौ प्रदेशी स्कंध और द्विप्रदेशी स्कंध जैसा दस प्रदेशी स्कंध जानना चाहिए।

संख्यात प्रदेशी स्कंध कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है।

इसी प्रकार असंख्यात प्रदेशी स्कंध और अनंत प्रदेशी स्कंध के विषय में भी जानना चाहिए अर्थात् कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है।

स्कंध पुद्गल और युग्म

प्रदेश की अपेक्षा स्कंध पुद्गलों की संख्या

दुप्पएसिया णं पुच्छा। (पएसट्ठयाए) गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा, नो तेओया, सिय दावरजुम्मा, नो कलिओगा। विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा नो तेओया, दावरजुम्मा, नो कलिओगा। [सू १७६]

तिपएसिया णं (पएसट्ठयाए) पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा, जाव सिय कलिओगा। विहाणादेसेणं नो कडजुम्मा, तेओगा, नो दावरजुम्मा, नो कलिओगा [सू १७७]

चउप्पएसिया णं—पुच्छा। गोयमा ! ओघादेसेणवि विहाणादेसेण वि कडजुम्मा, नो तेओगा, नो दावरजुम्मा, नो कलिओगा। पंचपएसिया जहा परमाणुपोग्गला। छप्पएसिया जहा दुप्पएसिया। सत्तपएसिया जहा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिपएसिया। अट्ठपएसिया जहा चउपएसिया। नवपएसिया जहा परमाणु-पोग्गला। दसपएसिया जहा दुपएसिया। [सू १७८]

संखेज्जपएसियाणं—पुच्छा। गोयमा! ओघदेसेणं सिय कडजुम्मा जाव—सिय कलिओगा। विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि जाव—कलि-ओगा वि।

एवं असंखेज्जपएसिया वि, अणंतपएसिया वि। [सू १७९]

—भग० श २५। उ ४। १७६ से १७९ पृ० ९२५

द्विप्रदेशी स्कंध (बहुत) प्रदेशार्थ से—ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म और कदाचित् द्वापर युग्म है, किन्तु त्र्योज और कल्योज नहीं है। विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज और कल्योज नहीं है, द्वापर युग्म है।

तीन प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से—ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है, किन्तु त्र्योज और द्वापर युग्म नहीं है। विधानादेश से कृतयुग्म, द्वापर युग्म और कल्योज नहीं है, किन्तु त्र्योज है।

चतुष्प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से—ओघादेश से भी विधानादेश से भी कृतयुग्म है, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं होते।

पंच प्रदेशी स्कंधों का स्वरूप (प्रदेशार्थ से) परमाणु पुद्गलों के समान, छः-प्रदेशी स्कंधों का कथन द्विप्रदेशी स्कंधों जैसा, सप्त प्रदेशी स्कंधों का वर्णन त्रिप्रदेशी स्कंधवत्, अष्टप्रदेशी स्कंधों का विधान चतुष्प्रदेशी स्कंधों के समान, नवप्रदेशी स्कंधों का कथन परमाणु पुद्गलों के समान, दशप्रदेशी स्कंधों का कथन द्विप्रदेशी स्कंधों के समान है।

संख्यात प्रदेशी स्कंध—प्रदेशार्थ से—ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है। विधानादेश से कृतयुग्म भी है यावत् कल्योज भी है।

इसी प्रकार असंख्यात प्रदेशी और अनंत प्रदेशी स्कंधों के विषय में (प्रदेशार्थ से) भी जानना चाहिए।

·२ पुद्गल स्कंध चाक्षुष भी है तथा अचाक्षुष भी है

अनन्तानन्तपरमाणुसमुदयनिष्पाद्योपि कश्चित् चाक्षुषः कश्चिद, चाक्षुषः।

—सर्वार्थसिद्धि अ ५। सू २८। टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनन्तानन्त परमाणुओं से बने हुए स्कंध कतिपय दृष्टिगोचर होते हैं, कतिपय नहीं होते हैं।

दुविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा—परमाणुपोग्गला चेव नोपरमाणुपोग्गला चेव।

—ठाण० स्था २। उ ३। सू ८२

टीका—परमाश्च ते अणवश्चेति परमाणवः नोपरमाणवः—स्कंधाः।

·७० स्कंध पुद्गल का अंतर काल

(क्रमांक के लिए देखो २२)

·१ स्कंध पुद्गल का अंतरकाल

दुप्पएसियस्स णं भंते ! खंधस्स अंतरंकालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, एवं जाव—अणंतपएसिओ।

—भग० श ५। उ ७। सू २२

द्विप्रदेशी स्कंध का अन्तर काल जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अनंत काल का है। इसी प्रकार यावत् अनंतप्रदेशी स्कंध तक जानना चाहिए।

नोट—तीन प्रदेशी से दस प्रदेशी स्कंध यावत् संख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी व अनंतप्रदेशी स्कंध का ग्रहण होता है—यावत् शब्द से।

·२ स्कंध पुद्गल की सकंपता का अंतरकाल

दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स सेयस्स—पुच्छा। गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं।

निरेयस्स केवइयं कालं अतरं होइ ? गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समजं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं। एव जाव-अणंतपएसियस्स।

—भग० श २५। उ ४। सू २०५, २०६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकम्प द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल तथा परस्थान आश्रयी जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनंत काल का अन्तर होता है।

निष्कम्प द्विप्रदेशी स्कध का स्वस्थानाश्रयी जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का तथा परस्थानाश्रयी जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनंत काल का अन्तर होता है।

इसी प्रकार तीन प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध के विषय में जानना चाहिए।

नोट—द्विप्रदेशी स्कंध चलित होकर अनंतकाल तक उत्तरोत्तर दूसरे अनंत पुद्गलों के साथ संबंध करता हुआ पुनः उसी परमाणु के साथ संबद्ध होकर पुनः चलित हो, तब परस्थान का अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अनंत काल का होता है।

दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स देसेयस्स केवइयं काल अंतरं होइ ? सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं [सू २२८]

सव्वेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ? एवं चेव जहा देसेयस्स [सू २२९]

—भग० श २५ । उ ४

देशतः (अंशतः) सकंप द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान की अपेक्षा (सकंपता) अंतरकाल जघन्य एक समय का तथा उत्कृष्ट असंख्यात काल का होता है। परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनंत काल का अंतर होता है। (देखो क्रमांक ·२२) इसी प्रकार सर्वांश रूप से सकंप द्विप्रदेशी स्कंध का अंतर समझना चाहिए।

निरेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ? सट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं। एवं जाव अणंतपएसियस्स। [सू २३०]

—भग० श २५ । उ ४

निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध का स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यात भाग का तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का उत्कृष्ट अनंत काल का अंतर समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसा अंशतः तथा सर्वांश रूप से सकंप तथा निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध के अंतर काल के विषय में कहा है वैसा ही अंशतः तथा सर्वांश रूप से सकंप तथा निष्कंप तीन प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध के अंतर काल के विषय में समझना चाहिए।

दुपएसियाणं भंते ! खंधाणं देसेयाणं केवइयं कालं अंतरं होइ ? नत्थि अंतरं। [सू २३३]

सव्वेयाणं केवइयं कालं अंतरं होइ ? नत्थि अंतरं। [सू २३४]

निरेयाणं केवइयं कालं अंतरं होइ ? नत्थि अतरं। एवं जाव अणंतपए-सियाणं [सू २३५]

—भग० श २५। उ ४

अंशतः सकंप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) का अंतर काल नहीं होता है।

सर्वांश रूप से सकंप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) का अंतर काल नहीं होता है।

निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध (बहुवचन) का अंतर काल नहीं होता है।

इसी प्रकार तीन प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी (बहुवचन) स्कंध के विषय में जानना चाहिए। (देखो क्रमांक ·२२।)

·७१ स्कंध पुद्गल और तेजोलेश्या (शीत तेजोलेश्या उष्ण-तेजोलेश्या)

तए णं अहं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अणुकंपणट्ठयाए वेसि-यायणस्स बालतवस्सिस्स उसिण तेयपडिसाहरणट्ठयाए एत्थणं अंतरा अहं सीयलियं तेयलेस्सं णिसिरामि, जाए सा ममं सीयलियाए तेयलेस्साए वेसीयायणस्स बालतवस्सिस्स उसिणा तेयलेस्सा पडिहया।

—भग० श १५। सू ६५

हे गौतम ! मैंने (भगवान् महावीर) मंखलिपुत्र गोशालक के ऊपर अनुकम्पा करके वैश्यायन बालतपस्वी की तेजोलेश्या (उष्ण तेजोलेश्या) का प्रतिसंहरण करने के लिए, शीतलतेजोलेश्या बाहर निकाली। मेरी उस शीतल तेजोलेश्याय वैश्यायन बालतपस्वी की उष्णतेजोलेश्या का प्रतिघात हुआ।

तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी ममं सीयलियाए तेयलेस्साए साओ-सीणं तेयलेस्सं पीडहयं जाणित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगस्स किंचि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकीरमाणं पासित्ता सीओसिणं तेयलेस्सं पडिसाहरइ, साओसीणं तेयलेस्सं पडिसाहरित्ता ममं एव वयासी —से गयमेयं भगवं से गयमेयं भगवं गत-गतमेयं भगवं ?

—भग० श १५ । सू ६५

मेरी शीतलतेजोलेश्या से अपनी उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिघात हुआ और गोशालक के शरीर को किंचित् भी पीड़ा अथवा अवयव का छेद नहीं हुआ जानकर, वैश्यायन बालतपस्वी ने अपनी उष्णतेजो लेश्या को पीछे खींचली और मेरे प्रति इस प्रकार बोला— हे भगवान् ! मैंने जाना ! हे भगवान ! मैंने जाना ।

संक्षिप्त-विपुल तेजो लेश्याकी प्राप्ति

कहं णं भंते ! संखित्तविउलतेयलेस्से भवइ ? तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी-जेणं गोसाला ! एगाए सणहाए कुम्मास-पिंडियाए एगेण य वियडासएणं छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय-पगिज्झिय जाव विहरइ, से णं अंतो छण्हं मासाणं संखित्तविउलतेयस्से भवइ ।

—भग० श १५ । सू ७०

नख सहित बंद की हुई मुट्ठी में जितने उड़द के बाकुले आवे उतने मात्र से और एक विकटाशय (चुल्लुभर) पानी से निरन्तर छट्ठ-छट्ठ की तपस्या के साथ दोनों हाथ ऊँचे रखकर यावत् आतापना लेने वाले पुरुष को छह मास के अंत में संक्षिप्त-विपुल लेश्या प्राप्त होती है ।

नोट—तेजो लेश्या अप्रयोग काल में संक्षिप्त होती है और प्रयोग काल में विपुल होती है ।

× × × सोलसण्हं जणवयाणं, तंजहा—१ अंगाणं, २ वंगाणं, ३ मगहाणं, ४ मलयाणं, ५ मालवगाणं, ६ अच्छाणं, ७ वच्छाणं, ८ कोच्छाणं, ९ पाढाणं, १० लाढाणं, ११ वज्जाणं, १२ मोलीणं, १३ कासीणं, १४ कोसलाणं, १५ अवाहाणं, १६ संभुत्तराणं घायाए, वहाए, उच्छादणयाए, भासीकरणयाए ।

—भग० श १५ । सू १२१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंखलिपुत्र गोशालक ने भगवान महावीर का वध करने के लिए अपने शरीर में से जो तेजोलेश्या निकाली थी, वह निम्नलिखित सोलह देशों का घात करने में, वध करने में, उच्छेदन करने में और भस्म करने में समर्थ थी। यथा—१—अंग, २—वंश, ३—मगध, ४—मलय, ५—मालव, ६ अच्छा, ७—वत्स ८—कौत्स, ९—पाट, १०—लाढ, ११—वज्रा, १२—मौली, १३—काशी, १४—कोशल, १५—अबाध और १६—सभुतर।

·२ अत्थि णं भंते ! अच्चित्ता वि पोग्गला ओभासंति ? उज्जोवेंति ? तवेंति ? पभासंति ? हंता अत्थि।

कयरे णं भंते ! ते अच्चित्ता वि पोग्गला ओभासंति ? उज्जोवेंति ? तवेंति ? पभासंति ?

कालोदाई ! कुद्धस्स अणगारस्स-तेय-लेस्सा-निसट्ठा समाणा दूरं गता दूर निपतति, देसं गतादेसं निपतति, जहिं-जहिं च णं सा निपततितहिं-तहिं च णं ते अचित्ता वि पोग्गला ओभासंति, उज्जोवेंति, तवेंति, पभासंति। एतेणं कालोदाई ! ते अचित्ता वि पोग्गला ओभसंति, उज्जोवेंति, तवेंति, पभासंति।

—भग० श ७। उ १०। सू २२९। २३०

नोट—वह निकेवल पौद्गलिक शक्ति है। इसका प्रमाण भी श्रमण कालोदायी और भगवान् महावीर के प्रश्नोत्तर में मिलता है। श्रमण कालादायी ने भगवान् महावीर से पूछा—हे भगवान ! जैसे सचित्त अग्निकाय प्रकाश करतो है वैसे अचित्त अग्निकायके पुद्गल प्रकाश करते हैं ? उद्योत करते हैं, तपते हैं, प्रभास करते हैं।

भगवान् महावीर ने कहा—हां कालोदायिन् ! अचित्त पुद्गल भी प्रकाश, उद्योत करते हैं। अहो भगवान् ! कौन से अचित्त पुद्गल प्रकाश करते हैं यावत् तपते हैं। अहो कालोदायिन्। क्रुद्ध अनगार से तेजो लेश्या निकलकर दूर गई हुई दूर गिरती है, पास गई हुई पास गिरती है। यह तेजोलेश्या जहां गिरती है। वहां वे उसके अचित्त पुद्गल प्रकाश करते हैं, उद्योत करते हैं, तपते हैं और प्रभास करते हैं।

नोट—तेजो लेश्या के पुद्गल अष्टस्पर्शी बादर स्कंध है। तेजो लेश्या के दो भेद है—उष्णतेजो लेश्या व शीततेजो लेश्या। भगवान् महावीर शीतलतेजो लेश्या के द्वारा उष्णतेजो लेश्या को शान्त किया। फलस्वरूप गोशालक बच गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्जरा के पुद्गल की सूक्ष्मता

अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो सव्वं कम्मं वेदेमाणस्स सव्वं कम्मं निज्जरेमाणस्स सव्वं मारं मरमाणस्स सव्वं सरीरं विप्पजहमाणस्स, चरिमं कम्मं वेदेमाणस्स चरिमं कम्मं निज्जरेमाणस्स चरिमं मारं मरमाणस्स चरिमं सरीरं विप्पजहमाणस्स, मारणंतियं कम्मं वेदेमाणस्स मारणंतियं कम्मं निज्जरेमाणस्स, मारणंतियं मारं मरमाणस्स मारणंतियं सरीरं विप्पजहमाणस्स जे चरिमा निज्जरापोग्गला सुहुमाणं ते पोग्गला पण्णत्ता समणाउसो, सव्वं लोगं पि णं ते ओगाहित्ता णं चिट्ठंति ?

हंता मागंदिया पुत्ता ! अणगारस्स णं भावियप्पणो सव्वं कम्मं वेदेमाणस्स जाव जे चरिमा निज्जरापोग्गला सुहुमा णं ते पोग्गला पण्णत्ता समणाउसो। सव्वं लोगं पि णं ते ओगाहित्ता णं चिट्ठंति।

—भग० श १८। उ ३। सू ६५

माकन्दिक पुत्र अनगार श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये और वन्दना नमस्कार करके पुछा, उसका प्रत्युत्तर भगवान् ने दिया—

"हाँ, माकन्दिक पुत्र। सभी कर्मों को वेदते हुए, सभी कर्मों को निर्जरते हुए, सर्व मरण से मरते हुए और समस्त शरीर को छोड़ते हुए तथा चरम कर्म वेदते हुए, चरम कर्म निर्जरते हुए, चरम शरीर छोड़ते हुए, चरम मरण मरते हुए एवं मारणान्तिक कर्म को वेदते हुए, मारणान्तिक कर्म निर्जरते हुए, मारणान्तिक मरण मरते हुए और मारणान्तिक शरीर छोड़ते हुए भावितात्मा अनगार के जो चरम निर्जरा के पुद्गल हैं—वे पुद्गल सूक्ष्म कहे गये हैं और वे पुद्गल समग्रलोक को अवगाहित कर रहे हुए है।

विवेचन—यहाँ 'भावितात्मा अनगार' का अर्थ केवली है। भवोपग्राही चार कर्मों का वेदन, निर्जरादि करते हुए एवं औदारिकादि शरीर को छोड़ते हुए और आयुकर्म के समस्त पुद्गलों की अपेक्षा अन्तिम मरण मरते हुए, केवली के सर्वान्तिम निर्जरा पुद्गल सूक्ष्म कहे गये हैं। वे सम्पूर्ण लोक को व्याप्त कर रहते हैं। इसलिए केवली तो उनको जानते ही हैं।

नोट—जो विशिष्ट अवधिज्ञानादि उपयोग युक्त है, वे सूक्ष्म कार्मण पुद्गलों को जानते देखते है परन्तु जो विशिष्ट अवधिज्ञानादि उपयोग रहित है, वे सूक्ष्म कार्मण पुद्गलों को नहीं जानते, नहीं देखते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छद्मस्थ को निर्जरित पुद्गलों का ज्ञान

छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से तेसिं निज्जरापोग्गलाणं किंचि आणत्तं वा णाणत्तं वा० ? एवं जहा इंदिय-उद्देसए पढमे जाव—वेमाणिया, जाव तत्थ णं जे ते उवउत्ता ते जाणंति, पासंति, आहारेंति, से तेणट्ठेणं निक्खेवो भाणियव्वो त्ति न पासंति, आहारेंति।

—भग० श १८। उ ३। सू ५।

छद्मस्थ मनुष्य उन निर्जरा पुद्गलों के पारस्परिक पृथक् भाव और अपृथक् भाव (वर्णादि कृत नाना भाव) को— इनमें जो उपयोग युक्त है, वे उन पुद्गलों को जानते-देखते हैं और आहार के रूप में ग्रहण करते हैं। यावत् जो उपयोग रहित है वे उन पुद्गलों को जानते-देखते नहीं, परन्तु आहार रूप में ग्रहण कराते हैं।

नोट—जो विशिष्ट अवधिज्ञानादि उपयोग युक्त है वे सूक्ष्म कार्मण पुद्गलों को जानते-देखते हैं, परन्तु जो विशिष्ट अवधिज्ञानादि उपयोग रहित हैं— वे सूक्ष्म कार्मण पुद्गलों को नहीं जानते. नहीं देखते हैं।

ओज आहार, लोम आहार और प्रक्षेप आहार— इन तीन प्रकार के आहारों में से यहाँ ओज आहार की ग्रहण समझना चाहिए। क्योंकि कार्मण शरीर द्वारा पुद्गलों को ग्रहण करना ओज आहार कहलाता है यही आहार यहाँ संभावित है। त्वचा के स्पर्श से लोम आहार होता है और मुख में डालने से प्रक्षेप आहार होता है।

विविध अपेक्षा से पुद्गल और वर्णादि

फाणियगुले णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे पण्णत्ते ?

·२ गोयमा ! एत्थ णं दो नया भवंति, तं जहा—णिच्छइयणए य वावहारियणए य। वावहारियणयस्स गोड्डे फाणियगुले, णेच्छइयणयस्स पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, अट्ठफासे पण्णत्ते।

—भग० श० १८। उ ६

निश्चय नय वस्तु के तात्विक (वास्तविक) अर्थ का प्रतिपादन करता है और व्यवहार नय केवल लोकव्यवहार का।

व्यवहार नयकी अपेक्षा फाणित प्रवाही गुड़, मधुर कहा जाता है पर निश्चय नय की अपेक्षा उसमें पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस तथा आठ स्पर्श है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ भमरेणं भंते ! कइवण्णे पुच्छा । गोयमा ! एत्थण दो नया भवन्ति, तंजहा—णिच्छइयणएय, वावहारियणएय । वावहारियणयस्स कालए भयरे, णिच्छइणयस्स पंच वण्णे जाव अट्ठफासे पण्णत्ते ।

—भग० श १८ । उ ६

व्यवहार नय कर अपेक्षा भ्रमण काला है पर निश्चय नय की अपेक्षा उसमें पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस व आठ स्पर्श होते हैं ।

विविध अपेक्षा से पुद्गल और वर्णादि

सुय पिच्छेणं भंते ! कइवण्णे० पण्णत्ते ? एवं चेव णवरं वावहारियणयस्स णीलए सुअपिच्छे, णेच्छइणयस्स णयस्स से पंच वण्णे, सन्तं चेव ।

—भग० श १८ । उ ६

शुक पिच्छि—तोते के पंख व्यवहार नय की अपेक्षा नील है तथा निश्चय नय की अपेक्षा पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस तथा आठ स्पर्श वाली है ।

छारियाणं भंते ! पुच्छा ? गोयमा ! एत्थ णं दो नया भवन्ति, तंजहा णिच्छइयणएय वावहारियणएय । वावहारियणयस्स लुक्खा छारिया, णच्छइणयस्स पंच वण्णे जाव अट्ठ फासे पण्णत्ते ।

—भग० श १८ । उ ६

व्यवहार नय की अपेक्षा राख रूक्ष है पर निश्चय नय की अपेक्षा उसमें पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस तथा आठ स्पर्श होते हैं ।

स्कंध पुद्गल और करण

× × × । यद्यपि शरीरा-ऽभ्रेन्द्रधनुरादौ करणसंज्ञा नास्ति तथापि प्रयोगविस्रसाजनितकरणक्रिया विद्यते, अतस्तदपेक्षमेतेषां करणत्व न विरुध्यत इति । तत्राजीवद्रव्याणां विस्रसाकरणं साद्यनादि च भवति । तत्र धर्मा-ऽधर्मास्तिकाय-नभसां संघातनाकरणं प्रदेशानां परस्परं संहत्यवस्थान-रूप करणमनादिरूपं विज्ञेयमिति । × × × । ननु कृतिर्निर्वृत्तिर्वस्तुनः करणमुच्यते, तच्च साद्येव भवति, घट-कट-शकटादिकरणवत् × × × ।

—विशेभा० गा० ३३०८-९ । टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर, अभ्र, इन्द्रधनुष आदि में करण संज्ञा नहीं है तथापि प्रयोग-विस्रसाजनित करण क्रिया होती है अतः उस अपेक्षा से उनका करणपन विरुद्ध नहीं है। उनमें अजीव द्रव्यों के विस्रसाकरण सादि-अनादि रूप हैं। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, सघातना करण अर्थात् प्रदेशों का परस्पर एकत्र अवस्थान रूप करण अनादि रूप जानना चाहिए। कृत वस्तु का जो करण कहा जाता है वह आदि ही होता है, जैसे घट, कट, शकटादि।

·७२ स्कंध पुद्गल और भाव करण

> **अवरप्प ओगजं जं अजीवरूवाइपज्जयावत्थं।**
> **तमजीवभावकरणं तप्पज्जायप्पणावेक्खं॥**
>
> —विशेभा० गा ३३५२

टीका—परप्रयोगाज्जातं परप्रयोगजंन परप्रयोगजमपरप्रयोगजं स्वाभाविकमित्यर्थः। यद्परप्रयोगजं तदजीवभावकरणमिति संबंधः। कथंभूतम्? इत्याह—'अजीवरूवाइपज्जयावत्थ ति' अजीवानामभ्रेन्द्रधनुरादीनां रूपादिपर्यायाः अजीवरूपादिपर्यायास्त एवावस्था स्वरूपं यस्याजीवभावकरणस्य तदजीवरूपादिपर्यायावस्थम्। परप्रयोगमन्तरेणव यदभ्राद्यजीवानां स्वाभाविकं रूप-रस-गंध-स्पर्शसंस्थानादिपर्यायकरणं तदजीव भावकरणमित्यर्थः।

जो पर प्रयोग के सिवाय उत्पन्न हुए इन्द्रधनुषादि—अजीव के रूपादि की पर्यायों की अवस्था है तथा उस पर्याय की अपेक्षा—अजीव भाव करण है अर्थात् वह पर प्रयोग के बिना—स्वाभाविक उत्पन्न हुए अभ्रादि अजीव भाव करण है तथा अजीव भाव करण रूप-रस-गंध-स्पर्श-संस्थानादि पर्याय रूप है।

·७३ स्कंध और कर्म

·१ पुद्गल और ईर्यापथकर्म

> **अप्पं बादर मवुअं बहुअं ल्हुक्खं च सुक्किलं चेव।**
> **मंदं महव्वयं पि य सादब्भहियं च तं कम्मं॥२॥**
>
> —षट्० खण्ड ५। भा ४। सू २४ में उद्धृत। पु १३। पृ० ४८

वह ईर्यापथ कर्म अल्प है, बादर है, मृदु है, बहुत है, रूक्ष है, शुक्ल, मंद अर्थात् मधुर है, महान् व्ययवाला है और अत्यधिक सात रूप है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इरियावहकम्मक्खंधा कक्खडादिगुणण अवोहामउअफासगुणेण सहिया चेव बंधमागच्छंति त्ति इरियावहकम्मं मउअंति भण्णदे।

ईर्यापथ कर्म स्कंध कर्कश आदि गुणों से रहित हैं व मृदु स्पर्श गुण से युक्त होकर ही बध को प्राप्त होते हैं अतः ईर्यापथ कर्म को 'मृदु' कहा है।

पोग्गलपदेसु चिरकालावट्ठाणणिबंधणणिद्धगुणपडिवक्खगुणेण पडिग्गहियत्तादो ल्हुक्खं। जइ एवं तो इरियावहकम्मम्मि ण क्खंधो, ल्हुक्खेगगुणाणं परोप्परबंधाभावादो? ण, तत्थ दुरहियाणं बंधुवलंभादो। चसद्दणिद्देसो किंफलो? इरियावहकम्मस्स कम्मक्खधा सुअंधा सच्छाया त्ति जाणावणफलो इरियावहकम्मक्खंधा पंचवण्णा ण होंति, हंसधवला चेव होंति त्ति जाणावणट्ठं सुक्किलणिद्देसो कदो। एत्थतण-चेव-सद्दो सव्वत्थ जोजेयव्वो पडिवक्खणिराकरणट्ठं। इरियावहकम्मक्खंधा रसेण सक्करादो अहियमहुरत्तजुत्ता त्ति जाणावणट्ठं मंदणिद्देसो कदो। कुदो एवमुवलब्भदे? मंदशब्दस्य मन्द्रशब्दपरिणामत्वेनोपलंभात्। बंधमागयपरमाणू विदियसमए चेव णिस्सेसं णिज्जरंति त्ति महव्वयं।

—षट्० खण्ड ५, ४, २४। पु १३

ईर्यापथ कर्म स्कंध रूक्ष है क्योंकि पुद्गल प्रदेशों में चिरकाल तक अवस्थान का कारण स्निग्ध गुण का प्रतिपक्षभूत गुण उसमे स्वीकार किया गया है। रूक्ष गुण वालों का द्व्यधिक गुणवालों का बंध पाया जाता है।

ईर्यापथ कर्म के कर्मस्कंध अच्छी गंध वाले और अच्छी कांति वाले होते हैं।

ईर्यापथ कर्म स्कंध पाँच वर्ण वाले नहीं होते, किन्तु हंस के समान धवल वर्ण वाले ही होते हैं।

ईर्यापथ कर्म स्कंध रस की अपेक्षा सक्कर से भी अधिक माधुर्य युक्त होते हैं।

बंधन को प्राप्त हुए परमाणु दूसरे समय में ही सामस्त्य भाव से निर्जरा को प्राप्त होते हैं। इसलिए ईर्यापथ कर्म स्कंध महान् व्ययवाले कहे गये हैं।

·२ पुद्गलविपाकी कर्म-प्रकृत्तियाँ

देहादीफासंता पण्णासा णिमिणतावजुगलं च।
थिरसुहपत्तेयदुगं अगुरुतियं पोग्गलविवाई॥

—कम्मगो० गा ४७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाँच शरीरों से लेकर स्पर्शनाम तक ५० (औदारिक आदि पाँच शरीर, औदारिक शरीर बंधन आदि पाँच बंधन, औदारिक शरीर संघात आदि पाँच संघात, समचतुरस्र संस्थानादि छ:संस्थान, औदारिक आंगोपांग—वैक्रिय आंगोपांग-आहारक आंगोपांग, वज्रऋषभ नाराच आदि छः संहनन, कृष्णादि पाँच वर्ण, सुरभि आदि दो गंध, तिक्तादि पाँच रस, कर्कश आदि आठ स्पर्श—इस प्रकार नाम कर्म की ५० प्रकृति) निर्माण आताप, उद्योत-उपघात स्थिर, शुभ, प्रत्येक, अस्थिर, अशुभ साधारण, अगुरुलघु, परघात आदि नामकर्म की ६२ प्रकृतियाँ पुद्गलविपाकी हैं। अर्थात् इनके उदय का फल पुद्गल में ही होता है।

पुद्गलविपाकी प्रकृतियाँ

शरीर के पुद्गल

देहस्स य णोकम्मं देहुदयजदेहखंदाणि।

—कम्मगो० गा ८० उत्तरार्ध

शरीर नाम कर्म का नोकर्म द्रव्य शरीर नाम कर्म के उदय से उत्पन्न हुए अपने शरीर के स्कंध रूप पुद्गल जानने चाहिए।

ओरालियवेगुव्विय आहारयतेजकम्मणोकम्मं।
ताणुदयजचउदेहा कम्मे विस्संचयंणियमा॥

—कम्मगो० गा ८१

औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस शरीर नाम कर्म का नोकर्म द्रव्य अपने अपने उदय से प्राप्त हुई शरीर वर्गणा है। क्योंकि उन वर्गणाओं से ही शरीर बनता है। और कार्मण शरीर का नो कर्म द्रव्य विस्रसोपचयरूप (स्वभाव से कर्म रूप होने योग्य कार्मण वर्गणा) परमाणू हैं।

पुद्गलविपाकी प्रकृतियाँ

बंधणपहुदिसमण्णियसेसाणं देहमेव णोकम्मं।
णवरि विसेसं जाणे सगखेत्तं आणुपुव्वीणं॥

—कम्मगो० गा ८२

शरीर बंधन नाम कर्म से लेकर जितनी पुद्गल विपाकी प्रकृतियाँ नो कर्म शरीर ही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थिरजुम्मस्स थिराथिररसरुहिरादीणि सुहजुगस्ससुहं ।
असुहं देहावयवं सरपरिणदपोग्गलाणि सरे ॥

—कम्मगो० गा ८३

स्थिर कर्म का नो कर्म अपने-अपने ठिकाने पर स्थिर रहने वाले रस, लोही आदि है और अस्थिर प्रकृति के नो कर्म अपने-अपने ठिकाने से चलायमान हुए रस, लोही आदि हैं। शुभ प्रकृति के नो कर्म द्रव्य शरीर के शुभ अवयव है तथा अशुभ प्रकृति के नो कर्म द्रव्य शरीर के अशुभ अवयव हैं।

·३ पुद्गल और कर्मों का फलविपाक

कदि आवलियं पवेसेइ कदि च पविस्संति कस्स आवलियं ।
खेत्त - भव - काल - पोग्गल - ट्ठिदिविवागोदयखयो दु ॥

—कसापा० भा १० । गा ५९ । पृ० ३

टीका—× × ×। खेत्तमिदि भणिदे णिरयादिखेत्तस्स गहणं कायव्वं। भव इदि भणिदे एइंदियाभवस्स गहणं कायव्वं। काल इदि भणिदे सिसिर-वसंतादिकालविसेसस्स गहणं कायव्वं। बाल-जोव्वण-थविरादिकालजणिदप ज्जायस्स वा। पोग्गल इदि भणिदे गंध-तंबूल-वत्थाभरणविसेसत्थकंदयादि दव्वाणमिट्ठाणिट्ठसरूवाणं (गहणं) कायव्वं। एवमेदे खेत्त-भव-काल-पोग्गले पडुच्च कम्माणमुदयोदीरणसरूवो फलविवागो होदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो × × ×।

क्षेत्र, भाव, काल और पुद्गलों का आश्रय ले कर जो स्थितिविपाक और उदय क्षय होता है उसे क्रम से उदीरणा और उदय कहते हैं। क्षेत्र—नरकादि का क्षेत्र ग्रहण करना चाहिए। भव—एकेन्द्रियादि रूप भव का ग्रहण करना चाहिए। काल—शिषिर और वसन्त आदि काल विशेष का ग्रहण करना चाहिए अथवा बाल-काल, यौवनकाल और स्थविर आदि काल के आलम्बन से उत्पन्न हुई पर्याय का ग्रहण करना चाहिए। पुद्गल—इष्टानिष्ट रूप गंध, ताम्बूल, वस्त्र और आभमण विशेष रूप स्कंधादि द्रव्यों का ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार इन क्षेत्र, भाव, काल और पुद्गलों का आलम्बन लेकर कर्मों का उदय और उदीरणा रूप फलवियाक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४ विविध

वीर्यान्तरायकर्म और पुद्गल

विरियस्स य णोकम्मं रुक्खाहारादिबलहरं दव्वं ।

—कम्मगो० गा ८५ पूर्वार्ध

वीर्यान्तराय कर्म के नोकर्म रूखा-रूक्ष आहार आदि बल के नाश करने वाले पदार्थ है।

·७४ जनेतर ग्रन्थों में पुद्गल

× × × पुद्गलास्तिकायः षोढा—पृथिव्यादीनि चत्वारि भूतानि स्थावरं जङ्गमं चेति ।

— शांकरभाष्य टीका (भामती)

— शांकरभाष्य टीका (न्यायनिर्णय)

— शांकरभाष्य टीका (रत्नप्रभा)

पुद्गलास्तिकाय के छः भेद है पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु—ये चार भूत तथा स्थावर और जंगम।

·७५ पुद्गल के—अणु (परमाणु) और स्कंध—भेद सादि परिणाम वाले है, अनादि परिणाम वाले नहीं है

पुद्गलानामणुस्कंधलक्षणः × × × स खलूत्पत्तिमत्वादादिमान्प्रतिज्ञायते ।

—सर्वसि० अ ५ । सू २५

स्कंध पुद्गल तथा परमाणु पुद्गल सादिपरिणामवाले है।

·१२ परमाणु द्रव्यतः नित्य है

अयं सर्वोऽपि द्रव्यस्तारः सदादि-परमाणुपर्यन्तो नित्यः, द्रव्यात् पृथग्भूतपर्यायाणामसत्त्वात् । न पर्यायस्तेभ्यः पृथगुत्पद्यते, सत्तादिव्यतिरिक्तपर्यायानुपलम्भात् × × × ।

—कसायपा० भा १ । गा १३-१४ टीका । पृ० २१६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत् से लेकर परमाणु तक यह सब द्रव्य प्रस्तार (द्रव्य का फैलाव) नित्य है, क्योंकि द्रव्य से सर्वथा पृथगभूत पर्यायों की सत्ता नहीं पाई जाती है। पर्याय द्रव्य से पृथग् उत्पन्न होती है—ऐसा मानना भी ठीक नहीं है, क्योंकि सत्ता आदि रूप द्रव्य से भिन्न पर्यायें नहीं पाई जाती है।

·७६ स्कंध का भेदन

(पाठ के लिए देखो क्रमांक ·३२·४)

तम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहण्णंति ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति। दुहा कज्जमाण्णा एगयओ परमाणुपोग्गले—एगयओ परमाणुपोग्गले भवति।

तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति। दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे भवति।

तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति। एवं चत्तारि। तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि, चउहा वि कज्जंति। दुहा कज्जमाणा एगयओ दुपएसिए खंधे—एगयओ वि दुपएसिए खंधे। अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे—एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ। तिहा कज्जमाणा एगयओ दुपएसिए खंधे—एगयओ एगे-एगे परमाणुपोग्गले भवइ। चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणुपोग्गला भवंति।

पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति।

—भग० श १ उ १०। सू ४४३

उस दो प्रदेशी स्कंध के भेद—विभाग होने से उसके एक-एक परमाणुपुद्गल के दो विभाग होते हैं।

यदि उस तीन प्रदेशी स्कंध के भेद—विभाग होते हैं तो उसके दो या तीन विभाग होते हैं। यदि दो विभाग हों तो एक विभाग में एक परमाणु पुद्गल और दूसरे विभाग में एक द्विप्रदेशी स्कंध होगा। यदि तीन विभाग हों तो तीन परमाणु पुद्गल पृथक्-पृक्क होंगे।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

यदि इस चतुष्प्रदेशी स्कंध का भेद-विभाग होता है तो उसके दो, तीन अथवा चार विभाग होते हैं।

(१) यदि दो विभाग हों तो एक परमाणु का विभाग और दूसरा तीन प्रदेशी स्कंध का विभाग होगा। अथवा दो प्रदेशी स्कंधों के दो विभाग होंगे।

(२) यदि तीन विभाग हों तो दो प्रदेशी स्कंध का एक विभाग होगा और दूसरा-तीसरा विभाग एक-एक परमाणु पुद्गल का होगा।

(३) यदि चार विभाग हों तो चार परमाणु पुद्गलों के चार अलग-अलग विभाग होंगे।

और यदि इस पंच प्रदेशी स्कंध का भेद विभाग होता है तो उसके दो, तीन, चार अथवा पांच विभाग होते हैं। (देखो क्रमांक ३२·४ से ३२·१२)

·७७ पुद्गल का परिणमन

बंधे अधिको परिणामिकौ च।

—तत्त्व० अ ५। सू ३७

अधिक गुणवाला हीन गुण वाले को परिणमन करेगा।

·७८ द्रव्य और भाव

द्रव्यस्य हि भावो द्विविधः परिस्पंदात्मकः अपरिस्पन्दात्मकश्च।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २२

द्रव्य में दो तरह का भाव बताया गया है—परिस्पंदात्मक व अपरिस्पंदात्मक।

निष्क्रियाणि च तानीति परिस्पंदविमुक्तितः।

—तत्त्वश्लो० अ ५। सू ७

धर्म, अधर्म तथा आकाश—अपरिस्पंदात्मक है। इनमें परिस्पंदन करने की शक्ति बिल्कुल नहीं है।

परिस्पंदात्मकः क्रियत्याख्याते, इतर परिणामः।

—राज० अ ५। सू २२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणाममात्रलक्षणो भावः परिस्पंदनलक्षणाक्रिया।

—प्रव० उ २। सू ३७ की प्रदीपिका वृत्ति

लक्षण की परिभाषा

लक्ष्यतेऽनेनेति लक्षणम्।

—सिद्धसेनगणि वक्तव्यं

जिससे लक्ष्य निर्दिष्ट किया जा सके, वह लक्षण है।

·७९ नारकी और आहार के पुद्गल

णेरइया णं भंते! किमाहारमाहारेंति? गोयमा! दव्वओ अणंतपदेसियाइं, खेत्तओ असंखेज्जपदेसोगाढाइं, कालतो अण्णतरठितियाइं, भावओ वण्णमंताइं गंधमंताइं रसमंताइं फासमंताइं × × ×।

—पण्ण० पद २८। सू १७९७

नारकी द्रव्यतः—अनंतप्रदेशी (पुद्गलों का) आहार ग्रहण करते हैं, क्षेत्रतः—असंख्यातप्रदेशों में अवगाढ़ (रहे हुए), कालतः किसी भी (अन्यतर) कालस्थिति वाले और भावतः वर्णवान्, गन्धवान्, रसवान् और स्पर्शवान् पुद्गलों का आहार करते हैं।

नारकी और आहार के पुद्गल

जाइं भावओ वण्णमंताइं आहारेंति ताइं किं एगवण्णाइं आहारेंति जाव किं पंचवण्णाइं आहारेंति?

गोयमा! ठाणमग्गणं पडुच्च एगवण्णाइं पि आहारेंति जाव पंचवण्णाइं पि आहारेंति, विहाणमग्गणं पडुच्च कालवण्णाइं पि आहारेंति जाव सुक्किलाइं पि आहारेंति।

—पण्ण० प २८। सू १७९८

नारकी स्थानमार्गणा (सामान्य) की अपेक्षा से एक वर्ण वाले पुद्गलों का का आहार करते हैं यावत् पांच वर्ण वाले पुद्गलों का आहार करते हैं तथा विधान (भेद) मार्गणा की अपेक्षा से कालेवर्ण वाले पुद्गलों का भी आहार करते हैं यावत् शुक्लवर्ण वाले पुद्गलों का भी आहार करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारकी और आहार के पुद्गल

जाइं वण्णओ कालवण्णाइं आहारेंति ताइं किं एगगुणकालाइं आहारेंति जाव दसगुणकालाइं आहारेंति, संखेज्जगुणकालाइं, असंखेज्जगुणकालाइं, अणंतगुणकालाइं आहारेंति ? गोयमा ! एकगुणकालाइं पि आहारेंति जाव अणंतगुणकालाइं पि आहारेंति। एवं जाव सुक्किलाइं।

—पण्ण० पद २८। सू १७९८

नारकी एक गुण काले पुद्गलों का भी आहार करते हैं यावत् अनंतगुणकाले पुद्गलों का भी आहार करते हैं। इसी प्रकार (नील वर्ण से लेकर) यावत् शुक्ल-वर्ण के विषय में पूर्वोक्त प्रश्न और समाधान जानना चाहिए।

नारकी और आहार के पुद्गल

एवं गंधतोवि रसतोवि।

—पण्ण० पद २८। सू १७९९

इसी प्रकार गन्ध और रस की अपेक्षा से भी पूर्ववत् आलापक कहना चाहिए।

जाइं भावओ फासमंताइं ताइं णो एगफासाइं आहारेंति, णो दुफासाइं आहारेंति, णो तिफासाइं आहारेंति, चउफासाइं आहारेंति जाव अट्ठफासाइं पि आहारेंति, विहाणमग्गणं पडुच्च कक्खडाइं पि आहारेंति जाव लुक्खाइं पि।

—पण्ण० पद २८। सू १८००

वे न तो एक स्पर्श वाले पुद्गलों का आहार करते हैं, न दो और तीन स्पर्श वाले पुद्गलों का आहार करते हैं, अपितु चतुःस्पर्शी यावत् अष्टस्पर्शी पुद्गलों का आहार करते हैं। विधान की अपेक्षा से वे कर्कश यावत् रूक्ष स्पर्श पुद्गलो का आहार करते हैं।

जाइं फासओ कक्खडाइं आहारेंति ताइं किं एगगुणकक्खडाइं आहारेंति जाव अणंतगुणकक्खडाइं पि आहारेंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! एगगुणकक्खडाइं पि आहारेंति जाव अणंतगुणकक्खडाइं पि आहारेंति। एवं अट्ठवि फासा भाणियव्वा जाव अणंतगुणलुक्खाइं पि आहारेंति।

—पण्ण० पद २८। सू १८००

नारकी एक गुण कर्कश स्पर्श वाले पुदगलों का आहार करते हैं यावत् अनंतगुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गलों का आहार करते हैं। इसी प्रकार क्रमशः आठों की स्पर्शों के विषय में यावत् एक गुण यावत् अनंतगुण रूक्ष पुद्गलों का आहार करते हैं।

·७९ असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार देव के आहार के पुद्गल

·२ (असुरकुमाराणं भंते) एवं जहा णेरइयाणं तहा असुरकुमारणवि भाणियव्वं × × ×। उसण्णं कारणं पडुच्च वण्णतो हालिद्दसुक्किलाइं, गंधतो सुब्भिगधाइं, रसतो अंबिलमहुराइं, फासतो मउअलहुयनिद्ध ण्हाति। तेसिं पोराणं वण्णगुणे जाव फासियित्ताए जाव मणामत्ताए इच्छियत्ताए भिज्झियत्ताए उड्ढत्ताए णो अहत्ताए सुहत्ताते णो दुहत्ताते एतेसिं भुज्जो भुज्जो परिणंति × × ×। एवं जाव थणियकुमाराणं।

—पण्ण० पद २८। सू १८०१

·३ पृथ्वीकायिक से वनस्पतिकायिक

(पुढविकाइयाणं) एवं जहा णेरइयाणं × × × णवरं उसण्णं कारणं ण भण्णंति, वण्णतो काल नील लोहित हालिद्द सुक्किलाति, गंधतो सुब्भिगंध दुब्भिगंधाति, रसतो तित्तरसाइं कडुअरसाइं, कसाय अंबिलमहुराइं, फासतो कक्खड फास गुरुय-लहुय-सीत-उसिण-णिद्धलुक्खाति × × ×। एवं जाव वणप्फतिकाइयाणं।

—पण्ण० पद २८। सू १८०२

त्रीन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय

(बेइंदियाणं) × × × सेसं जहा पुढविकाइयाणं × × ×। एवं जहा चउरिंदियाणं।

—पण्ण० पद २८। सू १८०३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिर्यंच पंचेन्द्रियं योनिक

(पंचिंदियतिरिक्खजोणिया) जहा तेइंदियाणं।

—पण्ण० पद २८ । सू १८०४

इसी प्रकार असुरकुमार से स्तनितकुमार के विषय में समझना चाहिए। लेकिन उष्ण कारण प्रत्यय से वर्ण से पीतवर्ण के और शुक्लवर्ण के, गंध से सुरभिगंध, रस से खट्टे-मीठे रस के स्पर्श से मृदु, लघु, उष्ण व स्निग्ध पुद्गलों का आहार करते हैं। मनोज्ञ पुद्गलों का आहार करते हैं अर्थात् वे उन पुद्गलों में पहले के अशुभ पुद्गलों से अच्छा बनाकर मनोज्ञ पुद्गलों का आहार करते हैं।

नारकी की तरह पृथ्वीकायिक से वनस्पतिकायिक के विषय में जानना चाहिए परन्तु यह उष्ण कारण प्रत्यय नहीं कहना। वे पांचों वर्ण के पुद्गलों का आहार ग्रहण करते हैं. दो प्रकार के गंध के पुद्गलों का, पांचों प्रकार के रस के पुद्गलों का तथा कर्कश आदि आठों स्पर्श के पुद्गलों का आहार करते हैं।

नोट—शुभ-अशुभ दोनों प्रकार के पुद्गलों का आहार करते हैं।

द्वीन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक—पृथ्वीकाय की तरह समझना चाहिए।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय के विषय में त्रीन्द्रिय की तरह जानना चाहिए।

इसी प्रकार मनुष्य के विषय में जानना चाहिए।

मनुष्य—

मणूसा एवं चेव।

—पण्ण० पद २८ । सू १८०५

वाणव्यंतर-ज्योतिषी-वैमानिक देव

वाणमंतरा जहा नागकुमारा, एवं जोइसिया × × ×। एवं वेमाणिया वि।

—पण्ण० पद २८ । सू १९०५

वानव्यंतर-ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के विषय में नागकुमार देवों की तरह समझना चाहिए।

नारकी और देव अनंतप्रदेशी अचित्त स्कंध पुद्गलों का (स्कंधों का) आहार करते हैं लेकिन सचित्त आहार व मिश्र आहार ग्रहण नहीं करते हैं। तिर्यंच मनुष्य सचित्त-अचित्त-मिश्र तीनों प्रकार के पुद्गलों का आहार करते हैं। अधिकतर नारकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के जीव वर्ण में कृष्ण वर्ण और नील वर्ण, गंध में दुरभिगंध, रस में कटु-तीखा रस, स्पर्श में कर्कश, गुरु-शीत-रूक्ष का आहार ग्रहण करते हैं। उन गृहीत पुद्गलों से सड़ाकर खराब करके, पूर्व के वर्णादिक गुणों से विपरीत करके ये खराब वर्णादि उत्पन्न कर फिर ग्रहण किये हुए पुद्गलों का आहार ग्रहण करते हैं।

जिस नाम कर्म के उदय से जीव की चाल (चलना), हाथी या बैल की चाल के समान शुभ अथवा ऊंट या गधे की चाल के समान अशुभ होती है उसे विहायोगति कहते है। जिससे चाल के अर्थ में गति शब्द को समझा जाय न कि देवगति, नरकगति आदि के अर्थ में।

·८० स्कंध और अवगाहन क्षेत्र

आकाश के एक प्रदेश पर अनंत प्रदेशी स्कंध अवगाहित कर रह सकता है

(क) × × × विशिष्टावगाह परिणामादेकपरमाणुपरिमाणोऽनन्त-परमाणुस्कंधः परमाणोरनंशत्वात् पुनरप्यनन्तांशत्वं न साधयति × × ×।

—प्रव० अ २। गा ४७। टीका

(ख) आगासमणुणिविट्ठं आगासपदेससण्णया भणिदं।
सव्वेसिं च अणूणं सक्कदि तं देदुमवगासं॥

—प्रव० अ २। गा ४८

टीका—आकाशस्यैकाणुव्याप्योंऽशः किलाकाशप्रदेशः, स खल्वेकोऽपि शेषपंचद्रव्यप्रदेशानां परमसौक्ष्मपरिणतानन्तपरमाणुस्कंधानां चावकाशदान-समर्थः।

(ग) अत्र चाविशेषोक्तादपि परमाणूनामेकप्रदेश एवावस्थानात् स्कंध-विषयैव भजना द्रष्टव्या, ते हि विचित्रत्वात् परिणतेर्बहुतरप्रदेशोपचिता अपि केचिदेकप्रदेशे तिष्ठन्ति, युदुक्तम्-एगेणवि से पुण्णे दोहिंवि पुण्ण सयंपि माइज्जे 'त्यादि' अन्ये तु संख्येयेषु च प्रदेशेषु यावत् सकललोकेऽपि तथा-विधचित्त महास्कन्धवद् भवेयुरिति भजनीया उच्यन्ते।

—वृहद्वृत्ति० प ६७४

(घ) एकत्तेण पुहत्तेण-खंधा य परमाणु य।
लोएगदेसे लोए य, भइयव्वा ते उ खेत्तओ॥

—उत्त० ३६। गा १०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक परमाणुओं के एकत्व से स्कंध बनता है और उसका पृथक्त्व होने से परमाणु बनते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा से वे स्कंध लोक के एक देश और समूचे लोक में भाज्य है। असंख्य विकल्प युक्त है।

नोट—परमाणु आकाश के एक प्रदेश में ही अवगाहन करते हैं। इसलिए 'भजना' अथवा विकल्प केवल स्कंध का ही होता है। स्कंध की परिणति नाना प्रकार की होती है। कुछ स्कंध आकाश के एक प्रदेश में भी अवगाहन कर लेते हैं, कुछ आकाश के संख्येय प्रदेशों में अवगाहन करते हैं और कुछ स्कंध पूर्ण लोकाकाश में फैल जाते हैं। इसलिए क्षेत्रावगाहन की दृष्टि से इसके अनेक विकल्प है।

(ङ) जध ते णभप्पदेसा तधप्पदेसा हवंति सेसाणं।
अपदेसो परमाणू तेण पदेसुब्भवो भणिदो।।

—प्रव० अ २। गा ४५

टीका—पुद्गलस्य तु द्रव्येणैक प्रदेशमात्रत्वादप्रदेशत्वे यथोदिते सत्यपि द्विप्रदेशाद्युद्भवहेतुभूततथाविधस्निग्धरूक्षगुणपरिणामशक्तिस्वभावात्प्रदेशोद्भवत्वमस्ति। ततः पर्यायेणानेकप्रदेशत्वस्यापि संभवात्। द्व्यादिसंख्येयासंख्येयानन्तप्रदेशत्वमपि न्याय्यं पुद्गलस्य।

स्कंध पुद्गल और क्षेत्रावगाह

(च) जावदियं आयासं अविभागीपुद्गलाणुउट्ठद्धं।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं।।

—वृहद्० अधि १। गा २७

टीका—× × × सर्वाणूनां सर्वपरमाणूनां सूक्ष्मस्कंधानां च स्थानदानस्यावकाशदानस्यार्हं योग्यं समर्थमिति। यत एवेत्थंभूतावगाहनशक्तिरस्त्याकाशस्य तत एवासंख्यातप्रदेशेऽपिलोके अनंतानंतजीवास्तेभ्योऽप्यनन्तगुणपुद्गलाअवकाशः लभन्ते × × ×।

उग्गाढगाढणिचिदो पुग्गलकाएहिं सव्वजो लोगो।
सुहुमेहिं बादरेहिं य णंताणंतेहिं विविहेहिं।।२।।

अर्थात् जितना आकाश अविभागी परमाणु से रोका जाता है उसको सब परमाणुओं के स्थान देने में समर्थ प्रदेश जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्तु सब परमाणु और सूक्ष्म स्कंधों को अवकाश (स्थान) देने के लिए समर्थ है। इस प्रकार की अवगाहन शक्ति जो आकाश में है इसी हेतु से असंख्यात प्रदेश-प्रमाण लोकाकाश में अनन्तानन्त जीव तथा उन जीवों से भी अनन्त गुणे पुद्गल अवकाश को प्राप्त होते हैं।

यह लोक सब ओर से विविध तथा अनन्तानन्त सूक्ष्म-बादर पुद्गलकायों द्वारा अति सघनता के साथ भरा हुआ है।

पुद्गल का क्षेत्रावगाह

पुद्गलजीवाश्च प्रतिनियतावगाहाः ॥८॥

—भिक्षुन्याय० भाग २

टीका—पुद्गलाः अणवो नभसः प्रत्येकस्मिन् प्रदेशे, स्कन्धाश्च एकस्मिन्नपि स्वपरिमाणप्रदेशेषु, उत्कर्षतश्चासंख्येषु।

परमाणु पुद्गल आकाशस्तिकाय के एक प्रदेश को अवगाहित कर रहता है। स्कंध पुद्गल आकाश के एक प्रदेश से लेकर असंख्यात प्रदेश अवगाह कर रहता है।

(छ) जीवेणं भंते ! जाइं दव्वाइं भासत्ताई गहियाइं निस्सरन्ति ताइं किं भिण्णाइं निस्सरन्ति अभिण्णाइं निस्सरन्ति ? गोयमा ! भिण्णाइं वि निस्सरन्ति अभिण्णाइं विनिस्सरन्ति। तत्थणं जाइं दव्वाइं भिण्णाइं निस्सरन्ति ताइं अणंतगुण परिवड्ढिए परिवुड्ढमानाइं लोयंतं फुसंति। जाइं अभिण्णाइं निस्सरन्ति ताइं असंखेज्जाओ ओगाहणवग्गणाओ गंता भेवमावज्जंति संखेज्जाइं जोयणाइं गंता विद्धंसमागच्छति।

—पण्ण० प ११ सू ३९८

तीव्र प्रेरणा प्राप्त शब्द कुछ क्षणों में सारे ब्रह्माण्ड को पार कर उसके अन्त तक पहुँच सकता है।

(ज) विद्युत्-पुद्गलपरिणाम

स्निग्धरूक्षगुणनिमित्तो विद्युत्।

—सर्व० अ ५ । सू ३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् आकाश में चमकने वाली विद्युत् परमाणुओं के स्निग्ध और रूक्ष गुणों का परिणाम है।

आदेश मात्रमूर्तः धातु चतुष्कस्य कारणं यस्तु।
सज्ञेयः परमाणुः परिणामगुणः स्वयमशब्दः ॥८५॥

शब्दः स्कन्ध प्रभवः स्कन्धः परमाणुसंघ-संघातः।
स्पृष्टेषु तेषुजायते शब्द उत्पाद कोनियतः ॥८६॥

—पंचास्तिकायपसार

अर्थात् परमाणु स्वयं अशब्द है। शब्द तो नाना स्कंधों के संघर्ष से उत्पन्न होता है। इसलिए वह स्कन्ध प्रभव है।

लक्षण की परिभाषा

लक्ष्यतेऽनेनेति लक्षणम्।

—सिद्धसेनगणि वक्तव्यं

जो गुण दूसरों में नहीं हो, वह गुण लक्षण-गुण कहलाता है। जिससे लक्ष्य निर्दिष्ट किया जा सके, वह लक्षण है।

लणक्ष गुण से ही एक वस्तु को दूसरी वस्तु से पृथक् किया जा सकता है।

पुद्गल का एक भेद

परस्परेणासंयुक्ता परमाणवः।

—तत्त्व० अ ५। सू २५ के भाष्य पर सिद्धसेन गणि टीका

पुद्गल का एक भेद—व्यक्तिगत भाव से सर्व पुद्गल परमाणु है। किसी दूसरे पुद्गल के साथ अबद्ध अवस्था में पुद्गल परमाणु रूप है। अतः परमाणु के स्वरूप की अपेक्षा से पुद्गल का एक ही भेद—'परमाणु' होता है। पुद्गल का एकान्त भेद केवल एक परमाणु है। निश्चयनय से सर्व पुद्गल परमाणु है।

·८१ स्कंध

अहवा कसिणो अकसिणो अणेगदव्वो स एव विण्णेओ।
देसावचिओवचिओ अणेगदव्वो विसेसोऽयं ॥

—विशेभा० गा ८९७

टीका—स एव व्यतिरिक्तस्कंधस्योऽन्यथा त्रिविधो विज्ञेयः, तद्यथा—कृत्स्नस्कंधः, अकृत्स्नस्कंधः अनेकद्रव्यस्कंधश्चेति। यस्मादन्यो बृहत्तरः स्कंधो नास्ति स कृत्स्न परिपूर्णः स्कंधः कृत्स्नस्कंधः, स च हयस्कंधः, गजस्कंधः, नरस्कंध इत्यादि। आह—यद्येवम्, प्रकान्तरत्वमसिद्धम्, सचित्ततुरङ्गमादिस्कंधस्यैव संज्ञान्तरेणोक्तत्वात् × × ×।

अथाऽकृत्स्नस्कंध उच्यते—यस्मादन्यो बृहतरः स्कंधोऽस्ति, सोऽपरिपूर्णत्वादकृत्स्नस्कंधः, सचद्विप्रदेशिकादिर्यावत् सर्वोत्कृष्टानन्तपरमाणुसंघातनिष्पन्न एकेन परमाणुना न्यूनस्तावद् विज्ञेयः। उत्कृष्टानन्ताणुस्कंधापेक्षया ह्येकपरमाणुन्यूनोत्कृष्टानन्ताणुकोऽकृत्स्नस्कंधः, तदपेक्षया तु परमाणुद्वयन्यूनोत्कृष्टानन्ताणुकोऽकृत्स्नस्कंधः। एवमेकैकपरमाणुहान्या तावद् नेयंयावत् त्रिप्रदेशिकस्कंधापेक्षया द्विप्रदेशिकस्कंधोऽकृत्स्नस्कंधः। अतएव प्रागुक्ताचित्तस्कंधादस्य भेदः, पूर्व हि द्विप्रदेशिकादेः परिपूर्णोत्कृष्टानन्ताणुकस्कंधपर्यंतस्य सर्वास्यप्यचित्तस्कधस्य सामान्येन संग्रहात्। अत्रत्वेकः परिपूर्णोत्कृष्टानन्ताणुको न संगृह्यते। तस्य कृत्स्नस्कंधत्वादिति।

अथानेकद्रव्यस्कंध उच्यते—अनेकैः सचित्ता-ऽचित्तलक्षणैर्द्रव्यैर्निष्पन्नः स्कंधोऽनेकद्रव्यस्कंधः स च हय-गजादिस्कंध एव × × ×।

अथवा व्यतिरिक्त द्रव्य स्कंध दूसरी अपेक्षा से तीन प्रकार का है—कृत्स्न स्कंध, अकृत्स्न स्कंध और अनेक द्रव्य स्कंध। जिससे अन्य कोई बृहत्तर स्कंध नहीं होता है वह कृत्स्न (परिपूर्ण) स्कंध जानना चाहिए। वह अश्व स्कंध, हस्ति स्कध और मनुष्यादि स्कंध जानना चाहिए।

यहाँ जीव और जीव से व्याप्त शरीर के अवयव का समुदाय—कृत्स्न स्कंध रूप से कहा है।

जिससे दूसरा अत्यन्त बृहत्तर स्कंध होता है वह अपूर्ण होने से अकृत्स्न स्कंध कहा जाता है वह दो प्रदेशी से लेकर सर्वोत्कृष्ट अनंत परमाणु के संघात से निष्पन्न स्कंध में एक परमाणु से न्यून स्कंध पर्यंत जानना चाहिए। क्योंकि उत्कृष्ट अनंताणु स्कंध की अपेक्षा से एक परमाणु न्यून उत्कृष्ट अनन्ताणुवाला स्कंध अकृत्स्न (अपूर्ण) स्कंध कहा जाता है। उसकी अपेक्षा दो परमाणु न्यून उत्कृष्ट अनंत अणु स्कंध—अकृत्स्न स्कंध कहा जाता है। इस प्रकार एक-एक परमाणु की हानि से अंतिम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन प्रदेश वाले स्कंध की अपेक्षा दो प्रदेश वाला स्कंध अकृत्स्न स्कंध जानना चाहिए। इसलिए पूर्वोक्त अचित्त स्कंध से इसका भेद है। पूर्व में दो प्रदेशी स्कंध से लेकर सम्पूर्ण उत्कृष्ट अनंताणुक स्कंध पर्यन्त के सर्व स्कंध सामान्यत: अचित्त स्कंध कहे जाते हैं। यहां पर सम्पूर्ण उत्कृष्ट अनंताणुवाला एक स्कध का ग्रहण नहीं किया है क्योंकि वह परिपूर्ण होने से कृत्स्न स्कंध है।

सचित्त-अचित्त रूप अनेक द्रव्यों से बना हुआ स्कंध—अनेक द्रव्य स्कंध है। वह देशापचित-उपचित अश्व-हस्ति आदि स्कंध जानना चाहिए।

नख—दंत केशादि रूप प्रदेश में जीव प्रदेश से रहित—देशापचित है और पीठ हृदय, बाहु, उर आदि रूप प्रदेश में जीव प्रदेश से व्याप्त—देशोपचित है। इस प्रकार विशिष्ट परिणाम से परिणत सचेतन और अचेतन देश के समुदायात्मक—अश्वादि स्कंध अनेक द्रव्य स्कध जानना चाहिए।

·८२ पुद्गल और पर्याय

·१ पुद्गल और पृथक्त्व

पविभत्तपदेसत्त पुधत्तमिदि सासणं हि वीरस्स।
अण्णत्तमतब्भावो ण तब्भवं होदि कधमेगं॥

—प्रव० अ २। गा १४। पृ० १४६

जयसेन टीका—'पविभत्तपदेसत्तं पुधत्तं' पृथक्त्वं भवति पृथक्त्वाभिधानो भवति। किं विशिष्टम्। प्रकर्षेण विभक्तप्रदेशत्वं भिन्नप्रदेशत्वम्। किंवत्। दंडदंडिवत्।

जिन पुद्गल द्रव्यों के प्रदेश अत्यन्त भिन्न हो उसे पृथक्त्व कहते हैं। जैसे दंड और दंडी में प्रदेश भेद है वैसे ही प्रदेश-भेद को पृथक्त्व कहते हैं।

·२ पुद्गल और काल

पुग्गलकरण जीवा खंधा खलु कालकरणादु।

—पंचास्तिकाय प्राभृत में

अर्थात् धर्म द्रव्य के विद्यमान होते हुए भी जीवों की गति में कर्म, नोकर्म पुद्गल सहकारी कारण होते हैं और अणु तथा स्कंध—इन दो भेदों से भेद को प्राप्त हुए पुद्गलों के गमन में काल द्रव्य सहकारी कारण होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ पुद्गल के प्रदेश

होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे।
मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ॥

—बृहद्० अधि १। गा २५

एक जीव, धर्म, अधर्म द्रव्य में असंख्यात प्रदेश है और आकाश में अनंत है। मुर्त—पुद्गल में संख्यात, असंख्यात तथा अनंतप्रदेश हैं। तथा काल के एक ही प्रदेश हैं अतः काल काय नहीं है।

एवपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु॥

—बृहद्० अधि १। गा २६

एक प्रदेश का धारक भी परमाणु अनेक स्कंध रूप बहुत प्रदेशों से बहु प्रदेशी होता है अतः सर्वज्ञ देव उपचार से पुद्गल परमाणु को काय कहते हैं।

·८३ अल्पबहुत्व

·१ द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा पुद्गल की अल्पबहुत्व

एयस्स णं भंते ! पोग्गलत्थिकायस्स दव्वट्ठ-पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवे पोग्गलत्थिकाए दव्वट्ठयाए, से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे।

—पण्ण० प ३। सू २७२

पुद्गलास्तिकाय के द्रव्य सबसे कम है, उनसे पुद्गलास्तिकाय के प्रदेश असंख्यात-गुणे अधिक है।

·२ द्रव्य की अपेक्षा पुद्गल का अल्पबहुत

एएसि णं भंते ! धम्मत्थिकाय-अधम्मत्थिकाय-आगासत्थिकाय-जीवत्थिकाय-पोग्गलत्थिकाय-अद्धासमयाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! धम्मत्थिकाए-अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए य एए णं तिन्नि वि तुल्ला दव्वट्ठयाए सव्वत्थोवा १, जीवत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे २, पोग्गलत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे ३, अद्धासमए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे।

—पण्ण० प ३। सू २७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य की अपेक्षा—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय व आकाशस्तिकाय के द्रव्य—तीनों समान होते हुए सबसे न्यून है। उससे जीव द्रव्य अनंतगुणे हैं, उससे पुद्गल द्रव्य अनंतगुणे हैं तथा उससे काल के द्रव्य अनंतगुणे हैं।

·३ पुद्गल और आकाश

दव्वाइं संखेत्ताओऽणंतगुणा पज्जवा सदव्वाओ।
नियमाहाराहीणो तेसिं वुड्ढी स हाणी य॥

—विशेभा० गा ७३६

इह स्वरूपेण तावत् समस्तपुद्गलास्तिकायलक्षणानि द्रव्याण्याधारभूतात् स्वक्षेत्रात् 'अनंतगुणानि' वर्तन्त इति लिङ्गव्यत्ययेनाऽत्रापि योज्यते, एककाकाशप्रदेशेऽनन्तस्य परमाणु-द्व्यणुकादि द्रव्यस्यावगाहात्।

पर्यवाः पर्यायाः पुनः स्वाश्रयभूताद् द्रव्यादनन्तगुणाः, एकैकस्य परमाण्वादेरनन्तपर्यायत्वादिति × × ×। द्रव्यस्य निजकाधारः क्षेत्रम्, पर्यायाणा तु निजकाधारो द्रव्याणि, तदधीना च तेषां द्रव्यपर्यायाणां सामान्येन वृद्धिः हानिश्च भवति।

स्वरूप की अपेक्षा—समस्त पुद्गलास्तिकाय रूप द्रव्य स्वआधारभूत क्षेत्र से अनंतगुणे हैं क्योंकि एक-एक आकाश प्रदेश में अनंत परमाणु, द्विप्रदेशी स्कंधादि द्रव्य अवगाहित होकर रहते हैं तथा पर्याय स्वाश्रयभूतद्रव्य से अनंतगुणी है क्योंकि एक-एक परमाणु आदि द्रव्य अनंत पर्याय वाले होते हैं। इस प्रकार द्रव्य का स्वआधार क्षेत्र हैं और पर्याय का स्वआधार द्रव्य है अतः द्रव्य-पर्यायों की वृद्धि-हानि सामान्यतः उसके अधीन होती है।

·४ पुद्गल अनंत है

जीवादु पुग्गलादो, ऽणंतगुणा चावि संपदा समया।
लोयायासे संति य, परमट्ठो सो हवे कालो॥

—नियम० अधि २। गा ३२

जीवों से पुद्गल अनंतगुणे हैं, पुद्गल से अणंतगुणे काल के समय हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५ छः द्रव्यों की प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व

पुद्गल-अनंत है

धम्माधम्मागासा तिण्णि वि तुल्लाणि होंति थोवाणि।
वड्ढीदु जीवपोग्गल कालागासा अणंतगुणा॥

—षट्० खण्ड १। भा २। सू ३। टीका में उद्धृत। पु ३। पृ० १५

धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य और लोकाकाश—ये तीनों ही समान होते हुए स्तोक है तथा जीव द्रव्य, पुद्गल द्रव्य, काल के समय और आकाश के प्रदेश—ये उत्तरोत्तर वृद्धि की अपेक्षा अनंतगुणे हैं।

·६ द्रव्य-प्रदेश-पर्याय की अपेक्षा अल्पबहुत्व

(क) एएसि णं भंते! जीवाणं पोग्गलाणं अद्धासमयाणं सव्वदव्वाणं सव्व पएसाणं सव्वपज्जवाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा? गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा १, पोग्गला अणंत गुणा २, अद्धासमया अणंत गुणा ३, सव्वदव्वा विसेसाहिया ४, सव्वपएसा अणंत गुणा ५, सव्वपज्जवा अणंतगुणा।

—पण्ण० प ३। सू २७५

(ख) जीवा पोग्गल समया दव्व पएसा य पज्जवा चेव।
थोवाणंताणंता विसेसअहिआ दुवेऽणंता॥

—प्रवसा० गा १४३६

सबसे न्यून जीव है, उससे पुद्गल अनंतगुणे हैं, उससे काल अनंतगुणा हैं, उससे सर्व द्रव्य विशेषाधिक हैं, उससे सर्व प्रदेश अनंतगुणे हैं, उससे सर्व द्रव्यों की पर्याय अनंतगुणी है।

·७ प्रदेश की अपेक्षा छः द्रव्यों का अल्पबहुत्व

पुद्गल अनंत है

एएसि णं भंते! धम्मत्थिकाय-अधम्मत्थिकाय-आगासत्थिकाय-जीवत्थिकाय-पोग्गलत्थिकाय-अद्धासमयाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा? गोयमा! धम्मत्थिकाए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अधम्मत्थिकाए य एएणं दो वि तुल्ला पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा १, जीवत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंततुण २, पोग्गलत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे ३, अद्धासमए पएसट्ठयाए अणंतपुणे ४, आगासत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे ।

—पण्ण० प ३ । सू २७१

धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय इन दोनों के प्रदेश समान होते हैं—वे सबसे कम है, उनसे जीवों के प्रदेश अनंतगुणे हैं, उनसे पुद्गलास्तिकाय के प्रदेश अनंतगुणे हैं, उनसे काल के प्रदेश (अप्रदेश) अनंतगुणे हैं तथा उनसे आकाशास्तिकाय के प्रदेश अनंतगुणे हैं ।

·८ द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा छः द्रव्यों का अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! धम्मत्थिकाय-अधम्मत्थिकाय-आगासत्थिकाय-जीवत्थिकाय-पोग्गलत्थिकाय–अद्धासमयाणं दव्वट्ठ-पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए य एए णं तिण्णि वि तुल्ला दव्वट्ठयाए सव्वत्थोवा १, धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए य एए णं दोण्णि वि तुल्ला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा २, जीवत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे ३, से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे ४, पोग्गलत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे ५, से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे ६, अद्धासमए दव्वट्ठ-पएसट्ठयाए (अपएसट्ठयाए) अणंतगुणे ७, आगासत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे ८ ।

—पण्ण० प ३ । सू २७३

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय तथा आकाशजीवकाय—इन तीनों द्रव्य से तुल्य है (एक-एक है) सबसे कम है, उनसे धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय के प्रदेश तुल्य है (असंख्यात-असंख्यात है) असंख्यातगुणे अधिक है, उनसे जीव द्रव्य अनंतगुणे हैं, उनसे जीवों के प्रदेश असंख्यातगुणे अधिक है । उनसे पुद्गल द्रव्य अनंतगुणे हैं, उनसे पुद्गलों के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं । उनसे काल द्रव्य-प्रदेश (अप्रदेश) अनंतगुणे हैं तथा उनसे आकाशास्तिकाय के प्रदेश अनतगुणे अधिक है ।

नोट—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश व एक जीव के प्रदेश एक समान है—असंख्यातप्रदेश है । चूंकि केवली समुद्घात के चतुर्थ समय में जीव के प्रदेश सर्वलोक व्यापी बन जाते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

.९ दिशा की अपेक्षा पुद्गल का अल्पबहुत्व

दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा पोग्गला उड्ढदिसाए १, अहेदिसाए विसेसाहिया २, उत्तरपुरत्थिमेणं दाहिणपच्चत्थिमेणं य दो वि तुल्ला असंखेज्जगुणा ३, दाहिणपुरत्थिमेणं उत्तरपच्चत्थिमेणं य दो वि तुल्ला विसेसाहिया ४, पुरत्थिमेणं असंखेज्जगुणा ५, पच्चत्थिमेणं विसेसाहिया ६, दाहिणेणं विसेसाहिया ७, उत्तरेणं विसेसाहिया ८।

—पण्ण० प ३। सू ३२७

सबसे कम पुद्गल ऊंची दिशा में है, उनसे अधोदिशा में पुद्गल विशेषाधिक है, उनसे उत्तर पूर्व (ईशानकुण) तथा दक्षिण पश्चिम (नैऋत्यकुण) दिशा में (परस्पर तुल्य है) असंख्यातगुणे हैं, उनसे दक्षिण-पूर्व दिशा (अग्निकुण) तथा उत्तर-पश्चिम (वायुकुण) दिशा के (परस्पर तुल्य है) विशेषाधिक है, उनसे पूर्व दिशा में असंख्यातगुणे, उनसे पश्चिम दिशा में विशेषाधिक है, उनसे दक्षिण दिशा विशेषाधिक तथा उनसे उत्तर दिशा में पुद्गल विशेषाधिक है।

नोट—चार प्रदेशी ऊंची दिशा निकली वह सात रज्जू न्यून होने से उर्ध्व दिशा में पुद्गल कम है। चार प्रदेशी नीची दिशा निकली वह सात रज्जू अधिक है अतः नीची दिशा उस अपेक्षा से हैं। एक प्रदेशी श्रेणी ऊंची-नीची १४ रज्जू तक और तिरछी लोकांत तक गई है अतः ईशानकुण नैऋत्यकुण में इस अपेक्षा से हैं। गजदंत्ता पर्वत पर सोमनस और गंधमादन एक-एक कूट कम होने से धूमस और धामस आदि सूक्ष्म पुद्गल अग्निकुण वायुकुण में इस अपेक्षा से है। पूर्व दिशा लम्बी-चौड़ी अधिक होने की अपेक्षा से पुद्गल अधिक है। पश्चिम दिशा में सलिलावती विजय हजार योजन ऊंडी है अतः पुद्गल अधिक है। दक्षिण दिशा में भवनपतियों के भवन अधिक होने से पुद्गल अधिक है। उत्तर दिशा में मानसरोवर है अतः जल अधिक है। इस कारण सात बोल के जीव अधिक है—उनके कर्म, काय, योग, उपयोग और लेश्या के पुद्गल अधिक है।

·१० क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गल की अल्पबहुत्व

खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पोग्गला तेल्लोके १, उड्ढलोयतिरियलोए अणंतगुणा २, अहेलोयतिरियलोए विसेसाहिया ३, तिरियलोए असंखेज्जगुणा ४, उड्ढलोए असंखेज्जगुणा ५, अहेलोए विसेसाहिया ६।

—पण्ण० प ३। सू ३२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सबसे कम तीन लोक में व्याप्त पुद्गल है (क्योंकि अचित्त महास्कंध तीन लोक में व्याप्त कर रहता है सबसे कम है) उससे उर्ध्वलोक व तिर्यग्लोक में व्याप्त पुद्गल अनंतगुणे हैं (दो प्रदेश स्पर्शित करने वाले पुद्गल अधिक है)। उससे अधोलोक-तिर्यग्लोक में विशेषाधिक है, उनसे तिर्यग्लोक में असंख्यातगुणे अधिक है, उससे ऊर्ध्वलोक में असंख्यातगुणे हैं, उससे अधोलोक में पुद्गल द्रव्य विशेषाधिक है।

नोट—अधोलोक सप्तरज्ज् अधिक है, उर्ध्वलोक सप्तरज्ज् न्यून है तथा तिर्यग्लोक में पुद्गल असंख्यातगुणा (एक रज्जू लम्बा-चौड़ा) अधिक है।

·११ अल्पबहुत्व

भेद की अपेक्षा

एएसि णं भंते ! दव्वाणं खंडाभेएणं पयराभेएणं चूण्णियाभेएणं अणुतडियाभेएणं उक्करियाभेएण य भिज्जमाणाणं कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवाइं दव्वाइं उक्करियाभेएणं भिज्जमाणाइं अणुतटियाभेएणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणा चुण्णियाभेएणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं, पयराभेएणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं, खंडाभेएणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं।

—पण्ण० प ११। सू ८९७

·१२ अल्पबहुत्व

भेद की अपेक्षा अल्पबहुत्व

द्रव्याणि भिद्यमानानि स्तोकान्युत्करिकाभिदा।
पश्चानुपूर्व्या शेषाणि स्युरनन्तगुणानि च॥

—लोकप्र० सर्ग ११। गा ११२। पृ० ५६६

सबसे कम उत्कटिका भेद वाले द्रव्य है, उससे अनुतटिका भेद वाले द्रव्य अनंतगुणे हैं, उससे चूर्णिका भेद वाले द्रव्य अनंतगुणे हैं, उससे प्रतर भेद वाले द्रव्य अनंतगुणे हैं, उससे खंड भेद वाले द्रव्य अनंतगुणे हैं।

पुद्गल के भेद की परस्पर अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! दव्वाणं खंडाभेएणं पयराभेदेणं चुण्णियाभेदेणं अणुतडियाभेदेणं उक्करियाभेदेण य भिज्जमाणाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा व बहुया वा तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवाइं दव्वाइं उक्कारिया-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेदेणं भिज्जमाणाइं, अणुतडियाभेएणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं, चुण्णिया-भेदेणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं, पयराभेदेणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं, खंडाभेदेणं भिज्जमाणाइं अणंतगुणाइं। —पण्ण० प ११। सू ८१७

·१३ परमाणुपुद्गल-स्कंधपुद्गल का अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपए-सियाणं अणंतपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा। पएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा पएसट्ठयाए, परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखपएसिया खंधा पएसट्ठयाए असंखेज्ज-गुणा। दव्वट्ठपएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठअपएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प ३। सू ७७

द्रव्य की अपेक्षा

सबसे कम अनंत प्रदेशी स्कंध है, उनसे परमाणु पुद्गल अनंत गुणे है, उनसे संख्यात प्रदेशी स्कंध संख्यात गुणे है तथा उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यत: असख्यात गुणे हैं।

प्रदेश की अपेक्षा

सब से कम अनंत प्रदेशी स्कंधों के पुद्गल कम है, उनसे परमाणु पुद्गल के अप्रदेश अनंत गुणे है। उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कंधों के प्रदेश संख्यात गुणे हैं तथा उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कंधों के प्रदेश असंख्यात गुणे हैं।

द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा

सबसे कम अनंत प्रदेशी स्कंध द्रव्य रूप से है उनसे अनंत प्रदेशी स्कंध प्रदेश की अपेक्षा अनंत गुणे है, उनसे परमाणुपुद्गल द्रव्य—अप्रदेश की अपेक्षा अनंत गुणे है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनसे संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्य रूप से संख्यात गुणे हैं, उनसे संख्यात प्रदेशी स्कंधों के प्रदेश संख्यात गुणे हैं। उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्य की अपेक्षा असंख्यात गुणे हैं तथा उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कंधों के प्रदेश असंख्यात गुणे हैं।

·१४ प्रायोगिक पुद्गल

·१ पुद्गल स्कंध-शरीरवर्गणा की अल्पबहुत्व

× × × सव्वत्थोवाओ कम्मइयसरीरदव्ववग्गणाओ ओगाहणाए। मणदव्ववग्गणाओ ओगाहणाए असंखेज्जगुणाओ। भासादव्वग्गणाओ ओगाहणाए असंखेज्जगुणाओ। तेयासरीरदव्ववग्गणाओ ओगाहणाए असंखेज्जगुणाओ। आहारसरीरदव्ववग्गणाओ ओगाहणाए असंखेज्जगुणाओ। वेउव्वियसरीरदव्ववग्गणाओ ओगाहणाए असंखेज्जगुणाओ। ओरालियसरीरदव्ववग्गणाओ ओगाहणाए असंखेज्जगुणाओ त्ति।

—षट्० खण्ड ५। भा ६। सू २३७। टीका। पु १४

·२ × × ×। सव्वत्थोवा कम्मइय-सरीर-दव्व-वग्गणाए ओगाहणा, मणदव्व-वग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा, भासा-दव्व-वग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा, तेया-सरीर-दव्व-वग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा, आहार-सरीर-दव्व-वग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा, वेउव्विय-सरीर-दव्व-वग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा, ओरालिय-सरीर-दव्ववग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा।

—षट्० खण्ड १। सू ५६। टीका। पु १। पृ० २९०-१

कार्मण शरीर सम्बन्धी द्रव्य वर्गणा की अवगाहना सबसे न्यून है। मनोद्रव्य वर्गणा की अवगाहना इससे असंख्यातगुणी है। भाषा द्रव्य वर्गणा की अवगाहना इससे असंख्यातगुणी है। तैजस शरीर सम्बन्धी द्रव्य वर्गणा की अवगाहना इससे असंख्यातगुणी है, आहारक शरीर सम्बन्धी द्रव्यवर्गणा की अवगाहना इससे असंख्यात गुणी है। वैक्रियक शरीर सम्बन्धी द्रव्यवर्गणा की अवगाहना इससे असंख्यातगुणी है। औदारिक शरीर सम्बन्धी द्रव्यवर्गणा की अवगाहना इससे असंख्यातगुणी है।

·१५ प्रदेश की अपेक्षा वर्गणा की अल्पबहुत्व

सव्वत्थोवा ओरालिय-सरीर-दव्व-वग्गणा-पदेसा, वेउव्विय-सरीर-दव्व-वग्गणा-पदेसा असंखेज्जगुणा, आहार-सरीर-दव्व-वग्गणा-पदेसा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जगुणा, तेयासरीर-दव्व-वग्गणा-पदेसा अणंतगुणा, भासादव्ववग्गणा पदेसा अणंतगुणा, मण-दव्व-वग्गणा-पदेसा अणंतगुणा, कम्मइय-सरीर-दव्व-वग्गणा-पदेसा अणंतगुणा त्ति।

—षट् खण्ड १। भा १। सू ५६। टीका। पु १। पृ० २९०

औदारिक शरीर द्रव्य सम्बन्धी वर्गणाओं के प्रदेश सबसे थोड़े हैं, उससे असंख्यातगुणे वैक्रियक शरीर द्रव्य सम्बन्धी वर्गणाओं के प्रदेश हैं। उससे असंख्यातगुणे आहारक शरीर द्रव्य सम्बन्धी वर्गणाओं के प्रदेश हैं। उससे अनन्तगुणे तैजस शरीर द्रव्य सम्बन्धी वर्गणा के प्रदेश हैं। उससे अनत गुणे भाषा-द्रव्य वर्गणाओं के प्रदेश है। उससे मनोद्रव्य वर्गणाओं के प्रदेश अनंत गुणे है। उससे अनंतगुणे कार्मण शरीर द्रव्य वर्गणा के प्रदेश हैं।

·१६ शरीर के पुद्गलों की प्रदेशरूप अल्पबहुत्व

शरीरनाम्नि सर्वस्तोकमौदारकशरीरनाम्नः, ततस्तैजसशरीरनाम्नो विशेषाधिकं, ततः कार्मणशरीरनाम्नो विशेषाधिकं, ततो वैक्रियशरीरनाम्नोऽसंख्येयगुणं ततोऽप्याहारकशरीरनाम्नोऽसंख्येयगुणम् × × ×।

एवं संङ्घातनाम्नोऽपि वाच्यम्।

अङ्गोपाङ्गनाम्नि सर्वस्तोकं जघन्यपदे प्रदेशाग्रमौदारिकाङ्गोपांगनाम्नः, ततो वैक्रियाङ्गोपाङ्गनाम्नोऽसंख्येयगुणं, ततोऽप्याहारकाङ्गोपाङ्गनाम्नोऽसंख्येयगुणम्।

—कर्मग्र० भा ५। गा ८१। टीका। पृ० ६३ से ६४

·१७ पुद्गल परिवर्तन की अल्पबहुत्व

(क) अदीदकाले एयजीवस्स सव्वत्थोवा भाव परियट्टवारा। भवपरियट्टणवारा अणंतगुणा। कालपरियट्टवारा अणंतगुणा। खेत्तपरियट्टवारा अणंतगुणा। पोग्गलपरियट्टवारा अणंतगुणा।

—कसायपा० विहत्ती ३। भा ४ गा २२। टीका। पृ० १०१

अतीत काल में एक जीव के भाव परिवर्तनवार सबसे थोड़े हुए हैं। इनसे भव परिवर्तनवार अनंतगुणे हुए हैं। इनसे काल परिवर्तनवार अनंतगुणे हुए हैं। इनसे क्षेत्र परिवर्तनवार अनंतगुणे हुए हैं। इनसे पुद्गल परिवर्तनवार अनंतगुणे हुए हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवस्स साहणट्ठमप्पाबहुगं वुच्चदे। तंजहा-सव्वत्थोवो पोग्गलपरियट्टकालो। खेत्तपरियट्टकालो अणंतगुणो। कालपरियट्टकालो अणंतगुणो। भवपरियट्टकालो अणंतगुणो। भावपरियट्टकालो अणंतगुणो त्ति।

—कसायपा० विह ३। भा ४। गा २२। टीका। पृ० १०१

पुद्गल परिवर्तन काल सबसे थोड़ा है। इससे क्षेत्र परिवर्तन का काल अनंत गुणा है। इससे काल परिवर्तन का काल अनंतगुणा है। इससे भव परिवर्तन का काल अनंतगुणा है। इससे भाव परिवर्तन का काल अनंतगुणा है।

पुद्गल परिवर्तन (संख्या की)

(ख) अदीदकाले एगस्स जीवस्स सव्वत्थोवा भावपरियट्टवारा। भवपरियट्टवारा अणंतगुणा। कालपरियट्टवारा अणंतगुणा। खेत्तपरियट्टवारा अणंतगुणा। पोग्गलपरियट्टवारा अणंतगुणा।

—षट्० खण्ड २। भा ५। सू ४। टीका। पु ४। पृ० १६७

अतीत काल में एक जीव के सब से कम भाव परिवर्तन के वार हैं। भव परिवर्तन के वार भाव परिवर्तन के वारों से अनंतगुणे हैं। काल परिवर्तन के वार भव परिवर्तन के वारों से अनंतगुणे हैं। क्षेत्र परिवर्तम के वार काल परिवर्तन के वारों से अनंतगुणे हैं। पुद्गल परिवर्तन के वार क्षेत्र परिवर्तन के वारों से अनंतगुणे हैं।

पुद्गल परिवर्तन की अल्पबहुत्व

(ग) सव्वत्थोवो पोग्गलपरियट्टकालो। खेत्तपरियट्टकालो अणंतगुणो। कालपरियट्टकालो अणंतगुणो। भवपरियट्टकालो अणंतगुणो। भाव परियट्टकालो अणंतगुणो।

—षट्० खण्ड २। भा ५। सू ४। टीका। पु ४। पृ० १६७

पुद्गल परिवर्तन का काल सबसे कम है। क्षेत्र परिवर्तन का काल पुद्गल परिवर्तन के काल से अनंतगुणा है। काल परिवर्तन का काल क्षेत्र परिवर्तन के काल से अनंतगुणा है। भव परिवर्तन का काल काल परिवर्तन के काल से अनन्तगुणा है। भाव परिवर्तन का काल भव परिवर्तन के काल से अनंतगुणा है।

·१८·१ वर्गणा की अपेक्षा अल्पबहुत्व

सव्वत्थोवा कम्मइयसरीरदव्ववग्गणाए ओगाहणा। मणदव्ववग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा। भासादव्ववग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेयासरीरदव्ववग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा। आहारसरीरदव्व-वग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा। वेउव्वियसरीरदव्ववग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा। ओरालियसरीरदव्ववग्गणाए ओगाहणा असंखेज्जगुणा त्ति अप्पाबहुअवयणादो।

—षट्० खण्ड ५। भा ५। सू ५९। टीका। पु १३। पृ० ३१२, ३१३

कार्मण शरीर द्रव्यवर्गणा की अवगाहना सबसे स्तोक होती है। उससे मनो-द्रव्यवर्गणा की अवगाहना असंख्यातगुणी होती है। उससे भाषा द्रव्यवर्गणा की अवगाहना असंख्यातगुणी होती है। उससे तैजस-शरीर-द्रव्यवर्गणा की अवगाहना असंख्यातगुणी होती है। उससे आहारक शरीर द्रव्यवर्गणा की अवगाहना असंख्यात गुणी होती है। उससे वैक्रियिक शरीर द्रव्य वर्गणा की अवगाहना असंख्यात गुणी होती है। उससे औदारिक शरीर द्रव्यवर्गणा की अवगाहना असंख्यात गुणी होती है।

·१८ २ वर्गणा का अल्पबहुत्व

सव्वत्थोवा जहण्णियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा! उक्कस्सियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा। को गुणगारो? सव्वजीवेहि अणंतगुणो। कुदो? जहण्णबंधट्ठाणप्पहुडि उवरि असंखेज्ज० लोगमेत्त-छट्ठाणेसु गदेसु सुहुमइ'दिय जहण्णट्ठाणचरिमवग्गणाए समुप्पत्तीदो। अज-हण्णअणुक्कस्सियासु वग्गणासु अविभागपडिच्छेदा अणंतगुणा। कोगुण-गारो? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो। अणुक्क-स्सियासु वग्गणासु अविभागपडिच्छेदा विसेसाहिया। अजहण्णियासु वग्गणासु अविभागपडिच्छेदा विसेसाहिया। केत्तियमेत्तण? जहण्णवग्गणाविभाग-पडिच्छेदेहि ऊणउक्कस्सवग्गणाविभागपडिच्छेदमेत्तण। सव्वासु वग्गणासु अविभागपडिच्छेदा विसेसाहिया। केत्तियमेत्तेण? जहण्णवग्गणाविभाग-पडिच्छेदमेत्तेण।

—कसायपा० विह ४। भा ५। गा २२। टीका पृ० ३४७

जघन्य वर्गणा में, अविभागप्रतिच्छेद सबसे थोड़े हैं। उनसे उत्कृष्ट वर्गणा में अविभाग प्रतिच्छेद अनंत गुणे हैं। गुणकार का प्रमाण—सब जीवों से अनंत गुणा हैं, क्योंकि जघन्य बन्धस्थान से लेकर ऊपर असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानों के जाने पर सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव के जघन्य अनुभाग स्थान की अन्तिम वर्गणा की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्पत्ति होती है। उनसे अजघन्य-अनुत्कृष्ट वर्गणाओं में अविभाग-प्रतिच्छेद अनंत-गुणे हैं। यहाँ पर गुणकार का प्रमाण अभव्य राशि से अनंत गुणा और सिद्ध-राशि का अनंतवां भाग प्रमाण गुणकार का प्रमाण है। उनसे अनुत्कृष्ट वर्गणाओं में अविभाग-प्रतिच्छेद विशेषाधिक हैं। जघन्य वर्गणा के अविभाग प्रतिच्छेद विशेषाधिक है। जघन्य वर्गणा के अविभाग-प्रतिच्छेदों से कम उत्कृष्ट वर्गणा के अविभाग-प्रतिच्छेदों से कम उत्कृष्ट वर्गणा के अविभाग प्रतिच्छेद प्रमाण अधिक है। उनसे सभी वर्गणाओं में अविभाग प्रतिच्छेद विशेष अधिक हैं। जघन्य वर्गणा के अविभाग-प्रतिच्छेदों का जितना प्रमाण है, उतने अधिक है।

.१८·३ वर्गणा

जहण्णियाए वग्गणाए अविभागपडिच्छेदा केवडिया ? अणंता सव्वजीवेहि अणंतगुणा। एवं णेदव्वं जाव उक्कस्सिया वग्गणा त्ति।

—कसायपा० विह ४। भा ५। गा २२। टीका पृ० ३४६

जघन्य वर्गणा में अविभाग प्रतिच्छेद अनंत हैं। जो सब जीवों से अनंत गुणे हैं। इस प्रकार उत्कृष्ट वर्गणापर्यंत समझना चाहिए।

वर्गणा

अनुभाग स्थान

जहण्णट्ठाणसव्ववग्गणाओ वि अभवसिद्धिएहि अणंतगुणाओ सिद्धाण-मणंतिमभागमेत्ताओ। कुदो ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुण-सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तं कम्मपरमाणूहि णिप्पण्णत्तादो। एगम्मि जीवे सव्वजीवेहि अणंतगुणा परमाणू किण्ण मिलंति ? ण, मिच्छत्तादिपच्चएहि आगच्छ-माणपरमाणूणमभवसिद्धिएहि अणंतगुणसिद्धाणंतिमभागपमाणत्तुवलंभादो। ण च एत्तिएसु कम्मपरमाणुपोग्गलेसु कम्मट्ठिदीए गुणिदेसु सव्वजीवेहि अणंतगुणा कम्मपरमाणू होंति, विरोहादो। एक्केक्कफद्दए वि अभव-सिद्धिएहि अणंतगुणसिद्धाणमणंतिमभागमेत्ताओ वग्गणाओ होंति। ताओ च सव्वफद्दएसु संखाए समाणाओ। कुदो ? साहावियादे × × ×।

—कसायपा० विह ४। भा ५। गा २२। टीका पृ० ३४८-४९

जघन्य अनुभाग स्थान की सब वर्गणाएँ भी अभव्य राशि से अनंतगुणी और सिद्ध राशि के अनंतवें भाग प्रमाण है, क्योंकि वे अभव्य राशि से अनंतगुणे और सिद्ध राशि के अनंतवें भाग प्रमाण कर्म परमाणु से बनी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यात्वादि कारणों से बंध को प्राप्त होने वाले परमाणु अभव्य-राशि से अनंत-गुणे और सिद्ध-राशि के अनंतवें भाग प्रमाण ही पाये जाते हैं। इसके कर्म परमाणुओं को कर्मों की स्थिति से गुणा करने पर समस्त कर्म परमाणु सब जीवों से अनंत गुणे नहीं होते हैं।

एक-एक स्पर्धक में भी अभव्य राशि से अनंत गुणी और सिद्ध राशि के अनंतवें भाग प्रमाण वर्गणाएँ होती है। वे वर्गणाएँ संख्या में भी सभी स्पर्धकों में समान होती है, क्योंकि ऐसा स्वाभाविक है।

·५ वर्गणा-स्पर्धक अल्पबहुत्व

अनुभाग स्थान-अल्पबहुत्व

जहण्णफद्दए वग्गणाओ थोवाओ। अजहण्णेसु फद्दएसु वग्गणाओ अणंतगुणाओ। सव्वेसु फद्दएसु वग्गणाओ विसेसाहियाओ × × ×।

—कसायपा० विह ४। भा ५। गा २२। टीका पृ० ३४९

जघन्य स्पर्धक में थोड़ी वर्गणाएँ हैं। उनसे अजघन्य स्पर्धकों में अनंतगुणी वर्गणाएँ है। उनसे सब स्पर्धकों में विशेष अधिक वर्गणाएँ हैं।

·६ अल्पबहुत्व-स्पर्धक

जहण्णए ट्ठाणे अभवसिद्धिएहि अणंतगुणसिद्धाणमणंतिमभागमेत्ताणि फद्दयाणि × × ×।

सव्वत्थोवं जहण्णफद्दयं, एगसंखत्तादो। अजहण्णफद्दयाणि अणंतगुणाणि। कोगुणगारो? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तो। सव्वाणि फद्दयाणि विसेसाहियाणि एकरूवेण। अथवा अविभागपडिच्छेदे अस्सिदूण उच्चदे-जहण्णफद्दयं थोवं। उक्कस्सफद्दयमणंतगुणं। को गुणगारो? सव्वजीवेहि अणंतगुणो अजहण्णअणुक्कस्सफद्दयाणि अणंतगुणाणि। को गुणगारो। अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतिमभागमेत्तो। अणुक्कस्सफद्दयाणि विसेसाहियाणि अजहण्णफद्दयाणिविसेसाहियाणि। सव्वाणि फद्दयाणि विसेसाहियाणि।

—कसायपा० विह ४। भा ५। गा २२। टीका पृ० ३४९-५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजघन्य अनुभागस्थान में अभव्य-राशि से अनंतगुणे और सिद्ध-राशि के अनंतवें भाग प्रमाण स्पर्धक होते हैं।

जघन्य स्पर्धक सबसे थोड़ा है, क्योंकि उसकी संख्या एक है। उससे अजघन्य स्पर्धक अनंत गुणे हैं। अभव्य-राशि से अनंत गुणा और सिद्ध-राशि के अनंतवें भाग प्रमाण गुणकार का प्रमाण है। उनसे सभी स्पर्धक विशेषाधिक हैं क्योंकि अजघन्य स्पर्धकों से इनमें स्पर्धक अधिक होता है।

अथवा अविभाग-प्रतिच्छेदों की अपेक्षा कहते हैं—जघन्य स्पर्धक थोड़ा है। उससे उत्कृष्ट स्पर्धक अनंत गुणा है। सब जीवों से अनंतगुणा गुणकार है। अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्पर्धक अनंत गुणे हैं। अभव्य राशि से अनतगुणा और सिद्ध राशि के अनंतवें भाग प्रमाण गुणकार है। अनुत्कृष्ट स्पर्धक विशेष अधिक हैं। अजघन्य स्पर्धक विशेष अधिक है। सब स्पर्धक विशेष अधिक है।

·१ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा सप्रदेश-अप्रदेश पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं दव्वादेसेणं, खेत्तादेसेणं, कालादेसेणं, भावादेसेणं सपएसाणं, अपएसाणं य कयरे-कयरे जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा, सव्वत्थोवा पोग्गला भावादेसेणं अपएसा, कालादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, दव्वादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेण अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेण चेव सपएसा असंखेज्जगुणा, दव्वादेसेणं सपएसा विसेसाहिया, कालादेसेणं सपएसा विसेसाहिया, भावादेसेणं सपएसा विसेसाहिया।

—भग० श ५ उ ८। सू २०६

सबसे कम भावादेश अप्रदेशी पुद्गल है, उससे कालादेश अप्रदेशी पुद्गल असंख्यात गुणे है, उससे द्रव्यादेश अप्रदेशी पुद्गल असंख्यात गुणे है, उससे क्षेत्रादेश अप्रदेशी पुद्गल असंख्यात गुणे है, उससे क्षेत्रादेश सप्रदेशी पुद्गल असंख्यात गुणे है, उससे द्रव्यादेश सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक है, उससे कालादेश सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक है, उससे भावादेश सप्रदेशी पुद्गल विशेषाधिक है।

नोट—नियम से सप्रदेशी द्रव्य पुद्गल की अपेक्षा, क्षेत्रादेश की अपेक्षा सप्रदेशी पुद्गल स्कंध ही होते हैं। कालादेश व भावादेश से सप्रदेशी पुद्गल परमाणु भी होते हैं, स्कंध भी होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२० आयुष्य स्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व

·१ एयस्स णं भंते ! दव्वट्ठाणाउयस्स, खेत्तट्ठाणाउयस्स, ओगाहणट्ठाणाउयस्स, भावट्ठाणाउयस्स कयरे-कयरे जाव विसेसाहिया गोयमा ! सव्वत्थोवे खेत्तट्ठाणाउए, ओगाहणट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, दव्वट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, भावट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे।

—भग० श ५। उ ७। सू २७

सबसे कम क्षेत्र स्थानआयु पुद्गल है, उससे अवगाहना स्थान आयु पुद्गल असंख्यातगुणे है, उससे द्रव्यस्थान आयु पुद्गल असंख्यात गुणे है तथा उससे भाव स्थान आयु पुद्गल असंख्यात गुणे है।

द्रव्यस्थानायु-क्षेत्रस्थानायु-अवगाहनास्थानायु और भावस्थानायु पुद्गल की परस्पर अल्पबहुत्व

·२ एयस्स णं भंते ! दव्वट्ठाणाउयस्स, खेत्तट्ठाणाउयस्स, ओगाहणट्ठाणाउयस्स, भावट्ठाणाउयस्स कयरे-कयरे जाव-विसेसाहिया ? गोयमा ! सव्वत्थोवे खेत्तट्ठाणाउए, ओगाहणट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, दव्वट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, भावट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे।

खेत्तोगाहणादव्वे, भावट्ठाणाउयं च अप्प-बहुं।
खेत्त सव्वत्थोवे, सेसा ठाणा असंखेज्जगुणा॥

—भग० श ५। उ ७। सू २७

द्रव्य-क्षेत्र-भाव अवगाहना स्थान आयु के पुद्गलो में सबसे कम क्षेत्रस्थानआयु पुद्गल है, शेष स्थान क्रमशः असंख्यात गुणे है।

·२१ द्रव्य की अपेक्षा क्षेत्रावगाह पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! दुपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया। एवं एएणं गमएणं तिपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुपएसोगाढा पोग्गला दव्व-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठयाए विसेसाहिया, जाव दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो नवपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया। दसपएसोगाढहिंतो पोग्गदेहिंतो संखेज्ज-पएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, संखेज्जपएसोगाढहिंतो पोग्गले-हिंतो असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया। पुच्छा सव्वत्थ भाणियव्वा।

—भग० श २५। उ ४। सू १५८। पृ० ९२२

द्रव्य की अपेक्षा द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल विशेषाधिक है। इसी प्रकार इस गमक से तीन प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गल विशेषाधिक है यावत् दश प्रदेशावगढ़ पुद्गलों से नव प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य विशेषा-धिक है। दश प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यों से संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य बहुत है। संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यों से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य बहुत है।

·२२ प्रदेश की अपेक्षा क्षेत्रावगाह पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाण य पोग्गलाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! एगपए-सोगाढहिंतो पोग्गलेहिंतो दुपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए विसेसाहिया, एवं जाव-नवपएसोगाढहिंतो पोग्गलेहिंतो दसपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठ-याए विसेसाहिया, दसपएसोगाढहिंतो पोग्गलेहिंतो सखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए बहुया, संखेज्जपएसोगाढहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्ज-पएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए बहुया।

—भग० श २५। उ ४। सू १५९। पृ० ९२२

एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल (प्रदेश रूप से) से द्विप्रदेशी पुद्गल प्रदेश रूप से विशेषाधिक है। इस प्रकार यावत् नव प्रदेशावगाढ़ पुद्गल से दस प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से विशेषाधिक है। दस प्रदेशावगाढ़ पुद्गल से संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से बहुत है। संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से बहुत है।

·२३ प्रदेशावगाह पुद्गलों में द्रव्य-प्रदेश-द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व

·१ एएसिणं भंते ! एगपएसोगाढाण संखेज्जपएसोगाढाणं असंखेज्ज-पएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्ज-गुणा, पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए, संखिज्ज-पएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा, असंखिज्जपएसोगाढा पुग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा। दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पुग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए, संखिज्जपएसोगाढा पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्ज-गुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा, असंखिज्जपएसोगाढा पुग्गला दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा।

—पण्ण० पद ३ सू ७८

·२ द्रव्य की अपेक्षा क्षेत्रावगाह पुद्गलों की अल्पबहुत्व

द्रव्य की अपेक्षा

प्रदेश की अपेक्षा

द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा

एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं, संखेज्जपएसोगाढाणं, असंखेज्ज-पएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला अपएसट्ठयाए, संखेज्ज-पएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठअपए-सट्ठयाए, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्ज-गुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—भग० श २५। उ ४। सू १६४। पृ० ९३३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य की अपेक्षा—एक प्रदेशावगाढ़ पुदगल द्रव्यत: सबसे कम है, उससे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यत: संख्यात गुणे है, उससे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यत: असंख्यात गुणे हैं।

प्रदेश की अपेक्षा—एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से सबसे कम है, उससे संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से संख्यात गुणे है, उससे असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से असंख्यात गुणे है।

द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ की अपेक्षा

एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ रूप से सबसे कम है, उससे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से संख्यातगुण है, उससे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से संख्यातगुणे हैं, उससे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से असंख्यातगुणे हैं और उससे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश रूप से असंख्यात-गुणे है।

·२४ पुद्गल और जीव की अल्पबहुत्व

·१ जीवा अणंतसंखाणंतगुणा पुग्गला हु तत्तो दु।

—गोजी० गा ५८७

जीव अनंत है, उससे पुद्गल अनंत गुणे हैं।

·२ ववहारो पुणकालो पोग्गलदव्वावणंतगुणमेत्तो।
तत्तो अणंतगुणिदा आगासपदेसपरिसंखा॥

—गोजी० गा ५८९

व्यवहार काल-पुद्गल द्रव्य से अनंत गुणा है। उससे आकाश-प्रदेश अनंत गुणे हैं।

·३ जीवभंगो जिनैरुक्तः पुद्गलाद्धाविहायसाम्।
अनंतगुणितं पूर्वं परतः परतः परम्॥

—पचसं० गा ९ (अमितगति)

जीव अनंत है उससे पुद्गल अनंत गुणे है उससे काल अनंत गुणा है।

·२५ प्रदेश की अपेक्षा पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुपएसियाण य खंधाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो बहुया ? गोयमा ! परमाणुपोग्गलेहिंतो दुपएसिया खंधा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पएसट्ठयाए बहुया। एवं एएणं गमएणं जाव-नवपएसिएहिंतो खंधेहिंतो दसपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया, एवं सव्वत्थ पुच्छियव्वं। दसपए-सिएहिंतो खंधेहिंतो संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया। संखेज्ज-पएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया [सू० १५६]।

एएसि णं भंते ! असंखेज्जपएसियाणं पुच्छा। गोयमा ! अनंतपएसि-एहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया [सू १५७]

—भग० श २५। उ ४। सू १५६, १५७। पृ० ९२१

परमाणु पुद्गल के प्रदेश से द्विप्रदेशी स्कंध के प्रदेश बहुत है। इसी प्रकार से द्विप्रदेशी स्कंध के पुद्गलों से तीन प्रदेशी स्कंध के पुद्गल बहुत है यावत् नवप्रदेशी स्कंधों के पुद्गल प्रदेश से दसप्रदेशी स्कंध के पुद्गल प्रदेश बहुत है।

दस प्रदेशी स्कंध पुद्गलों के प्रदेश से संख्यात प्रदेशी स्कंध के पुद्गल प्रदेश बहुत है। संख्यात प्रदेशी स्कंध पुद्गलों के प्रदेश से असंख्यात प्रदेशी स्कंध के पुद्गल बहुत है।

अनंत प्रदेशी स्कंधों के पुद्गल प्रदेश से असंख्यात प्रदेशी स्कंध पुद्गल के प्रदेश बहुत है।

·२६ परमाणु तथा स्कंध पुद्गलों की अल्पबहुत्व

·१ सकंप-निष्कंप परमाणुओं तथा स्कंधों पुद्गलों की अल्पबहुत्व

(क) एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं सेयाणं, निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सेया, निरेया असंखेज्जगुणा, एवं जाव-असंखिज्जपएसियाणं खंधाणं।

—भग० श २५। उ ४। सू २०९। पृ० ९२८

सकंप परमाणु पुद्गल सबसे कम है, इससे निष्कंप परमाणु असंख्यातगुणे है। इसी प्रकार द्विप्रदेशी यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कंधों के सकंप-निष्कंप के विषय में जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं सव्वेया णं निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव-विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सव्वेया, निरेया असंखेज्जगुणा।

—भग० श २५ । उ ४ । सू २३६ । पृ० २३०

सबसे कम सकंप परमाणु है, उससे निष्कंप परमाणु असंख्यातगुणे है।

·२७ पुद्गल-स्थिति की अपेक्षा अल्पबहुत्व

·१ द्रव्य-प्रदेश-द्रव्य प्रदेश पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! एगसमयठिइयाणं संखिज्जसमयठिइयाणं असंखिज्जसमयठिइयाणं पुग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा एगसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए, संखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा, असंखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा। पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगसमयठिइया पुग्गला पएसट्ठयाए, संखिज्जसमयठिइया पुग्गला पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखिज्जसमयठिइया पुग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा। दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए, संखिज्जसमयठिया पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा। असंखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा।

—पण्ण० पद ३ । सू ७९

द्रव्य की अपेक्षा स्थिति—

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य रूप से सबसे कम है, उससे संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य रूप से संख्यातगुणे हैं, उससे असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य रूप से असंख्यातगुणे हैं।

प्रदेश की अपेक्षा—

एक समय की स्थितिवाले पुद्गल प्रदेश रूप से सबसे कम है, उससे संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल प्रदेश रूप से संख्यातगुणे हैं, उससे असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल प्रदेश रूप से असंख्यातगुणे है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य-प्रदेश रूप में—

एक समय की स्थिति वाले पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से व प्रदेशार्थ रूप से सबसे कम है। उससे संख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से संख्यातगुणे है। उससे संख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल प्रदेश रूप से संख्यातगुणे है। उससे असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य रूप से असंख्यातगुणे है, उससे असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल प्रदेश रूप से असंख्यातगुणे है।

·२ समय-स्थिति की अपेक्षा पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! एगसमयट्ठिईयाणं दुसमयट्ठिईयाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए० ? जहा ओगाहणाए वत्तव्वया एवं ठिईए वि।

—भग० श २५। उ ४। सू १६०। पृ० ९२२

एक समय की स्थिति वाले, दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों की द्रव्य की अपेक्षा अपेक्षा अल्पबहुत जैसा अवगाहना के विषय में कहा वैसा ही स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिए।

·३ एएसि णं भंते ! एगसमयट्ठिईयाणं, संखेज्जसमयट्ठिईयाणं, असंखेज्ज-समयट्ठिईयाणं य पोग्गलाणं० ? जहा ओगाहणाए तहा ठिईए वि भाणि-यव्वं अप्पाबहुगं।

—भग० श २५। उ ४ सू १६५। पृ० ९२३

एक समय स्थिति वाले, संख्यात समय की स्थिति वाले व असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गलों का अल्प बहुत जैसा अवगाहना के विषय में कहा वैसा स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिए।

·२८ परमाणु पुद्गल तथा स्कंध पुद्गल की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं, असंखेज्ज-पएसियाण अणंत पएसियाण य खंधाणं सेयाणं निरेयाण य दव्वट्ठयाए पएस-ट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे० जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए १, अणंतपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा २, परमाणुपोग्गला सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३, संखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४, असंखेज्ज-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५, परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६, संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ७, असंखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८।

पएसट्ठयाए एवं चेव, नवरं परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए भाणियव्वा, संखेज्जपएसिया खंधा निरेया पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, सेसं तं चेव।

दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसियाखंधा निरेया दव्वट्ठयाए १, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा २, अणंतपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ४, परमाणुपोग्गला सेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए अणंतगुणा ५, संखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७, असंखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९, परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १०, संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ११, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १२, असंखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १३, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १४।

—भग० श २५। उ ४। सू २११। पृ० ९२८

१—सबसे कम द्रव्यतः निष्कंप अनंत प्रदेशी स्कंध है।

२—उससे द्रव्यतः सकंप अनंत प्रदेशी स्कंध अनतगुणे है।

३—उससे द्रव्यतः सकंप परमाणु पुद्गल अनंतगुणे है।

४—उससे द्रव्यतः संकप संख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

५—उससे द्रव्यतः सकंप असंख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

६—उससे दव्यतः निष्कंप परमाणु पुद्गल असंख्यातगुणे है।

७—उससे द्रव्यतः निष्कप संख्यात प्रदेशी स्कंध संख्यातगुणे है तथा

८—उससे द्रव्यतः निष्कंप असंख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा जानना चाहिए किन्तु परमाणु पुद्गल भी पृच्छा में अप्रदेशी कहना चाहिए तथा निष्कंप संख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेश की अपेक्षा असंख्यातगुणा जानना चाहिए। अवशेष उसी प्रकार जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य तथा प्रदेश की अपेक्षा

१—सबसे द्रव्यतः कम निष्कंप अनंत प्रदेशी स्कंध है।

२—उससे प्रदेश रूप से निष्कंप अनंत प्रदेशी स्कंध अनंतगुणे है।

३—उससे द्रव्यतः सकंप अनंत प्रदेशी स्कंध अनंतगुणे है।

४—उससे प्रदेशतः सकंप अनंत प्रदेशी स्कंध अनंतगुणे है।

५—उससे सकंप द्रव्यतः तथा अप्रदेशी परमाणु पुद्गल अनंतगुणे है।

६—उससे सकंप द्रव्यतः संख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

७—उससे सकंप प्रदेशतः संख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

८—उससे सकंप द्रव्यतः असंख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

९—उससे सकंप प्रदेशतः असंख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

१०—उससे निष्कंप द्रव्यतः अप्रदेशीत्व की अपेक्षा परमाणु पुद्गल असंख्यातगुणे है।

११—उससे निष्कंप द्रव्यतः संख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

१२—उससे निष्कंप प्रदेशतः संख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

१३—उससे निष्कंप द्रव्यतः असंख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

१४—उससे निष्कंप प्रदेशतः असंख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है।

·२९ संस्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व

परिमंडलस्स णं भंते ! संठाणस्स अणंतपएसियस्स संखेज्जपएसोगाढस्स अचरिमस्स य चरमाण य चरमंतपएसाण य अचरमंतपएसाण य दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा० गोयमा ! जहा संखेज्जपएसिअस्स संखेज्जपएसोगाढस्स, नवरं संकमेणं अणंतगुणा, एवं जाव आयए। परिमंडलस्स णं भंते ! संठाणस्स अणंतपएसियस्स असंखेज्जपएसोगाढस्स अचरमस्स य ४ जहा रयणप्पभाए, नवरं संकमे अणंतगुणा, एवं जाव आयते।

—पण्ण० प ५। सू १८

प्रश्न—संख्यात प्रदेश में रहे हुए अनंतप्रदेशी परिमंडल संस्थान के अचरम खंड, चरमखंड, चरमान्त प्रदेश और अचरमान्त प्रदेशों में द्रव्यार्थ रूप से, प्रदेशार्थ रूप में और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ रूप में कौन-कौन से अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर—जैसा संख्यातप्रदेशों में स्थित संख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के संबंध में कहा वैसा ही कहना—परन्तु संक्रमण में—द्रव्यादिक-विचार के सक्रमण में अनंतगुण जानना चाहिए। इसी प्रकार यावत् (वृत्त-चतुरस्र त्र्यस्र-आयत) आयत संस्थान तक कहना चाहिए।

असंख्यातप्रदेशों में रहे हुए अनंतप्रदेशी परिमंडल संस्थान के अचरमखण्ड, चरमखण्ड, चरमांत प्रदेश व अचरमांत प्रदेश के विषय में अल्पबहुत्व जैसा रत्नप्रभा नारकी के विषय में कहा—वैसा ही कहना चाहिए परन्तु संक्रम—द्रव्यादिक के विचार में अनंतगुणा कहना चाहिए।

इसी प्रकार वृत्त, चतुरस्र-त्र्यस्र और आयत संस्थान के संबंध में जानना चाहिए।

·३० इन्द्रिय तथा कर्कशगुरु-मृदुलघु का अल्पबहुत्व

·१ कर्कशगुरु गुण की अपेक्षा

एएसि णं भंते ! सोइंदिय-चक्खिंदिय-घाणिंदिय-जिब्भिंदिय-फासिंदियाणं, कक्खडगुरुयगुणाणं, मउयलहुयगुणाणं, कक्खडगरुयगुणाणं मउयगुणाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा चक्खिंदियस्स कक्खडगरुय गुणा, सोइंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, घाणिंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, जिब्भिंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, फासिंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा।

—पण्ण० पद १५। सू १६

सबसे कम चक्षुरिन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण, उससे श्रोत्रेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण अनंतगुणे हैं, उससे घ्राणेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण अनंतगुणे हैं, उससे रसेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण अनंतगुणे हैं, उससे स्पर्शेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण अनंतगुणे हैं।

·२ मृदुलघुगुण की अपेक्षा

मउयलहुयगुणाणं—सव्वत्थोवा फासिंदियस्स मउयलहुयगुणा, जिब्भिंदियस्स मउयलहुयगुणा अणंतगुणा, घाणिंदियस्स मउयलहुयगुणा अणंत-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणा, सोइंदियस्स मउयलहुयगुणा अणंतगुणा, चक्खिदियस्स मउयलहुय-गुणा अणंतगुणा।

—पण्ण० पद १५ । सू १६

सबसे कम स्पर्शेन्द्रिय के मृदुलघु गुण है। उससे रसेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंत-गुणे हैं, उससे घ्राणेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे हैं, उससे श्रोत्रेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे हैं, उससे चक्षुरिन्द्रिय मृदुलघु गुण अनंतगुणे हैं।

·३ कर्कश-गुरु गुण, मृदुलघु गुण की अपेक्षा

कक्खडगरुयगुणाणं मउयलहुयगुणाण य—सव्वत्थोवा चक्खिदियस्स कक्खडगरुयगुणा, सोइंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, घाणिंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, जिब्भिदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, फासिंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, फासिंदियस्स कक्खडगरुयगुणेहिंतो तस्स चेव मउयलहुयगुणा अणंतगुणा, जिब्भिदियस्स मउयलहुयगुणा अणंतगुणा, घाणिंदियस्स मउयलहुयगुणा अणंतगुणा, सोइंदियस्स मउयलहुयगुणा, अणंतगुणा, चक्खिदियस्स मउयलहुयगुणा अणंतगुणा।

—पण्ण० पद १५ सू १६

सबसे न्यून चक्षुरिन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण है, उससे श्रोत्रेन्द्रिय के कर्कशगुरु गुण अनंतगुणे है, उससे घ्राणेन्द्रिय के कर्कश गुरु गुण अनंतगुणे है, उससे रसेन्द्रिय के कर्कश गुरु गुण अनंतगुणे है, उससे स्पर्शेन्द्रिय के कर्कश गुरु गुण अनंतगुणे है।

स्पर्शेन्द्रिय के कर्कश गुरु गुण स्पर्शेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे है, उससे रसेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे है, उससे घ्राणेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे है, उससे श्रोत्रेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे है, उससे चक्षुरिन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंत-गुणे है।

·३१ जीव दंडक की अपेक्षा-इन्द्रिय के कर्कश गुरु-मृदुलघु की अल्पबहुत्व

एएसिणं भंते ! पुढविकाइया णं फासेंदियस्स कक्खडगरुयगुणमउयलहुयगुणाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा पुढविकाइयाणं फासेंदियस्स कक्खडगरुय-गुणा, तस्स चेव मउयलहुयगुणा अणंतगुणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं आउक्काइयाण वि जाव वणस्सइकाइयाणं ।

—पण्ण० प १५ । सू २८-२९

एएसि णं भंते ! बेइंदियाणं जिब्भिदिय-फासेंदियाणं कक्खडगरुयगुणाणं मउयलहुयगुणाणं कक्खडगरुयगुण-मउयलहुयगुणाण य कयरे-कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा बेइंदियाणं जिब्भिदियस्स कक्खड-गरुयगुणा, फासेंदियस्स कक्खडगरुयगुणा अणंतगुणा, फासेंदियस्स कक्खड-गरुयगुणेहिंतो तस्स चेव मउयलहुयगुणा अणंतगुणा, जिब्भिदियस्स मउय-लहुयगुणा अणंतगुणा। एवं चउरिंदिय त्ति, णवरं इंदियपरिवुड्ढी कायव्वा। तेइंदियाणं घाणेंदिए थोवे, चउरिंदियाणं चक्खिदिए थोवे।

—पण्ण० प १५ सू ३३, ३४

सबसे कम पृथ्वीकायिक स्पर्शेन्द्रिय कर्कश-गुरु गुण है, उससे मृदुलघु गुण अनंत-गुणे है।

इसी प्रकार अप्कायिक यावत् वनस्पतिकायिक के विषय में जानना चाहिए।

सबसे कम द्वीन्द्रिय के रसेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण है।

उससे स्पर्शेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण अनंतगुणे है।

स्पर्शेन्द्रिय के कर्कश-गुरु गुण से मृदुलघु गुण अनंतगुणे हैं।

उससे रसेन्द्रिय के मृदुलघु गुण अनंतगुणे हैं।

इसी प्रकार त्रीन्द्रिय व चतुरिन्द्रिय के विषय में जानना चाहिए। लेकिन इन्द्रिय की परिवृद्धि जाननी चाहिए। त्रीन्द्रिय में घ्राणेन्द्रिय सबसे कम है तथा चतुरिन्द्रिय में चक्षुरिन्द्रिय सबसे कम है।

·३२ एक गुण काला आदि की अल्पबहुत्व

संख्यातगुण काले आदि पुद्गलों में द्रव्य-प्रदेश-द्रव्यप्रदेश की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! एकगुणकालगाणं संखिज्जगुणकालगाणं असंखेज्जगुण-कालागाणं अणंतगुणकालगाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपए-सट्ठयाए य कयरेकयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! जहा परमाणुपोग्गला तहा भाणियव्वा, एवं संखिज्जगुणकालगाण

वि। एवं सेसावि वण्णा गंधा रसा फासा भाणियव्वा। फासाणं कक्खड-मउयगुरुयलहुयाणं जहा एगपएसोगाढाणं भणियं तहा भणियव्वं। अवसेसा फासा जहा वन्ना भणिता तहा भाणियव्वा ॥ २६ दारं ॥

—पण्ण० प ३। सू १८२

हे भगवन् ! एकगुण काला, संख्यातगुण काला, असंख्यातगुण काला, अने अनन्तगुण काला पुद्गलोमां द्रव्यार्थपणे, प्रदेशार्थपणे अने द्रव्यार्थ—प्रदेशार्थपणे कोण कोनाथी अल्प, बहु, तुल्य के विशेषाधिक छे ? हे गौतम ! जेम सामान्य पुद्गलों संबंधे कह्युं, तेम अहीं कहेवुं, एम संख्यातगुण काला संबंधे पण कहेवुं, ए रीते बाकीना वर्ण, गंध अने रस संबंधे कहेवुं। स्पर्शमां कर्कश, मृदु गुरु अने लघु स्पर्श संबंधे जेम एक प्रदेशावगाढने कह्युं छे तेम कहेवुं। बाकीना स्पर्शों जेम वर्णो कह्या छे तेम कहेवा।

अर्थात् एक गुण काला, संख्यातगुण काला, असंख्यातगुण काला तथा अनंतगुण काले पुद्गलों में द्रव्य रूप से, प्रदेश रूप से तथा द्रव्य तथा प्रदेश रूप से कौन किनसे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है।

जैसा सामान्य पुद्गलों के संबंध में कहा—वैसा ही यहाँ कहना चाहिए।

इसी प्रकार संख्यातगुण काले वर्ण के संबंध में कहना। इसी प्रकार शेष वर्ण—(नील-रक्त-पीत-शुक्ल) गंध, रस के विषय में कहना चाहिए।

स्पर्श में कर्कश, मृदु, गुरु और लघु स्पर्श के विषय में जैसा एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल के विषय में कहा वैसा ही कहना चाहिए।

अवशेष के स्पर्शों के विषय में जैसा वर्ण के विषय में कहा—वैसा कहना चाहिए।

·३३ तेइस वर्गणा का समवाय से विवेचन-अल्पबहुत्व

अणु संखा संखगुणा परित्तवग्गणमसंखलोगगुणं।
गुणगारो पंचण्णं अग्गहणाणं अभवणंतगुणो ॥९॥
आहरतेजभासा मणेण कम्मेण वग्गणाण भवे।
उक्कस्सस्स विसेसो अभव्वजीवेहि अधियो दु ॥१०॥
धुवखंधसांतराणं धुवसुण्णस्स य हवेज्ज गुणगारो।
जीवेहि अणंतगुणो जहण्णियादो दु उक्कस्से ॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पल्लासंखेज्जदिमो भागो पत्तेयदेहगुणगारो।
सुण्णे अणंता लोगा थूलणिगोद पुणो वोच्छं ।।१२।।

सेडिअसंखेज्जदिमो भागो सुण्णस्स अंगुलस्सेव।
पलिदोवमस्स सुहुमे पदरस्स गुणो दु सुण्णस्स ।।१३।।

एदेसिं गुणगारो जहण्णियादो दु जाण उक्कस्से।
साहिअमिह महखंधेऽसंखेज्जदिमो दु पल्लस्स ।।१४।।

—षट्० खण्ड ५। अ ४। सूत्र ९७ में उद्धृत। पु १४

इनमें अणुवर्गणा एक है, संख्याताणुवर्गणा संख्यातगुणी है। असंख्याताणुवर्गणा असंख्यातलोकगुणी है। अनन्ताणुवर्गणा सहित पांच अग्राह्यवर्गणाओं का गुणाकार अभव्यों से अनंतगुणा है। आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा और कार्मणवर्गणा में अभव्य जीवों का भाग देने पर जो लब्ध आवें उतना जघन्य से उत्कृष्ट लाने के लिए विशेष का प्रमाण है।

ध्रुवस्कंधवर्गणा, सांतरनिरन्तरवर्गणा और प्रथम ध्रुवशून्यवर्गणा में अपने जघन्य से उत्कृष्ट का प्रमाण लाने के लिए गुणकार का प्रमाण सब जीवों में अनंतगुणा है।

प्रत्येक शरीर वर्गणा का गुणाकार पल्य का असंख्यातवां भाग है। दूसरी ध्रुवशून्यवर्गणा में गुणकार अनंतलोक है। स्थूल निगोदवर्गणा का गुणकार जगश्रेणि का असंख्यातवां भाग है। तीसरी शून्यवर्गणा गुणकार अंगुल का असंख्यातवां भाग है। सूक्ष्म निगोदवर्गणा में गुणकार पल्य का असंख्यातवां भाग है। चौथी शून्यवर्गणा का गुणकार जगप्रतर का असंख्यातवां भाग है। इन सब वर्गणाओं के ये गुणकार अपने-अपने जघन्य से उत्कृष्ट भेद लाने के लिए जानने चाहिए। तथा महास्कंध में अपने जघन्य से अपना उत्कृष्ट पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक है।

नोट—यह एक श्रेणि वर्गणा की प्ररूपणा है। एक बन्धनबद्ध सूक्ष्म पुद्गल स्कंधों से समवेत पुद्गलों का अन्तर नहीं पाया जाता है।

·३४ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! एगगुणकालयाणं दुगुणकालयाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए० ? एएसि णं जहा परमाणुपोग्गलादीणं तहेव वत्तव्वया निरवसेसा, एवं सव्वेसिं वन्न-गंध-रसाणं। [सू १६१]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एएसि णं भंते ! एगगुणकक्खडाणं दुगुणकक्खडाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! एकगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया, एवं जाव—नवगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो दसगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया, दसगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, संखेज्जगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, असंखेज्जगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो अणंतगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया।

एवं पएसट्ठयाए वि सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा। जहा कक्खडा एवं मउय-गरुय-लहुया वि। सीय-उसिणनिद्ध-लुक्खा जहा वन्ना। [सू १६२]

—भग० श २५। उ ४। सू १६१, १६२ पृ० ९२२

एक गुणकाले व द्विगुणकाले पुद्गल की द्रव्य की अपेक्षा अल्पबहुत्व के विषय में जैसा परमाणु पुद्गल के विषय में कहा—वैसा ही कहना चाहिए।

इसी प्रकार सब वर्ण, गंध, रस के पर्याय के विषय में जानना चाहिए।

एक गुण कर्कश स्पर्श के पुद्गल से द्विगुण कर्कश गुण स्पर्श के पुद्गल द्रव्यत: विशेषाधिक है।

इसी प्रकार यावत् नवगुण कर्कश स्पर्श से दसगुण कर्कश स्पर्श के पुद्गल द्रव्यत: विशेषाधिक है।

दसगुण कर्कश स्पर्श पुद्गल से संख्यातगुण कर्कश स्पर्श के द्रव्यत: पुद्गल बहुत है। संख्यातगुण कर्कश स्पर्श के पुद्गल से असंख्यातगुण कर्कश स्पर्श के पुद्गल द्रव्यत: बहुत है। असंख्यातगुण कर्कश स्पर्श के पुद्गल से अनतगुण कर्कश स्पर्श के पुद्गल द्रव्यत: बहुत है।

इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा सब जगह पृच्छा करनी चाहिए।

जैसा कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल के विषय में कहा—वैसा की मृदु, गुरु, लघु स्पर्श के विषय में द्रव्य की अपेक्षा व प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व कहना चाहिए।

शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष पुद्गलों के विषय में जैसा वर्ण की अपेक्षा कहा वैसा कहना चाहिए।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

·३५ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श की अपेक्षा पुद्गलों का अल्पबहुत्व

द्रव्य-प्रदेश-द्रव्यप्रदेश की अपेक्षा

एएसि णं भंते ! एगगुणकालगाणं, संखेज्जगुणकालगाणं, असंखेज्जगुणकालगाणं, अणंतगुणकालगाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए० ? एएसिं जहा परमाणुपोग्गलाणं अप्पाबहुगं तहा एएसिं पि अप्पाबहुगं, एवं सेसाण वि वन्न-गंध-रसाणं। [सू १६६]

एएसि णं भंते ! एगगुणकक्खडाणं, संखेज्जगुणकक्खडाणं, असंखेज्जगुणकक्खडाणं, अणंतगुणकक्खडाणं य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा एगगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए, संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, अणंतगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, पएसट्ठयाए एवं चेव, नवरं संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, सेसं तं चेव।

दव्वट्ठपएसट्ठयाए— सव्वत्थोवा एगगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए, संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ; ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, अणंतगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा।

एवं मउय-गरुय-लहुयाण वि अप्पाबहुयं। सीय-उसिणनिद्ध-लुक्खाणं जहा वण्णाणं तहेव।

—भग० श २५। उ ४। सू १६६, १६७ पृ० ९२३, ९२४

एक गुणकाले, संख्यात गुणकाले, असंख्यात गुणकाले और अनंत गुणकाले पुद्गलों में द्रव्य रूप से, प्रदेश रूप से तथा द्रव्य व प्रदेश रूप से अल्पबहुत्व के विषय में—जैसा परमाणु पुद्गल की अल्पबहुत्व के विषय में—जैसा परमाणु पुद्गल की अल्पबहुत्व के विषय में कहा वैसा ही जानना चाहिए।

इसी प्रकार शेष, वर्ण, गंध, रस के विषय में जानना चाहिए।

१—सबसे कम एक गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२—उससे संख्यातगुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः संख्यात गुणे है।

३—उससे असंख्यात गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः असंख्यात गुणे है।

४—उससे अनंत गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः अनंत गुणे है।

इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा पुद्गलों के सम्बन्ध में जानना चाहिए। लेकिन प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुण कर्कश स्पर्श पुद्गलों से प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल असंख्यात गुणे है। अवशेष पुद्गलों के विषय में उसी प्रकार जानना चाहिए।

द्रव्य-प्रदेश की अपेक्षा—

१—सबसे कम एक गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः-प्रदेशतः है।

२—उससे संख्यात गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः संख्यात गुणे है।

३—उससे संख्यात गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल प्रदेशतः संख्यात गुणे है।

४—उससे असंख्यात गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः असंख्यात गुणे है।

५—उससे असंख्यात गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल प्रदेशतः असंख्यात गुणे है।

उससे अनंतप्रदेशी गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल द्रव्यतः अनंतगुणे है।

उससे अनंतप्रदेशी गुण कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल प्रदेशतः अनंतगुणे है।

इसी प्रकार मृदु-गुरु व लघु स्पर्श की भी अल्पबहुत्व जाननी चाहिए।

शीत, उष्ण-स्निग्ध व रूक्ष की अल्पबहुत्व जैसे वर्ण की अल्पबहुत्व कही वैसा ही जानना चाहिए।

द्रव्य की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा पुद्गल स्कंध की परस्पर अल्पबहुत्व
प्रदेश की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा पुद्गल स्कंध की परस्पर अल्पबहुत्व

एएसिणं भंते! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं, असंखेज्ज-पएसियाणं, अणतपएसियाण य खंधाणं देसेयाणं, सव्वेयाणं, निरेयाणं दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे-कयरेहिंतो जाव-विसेसाहिया वा? गोयमा! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए १, अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए अणंत-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणा २, अणंतपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३, असंखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४, संखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५, परमाणुपोग्गला सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६, संखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७, असंखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८, परमाणुपोग्गला निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९, संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा १०, असंखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ११, पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा अणंतपएसिया। एवं पएसट्ठयाए वि। नवरं परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए भाणियव्वा। संखेज्जपएसिया खंधा निरेया पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, सेसं तं चेव।

—भग० श २५। उ ४। सू २३९। पृ० ९३१

१—सबसे न्यून अनंतप्रदेशी स्कंध सकंप द्रव्य रूप से हैं।

२—उससे निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध अनंतगुणे हैं।

३—उससे देशतः निष्कंप द्रव्यतः अनंतप्रदेशी स्कंध अनंतगुणे हैं।

४—उससे सकंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

५—उससे सकंप संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

६—उससे सकप परमाणु पुद्गल द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

७—उससे देशतः सकंप संख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

८—उससे देशतः सकंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

९—उससे निष्कंप परमाणु पुद्गल द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

१०—उससे निष्कंप संख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः संख्यातगुणे हैं।

११—उससे निष्कंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा भी अल्पबहुत्व जानना चाहिए। लेकिन परमाणु-पुद्गल अप्रदेशी कहना चाहिए।

यावत् निष्कंप संख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे है। बाकी सब उसी प्रकार कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३६ पुद्गल और अल्पबहुत्व

·१ द्रव्य प्रदेश की अपेक्षा परमाणुपुद्गल तथा पुद्गल स्कंध की—

दव्वट्ठपएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए १, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा २, अणंतपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ४, अणंतपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ५, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ६, असंखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ७, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८, संखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, ९, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १०, परमाणुपोग्गला सव्वेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ११, संखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १२, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा १३, असंखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १४, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १५, परमाणु-पोग्गला निरेया दव्वट्ठ-अपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १६, संखेज्जपएसिया खंधा निरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा १७, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा १८, असंखेज्जपएसिया निरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १९, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा २०।

—भग० श २५ । उ ४ । सू २३९ । पृ० ९३१

द्रव्य प्रदेश की अपेक्षा—

१—सबसे न्यून सकंप अनंतप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः है।

२—उससे सकंप अनंतप्रदेशी स्कंध के प्रदेश अनंतगुणे हैं।

३—उससे निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः अनंतगुणे हैं।

४—उससे निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध के प्रदेश अनंतगुणे हैं।

५—उससे देशतः निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः अनंतगुणे हैं।

६—उससे देशतः निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध के प्रदेश अनंतगुणे हैं।

७—उससे सकंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः अनंतगुणे हैं।

८—उससे सकंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश असंख्यातगुणे है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९—उससे सकंप संख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

१०—उससे सकंप संख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

११—उससे सकंप परमाणु पुद्गल द्रव्यतः अप्रदेशतः असंख्यातगुणे है।

१२—उससे देशतः सकंप संख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः असंख्यातगुणे हैं।

१३—उससे देशतः सकंप संख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश संख्यातगुणे हैं।

१४—उससे देशतः सकंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध के द्रव्य असंख्यातगुणे हैं।

१५—उससे देशतः सकंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

१६—उससे निष्कंप परमाणु पुद्गल द्रव्यतः अप्रदेशी असंख्यातगुणे हैं।

१७—उससे निष्कंप संख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्यतः संख्यातगुणे हैं।

१८—उससे निष्कंप संख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश संख्यातगुणे हैं।

१९—उससे निष्कंप असंख्यातप्रदेशी स्कंध के द्रव्य असंख्यातगुणे हैं।

२०—उससे निष्कंप असंख्यातप्रदेशी के स्कंध के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

·२ द्रव्य-प्रदेश-द्रव्यप्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व

एतेसि णं भंते! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपदेसियाणं असंखेज्ज-पदेसियाणं अणंतपदेसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए पदेसट्ठयाए दव्वट्ठपदेस-ट्ठयाए कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?

गोयमा! सव्वत्थोवा अणंतपदेसिया खंधा दव्वट्ठयाए १, परमाणु-पोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा २, संखेज्जपदेसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ३, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४।

—पण्ण० पद ३। सू ३३०

द्रव्य की अपेक्षा—१, सबसे थोड़े द्रव्य की अपेक्षा से अनंतप्रदेशी स्कंध है, २, (उनकी अपेक्षा) परमाणु पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा अनंतगुणे है। ३, (उनकी अपेक्षा) संख्यातप्रदेशी स्कंध द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणे है। ४, (उनकी अपेक्षा) असंख्यातप्रदेशिक स्कंध द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पदेसट्ठयाए १ सव्वत्थोवा अणंतपदेसिया खंधा पएसट्ठयाए २ परमाणुपोग्गला अपदेसट्ठयाए अणंतगुणा, ३ संखेज्जपदेसिया खंधा पदेसट्ठयाए संखेज्जगुणा, ४ असंखेज्जपदेसिया खंधा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० पद ३। सू ३३०

प्रदेशों की अपेक्षा से अल्पबहुत्व—१, सबसे कम अनंतप्रदेशिक स्कंध प्रदेश की अपेक्षा अल्प है। २, (उनकी अपेक्षा) परमाणुपुद्गल अप्रदेशों की अपेक्षा से अनंतगुणे है। ३ (उनकी अपेक्षा) संख्यातप्रदेशी स्कंध प्रदेशों की अपेक्षा से संख्यातगुणे है। ४, (उनकी अपेक्षा) असंख्यातप्रदेशी स्कंध प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्यातगुणे हैं।

·३ द्रव्य एवं प्रदेशों की अपेक्षा से अल्पबहुत्व

दव्वट्ठपदेसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपदेसिया खंधा दव्वट्ठयाए १, ते चेव पदेसट्ठयाए अणंतगुणा २, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठअपदेसट्ठयाए अणंतगुणा ३, संखेज्जपदेसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ४, ते चेव पदेसट्ठयाए संखेज्जगुणा ५, असंखेज्जपदेसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६, ते चेव पएसदयाए असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प ३। सू ३३०

१, सबसे अल्प द्रव्य की अपेक्षा से अनंतप्रदेशिक स्कंध है। २, (उनकी अपेक्षा) वे (अनंतप्रदेशी स्कंध) प्रदेशों की अपेक्षा से अनंतगुणे है। ३, (उनकी अपेक्षा) परमाणुपुद्गल, द्रव्य व अप्रदेश की अपेक्षा से अनंतगुणे है। ४, (उनकी अपेक्षा) संख्यातप्रदेशी स्कंध, द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणे है। ५, (उनकी अपेक्षा) (संख्यातप्रदेशी स्कंध) प्रदेशों की अपेक्षा से संख्यातगुणे है। ६, उनसे असंख्यातप्रदेशिक स्कंध द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है। ७, उनसे (असंख्यातप्रदेशी स्कंध) प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है।

·३७ क्षेत्रावगाहित पुद्गलों की अल्पबहुत्व

·१ द्रव्य की अपेक्षा

एतेसि णं भंते ! एगपदेसोगाढाणं संखेज्जपएसोगाढाणं असंखेज्जपएसोगाढाणं य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पदेसट्ठयाए दव्वट्ठ-पदेसट्ठताए कतरे-कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा बिसेसाहिया वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! सव्वत्थोवा एगपदेसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए १, संखेज्ज-पदेसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा २, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ३ ।

—पण्ण० पद ३ । सू ३३१

१, सबसे कम द्रव्य की अपेक्षा से एक प्रदेश में अवगाढ़ पुद्गल हैं। २, (उनकी अपेक्षा) संख्यातप्रदेशों में अवगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा से संख्यातगुणे हैं। ३, (उनकी अपेक्षा) द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातप्रदेशों में अवगाढ़ पुद्गल असंख्यात-गुणे हैं।

·२ प्रदेशों की अपेक्षा

पएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए १, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पदेसट्ठयाए संखेज्जगुणा २, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पदेसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ३ ।

—पण्ण० पद ३ । सू ३३१

१, सबसे कम एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशों की अपेक्षा से है। २, (उनकी अपेक्षा) संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशों की अपेक्षा से संख्यातगुणे है। ३, (उनकी अपेक्षा) असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्यात-गुणे है।

·३ द्रव्य व प्रदेश की अपेक्षा

दव्वट्ठपएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठपएस-ट्ठयाए १, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा २, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा ३, असंखेज्जपदेसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४, ते चेव पदेसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५ ।

—पण्ण० पद ३ । सू ३३१

१, सबसे कम एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल, द्रव्य व प्रदेश की अपेक्षा से है। २, (उनकी अपेक्षा) संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल, द्रव्य की अपेक्षा से संख्यातगुणे है। ३, (उनकी अपेक्षा) वे (संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल) प्रदेश की अपेक्षा से संख्यातगुणे है। ४, (उनकी अपेक्षा) असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है। ५, (उनकी अपेक्षा) वे (असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल) प्रदेश की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३८ समय स्थिति की अपेक्षा अल्पबहुत्व

·१ एतेसिणं भंते ? एकसमयठितीयाणं संखेज्जसमयठितीयाणं असंखेज्जसमयठितीयाणं य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए, पवेसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ।

गोयमा ! सव्वत्थोवा एगसमयठितीया पोग्गला दव्वट्ठयाए १, संखेज्जसमयठितीया पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा २, असंखेज्जसमयठितीया पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ३ ।

—पण्ण० पद ३ । सू ३३१

१, द्रव्य की अपेक्षा से सबसे अल्प एक समय की स्थितिवाले पुद्गल है । २, (उनकी अपेक्षा) संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल, द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणे है । ३, (उनकी अपेक्षा) असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है ।

·२ पदेसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगसमयपठितीया पोग्गला पदेसट्ठयाए १, संखेज्जसमयठितीया पोग्गला पदेसट्ठयाए संखेज्जगुणा २, असंखेज्जठितीया पोग्गला पदेसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ३ ।

—पण्ण० पद ३ । सू ३३१

प्रदेशों की अपेक्षा से अल्पबहुत्व—१, सबसे कम एक समयकी स्थितिवाले पुद्गल प्रदेशों की अपेक्षा से है । २, (उनकी अपेक्षा) संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल प्रदेशों की अपेक्षा संख्यातगुणे है । ३, (उनकी अपेक्षा) असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल, प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है ।

·३ द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा से अल्पबहुत्व

दव्वट्ठपदेसट्ठयाए—सव्वत्थोवा एगसमयठितीया पोग्गला दव्वट्ठपदेसट्ठयाए १, संखेज्जसमयठितीया पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा २, ते चेव पदेसट्ठयाए संखेज्जगुणा, ३, असंखेज्जसमयठितीया पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ४, ते चेव पदेसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ।

—पण्ण० पद ३ । सू ३३१

१, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा से सबसे कम पुद्गल, एक समय की स्थितिवाले है । २, संख्यात समय की स्थितिवाले पुदगल द्रव्य, द्रव्य की अपेक्षा से संख्यात-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणे है। ३, (इनकी अपेक्षा) वे (संख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल) प्रदेशों की अपेक्षा से संख्यातगुणे है। ४, (इनसे) असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है। ५, (और इनसे) वे (असंख्यात समय की स्थितिवाले पुद्गल) प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्यातगुणे है।

·३९ गुण की अपेक्षा से पुद्गल की अल्पबहुत्व

एतेसि णं भंते ! एगगुणकालगाणं संखेज्जगुणकालगाणं असंखेज्जगुण-कालगाणं अणंतगुणकालगाणं पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पदेसट्ठयाए दव्वट्ठपदे-सट्ठयाए कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?

गोयमा ! जहा परमाणुपोग्गला (सू ३३०) तहा भाणितव्वा। एवं संखेज्जगुणाकालगाणं वि।

एवं सेसा वि वण्ण-गंध-रसा भाणितव्वा। फासाणं कक्खड-मउय-गरुय-लहुयाणं जहा एगपदेसोगाढाणं (सू ३३१) भणितं तहा भाणितव्वं। अवसेसा फासा जहा वण्णा भणिता जहा भाणितव्वा।

—पण्ण० पद ३। सू ३३३

जिस प्रकार पुरमाणु पुद्गलों के विषय में (सू ३३० में) कहा गया है, उसी प्रकार इन एक गुण काले, संख्यातगुण काले असंख्यातगुण काले और अनंतगुण काले पुद्गलों में से द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेशों की अपेक्षा से और द्रव्य-प्रदेशों की अपेक्षा अल्पबहुत्व जानना चाहिए।

इसी प्रकार संख्यातगुण काले (एवं असंख्यातगुण काले तथा अनंतगुण काले) पुद्गलों के विषय में भी (पूर्ववत् सू ३३० के अनुसार) समझ लेना चाहिए।

इसी प्रकार शेष वर्ण (नील, लाल, पीले व श्वेत) तथा (समस्त) गंध, एवं रस के (एक गुण से अनंतगुण तक के) पुद्गलों के अल्पबहुत्व के सम्बन्ध में कहना चाहिए तथा कर्कश, मृदु (कोमल) गुरु और लघु स्पर्शों के (अल्पबहुत्व) विषय में जिस प्रकार (सू ३३१ में) एकप्रदेशावगाढ़ आदि का (अल्पबहुत्व) कहा गया है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए। (देखें क्रमांक ·३७)

अवशेष (चार) स्पर्शों के विषय में जैसे वर्णों का (अल्पबहुत्व) कहा है— वैसे ही कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४० परिमंडलस्स णं भंते ! संठाणस्स असंखेज्जपएसियस्स असंखेज्ज-पएसोगाढस्स अचरमस्स चरमाण य चरमंतपएसाण य अचरमंतपएसाण य दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएपेट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा० ४ ? गोयमा ! जहा-रयणप्पभाए अप्पाबहुयं तहेव निरवसेसं भाणियव्वं, एवं जाव आयते।

—पण्ण पद १०। सू १७

हे भगवन् ! असंख्याता प्रदेशमां रहेला असंख्मातप्रदेशिक परिमंडल संस्थनना अचरम खण्ड, चरम खण्ड, चरमान्तप्रदेशो अने अचरमान्तप्रदेशोमां द्रव्यार्थपणे, प्रदेशार्थपणे, अने द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थपणे कोण कोनाथी अल्प, बहु, तुल्य के विशेषाधिक छे ? हे गौतम ! जेम रत्नप्रभानु अल्पबहुत्व कह्युं तेमज बधुं कहेवु। ए प्रमाणे यावत् आयत संस्थान सुधी जाणवुं।

अर्थात्—असंख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के अचरम-खण्ड, चरमखण्ड, चरमान्तप्रदेश और अचरमान्तप्रदेशों में द्रव्यरूप से, प्रदेशरूप से व द्रव्य प्रदेशरूप से अल्पबहुत्व के विषय में—जैसा रत्नप्रभानारकी का अल्पबहुत्व कहा है वैसा ही जानना चाहिए।

इसी प्रकार वृत्त यावत् आयत संस्थानों के विषय में जानना चाहिए।

मूल पाठ—इमी से णं भंते ! रयणप्पयाए पुढवीए अचरिमस्स य चरमाण य चरिमंतपएसाण य अचरमांत पएसाण य दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुआ वा, तुल्ला वा, विसेसा-हिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवे इमीसे रयणप्पायाए पुढवीए दव्वट्ठयाए एगे अचरिमे, चरमाइं असंखेज्जगुणाइं, अचरमंच चरमाणि य दोवि विसेसाहिया।

—पण्ण० प १०। सू ३

द्रव्य रूप में—

१—सबसे कम असंख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के द्रव्यरूप से एक अचरमखण्ड है।

२—उससे बहुत चरमखण्ड असंख्यातगुणे है।

३—उससे दोनों अचरमखण्ड और बहुत चरमखण्ड दोनों मिलकर विशेषाधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·४० पएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए चरमंतपएसा, अचरमंतपएसा असंखेज्जगुणा, चरिमंतपएसा य अचरिमंतपएसा य दो वि विसेसाहिया।

दव्वट्ठपएसट्ठयाए—सव्वत्थोवे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए दव्वट्ठयाए एगे अचरमे, चरिमाइं असंखेज्जगुणाइं, अचरिमं अचरिमाणि य दो वि विसेसाहियाइं। पएसट्ठयाए चरिमंतपएसा असंखेज्जगुणा, अचरिमंतपएसा असंखेज्जगुणा, चरमतपएसा य अचरमंतपएसा य दो वि विसेसाहिया।

—पण्ण० पद १० । सू १७

प्रदेश रूप में—

१—सबसे कम असंख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के चरमान्तप्रदेश है, उससे अचरमान्तप्रदेश असंख्यातगुणे हैं तथा उससे चरमान्तप्रदेश व अचरमान्तप्रदेश दोनों मिलकर विशेषाधिक है।

प्रदेश-द्रव्य रूप से—

१—सबसे कम असंख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के द्रव्य रूप से अचरमखण्ड है।

२—उससे चरमान्तखण्ड द्रव्य रूप में असंख्यातगुणे हैं।

३—उससे अचरमखण्ड और चरमखण्ड के द्रव्य दोनों मिलकर विशेषाधिक है।

४—उससे चरमान्त के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

५—उससे अचरमान्त के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

६—उससे चरमान्त प्रदेश व अचरमान्त प्रदेश दोनों के प्रदेश मिलकर विशेषाधिक है।

·४१ संख्यात प्रदेश में स्थित असंख्यात प्रदेशी परिमंडल संस्थान के अचरमखंड चरमखंड-चरमान्त प्रदेश-अचरमांत प्रदेशों की द्रव्य-प्रदेश रूप में अल्पबहुत्व

परिमंडलस्स णं भंते ! संठाणस्स संखेज्जपएसियस्स संखेज्जपएसोगाढस्स अचरिमस्स य चरिमाण य चरिमंतपएसाण य अचरिमंतपएसाण य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवे परिमंडलस्स संठाणस्स संखेज्जपएसियस्स संखेज्ज-पएसोगाढस्स दव्वट्ठयाए एगे अचरिमे १, चरिमाइं संखेज्जगुणाइं २, अचरिमं च चरिमाणि य दोवि विसेसाहियाइं । पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा । परिमंडलस्स संठाणस्स संखेज्जपएसियस्स संखेज्जपएसोगाढस्स चरिमंत-पएसा १, अचरिमंतपएसा संखेज्जगुणा २, चरिमंतपएसा य अचरिमंतपएसा य दोवि विसेसाहिया ३ । दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवे परिमंडलस्स संठाणस्स संखेज्जपएसियस्स संखेज्जपएसोगाढस्स दव्वट्ठयाए एगे अचरिमे १, चरिमाइं संखेज्जगुणाइं २, अचरिमं च चरिमाणि य दोवि विसेसा-हियाइं ३, चरिमंतपएसा संखेज्जगुणा ४, अचरिमंतपएसा संखेज्जगुणा ५, चरिमंतपएसा य अचरिमंतपएसा य दोवि विसेसाहिया ६ । एवं वट्ट-तंस-चउरस-आयएसु वि जोएअव्वं ।

—पण्ण० पद १० । सू २८

द्रव्य रूप में—

१—सबसे कम संख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के द्रव्य रूप से एक अचरमखण्ड है ।

२—उससे चरमखण्ड संख्यातगुणे हैं ।

३—उससे अचरमखण्ड और चरमखण्ड दोनों मिलकर विशेषाधिक है ।

प्रदेश रूप में—

१—उससे संख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के चरमान्त प्रदेश (प्रदेश रूप से) सबसे कम है ।

२—उससे (प्रदेश रूप से) अचरमान्त प्रदेश संख्यातगुणे हैं ।

३—उससे चरमान्त प्रदेश व अचरमान्त प्रदेश दोनों मिलकर विशेषाधिक है ।

प्रदेश-द्रव्य रूप में—

१—सबसे कम संख्यातप्रदेश में स्थित असंख्यातप्रदेशी परिमंडल संस्थान के द्रव्य रूप से अचरमखण्ड है । उससे चरमखण्ड संख्यातगुणे हैं, उससे अचरमखण्ड और चरमखण्ड दोनों मिलकर विशेषाधिक है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२—उससे प्रदेश रूप से चरमान्त प्रदेश संख्यातगुणे हैं, उससे चरमान्त प्रदेश संख्यातगुणे हैं तथा उससे चरमान्त प्रदेश और अचरमान्त प्रदेश दोनों मिलकर विशेषाधिक है।

इसी प्रकार वृत्त आदि चारों प्रकार के संस्थान के विषय में जानना चाहिए।

·४२ संस्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व

·१ द्रव्य की अपेक्षा

एएसि णं भंते! परिमंडल-वट्ट-तंस-चउरंस-आयत-अणित्थंथाणं संठाणाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा? गोयमा! सव्वत्थोवा परिमंडलसंठाणा दव्वट्ठयाए, वट्टा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, चउरंसा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, तंसा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, आयता संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्ज-गुणा, अणित्थंथा संठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—भग० श २५। उ ३। सू ३६। पृ० ९०७

द्रव्य की अपेक्षा—सबसे कम परिमंडल संस्थान के द्रव्य है, उससे वृत्त संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं, उससे चतुरस्र (चतुष्कोण) संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं। उससे त्र्यस्र (तीन कोण वाला संस्थान) संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं, उससे आयत (लम्बा) संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं।

उससे अनित्थंस्थ—अनियत संस्थान असंख्यातगुणे हैं।

·२ प्रदेश की अपेक्षा

पएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा परिमंडला संठाणा पएसट्ठयाए, वट्टा संठाणा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, जहा दव्वट्ठयाए तहा पएसट्ठयाए वि जाव—अणित्थंथा संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—भग० श २५। उ ३। सू ३६ पृ० ९०७

सबसे न्यून परिमंडल संस्थान के प्रदेश है, उससे वृत्त संस्थान के प्रदेश संख्यात-गुणे हैं, उससे चतुरस्र संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं, उससे त्र्यस्र संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं, उससे आयत संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं तथा उससे अनित्थंस्थ (अनियत) संस्थान के प्रदेश असंख्यातगुणे है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ संस्थान की अपेक्षा अल्पबहुत्व

द्रव्य तथा प्रदेश की अपेक्षा

दव्वट्ठपएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा परिमंडला संठाणा दव्वट्ठयाए, सो चेव दव्वट्ठयाए गमओ भाणियव्वो, जाव—अणित्थंथा संठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, अणित्थंथेहिंतो संठाणेहिंतो दव्वट्ठयाए (दव्वट्ठयाएहिंतो) परिमंडला संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, वट्टा संठाणा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा—सो चेव पएसट्ठयाए गमओ भाणियव्वो, जाव अणित्थंथा संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—भग० श २५। उ ३ सू ३६। पृ० ९०७

द्रव्य तथा प्रदेश की अपेक्षा—

१—द्रव्यत: सबसे परिमंडल संस्थान हैं।

२—उससे वृत्त संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं।

३—उससे चतुरस्र संस्थान के द्रव्य असंख्यातगुणे हैं।

४—उससे त्र्यस्र (त्रिकोण) संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं।

५—उससे आयत संस्थान के द्रव्य संख्यातगुणे हैं।

६—उससे अनित्थंस्थ संस्थान के द्रव्य असंख्यातगुणे हैं।

७—उससे अनित्थंस्थ संस्थान (द्रव्य रूप से) के द्रव्य से परिमंडल संस्थान के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

८—उससे वृत्त संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं।

९—उससे चतुरस्र संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं।

१०—उससे त्र्यस्र संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं।

११—उससे आयत संस्थान के प्रदेश संख्यातगुणे हैं।

१२—उससे अनित्थंस्थ संस्थान के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

·४३ पुद्गलपरिवर्तनिर्वर्तन काल की अल्पबहुत्व

एयस्स णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकालस्स, वेउव्वियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकालस्स, जाव—आणापाणुपोग्गलपरियट्ट-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निव्वत्तणाकालस्स य कयरे-कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले,तेयापोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे, ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे, आणापाणुपोग्गल परियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे, मणपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे। वइपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे। वेउव्वियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।

—भग० श १२। उ ४। सू ९९। पृ० ५६३

१—सबसे कम कार्मणपुद्गल परिवर्तनिर्वर्तन (निष्पत्ति) काल है।

२—उससे तैजसपुद्गल परिवर्तनिर्वर्तनकाल अनंतगुणे हैं।

३—उससे औदारिकपुद्गल परिवर्तनिर्वननकाल अनंतगुणे हैं।

४—उससे आनप्राणपुद्गल परिवर्तनिर्वर्तनकाल अनंतगुणे हैं।

५—उससे मनपुद्गल परिवर्तनिर्वर्तनकाल अनंतगुणे हैं।

६—उससे वचनपुद्गल परिवर्तनिर्वर्तनकाल अनंतगुणे हैं।

७—उससे वैक्रियपुद्गल परिवर्तनिर्वर्तनकाल अनंतगुणे हैं।

नोट—एक-एक पुद्गलपरिवर्तन के साथ उन-उन पुद्गलों का संबंध हैं।

पुद्गल परिवर्त

एएसि णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टाणं जाव आणापाणुपोग्गल परियट्टाण य कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा, वइपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, मणपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, आणापाणु पोग्लपरियट्टा अणंतगुणा, ओरालिय पोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, तेयापोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, कम्मगपोग्गल परियट्टा अणंतगुणा।

—भग० श १२। उ ४। सू १००। पृ० ५६३

सबसे न्यून वैक्रियपुद्गल परिवर्त है, उससे वचनपुद्गल परिवर्त अनंतगुणे हैं, उससे मनपुद्गल परिवर्त अनंतगुणे हैं, उससे आनपान (श्वासोच्छ्वास) पुद्गल परिवर्त अनंतगुणे हैं, उससे औदारिकपुद्गल परिवर्त अनंतगुणे हैं, उससे तैजस-पुद्गल परिवर्त अनंतगुणे हैं तथा उससे कार्मणपुद्गल परिवर्त अनंतगुणे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोट—इन सातों पुद्गल परिवर्त की रचना पुद्गलों से होती है। समस्त पुद्गलों के साथ एक—वह पुद्गल परिवर्त है।

·४४ प्रयोग परिणत-मिश्रपरिणत-विस्रसापरिणत पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं पओगपरिणयाणं मीसापरिणयाणं, वीससापरिणयाणं य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा। गोयमा ! सव्वत्थोवा पोग्गला पओगपरिणया, मीसापरिणया अणंतगुणा, वीससापरिणया अणंतगुणा।

—भग० श ८। उ २। सू ८४। पृ० ३२९

सबसे कम प्रयोग परिणत पुद्गल है, उससे मिश्र परिणत पुद्गल अनन्तगुणे हैं, उससे विस्रसा परिणत पुद्गल अनन्तगुणे हैं।

·४५ द्रव्य की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा दोप्रदेशी स्कंध की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं, दुपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा, बहुया वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ? गोयमा ! दुपएसिएहिंतो खंधेहिंतो परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया।

—भग० श २५। उ ४। सू १५१। पृ० ९२१

द्रव्य की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध से परमाणु पुद्गल अधिक है।

·४६ द्रव्य की अपेक्षा परस्पर स्कंध पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! दुपएसियाणं तिपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो बहुया ? गोयमा ! तिपएसिएहिंतो खंधेहिंतो दुपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया, एवं एएणं गमएणं जाव—दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो नवपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया। [सू १५२]

एएसि णं भंते ! दसपएसियाणं—पुच्छा। गोयमा ! दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया। [सू १५३]

एएसि णं भंते ! संखेज्जपएसियाणं—पुच्छा। गोयमा ! संखेज्जपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया। [सू १५४]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एएसि णं भंते ! असंखेज्जपदेसियाणं—पुच्छा। गोयमा ! अणंतपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया [सू १५५]

—भग० श २५। उ ४। सू १५२ से १५५। पृ० ९२१

द्रव्य की अपेक्षा तीन प्रदेशी स्कंध से द्विप्रदेशी स्कंध बहुत है। इसी प्रकार यावत् दस अधिक स्कध से नव प्रदेश स्कंध बहुत है।

दस प्रदेशी स्कंधों से नव प्रदेशी स्कंध अधिक है। संख्यातप्रदेशी स्कंधों से असंख्यातप्रदेशी स्कंध बहुत है। अनंतप्रदेशी स्कंध से असंख्यातप्रदेशी स्कंध बहुत है।

·४७ प्रदेश की अपेक्षा परमाणु पुद्गल तथा दो प्रदेशी स्कंध की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुपएसियाण य खंधाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो बहुया ? गोयमा ! परमाणुपोग्गलेहिंतो दुपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया।

—भग० श २५। उ ४। सू १५६। पृ० ९२१

परमाणुपुद्गलों के प्रदेश से द्विप्रदेशी स्कंध के प्रदेश अधिक हैं।

·५० परमाणुपुद्गल तथा स्कंध पुद्गल की अल्पबहुत्व

·१ द्रव्य की अपेक्षा

·२ प्रदेश की अपेक्षा

·३ द्रव्यप्रदेश की अपेक्षा

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं, असंखेज्जपएसियाणं अणंतपएसियाण य खधाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

पएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा पएसट्ठयाए, परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दव्वट्ठपएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्ज-गुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, तं चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—भग० श २५ । उ ४ । सू १६३ । पृ० ९२३

—पण्ण० पद ३ । सू २१३

१. द्रव्य की अपेक्षा—

सबसे कम द्रव्यतः अनंतप्रदेशी स्कंध है, उससे द्रव्यतः परमाणुपुद्गल अनंतगुणे हैं, उससे द्रव्यतः संख्यातप्रदेशी स्कंध संख्यातगुणे हैं, उससे द्रव्यतः असंख्यातप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे हैं।

२. प्रदेश की अपेक्षा—

सबसे थोड़े अनंतप्रदेशी स्कंध के प्रदेश हैं, उससे परमाणुपुद्गल के अप्रदेश (प्रदेश) अनंतगुणे हैं, उससे संख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश संख्यातगुणे हैं तथा उससे असंख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

द्रव्यतः-प्रदेशतः अपेक्षा—

सबसे कम अनंतप्रदेशी स्कंध के द्रव्य हैं, उससे अनंतप्रदेशी स्कंध के प्रदेश अनंत-गुणे हैं, उससे परमाणु पुद्गलों के द्रव्य-प्रदेश अनंतगुणे हैं, उससे संख्यातप्रदेशी स्कंध के द्रव्य संख्यातगुणे हैं, उससे संख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश संख्यातगुणे हैं, उससे असंख्यातप्रदेशी स्कधों के द्रव्य असंख्यातगुणे हैं, उससे असंख्यातप्रदेशी स्कंध के प्रदेश असंख्यातगुणे हैं।

·५१ स्कंध की अल्पबहुत्व

·१ सकंप-निष्कंप स्कंध पुद्गलों की अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं सेयाणं, निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सेया, निरेया असंखेज्जगुणा, एवं जाव—असंखिज्जपएसियाणं खंधाणं। [सू ९८]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ एएसि णं भंते ! अणंतपएसियाण खंधाणं सेयाणं, निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा निरेया, सेया अणंतगुणा। [सू २१०]

एएसि णं भंते ! दुपएसियाणं खंधाणं देसेयाणं, सव्वेयाणं, निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा दुपएसिया खंधा सव्वेया, देसेया असंखेज्जगुणा, निरेया असंखेज्जगुणा। एवं जाव—असंखेज्जपएसियाणं खंधाणं। [२३७]

एएसि णं भंते ! अणंतपएसियाणं खंधाणं देसेयाणं, सव्वेयाणं, निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव—विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया, निरेया अणंतगुणा, देसेया अणंतगुणा, [सू २३८]

—भग० श २५ । उ ४ । सू २१०, २३७, २३८

सबसे कम सकंप परमाणुपुद्गल हैं उनसे निष्कंप परमाणुपुद्गल असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यात स्कंध तक जानना चाहिए।

सबसे कम निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध हैं उनसे सकंप अनंतप्रदेशी स्कंध अनंतगुणे हैं।

सबसे कम सकंप द्विप्रदेशी स्कंध है, उनसे देशतः सकंप असंख्यातगुणे हैं, उनसे निष्कंप द्विप्रदेशी स्कंध असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार यावत् असंख्यातप्रदेशी तक जानना चाहिए।

सबसे कम सकंप अनंतप्रदेशी स्कंध है, उनसे निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध अनंतगुणे हैं, उससे देशतः निष्कंप अनंतप्रदेशी स्कंध अनंतगुणे हैं।

·५२ पुद्गल उपनिधिकी खेत्ताणुपुव्वी

अहवा उवणिहिआ खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी। से किं तं पुव्वाणुपुव्वी ?, २ एगपएसोगाढे दुपएसोगाढे जाव दसपएसोगाढे संखिज्जपएसोगाढे जाव असंखिज्जपएसोगाढे से तं पुव्वाणुपुव्वी। से किं तं पच्छाणुपुव्वी ? २ असंखेज्जपए-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोगाढे संखिज्जपएसोगाढे जाव एगपएसोगाढे से तं पच्छाणुपुव्वी। से किं तं अणाणुपुव्वी, २ एआए चेव एगाइआए एगुत्तरिआए असंखिज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो।

—अणुओ० सू १०४

उपनिधिकी खेत्तापुव्वी के तीन प्रकार है—यथा—पुर्वानुपूर्वी, पश्चातानुपूर्वी तथा अनानुपूर्वी। पुर्वानुपूर्वी अनेक प्रकार की है—यथा—एकप्रदेशावगाढ़, द्विप्रदेशावगाढ़ जाव दसप्रदेशावगाढ़, संख्यातप्रदेशावगाढ़ और असंख्यातप्रदेशावगाढ़।

पश्चातानुपूर्वी अनेक प्रकार की है—यथा—असंख्मातप्रदेशावगाढ़, संख्यातप्रदेशावगाढ़ यावत् एकप्रदेशावगाढ़।

·५३ अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं दव्वादेसेणं, खेत्तादेसेणं कालादेसेणं भावादेसेणं सपएसाणं अपएसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा ?

नारयपुत्ता ? सव्वत्थोवा भावादेसेणं अपएसा, कालादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, दव्वादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं चेव सपएसा असंखेज्जगुणा, दव्वादेसणं सपएसा विसेसाहिया, कालादेसेणं सपएसा विसेसाहिया, भावादेसेणं सपएसा विसेसाहिया।

—भग० श ५। उ ८। सू २०६

भावादेश से अप्रदेश पुद्गल सबसे थोड़े हैं। उनसे कालादेश की अपेक्षा अप्रदेश पुद्गल असंख्यगुणे हैं। उनसे द्रव्यादेश की अपेक्षा अप्रदेश पुद्गल असंख्यगुणे हैं। उनसे क्षेत्रादेश की अपेक्षा सप्रदेश पुद्गल असंख्यगुणे हैं। उनसे द्रव्यादेश की अपेक्षा सप्रदेश पुद्गल विशेषाधिक है। उनसे कालादेश की अपेक्षा सप्रदेश पुद्गल विशेषाधिक है और उनसे भावादेश की अपेक्षा सप्रदेश पुद्गल विशेषाधिक है।

नोट—सबसे थोड़े भाव से अप्रदेश पुद्गल है। जैसे—एक गुण काला और एक गुण नीलादि। उनसे काल से अप्रदेशी पुद्गल असंख्यातगुणे हैं। जैसे—एक समय की स्थिति वाले पुद्गल, उनसे द्रव्य से अप्रदेशी पुद्गल असंख्यातगुणे हैं।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

जैसे सभी परमाणु पुद्गल। उनसे क्षेत्र से अप्रदेशी पुद्गल असंख्यातगुणे हैं। जैसे—एक-एक आकाशप्रदेश पर अवगाहन करने वाले पुद्गल। कहा है –

ठाणे ठाणे वड्ढइ भावाईण णं अप्पएसाणं।
तं चिय भावाईणं परिभस्सइ सप्पएसाणं॥

अर्थात् स्थान-स्थान पर जो भावादिक अप्रदेशों की वृद्धि होती है वही भावादिक सप्रदेशों की हानि होती है। इस प्रकार समझ लेना चाहिए।

·५४ परमाणु-स्कंध की परस्पर अल्पबहुत्व

एयस्स णं भंते! दव्वट्ठाणाउयस्स खेत्तट्ठाणाउयस्स, ओगाहणट्ठाणाउयस्स भावट्ठाणाउयस्स कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा? बहुया वा? तुल्ला वा? विसेसाहिया वा?

गोयमा! सव्वत्थोवे खेत्तट्ठाणाउए, ओगाहणट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, दव्वट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, भावट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे।

—भग० श ५। उ ७। सू १८१

सबसे थोड़े क्षेत्रस्थानायु है, उससे अवगाहना स्थानायु असंख्यगुण है, उससे द्रव्यस्थानायु असंख्यगुण है, और उससे भावस्थानायु असंख्यगुण है।

संगहणी गाहा—

खेत्तोगाहणादव्वे, भावट्ठाणाउय च अप्प-बहुं।
खेत्ते सव्वत्थोवे, सेसा ठाणा असंखेज्जगुणा॥

गाथा का अर्थ इस प्रकार है—क्षेत्र, अवगाहना, द्रव्य और भाव स्थानायु इनका अल्पबहुत्व कहना चाहिए। इनमें क्षेत्र स्थानायु सबसे अल्प है और बाकी तीन स्थान क्रमशः असंख्यगुण है।

नोट—क्योंकि क्षेत्र अमूर्तिक होने के कारण उसके साथ पुद्गलों के बंध का कारण 'स्निग्धत्व' न होने से पुद्गलों का क्षेत्रावस्थान काल सबसे थोड़ा है। एक क्षेत्र में स्थित पुद्गल दूसरे क्षेत्र में जाने पर भी उसकी वही अवगाहना रहती है। इसलिए क्षेत्रस्थानायु की अपेक्षा अवगाहना स्थानायु असंख्यगुण है। अवगाहना की निवृत्ति हो जाने पर भी द्रव्य लम्बे काल तक रहता है। अतः अवगाहना स्थानायु की अपेक्षा द्रव्यस्थानायु असंख्यगुण है। द्रव्य की निवृत्ति होने पर भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणों का अवस्थान रहता है। अर्थात् द्रव्य में गुणों का बाहुल्य होने से सब गुणों का नाश नहीं होता तथा द्रव्य का अन्यत्व होने से भी बहुत से गुणों की स्थिति रहती है, अतः द्रव्यस्थानायु की अपेक्षा भावस्थानायु असंख्यगुण है।

पुद्गल द्रव्य का परमाणु, द्विप्रदेशी स्कंध आदि रूप से रहना द्रव्यस्थानायु है। एक प्रदेशादि क्षेत्र में पुद्गलो के अवस्थान को क्षेत्रस्थानायु कहते हैं।

·५५ सकंप-निष्कंप स्कंधों का अल्पबहुत्व

एएसि णं भंते ! अणंतपएसियाणं खंधाणं सेयाणं निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा।

गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा निरेया, सेया अणंतगुणा।

—भग० श २५ । उ ४ । सू २१० । पृ० ९२८

सबसे कम अनंतप्रदेशी स्कंध निष्कंप है, उससे सकंप अनंतगुणे हैं।

एएसि णं भंते ! अणंतपदेसिया खंधाणं देसयाणं, सव्वेयाणं, निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया वा ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा ?

गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपदेसिया खंधा सव्वेया, निरेया अणंतगुणा, देसया अणंतगुणा।

—भग० श २५ । उ ४ । सू २३८ । पृ० ९३०-३१

सबसे कम अनन्तप्रदेशी स्कंध सकंप है, उससे निष्कंप अनन्तगुणे हैं, उससे देश से सकंप अनन्तगुणे हैं।

एएसि णं भंते ! दुपदेसियाणं खंधाणं देसेयाण्ं सव्वेयाण निरेयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया वा ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा ?

गोयमा ! सव्वत्थोवा दुपदेसिया खंधा सव्वेया, देसेया असंखेज्जगुणा, निरेया असंखेज्जगुणा। एवं जाव असंखेज्जपएसियाणं खंधाणं।

—भग० श २५ । उ ४ । सू २३७ । पृ० ९३०

द्विप्रदेशी स्कंध यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कंध में सकंप सबसे कम है, उससे देशतः सकंप असंख्यातगुणे हैं, उससे निष्कंप असंख्यातगुणे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·५६ अल्पबहुत्व

जीव पुद्गल नें काल नां समया।
द्रव्य प्रदेश नें पजवा पिछाणो॥

थोड़ा अनंतगुणा अनंतगुणा वलि।
विसेसाहिया अनंत अनंतगुण जाणो॥

—झीणीचर्चा, झीणोज्ञान पृ० २२४

जीव सबसे कम है, पुद्गल उनसे अनंतगुणे हैं। काल के समय उनसे अनंतगुणे हैं। द्रव्य उनसे विशेषाधिक है। प्रदेश उनसे अनंतगुणे हैं और उनसे पर्यव अनंत गुणे हैं।

विश्लेषण—जीव संख्या में अनंत हैं, पर पुद्गलों की संख्या जीवों से बहुत अधिक है। काल, जीव और पुद्गल से अधिक व्यापक है, इसलिए वह उनसे अधिक है। छः द्रव्य है। काल उनमें से एक है, इससे द्रव्य काल से विशेषाधिक होता है। काल को छोड़कर शेष पांच द्रव्यों के प्रदेश (अविभागी पर्याय) होते हैं, इस दृष्टि से प्रदेश द्रव्य से अनंतगुणे हैं। प्रत्येक द्रव्य के अनंत पर्यव होते हैं। इस दृष्टि से पर्यव प्रदेश से अनंतगुणे हैं।

·५७ जीव पोग्गल समया दव्व पएसा य पज्जवा चेव।
थोवाणंताणंता विसेसअहिआ दुवेऽणंता॥

—प्रवसा० द्वार २६४। गा १४३६

जीव, पुद्गल, समय, द्रव्य, प्रदेश व पर्याय—इनमें सबसे कम जीव, उससे पुद्गल अनंतगुणे हैं, पुद्गल से काल अनंतगुणा है। समय से सब द्रव्य विशेषाधिक है। उनसे प्रदेश अनंतगुणे हैं, उनसे पर्याय अनंतगुणी है।

·५८ सिद्धा १ निगोयजीव २ वणस्सई ३ काल ४ पोग्गला ५ चेव।

सव्वमलोयागासं ६ छप्पेएऽणंतया नेया॥४०१॥

—प्रवसा० द्वार २५६

सिद्ध, निगोद जीव, वनस्पति, काल, पुद्गल व आकाश—ये छः अनंत हैं।

नोट—इनमें सबसे न्यून सिद्ध है, सिद्ध से निगोद जीव अनंतगुणे अधिक है, इनसे वनस्पति जीव विशेषाधिक है, इनसे पुद्गल अनंतगुणे हैं, इनसे काल अनंतगुणे हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इनसे अलोकाकाश अनंतगुणे अधिक है। यद्यपि आकाश द्रव्य एक है परन्तु उसके प्रदेश अनंत हैं।

·५९ व्यावहारिक परमाणु (स्कंध पुद्गल) और उत्सेधांगुल

सत्थेण सुतिक्खेणवि छेत्तुं भेतुं च णं किर न सक्को।
तं परमाणु सिद्धा वयंति आई पमाणाणं ॥१३९०॥

जो सुतीक्ष्ण शस्त्र से नहीं छेदा-भेदा जा सकता। उसे सिद्ध-केवल ज्ञानी ने परमाणु कहा है। वह प्रमाण का आदि-कारण है।

नोट—वह व्यावहारिक परमाणु अनंश परमाणुओं के समुदाय से बना है।

परमाणू तसरेणू रहरेणू अग्गयं च वालस्स।
लिक्खा, जूया य जवो अट्ठगुणविवड्ढिया ॥१३९१॥

परमाणु, त्रसरेणु, रथरेणु, बालाग्र, लिक्ख, जूं यव—ये क्रमशः एक-दूसरे से आठ गुणे मोटे हैं।

नोट—८ व्यावहारिक परमाणु = १ त्रसतेणु

८ त्रसरेणु	=१ रथरेणु
८ रथरेणु	=१ बालाग्र
८ बालाग्र	=१ लिक्ख
८ लिक्ख	=१ जूं
८ जूं	=१ यव

वीसं परमाणू लक्खा सत्तानउइ भवे सहस्साइं।
सयमेगं बावन्नं एगंमि उ अंगुले हुंति ॥१३९२॥

२०९७१५२ व्यावहारिक परमाणु=१ उत्सेधांगुल

अर्थात् क्रमशः ८ × ८ = ६४ × ८ = ५१२ × ८ = ४०९६ × ८ = ३२७६८ × ८ = २६२१४४ × ८ = २०९७१५२ व्यावहारिक परमाणु का एक उत्सेधांगुल होता है।

परमाणु इच्चाइक्कमेणं उस्सेहअंगुल भणिया।

—प्रवसा० गा १३९०, १३९१, १३९२, १३९३ पूर्वार्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् परमाणु आदि का क्रमपूर्वक उत्सेधांगुल कहा है।

नोट—दो उत्सेधांगुल भगवान महावीर की एक आंगुल।

·६० पुद्गल का परिणाम

अनादिरादिमांश्च ॥४२॥

रूपिष्वादिमान् ॥४३॥

—तत्त्व० अ ५, सू ४२, ४३

पुद्गल का परिणाम आदिमान है। काल की अपेक्षा परिणाम के दो भेद हैं—अनादि व सादि।

रूपिषु तु द्रव्येषु आदि परिणामोऽनेकविधः।

—तत्त्व० अ ५। सू ४३ का भाष्य

पुद्गल का आदिमान परिणाम अनेक प्रकार का है।

·६१ वर्ण-रस-यावत् गुणस्थान आदि भाव निश्चय नय से पुद्गल परिणाम तथा व्यवहार नय से जीव परिणाम है

जीवस्स णत्थि वण्णो णवि गंधो णवि रसो णवि य फासो।
णवि रूपं ण सरीरं ण वि संठाणं ण संहणणं ॥५०॥
जीवस्स णत्थि रागो णवि दोसो णेव विज्जदे मोहो।
णो पच्चया णकम्मं णोकम्मं चावि से णत्थि ॥५१॥
जीवस्स णत्थि वग्गो ण वग्गणा णेव फड्ढया केई।
णो अज्झप्पट्ठाणा णेव य अणुभावट्ठाणा वा ॥५२॥
जीवस्स णत्थि केई जोगट्ठाणा ण बंधठाणा वा।
णेव य उदयट्ठाणा णो मग्गणट्ठाणया कई ॥५३॥
णो ठिदिबंधट्ठाणा जीवस्स ण संकिलेसट्ठाणा वा।
णेव विसोहिट्ठाणा णो संजमलद्धिठाणा वा ॥५४॥
णेव य जीवट्ठाणा ण गुणट्ठाणा य अत्थि जीवस्स।
जेणदु एदे सव्वे पोग्गलदव्वस्स परिणामा ॥५५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ववहारेण दु एदे जीवस्स हवंति वण्णमादीया।
गुणठाणंता भावा ण दु केई णिच्छयणयस्स ॥५६॥

—समय० गा ५० से ५६

जीव के वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, रूप, शरीर, संस्थान, संहनन, राग, द्वेष, मोह, आश्रव, कर्म नोकर्म, वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक, अध्यात्मस्थान, अनुभागस्थान, योगस्थान, बंधस्थान, उदयस्थान, मार्गणास्थान, स्थितिबंधस्थान, संक्लेशस्थान, विशुद्धिस्थान, संयमलब्धिस्थान, जीवस्थान, गुणस्थान आदि भाव, निश्चयनय से जीव के परिणाम नहीं है, पुद्गल परिणाम है। लेकिन व्यवहारनय से जिन भगवान ने इनको जीव परिणाम कहा है।

एए सव्वे भावा पुग्गलदव्व परिणामणिप्पण्णा।
केवल जिणेहिं भणिया कह ते जीवो त्ति वच्चंति ॥४४॥

ववहारस्स दरीसणमुवएसो वण्णिदो जिणवरेहिं।
जीवा एदे सव्वे अज्झवसाणदिओ भावा ॥४६॥

— समय० गा ४४, ४६

तावृत्ति—देहरागादयः कर्मजनितपर्यायाः पुद्गलद्रव्यकर्मोदयपरिणामेन निष्पन्नाः, केवजिणिनैः सर्वज्ञैः कर्मजनिता इति भणिताः कथं ते निश्चयनयेन जीवा इत्युच्यते न कथमपि × × ×॥४४॥

व्यवहारनयस्य स्वरूपं दर्शितं यत्किं कृतं उपदेशो वर्णितः कथिता जिनवरैः। कथंभूतः। जीवा एते सर्वे अध्यवसानादयो भावः परिणामा भण्यंत इति × × ×॥४६॥

सर्वज्ञ भगवान ने शरीर, राग, द्वेष आदि अध्यवसायों को पुद्गलद्रव्य कर्मोदय के परिणाम से निष्पन्न कहा है अतः निश्चयनय से इनको जीव या जीव परिणाम नहीं कहा जा सकता है।

इन सब अध्यवसानादि भावों को जिनवर भगवान ने जो जीव या जीव परिणाम कहा है वह व्यवहारनय की अपेक्षा से कहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·८४ स्कंध और नय

१—निश्चय व्यवहार नय से अजीव आदि के वर्णादि

एवं एएणं अभिलावेणं लोहिया मंजिट्ठिया, पीतिया हालिद्दा, सुक्किलए संखे, सुब्भिगंधे कोट्ठे, दुब्भिगंधे मयगसरीरे, तित्ते निंबे कडुया सुंठी, कसाए कविट्ठे, अंबा अंबिलिया, महुरे खण्ड, कक्खडे बइरे, मउए णवणीए, गरूए अए, लहुए अलुयपत्ते, सोए हिमे, उसिणे अगणिकाए, णिद्धे, तेल्ले।

—भग० श १८ । उ ६ । सू १०९

(वावहारियणयस्स) इस प्रकार इस अभिलाप द्वारा मजीठ लाल है, हल्दी पीली है, शंख श्वेत है, कुष्ठ (पटवास कपड़े सुगंध देनेवाली पत्ती) सुगंधित है, मुर्दा (मृतक शरीर) दुर्गंधित है, नीम (निम्ब) तिक्त (कड़वा) है। सूंठ कडुय (तीखा) है, कविठ कसैला है, इमली खट्टी है, खांड (शक्कर) मधुर है, वज्र कर्कश (कठोर) है, नवनीत (मक्खन) मृदु (कोमल) है, लोह भारी है, उलु-कपत्र (बोरडी का पत्ता) हल्का है, हिम (बर्फ) ठण्डा है, अग्निकाय उष्ण है और तेल स्निग्ध (चिकना) है। किन्तु निश्चयनय से इन सब में पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श है।

विवेचन—व्यावहारिकनय लोक व्यवहार का अनुसरण करता है। इसलिये जिस वस्तु का लोकप्रसिद्ध जो वर्णादि होते हैं। वह उसी को मानता है। शेष वर्णादि की वह अपेक्षा करता है। निश्चयनय वस्तु में जितने वर्णादि है उन सबको मानता है।

·८५ पुद्गलों का अवस्थान अनियम से होता है

·१ × × × कधं पुग्गलाणमणियमेण अवट्ठाणं ? एग-बे-तिण्णि समयाइं काऊण उक्कस्सेण मेरुपव्वदादिसु अणादि-अपज्जवसिदसरुपेण संट्ठाणा-वट्ठाणुवलंभा × × ×।

—षट्० खण्ड १ । ९ । १ सू २७ । पु ६ । पृ० ४९

पुद्गलों का अवस्थान अनियत होता है। उनका अवस्थान एक-दो-तीन समय से लेकर उत्कर्षतः मेरूपर्वत आदि पुद्गलों में अनादि अनन्त स्वरूप एक ही आकार का अवस्थान पाया जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ परिणामी-जीव-मुत्तं, सपदेसं एय खेत्त-किरिया य।
णिच्चं कारण-कत्ता, सव्वगदमिदरहिं य पवेसे ॥१॥

दुण्णिय एयं एयं, पंच-त्तिय एय दुण्णि चउरो य।
पंच य एयं एयं, एदेसं एय उत्तरं णेयं ॥युग्मम् ॥२॥

—बृहद्० अधि २। गा १, २

पूर्वोक्त षट् द्रव्यों में से परिणामी द्रव्य जीव और पुद्गल ये दो हैं, चेतन द्रव्य एक जीव है, मूर्त्तिमान् एक पुद्गल है।

प्रदेश सहित जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म तथा आकाश—ये पांच द्रव्य हैं, एक संख्यावाले धर्म, अधर्म और आकाश—ये तीन द्रव्य हैं। क्षेत्रवान् एक आकाश द्रव्य है। क्रिया सहित जीव और पुद्गल—ये दो द्रव्य है, नित्य द्रव्य-धर्म, अधर्म, आकाश और काल—ये चार हैं। कारण द्रव्य-पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल—ये पांच हैं। कर्त्ता द्रव्य एक जीव है। सर्वगत (सर्व में व्यापनेवाला) द्रव्य एक आकाश है और ये छः द्रव्य प्रवेशरहित हैं अर्थात् एक द्रव्य में दूसरे द्रव्य का प्रवेश नहीं होता।

टीका—परिणामपरिणामिनो जीवपुद्गलौ स्वभावविभावपर्यायाभ्यां कृत्वा शेषचत्वारि द्रव्याणि विभावव्यंजनपर्यायाभावान्मुख्यवृत्त्या पुनरपरिणामीनीति।

स्वभाव तथा विभाव पर्यायों के परिणाम से परिणामी जीव और पुद्गल—ये दो द्रव्य है। और शेष चार द्रव्य अर्थात् धर्म, अधर्म, आकाश तथा काल—ये चार द्रव्य विभाव व्यंजन पर्याय के अभाव से मुख्यता से अपरिणामी हैं।

३· संठाणा संघादा वण्णरसप्फासगंधसद्दा य।
पोग्गलदव्वप्पभवा होंति गुणा पज्जया य बहू॥

—पंच० गा १३४

समचतुरस्र आदि छः संस्थान, औदारिक आदि पांच शरीरों के मिलापरूप स्कंध, पांच वर्ण, पांच रस, आठ स्पर्श, दो गध तथा सात शब्द पुद्गल द्रव्य से उत्पन्न बहुत से गुण तथा अवस्था विशेष है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन—इनमें वर्ण, गंध, रस, स्पर्श—ये पुद्गल द्रव्य के गुण हैं तथा संस्थान-संघातादि व शब्द के भेद या वर्णादि भेद पुद्गल द्रव्य की अनेक पर्याय है। अयोगी केवली के सिवाय अन्य जीव स्थूल शरीर सहित अवस्था में आहारक होते हैं।

·८६ जीव और कर्म द्रव्यवर्गणा के पुद्गल

जह पुग्गलदव्वाणं बहुप्पयारेहिं खंधणिव्वत्ती।
अकदा परेहिं दिट्ठा तह कम्माणं वियाणाहि॥

—पंच० श्लो० ६६

टीका—यथा हि स्वयोग्यचंद्रार्कप्रभोपलंभे संध्याभ्रेंद्रचापपरिवेष-प्रभृतिभिर्बहुभिः प्रकारैः पुद्गलस्कंधविकल्पाः कर्त्रंतरनिरपेक्षा एवोत्पद्यंते। तथा स्वयोग्यजीवपरिणामोपलंभे ज्ञानावरणप्रभृतिभिर्बहुभिः प्रकारैः कर्माण्यपि कर्त्रंतरनिपेक्षाण्येवोत्पद्यंते।

जिस प्रकार पुद्गल द्रव्यों के नाना प्रकार के भेदों से स्कंधों की परिणति देखी जाती है -- अन्य द्रव्यों के द्वारा स्कंधों की परिणति नहीं की जाती है वैसे ही कर्मों की विचित्रता के विषय में समझना चाहिए। अर्थात् जिस प्रकार चन्द्रमा या सूर्य की प्रभा का निमित्त पाकर संध्या के समय आकाश में अनेक वर्ण, बादल, इन्द्रधनुष, मंडलादिक नाना प्रकार के पुद्गल स्कंध अन्यतर बिना किये ही अपनी शक्ति से अनेक प्रकार होकर परिणमते हैं उसी प्रकार जीव द्रव्य के अशुद्ध चेतनात्मक भावों का निमित्त पाकर पुद्गल वर्गणायें अपनी ही शक्ति से ज्ञानावरणादि आठ प्रकार के कर्म रूप में परिणत होती है।

·८७ विस्रसा पुद्गल और दृष्टांत

विस्रसानिष्पन्नं त्वभ्रे-न्द्रधनुरादि। × × ×

—विशेभा० गा २६६७। टीका

अभ्र, इन्द्रधनुषादि—विस्रसानिष्पन्न द्रव्य है।

जं जाहे जं भावं परिणमइतयं तया तओऽणन्नं।
परिणइमेत्तविसिट्ठं दव्वं चिय जाणइ जिणिंदो॥

—विशेभा० गा २६६८

टीका—इह यद् घटे-न्द्रधनुरादि द्रव्यं यदा यस्मिन् काले यं रक्त-श्वेतादिभावं पर्यायं परिणमति प्राप्नोति तत् तदा ततः पर्यायादनन्यदभिन्नं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सद् द्रव्यमेव, परिणतिमात्रविशिष्टमविचलितस्वरूपं जानाति जिनेन्द्रः केवलीति। (ननु यदि पर्याया वस्तुसन्तो न भवन्ति, तर्हि कथमविशिष्टेऽपि सुवर्णादिद्रव्ये कुण्डलाऽङ्गुलीयक-नूपुरादयो व्यपदेशाः प्रवर्तन्ते × × ×।

जो द्रव्य जिसकाल में जिसभाव में परिणत होता है वह द्रव्य उस काल में उस पर्याय से अभिन्न होने से परिणतिमात्र विशिष्ट द्रव्य है।

जो घट-पट, इन्द्रधनुषादि द्रव्य जिस काल में श्वेतरक्तादि पर्याय रूप में परिणति को प्राप्त होते हैं उस समय में पर्याय से अभिन्न परिणति मात्र विशिष्ट अविचलित स्वरूप वाला ही द्रव्य है।

खन्धेसु दुप्पएसादिएसु अब्भेसु विज्जुमाईसु।
णिप्फणगाणि दव्वाणि जाण तं वीससाकरणं॥

—सूय० नि गा ८

द्विप्रदेशादि स्कंधों तथा विद्युत से युक्त मेघों में जो द्रव्य निष्पन्न होते हैं उसे विस्रसाकरण जानना चाहिए।

विस्रसा पुद्गल और वर्ण-गंध-रस-स्पर्श-संस्थान

× × × तत्र यद् यद् प्रयोग-विस्रसाद्रव्यं कार्तृ यान् यान् कृष्ण-रक्त-पीत-शुक्लत्वादीन् भावान् पर्यायान् परिणमति प्रतिपद्यते।

—विशेभा० गा २६६७। टीका

जो-जो द्रव्य श्वेत-रक्त-पीत आदि पर्याय रूप में परिणति को प्राप्त होता है वह द्रव्य-प्रयोग और विस्रसा रूप है।

पुद्गल स्वभाव

सुरूवा पोग्गला दुरूवत्ताए परिणमंति।
दुरुवा पोग्गला सुरूवत्ताए परिणमंति॥

—नाया० अ १। सू १२

सुरूप पुद्गल (सुन्दर वस्तुएं) कुरूपता में परिणत होते रहते हैं और असुन्दर वस्तुएं सुरूपता में।

१—दोय प्रदेशिक आदि दे, अनन्तप्रदेशिक खंध।
तेह तणो कारण प्रमुख, परमाणु कथियंद॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

२—परमाणु थी नीपजें, खंध सर्व जग मांय।
तिण सूं कारण खंध नो, परमाणु कहिवाय।

३—जिस कारण ह्वे खंध नो, परमाणु अवलोय।
(पिण) खंध नहीं कारण बणें, परमाणु री जोय॥

—झीणीचर्चा पृ० २५३

नोट—स्कंध परमाणु का कारण नहीं बनता, यह सापेक्ष कथन है। तत्त्वार्थ सूत्र में कहा गया है—'भेदादणु' स्कंध के टूटने से परमाणु बनता है। किन्तु जमाचार्य ने परमाणु को मूल सत्ता की दृष्टि से कहा है कि स्कंध परमाणु का कारण नहीं बनता है।

४—जिम घट नो कारण कह्यो, माटी नो पिंड जोय।
पिण घट जे मृत्पिंड नो, कारण नहिं छै कोय॥

५—जिम पट नो कारण कह्यो, जेह तांतवा जोय।
जिण पट जे तांतवा तणो, कारण नहिं छै कोय॥

—झीणी चर्चा २५३

·८८ पुद्गल और पाप-पुण्य

समचे पाप ते किसो भाव है, परिणामीक कथंहो।
छ में पुद्गल नव में त्रिण है, अजीव पाप अरुबंधो॥

द्रव्य पाप ने उदे न आयो, भाव परिणामी थायो।
छ में पुद्गल नव में अजीव बंध, नयवच कहिये पापो॥

भाव पाप एक परिणामी है, छ में पुद्गल ताह्यो।
नव में अजीव पाप कहीजें ताह्यो, नय वचने बंध कहायो॥

—झीणीचर्चा ढाल २। गा २३, २५, २६

समुच्चय दृष्टि से अजीव परिणामिक भाव है। छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में अजीव, पाप तथा बंध है।

द्रव्य पाप—अजीव पारिणामिक भाव है। छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में अजीव तथा बंध है। नय दृष्टि से उसे पाप भी कहा जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव पाप अजीव पारिणामिक भाव है। छः द्रव्यों में पुद्गल है। नव पदार्थों में अजीव व पाप है। नय दृष्टि से बंध भी है।

पुद्गल और पुण्य

समचै पुण्य ते कियो भाव है, इक परिणामिकथंहो।
छ में पुद्गल नव में त्रिण है, अजीव पुण्य नें बंधो॥

द्रव्य पुण्य ते उदै न आयो, भाव परिणामी भणियो।
छ में पुद्गल नव में अजीव बंध, नय वचने पुण्य गिणियो॥

भाव पुण्य ते उदय आवियो, भाव एक परिणामी।
छ में पुद्गल नव में अजीव पुण्य, नय वचने बंध धामी॥

—झीणीचर्चा ढाण १०। गा १७, १९, २१

समुच्चय की दृष्टि से पुण्य अजीव पारिणामिक भाव होता है। वह छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में इसका समवतार तीन पदार्थों—अजीव, पुण्य व बंध होता है।

द्रव्य पुण्य—जो उदयगत नहीं है। अजीव पारिणामिक भाव है। वह छः द्रव्य में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में उसका समवतार दो पदार्थों—अजीव तथा बंध में होता है।

भाव पुण्य—अजीव पारिणामिक भाव है। छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में अजीव व पुण्य है। नय दृष्टि से (कार्य में कारण का उपचार होने से) बंध कहा जाता है।

पुद्गल

११—समचै पुद्गल किसो भाव है? परिणामिक इक परखो।
छ द्रव्य मांही पुद्गल कहिये, नव में च्यार सुनिरखो॥

१२—नां सावद्य नां निरवद, उजल करणी लेखे ताह्यो।
असासतो नें कह्यो सासतो, द्रव्य भाव अपेक्षायो॥

१३—द्रव्य पुद्गले ते किसो भाव है? परिणामिक संपेखो।
छ द्रव्य मांही पुद्गल कहिये, नव में अजीव छै एको॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४—ना सावद्य वलि निरवद, अजल करणी लेखे नांही।
त्रिहु काल में कह्यो सासतो, द्रव्य मिटे नहि कांई॥

१५—भावे पुद्गल किसो भाव है? परिणामीक लहीजे।
छ द्रव्य मांही पुद्गल इक छै, नव में च्यार कहीजे॥

१६—ना सावद्य नां निरवद, अजल करणी लेखेजाणो।
असासतो त्रिहुं काल अपेक्षा, न्याय विचारं नाणी॥

—झीणीचर्चा पृ० १०१, १०२

समुच्चयकी दृष्टि से पुदगल किस भाव में होता है। वह एक पारिणामिक भाव में होता है। वह छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में उसका समवतार चार पदार्थों—अजीव, पुण्य, पाप और बंध में होता है।

पुद्गल—विशुद्धि और करनी दोनों ही दृष्टियों से सावद्य-निरवद्य दोनों नहीं है। वह द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत और भाव की अपेक्षा अशाश्वत है।

द्रव्य पुद्गल किस भाव में होता है। वह अजीव पारिणामिक भाव में होता है। वह छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में उसका समवतार केवल अजीव पदार्थ में होता है।

द्रव्य पुद्गल विशुद्धि और करनी दोनों ही दृष्टियों में सावद्य-निरवद्य दोनों नहीं है। द्रव्य का कभी विनाश नहीं होता। इस दृष्टि से वह तीनों कालों में शाश्वत है।

भाव पुद्गल अजीव पारिणामिक भाव है। छः द्रव्यों में पुद्गल द्रव्य है। नव पदार्थों में—अजीव, पुण्य, पाप और बंध होता है।

भाव पुद्गल विशुद्धि और करनी दोनों ही दृष्टियों से सावद्य-निरवद्य दोनों नहीं है। वह तीनों कालों में अशाश्वत है।

·८९ परमाणु-स्कंध

द्व्यादिप्रदेशवन्तो यावदनन्तप्रदेशिकाः स्कंधाः।
परमाणुरप्रदेशो वर्णादिगुणेषु भजनीयः॥२०८॥

—प्रशमरति० प्रक० ९। गा २०८

दो प्रदेशी से अनंतप्रदेशी वाला पुद्गल स्कंध होता है। परमाणु अप्रदेशी है। वर्णादि गुणों से जान लेना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·९० पुद्गल-रूपी है

धर्माधर्माकाशानि पुद्गलाः काल एव चाजीवाः।
पुद्गलवर्जमरूपं तु रूपिणः पुद्गलाः प्रोक्ताः॥

—प्रशमरति० प्रक० ९। गा २०७

धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल और काल—ये अजीव के पांच प्रकार है। जिसमें पुद्गल रूपी है बाकी चार अरूपी है।

·९१ पुद्गल और भाव

उदयपरिणामिरूपं तु सर्वभावानुगा जीवाः।

—प्रशमरति० प्रक० ९। गा २०९ उत्तरार्ध

रूप अर्थात् पुद्गलास्तिकाय में उदय-परिणामी दो भाव होते हैं। जीव द्रव्य में सर्वभाव है।

वह पुद्गलास्तिकाय जो दृश्य जगत्।

—श्रासं० पूर्वार्ध० गा ३०

जो दृश्यजगत् अणु व स्कंध रूप है वह पुद्गलास्तिकाय है।

·९२ स्कंध पुद्गल व उपग्रह

कर्मशरीरमनोवाग्विचेष्टितोच्छ्वासदुःखसुखदाः स्युः।
जीवितमरणोपग्रहकराश्च संसारिणः स्कंधाः॥२१७॥

—प्रशम० प्रक० ९ गा २१७

कर्म, शरीर, मन-वचन, काययोग, श्वासोच्छ्वास, दुःख, सुख, जीवतर (आयुष्य) और मरण—इन संसारिक उपकार का कर्त्ता स्कंध पुद्गल है।

·९३ किस प्रकार के कर्म द्रव्य वर्गणा के पुद्गलों का भेदन होता है

नेरइया णं भंते ! कइविहा पोग्गला भिज्जंति ? गोयमा ! कम्मदव्व-वग्गणमहिकिच्च दुविहा पोग्गला भिज्जंति, तंजहा—अणू चेव बादरा चेव।

—भग० श १। उ १। सू १९। पृ० ७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारकी जीव कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का भेदन करते हैं अर्थात् उनको तीव्र-मध्य-मंद रस वाला करते हैं। कर्मद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा जो भेदन होता है वह अणु (सूक्ष्म) तथा बादर (स्थूल) दो प्रकार के पुद्गलों का होता है। यह सूक्ष्मत्व तथा स्थूलत्व कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का पारस्परिक तुलना की अपेक्षा है अन्यथा कर्म द्रव्यवर्गणा के पुद्गल तो औदारिकादि द्रव्यवर्गणाओं से सूक्ष्म हैं।

नारकी जीव की तरह दंडक के अन्य जीव भी अणु तथा बादर कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का भेदन करते हैं।

·१ किस प्रकार के आहारद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों को एकत्रित करते हैं

नेरइया णं भंते ! कइविहा पोग्गला चिज्जंति ? गोयमा ! आहार-दव्ववग्गणमहिकिच्च दुविहा पोग्गला चिज्जंति, तंजहा—अणुं चेव बादरा चेव।

एवं उवचिज्जंति।

—भग० श १। उ १। सू २०, २१। पृ० ७

नारकी जीव आहारद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा दो प्रकार के पुद्गलों को एकत्रित करते हैं—यथा—सूक्ष्म तथा बादर।

२· किस प्रकार के कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का उदीरण-वेदन-निर्जीर्ण होता है

नेरइयाणं भंते ! कइविहे पोग्गले उदीरेंति ? गोयमा ! कम्मदव्व-वग्गणमहिकिच्च दुविहे पोग्गले उदीरेंति, तंजहा—अणू चेव बादरा चेव। सेसावि एवं चेव भाणियव्वा-वेदेंति णिज्जरेंति।

—भग० श १। उ २। सू २२। पृ० ७

नारकी जीव कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का उदीरण करते हैं वह अणु (सूक्ष्म) तथा बादर (स्थूल) दो प्रकार के पुद्गलों का होता है।

नारकी जीव की तरह दंडक के अन्य जीव भी अणु तथा बादर कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का उदीरण करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ किस प्रकार के कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का अपवर्तन-उद्वर्तन-संक्रमण-निधत्तन-निकाचन होता है

[नेरइयाणं भंते ! कइविहा पोग्गला] उव्वट्टिंसु उव्वट्टंति उव्वट्टिस्संति। संकामिंसु, संकामेंति, संकामिस्संति। णिहत्तिंसु णिहत्तेंति णिहत्तिस्संति। णिकायिंसु णिकायिंति, णिकायिस्संति। सव्वेसु वि कम्मदव्ववग्गणमहिकिच्च। [दुविहे पोग्गले, तंजहा—अणू चेव बायरा चेव]।

—भग० श १। उ १। सू २४। पृ० ७

नारकी कर्मद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा अणु (सूक्ष्म) तथा बादर (स्थूल) दो प्रकार के पुद्गलों का अपवर्तन, (उद्वर्तन), संक्रमण, निधत्तन तथा निकाचन किया है, करता है, करेगा।

नारकी जीव की तरह दंडक के अन्य जीव भी अणु तथा बादर कर्मद्रव्यवर्गणा के पुद्गलों का अपवर्तन, (उद्वर्तन), संक्रमण, निधत्तन तथा निकाचन किया है, करता है, करेगा।

× × × तहा भाणियव्वा सव्वजीवाणं ॥३२॥

—भग० श १। उ १। सू ३२। पृ० ९

नारकी की तरह सब जीव दंडकों के विषय में कहना।

·९४ पुद्गल और अचित्त वायुकाय

पंचविधा अचित्ता वाउकाइया पन्नत्ता, तंजहा—अक्कंते धंते पीलिए सरीराणुगते संमुच्छिमे।

—ठाण० स्था ५। सू ४४४

टीका—आक्रान्ते पादादिना भूतवादो यो भवति स आक्रान्तो यस्तु ध्माते इत्यादौ स ध्मातः णदार्द्र वस्त्रे निष्पीड्यमाने पीडित उद्गारोच्छ्वासादिः शरीरानुगतः, व्यंजनादिजन्यः सम्मूर्च्छिमः।

टीका—एते च पूर्वकचेतनास्ततः सचेतना अपि भवतेति।

अचित्त वायु काय पांच प्रकार का होता है—

१—आक्रान्त—पैरों को पीट-पीट कर चलने से उत्पन्न हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२—ध्यात—धौंकनी से उत्पन्न वायु।

३—पीडित—गीले कपड़ों के निचोड़ने आदि से उत्पन्न वायु।

४—शरीरानुगत—प्रकार, उच्छ्वासादि।

५—संमूर्च्छिम—पंखा झलने आदि से उत्पन्न वायु।

नोट—पांच प्रकार के वायु उत्पत्ति काल में अचेतन होती है और परिणामान्तर होने पर सचेतन भी हो सकती है।

भेदः षोढोत्करचूर्णखंडचूर्णिकाप्रतराणुचटनविकल्पात्॥ १८ भेदः षोढा भिद्यते। कुतः उत्करादिविकल्पात्। तत्रोत्करः काष्ठादीनां करपत्रादिभिरुत्करणं। चूर्णो-यवकोधूमादीनां सक्तुकणिकादिः। खण्डो-घटादीनां कपालशर्करादिः। चूर्णिका—माषमुद्गादादीनां। प्रतरोऽभ्रपटलादीनां। अणुचटनं तप्ताय: पिंडादिष्वयोघनादिभिरभिहन्य मानेषु स्फुलिंग-निर्गमः।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २४। टीका

भेद छः प्रकार का है—(१) उत्कर, (२) चूर्ण, (३) खण्ड, (४) चूर्णिका, (५) प्रतर और (६) अनुतटिका।

·१५ अजीव परिणाम-पुद्गल परिणाम

·१ भेद परिणाम

(क) (अजीवपरिणामे णं भंते) दसविहे पन्नत्ते, तंजहा × × × भेय-परिणामे × × ×। भेद परिणामे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—खंडाभेयपरिणामे जाव उक्करिया भेदपरिणामे।

—पण्ण० पद १३ सू ४१८

भेद परिणाम के पांच भेद है—

१—उत्करिका, २—चूर्णिका ३—प्रतर ४—अनुतटिका और ५ खण्ड।

(ख) (दसविधे अजीव परिणामे) भेदपरिणामे

टीका—भेदपरिणामः पञ्चधा, तत्र खण्डभेदः, क्षिप्तमृत्पिण्डस्येव १ प्रतरभेदोऽभ्रपटलस्येव २ अनुतटभेदो वंशस्येव ३ चूर्णभेदः चूर्णनं ४ उत्करिका भेदः समुत्कीर्यमाणप्रस्थकस्येवेति।

—ठाण० स्था १० सू ७१३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ग) विश्लेषः भेदः। स च पञ्चधा—

१—उत्करः—मुद्गशमीभेदवत्

२—चूर्णः—गोधूमचूर्णवत्

३—खण्डः—लोहखण्डवत्

४—प्रतरः—अभ्रपटलभेदवत्

५—अनुतटिका—तटाकरेखावत्

—जैसिदी० प्र १। सू १५। टीका

पुद्गल परिणाम का—अजीव परिणाम के दश भेदों में एक परिणाम भेद परिणाम है।

भेद का अर्थ है—विश्लेष। वह पांच प्रकार का होता है।

१—उत्कर—जैसे—मूंग की फली का टूटना।

२—चूर्ण—जैसे—गेहूँ आदि का आटा।

३—खण्ड—जैसे—लोहे के टुकड़े, घड़े के टुकड़े।

४—प्रतर—जैसे—अभ्रक के दल।

५—अनुतटिका—जैसे—तालाब की दरारें।

भेद परिणाम पांच प्रकार का है—

१—खण्ड भेद—मिट्टी की दरार।

२—प्रतर भेद—जैसे—अभ्रपटल के प्रतर।

३—चूर्ण भेद—चूर्ण—जैसे—आटा।

४—अनुतट भेद—बांस या ईक्षु को छीलना।

५—उत्करिका भेद—काठ आदि का उत्किरण।

तत्वार्थवार्तिक में इसके छः भेद निर्दिष्ट है। उसमें इन पांच के अतिरिक्त एक चूर्णिका को और माना है। चूर्ण और चूर्णिका का अर्थ इस प्रकार किया है।

१—चूर्ण—जौ, गेहूँ आदि में होने वाली कणिका।

२—चूर्णिका—उड़द, मूंग आदि का आटा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·२ अगुरुलघुपरिणाम

दसविधे अजीवपरिणामे × × × अगुरुलहुपरिणामे ।

—ठाण० स्था १० । सू ७१३

—पण्ण० पद १३ सू ४१८

ठाण० टीका—न गुरुकमधोगमनस्वभावं न लघुकमूर्ध्वगमनस्वभाव यद्द्रव्यं तदगुरुकलघुकं-अत्यन्तसूक्ष्मं भाषामनः कर्मद्रव्यादि तदेव परिणामः परिणामतद्वतोरभेदात् अगुरुलघुकपरिणामः एतद्ग्रहणे नेतद्विपक्षोऽपि गृहीतो द्रष्टव्यः, तत्र गुरुकं च विवक्षया लघुकंच विपक्षयैव यद् द्रव्यं तद्गुरु-लघुकं औदारिकादि स्थूलतरमित्यर्थः, इदमुक्तस्वरूपं द्विविधं वस्तु निश्चय-नयमतेन व्यवहारतस्तु चतुर्द्धा, तत्र गुरुकं-अधोगमनस्वभावं वज्रादि लघुकं-ऊर्ध्वगमनस्वभावं धूमादि गुरुलघुकं-तिर्यग्गामि वायुज्योतिष्कविमानादि अगुरुलघुकं-आकाशादिति, आह च भाष्यकारः ।

निच्छयओ सव्वगुरू सव्वलहुं वा न विज्जई दव्वं ।
बायरमिह गुरुलहुयं अगुरुलहु सेसयं दव्वं ॥१॥
गुरुयं लहुयं उभयं णोभयमिति वावहारियनयस्सा ।
दव्वं लेट्ठू १ दीवो २ वाऊ ३ वोमं ४ जहासंखं ॥२॥

इति निश्चयतः सर्वगुरु सर्वलघु वा द्रव्यं न ।
विद्यते बादर इह गुरुलघुकं शेषं द्रव्यमगुरुलघुकं ॥

अजीव परिणाम-पुद्गल परिणाम के दश भेदो में एक भेद अगुरुलघु परिणाम है । जिसका नीचे जाने का व ऊर्ध्व गमन करने का भी स्वभाव नहीं है—वह अगुरु-लघु परिणाम है । वह सूक्ष्म है—भाषा, मन, कर्म द्रव्यादि अगुरुलघु परिणाम है । गुरुत्व व लघुत्व के विपरीत अगुरुलघु परिणाम है । निश्चयनय से दो प्रकार की वस्तु है—यथा—गुरुलघु और अगुरुलघु लेकिन व्यवहार से चार प्रकार की है ।

१—गुरु—अधोगमन जिसका स्वभाव है—जैसे —वज्रादि ।
२—लघु—जिसका ऊर्ध्वगमन स्वभाव है—वह लघु है—जैसे—धूमादि ।
३—गुरुलघु—तिर्यग् गमन करने वाली वायु तथा ज्योतिष्क विमानादि ।

४—अगुरुलघु—आकाशादि । (परमाणु आदि) भाष्यकार ने कहा है—निश्चयनय से बादर गुरुलघु है—शेष द्रव्य अगुरुलघु है । व्यवहार नय से चारों प्रकार के द्रव्य है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·३ संस्थान

आकृति-संस्थानम्, इत्थंस्थम् अनित्थंस्थम्।

—जैनसिद्दी० प्र १। सू १५

संस्थानं द्विधेत्थं लक्षणं × × ×। अनित्यलक्षणं च।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २४

तच्च नियताकार इत्थंस्थम्। अनियताकार अनित्थंस्थम्।

—जैनसिद्दी० प्र २। सू १२ की टीका

आकृति को संस्थान कहते हैं। वह संस्थान दो प्रकार का होता है—इत्थंस्थ और अनित्थंस्थ। अकलंकदेव ने तत्त्वार्थ राजवार्तिक में इन्हीं दो शब्दों को इत्थं और अनित्थं संज्ञा से अभिहित किया है। नियत आकार वाले पुद्गलों से इत्यंस्थ कहा जाता है। अनियत आकार वाले पुद्गलों को अनित्थंस्थ कहा जाता है।

वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रायतनपरिमंडलादित्थम्।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २४

जैसे—त्रिकोण, आयतन, परिमंडल आदि। इनके अतिरिक्त जो अनियत आकार है उन्हें अनित्थंस्थ कहा जाता है, जैसे बादल आदि की आकृतियां।

पुद्गल का संस्थान

अथाजीवपरिगृहीतं वृत्त-त्र्यस्र-चतुरस्रायतनपरिमण्डलभेदात्।

—तत्त्व० अ ५। सू २४। भाष्य टीका

संस्थान के पांच भेद हैं—परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत।

पुद्गलों के संस्थान

आकृतिः संस्थानम्, इत्थंस्थम्, अनित्थंस्थम्।
संस्थानं द्विधेत्थं लक्षणं अनित्थलक्षणं च॥

—तत्त्वराज० अ ५। सू २४

तच्च चतुरस्रादिकं इत्थंस्थम्।

—जैनसिद्दी० प्र १। सू १२ की टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् आकृति को संस्थान कहते हैं। वह संस्थान दो प्रकार का होता है—इत्थंस्थ और अनित्थंस्थ। नियत आकार वाले पुद्गल को इत्थंस्थ कहा जाता है। यद्यपि अकलंकदेव ने इन्हीं दो शब्दों को इत्थं और अनित्थं संज्ञा से अभिहित किया है।

संस्थानपरिणाय: परिमंडलवृत्तत्र्यस्र चतुरस्रायतभेदात् पंचविधः।

—ठाण० स्था १० । सू ७१३ । टीका

वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रायतनपरिमण्डलादित्थम्।

—तत्त्वराज० अ ५ । सू २४

वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण, आयतन, परिमंडल, आदि को इत्थंस्थ आकार कहते हैं।

इसके अतिरिक्त जो अनियत आकार है उन्हें अनित्थंस्थ कहा जाता है (अनियताकारं अनित्थंस्थाम्—जैनसिदी० १ । १२ का टीका)।

संस्थान के भेद

सत्त संठाणा, पन्नत्ता, तंजहा—दीहे रहस्से, वट्टे, तंसे, चउरंसे विहुले परिमंडले।

—ठाण० स्था ७ । उ २ । सू ५४८

आकार विशेष को संस्थान कहते हैं। इसके सात भेद हैं—(१) दीर्घ, (२) ह्रस्व, (३) वृत्त, (४) त्र्यस्र, (५) चतुरस्र, (६) पृथुल और (७) परिमंडल।

१—दीर्घ बहुत लम्बे संस्थान को दीर्घ संस्थान कहते हैं।

२—ह्रस्व—दीर्घ संस्थान से विपरीत अर्थात् छोटे संस्थान को ह्रस्व कहते हैं।

३—पृथुल—फैले हुए संस्थान को पृथुल संस्थान कहते हैं। शेष का अर्थ सरल है।

संस्थान के भेद

कति णं भंते! संठाणा पण्णत्ता, गोयमा! छ संठाणा पण्णत्ता-तं जहा—१ परिमंडले, २ वट्टे, ३ तंसे, ४ चउरंसे, ५ आयते, ६ अणित्थंथे।

—भग० श २५ । उ ३ । सू ३३

संस्थान के छः प्रकार है—यथा—परिमंडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र, आयत और अनित्थंस्थ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कइ णं भंते ! संठाणा पण्णत्ता ? गोयमा ! पंच संठाणा पण्णत्ता, तंजहा—परिमंडले जाव आयते ।

—भग० श २५ । उ ३ । सू ३७

(पुद्गल) संस्थान के पांच प्रकार है—यथा—परिमंडल वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत ।

संस्थान

कइ णं भंते ! संठाणा पन्नत्ता । गोयमा ! पंच संठाणा पन्नत्ता, तंजहा—परिमंडले, वट्टे, तंसे, चउरंसे, आयए य ।

—पण्ण० प १० । सू ३६६

संस्थान के पांच प्रकार है, यथा—(१) परिमंडल, (२) वृत्त, (३) त्र्यस्र, (४) चतुरस्र और (५) आयत ।

संस्थान की संख्या

परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा ? असंखेज्जा ? अणंता ? गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता ?

वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा० ? एवं चेव, एवं जाव आयता ।

—भग० श २५ । उ ३ । सू ६, ७

परिमंडल संस्थान संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है, अनंत है । इसी प्रकार वृत्त यावत् आयत संस्थान—संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है, अनंत है ।

द्रव्यतः संख्या

परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ? गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता । एवं जाव आयया ।

—पण्ण० प १० । सू ३६७

परिमंडल संस्थान संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है परन्तु अनंत हैं । इसी प्रकार वृत्त आदि सभी संस्थान के विषय में जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेश संख्या

परिमंडले णं भंते ! संठाणे किं संखेज्जपएसिए, असंखेज्जपएसिए, अणंतपएसिए ? गोयमा ! सिए संखेज्जपएसिए, सिए असंखेज्जपएसिए, सिए अणंतपएसिए। एवं जाव आयए।

—पण्ण० प १० । सू ३६८

परिमंडल संस्थान कदाचित् संख्यातप्रदेशी, कदाचित् असंख्यातप्रदेशी, कदाचित् अनंतप्रदेशी है। इसी प्रकार वृत्त आदि चारों संस्थान के विषय में जानना चाहिए।

संस्थान की संख्या

द्रव्य की अपेक्षा

प्रदेश की अपेक्षा

परिमंडला णं भंते ! संठाणा दव्वट्ठयाए किं संखेज्जा ? असंखेज्जा ? अणंता ? गोयमा णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता।

वट्टाणं भंते ! संठाणा० ? एवं चेव, एवं जाव अणित्थंथा, एवं पएसट्ठयाए वि, एवं दव्वट्ठपएसट्ठयाए वि।

—भग० श २५ । उ ३ । सू ३४, ३५

परिमंडल संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात नहीं है, असंख्यात नहीं है, अनंत है।

वृत्त संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात नहीं हैं, असंख्यात नहीं है, अनंत हैं। इसी प्रकार त्र्यस्र, चतुरस्र, आयत तथा अनित्थंस्थ संस्थान के विषय में जानना चाहिए।

इसी प्रकार संस्थान की पृच्छा में प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ रूप में जानना चाहिए। अर्थात् संख्यात व असंख्यात नहीं है, अनंत हैं।

नोट—आकार को संस्थान कहते हैं। यहाँ पुद्गल अजीव के छः संस्थान कहे गये हैं, यथा—

१—परिमंडल—चूड़ी जैसा गोल आकार।

२—वृत्त—कुम्भकार के चक्र जैसा गोल आकार।

३—त्र्यस्र—सिंघाड़े जैसा त्रिकोण आकार।

४—चतुरस्र—बाजोट जैसा चतुष्कोण आकार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५—आयत—लकड़ी जैसा लम्बा आकार।

६—अनित्थंस्थ—अनियत आकार अर्थात् परिमंडल आदि से भिन्न विचित्र प्रकार का आकार।

नोट—जो संस्थान जिस संस्थान की अपेक्षा बहुप्रदेशावगाही होता है, वह स्वाभाविक रूप से थोड़ा होता है। परिमंडल संस्थान जघन्य बीस प्रदेशावगाही होता है और वृत्त, चतुरस्र, त्र्यस्र और आयत संस्थान जघन्य से अनुक्रमशः पांच, चार, तीन और दो प्रदेशावगाही होता है। अतः परिमंडल संस्थान बहुप्रदेशावगाही होने से सबसे थोड़े हैं। उससे वृत्त आदि संस्थान अल्पः अल्पप्रदेशावगाही होने के कारण संख्यातगुण अधिक-अधिक होते हैं। अनित्थंस्थ संस्थान वाले पदार्थ, परिमंडल आदि द्वयादि संयोग वाले होने से उनसे बहुत अधिक होते हैं। इसलिए यह उन सबसे असंख्यातगुण अधिक है।

प्रदेश की अपेक्षा अल्पबहुत्व इसी प्रकार है। क्योंकि प्रदेश द्रव्यों के अनुसार होते हैं और इसी प्रकार द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ रूप से भी अल्पबहुत्व जानना चाहिए। किन्तु द्रव्यार्थ रूप से अनित्थस्थ संस्थान से परिमंडल प्रदेशार्थ रूप से असंख्यातगुण है।

·४ पुद्गल की अपेक्षा जीव के भेद

जीवच्चेव × × × सपोग्गला चेव अपोग्गला चेव।

—ठाण० स्था २। उ १। सू ५७

टीका—सपुद्गलाः कर्म्मादिपुद्गलवन्तो जीवाः, अपुद्गलाः-सिद्धाः।

जीव के दो भेद हैं—(१) सपुद्गला-कर्म्मादिपुद्गल सहित अर्थात् संसारी जीव और (२) अपुद्गला-सिद्धजीव।

नोट—जीव-जीवास्तिकाय के अभिवचन में एक नाम 'पोग्गले' है अर्थात् पुद्गल है। (भग० २० उ २। सू १७)

·५ पुद्गल द्रव्य का कार्य

स्पर्शरसवर्णगन्धा, शब्दो, बन्धोऽथ सूक्ष्मता, स्थौल्यम्।
संस्थान भेदतमश्छायोद्योतातपश्चेति ॥२१६॥

—प्रशमरति० प्रक० ९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्श, रस, वर्ण, गन्ध, शब्द, बन्ध, सूक्ष्मता, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तम, छाया, उद्योत व आताप—ये पुद्गल द्रव्य के कार्य अर्थात् पर्याय हैं।

नोट—स्पर्श-रस-वर्ण-गंध—ये चार पुद्गल के मूलभूत गुण है।

नोट—संस्थान इत्थंलक्षण और अनित्थंलक्षण के भेद से दो प्रकार का है। जिस आकार का वह इस तरह का—इस प्रकार से निर्देश किया जा सके वह इत्थंलक्षण संस्थान है। गोल, त्रिकोण, चतुष्कोण, आयत, परिमंडल इत्यादि संस्थानों के आकारों का निर्देश करना संभव है। इसलिये यह इत्थंलक्षण संस्थान है और मेघादि संस्थानों का इस प्रकार का है—यह बतलाना संभव नहीं अतः वह अनित्थंलक्षण संस्थान है।

छव्विह संठाणं बहु विहि देहेहि पूरदित्ति गलदित्ति पोग्गलो।

—धवला ग्रन्थ

वर्णगन्धरसस्पर्शः पूरणगलनं च यत्।
कुर्वन्ति स्कन्धवत्तस्माद् पुद्गलाः परमाणवः॥

—हरिवंश पुराण सर्ग ७

पूरणाद् गलनाच्च पुद्गलाः।

—तत्त्व० अ ५। सू १। सिद्ध टीका

स्पर्शरसगंधवर्णवान् पुद्गलः।

—जैनसिद्धां० प्र १। सू १४

गलन-मिलन स्वभाव के कारण पदार्थ को पुद्गल बताया गया है। स्पर्श, रस, वर्ण, स्वभाव वाला द्रव्य-पुद्गल है।

परमाणु पुद्गल का संस्थान नहीं होता है क्योंकि वह नियम से आकाश के एक प्रदेश को अवगाहित कर रहता है। जब पुद्गल स्कंध आकाश के एक प्रदेश को अवगाहित कर रहता है तब भी उसका संस्थान नहीं होता है। जब पुद्गल स्कंध आकाश के दो प्रदेश यावत् असंख्यात प्रदेश को अवगाहित कर रहता है तब पुद्गल का संस्थान बन जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·६ पुद्गल के लक्षण के विषय में कहा है

सद्दंधयार-उज्जोओ, पहा छायाऽऽतवोति वा।
वण्ण-रस-गंध-फासा-पोग्गलाणं तु लक्खणं ।।

—उत्त० अ २८ । गा १२

शब्द, अंधकार, उद्योत, प्रभा, छाया, आतप, वर्ण-गंध-रस-स्पर्श—ये पुद्गल के लक्षण हैं। अर्थात् इनके द्वारा पुद्गल द्रव्य पहचाना जाता है।

पुद्गल के गुण

पोग्गलु होइ पंच-गुण-वंतउ।
सद्दें गंधें रूवें फासें रसें।।

—वीरजि० संधि १२ । कड ९

पुद्गल द्रव्य पाँच गुणों से युक्त है—शब्द, गंध, रूप, स्पर्श और रस।

गंधु वण्णु रसु फासु स-सद्दउ।

—वीरजि० संधि १२ । कड १०

पुद्गल द्रव्य, गंध, वर्ण, रस, स्पर्श और शब्द—ये पंचगुणात्मक है।

वण्णाइयहिं रसेहिं अणेयहिं।
परिणमंति संजोय-विओयहिं ।।

—वीरजि० संधि १२ । कड १०

यह पुद्गल द्रव्य अनेक वर्णों, अनेक रसों आदि रूप परिणमन करता है और उसका संयोग अर्थात् जोड़ और वियोग अर्थात् विभाजन भी होता है।

·७ शब्द परिणाम

(अजीवपरिणामे) सद्दपरिणामे।

—ठाण० स्था १० । सू ७१३

टीका—शब्दपरिणामः शुभाशुभभेदाद्विद्वधेति।

(पुद्गल) अजीव के दस भेदों में एक शब्द परिणाम है, वह दो प्रकार का है—शुभ शब्द और अशुभ शब्द।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·७ शब्द

संहन्यमानानां भिद्यमानानां च पुद्गलानां ध्वनिरूपः परिणामः शब्दः। प्रायोगिको वैस्रसिकश्च। प्रयत्नजन्यः प्रायोगिकः-भाषात्मकोऽभाषात्मको वा। स्वभावजन्यो वैस्रसिकः-मेघादिप्रभवः।

अथवा जीवाजीवमिश्रभेदादय त्रेधा।

मूर्त्तोऽयं नहि अमूर्त्तस्य आकाशस्य गुणो भवति श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वात् न च श्रोत्रन्द्रियममूर्त्तं गृह्णाति इति।

—जैनसिदी० प्र १। सू १५ टीका

पुद्गलों का संघात और भेद होने से जो ध्वनि रूप परिणमन होता है, उसे शब्द कहते हैं। वह दो प्रकार का है—प्रायोगिक और वैस्रसिक। किसी प्रयत्न के द्वारा होने वाला शब्द प्रायोगिक है। वह दो प्रकार का है—भाषात्मक और आभाषात्मक। स्वभाव जन्य शब्द को वैस्रसिक कहते हैं, जैसे—मेघ का शब्द।

प्रकारान्तर से शब्द के तीन भेद किए जाते हैं—जैसे—जीव शब्द, अजीव शब्द और मिश्र शब्द।

शब्द अमूर्त—आकाश का गुण नहीं हो सकता, क्योंकि इसे श्रोत्रेन्द्रिय के द्वारा ग्रहण किया जाता है। श्रोत्रेन्द्रिय के द्वारा अमूर्त विषय का ग्रहण नहीं हो सकता। इससे यह सिद्ध होता है कि शब्द मूर्त है। मूर्त द्रव्य अमूर्त आकाश का गुण नहीं हो सकता।

शब्दो द्विविधः भाषालक्षणो विपरीतश्चेति। भाषालक्षणो द्विविधः साक्षरोऽनक्षरश्चेति। अक्षरीकृतः शास्त्राभिव्यञ्जकः संस्कृतविपरीतभेदादार्यम्लेच्छव्यवहारहेतुः। अनक्षरात्मको द्वीन्द्रियदीनामतिशयज्ञानस्वरूपप्रतिपादनहेतुः। स एष सर्वः प्रायोगिकः। अभाषात्मको द्विविधः प्रायोगिको वैस्रसिकश्चेति। वैस्रसिको वलाहकादिप्रभवः। प्रायोगिकश्चतुर्धा, ततविततधनसौषिरभेदात्।

—सर्वार्थसिद्धि अ ५। सू २४। टीका

भाषा रूप शब्द और अभाषा रूप शब्द—इस प्रकार शब्दों के दो भेद हैं। भाषात्मक शब्द दो प्रकार का है—साक्षर व अनक्षर। जिसमें शास्त्र रचे जाते हैं और जिसमें आर्य और म्लेच्छों का व्यवहार चलता है और ऐसे संस्कृत शब्द और इससे विपरीत शब्द ये सब साक्षर शब्द है। जिससे उनके सातिशय ज्ञान के स्वरूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का पता चलता है ऐसे दो इन्द्रिय आदि जीवों के शब्द अनक्षरात्मक शब्द है। ये दोनों प्रकार के शब्द प्रायोगिक है। अभाषात्मक शब्द दो प्रकार के हैं—प्रायोगिक और वैस्रसिक। मेघ आदि के निमित्त से जो शब्द उत्पन्न होते हैं वे वैस्रसिक शब्द है। तथा तत, वितत, घन और सौषिक के भेद से प्रायोगिक शब्द चार प्रकार के हैं।

१—तत्र चर्मतननिमित्तः पुष्करभेरी दुर्दरादिप्रभवस्ततः।

—सर्वा० अ ५। सू २४

२—तन्त्रीकृतवीणासुघोषादिसमुद्भवोविततः।

—सर्वा० अ ५। २४

३—तालघंटालालनाद्यभिघातजो घनः।

—सर्वा० अ ५। सू २४

४—वंशशंखादिनिमित्तः सौषिरः।

—सर्वा० अ ५। सू २४

वह चार प्रकार का है—तत, वितत घन और सुषिर

१—तत—तबला, पुष्कर, भेदी, दुर्दर आदि शब्द।
२—वितत—वीणा आदि का शब्द।
३—घन—ताल, घण्टा, लालन आदि का शब्द।
४—सुषिर—शंख, बांसुरी आदि का शब्द।

स्वभाव जन्यो वैस्रसिकः-मेघादिप्रभवः।

—जैनसिद्धी० प्र १ सू १५

मेधादि जन्य स्वाभाविक शब्द को वैस्रसिक कहते हैं।

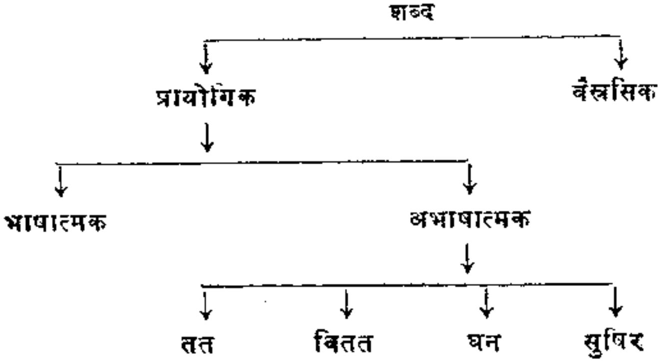

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउव्विहे वज्जे पण्णत्ते, तंजहा—तते, वितते, घणे, झुसिरे।

—ठाण० स्था ४। उ ४। सू ६३८

वाद्य—जिनसे शब्द की उत्पत्ति होती है।

चार प्रकार के हैं

१—तत—वीणादि, २—वितत—ढोल आदि, ३—घन-कांस्य ताल आदि और ४—शुषिर, बांसुरी आदि।

नोट—तंत्री युक्त वाद्य को तत कहते हैं। चर्म से आनद्ध वाद्यों को वितत कहा जाता है, कांस्य आदि धातुओं से निर्मित वाद्य घन कहलाते हैं। फूंक से बजाये जाने वाले वाद्य-सुषिर है।

·८ बन्ध परिणाम

सश्लेषः-बन्धः, अयमपि प्रायोगिकः सादिः वैस्रसिकस्तु सादिरनादिश्च।

—जैनसिदी० प्र २। सू १५ टीका

विभिन्न परमाणुओं के संश्लेष को वहां बन्ध कहा गया है। उस बन्ध के प्रमुख दो भेद हैं—प्रायोगिक और वैस्रसिक। प्रायोगिक बन्ध सादि और वैस्रसिक बन्ध सादि-अनादि दोनों प्रकार का होता है।

वैस्रसिक बंध

(वैस्रसिकः) तद्यथा-स्निग्धरूक्षत्वगुणनिमित्तो विद्युदुल्काजलधाराग्नीन्द्रधनुरादिविषयः।

—सर्वा० अ ५। सू २४

वैस्रसिक का अर्थ है स्वाभाविक। जिस बन्ध में व्यक्ति विशेष प्रयत्न की अपेक्षा न रहती है। उसके दो प्रकार है—सादि वैस्रसिक और अनादि वैस्रसिक। सादि वैस्रसिक बन्ध वह है जो बनता है, विगड़ता है और उसके बनने-बिगड़ने में किसी व्यक्ति विशेष की अपेक्षा नहीं रहती है। उसके उदाहरण है बादलों में चमकने वाली बिजली, उल्का, मेघ, इन्द्रधनुषादि। स्निग्ध और स्निग्धगुण वाले स्कंधों के संयोग से बिजली पैदा होती है।

पुद्गल द्रव्य का जीव के साथ कर्म रूप में सम्बन्ध

जेम तेल्लु सिहि-सिह-परिणामहु।
तेम कम्म-पोग्गलु वि णिसामहु॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवें　　लइयउ　　जाइ　　जियत्तहु।
तिव्व - कसाय - रसेंहिं　　पमत्तहु॥

—वीरजि० संधि १२। कड ५

जिस प्रकार दीपक में जलता हुआ तेल अग्नि की शिखा रूप परिवर्तित होता रहता है, उसी प्रकार कर्मरूपी पुद्गल परमाणु भी जीव द्वारा ग्रहण किये जाते और तीव्र कषायरूपी रसों के बल से उस जीव में प्रमत्तभाव उत्पन्न करते हैं।

पुद्गल और संस्थान

रूपादिसंस्थानपरिणामो मूर्त्तिः।

—तत्त्वराज० अ ५। सू ५। १ की व्याख्या में

संस्थान भी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श के सिवाय मूर्तत्व का एक लक्षण है।

अथाजीवपरिगृहीतं वृत्त-त्र्यस्र-चतुरस्रायतपरिमण्डलभेदात्।

—तत्त्व० अ ५। सू २४ भाष्य

संस्थान का अर्थ आकृति या आकार है। संस्थान को पुद्गल का गलन मिलनकारी स्वभाव जन्य कहा जा सकता है।

बन्ध

बन्धो द्विविधः—वैस्रसिकः प्रायोगिकश्च। पुरुषप्रयोगानपेक्षो वैस्रसिकः। तद्यथा-स्निग्धरूक्षत्वगुणनिमित्तो विद्युदुल्काजलधाराग्नीन्द्रधनुरादिविषयः। पुरुषप्रयोगनिमित्तः प्रायोगिकः अजीवविषयो जीवाजीवविषयश्चेति द्विधा भिन्नः। तत्राजीवविषयो जतुकाष्टादिलक्षणः जीवाजीव विषयः कर्मनोकर्म बन्धः।

—सर्वसि० अ ५। सू २४। टीका

बन्ध के दो भेद हैं—वैस्रसिक और प्रायोगिक। जिसमें पुरुष का प्रयोग अपेक्षित नहीं है वह वैस्रसिक बन्ध है। जैसे—स्निग्ध और रूक्ष गुण के निमित्तसे होने वाला बिजली, उल्का, मेघ, अग्नि और इन्द्रधनुष आदि का विषय भूत बन्ध वैस्रसिक बन्ध है और जो बन्ध पुरुष के प्रयोग से निमित्त होता है वह प्रायोगिक बन्ध है। इसके दो भेद हैं—अजीव सम्बन्धी और जीवाजीव सबन्धी। लाख, लकड़ी आदि का अजीव सम्बन्धी प्रायोगिक बन्ध है तथा कर्म और नोकर्म का जीव से बन्ध होता है वह जीवाजीव प्रायोगिक बन्ध है।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

·९ सौक्ष्म्य

·१० स्थौल्य

·१ सौक्ष्म्यं द्विविधं—अन्त्यमापेक्षिकं च। तत्रान्त्यं परमाणूनाम्। आपेक्षिकं बिल्वामलकबदरादीनाम्।

स्थौल्यमपि द्विविधमन्त्यमापेक्षिकं चेति। तत्रान्त्यं जगद्व्यापिनि महास्कन्धे। आपेक्षिकं बदरामलकबिल्वतालादिषु।

—सर्वार्थसि० अ ५। सू २४ टीका

सूक्ष्मता के दो भेद हैं—अन्त्यं और आपेक्षिकं। परमाणुओं में अन्त्य सूक्ष्मत्व है तथा बेल, आंवला और बेर आदि में आपेक्षिक सूक्ष्मत्व है। स्थौल्य भी दो प्रकार का है—अन्त्यं और आपेक्षिक। जगव्यापी महास्कंध में अन्त्य स्थौल्य है। तथा बेर, आंवला और बेर आदि में आपेक्षिक स्थौल्य है।

कहा है

अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं णेव इंदिये गेज्झं।
जं दव्वं अविभागी तं परमाणु विआणाहि॥

—सर्वार्सि० अ ५। सू २५ में उद्धृत

जिसका आदि, मध्य और अन्त एक है और जिसे इन्द्रियां ग्रहण नहीं कर सकती ऐसा विभाग रहित द्रव्य उसे परमाणु समझो।

·२ सौक्ष्म्यं द्विविधम्—अन्त्यमापेक्षिकञ्च। अन्त्यं परमाणोः आपेक्षिकं यथा—नालिकेरापेक्षया आम्रस्य।

स्थौल्यमपि द्विविधम्—अन्त्यं अशेषलोकव्यापिमहास्कन्धस्य। आपेक्षिकं, यथा—आम्रपेक्षया नालिकेरस्य।

—जैनसि० प्र १। सू १५

सौक्ष्म्यं के दो भेद हैं—अन्त्यं और आपेक्षिकं। अन्त्य सूक्ष्म, जैसे परमाणु। आपेक्षिक सूक्ष्म—जैसे नारियल की अपेक्षा आम छोटा होता है।

स्थौल्य भी दो प्रकार का है—अन्तिम स्थूल, जैसे—समूचे लोक में व्याप्त होनेवाला अचित्त महास्कंध। आपेक्षिक स्थूल, जैसे—आम की अपेक्षा नारियल बड़ा होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

·११ से ·१४ तम, छाया, आतप, उद्योत

तमो दृष्टिप्रतिबन्धकारणं प्रकाशविरोधि

छाया प्रकाशावरणनिमित्ता। सा द्वेधा-वर्णादि-विकारपरिणता प्रतिबिम्बमात्रात्मिका चेति।

आतप आदित्यादिनिमित्तउष्णप्रकाशलक्षणः उद्योतश्चन्द्रमणिखद्योतादिप्रभवः प्रकाशः।

त एते शब्दादयः पुद्गलद्रव्यविकाराः।

त एषां सन्तीति शब्दबन्धसौक्ष्म्य-स्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायातपोद्योतवन्तः। पुद्गला इत्यभिसंबध्यते।

—सर्वसि० अ ५। सू २४। टीका

जिससे दृष्टि में प्रतिबन्ध होता है और जो प्रकाश का विरोधी है वह तम कहलाता है। प्रकाश को रोकने वाले पदार्थों के निमित्त से जो पैदा होती है वह छाया कहलाती है। उसके दो भेद हैं—एक तो वर्णादि के विकार रूप से परिणत हुई और दूसरी प्रतिबिम्ब रूप। जो सूर्य के निमित्त से उष्ण प्रकाश होता है उसे आतप कहते हैं तथा चन्द्रमणि और जुगुनू आदि के निमित्त से प्रकाश होता है उसे उद्योत कहते हैं। ये सब शब्दादिक पुद्गल द्रव्य के विकार (पर्याय) हैं। इसलिए सूत्र में पुद्गल को इन शब्द, बन्ध, सौक्ष्म्य, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप व उद्योतवाला कहा है।

·११ तम

·१२ छाया

·१३ आतप

·१४ उद्योत

·१५ प्रभा

कृष्णवर्णबहुलः पुद्गलपरिणामविशेषः तमः।

प्रतिबिम्बरूपः पुद्गलपरिणामः छाया।

सूर्यादीनामुष्णः प्रकाश आतपः॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्रादीनामनुष्णः प्रकाश उद्योतः।
मण्यादीनां रश्मिः प्रभा॥

सर्व एव एते पुद्गलधर्माः अत एतद्वानपि पुद्गलः।

—जैनसिदी० प्र १। सू १५। टीका

तम—पुद्गलों का सघन कृष्णवर्ण के रूप में जो परिणमन होता है, उसे तम कहते हैं।

सूर्य के उष्ण प्रकाश को आतम कहते हैं।

पुद्गलों का प्रतिबिम्ब रूप परिणमन होता है, उसे छाया कहते हैं।

चन्द्र आदि के शीतल प्रकाश को उद्योत कहते हैं।

रत्न आदि की रश्मियों को प्रकाश कहते हैं।

ये सब (शब्दादि से प्रभातक) पुद्गल के धर्म हैं। (स्कंधपुद्गल में ये सब मिलते हैं, परमाणु पुद्गल में नहीं) इसलिए इनका पुद्गल के लक्षण रूप में निर्देश किया गया है।

स्कन्दन्ति-शुष्यन्ति धीयन्ते च पोष्यन्ते च पुद्गलानां विघटनेनचटनेन स्कन्धाः।

—उशाटी० पृ० ६७३

जो पुद्गलों के विघटन से क्षीण और संघटन से पुष्ट होते हैं वे स्कंध हैं।

पुद्गल के गुण

स्पर्शरसगन्धवर्णवान् पुद्गलः॥१४॥

टीका—पूरणगलनधर्मत्वात् पुद्गल इति।

—जैनसिदी० प्र १ सू १४

जो द्रव्य स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण युक्त होता है वह पुद्गल है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिसमें पूरण-एकीभाव और गलन-पृथक्भाव होता है वह पुद्गल है, यह इसका शाब्दिक अर्थ है।

·१६-·१९ पुद्गल के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श के भेद

तत्र स्पर्शोऽष्टविधः कठिनोमृदुर्गुरुलघुः शीतउष्णः स्निग्धोरूक्षः इति। रसः पंचविधः-तिक्तः कटुः कषायोऽम्लोमधुर इति। गन्धो द्विविधः-सुरभिरसुरभिश्च। वर्णः पंचविधः कृष्णो नीलो लोहितः पीतः शुक्ल इति।

—तत्त्व० अ ५। सू २३ का भाष्य

स्पर्श के आठ भेद—कठिन, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष।

रस के पांच भेद—तीखा, कड़वा, कषाय, खट्टा और मीठा।

गंध के दो भेद—सुगन्ध और दुर्गन्ध।

वर्ण के पांच भेद—काला, नीला, लाल, पीला और सादा।

पुद्गल परिणाम

पोग्गलत्थिकाए पंच वण्णे, पंचरसे, दुगंधे, अट्ठफासे पण्णत्ते।

—भग० श १२। उ ५ सू ११६

पुद्गल स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, स्वभाव वाला होता है अर्थात् पुद्गल पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध व आठ स्पर्श से युक्त होता है।

नील, पीत, शुक्ल, कृष्ण, लोहितभेदात्।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २३। १०

तिक्तः, कटुकाम्ल, मधुर, कषायारसप्रकारा।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २३। ८

गन्ध सुरभिरसुरभिश्च।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २३। ९

मृदुः कठिन, गुरु, लघु, शीतोष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, स्पर्शभेदाः।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २३। ७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन शास्त्रों के अनुसार वर्ण मात्र पांच प्रकार का होता है—नील, पीत, शुक्ल, कृष्ण और लोहित।

रस पांच प्रकार का है—तिक्त, कटुक, आम्ल, मधुर और कषाय।

गन्ध दो प्रकार का होता है—सुगन्ध और दुर्गन्ध।

स्पर्श आठ प्रकार का होता है—मृदु, कठिन, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष।

वर्ण

पंचवन्ना पन्नत्ता, तंजहा—किण्हा नीला, लोहिता, हालिद्दा, सुक्किल्ला।

—ठाण० स्था ५। उ १। सू ३

वर्ण पांच हैं—(१) कृष्ण, (२) नील, (३) रक्त, (४) पीत और (५) शुक्ल।

पंचरसा पन्नत्ता, तंजहा—तित्ता जाव मधुरा।

—ठाण० स्था ५। उ १। सू ४

रस पांच हैं—(१) तीता, (२) कड़वा, (३) कषैला, (४) खट्टा और (५) मीठा।

पुद्गल में स्पर्शादि गुण

स्पर्शादयः परमाणुषु स्कन्धेषु च परिणामजा एव भवन्ति।

—तत्त्व० अ ५। सू २४ का भाष्य

स्पर्श, रस, गन्ध तथा वर्ण—इन चारों का परिणमन सर्व पुद्गलों (चाहे परमाणु हो चाहे स्कंध हो) में होता है।

(क) पूरणगलणत्तणतो पुग्गलो—अनुद्वार चू०।

—पृ० २२

(ख) द्रव्याद् गलन्ति—वियुज्यन्ते किञ्चित्तु द्रव्यं स्वसंयोगतः पूरयन्ति—पुष्टं कुर्वन्ति पुद्गलाः।

—प्रसाटी० प २८९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो द्रव्य से गलित व वियुक्त होते हैं और अपने संयोग से द्रव्य को पुष्ट करते हैं, वे पुद्गल है।

(ग) पूरणाद्गलनाच्च शरीरादीनां पुद्गलः।

—भटी० पृ० १४३२

जिसके शरीर आदि बनते हैं और बिखरते रहते हैं वह पुद्गल है।

पुद्गल और दंडक के जीव

नेरइया णं पंचवन्ने पंचरसे पोग्गले बंधेंसु वा बंधंति वा बंधिस्संति वा, तंजहा—किण्हा जाव सुक्किल्ला तित्ते जाव मधुरे, एवं जाव वेमाणिता।

—ठाण० स्था ५। उ ३ सू २२८, २२९

नैरयिकों ने पांच वर्ण तथा पांच रस वाले पुद्गलों का बंधन (कर्म रूप से स्वीकरण) किया है, कर रहे हैं तथा करेंगे।

१ कृष्णवर्ण वाले, २ नीलवर्ण वाले, ३ लोहितवर्ण वाले, ४ हारिद्रवर्ण वाले तथा ५ शुक्लवर्ण वाले।

१ तिक्तरस वाले, २ कटुरस वाले, ३ कषायरस वाले, ४ अम्लरस वाले और ५ मधुररस वाले।

इसी प्रकार वैमानिकों तक के सारे ही दंडक जीवों ने पांच वर्ण तथा पांच रस वाले पुद्गलों का बंधन (कर्म रूप में स्वीकरण) किया है, कर रहे हैं तथा करेंगे।

शरीर के वर्णादि

णेरइयाणं सरीरगा पंचवन्ना पंचरसा पन्नत्ता, तंजहा—किण्हा जाव सुक्किल्ला, तित्ता जाव मधुरा, एवं निरंतरं जाव वेमाणियाणं।

पंच सरीरया पन्नत्ता, तंजहा—ओरालिते, वेउव्विते आहारते, तेयते कम्मते, ओरालितसरीरे पंचवन्ने पंचरसे पन्नत्ते, तंजहा—किण्हे जाव सुक्किले तित्ते जाव महुरे, एवं जाव कम्मगसरीरे, सव्वेवि णं बादरबोंदिधरा कलेवरा पंचवण्णा, पंचरसा, दुगंधा, अट्ठफासा।

—ठाण० स्था ५। उ १ सू २३, २४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीका—सरीर त्ति उत्पत्तिसमयादारभ्य प्रतिक्षणमेव शीर्यत इति शरीरं× × ×। कम्मए त्ति कम्मणो विकारः कार्म्मणं, सकलशरीरकारणमिति। उक्तं च—कम्मविगारो कम्मणमट्ठविहविचित्तकम्मनिष्फन्नं। सव्वेसिं सरीराणं कारणभूयं मुणेयव्वं।

नैरयिक जीवों के शरीर पांच वर्ण तथा पांच रस वाले होते हैं।

१—पांच वर्ण—कृष्ण, नील, लोहित, पीत व शुक्ल।

२—पांच रस—तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल तथा मधुर।

इसी प्रकार वैमानिक तक के सभी दंडको—जीवों के शरीर पांच वर्ण तथा पांच रस वाले होते हैं।

जिसमें प्रतिक्षण जीर्ण-शीर्ण होता है—वह शरीर है।

कर्म-समूह से निष्पन्न अथवा कर्म विकार को कार्मण शरीर कहते हैं। यः सर्व शरीरों का कारणभूत है।

स्कंध पुद्गल द्रव्य और चंचलता

पुद्गल द्रव्ये अणवः संख्यातादयो भवन्ति चलिता हि।

—गोजी० गा ५६३

पुद्गल द्रव्य में (स्कंध पुद्गल) संख्यात, असंख्यात व अनंत परमाणु चलित होते रहते हैं।

पुद्गल उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य वाला है

(१) उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्।

—तत्त्व० अ ५। सू २९

(२) भगवानपि व्याजहार प्रश्नत्रयमात्रेण द्वादशाङ्ग प्रवचनार्थं सकलवस्तुसंग्राहित्वात् प्रथमतः किल गणधरेभ्यः—"उप्पणेतिवा विगमेति वा धुवेति वा।

—तत्त्व० अ ५। सू ६ सिद्धसेन टीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह संसार का प्रथम या मूल नियम कहा जा सकता है। सभी द्रव्य, सहभावी गुणों से ध्रुव है, तथा क्रमभावी पर्यायों से उत्पादव्यय रूप है।

नोट—उनके घरेलू वातावरण में तो परमाणुओं की चहल-पहल और उछल-कुछल करती रहती है। जैसे कि गोमटसार जीव काण्ड में बताया गया है—पुद्गल द्रव्य में संख्यात, असंख्यात, अनन्त परमाणु चलित होते रहते हैं।[1]

पुद्गलों के चार गुण

पुद्गल स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण स्वभाववाला होता है। भगवती सूत्र में यही बात अधिक स्पष्टता से बताई गई है। वहां लिखा गया है—पुद्गल[2] पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श से युक्त होता है। जैन शास्त्रों के अनुसार वर्ण मात्र पांच प्रकार का होता है—नील, पीत, शुक्ल, लोहित और कृष्ण। रस पांच प्रकार का है—तिक्त, कटुक, आम्ल, मधुर और कषाय[3]। गंध दो प्रकार का होता होता हैं—सुगन्ध और दुर्गन्ध।[4] स्पर्श आठ प्रकार का होता है—मृदु, कठिन, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष।[5]

एक परमाणु में एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस और दो स्पर्श होते हैं। किन्तु किसी भी स्थूल द्रव्य में पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श मिलेंगे। स्पर्शों की अपेक्षा से स्कन्धों के दो भेद हो जाते हैं—चतुः स्पर्शी स्कंध और आठ स्पर्शी स्कंध। सूक्ष्म से सूक्ष्म पुद्गल जाति चतुः स्पर्शी स्कंधात्मक है, चतुः स्पर्शी पुद्गलों में चार स्पर्श-शीत-उष्ण-स्निग्ध-रूक्ष होते हैं।

---

१. पुद्गलद्रव्ये अणवः संख्यातादयो भवन्ति चलिता हि।

—गोजी० गा ५६३

२. पोग्गले पंचवण्णे, पंचरसे, दुगंधे अट्ठफासे पन्नत्ते।

—भग० श १२। उ ५ सू ११६

३. तिक्त, कटुकाम्ल, मधुर, कषाया रस प्रकाराः।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २३। ८

४. गन्ध सुरभिरसुरभिश्च।

—तत्त्वराज० ५। सू २३। ९

५. मृदु, कठिन, गुरु, लघु, शीतोष्ण, स्निग्ध, रूक्ष स्पर्शभेदाः।

—तत्त्वराज० अ ५। सू २३। ६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अध्ययन, गाथा, सूत्र आदि की संकेत सूची

अ	अध्ययन, अध्याय	प्रा	प्राभृत
अधि	अधिकार	प्रपा	प्रतिप्राभृत
उ	उद्देश, उद्देशक	भा	भाष्य
गा	गाथा	भाग	भाग
च	चरण	ला	लाइन
चू	चूर्णी	व	वर्ग
चूलि	चूलिका	वा	वार्तिक
टी	टीका	वृ	वृत्ति
द	दशा	श	शतक
द्वा	द्वार	शीलांका	शीलांकाचार्य
नि	निर्युक्ति	श्रु	श्रुतस्कन्ध
प	पद	श्लो	श्लोक
पं	पंक्ति	सम	समवाय
पृ०	पृष्ठ	सू	सूत्र
पै	पैरा	स्था	स्थान
प्र	प्रश्न	सिद्ध	सिद्धसेन
प्रकी०	प्रकीर्णक	संधि	संधि
प्रति	प्रतिपत्ति	हा	हारीभद्रीय
कड	कडवक	विह	विहत्ती

संकलन-सम्पादन-अनुसंधान में प्रमुख ग्रन्थों की सूची

१ से ४ अंगसूत्ताणि

आयारो-सूयगडो-ठाणं-समवाओ

वाचना प्रमुख—आचार्य (गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी) सम्पादक—मुनि नथमल (वर्तमान नाम आचार्य श्री महाप्रज्ञ)। प्रकाशक—जैन विश्वभारती, लाडणूं।

५ अंगसूत्ताणि

भगवई-संकेत—भग०

वाचना प्रमुख—आचार्य तुलसी, संपादक—मुनि नथमल (वर्तमान नाम आचार्य श्री महाप्रज्ञ) प्रकाशक—जैन विश्वभारती, लाडणूं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ से ११ अंगसुत्ताणि

णायाधम्मकहाओ-उवासगदसाओ-अंतगडदसाओ-अणुत्तरोवाइयदसाओ पण्हावागरणं-विवागसुयं।

वाचना प्रमुख—आचार्य तुलसी, संपादक—मुनि नथमल (वर्तमान नाम आचार्य श्री महाप्रज्ञ) प्रकाशक जैन विश्वभारती, लाडणू ।

१२ से १४ उवसगसुत्ताणि (खंड—१)

ओवाइयं-रायपसेणियं-जीवाजीवाभिगमे।

वाचना प्रमुख—आचार्य तुलसी, संपादक आचार्य श्री महाप्रज्ञ । प्रकाशक— जैन विश्वभारती, लाडणूं ।

१५ से २३ उवसगसुत्ताणि (खंड—२)

पण्णवणा-जंबुदीवपण्णत्ती-चंदपण्णत्ती-सूरपण्णत्ती-निरयावलियाओ-कप्पवडिंसियाओ-पुप्फियाओ-पुप्फचूलियाओ-वण्हिदसाओ।

वाचना प्रमुख—आचार्य तुलसी, संपादक—आचार्य श्री महाप्रज्ञ। प्रकाशक—जैन विश्वभारती, लाडणूं ।

२४ से ३२ आवस्सयं - दसवेआलियं - उत्तरज्झयाणी - नंदी—अणुओग-द्दाराइं-कप्पो-ववहारो-निसीहज्झयणं।

वाचना प्रमुख—आचार्य तुलसी, संपादक—आचार्य श्री महाप्रज्ञ। प्रकाशक—जैन विश्वभारती, लाडणूं ।

३३ कप्पसुत्तं-संकेत-कप्पसु०

प्रकाशक—साराभाई मणिलाल, अहमदावाद ।

३४ सभाष्यतत्त्वार्थ सूत्र-संकेत-तत्त्व०

प्रकाशक—परमश्रुत प्रभावक मंडल, खाराकुआ, बम्बई-२

३५ तत्त्वार्थ सर्वार्थसिद्धि-संकेत-तत्त्वसर्व०

प्रकाशक—भारतीय ज्ञान पीठ, वाराणसी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६ **तत्त्वार्थवार्तिक (राजवार्तिक) संकेत-तत्त्वराज०**

प्रकाशक—भारतीय ज्ञान पीठ, अहमदाबाद।

३७ **तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार-संकेत-तत्त्वश्लो०**

प्रकाशक—रामचन्द्र नाथारंग, बम्बई।

३८ **तत्त्वार्थसिद्धसेन टीका—संकेत-तत्त्वसिद्ध०**

प्रकाशक—जीवचन्द साकेरचंद जवेरी, बम्बई।

३९ **कर्मग्रन्थ-संकेत-कर्म०**

प्रकाशक—श्री जैन आत्मानंद सभा, भावनगर।

४० **गोम्मटसार (जीवकाण्ड) संकेत-गोजी०**

प्रकाशक—परमश्रुत प्रभावक मंडल, बम्बई।

४१ **गोम्मटसार (कर्मकाण्ड) संकेत-गोक०**

प्रकाशक—परमश्रुत प्रभावक मंडल, बम्बई।

४२ **अभिधान राजेन्द्र कोश-संकेत-अभिधा०**

प्रकाशक—श्री सौधर्म बृहत्तपागच्छीय, जैन श्वेताम्बर समस्त संघ, रतलाम।

४३ **पाइअसद्दमहण्णवो-संकेत-पाइअ०**

प्रकाशक—हरगोविन्दलालजी सेठ, कलकत्ता।

४४ **महाभारत-संकेत-महा०**

प्रकाशक—गीता प्रेस गोरखपुर टीका—वेंकटेश्वर, बम्बई।

४५ **पातञ्जल योगदर्शन-संकेत-पायोग०**

प्रकाशक—जैन संस्कृति संरक्षक संघ—शोलापुर।

४६ **षट्खंडागम—संकेत-षट्०**

प्रकाशक—जैन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर।

४७ **अंगुत्तरनिकाय-संकेत-अंगु**

प्रकाशक—बिहार राज्य पालि प्रकाशन मंडल, नालंदा, पटना।

४८ समयसार-सम्पादक—प्रा० ए० चक्रवर्ती, प्रकाशक—भारतीय ज्ञान पीठ, काशी १९५०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४९ ज्ञानसार—भाग १ से २ सम्पादन—मुनि श्री भद्रगुप्त विजय, प्रकाशन—श्री विश्व कल्याण हारीज, उत्तर गुजरात, १९६७।

५० **प्रवचनसारोद्धार भाग—६ संकेत-प्रवसा०**

प्रकाशक—श्रीमती जयावेन देवसी पोपट मांटु, ४९/१, महालक्ष्मी सोसाइटी, अहमदावाद।

५१ **योगशतक**

प्रकाशक— गुजरात विद्यालय, अहमदावाद।

५२ **श्रावक संबोध गणाधिपति तुलसी**

प्रकाशक—आदर्श साहित्य संघ, चुरू।

५३ **कसायपाहुडं सुत्त**

प्रकाशक —वीरशासन संघ, कलकत्ता।

५४ **प्रशमरति**

प्रकाशक—श्री महावीर जैन विद्यालय, मुम्बई।

अचि—अभिधान चिन्तामणि कोश—श्री जैन साहित्य वर्धक सभा, अहमदावाद, वि० सं० २०२५।

अनुद्राचू—अनुयोगद्वार चूर्णि—श्री ऋषभदेव जी केशरीमल श्वेताम्बर संस्था, सन् १९२८।

अनुद्वारमटी०—अनुयोगद्वार मलधारीय टीका—श्री केशरबाई ज्ञान मन्दिर, पाटण सन् १९३९।

अनुद्वाहाटी-—अनुयोगद्वार हारिभद्रीया टीका (सेठ देवचंद लालभाई) जैन पुस्तकोद्धार, मुम्बई—सं० १९७३।

उपाटी०—उपासकदशा टीका—(श्री हिन्दी जैन आगम) प्रकाशक सुमति कार्यालय, कोटा सन् १९४६।

उशाटी—उत्तराध्ययन शान्तयाचार्य टीका—(देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार) मुम्बई सं० १९७३।

ओटी—ओघनिर्युक्ति टीका (आगमोदय समिति, बम्बई, सन् १९१९।

जंटी०—जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति टीका—(नगीन भाई धेलाभाई झवेरी), बम्बई, सन् १९२०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीटी०—जीवाजीवाभिगम टीका—(देवचंदलाल भाई जैन पुस्तकोद्धार), सं० १९९५।

दअ०—दशवैकालिक अगस्त्यसिंह स्थविर चूर्णि (प्राकृत ग्रन्थ परिषद् वाराणसी) सन् १९७३।

दजिचू०—दशवैकालिक जिनदास चूर्णि (श्री ऋषभदेव केशरीमल) श्वेताम्बर संस्था, रतलाम सन् १९३३।

नि—निघण्टु तथा निरुक्त (मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी) सन् १९६७।

पंटी—पंचाशक प्रकरण टीका—(ऋषभदेव केशरीमल) श्वेताम्बर संस्था रतलाम सन् १९४१।

पसंटी—पंचसंग्रह टीका—(श्री खुबचंद पानचंद) उभोई गुजरात सन् १९३७।

पा०—पालि इंग्लिश डिक्शनरी (पालि टेक्स सोसाइटी) लंदन, सन् १९१२।

पिटी—पिण्डनिर्युक्ति टीका—(देवचंद लालभाई) जैन पुस्तकोद्धार सन् १९१८।

प्रज्ञाटी०—प्रज्ञापना टीका—आगमोदय समिति, बम्बई सन् १९७८।

प्रसाटी०—प्रवचनसारोद्धार टीका—(देवचंद लालभाई) जैन पुस्तकोद्धार द्वितीय संस्करण सं० १९८१।

प्रा०—प्राकृत व्याकरण (हेमचन्द्र) जैन दिवाकर दिव्यज्योति कार्यालय, ब्यावर सं० २०१६।

प्राकटी०—प्राचीन कर्म ग्रन्थ टीका—(जैन आत्मानन्द सभा) भावनगर वि० सं० १९७२।

भटी०—भगवती टीका—१—(आगमोदय समिति, बम्बई सन् १९१८।
भगवती टीका—२—(ऋषभदेव केशरीमल) श्वेताम्बर संस्था, रतलाम, द्वितीय सस्करण सन् १९४०।

राटी०—राजप्रश्नीय टीका—(गुर्जर ग्रन्थरत्न कार्यालय अहमदाबाद) वि० सं० १९९४।

विभा०—विशेषावश्यक भाष्य (दिव्य दर्शन कार्यालय अहमदाबाद, वीर सं० २४८९।)

विभाकोटी—विशेषावश्यकभाष्य—कोट्याचार्य टीका (श्री ऋषभदेव केशरीमल) रतलाम सन् १९३६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभामहेटी०—विशेषावश्यक भाष्य मलधारी टीका—(दिव्य दर्शन कार्यालय) अहमदाबाद वीर सं० २४८९ ।

सूटी० १—(सूत्रकृतांग टीका—प्रथम श्रुतस्कन्ध) आगमोदय समिति, बम्बई सन १९१९ ।

सूटी० २—(सूत्रकृतांग टीका, द्वितीय श्रुतस्कन्ध) श्री गोडा पार्श्वनाथ जैन ग्रन्थ माला सन् १९५३ ।

स्थाटी०—स्थानांग टीका (सेठ माणेकलाल, चूनीलाल) अहमदाबाद सन् १९३७ ।

तत्त्वार्थ भाष्य—(मणीलाल रेवाशंकर जगजीवा झवेरी, बम्बई) ।

नकग्रटी०—नवीन कर्म ग्रन्थ टीका (जैन आत्मानंद सभा) भावनगर सन् १९३४ ।

पाय०—पाइयसद्दमहण्णवो (प्राकृत ग्रन्थ परिषद् वाराणसी) द्वितीय संस्करण सन् १९६३ ।

व्यभा०—व्यवहार भाष्य (वकील केशवलाल प्रेमचन्द) अहमदाबाद सन् १९२६ ।

सूर्यटी०—सूर्यप्रज्ञप्ति टीका (आगमोदय समिति) बम्बई, सन् १९१९ ।

श्रीमद् रत्नसिंह सूरिविरचित वृत्तिसहिता—प्रकाशक—श्री आत्मानन्द सभा, भावनगर, वि० सं० १९६९

वीरजिणिंदचरिउ—प्रकाशक—भारतीय ज्ञान पीठ वाराणसी १९७४, महाकवि पुष्पदन्त विरचित (शक् ० सं० ८८७) संपादक—डा० आ० ने० उपाध्याय एम० ए० डि० लिट् ।

भिक्षु न्याय कर्णिका—आचार्य श्री तुलसी, प्रकाशक—आदर्श साहित्य संघ, चूरू ।

लेश्या-कोश—सम्पादक—मोहनलाल बांठिया, श्रीचन्द चोरड़िया, प्रकाशक—मोहनलाल बांठिया, कलकत्ता १९६६ ।

क्रिया-कोश—सम्पादक—मोहनलाल बांठिया, श्रीचन्द चोरड़िया, वाचना प्रमुख आचार्य तुलसी, प्रकाशक—जैन दर्शन समिति, कलकत्ता सन् १९६९ ।

पचसंग्रह-टीकाकार मलयगिरि—प्रकाशक—जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर ।

सिद्धहेमशब्दानुशासनम्—हेमचन्द्राचार्य । प्रकाशक—सिद्धचक्र साहित्य प्रचारक समिति, बम्बई ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन पदार्थ विज्ञान में पुद्गल—मोहनलाल बांठिक 'चंचल' प्रकाशक—श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा, कलकत्ता सन् १९६७ ।

जैन सिद्धान्त दीपिका—आचार्य श्री तुलसी । प्रकाशक—आदर्श साहित्य संघ, चूरू ।

झीणीचर्चा—श्री मज्जयाचार्य—संपादिका— साध्वी प्रमुखा श्री कनकप्रभाजी ।

नियमसार—श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य—प्रकाशक—मूलचंद किसनदास कापड़िया, दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गांधी चौक, सुरत ।

तुलसी प्रज्ञा—भाग २३ अ २—जुलाई-सितम्बर १९९७ प्रकाशक—जैन विश्व भारती संस्थान, लाडणूं ।

दर्शन सार—देवसेनाचार्य—सं० प्र० नाथुराम प्रेमी, प्रकाशक—जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई-१९२० ।

पंचाशक टीका—रचयिता-हरिभद्र सूरि । टीकाकार अभयदेव सूरि । प्रकाशक जैन धर्म प्रसारक संघ, भावनगर ई० सन् १९१८ ।

धर्म संग्रह सटीक—शान्ति विजयगणि, प्रकाशक—बसंता विक्रमजी—पालीताना सन् १९०५ ।

अन्ययोगव्यच्छेदद्वात्रिंशिका—रचयिता—हेमचन्द्राचार्य (बारहवीं शदी) टीकाकार—आचार्य मल्लिषेण (ई० सन् १२९३) प्रकाशक—परयश्रुत प्रभावक मंडल आगास, गुजरात, वि० सं० २०२६ ।

उपदेशमाला—सटीक—रचयिता—धर्मदासगणि, टीकाकार रामविजयगणि, प्रकाशक—हीरालाल हंसराज, भावनगर १९३४ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या-कोश पर विद्वानों की सम्मति

प्रज्ञाचक्षु पं० सुखलालजी संघवी, अहमदाबाद

लेश्या कोश के प्रारम्भिक ३४ पृष्ठों को पूरा सुन गया हूँ। अगला भाग अपेक्षा के अनुसार ही देखा है, पर उसका पूरा ख्याल आ गया है। प्रथम तो यह बात है कि एक व्यापारी फिर भी अस्वस्थ तबीयतवाला इतना गहरा श्रम करे और शास्त्रीय विषय में पूरी समझ के साथ प्रवेश करे यह जैन समाज के लिये आश्चर्य के साथ खुशी का विषय है। आपने कोशों की कल्पना को मूर्त बनाने का जो संकल्प किया है वह और भी आश्चर्य तथा आनन्द का विषय है। इतना बड़ा भारी जवाबदेही का काम निर्विघ्न पूरा हो—यही कामना है।

Dr. A. N. Upadhye, M. A. D. Litt., Shivaji University, Kolhapur.

"I have read the major portion of this KOSA. You are be congratulated on having brought out a valuable source book on the Lesya Doctrine. I appreciate your methodology and have all praise for the pains you have taken in collecting and systematically presenting the material. Such works really advance the cause of Jainological studies Please accept my greetings on this useful work and convey the same to your colleagues who have collaborated with you in this project. Such Kosas for ' UDGAL' etc. would be welcome in the interest of the progress of Jainological studies."

Dr. P. L. Vaidya, M. A. D. Litt, Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona.

"I am very grateful to you for your sending me a copy of your book 'Lesya-Kosa'. I have read a goodly portion of it and am deeply impressed by your methodical work on an important topic of Lesya in Jain Philosophy. All students of Jain Literature and Philosophy would surely be grateful to you for your having placed in their hand a work of tremendous utility."

Dr. Suniti Kumar Chatterjee, National Professor of India, Calcutta.

"I am not a student of Philosophy, much less of Jain Philosophy. But I have learnt a lot from your work, which is very thorough study.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

with a wealth of quotations from both Prakrita and Sanskrita, on the concept of Lesya. This, as it would appear, is not known in Brahmanical and Buddhistic philosophy. I did not know anything about it before I got your book. This, as it would appear from your study, is a very important concept in Jain Philosophy with regard to the nature of Soul, both in the static or contemplative and its dynamic or active aspect.

I am sure specialists will give a welcome accord to your book."

"Wishing you all success in your noble work of interpreting one of the most important aspects of our Indian civilisation and thought namely, the Jaina "

Dr. Prof. L. Alsdorf, Seminar fur Kultur and Geschichte Indiens, Universitat Hamburg.

"I acknowledge receipt of your Lesya-Kosa and accept my very sincere thanks for this most valuable and welcome gift. The theory of Karman, of which Lesya Doctrine is an integral part, is the very centre and heart of Jainism ; at the same time, it is a most intricate and complex subject the study of which presents a great many difficulties and problems, not all of which have been solved so far. With erudition and acumen, you have furnished a most useful contribution and successfully advanced our knowledge."

Prof. Dr. K. L. Janert. Director, Institut fur Indologie Der Universitat Zu Koln.

"I have received your book Lesya-Kosa, I also owe you a valuable addition to my Library. It is always a matter of great satisfaction to me to see a scholar not recoil from the arduous task of compiling dictionaries, indexes etc —even that great English Critic and Lexicographer, Dr. Samuel Johnson, called it drudgery some two hundred years ago. And it is of course only diligent collection and comparison of all relevant material that genuine advance in knowledge is based on. So we shall have to thank you for having made work easier for those who come after you."

Prof. Padamanath S. Jain, Dept. of Linguistics, The University of Michigan, Michigan, U. S. A.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"Please forgive me for the delay in acknowledging the receipt of your excellent gift of the Lesya-Kosa. This is an extraordinary work and you deserve our gratitude for publishing it. You have opened a new field of research and have established a new model for all future Jain studies. The subject is fascinating not only for its antiquity but also for its value in the study of Indian Psychology."

लेश्या कोश पर विद्वानों की सम्मति

लेश्या कोश—सम्पादक द्वय श्री मोहनलाल बांठिया, श्री श्रीचन्द चोरड़िया, प्रकाशक—मोहनलाल बांठिया, १६/सी, डोवर लेन, कलकत्ता-२९, प्र० वर्ष—६६ मूल्य—१० रु० ।

आलोच्य पुस्तक जैन दर्शन के एक पारिभाषिक शब्द 'लेश्या' का क्रमबद्ध विषयानुक्रमिक पाठ-संकलन और उन पाठों की यथोचित व्याख्या प्रस्तुत करती है। इसके संपादक द्वय, ने तत्वार्थसूत्र तथा ३२ श्वेताम्बर जैन आगमों में यत्र-तत्र बिखरे हुए लेश्या सम्बन्धी महत्वपूर्ण पाठों का एक ही पुस्तक में संलग्न कर जैन दर्शन के शोधकर्त्ता व जिज्ञासु विद्वद्वर्ग के लिए एक अमूल्य निधि तैयार की है। ऐसे तो इस पुस्तक का मूल्य १० रु० रखा गया है, किन्तु जैन दर्शन के अनेक विद्वानों को यह पुस्तक निःशुल्क बांटने का निश्चय इसके प्रकाशक महोदय ने किया है। इस प्रकार प्रकाशक महोदय, जो जैन दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान हैं और जिनका जीवन सार्वजनिक लौकिक कार्य में हमेशा से समर्पित रहा है, विशेष बधाई के पात्र हैं।

उत्तराध्ययन सूत्र अध्याय ३१ की गाथा ८ इस प्रकार है—

लेसासु छसु काएसु, छक्के आहारकारणे।
जे भिक्खू जयई निच्चं, से न अच्छइ मंडले ॥

अर्थात् "जो साधु छः लेश्या, छः काय तथा आहार करने के छः कारणों से सदा सावधानी बरतता है वह भव-भ्रमण नहीं करता।"

इसी तरह आवश्यक सूत्र अध्याय ४ के सूत्र ६ की हारिभद्रीय टीका में गाथा उद्धृत है—

एसइयारो एया-सुहोई, तस्स य पडिक्कमामि त्ति।
पडिकूलं वट्टामी, जं भणियं पुणो न सेवेमि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् "प्रतिक्रमण करने वाला यह प्रतिज्ञा करता है कि 'यदि संयम में किसी प्रकार का अतिचार लगा हो तो उसका मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। प्रतिकूल लेश्या में यदि वर्तना की हो तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि फिर उसका सेवन नहीं करूंगा।"

किन्तु जब तक भिक्षु को छः लेश्याओं का स्वरूप और उसके परिणाम नहीं ज्ञात हों, और प्रतिक्रमणकारी जब तक प्रतिकूल-अनुकूल लेश्याओं का विवेचन न प्राप्त कर ले, तब तक सम्यक् आचरण कैसे सम्भव है ?

लेश्या का व्यापक अर्थ है—पुद्गल द्रव्य के संयोग से होने वाले जीव के परिणाम। भगवती सूत्र में जीव व अजीव दोनों की आत्म-परिणति के लिए लेश्या शब्द व्यवहृत हुआ है। लेश्या की ग्राह्य-सामग्री के विषय में दार्शनिकों में विवाद रहा है और अनेक (सामान्यतः ३) मान्यताएं प्रचालित रही हैं। बौद्ध ग्रन्थों में भी कहीं पूरण काश्यप के नाम से तो कहीं गोशालक के नाम से छः अभिजातियों का निरूपण हुआ है। जैन परम्परा की छः लेश्याएं भाव-भाषा में छः अभिजातियों के साथ बहुत कुछ सामानता रखती हैं।

उक्त दृष्टि से यह कोष जहाँ प्रत्येक मुमुक्षु व्यक्ति के लिए उपादेय है, वहाँ दार्शनिक क्षेत्र में भी अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है।

कोष को कई वर्गों में विभक्त कर लेश्या का शाब्दिक विवेचन, द्रव्य-लेश्या-भाव-लेश्या के स्वरूप तथा विशेषताएं, लेश्या और जीव, सलेशी जीव आदि सूक्ष्म विषयों का अनेक उप-विषयों के साथ संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

पुस्तक में अनेक गम्भीर विषयों को विज्ञजनों के विचारने योग्य कहकर (सम्भवतः विस्तार-भय से) बिना विवेचना के छोड़ दिया है। जैसे—ध्यान का लेश्या-परिणमन के साथ क्या सीधा संयोग है या योग के द्वारा ? आदि-आदि।

फिर भी, संपादक द्वय का प्रयास अत्यंत स्तुत्य है। हम आशा करते हैं कि वे इस कोष की तरह ही जैन-विषय-कोष-ग्रन्थमाला के प्रकाशन की अपनी दीर्घकालीन योजना के अन्तर्गत जैन दर्शन के अन्य विषय से भी सम्बन्धित कोश तैयार कर साहित्य श्री की वृद्धि करेंगे।

अंत में, हम सम्पादक द्वय को इस पुस्तक में दशमलव वर्गीकरण जैसी वैज्ञानिक पद्धति अपनाने के लिए धन्यवाद देते हैं।

—**दामोदर शास्त्री**, एम० ए०, आचार्य
(विश्व ज्योति, दिसम्बर १९६८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैनदर्शनमध्ये आत्मपरिणामाला फार महत्व पूर्ण स्थान आहे। षट्द्रव्य, सप्ततत्व आणि नवपदार्थ यांचे विवेचन आत्म परिणामाच्या विशुद्धीस लक्ष्य देवूनच केलेले आहे। या द्रव्यसंग्रहामध्ये माझे स्थान कोठे आह हें शोधून काढणें विवेकी जीवाचे कर्तव्य आहे। त्यास शांत सुबुद्ध विचारपूर्ण, मानसिक स्थितिची आवश्यकता आहे। कषायोदयरंजिता योगप्रवृत्तिर्लेश्या, म्हणून लेश्याचे लक्षण अकलंकदेवांनी केले आहे। यावरून मानसिक परिणामाच्या तारतम्य प्रवृत्तिस लेश्या म्हणता येईल। या तार—तम्यामुलें संसारसागराला तरणें आणि त्यांत बुडणें दोन्ही शक्य आहे। म्हणून या लेश्यातंत्रास समजणें फार अगत्याचे आहे।

'या ग्रन्थामध्ये उभय विद्वान् लेख कांनी या लेश्या विषयी जैन ग्रन्थामध्ये कोठें कोठें काय सांगितले आहे। आणि गतिक्रमाने त्यांच्या सूक्ष्मभेदामध्ये कोणत्या ठिकाणी कोणती लेश्या असू शकते याचे विवेचनपूर्वक तालिका दिली आहे। हें काम फार परिश्रमाचे आणि महत्वाचे आहे। या ग्रन्थामध्ये मुख्यत: श्वेताम्बर आगमा—मधील प्रमाणांचा संग्रह आहे। पुढे याच प्रमाणें दिगम्बर ग्रन्थांचा लेश्या-कोष प्रसिद्ध करण्याचे त्यांचे मानस आहे। स्तुल्य आहें। कार्य हे शुष्क म्हणून वाटतें। परन्तु फार सरस आहे। कारण आत्म परिणामाची स्थिति समजल्याशिवाय आत्म-विशुद्ध होवू शकत नाहीं। त्या दृष्टीने या कार्याला फार मोठे महत्व आहे। विद्वान् लेखकांनी अत्यंत उपयोगी कार्यामध्ये आपले योगदान दिले आहे खरोखर ते प्रशंसार्ह आहेत। अशा ग्रन्थाची प्रति पुस्तक भाँडार आणि संशोधन-मन्दिरामध्ये असणें जरूर आहे। संशोधक विद्वानांना या कोषाचा फार उपयोग होईल। ग्रन्थाचे बाह्यांतरंग सौंदर्य ही आकर्षक आहे।' बाबू छोटेलाल जैन स्मृति ग्रन्थ।

—जैन बोधक

जनवरी ६-१-१९६९

यह पुस्तक जैन विषय-कोश ग्रन्थमाला का प्रथम पुष्प है। इस कोश का सम्पादन करने में ४६ ग्रन्थों व सूत्रों का सहारा लिया गया है। सम्पादक द्वय का परिश्रम सराहनीय है। जैन दर्शन गहन है। सब विषयों पर कोश तैयार होना बहुत कठिन है परन्तु यदि ऐसे कुछ खास विषयों के कोश तैयार हो सकें तो अजैन स्कालरों को बड़ी सुविधा हो जाय।

इस प्रकार का लेश्या कोश प्रथम बार ही प्रगट हुआ है। सम्पादकों ने बहुत परिश्रम करके जनता के हितार्थ यह पुस्तक लिखी और प्रकाशित की है। इसमें लेश्या शब्द के अर्थ, पर्यायवाची शब्द, परिभाषा के उपयोगी पाठ, लेश्या के भेद लेश्या पर विवेचन गाथा और लेश्या का निक्षेपों की अपेक्षा विवेचन गाथा, लेश्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्बन्धी फुटकर पाठ विद्वानों को पढ़ने और समझने योग्य हैं। सारांश यह कि लेश्या परिणामों का विस्तृत विवेचन जानना हो तो यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है।

—श्वेताम्बर जैन

जनवरी १९६९

'प्रस्तुत लेश्या कोश-लेश्याओं के सम्बन्ध में श्वेताम्बर जैन आगमों के अनुसार संकलित एक बहुत बड़ा संग्रह है। लेश्या मार्गणा के सम्बन्ध में दिगम्बर जैन आगम व श्वेताम्बर जैन आगम दोनों में आचार्यों ने बहुत विस्तार से विवेचन किये हैं। प्रतीत होता है—कि सम्पादकों ने जितना भी लेश्या के सम्बन्ध में श्वेताम्बर साहित्य उपलब्ध हो सका सब का आलोडन कर इसके सम्पादक में बड़ा ही परिश्रम किया हैं। इस लेश्या कोश के प्रकाशन में लाने का उद्देश्य जिनागम के अलग-अलग विषयों पर शोध करनेवाले विद्वानों के लिये एक जगह उस सामग्री का संग्रह कर उन्हें सुविधा देना है। किन्तु इस प्रकार के ग्रन्थों के सम्पादन से केवल रिसर्च करने वालों को ही नहीं अपितु-स्वाध्याय करने वालों के लिये भी बहुत लाभप्रद होगा—ऐसा मेरा विश्वास है।'

इसी प्रकार जिनागम में आये सिद्धान्तों का अलग-अलग स्वतन्त्र रूप में संकलित कर प्रकाश में लाने के प्रयास में लेश्या कोश-प्रकाशकों का प्रथम प्रयास है—ऐसा विद्वान सम्पादकों ने ग्रन्थ की भूमिका में व्यक्त किया है।

यद्यपि इस लेश्या कोश के सम्पादन में, सर्वार्थ सिद्धि, तत्वार्थ राजवार्तिक, तत्वार्थ-श्लोकवार्तिक, गोम्मटसार जीवकाण्ड व कर्मकाण्ड आदि दिगम्बर ग्रन्थों का भी उपयोग हुआ है—पुनरपि—यह समस्त ग्रन्थ श्वेताम्बर आगम में आये लेश्या-विवरण का ही पथ प्रदर्शन करता है। दिगम्बर जैन आगम के अनुसार लेश्या के सम्बन्ध में एक संकलन जब तक प्रकाश में न आवे तब तक रिसर्च करने वालों के लिये भी यह कोश अपूर्ण ही रहेगा। सम्पादकों की अभिलाषा है दिगम्बर ग्रन्थों से भी लेश्या कोश का सम्पादक कर वे प्रकाशन में लाने वाले हैं। यह उनका प्रयत्न और अभिलाषा अभिनन्दनीय है। वैसे दिगम्बर शास्त्रों में श्वेताम्बर ग्रन्थों में लेश्या के सम्बन्ध में समानता, भिन्नता और विविधता देखी जाती है—ऐसा प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादकों का भी लिखना है। यह विविधता, समानता और भिन्नता बिना दोनों आगमों के अध्ययन से ही ज्ञात हो सकती है। जैसे श्वेताम्बर ग्रन्थों में तपोलब्धि से भी तेजोलेश्या उत्पन्न होती है—उसका निम्न प्रकार वर्णन आता है।

विशिष्ट तपस्या करने से बालतपस्वी, अनगार तपस्वी आदि को तेजोलेश्या रूप तेजोलब्धि की प्राप्ति होती है। देवताओं में भी तेजोलेश्या लब्धि होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह दो प्रकार की होती है—(१) उष्ण तेजोलेश्या (२) शीतल तेजोलेश्या उष्ण तेजोलेश्या ज्वाला—दाह पैदा करती है, भस्म करती है इसमें १६ जनपदों (देशों) को घात-वध तथा भस्म करने की शक्ति होती है। और शीतल तेजोलेश्या से उत्पन्न ज्वाला दाहको प्रशान्त करने की शक्ति होती है। उसका उदाहरण निम्न प्रकार है—

वैश्यायण बाल तपस्वी ने गोशालकको भस्म करने के लिये उष्ण तेजोलेश्या निक्षिप्त की थी। भगवान् महावीर ने शीतल तेजोलेश्या छोड़कर उसका प्रतिघात किया। अर्थात् तेजोलेश्या दूसरों पर निक्षेप की जाती है। और फिर उसका घात भी होता है, तथा उसे फेंककर वापस खींचा भी जा सकता है।

भगवती सूत्र में एक जगह आया है कि भगवान् महावीर ने स्वयं श्रमण निग्रन्थों को बुलाकर कहा कि हे आर्यों। मंखलिपुत्र गोशालक ने मुझे वध करने के लिये अपने शरीर से जो तेजोलेश्या निकाली थी वह अंग बंग, आदि १६ देशों को, घात करने, वध करने, उच्छेद करने तथा भस्म करने में समर्थ थी इस तरह का कथन दिगम्बर जैन आगम से भिन्न ही नहीं किन्तु विपरीत भी है।

यह सब भिन्नता बस मानता दोनों सम्प्रदायों के आगमों के युगपत् संकलन से ही ज्ञात हो सकती है।

'प्रस्तुत लेश्या कोश को प्रकाशन में लाने में सम्पादकों व प्रकाशकों का परिश्रम सब तरह से सराहनीय है। दिगम्बर जैन समाज के ग्रन्थमालाओं व ग्रन्थ प्रकाशकों व विद्वानों से अनुरोध है कि इस प्रकार षट्खण्डागम में आये सिद्धान्तों को उनमें मुख्य २ आवश्यक एक २ विषय का सुन्दरता से आधुनिक संपादन शैली के अनुसार संकलित कर प्रकाश में लाएं तो जिनवाणी का बहुत बड़ा प्रचार व प्रसार होगा। कारण षट्खण्डागम धवल ग्रन्थों के पढ़ने व स्वाध्याय करने वाले तो बहुत कम ही हैं। किन्तु इस तरह के प्रकाशनों से सब लाभ उठा सकेंगे।

यह कोश विद्वानों को बिना मूल्य देने का प्रकाशकजी का संकेत है अतः जिन्हें जैन सिद्धान्तों के जानने की व अध्ययन की रुचि हो उन्हें प्रकाशकजी से अवश्य मंगाना चाहिये। 'प्रत्येक ग्रन्थमाला व शास्त्र भण्डारों में इस कोश का रहना आवश्यक है। ग्रन्थ का संपादन ठीक तरह से हुआ है—और प्रकाशन, कागज आदि बहुत सुन्दर हैं—इसके लिये संपादक व प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

—महेन्द्रकुमार "महेश" शास्त्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समीक्ष्य पुस्तक 'लेश्याकोश' में लेखक-द्वय ने बड़ी विशदता, सजगकता एवं सफलता से जैन-वाङ्मय में निहित लेश्या-सम्बन्धी विभिन्न सामग्रियों का संचयन प्रस्तुत किया है, जो लेखक-द्वय की सूक्ष्म शोध-वृत्ति एवं ज्ञानबोध-विस्तृति का ही परिचायक है।

जैन दर्शनानुसार लेश्या शाश्वत भाव और अनानुपूर्वी है, क्योंकि लोक, अलोक, ज्ञानादि भाव के समान यह भी चिरन्तन है और इन भावों के साथ लेश्या का आगे-पीछे का कोई निर्धारित क्रम भी नहीं है। लेश्या के सहयोग से ही कर्म आत्मा में लिप्त होते हैं तथा कृष्णादि द्रव्यों का सान्निध्य पाकर यह आत्मा के परिणाम को भी उसी रूप में परिवर्तित कर देता है। इसके प्रमुखतः दो भेद (भाव एवं द्रव्य) एवं कई प्रभेद-उपभेद हैं, जिनके सम्बन्ध में विस्तार के साथ प्रस्तुत पुस्तक में वर्णन किया गया है। साथ ही साथ योग, ध्यान आदि के साथ लेश्या का तुलनात्मक विवेचन भी किया गया है, जो विषय को और अधिक स्पष्ट करने में सहायक है।

प्रस्तुत पुस्तक की सामग्रियों के संचयन-संघटन में ३२ श्वेताम्बरीय आगमों एवं तत्त्वार्थसूत्र का सहारा लिया गया है और इनमें उपलब्ध लेश्या सम्बन्धी विभिन्न पाठों को भी मिलान करने का अच्छा प्रयास किया गया है। प्रमुख विषयों एवं विषयान्तर्गत उपविषयों के वर्गीकरण में सार्वभौमिक दशमलव-प्रणाली का उपयोग किया गया है, जिससे विषयों की सहज बोधगम्यता का प्रादुर्भाव अनायास ही हो जाता है। संक्षेप में, यह पुस्तक ज्ञान-पिपासुओं और शोधित्सुओं के लिए निश्चय ही उपयोगी भेद, बारह भिक्षु-प्रतिमाएँ और समाधिमरण की दीर्घ चर्चा है। इन व्रतों के प्रतिपादन में साधु के साथ ही साथ साध्वियों के सामान्य आचार का समावेश हो गया है। पुनः श्रमण के विशेष आचार के अन्तर्गत सचेलक और अचेलक, जिनकल्प और स्थविरकल्प सपात्र और करपात्र एवं साध्वी अर्थात् निर्ग्रन्थी के विशेष आचार का प्रतिपादन किया गया है। यूँ तो श्रमण-सार के विभिन्न प्रकार पाये जाते हैं, जिनका आचार अपनी-अपनी सीमा में अलग-अलग ही निर्धारित है। लेकिन यहाँ मुख्यरूप से उक्त साधुओं के विभिन्न आचार-विचारों का ही निदर्शन करना अभीष्ट रहा है। अन्य आचार-विचारों में साम्य रहने पर भी निग्रन्थी अथवा साध्वी के कुछ आचार उनसे भिन्न ही होते हैं, जिनके सम्बन्ध में प्रकाश डाला गया है।

चतुर्थ-खण्ड में भी तीन अध्यायों का विधान किया गया है, जिनमें क्रमशः श्रमण-संघ-गच्छ, कुल, गण आदि, निर्ग्रन्थ संघ एवं उनका आचार तथा निर्ग्रन्थी-संघ एवं उनके आचार का वर्णन किया गया है। इस सन्दर्भ में ध्यान रखा गया है कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहाँ उनके सम्बन्ध में नातिदीर्घ परिचय प्रस्तुत हो वहाँ उनके विभिन्न नियम-उपनियमों का भी विश्लेषण किया जाये, ताकि विभिन्न दृष्टियों से उनके आचार पर पूर्ण प्रकाश पड़ सके।

—श्रमण—१९६६

जैन दर्शन अत्यन्त सूक्ष्म और गहन है। उसमें सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों धरातलों पर जीवन के विविध पक्ष उद्घाटित हुए हैं पर उसमें क्रमबद्धता न होने से अध्येता को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वर्षों से यह अनुभव किया जा रहा था कि जैन दर्शन के विविध विषयों के कोश प्रकाशित किये जांय। श्री बांठियाजी के अध्यवसाय व अथक प्रयास से यह युगान्तरकारी कार्य अब सम्पन्न होने जा रहा है। प्रथम चरण के रूप में यह लेश्या कोश हमारे सामने आया है। इसमें शब्द विनेचन, द्रव्य लेश्या (प्रायोगिक, विस्रसा), भाव लेश्या: लेश्या और जीव, सलेशी जीव, विविध आदि मूल वर्गों में विभाजित कर, प्रत्येक वर्ग को कई उपवर्गों मे बांट कर, जैन आगमों में इतस्त: लेश्या सम्बन्धी बिखरे हुए प्रसंगों को एक स्थान पर सयोजित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। मूल पाठ का शब्दार्थ व यथाप्रसंगानुसार विवेचनात्मक अर्थ देकर ग्रन्थ को सर्व साधारण के लिए उपयोगी बना दिया गया है। यह ग्रन्थ प्रत्येक पुस्तकालय, शोध केन्द्र व दर्शन के अध्येता के लिए समान रूप से उपयोगी है। इस महत्वपूर्ण प्रकाशन के लिये सम्पादक और प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

—डॉ० नरेन्द्र भानावत
(जिनवाणी—फरवरी १९६९)

जैन विषय कोश ग्रन्थमाला का यह प्रथम पुष्प है व जैन दशमलव वर्गीकरण ०४०४ है। इस कोश की रचना २३ श्वेताम्बर जैन ग्रन्थ व कुछ दिगम्बर ग्रन्थों से की गई है। इसमें ६ लेश्या-कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या अर्थात् छ प्रकार के परिणामों के हजारों भेद बताये गये हैं। लेश्या शब्द का विवेचन द्रव्य लेश्या, भाव लेश्या, लेश्या और जीव, सलेश जीव व विविध मिल ९ मूल वर्गों में से शब्द विवेचन ८ उपवर्गों में, द्रव्य लेश्या (प्रायोगिक) व ९ उपवर्गों में द्रव्य लेश्या (विस्रसा) व उपवर्गों में, भाव लेश्या ९ उपवर्गों में, लेश्या और जीव ९ उपसर्गों में सलेशी जीव २९ उपसर्गों में तथा विविध ९ उपसर्गों में विभाजित करके उनपर विस्तृत विवेचन किया है।

आजतक ऐसा लेश्या कोश प्रथम ही प्रकट हुआ है। लेश्या का अर्थ मनुष्यों के परिणाम है व ६ लेश्या के वृक्ष की कथा तो सारे जैन समाज में प्रचलित है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेकिन इन लेश्याओं के अनेकानेक भेद-प्रभेद विस्तारपूर्वक इस कोश में मूल गाथाओं सहित बताये गये हैं।

जैन वांगमयका दशमलय वर्गीकरण जिसमें जैन दर्शन, दार्शनिक पृष्ठ भूमि, धर्म, समाज विज्ञान. भाषा विज्ञान, विज्ञान, प्रयुक्त विज्ञान कलामनोरंजन, क्रीड़ा, साहित्य और भूगोल जीवनी-इतिहास पर अलग-अलग भेद सहित विवेचन इसमे मिलता है। ˙०४ जीव परिणाम का वर्गीकरण भी बताया गया है।

सारांश कि लेश्या परिणामों का विस्तृत विवेचन जानना हो तो यह ग्रन्थ उपयोगी है तथा विद्वानों के लिये तो यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है। साईज व परिश्रम के सामने मूल्य १० रुपया अधिक नहीं है। प्रत्येक जैन संस्था के लिये स्वाध्यायार्थ प्रकाशक से अवश्य मगावें।

—जैन मित्र
वीर सं० २४८५

पुस्तक में लेखक द्वय ने बड़ी विशदता और सफलता से जैन साहित्य में निहित लेश्या सम्बन्धी विभिन्न उल्लेखों का संचयन किया है। जो लेखक द्वय की ज्ञान साधना और जिज्ञासावृत्ति का बोध कराता है।

प्रस्तुत पुस्तक की पाठ्य-सामग्री के संकलन में ३२ आगमों और तत्त्वार्थ सूत्र का सहारा लिया गया है और उनके तुलनात्मक रूप को व्यक्त करने के लिये कतिपय दूसरे ग्रन्थों के उद्धरण भी उपस्थित किये हैं। संक्षेप में यह पुस्तक ज्ञान पिपासुओं के लिये उपयोगी बन पड़ी है और इसका प्रकाशन जैन वांगमय के क्षेत्र में क्रमबद्ध एवं विषयानुक्रम विवेचना का सूत्रपात करता है।

जैन दर्शन के सिद्धान्तों के चिन्तन-मनन की ओर विद्वानों की रुचि बढ़ रही है किन्तु मूल सिद्धान्त ग्रन्थों में उसका क्रमबद्ध-विषयानुक्रम विवेचन उपलब्ध न होने से समझने में काफी समय और श्रम लगाना पड़ता है और उसके बाद भी पूरी जानकारी न मिलने से निरुत्साहित हो जाते हैं। इस कमी की पूर्ति में कोष काफी सहायक होगा।

कोष में लेश्या के भेद, प्रभेद, उपभेद आदि के विवेचन द्वारा विषय का सर्वाङ्ग विवरण देने के लिये लेखक द्वय के प्रयत्न बधाई के पात्र हैं।

पुस्तक के लिये किये गये श्रम को देखते हुए मूल्य १०) रुपया काफी कम है और विद्वानों, विश्व विद्यालयों, ग्रन्थ भण्डारों आदि को अमूल्य भेंट देने के लिये प्रकाशक का विचार सराहनीय है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्त में ऐसे व्यवस्थित एवं उपयोगी लेखन और प्रकाशन के लिये लेखक एवं प्रकाशन का अभिनन्दन करते हैं और आशा करते हैं कि जैन रत्नाकर के अनेक अनमोल रत्नों का प्रकाश में लाने के लिने अपने चिन्तन-मनन और स्वाध्याय का सदुपयोग करके जैन वांगमय को समृद्ध व सम्पन्न बनायेंगे।

—श्रमणोपासक
अप्रैल १९६९

प्रस्तुत ग्रन्थ में लेश्याओं के सम्बन्ध में साङ्गोपांग विवेचन प्रस्तुत किया है। जैनधर्म में लेश्याओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनमे से द्रव्यलेश्या शरीर के वर्ण को कहते हैं तथा भावलेश्या कषायों के तीव्रतम, तीव्रतर, तीव्र, मंद, मंदतर, मंदतम परिणामों को कहते हैं। जैन ग्रन्थों में इनका यत्र-तत्र विशद विवेचन है किन्तु सर्वांगपूर्ण विवेचन एकत्र नहीं मिलता है। अतएव विद्वान् सम्पादकों ने अपने अथक परिश्रम पूर्वक श्वेताम्बर जिनागमों से इसका महत्त्वपूर्ण संकलन किया है। दिगम्बर आगमों से भी संकलन करने का उनका अपना विचार है। इसमें विषय, शब्द विवेचन, द्रव्यलेश्या, भावलेश्या, सलेशी जीव, लेश्या और विविध विषय, फुटकर पाठ आदि विविध अंगों पर विस्तृत विचार किया है। इस विषय पर एकत्र समीकरण करने का यह प्रथम प्रयास श्लाघनीय है।

— सन्मति संदेश, जनवरी १९६९

जैन दर्शन में छः लेश्यायें प्रसिद्ध है। लेश्या—यह आत्मा का परिणाम विशेष है। जहाँ-जहाँ लेश्या सम्बन्धी विवेचन प्राप्त हुआ है उसका संकलन किया है। ग्रन्थ बहुत सुन्दर बना है।

—सुघोषा
जनवरी १९६९

जैन दर्शन का शोधकर लेश्या-कोश एक महान ग्रन्थ बन गया है। शोधार्थियों के लिए अत्यन्त उपादेय है।

—कच्छी दशा ओसवाल प्रकाश
मार्च १९६९

जैन दर्शन सूक्ष्म और गहन है। इस लेश्या-कोश में सम्पादकों ने लेश्या सम्बन्धित पाठों को एकत्रित कर क्रमबद्ध विवेचन किया है। लगभग ५० पुस्तकों या उद्धरण दिया है। जैन दर्शन के अभ्यासियों के लिए यह कोश अत्यन्त उपादेय है। इस तरह सम्पादकों ने अन्य विषयों का भी संकलन किया है।

—जैन प्रकाश
फरवरी २३-२-६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस लेश्या-कोश में लेश्या सम्बन्धित पाठों का संकलन कर क्रमबद्ध सजाया है व हिन्दी अनुवाद किया है। लगभग ५० ग्रन्थों का शोधकर प्रस्तुत कोश को तैयार किया है। पुस्तक शोधार्थियों के लिए अत्यन्त उपादेय बनी है।

—**श्री ज्ञान० स्था० जैन सभा,** मासिक पत्रिका

लेश्या-कोश एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। जिसका देशी-विदेशी, जैन-अजैन सभी विद्वानों के द्वारा बहु समादृत हुआ।

—**मोहनलाल बैद**

लेश्या कोश

क्रिया कोश

योग कोश

इन तीनों के सम्पादक हैं—स्व० मोहनलाल बांठिया तथा श्रीचन्द चोरड़िया। सम्पादक-द्वय ने लेश्या, क्रिया और योग बिखरे सन्दर्भों को जैन आगम या साहित्य से एकत्रित कर उनको सुसंयोजित रूप को लेश्या कोश, क्रिया कोश और योग कोश के रूप में प्रकाशित किया था। सारा विषय ३५ बिन्दुओं में विभक्त है तथा हिन्दी भाषा के अनुवाद से अन्वित है। लेश्या कोश सन् १९६६ में, क्रिया कोश १९६९ में व योग कोश १९९४ में जैन दर्शन समिति, कलकत्ता से प्रकाशित हुआ है।

श्री भिक्षु आगम विषयक पूरोवाक्

—गणाधिपति तुलसी

—आचार्य श्री महाप्रज्ञ

सितम्बर १९९६

विद्वानों की सम्मति

लेश्या कोश—यह जैन वांगमय का श्वेताम्बर सामग्री-स्त्रोतों पर आधारित सर्वप्रथम विशेष कोश है। यद्यपि कोशकारों की योजना है कि वे दिगम्बर-सामग्री स्त्रोतों पर आधारित एक अन्य लेश्या कोश सम्पादित करें तथापि उनकी इस परिकल्पना ने अभी कोई आकार ग्रहण नहीं किया है। प्रस्तुत कोश, जैन कोश विज्ञान के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक आरम्भ है। समग्र कोश वैज्ञानिक विधि से सम्पादित है। इसलिए इसे हम केवल लेश्या सम्बन्धी शब्दों की विवरणिका नहीं कहेंगे, वरन एक ठोस कोश-रचना का अभियान देंगे। विद्वान कोषकारों ने प्रस्तावना में कोश रचना पद्धति, मेथाडोलोजी पर भी विशद प्रकाश डाला है। सम्पूर्ण योजना,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिसके अन्तर्गत कई महत्वाकांक्षी संकल्प धोषित हैं, भारतीय कोश रचना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण देन है। कोशकारों के शब्दों में लेश्या कोश हमारी कोश परिकल्पना का परीक्षण है। अतः इसमें प्रथमानुभव की अनेक त्रुटियां हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

प्रस्तुत कोश एक विशिष्ट कोश है। उन दिनों तीन प्रकार के कोश सामने आये हैं—१) विषय कोश, २) ग्रन्थकार कोश, ३) ग्रन्थ कोश। कोश सम्पादकों ने अनुसंधित्सुओं की उन कठिनाइयों का भी ध्यान रखा है जो किसी विषय के गहन अध्ययन-अनुसंधान में व्यवधान उत्पन्न करती है। उन्होंने इस तरह के दो-तीन संस्मरण भी प्रस्तावना में दिये हैं। वैसे कोशकारों ने विशिष्ट पारिभाषिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक विषयों की एक व्यापक सूची बनायी थी और तदनुसार १००० विषय भी चुने थे, किन्तु बाद में उस तालिका को सीमित कर लिया गया और कुल १०० विषय ही निश्चित कर लिये गए। इन्हें विवृत्ति के लिये दार्शनिक पद्धति से योजित किया गया है। संकलन में तीन बातों का विशेष ध्यान रखा गया है। पाठों का मिलान विषयों के उपविषयों का वर्गीकरण, हिन्दी अनुवाद।' इन सावधानियों से कोष अधिक उपयोगी बन गया है। प्रस्तावना केवल 'लेश्या कोष' की अनुभवों और कोषकारों की प्रयोगधर्मिता का ही विवरण नहीं है, अपितु इसके द्वारा कोषकारों ने अपनी सम्पूर्ण योजना (प्रोजेक्ट) को भी प्रस्तुत कर दिया है। वस्तुतः उक्त कोश के सम्पादन में कोशकारों का दृष्टिकोण सुस्पष्ट, निभ्रान्ति और वैज्ञानिक है। जैन विद्या के क्षेत्र में यह पहला कोश है. जिसने दार्शनिक पद्धति से विषयों का वर्गीकरण-प्रतिपादन किया है। कोश रचना की प्रक्रिया वैज्ञानिक प्रयोगधर्मी और समीचीन तो है ही, रोचक और सुविधाजनक भी है। कोश १९६६ ई० में प्रकाशित हुआ है। सम्पादक परम्परावादी नहीं प्रयोगधर्मी है। कोश रायल आकार में मुद्रित है। इसमें कुल ३९६ पृष्ट हैं। आरम्भ में एक सार्थक प्रस्तावना है, जिसमें कोशकारों ने कोश की उपादेयता, पद्धति, प्रक्रिया और उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। साथ साथ ही उस परिकल्पना को भी स्पष्ट किया है जो कोश की जननशीलता-जेनरेटिवनेस का द्योतक है। इस तरह यह कोश एक पड़ाव है अन्तिम गन्तव्य नहीं है। मूलतः कोशकारों की एक बृहत् योजना है, प्रस्तुत कोश जिसकी एक नगण्य किस्त है। प्रस्तावना से लगा हुआ श्री नथमल टांटिया का प्राक्कथन है, जिसमें उन्होंने कोश की उपयोगिता और उसकी विशिष्टताओं का उल्लेख किया है। हीराकुमारी ने आमुख लिखा है, जिसमें अनेक संभावनाओं, योजनाओं और परिकल्पनाओं को दिया गया है। आमुख का व्यक्तित्व समीक्षात्मक है। कुल मिलाकर 'लेश्या कोश' एक ऐसा संदर्भ ग्रन्थ है, जिसने न केवल जैन विद्या, अपितु प्राच्य विद्या को भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अलंकृत कर समृद्ध किया है। इसी शृङ्खला में सन् १९६९ ई० में "क्रिया कोश" प्रकाशित हुआ है, किन्तु इसके बाद क्या हुआ, यह अविदित है। लेश्या कोश के सम्पादक हैं—श्री मोहनलाल बांठिया और श्रीचन्द चोरड़िया।

—डा० नेमीचन्द जैन

इसके सम्पादक श्री मोहनलाल बांठिया और श्रीचन्द चोरड़िया हैं और इसके प्रकाशन का ग्रन्थभार श्री बांठिया ने उठाया है, जो कलकत्ता से सन् १९६६ में प्रकाशित हुआ। वे दोनों विद्वान जैन दर्शन और साहित्य में संशोधक रहे हैं। सम्पादकों ने सम्पूर्ण जैन वांगमय को सार्वभौमिक दशमलव वर्गीकरण पद्धति के अनुरूप १०० वर्गों में विभक्त किया है और आवश्यकतानुसार उसे यत्रतत्र परिवर्तित भी किया। मूल मूल्यों में से अनेक विषयों के उपविषयों की भी सूची इसमें सन्निहित है। इसके सम्पादन में तीन बातों को आधार माना गया है— १. पाठों का मिलान, २. विषय के उपविषयों का वर्गीकरण तथा, ३. हिन्दी अनुवाद मूल पाठ को स्पष्ट करने के लिए सम्पादकों ने टीकाकारों का भी आधार लिया है। इस संकलन का काम आगम ग्रन्थों तक ही सीमित रखा गया है। फिर भी सम्पादन, वर्गीकरण तथा अनुवाद के कार्य में निर्युक्ति, चूर्णि, वृत्ति, भाष्य आदि टीकाओं का तथा सिद्धान्त ग्रन्थों का भी यथा स्थान उपयोग हुआ है। दिगम्बर ग्रन्थों का इसमें उल्लेख नहीं किया जा सका। सम्पादक ने दिगम्बर लेश्या कोश को पृथक् रूप से प्रकाशित करने का सुझाव दिया है। कोश निर्माण में ४३ ग्रन्थों का उपयोग किया है।

—डा० पुष्पलता जैन, नागपुर

मिथ्यात्वी का आध्यत्मिक विकास पर प्राप्त समीक्षा

विद्वान लेखक ने 'मिथ्यात्वी के आध्यात्मिक विकास' विषय पर शोधपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है। इसके लिए लेखक बधाई के पात्र हैं।

—कस्तुरचंद ललवानी

मनीषी लेखक ने 'मिथ्यात्वी के आध्यात्मिक विकास के सम्बन्ध में शोधपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है।

—जबरमल भंडारी

श्रीचंदजी चोरड़िया ने मिथ्यात्वी की शुद्ध क्रिया से जिज्ञासा के अन्तर्गत अनेक उद्धरणों से सिद्ध किया है। इसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

—सूरजमल सुराना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास पुस्तक को पढ़कर हृदय गद्-गद् हुआ। बड़े मनोयोग से चिन्तनपूर्वक पुस्तक लिखी है। मानो मैं एक उपन्यास पढ़ रहा हूँ।

—डॉ० राजाराम जैन

'मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास' पुस्तक पढ़कर यह अनुभूति हुई कि सद्-क्रियाओं से मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास होता है। इसमें दो मत नहीं है।

—जिनेश मुनि

श्री चोरड़ियाजी ने इस विषय में जो परिश्रम किया है वह धन्यवाद के पात्र हैं। यह ग्रन्थ इसके पूर्व प्रकाशित लेश्या-कोश, क्रिया-कोश की कोटिका ही है। इन ग्रन्थों में श्री चोरड़ियाजी का सहकार था। हमें आशा है कि वे आगे भी इस कोटि के ग्रन्थ देते रहेंगे। विशेषता यह है कि आगमों में जितने भी अवतरण इस विषय में उपलब्ध थे – उनका संग्रह किया है। इतना ही नहीं आधुनिक काल के ग्रन्थों के भी अवतरण देकर ग्रन्थ को संशोधकों के लिए अत्यन्त उपादेय बनाया है—इनमें सन्देह नहीं है।

— **दलसुख मालवणिया**, अहमदाबाद

'मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास' यह पुस्तक अनेक विशिष्टताओं से युक्त हैं। एक मिथ्यात्वी भी सद्-अनुष्ठानिक क्रिया से अपना आध्यात्मिक विकास कर सकता है। साम्प्रदायिक मतभेदों की बातें या तो आई ही नहीं है अथवा भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों का समभाव से उल्लेख कर दिया गया है।

श्री चोरड़ियाजी ने विषय का प्रतिपादन बहुत ही सुन्दर और तलस्पर्शी ढंग से किया है। विद्वज्जन इसका मूल्यांकन करें। निःसन्देह दार्शनिक जगत के लिए चोरड़ियाजी की यह एक अप्रतिम देन है।

—**Glory of India**, दिल्ली

अनुमानतः लेखक ने इस ग्रन्थ को लिखने के लिए अनेकानेक ग्रन्थों का अवलोकन किया है। टीका-भाष्यों के सुन्दर संदर्भों से पुस्तक अतीव आकर्षक बनी है।

—**मुनिश्री जशकरण**, सुजानगढ़

विद्वान् लेखक ने यह स्पष्ट करने का साधार प्रयत्न किया है कि मिथ्यात्वी का कब और किस प्रकार विकास हो सकता है। लेखक और प्रकाशक इतने सुन्दर ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए बधाई के पत्र हैं।

—**डा० भागचन्द्र जैन**, नागपुर

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

लेखक ने अपने इस ग्रन्थ में शोधसार समाविष्ट कर शोधार्थी विद्वज्जनों के लिए मार्ग प्रशस्त किया है। यत्र-तत्र पेचीदे प्रश्नों को उठाकर उसका सोदाहरण व शास्त्र-सम्मत समाधान भी किया गया है।

—**दामोदर शास्त्री**, दिल्ली

श्रीचन्द चोरड़िया के विशिष्ट ग्रन्थ 'मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास' में शास्त्रीय दार्शनिक दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण प्रतिपादन हुआ है। जैन धर्म के तात्विक चिन्तन में रूचि रखनेवालों के लिए तो यह पुस्तक ज्ञानवर्द्धक और रसप्रद है ही किन्तु साम्प्रदायिक अनाग्रह और वैचारिक उदारता के इस युग में हर बौद्धिक और चिन्तनशील व्यक्ति के लिए इसका स्वाध्याय उपयोगी भी है।

—**मुनिश्री राकेशकुमार**, कलकत्ता

पुस्तक में नौ अध्याय है—विभिन्न दृष्टिकोणों से मिथ्यात्वी अपना आत्म विकास किस रूप में किस प्रकार कर सकता है—यह दर्शाया है। जैन सिद्धान्त के प्रमाणों के आधार पर इस विषय को स्पष्टतया पाठकों के समक्ष लेखक ने सरल सुबोध भाषा में रखा है। जिसके लिए वे बधाई के पात्र हैं। शास्त्रीय चर्चा को अभिनव रूप में प्रस्तुत करने में लेखक सफल हुए हैं (वीर वाणी)।

—**भँवरलाल जैन न्यायतीर्थ**, जयपुर

'मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास' पुस्तक में आलेखित पदार्थों के दर्शन से जैन दर्शन व जैनागमों की अजैनों की तरफ उदात्त भावना और आदरशीलता प्रकट होती है। एवं जैन धर्म को अप्राप्त आत्माओं में कितने प्रमाण में आध्यात्मिक विकास हो सकता है—इत्यादिक विषयों का आलेखन बहुत सुन्दरता से जैनागमों के सूत्रपाठों से दिखाया गया है। इसलिए विद्वान् श्रीचन्द चोरड़िया का प्रयास बहुत प्रशंसनीय है और यह ग्रन्थ दर्शनीय है।

राम सूरी (डेलावाला), कलकत्ता

लेखक की यह कृति पाठकों का ध्यान एक नई दिशा की ओर खींचती है। शास्त्र मर्मज्ञ विद्वानों को विविध विषयों पर गहराई से चिन्तन करने की ओर प्रवृत्ति करने में यह पुस्तक सहायक बनेगी।

—**डा० नरेन्द्र भणावत**, जयपुर

प्रायः यह समझा जाता है कि मिथ्यात्वी व्यक्ति धर्माचरण का अधिकारी नहीं है और उसका आध्यात्मिक विकास नहीं हो सकता। भ्रान्ति का निरसन विद्वान्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेखक ने सरल-सुबोध किन्तु विवेचनात्मक शैली में और अनेक शास्त्रीय प्रमाणों को पुष्टिपूर्वक किया है।

—**डा० ज्योति प्रसाद जैन**, लखनऊ

यह अपने विषय की अपूर्वकृति है। मनीषी लेखक ने लगभग दो सौ ग्रन्थों का गम्भीर परायण एवं आलोडन करके शास्त्रीय रूप में अपने विषय को प्रस्तुत किया है। परिभाषाओं और विशिष्ट शब्दों में आबद्ध तात्विक प्ररूपणाओं एवं परम्पराओं को उन्मुक्त भाव से समझने के लिए यह कृति अतीव मूल्यवान् है। (श्रमण पत्रिका)।

—**जमनालाल जैन**, वाराणसी

शास्त्र प्रमाणों से परिपूर्ण इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने नौ अध्यायों में प्रस्तुत विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है।

—**भँवरलाल नाहटा**, कलकत्ता

लेखक ने काफी विस्तार के साथ उक्त चर्चा को पुनः चिन्तन का आयाम दिया है। पुस्तक एक अच्छी चिन्तन सामग्री उपस्थित करती है।

—**पं० चन्द्रभूषणमणि त्रिपाठी**, राजगृह

आपकी पुस्तक मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास अत्यन्त खोजपूर्ण एवं मनोयोग से लिखी गई है। तदर्थ मेरा धन्यवाद स्वीकार करें। आपका प्रयत्न एवं श्रम श्लाघनीय है।

—**हरीन्द्रभूषण जैन**

४ मई १९७८

अध्यक्ष—प्राकृत एवं जैनीज्म विभाग आल इण्डिया ओरियंटल कान्फ्रेंस

प्रस्तुत पुस्तक गहरे चिन्तन से साथ लिखी गई है। चोरड़ियाजी का यह प्रयास सराहनीय है।

—**अगरचन्द नाहटा**

मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास एक अनुठी कृति है।

—**मुनि महेन्द्रकुमार, प्रथम**

आपकी पुस्तक मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास अत्यन्त खोजपूर्ण एक मनोयोग से लिखी गई है। आपका प्रयत्न एवं श्रम सराहनीय है।

—**मांगीलाल लूणिया**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रिया-कोश पर प्राप्त समीक्षा

Prajnachakshu Pandit Sukhlal D. Litt., Ahmedabad.

After Lesya-Kosa I have received your Kriya-Kosa, thanks. I have heard the Editorial, Forward, Preface in full and certain portions thereafter. I am surprised to find such dilligence such concentration and such devotion to learning. Particularly so because such person is realy found in business community who dedicates himself to learning like a BRAHMIN.

Dr. Adinath Neminath Upadhya D. Litt. Shivaji University. Kolhapur.

I am in receipt of the copy of the 'Kriya-Kosa' so kindly sent by you. It is a remarkable source book which brings in one place so systemetically. the references and extra which shed abundant light on the usage of the term Kriya in Jainism. The Kosas that are being brought out by you will prove of substantial help to the future compilation of an encyclopaedia on Jainism. I shall eagerly look forth to the publication of your DHYAN KOSA.

With felicitations on your scholarly achiements.

Dr. P. L. Vaidya, D. Litt Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona-4

I am very grateful to you for your sending me a copy of your Cyclopaedia of Kriya. I have read a few pages already and find it as useful as your Lesya Kosa. Please do bring out similar volumes different topics of Jain Philosophy, of course, this may not bring you any material wealth, but I am sure students of Jain Literature will surely bless you for having offered them a real help in their study.

Prof. Hiralal Rasikdas Kapadiya, Surat, Bombay.

This work (Kriya Kosa) Will be very useful to scholars interested in Jainology. The learned editors deserve hearty congratulations for having undertaken such a laborious and tedious task.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Mlthyatvi Ka Adhyatmika Vikasa written by Sri Srichand Choraria, Jain Darsana Samiti 16C, Dover Lane, Calcutta-29 p. p. 24 and 360

This is a philosophical treatise. it describes carefully the manifestation of the soul according to Jain tradition. it deals with the problem whether the mithyatvi can have a manifestation and the author has proved that in a possible way

The book is divided into nine chapters including conclusion Each chapter has several sub sections, or rather points on which the author has discussed a lot each section of each chapter is replete with sample quotations proving the conclusion of the author.

This book shows the masterly scholarship of Sri Srichand Choraria over the subject The language of the author is simple, but forceful and the analysis is praise worthy. The author has consulted quite a number of books and has given a substanned effort for the better production of the thesis The work is more than a D. Lit.

The printing of the book is good and the binding as well. The book must be in the shelf of the library of every learned scholar.

University of Calcutta
20 Sept. 1984 —SATYA RANJAN BANERJEE

The "**Spiritual Development of a Perverted One**" elucidates one of the most difficult topics of Jain Philosophy. The subject itself is controversial and requires a very through understanding of the subite points of Jain Ethics. In this work the author has substantiated the view that a perverted one partially make an advancement in the direction of spiritual development The author has collected all the evidence from the available Jain sources—the Swetamber as well as the Digamber Canonical Texts. At some places, he also quotes the non. Jain Texts which Clearly accept the themes.

The whole work is a logical treatment based on the authentic texts and authentic commentaries. The book itself has become a sort of "**cyclopaedia**" on the subject.

Incidentally, the author has explained many other topics concerning other aspects of Jain Philosophy, such as the nature of Jnana and ajnana, darsana labdehis ;etc.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

It is hoped that the work will go a long way in helping the Jain students and scholars for understanding the technical subjects which are otherwise very difficult to comprehend.

Muni Shri Mahendra Kumar
(Disciple of Acharya Shri Tulsi)

क्रिया-कोश पर प्राप्त समीक्षा

प्राचीन आगम साहित्य में यत्र-तत्र क्रियाओं का उल्लेख बिखरा पड़ा है। कहीं पर कुछ वर्णन है तो कहीं पर कुछ। प्रबुद्ध पाठक भी उन सब उल्लेखों का एकत्र अनुसधान एवं चिन्तन करने में कठिनाई का अनुभव करता है। साधारण जिज्ञासु पाठकों की कठिनाई का अनुभव करता है। साधारण जिज्ञासु पाठकों की कठिनाई का कहना ही क्या ? कभी-कभी तो साधारण अध्येता इतनी उलझन में फंस जाता है कि सब कुछ छोड़कर किनारे ही जा बैठता है। श्री मोहनलालजी बांठिया ने उन सब वर्णनों का क्रिया-कोश के रूप में एकत्र संकलन कर वस्तुतः भारतीय वाङ्मय की एक उल्लेखनीय सेवा भी है। मैं जानता हूँ—यह कार्य कितना अधिक श्रमसाध्य है। चिन्तन के पथ की कितनी घाटियों को पार कर मंजिल पर पहुँचना होता है। प्रतिपाद्य विषय की विभिन्न भागों में वर्गीकरण करना अधिक उलझन भरा होता है परन्तु श्री बांठियाजी अपने धुन के एक ही व्यक्ति है। उनका चिन्तन स्पष्ट है। वे वस्तु-स्थिति को काफी गहराई से पकड़ते हैं उसका उचित विश्लेषण करते हैं।

—उपाध्याय अमर मुनि
२० अक्टूबर १९६९

इसके सम्पादक श्री मोहनलाल बांठिया और श्रीचन्द चोरड़िया हैं और प्रकाशन किया है जैन दर्शन समिति, कलकत्ता ने सन् १९६९ में। श्री बांठिया जैन दर्शन के सक्षम विद्वान हैं। उन्होंने जैन विषय कोश की एक लम्बी परिकल्पना बनाई थी और उसी के अन्तर्गत यह द्वितीय कोश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस कोश का भी संकलन दशमलव वर्गीकरण के आधार पर किया गया है और उनके उपविषयों की एक लम्बी सूची है। क्रिया के साथ ही कर्म विषयक सूचनाओं को भी इसमें अंकित किया गया है। लेश्या कोश के समान ही इस कोश के सम्पादन में भी पूर्वोक्त तीन बातों का आधार लिया गया है। इसमें लगभग ४५ ग्रन्थों का उपयोग किया गया है। जो प्रायः श्वेताम्बर आगम है। कुछ दिगम्बर ग्रन्थों का भी उपयोग किया गया है। सम्पादक ने उक्त दोनों कोषों के अतिरिक्त पुद्गल कोश, दिगम्बर लेश्या कोश, परिभाषा कोश को भी संकलन किया था, परन्तु अभी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इनका प्रकाशन नहीं हो सका है। इस प्रकार के कोश जैन दर्शन को समुचित रूप से समझने में निसंदेह उपयोगी होते हैं।

—डॉ० नेमिचन्द जैन

वर्धमान जीवन कोश, प्रथम खण्ड पर प्राप्त समीक्षा

Vardhamana-Jivana Kosha compiled and edited by Mohanlal, Banthia and Srichand Choraria, Jain Darsan Samiti, 16C, Dover Lane, Calcutta-700 029, 1980 p.p. 51+584.

The publication of Vardhamana-Jivana-Kosha Cyclopaedia of Vardhamana, compiled and edited by Mohanlal Banthia and Srichand Choraria, is a unique contribution to the scholarly world of Jainistic studies The conception of compiling a dictionary on the life and teaching of Lord Mahavira is itself a new one, and the compilers must be thanked for such a venture.

This type of cyclopaedia has been a desirable for a long time The book is divided into several sections as far os 99 and sub-divided into sevaral other decimal points for the easy reference. The system followed in this classification is the international decimal system. Each decimal point is arranged in accordance with the topic connected with the life and history of Vardhamana Mahavira In each section and under each topic the original quotations from nearly 100 books followed by Hindi translation are given. These quotations are not only valuable, but they represent the authenticity of the incidents of the life of Mahavira To compile such quotations in one place is a monumental one and tremendous labour involved therein

This Jain Darsana samiti has published two other Kosas Les'ya Kos'a (1966) and Kriya Kosa (1969). The Pudgala Kosa and the Dhyana-Kosa seen to have been compiled and awaiting publications for a decade now

The Vardhamana Jivana-Kosa is not only unique but also very useful for the handy reference, to the source material on Mahavira's life story. The author has ransacked both the Swetambera and Digambara materials. This is an exceptionally good book and must

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

be used by all scholars who want to work on Jainism, particularly on Mahavira's life.

The book is well-printed and carefully executed. The printing mistakes are exceptionally few. The book is well bound as well. I hope this book will receive good demand from the libraries of the world.

University of Calcutta
20th Sept 1984 —SATYA RANJAN BANERJEE

The present work is the third volume in the series of Cyclopaedia of Jainism proposed to be published on behalf of Late Shri Mohan Lal Banthia. The first volume was the Cyclopaedia of Lesya and the second volume was the cyclopaedia of kriya. Both these volumes promed to be the complete cyclopaedia of two highly technical subjects of Jain Philosophy. Now, this third volume, which is an exhaustive collection of material related to the life of Beagawan Mahavira. whose birth-name was Vardhamana.

The learned compilers of this cyclopaedia work, Late Shri Mohan Lal Banthia and Shri Shrichand Choraria, have taken pains to collect all the available material concerning the life of Bhagawan Mahavira from all literary sources—the Jain canons, the commentaries on the Jain canons, the later non-canonical Prakrit and Sanskrit works, the Buddhist Pali texts, as well as other available sources.

The present work is only the first part of the volume, which will be published in three parts. The decimal system used for classifieation of topics signifie a scientific approach in topical classification and makes it easy to find out any sub-topic.

It is definitely an unique work on the life of Bhagawan Mahavira, elucidating simultaneously all the aspects including those of historical significance. The combedeo deserve congratulations for their hard labour. The cyclopaedia publications in the series will become a valuable repository of Jain learning for ages to come.

—Muni Shri Mahendra Kumar
(Disciple of Acharya Shri Tulsi)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसमें मूल श्वेताम्बर जैन आगमों से तो सामग्री ली ही गई है और आगमों की टीकाओं—निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, संस्कृत से भी सामग्री एकत्र की गई है। इतना ही नहीं उसके अलावा दिगम्बर मौलिक ग्रन्थों कषाय-पाहुड आदि का भी उपयोग किया गया है इतना ही नहीं किन्तु श्वेताम्बर और दिगम्बर पुराणों और आचार्यों द्वारा लिखित संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश भाषा में लिखे गए महावीर के चरित ग्रन्थों से भी सामग्री का संकलन किया गया है। इस तरह यह वास्तविक रूप से 'वर्धमान जीवन कोश' नाम को सार्थक करता है।

—दलसुख मालवणिया

वर्धमान जीवन कोश प्रथम भाग में मनीषी लेखक ने च्यवन से परिनिर्वाण तक सामग्री को सजाया है। बड़ी सजगता से विषय का प्रतिपादन हुआ है।

—कस्तुरचंद ललवानी

सर्वांगीण रूप से 'वर्धमान जीवन कोश' में भगवान् महावीर के जीवन वृत्त का प्रतिपादन हुआ है।

—बच्छराज संचेती

यह एक महत्वपूर्ण व प्रशंसनीय कृति है।

—सम्पादक, तुलसीप्रज्ञा, सोलंकी

यह ग्रन्थ भगवान् महावीर के जीवन सम्बन्धी संदर्भों का विस्तृत विश्वकोश है। लेश्या कोश, क्रिया कोश की भांति इसका निर्माण भी अन्तरराष्ट्रीय दशमलव वर्गीकरण पद्धति से किया गया है। इसमें सन्देह नहीं है कि शोधार्थियों के लिए यह ग्रन्थ अतीव उपयोगी सिद्ध होगा।

—डा० ज्योतिप्रसाद जैन, लखनऊ

'वर्धमान जीवन कोश' जैन विद्या के क्षेत्र का एक अपरिहार्य, अपूर्व, बहुमूल्य संदर्भ ग्रन्थ है। पूर्व प्रकाशित लेश्या कोश, क्रिया कोशों का जो स्वागत देश-विदेश में हुआ है वह उजागर है। इसी तरह का मूल्यवान् संदर्भ ग्रन्थ यह भी है। अस्तु कोश उपयोगी है और भगवान् महावीर के जीवन के सम्बन्ध में बहुविध जानकारी दे रहा है।

—डा० नेमीचन्द जैन, इन्दौर

सम्पादक—तीर्थङ्कर

'श्री वर्धमान जीवन कोश' प्रथम खण्ड देखने को मिला। यह पुस्तक सर्वप्रथम पुस्तक है जिसमें भगवान् महावीर की जीवनी यथार्थ रूप से देखने में आई है।

—मुनिश्री लालचन्द (श्रमण संघीय), कलकत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादक द्वय का गहन अध्ययन और अथक श्रम इस ग्रन्थ में प्रतिम्बित हुआ है। शोधार्थियों के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है।

—**श्री कन्हैयालाल सेठिया**, कलकत्ता

जैन दर्शन समिति (१६-सी, डोवर लेन, कलकत्ता-२९) द्वारा श्री श्रीचन्द चोरड़िया के सम्पादन में 'वर्धमान जीवन कोश' कृति का प्रकाशन हुआ है। प्रारम्भ में स्वनामधन्य आदरणीय जैनरत्न श्री मोहनलालजी बांठिया इस योजना के प्रवर्तक थे। श्री चोरड़ियाजी के सहयोग से यह ग्रन्थ तैयार हुआ था। भगवान् महावीर की जीवनी से सम्बन्धित सामग्री को प्रस्तुत करने वाला यह ग्रन्थरत्न अत्यन्त उपयोगी एवं संग्रहणीय है।

अखिल भारतीय प्राच्यविद्या सम्मेलन, ३१वें अधिवेशन में प्राकृत एवं जैन विद्या विभाग—अध्यक्षकीय भाषण

२९ से ३१-१०-८२

प्रस्तुत समीक्ष्य ग्रन्थ 'वर्धमान जीवन कोश' का प्रकाशन जैन विषय कोश के अन्तर्गत हुआ। सम्पादक द्वय ने इस ग्रन्थ की सामग्री साम्प्रदायिकता के दायरे से हटकर उपलब्ध समस्त वाङ्मय से एकत्रित की है। प्रस्तुत प्रकाशित प्रथम खण्ड में तीर्थंकर महावीर के जीवन विषयक, च्यवन से परिनिर्वाण तक का विषय संयोजित हुआ है। सामग्री की प्रस्तुति में सम्पादन कला का निर्दोष उपयोग हुआ है।

—**डा० भागचन्द्र जैन**, नागपुर

भगवान् महावीर के जीवन से सम्बन्धित यह 'विश्व कोश' है। भगवान् महावीर के जीवन और सिद्धांतों के विषय में विपुल साहित्य की रचना हुई है, किन्तु वह इतना फैला हुआ है कि शोधकर्त्ताओं को इसकी पूरी जानकारी प्राप्त करने में बड़ी कठिनाई होती है। आलोच्य कोश ने उस कठिनाई को बहुत कुछ अंशों में दूर कर दिया।

—**यशपाल जैन**, दिल्ली

भगवान् महावीर की जीवनी सम्बन्धी समस्त पहलुओं के अवतरणों का संग्रह करने में विद्वान सम्पादकों ने बड़े ही धैर्यपूर्वक श्रुतसमुद्र का अवगाहन कर बहुत ही महत्वपूर्ण भागीरथ प्रयत्न किया है।

—**भंवरलाल नाहटा**, कलकत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह ग्रन्थ जैन आगम और आगमेतर साहित्य पर शोध कर रहे छात्रों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

—**मंगलप्रकाश मेहता**, वाराणसी

वर्धमान महावीर के जीवन की आधारभूत सामग्री का यह प्रामाणिक संदर्भ ग्रन्थ शोधार्थियों के लिए अत्यन्त ही उपयोगी और पथप्रदर्शक है।

—**डा० नरेन्द्र भाणावत**, जयपुर

यह ग्रन्थ अपने आप में अद्वितीय अनूठा और विद्वानों के लिए बहुमूल्य निधि है। इसके पीछे सूझ-बूझ के साथ कष्ट साध्य पुरुषार्थ हुआ है। भगवान् के जीवन सम्बन्धी जो और जितनी सामग्री इसमें संकलित हुई है, पहले किसी ग्रन्थ में नहीं हुई। जिस निष्ठा, अनुभव और धैर्य से यह कोश सम्पन्न हुआ है, वह अभिनन्दनीय है।

—**श्री रतनलाल डोशी**, सैलाना

महाश्रमण भगवान् महावीर पर अब तक अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है, पर प्रस्तुत ग्रन्थ का अपना विशेष महत्व है। यह सम्पादक द्वय की उदार एवं समन्वयवादी दृष्टि को उजागर करता है। प्रस्तुत ग्रन्थ विद्वानों के लिए, विशेष रूप से शोध छात्रों के लिए विशेष उपयोगी है।

—**मंगलदेव शास्त्री**, राजगृह

भगवान् महावीर के च्यवन से परिनिर्वाण तक का विस्तारपूर्वक विवेचन इस कोष में किया गया है। दिगम्बर-श्वेताम्बर एवं जैनेतर सामग्री का यथास्थान संकलन कर इतिहास प्रेमियों एवं शोध छात्रों के लिए इसे एक संदर्भ ग्रन्थ बना दिया है।

—**श्री भंवरलाल जैन न्यायतीर्थ**, जयपुर

भगवान् महावीर के जीवन की अपूर्व व विशद सामग्री है। इस कार्य को पूरा कर दिखाने में यह आपके परिश्रम व तप का ही फल है।

—**कंवर साहब मानसिंहजी**, लावा सरदारगढ़

इसमें भगवान् महावीर के जीवन से सम्बन्धित काफी सामग्री एकत्रित है। इस विषय में शोध करने वालों के लिए ग्रन्थ बहुत ही उपयोगी बन सकेगा—ऐसा विश्वास है।

युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

मैंने इसे पूरी तरह पढ़ा। इसे बहुत पसन्द किया। महावीर के विषय में बहुत-सी अनजाने तथ्यों की जानकारी मिली।

—**प्रवीणचन्द्र मेहता,** वासुदेवपुर, वर्धमान

स्व० मोहनलालजी बांठिया एवं उनके अनन्य सहयोगी श्रुत स्वाध्यायी श्रीचंदजी चोरड़िया के अथक परिश्रम का साकार रूप में जैन कोश के विभिन्न विषयों पर आधारित हमारे सम्मुख प्रकाशित होकर आ रहा है। जब-जब मैं इन पुस्तकों को देखता हूँ—बड़ा आश्चर्य होता है कि कलकत्ता जैसे महानगर में व्यस्त रहते हुए इन दोनों मनीषिमों ने इतना भगीरथ प्रयत्न करने का दु:साहस किया है और इन्हें सफलता मिल रही है। इसका बड़ा आश्चर्य है।

वर्धमान जीवन कोश के तीनों खण्ड देखें। सामग्री बहुत एकत्रित की है। सभी उद्धरणों के साथ उनकी साज-सज्जा की है। अनेक विवरण भी दिये हैं।

जैन आगम, श्वेताम्बर ग्रन्थ, दिगम्बर ग्रन्थ, बौद्ध एवं वैदिक दर्शन से भी संकलन है। संदर्भ और उद्धरण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गम्भीर अध्ययन और खोज के बाद कोश का निर्माण किया गया है। प्रथम खण्ड, द्वितीय खण्ड में क्रमश: भगवान् का जीवन, पूर्वभव का विवरण है। तृतीय खण्ड सजिल्द तैयार है देखकर पूरा संतोष है। श्रीचंदजी को इस कार्य में गति लाना है।

—**सुशील कुमार जैन**

स्व० मोहनलाल बांठिया एवं उनके अनन्य सहयोगी श्रुत स्वाध्यायी श्रीचन्दजी चोरड़िया के अथक परिश्रम का साकार रूप जैन कोश के विषयों पर आधारित हमारे सामने प्रकाशित होकर आ रहा है। जब-जब मैं इन पुस्तकों को देखता हूँ बड़ा आश्चर्य होता है कि कलकत्ता जैसे महानगर में व्यापार में व्यस्त रहते हुए—इन दोनों मनीषियों ने इतना भगीरथ प्रयत्न करने का दुस्साहस किया है उन्हें सफलता मिल रही है। इसका बड़ा ही गौरव है।

अस्तु वर्धमान जीवन कोश तीनों खण्ड देखें। सामग्री बहुत संग्रह की है। सभी उद्धरणों के साथ उनकी प्राप्ति स्थान का विवरण भी दिया है।

जैन आगम, ग्रन्थ—श्वेताम्बर-दिगम्बर ग्रन्थ एव विपुल जैनेतर ग्रन्थों का भी उद्धरण है। संदर्भ और उद्धरण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गंभीर अध्ययन और अन्वेषण के बाद कोश का निर्माण किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वाध के दोनों खण्डों के टाइप भी इतने सुधड़-मनोरंजन नहीं है। तृतीय खंडों को देखकर पूरा संतोष होता है। सामग्री का चयन तीनों खण्डों का उत्तम है।

गेटप भी तृतीय खण्ड पीछले दोनों खण्डों से बहुत सुन्दर है। श्रीचंदजी इस कार्य में भगीरथ प्रयत्न किया है।

—जिनेश मुनि

इसमें वर्धमान तीर्थङ्कर के च्यवन से परिनिर्वाण तक का बड़े तलस्पर्शी ढंग से संकलन हुआ है। कोश बड़ा रोचक बन पड़ा है।

—चन्द्र शेखर सागर सूरि

वर्धमान जीवन-कोश द्वितीय खंड की समीक्षा

VARDHAMAN JIVAN-KOS Vol II, ed by Mohanlal Banthia and Srichand Choraria, Jain Darsan Samiti, Calcutta, 1984, Pages 45+343. Price Rs. 65.00.

This is an age of systematic enquiry and research. So, when a scholar undertakes the study of a particular topic, he does not rest satisfied with a single source or version handed down to him by traditions, literary, epigraphical or oral. Whereas a simple believer would not question the authority of the scriptures or traditions he puts his faith in, the modern investigator would try to explore all the sources relating to the subject under study, and examine thoroughly all the aspects and relevant details connected with it. This unbounded spirit of enquiry and tendency to a comprehensive methodical approach have been greatly facilitated by the discovery, publication or availability and specialised studies of the diverse source material related to almot every subject or branch of learning which may arouse the interest of a scholar. There is thus now no dearth of source material of various kinds and categories on almost any topic which is sought to be investigated. This is itself, however, makes the task of the researcher much more arduous and time-consuming. And, herein lies the importance of different kinds of refrence books which render his task comparatively easy and smooth. Topical dictionaries constitute a very valuable class of such reference books.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

So far, as Jainological studies are concerned, encyclopaedias like the **Abhidhana Rajendra Kosa** and the **Jainendra Siddhanta Kosa,** several bibliographies, collections of colophons, catalogues of manuscripts, glossaries of technical terms, dictionaries of historical persons and places, and collections of inscriptions and of other historical records like pontifical genealogies and **Vijnapti-patras,** etc. have already been published. These reference books are undoubtedly of immence help to the research scholar of Jainological studies. The conception of topical dictionaries like the present one is, however, a bit different from that of the works mentioned above.

The late Sri Mohanlal Banthia was, perhaps the first to initiate, develop and launch upon a scheme of compiling topical dictionaries of Jaina religion, philosophy and traditions. He was lucky in having a hardworking, dedicated and competent assistant in Pt Srichand Choraria. The scheme covered about a thousand topics, but to begin with they compiled and published in 1966 the **Lesya-Kos,** in 1969 the **Kriya-Kos,** in 1980 the **Vardhaman Jivan-Kos** Part I, and its Part II in 1984 in the form of the present publication.

The object in compiling and publishing this **'Cyclopaedia of Vardhaman',** as they have called it, is to indicate with references the known sources, quoting the different texts with their Hindi translations, on almost all the details or data relating to Bhagavan Vardhamana Mahavira (599-527 B. C.), the 24th and last Thirthankara of the Jaina tradition. The sources utilised include the canonical texts, their commentaries and the non-canonical literature of the Swetambara tradition, alongwith the more important works of the Digambara tradition, a few of Buddhist and Brahamanical works relevant to the purpose, and some later encyclopaedias, dictionaries and reference volumes.

Part I of the **Kos** contained details of the life of the great Hero from his conception to **nirvana,** whereas Part II, the present volume, deals with the 33 or so previous births of him as gleaned from the Swetambara and Digambara sources, incidentally facilitating a comparative study of the two traditional accounts, besides, the five **kalyanakas** or auspicious events of his life, his aliases or epithets, his eulogies, his **samavasarana, divya-dhvani** or Discourse Divine, his Sangha or the fourfold order, his disciples including the eleven

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ganadharas headed by Indrabhuti Gautama with particulars about each, and many other minor or miscellaneous details.

On many points, the information collected in this part supplements that contained in the first part. The topics have been classified and arranged in the international decimal system as adepted by the editors of this Kos and used in their earlier topical dictionaries, mentioned above.

There is no doubt as to the value and usefulness of this unique topical dictionary of the Tirthankara Mahavira for scholars and research workers. We heartily congratulate the learned Pt Srichand Choraria for accomplishing this very painstaking and time-consuming task so satisfactorily. The Jain Darsan Samiti and its Office-bearers deserve thanks for publishing the Volume.

—Jyoti Prasad Jain
Jyoti Nikunj,
Charbag, Lucknow-1
13 March 1984

वर्धमान जीवन कोश (द्वितीय खंड) बड़ी मेहनत से तैयार किया गया है। इस समय का यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ मथन है। यह पढ़ने वालों से भी मनन करने वालों के लिए सरल और बिल्कुल सही साबित हुआ है और होता रहेगा। इसमें प्रसंग क्रमशः है परन्तु ऐसा होते हुए भी अलग-अलग है।

— **मानकमल लोढ़ा,** दीनापुर (नागालैंड)
३ मार्च १९८७

प्रस्तुत समीक्ष्य ग्रन्थ 'वर्धमान जीवन कोश' का द्वितीय खण्ड अपने आपमें अनूठा और अद्वितीय है। महावीर-जीवन सम्बन्धी सन्दर्भ ग्रन्थ में सम्पादक द्वय का भगीरथ प्रयत्न और गम्भीर अध्ययन प्रतिबिम्बित हो रहा है। आगमों में यत्र-तत्र बिखरी सामग्री को एकत्र कर इस तरीके से सजाया है कि शोध विद्यार्थियों के लिए बड़ी सुगमता कर दी है। प्रस्तुत ग्रन्थ के संकलन-संपादन में शताधिक ग्रन्थों का उपयोग संपादक की 'एगग्गा चित्तोभविस्सामित्ति' एकाग्र चित्तता का अवबोधक है।

आगम-सिन्धु का अवगाहनकर अनमोल मोतियों के प्रस्तुतीकरण का यह प्रयास सचमुच महनीय और प्रशस्य है।

—साध्वीश्री यशोधरा
२९ अगस्त १९८७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्धमान जीवन कोश (द्वितीय खण्ड) में भगवान् महावीर के जीवन सम्बन्धित अनेक भवों की विचित्र एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह कार्य अति उत्तम एवं प्रशंसनीय है।

इसके लेखक मोहनलालजी बांठिया तथा श्रीचन्दजी चोरड़िया के श्रम का ही सुफल है। यह ग्रन्थ इतना सुन्दर एवं सुरम्य बन सका है। शोधकर्त्ताओं के लिए यह ग्रन्थ काफी उपयोगी होगा— ऐसा विश्वास है। रिसर्च करने वालों को भगवान् वर्धमान के सम्बन्ध में सारी सामग्री इस ग्रन्थ में उपलब्ध हो सकेगी।

—**मुनिश्री जसकरण,** सुजान, बोराबड़ (सुजानगढ़ वाले)

९ मई १९८७

श्रीचन्दजी चोरड़िया का 'वर्धमान-जीवन-कोश द्वितीय खण्ड' समाप्त हुआ। ग्रन्थ-प्रेषण हेतु आभार-ज्ञापन।

भगवान् महावीर पर सम्प्रति-पर्यन्त बहुविध स्तरीय कार्य हुए हैं, किन्तु यह ग्रन्थ अपने आप में अभूतपूर्व है। शोध-स्नातकों के लिए तो यह ग्रन्थ सारस्वत वरदान सिद्ध होगा, ऐसा मेरा आत्म-विश्वास है। 'वर्धमान जीवन-कोश' का प्रथम खण्ड भी उपादेय सिद्ध हुआ था। यद्यपि सामान्यतया लोग कोश-निर्माण के कार्य को महत्ता की दृष्टि से नहीं देखते, परन्तु मेरा विचार है कि मौलिक चिन्तनमूलक ग्रन्थ-लेखन उतना वैदुष्यपूर्ण और श्रमसाध्य नहीं है, जितना कि कोस-संग्रहीत करना। मैं ऐसे ग्रन्थों का हृदय से स्वागत किया करता हूँ।

शिवस्ते पन्थाः

— मुनि चन्द्रप्रभसागर

प्रस्तुत समीक्ष्य ग्रन्थ "वर्धमान जीवन कोश" का द्वितीय खण्ड अपने आप में अनूठा और अद्वितीय है। महावीर-जीवन सम्बन्धी सन्दर्भ ग्रन्थ में सम्पादक द्वय का भगीरथ प्रयत्न और गम्भीर अध्ययन प्रतिबिम्बित हो रहा है। आगमों में यत्र-तत्र बिखरी सामग्री को एकत्र कर इस तरीके से सजाया है कि शोध-विद्यार्थियों के लिए बड़ी सुगमता कर दी है। प्रस्तुत ग्रन्थ के संकलन-सम्पादन में शताधिक ग्रन्थों का उपयोग सम्पादक की "एगग्गचित्तोभविस्सामित्ति" एकाग्र चित्तता का अवबोधक है।

आगम-सिन्धु का अवगाहन कर अनमोल मोतियों के प्रस्तुतीकरण का यह प्रयास सचमुच महनीय और प्रशस्य है।

—हीरालाल सुराना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसमें भगवान् महावीर के पूर्व भव (२७ भव अथवा ३३ भव) गणधर-वाद का हृदयग्राही विवेचन है।

—चन्द्र शेखर सागर सूरि

VARDHAMAN-JIVAN-KOSA, compiled and edited by Mohanlal Banthia and Srichand Choraria, Jain Darshan Samiti, 16C, Dover Lane, Calcutta-700 029, 1988 Pages 80+448 Price Rs. 75.00

The Volume three of **Vardhaman-Jivan-Kosa** compiled and edited by Mohanlal Banthia and Srichand Choraria is a valuable source-book on the life and teachings of Vardhamana Mahavira. Some few years ago, the two other volumes (Vol. I, 1980 and Vol II, 1984) of the same series came out In all the volumes the plan and scope are the same. The methodology adopted in all these volumes is not only unique of its kinds, but also totally new in this type of cyclopaedic work. The material collected in all these volumes is very systematic, and will remain as a source-book for years to come to the scholarly world

The book is well-printed and the binding is carefully executed. The printing mistakes are exceptionally few. It supersedes all the previous volumes.

For preparing a Dictionary on the life and teachings of Vardhamana, the erudite editors are to be thanked for presenting such a research work. The book is divided into several sections as far as 99 and these sections are again sub-divided into several other decimal points for easy references. Each decimal point is arranged in accordance with the subject matter connected with the life and teachings of Lord Mahavira. The table of contents of this work will tell us how to use this Cyclopaedia. All the facts of Mahavira's life are authenticated by quotations from over 100 books followed by Hindi translations. These quotations are necessary for making this volume useful. This unique feature of the book shows the critical outlook and deep scholarship of the editors. The project of this research work indicates that there could be some two or more volumes of this Vardhaman-Jivan-Kosa. The Jain Darshan Samiti is to be heartily congratulated for undertaking such a laborious and tedious project on Jainism.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

This Cyclopaedia of Vardhamana will be very useful for the source-material on the life and story of Lord Mahavira. As the editor has ransacked both the Swetambara and Digambara source-books, this volume is free from all sorts of parochial outlook I hope, this book must be in the library of every learned scholar.

—Dr. Satyaranjan Banerjee

प्रस्तुत ग्रन्थ उपलब्ध जैन वाङ्मय में भगवान् महावीर की जीवनी से सम्बन्धित मूल पाठ एवं अनुवाद प्रकाशित कर शोधार्थियों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण सामग्री का यह दूसरा भाग है। ऐसे ग्रन्थो के सम्पादन में बहुश्रुतत्व और धैर्यपूर्वक सम्पन्न करने में विद्वान् सम्पादक अवश्य ही सफल हुए हैं।

—कुशल-निर्देश
मार्च १९९२

वर्धमान जीवन कोश, तृतीय खण्ड—

यह सब आपके परिश्रम का परिणाम है। हर पुस्तक का अलग-अलग विवरण दिया है। मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

— जबरमल भण्डारी
५ अगस्त १९९२

प्रस्तुत ग्रन्थ जैनागमों व ग्रन्थों के मंथन द्वारा संकलित भगवान् महावीर के जीवन सामग्री का सानुवाद संग्रह करने का भागीरथ प्रयत्न है। जैन धर्म से सम्बन्धित शोध कार्य करने वालों के लिए यह बहुत ही सहायक और वर्षों से निष्ठा पूर्वक किये गये परिश्रम का सुखद परिणाम है। सम्पादक महोदय ने इतः पूर्व दो खण्डों में एतद् विषयक सामग्री प्रस्तुत करने के अतिरिक्त लेश्या कोश, क्रिया कोश और मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास संस्था द्वारा प्रकाशित कर जैन समाज का ही नहीं पर अनुसंधेत्सु छात्रों-विद्वानों का भी बड़ा उपकार किया है।

—कुशल-निर्देश
मार्च १९९२

योग-कोश पर प्राप्त समीक्षा

नामानुसार अत्यन्त महत्वपूर्ण संकलन ग्रन्थ है। योग से सम्बन्धित संपूर्णपाठों को इस ग्रन्थ में समग्रता से संकलन किया गया है। जैन धर्म दर्शन को समझने के लिए ये ग्रन्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शोधार्थियों के लिए तो बहुत ही उपयोगी हैं—कोश ग्रन्थों का सुबोध संकलन।

जैन दर्शन के सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर कोश ग्रन्थों का संकलन किया जाये तो जैन दर्शन की स्मृद्धि का एक नया आयाम मिल सकता है।

—डा० विशाल मुनि

योग कोश में योग के भेद-उपभेदों का बड़े ही तलस्पर्शी ढग से विवेचन किया गया है। पठनीय है, चिन्तनीय है।

—मुनिश्री सुमतिचंदजी

प्रस्तुत पुस्तक स्व० मोहनलालजी बांठिया द्वारा प्रारम्भित जिनागम समुद्र अवगाहन कर विभिन्न जीवन आदि विषयों की शृंखला का दशमलव वर्गीकरण छट्ठा पुष्प-ग्रन्थ रत्न है। शोध छात्रों व वाङ्मय रसिकों के लिए बड़ा उपयोगी है। ऐसे ग्रन्थों का अध्ययन अध्येता के बहुश्रुतत्व में वृद्धि करता है। फिर भी संशोधनादि में पर्याप्त सतर्कता आवश्यक है। इसका प्रकाशन कर उच्चस्तरीय जैन साहित्य में अवश्य ही विद्वान सम्पादक ने बड़ा उपकार किया है। सहायक ग्रन्थ सूची में अधिकांश लाडणु में प्रकाशित ग्रन्थ है जबकि कई दिगम्बर व जैनेतर ग्रन्थों का भी उपयोग किया है पर जैन साहित्य अति विशाल है। जितना इस प्रथम खण्ड में आया है, अवशिष्ट द्वितीय खण्ड में अपेक्षित है। शोध और स्वाध्याय रुचि वालों के लिए यह सन्दर्भ ग्रन्थ अवश्य पठनीय है।

—भंवरलाल नाहटा

जैन आगम विषय कोश ग्रन्थमाला का यह छठा पुष्प है जिसमें मन के चार योग, वचन के चार योग तथा काया के सात योग अर्थात् १५ योगों का विस्तार पूर्वक विवेचन है। आधुनिक दशमलव प्रणाली के आधार पर वर्गीकरण किया गया है। ग्रन्थ में योग की व्युत्पत्ति, समास, विशेषण और प्रत्यय आदि विशेषण सहित परिभाषा भी दी गई है। ग्रन्थ में बताया गया है कि किस जीव में कितने योग होते हैं। विद्वानों द्वारा यह ग्रन्थ समादृत हुआ तथा इसकी उपयोगिता स्वीकारी गयी है। यह प्रकाशन अर्हत् प्रवचन की प्रभावना एवं जैन दर्शन के तत्त्वज्ञान के प्रति सर्व साधारण को आकृष्ट करने के लिए किया गया है। विद्वानों के लिए ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। लगभग २५० पृष्ठों का पक्की जिल्दयुक्त यह ग्रन्थ समादरणीय है।

—सम्पादक—चंदनमल चाँद

जैन जगत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या कोश, क्रिया कोश, तथा योग कोश—इन तीनों के सम्पादक है स्व० मोहनलाल बांठिया तथा श्रीचन्द चोरड़िया। सम्पादक द्वय ने लेश्या, क्रिया और योग के बिखरे संदर्भों को जैन आगम साहित्य से एकत्रित कर उनके सुसम्पादित रूप को लेश्या कोश, क्रिया कोश और योग कोश के रूप में प्रकाशित किया था। सारा विषय उपबिन्दुओं में विभक्त तथा हिन्दी भाषा के अनुवाद से अन्वित है। लेश्या कोश सन् १९६६ में, क्रिया कोश १९६९ में, योग कोश सन् १९९४ में जैन दर्शन समिति, कलकत्ता से प्रकाशित हुआ है।

श्री भिक्षु आगम विषयक पूरोवाक्

—गणाधिपति तुलसी

—आचार्य श्री महाप्रज्ञ

तुलसी प्रज्ञा

आज से अड़तीस वर्ष पूर्व आचार्य श्री तुलसी ने आगम सम्पादन के कार्य करने की घोषणा की थी। सम्पादन का एक अंग कोश है। तत्वज्ञ श्रावक श्री मोहनलाल जी बांठिया ने इस कार्य को अपने ढंग से करना शुरु किया। कोश का निर्माण दृढ़ व स्थिर अध्यवसाय से ही होता है। वे मनोयोग से लगे। उन्हें सहयोगी मिले श्री श्रीचन्द चोरड़िया (न्यायतीर्थ)। अस्वस्थ रहते हुये भी बांठियाजी इस कार्य को करते रहे।

उनके देहान्त होने के बाद उनके अधूरे कार्य को पूरा करने में लगे हुये हैं श्री श्रीचन्दजी चोरड़िया। सीमित साधन सामग्री में वे जो कुछ कर पा रहे हैं, वह उनके दृढ़ संकल्प का ही परिणाम है। क्रिया कोश, लेश्या कोश, मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास, वर्धमान जीवन कोश के बाद अब योग कोश को सम्पन्न किया है। स्तुत्य है। आगमों के इन अन्वेषणीय विषयों पर कोई भी चले अनुमोदनीय है, अनुकरणीय है।

फिर भी जैन दर्शन समिति का यह प्रकाशन विशेष संग्रहणीय बन पड़ा है। श्रम का उपयोग कितना होता है—यह तो शोधकर्त्ताओं पर निर्भर करता है।

कोश की शृंखला विराम न लें, चोरड़िया में स्वाध्याय व सृजन दोनों की वृद्धि हो, इसी शुभाशंषा के साथ।

—मुनि सुमेर, (लाडनूं)

कलकत्ता—माघ शुक्ल २, संवत् २०५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१—योग कोश के इस ग्रन्थ को पूर्ण करने में स्व० मोहनलालजी बांठिया एवं श्रीचन्दजी चोरड़िया ने काफी अध्यवसाय एवं परिश्रम किया है तथा शोधार्थी विद्वानों के लिए मार्ग प्रशस्त किया है।

—**रतनलाल रामपुरिया**
२६ जनवरी १९९८

२—योग कोश द्वितीय खण्ड एक महत्वपूर्ण कृति है।

—**के० जी० गुप्ता,** लाडनूँ

३—योग कोश एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

—**प्रो० सी० एन० मुखर्जी**

४—यह एक महत्वपूर्ण प्रशंसनीय कृति है।

—**सोलंकी, सम्पादक तुलसी प्रज्ञा**

जैनागमों के महोदधि के मंथन से निकाले गये नवनीत के रूप में यह ग्रन्थ मुझ जैसे स्वाध्याय प्रेमी व्यक्ति के लिए प्रेरक व पथदर्शक प्रकाशस्तभ का कार्य करता है।

—**सोहनलाल कोठारी,** बालोतरा

श्रीचन्द चोरड़िया द्वारा लिखी गई योग का विश्वकोश (योग-कोश) के पहले भाग का परिचय करवाते हुए बेहद हर्ष हो रहा है जो कि इस पण्डितोचित विश्व में जैनत्व के विभिन्न विश्वकोशों में अपने योगदान के लिए प्रख्यात हैं। श्री श्रीचन्द चोरड़िया ने अपने विद्याभिमान से इस पुस्तक को विभिन्न विभागों में विभाजित किया है। जैसा कि आमतौर पर पुस्तकालय विज्ञान में अनुसरण किया जाता है। चूंकि यह एक विश्वकोश है इसमें सभी उल्लेख जैन साहित्य में पाए जाने वाले हैं। इनके संग्रह का सबसे महत्वपूर्ण रूप यह है कि इन्होंने अपने सभी उल्लेख जैन पुस्तकों के आधार पर किया गया ना की अपने काल्पनिक विचारों से। इन्होंने इस पुस्तक को सत्यता प्रदान की है। जो कोई भी इनके विश्वकोशों के कार्य से परिचित हैं वे जानते हैं कि इनकी विधि कितनी वैज्ञानिक व विभवयुक्त है। यह पुस्तक इस ओर भी संकेत करती है कि जैनत्व के किसी एक विषय पर किसी तरह शोध की जाए। आर० एल० विलियम की जैन योग (लंदन १९६२) नामक पुस्तक जैन योग का अध्ययन करवाती है परन्तु श्रीचन्द चोरड़िया की पुस्तक जैन योग का विश्वकोश है एवं अवश्य ही उत्तरोक्त पूर्वरोक्त से ज्यादा गहन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह योग कोश अच्छी तरह मुद्रित एवं ध्यान से सदृढ़ बन्धी हुई है। इसमें आलौकिक संग्रह है। अपवाद भूत रूप से कुछ मुद्रण अशुद्धियाँ हैं जिन्हें लेखक ने स्वयं अलग से सूचित किया है। इसमें विस्तार पूर्वक भूमिका करीब ७५ पृष्ठों की बांधी गई है। मैं आशा करता हूँ, भविष्य में हमें उनसे इसी तरह का कार्य प्राप्त होता रहेगा। श्रीचन्द चोरड़िया जैनत्व के एक अच्छे विद्वान एवं असाधारण परिश्रमी शोधकर्त्ता हैं, जैनत्व के विषय पर। मैं विश्वास करता हूँ कि यह पुस्तक विश्व के विद्वानों के द्वारा उचित स्वीकृति प्राप्त करेगी।

—सत्यरंजन बनर्जी

लेश्या कोश, क्रिया कोश, योग कोश

इन तीनों के सम्पादक है—स्व० मोहनलालजी बांठिया तथा श्रीचन्दजी चोरड़िया। सम्पादक द्वय ने लेश्या, क्रिया और योग के बिखरे सन्दर्भों को जैन आगम साहित्य से एकत्रित कर उनके सुसंयोजित रूप से लेश्या कोश, क्रिया कोश योग कोश के रूप में प्रकाशित किया है। सारा विषय उपबिन्दुओं में विभक्त है तथा हिन्दी भाषा के अनुवाद से अन्वित है। लेश्या कोश सन् १९६६ में, क्रिया कोश १९६९ में व योग कोश १९९४ में जैन दर्शन समिति कलकत्ता में प्रकाशित हुए।

—मुनिश्री बिमलकुमारजी

तुलसी प्रज्ञा—भाग २३ अंक २, जुलाई-सितम्बर १९९७

योग कोश ग्रन्थ लेखक की अमूल्य कृति है। जैन दर्शन में योग की सूचिका के विषय में इस ग्रन्थ से पूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सकेगी।

—हीरालाल सुराणा

योग कोश में पचीस बोल के आठवें— योग पन्द्रह का तल स्पर्शी विवेचन है। सम्पादक धन्यवाद के पात्र हैं।

— गुलाबमल भण्डारी

अध्यक्ष, जैन दर्शन समिति

प्रस्तुत पुस्तक योग कोश है। इसमें कोई संदेह नहीं कि एक अनुसंधित्सु के लिए कोश का उपयोग है। यह उपयोगिता ही इस कार्य की समृद्धि के लिए पर्याप्त प्रमाण है। कार्य को गतिशील बना दिया।

—गणाधिपति तुलसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनके देहान्त (२३-९-१९७६) होने के बाद उनके अधुरे कार्य को पूरा करने में लगे हुए हैं—श्रीचन्द चोरड़िया। सीमित साधन सामग्री में वे जो कुछ कर पा रहे हैं, वह उनके दृढ़ संकल्प का ही परिणाम है। क्रिया कोश, लेश्या कोश, मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास, वर्धमान जीवन कोश (खण्ड १, २, ३) के पश्चात् अब योग कोश को सम्पन्न किया है। स्तुत्य है। आगमों के इन अन्वेषणीय विषयों पर कोई भी चले अनुमोदनीय है, अनुकरणीय है।

फिर भी जैन दर्शन समिति का यह प्रकाशन विशेष संग्रहणीय बन पड़ा है। श्रम का उपयोग कितना होता है—यह तो शोधकर्त्ताओं पर निर्भर करता है।

कोश की श्रृंखला विराम न ले, चोरड़िया में स्वाध्याय व सृजन दोनों की वृद्धि हो—इसी शुभाशंषा के साथ।

—**नोरतनमल सुराणा,** कलकत्ता

लेश्या कोश पर प्राप्त समीक्षा

It gives me immense pleasure to introduce to the world of orientalists this valuable reference book. entitled Lesya-kosa, Compild by Mr. Mohan Lal Banthia and his assistant Mr. Shrichand Choraria who is a student at our Institute. It is a specimen volume of a larger project prepared by Mr Banthia to compile a series of such volumes on various subjects of Jainism, enlisted in a comprehensive and exhaustive catalogue that ie under preparation by him. The compilers do not claim that the volume is an exhaustive and complete reference book on the subject as contained in the literature that is extant and available in print and manuscripts, accepted by the Digambara and the Swetambara sects of Jainism In fact Mr. Banthla has proposed to publish another volume on the subject, containing the references to the subject embodied in the Digambara literature. The Lesya-Kosa will inspire the scholars of Jainism for a critical study of the subject, leading to a clear formulation and evaluation of the doctrine and its bearing on the metaphysical speculations of ancient India.

The concept of lesya is a vital part of the Jaina doctrine of karman. Every activity of the soul is accompanied by a corresponding

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

change in the material organism, subtle or gross. The lesya of a soul has also such double aspect—one affecting the soul and the other its physical attachment. The former is called bhava-lesya. and the latter is known as dravya-lesya. A detailed account of the mental and moral changes in the soul[1] and also an elaborate description of the material properties of various lesyas[2] are recorded in the Jaina scripture and its commentaries.

In the Ajivika, the Budhist and the Brahmanical thought also, ideas similar to the Jaina concept of lesya are found recorded. The lesya qua matter is the 'colour-matter' accompanying the various gross and subtle physical attachments of the soul.[3] This is the dravya-lesya The corresponding state of the soul of which the dravya-lesya is the outward expression is bhava-lesya.[4] The dravya-lesya, being composed of matter, has all the material properties viz colour, taste, smell and touch. But its nomenclature as krsna (black), nila (dark blue), kapota (grey, black-red[5]), tejas (fiery, red[6]), padma (lotus-coloured, yellow[7]) and sukla (white), is framed after its colour which appears to be its salient feature. The use of colour-names to indicate spiritual development was popular among the Ajivikas and the lesya concept of the Jainas seems to have had a similar origin The Buddhists appear to have given a spiritual interpretation to the Ajivika theory of six abhijatis and the Brahmanical thinkers linked the colours to the various states of sattva, rajas and tamas.[8]

Although it is difficult to determine the chronology of these ideas in these religions, there should be no doubt thet the concept of lesya was an integral part of Jaina metaphysics in its most ancient version The later Jaina thinkers made attempts at knitting up the doctrine of

1. Pp. 251-3 (of the text).
2. Pp. 20ff.
3. P. 10 (line 5) ; also p. 13 (line 11).
4. P. 9 (lines 21ff).
5. P. 45 (line 13).
6. P, 45 (line 13).
7. P. 45 (line 14).
8. Pp. 254-7 ; also Glasenapp : The Doctrine of Karman in Jaina Philosophy, p. 47, fn 2 ; Pandit Sukhlalji Jain Cultural Research Society (Varanasi) Patrika No. 15, pp. 25-6.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

karman, placing the concept of lesya at its proper place in the texture.

As regards the etymology of the word lesya (Prakrit, lessa, lesa). I would like to suggest its derivation from √slis 'to burn'[9], with its meaning extended to the sense—'shining in some colour'. This connotation and others allied to it appear to explain satisfactorily the senses of scriptural phrases containing the word lessa, collected on pages 4 and 5 of the lesya-kosa. Dr. Jacobi's derivation of the term from klesa[10] does not appear plausible as the kasaya (the Jaina equivalens of klesa) has no necessary connection with the lesya, and the various usages of the word (lesya) found in the Jaina scripture do not imply such connotation.

Three alternative theories have been proposed by commentators to explain the nature of lesya. In the first theory, it is regarded as a product of passions (kasaya-nisyanda), and consequently as arising on account of the rise of the kasaya-mohaniya karman. In the second, it is considered as the transformation due to activity (yoga-parinama), and as such originating from the rise of karmnns which produce three kinds of activity (physical, vocal and mental). In the third alternative, the lesya is conceived as a product of the eight categories of karman (Jnanavaraniya, etc.), and as such accounted as arising on account of the rise of the eight categories of karman. In all these theories, the lesya is accepted as a state of the soul, accompanying the realzation (audayika-bhava) of the effect of karman.[11]

Of these theories, the second theory appears plausible. The lesya, in this theory, isa transformation (parinati) of the sarira-namakarman (body-making, karman),[12] effected by the activity of the soul through its various gross and subtle bodies—the physical organism (kaya), speech-organ (vak), or the mind-organ (manas) functioning as the instrument ofs uch activity.[13] The material aggregates involved in the

9. Srisu-slisu-prusu-plusu dahe—Paniniya-Dhatupatha, 701-4.
10. Glasenapp : op cit., p. 47, fn 1.
11. For the refutation of the theory propounding lesya as karma-nisyada, vide pp. 11-2.
12. P. 10 (line 10).
13. P. 10 (lines 13-21).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

activity constitute the lesya. The material particles attracted and transformed into various karmic categories (jnanavaraniya. etc.) do not make up the lesya. There is presence of lesya even in the absence of the categories of ghati-karman in the sayogi-kevalin stage of spiritual development, which proves that such categoried do not constitute lesya. Similarly, the categories of aghati-karman also do not form the lesya as there is absence of lesya even in the presence of such categories in the ayogi-kevalin stage of spiritual development [14] The lesya-matter involved in the activity aggravates the kasayas if they are there [15] It is also responsible for the anubhaga (intensity) of karmic bondage [16]

Lesya is also conceived by the commentators as having the aspect of viscosity.[17]

The compilers of the Lesya-Kosa have taken great pains to make the work as systematic and exhaustive as possible. Assistance of a trained scholar and poof-reader could, however, be requisitioned for better editing and correct printing. The scholars of Indian philosophy particularly those working in the field of Jainism, will derive good help from such reference books. Although primarily a veteran tosiness man, Mr. Banthia has shown keen understanding of ontological problems in systematically arranging the references and clinching crucia issues as is evident from the occasional remarks in his notes. Scholan will take of their hats to him in appreciation of his Herculean labovs in defiance of the extremely precarious health that he has been enjoying for the last several years. We wish success to him in his larger schem which is bound to be of great benefit to scholars devoted to the studs of Jainism, and assure him of our full co-operation in the execution of the project.

NATHMAL TATIA
Director,
Research Institute of Prakri
Jainology & Ahimsa, Vaishali
3 July 1966

14. P. 11 (linss 3-8).
15. P. 11 (lines 8-9).
16. P. 11 (lines 15-7) ; also Tika the on Karmagrantha, IV, 1.
17. P. 12 (line 11) ; p. 13 (line 13).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्धमान जीवन कोश प्रथम खण्ड पर समीक्षा

Vardhamana, better known as Bhagwan Mahavira, was the last in the series of twenty-four Tirthankaras of the Jaina tradition- He is withobt doubt a historical celebrity who lived in the sixth century before Christ, i e. frow 599 to 527 B. C., and occupies an important place in the cultural history of India. Acclaimed as one of the greatest teachers of mankind, he possesses a universal appeal and an all-time relevance The religious, philosophical and cultural system now known as the Jaina owes its final shaping to Bhagwan Mahavira. He was not the original founder of this system which, in its genesis, reaches back to early pre-historic times when Lord Rishabha. the First Tirthankara. taught man the rudiments of human civilization, the manner to live a meaningful life, and the Ahimsite path to liberation through renunciation and spiritual uplift. The succeeding Tirthankaras, right up to parshvanatha (877-777 B C) the penultimate. and Vardhamana Mahavira (599-527 B. C) the last of them, preached the same creed for the good of all the living beings, in their own ways and respective times. Naturally, the Jains (followers of the Jinals creed), all over the world, adore Mahavira, the Jina, as the most worshipful one.

A few years ago, the 2500th anniversary of Lord Mahavira's Nirvana was celebrated all over India, and even abroad, with befitting zeal. One salutary effect of these celebrations was that Mahavira's name received an unprecedented publicity which made people curious to know more about this great benefactor of mankind Consequently, scores of books, big and small, dealing whih the life and teachings of the Lord, written by different scholars and in different languages, were published.

The present work, The Vardhaman Jivana-kosha, or a 'dictionary of Mahavira's biographical Data', is a valuable addition to modern literature on ihe subject. It is not actually a biography of the hero, but is a topical dictionary of the biographical details relating to Mahavira, as available in the different li terary sources.

Jyoti Prasad Jain
Jyoti Nikunj,
Charbagn, Lucknow-1
12 March 1980

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीचन्द चोरड़िया, न्यायतीर्थ (द्वय)

जन्म : वि० सं० १९९० आश्विन शुक्ला १४
२ अक्टूबर सन् १९३३

दिगम्बरीय जैन न्यायस्य, सन् १९६४
श्वेताम्बरीय जैन न्यायस्य, सन् १९७०

प्रकाशित लेख :—

१. भेद में अभेद का प्रतिपादक अनेकान्तवाद
२. जैन शब्दकोष – परिभाषाएँ
३. दर्शन
४. नयवाद
५. जैन दर्शन में पाँच ज्ञान
६. संमुर्च्छिम मनुष्य
७. पाँच देव
८. प्रमाण
९. प्रमाण मीमांसा
१०. नयवाद – सिद्धान्त और व्यवहार की तुला पर
११. मिथ्यात्वी का आध्यात्मिक विकास
१२. भगवान् महावीर का जीवन दर्शन
१३. भगवान् महावीर का तत्वदर्शन
१४. वर्तमान समाज और भगवान महावीर का अनेकान्त सिद्धान्त
१५. लेश्या – एक विवेचन
१६. चार प्रकार के पुरुष
१७. बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी आचार्य श्री तुलसी
१८. श्रावक रायचन्द्रजी सुराना
१९. श्रावक महादेवलालजी सरावगी
२०. मुनि श्री गंगारामजी का वैरागी गृहस्थ जीवन
२१. आगमों में मोहनीय कर्म का स्वरूप
२२. हेतु आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org